॥ श्री गोवर्धननाथोविजयते ॥

गोस्वामी श्री हरिरायजी महाप्रभु प्रणीत

चौरासी वैष्णवन की वार्ता

(तीन जन्म की लीलाभावना वाली)

आद्यसम्पादक
तृ.पी.नि.ली.गो. श्री ब्रजभूषणलालजी महाराज
गो.वा.प.भ. श्रीद्वारकादासजी परीख

★ प्रथम प्रकाशक ★
शुद्धाद्वैत एकेडमी, कांकरौली

★ पुनः प्रकाशक ★
वैष्णव मित्र मण्डल सार्वजनिक न्यास, इन्दौर

कन्दरा में विराजमान पुष्टि पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण स्वामिनीजी सहित

वल्लभ सम्प्रदाय के परमाराध्य श्री गोवर्धनधरण श्रीनाथजी

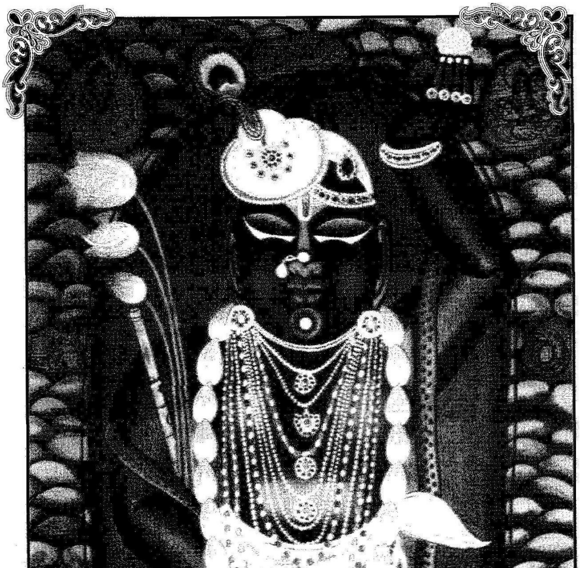

पाटोत्सव फाल्गुन कृष्ण सप्तमी

पुष्टिमार्ग प्रवर्तक श्रीकृष्णवंदनानलावतार श्रीवल्लभाचार्यजी पुष्टिमार्ग प्रचारक
श्रीप्रभुचरण श्रीगुसांईजी श्रीविट्ठलनाथजी श्रीसातों लालजी सहित

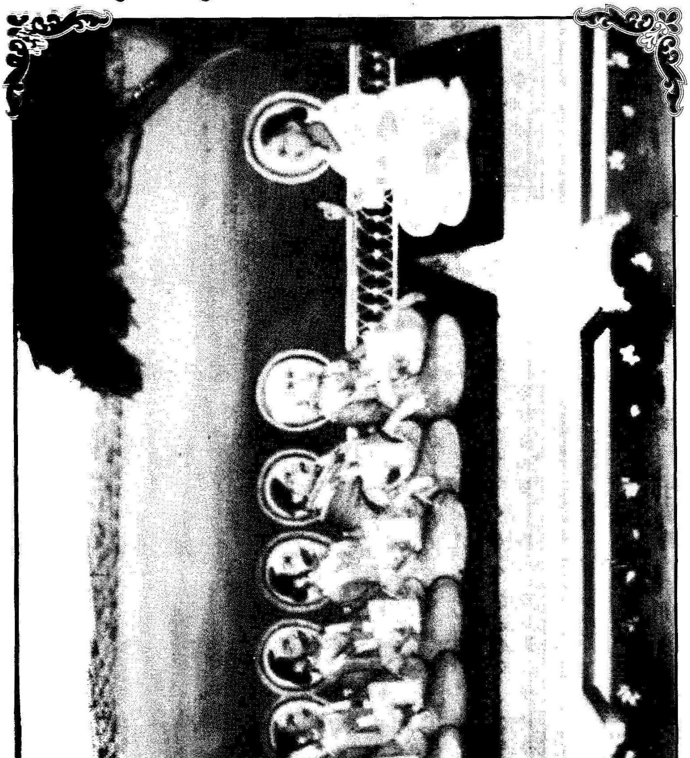

१. श्री गिरिधरजी, २. श्री गोविन्दजी, ३. श्रीबालकृष्णजी, ४. श्रीगोकुलनाथजी,
५. श्रीरघुनाथजी, ६. श्री यदुनाथजी, ७. श्रीघनश्यामजी

॥ श्री कृष्णाय नमः ॥

॥ श्री गोवर्धननाथो विजयते ॥

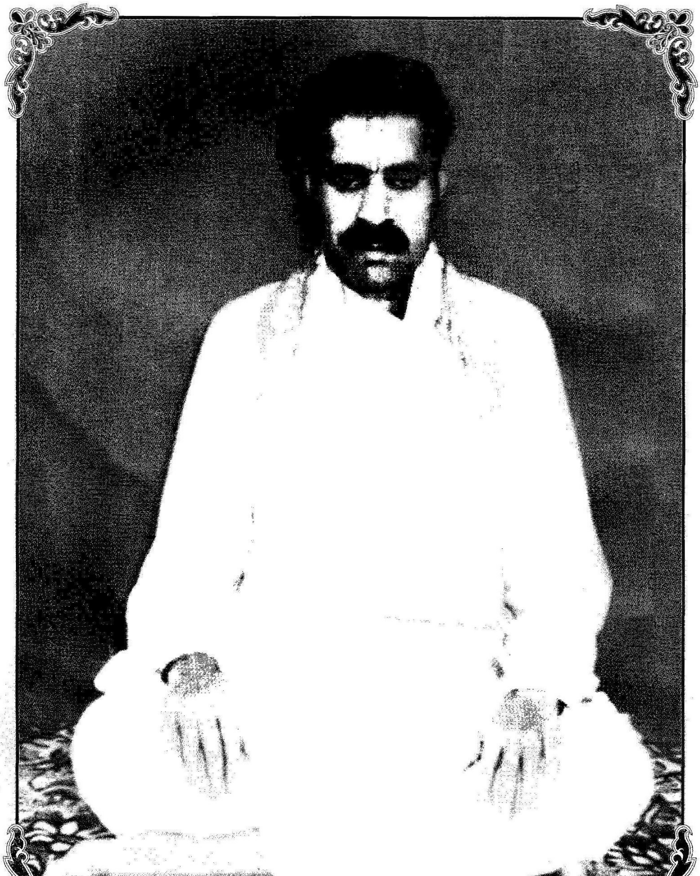

नि.ली. गोस्वामी कुलभूषण

श्री १०८ श्री विठ्ठलेशरायजी महाराजश्री

प्राकट्य - श्रावण कृष्ण एकादशी वि. सं. २००५ ❖ नि.ली.गो.पू.पा. २०५९

ग्रन्थ-परिचय

प्रस्तुत ग्रंथ वल्लभ-सम्प्रदाय का अतीव मान्य ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ सम्प्रदाय में ''तीन जन्म की लीला भावना वाली ८४ वैष्णवों की वार्ता'' के नाम से सर्वत्र प्रसिद्ध है। भारतवर्ष में वैष्णवों का शायद ही कोई ऐसा स्थान हो, जहाँ इस ग्रन्थ की कम से कम एक प्रति भी उपलब्ध न हो सके। इससे ग्रन्थ की व्यापकता और लोकप्रियता का अच्छा परिचय मिल जाता है। इस ग्रन्थ की अनेक हस्त-प्रतियाँ श्रीमद्गोकुल, मथुरा, गिरिराज, श्रीनाथद्वारा, सिद्धपुर, पाटन, अहमदाबाद, बड़ौदा, डभोई, संखेडा, बहादरपुर, आदि स्थानों में हमारे देखने में आई हैं। उनमें वि.सं. १७५२, १७७८,१८०४,✶ १८२५, १८९६, १९००,और १९४० की लिखी हुई प्रतियाँ भी हैं। सब में भाषा और प्रसंग एक से हैं। प्रस्तुत मुद्रित ग्रन्थ वि.सं. १७५२ की हस्तप्रति से तैयार किया गया है।

यह नियम सम्प्रदाय में नित्य नियम से होने वाली वैष्णवों की मंडलियों में सर्वत्र अतिश्रद्धा से बाँचा जाता है। जिस प्रकार अष्टछाप के कीर्तनों को बाँचने से भावुक भक्तों के हृदय भक्ति से आर्द्र होते हूए आनंद विभोर हो जाते हैं, उसी प्रकार इस ग्रन्ध के पठन-पाठन से समय भी भक्तों में रोमांच, हर्षाश्रु और आत्मदैन्य आदि भजनानंद की अनेक गति विधियों का संचार होता हुआ देखने में आता है। यह इस ग्रन्थ की विशेषता है।

वार्ता-साहित्य के अध्ययन से यह जाना जा सकता है कि यह ग्रन्थ ''मूल ८४ वैष्णवों की वार्ता'' का परिवर्द्धित रूप है। इसमें मूल वार्ता के सिद्धांत, भावना और ऐतिह्य निरुपक गूढ़ तत्वों का स्पष्टीकरण और विशदीकरण हुआ है। अतएव सम्प्रदाय की दृष्टि से ''मूल ८४ वैष्णवों की वार्ता'' की अपेक्षा यह ग्रन्थ विशेष महत्वपूर्ण है।

इस ग्रन्थ में हिन्दी साहित्य को समृद्ध करने वाले कवि-सम्राट सूर प्रभूति कई एक लोकप्रिय तथाच भारतवर्ष के अन्य भाषा-भाषी ब्रजभाषा में रचनः करने वाले बीसों अप्रसिद्ध महान कवियों की जीवनियाँ भी वृहद् रूप से प्राप्त होती है। अतः यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य क्षेत्र के लिये भी आदरणीय और अपेक्षणीय है।

इसमें ब्रजभाषा हिन्दी गद्य का प्राचीनतम और परिमार्जित रूप प्राप्त है। अतः भाषा की दृष्टि से भी यह ग्रन्थ हिन्दी साहित्य वालों के लिये अध्ययन की एक ठोस वस्तु है।

इसमें तत्कालीन धार्मिक, सामाजिक, और राजकीय परिस्थितियों का भी रोचक और तादृश ऐतिह्य वर्णन प्राप्त हैं। इसलिये तत्तत्क्षेत्रों के लिये भी यह ग्रन्थ उपादेय है।

इस प्रकार यह वार्ता ग्रन्थ अपनी सर्वतोमुखी प्रभा को लेकर हमारे सम्मुख उपस्थित होता है। अतः किसी भी क्षेत्र का स्थितप्रज्ञ विद्वान और अन्वेषक इस ग्रन्थ की अवहेलना व उपेक्षा सर्वथा नहीं कर सकता।

इसके बहुमूल्य और अति व्याप्त उपयोगिता के कारण यह ग्रन्थ सभी क्षेत्रों में आदरपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकता है। इसलिये अंतरंग बहिरंग साधनों से इसकी प्रामाणिकता को स्पष्ट करना नितांत आवश्यक है।

जैसा कि साम्प्रदायिक प्रसिद्धि, सभी प्राचीन हस्तप्रतियाँ के उल्लेख, और ग्रन्थ के आन्तर लेखों से स्पष्ट होता है, यह ग्रन्थ गोस्वामी श्री हरिरायजी के कहे हुए भावों का मूर्त रूप है। इसकी पुष्टि समकालीन बहिःसाक्ष्य से भी यों होती है –

✶ (१८०४ की एक अन्य प्रति लखनऊ विश्व-विद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ. दीनदयालु गुप्त एम.ए. के पास भी है।)

चौरासी चित्र लावीने, करे पाठ नित्य धरी नेम।
पुष्टि पंथ प्रभु प्रसन्न थाये, हृदे बाढ़े प्रेम ॥
कृपा श्रीहरिरायजी करी दीन जाणी दास ।
मूल चौरासी भक्न नां ते, नामकर्या प्रकास ॥
श्री आचार्यजी महाप्रभु नां, अंग द्वादश जेह।
धर्म साथे धर्मी कहिये, साथ द्वादश तेह।
चोराशी ब्रजकोस माटे, चौराशी ए भक्त।
प्रेम लक्षणा पूरी पूरे, श्रीवल्लभ पद आसक्त ॥
ए वैष्णव पद कमल रज, रत्ती तणी छे आस।
गाय गुण हरिदास ना, पद रज ''श्रीवल्लभदास ॥''

इस वृहद धोल में वार्ता के अनुसार ८४ वैष्णवों के लीला के नाम कहे गए हैं।

यह ८४ वैष्णवों के लीलाविषयक नाम वाला पद काकावल्लभजी का रचा हुआ है। काकावल्लभजी ने ''श्रीवल्लभ'' और दास ये दोनों छापों में ब्रजभाषा और गुजराती में अनेक रचनाएं की है। आपकी ब्रजभाषा और गुजराती की कई रचनाएँ ''विविध धोल पद'' आदि ग्रन्थों में अहमदाबाद, बम्बई आदि स्थानों से प्रकाशित भी हुई हैं।

आपका जन्म वि.सं. १७०३ में ब्रज में हुआ था। अतः ये वि.स. १७७२ पर्यन्त भूतल पर विद्यमान रहने वाले गो.श्रीहरिराय जी के समकालीन थे। आपको गो. हरिरायजी का ब्रह्मसंबंध भी था। इसलिए आपका उक्त धोल समकालीन बहिःसाक्ष्यरुप होने से प्रामाणिक माना जाएगा। आपके कथन की पुष्टि वि.सं. १८३३ में होने वाले गुजरात के अंतिम सुप्रसिद्ध कवि-सम्राट श्रीदयाराम के ''पुष्टि भक्त मालिका'' नामक ग्रन्थ के निम्न उद्धरण से भी होती है।

श्रीमहाप्रभु के अतिप्रिय, चौरासी जो भक्त।
श्रीराधावर रूप में, जिनको मन आसक्त ॥
सो श्री गोकुलनाथजी, कहे सबन के नाम।
वरनी सबकी वारता जाति, ज्ञाति अरु नाम ॥
तामें कछु संदेह रहे, लीला में को रुप।
सोहू श्रीहरिरायजी, कहे प्रगट स्वरूप ॥

इसमें भी वैष्णवों के लीलात्मक नाम इसी वार्ता-ग्रन्थ के अनुसार कहे हुए हैं।

उपर्युक्त विश्वस्त कथनों से यह निश्चित हो जाता है कि यह भावना वाली वार्ता गो. श्रीहरिरायजी प्रणीत है। इस बात की विशेष पुष्टि ग्रन्थ के अंतरंग साधनों से यों होती है -

१ लेखों से -

(१) गो. श्रीहरिरायजी वि.सं. १७७२ पर्यन्त भूतल पर विद्यमान थ। अतः वि.सं. १७५२ का लिखा हुआ यह ग्रन्थ आपका समकालीन है। इस आधार पर हमें यह मानना होगा कि आपकी विद्यमानता में ही यह वार्ताएँ आपके नाम से समाज में प्रचलित हो चुकी थी। इसलिये यह संभव नहीं कि आपके समय में ही किसी ग्रन्थ में आपके नाम का गलत प्रयोग किया जा सके। और यह भी संभव नहीं कि आपके नाम

(देखो महादेव रामचंद जागुष्टे अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित ''धोल पद'' और शास्त्री बसंतराम हरिकृष्ण अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित ''रसिक विविध धोल पद संग्रह।''

+ देखो ''वल्लभवंशवृक्ष'' तथा ''वंशावली''।

++ देखो बंबई और डभोई आदि स्थानों से प्रकाशित ''दयाराम काव्य मणिमाला ॥'')

से प्रचलित ग्रन्थ आपने न देखा हो।

(२) ग्रन्थ के दो तीन स्थानों पर इस प्रकार लिखा है –

१– ''अब चौरासी वैष्णवन की वार्ता श्रीगोकुलनाथजी प्रगट किये ताको भाव श्रीहरिरायजी कहते हैं सो लिख्यते''

२– अब श्रीआचार्य के चौरासी वैष्णवन की वार्तान में गूढ़ आशय श्रीगोकुलनाथजी कहे हैं तहाँ श्री हरिरायजी कछुक भाव प्रगट करते हैं।

३– अंतिम पुष्पिका भी इसी बात को स्पष्ट करती है।

इन तीनों लेखों से ये बातें स्पष्ट होती हैं –

(अ) प्रस्तुत ग्रन्थ मूल ८४ वार्ता के स्पष्टीकरण रूप में गो. श्रीहरिरायजी द्वारा कहा हुआ है।

(आ) ''अब'' शब्द से यह भी ज्ञात होता है कि यह ग्रन्थ प्रतिदिन की किसी सिलसिलेवार कथा रूप हैं। इसकी पुष्टि प्रत्येक वार्ता के प्रारंभिक इस प्रकार के उद्धरण से भी होती है–

अब श्रीआचार्यजी के सेवक ...तिनकी वार्ता को भाव कहते हैं। ✶

(इ) उक्त प्रकार का प्रत्येक वार्ता का शीर्षक इस बात को भी सूचित करता है कि गो. श्रीहरिरायजी अपनी प्रत्येक दिन की कथा में एक या दो वार्ताओं के भावों को कहते थे ✶✶। और वे सब के सब ज्यों के त्यों **तत्कालीन उपस्थित व्यक्ति** द्वारा लिख लिये जाते थे।

पूर्व उद्धरणों में प्राप्त 'श्रीहरिरायजी कहत हैं सो लिख्यते' तथा ''श्रीहरिरायजी कछुक भाव से स्पष्ट करत हैं। इस प्रकार के वर्तमान काल की क्रियाओं के प्रयोग तत्कालीन लेखन को निश्चित रूप से स्पष्ट करते हैं। इसका बिशद विवेचन आगे किया जाएगा।

(३) इस ग्रन्थ में एक स्थान पर श्रीहरिरायजी का प्रत्यक्ष उल्लेख भी इस प्रकार मिलता है – ''यह नवल छवि दूध पान करिये के समय की शोभा ऊपर 'मैं' श्रीहरिरायजी बलिहारी जात हों।''

इस उल्लेख से भी श्रीहरिरायजी के प्रत्यक्ष कथन की और पूर्व स्पष्ट की हुई तत्कालीन लेखन की पुष्टि होती है।

(४) इस ग्रन्थ में कई स्थानों पर श्रीहरिरायजी के ही शिक्षापत्र आदि ग्रन्थों के उद्धरणों की वार्ताओं के निगूढ़ सिद्धांतात्मक उल्लेखों से सिद्धांतों को स्पष्ट करते हुए उनसे अनुसंधान पूर्वक पुष्टि भी की गई। यथा–

(अ) 'वार्ता–सूत्र'– ''तब गोविंददास फेरि अहंकार करि कहें – (पृ.१५८)

सम्प्रदाय में अहंकार, दास भाव शरण का विरोधी माना गया है। अतः उसका सैद्धांतिक अनुसंधान करते हुए उक्त सूत्र से विवेचनात्मक भाव प्रकाश में शिक्षापत्र के उद्धरण के साथ उसके शरण सूचक कथन की इस सूत्र से यों पुष्टि की गई –

''काहेतें अहंकार दास भाव में विरोधी है --- जो एक दिन अहंकार सों सेवा छूटे, सेवा ठाकुर न करावें। यह सिद्धांत दिखाये। तातें शिक्षापत्र में लिख्यो है ''असाधन साधनोवान ---'' या मार्ग में कितने असाधन है। कितने साधन बहोत करत हैं, कोई साधु जो सात्विक है, कोई असाधु राजसी है। परंतु **सरन रात्रि दिन दृढ है प्रभु की तिनही कों प्राप्ति निश्चय, यह जताये।''**

इसी प्रकार पृष्ठ २०० पर देखियें।

✶ इस प्रकार के पत्येक वार्ता के प्रस्तुत ग्रन्थ में मुद्रित शीर्षक में से हमने ''कहते हैं'' शब्द कम कर दिये हैं जिसका कारण हमने अन्यत्र स्पष्ट किया है।

✶✶ प्रतिदिन एकसे ज्यादा वार्ता अथवा प्रसंग कहने की पुष्टि वार्ता के प्रारंभ के ''और'' शब्द से भी होती है देखो ''मावजी पटेल की वार्ता''

(आ) वार्ता सूत्र- सो वह ब्राह्मण दूसरे चौथे मुकुंददास कों पूछे जो जब कहोगे तब श्रीभागवत सुनावेंगे — परन्तु उह मार्गीय ब्राह्मण न हतो तातें वाके मुख की कथा न सुनी।

भावप्रकाश- **तातें** छासठ अपराध में लिख्यो है "अवैष्णवानां **श्रीभागवत** श्रवणं वृक्ष जन्म त्रयं। इत्यादिक"

यहाँ भी गो. हरिरायजी ने स्वरचित ६६ अपराधों वाले अपने कथन की प्रामाणिकता की पुष्टि वार्ता - सूत्र से की है। इससे जहाँ वार्ताओं की महत्ता स्पष्ट होती है, वहाँ यह भी ज्ञात हो सकता है। कि गो. हरिरायजी के ग्रन्थोक्त सिद्धांत वार्ता-साहित्य के निगूढ़ तत्त्वों के बहुधा मंथन रूप है। श्री हरिरायजी के भ्राता गो. श्रीगोपेश्वर जी ने शिक्षापत्र की जो टीका की है उसके अध्ययन से इसकी और भी पुष्टि हो जाती है। उसमें सर्वत्र शिक्षापत्र के सिद्धांतों को स्पष्ट करने में वार्ताओं के ही उदाहरण दिये गये हैं। इससे वार्ता-साहित्य का गांभीर्य और उसकी प्रामाणिकता का पता चल सकता है।

उक्त प्रकार के वार्ता के सिद्धांतात्मक उल्लेखों से सम्प्रदाय के परम मान्य शिक्षापत्र आदि ग्रन्थों के तत्त्व कथनों की पुष्टि गो. श्रीहरिरायजी के सिवाय अन्य कोई कर नहीं सकता है। क्योंकि इससे वार्ता की महत्ता और शिक्षा पत्र आदि लब्ध प्रतिष्ठ ग्रन्थों की गौणता सिद्ध होती है। पूर्व उद्धरणों में प्राप्त 'तातें' (इसलिये) शब्द शिक्षापत्र की गौणता को स्पष्ट सूचित करता है। सम्प्रदाय में वार्ता के समान ही शिक्षापत्र आदि ग्रन्थों को उनकी रचना काल से ही प्रतिष्ठा चली आ रही है। अतः गो. श्रीहरिरायजी को परम श्रद्धेय मानने वाला कोई भी वैष्णव अथवा गोस्वामी उनकी रचनाओं को 'तातें' शब्द का प्रयोग कर गौण रूप में उपस्थित कर नहीं सकते। इसलिये भी हमें मानना होगा कि "भाव-प्रकाश" गो. श्रीहरिरायजी प्रणीत ही हैं। क्योंकि गो. श्रीहरिरायजी वार्ताओं को अपने गुरू श्री गोकुलनाथजी के वचन रूप में प्रमाण मानते थे। इसीलिये वार्ताओं के सूत्रों से अपने वचनों की पुष्टि करनी उनके लिये स्वाभाविक थी। इसी प्रकार वार्ताओं में कहे हुए निगूढ़ सिद्धांतों को स्पष्ट करके उनके अनुसंधान से सम्प्रदाय के मर्मों को अपने अन्य ग्रन्थ में समझना भी आपके लिये स्वाभाविक था। वार्ताओं को वे गुरु वचन रूप में प्रमाण और महान् समझते थे, तभी तो वे उनका व्याख्यान और भाव कहने में भी तत्पर हुए।

२ - भाषा से -

गो. श्रीहरिरायजी संस्कृत, ब्रज, गुजराती, मारवाड़ी, और पंजाबी भाषाओं के एक महान कवि और व्याख्याता थे। इस बात का ज्ञान उनकी तत्तत्भाषाओं की रचनाओं से होता है। इस आधार पर-

(१) कवि होने के कारण आपकी भाषा में काव्य चमत्कार आना स्वाभाविक है। इस वार्ता ग्रन्थ के अनेकानेक स्थानों में उसका दर्शन यों होता है-

(अ) पाछे श्री आचार्यजी दामोदरदास सों पूछी, जो पत्र **पायो** है सो **लायो** है?

-दामोदरदास संभलवारे की वार्ता

(आ) सो माता पिता घर के सब कोई इनसों प्रीति करे नांही। जाने जो नेत्र बिना को पुत्र कहा?

-सूरदास की वार्ता

(२) इसी प्रकार इस ग्रन्थ में आपके व्याख्यान की उपदेशात्मक भाषा यों मिलती है-

(अ) "या वार्ता में यह सिद्धान्त दिखाये जो पुष्टिमार्गीय वैष्णव के ठाकुर अपने घर पधारे तो भिन्न भाव न राखनो।" पृ. ७५

(आ) "यामें यह सिद्धांत जताये जो सनेही होई सो उत्सव अपने ठाकुर पास करें तो ठाकुर प्रसन्न रहें।" पृ. १५३

(३) इस ग्रन्थ की गद्यभाषा का साम्य श्रीहरिरायजी के अन्य ग्रन्थों की गद्य भाषा से इस प्रकार

होता है -

(अ) **भावनावाली निजवार्ता**:-۞ ,, '' सो ताके पास श्री आचार्यजी महाप्रभु कों विद्या पढन बैठाए। सो नारायण भट्ट **सांडिल्य रिसी को प्रागट्य** है ÷ सो सांडिल्य रिसी के किये हुए भक्ति सूत्र बहोत है। सो सबकों प्रमान है। सो सांडिल्य रिसी को प्रागट्य नारायन भट्ट भये। सो तिनके पास श्रीआचार्यजी महाप्रभु विद्या पढ़न लागे। सो चार महिना में चारयो वेद और अठारह पुरान और सब शास्त्र पढ़े। सो **तहाँ यह संदेह होय जो 'श्रीआचार्यजी महाप्रभु'** पूरन पुरुषोत्तम है। सो चारि महिना लों क्यों पढ़े जाई। जो इनकों तों सगरो ज्ञान स्वतः ही सिद्ध होय। सो तहां अब कहत हैं। जो जैसे श्रीकृष्ण सांदीपनि रिसी के यहां पढ़े। सो चारि महिना लों पढ़े।'' ✿

(आ) **भावनावाली घरुवार्ता**- सो तातें श्रीगुसाँईजी सर्वोत्तम ग्रन्थ में कहे हैं जो, ''रासलीलैकतात्पर्य।'' सो काहे तें जो जितनी श्रीठाकुरजी की लीला हैं सो तामें सर्व लीलाको फल रासलीला सर्वोपरि है। सो नातें निकुंज लीला में प्रेम पूरित जो छिनु छिनु में प्रेम रस, सो रस समुद्र, सो तामें श्रीआचार्यजी महाप्रभु मगन रहत हैं।''

इसी प्रकार की भावनावाली श्री महाप्रभुजी की प्रागटच वार्ता आदि श्रीहरिरायजी के अन्य भी अनेक भावना ग्रन्थों में मिलती है। जिनका सामूहिक रूप की ''सूर सागर'' जितना बृहद् हो सकता है। इससे यह भी स्पष्ट हो जाता है कि सम्प्रदाय की प्राप्त सभी वार्ताओं पर भावनाओं के कहने वाले दीर्घजीवी थे। गो. श्रीहरिरायजी १२५ वर्ष भूतल पर विद्यमान रहे थे। अतः इससे भी इन भावनाओं के प्रणेता श्रीहरिरायजी सिद्ध होते हैं।

३-शैली से-

श्रीहरिरायजी के संस्कृत ग्रन्थों से यह स्पष्ट होता है कि आपकी वस्तु प्रतिपादन शैली पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष वाली होती थी। यथा-

निष्काम लीला ग्रन्थ ✶-

प्रारंभ, पूर्वपक्ष- ''नन्वत्र भगवतः कामलीला निरूप्यते। **सानुपपन्ना** । कामस्य प्राकृत शरीराधारत्वनियमेन भगवति तादृश तद्वत्त्वापातात्''

इस प्रकार इस ग्रन्थ में सर्वत्र पूर्वपक्ष और फिर उत्तर पक्ष से तत्त्वों का प्रतिपादन किया गया है। पूर्वपक्ष करने वाले भी स्वयं गो. श्रीहरिरायजी है और उत्तर पक्ष भी आप ही का है। यही शैली इस वार्ता ग्रन्थ में भी सर्वत्र देखने में आती है। यथा-

(अ) ''यह वार्ता में बहोत संदेह है .... यहाँ यह भाव जाननो। पृष्ठ १०४

(आ) ''यह वार्ता में बहोत संदेह है जो सेठ सेरा छोड़िके दक्षिण क्यों गये ...। तहाँ कहत हैं .... पृ १०७

इस प्रकार की शैली से भी इस वार्ता ग्रन्थ के प्रणेता गोस्वामी श्रीहरिरायजी ही सिद्ध होते हैं।

अब हम इस ग्रन्थ के वर्ण्य विषयों को देखेंगे।

۞ संखेड़ा तथा मथुरा की हस्तलिखित प्रतियाँ से।

÷ इस ८४ वार्ता- ग्रन्थ में कविराज भाट को सांडिल्य मुनि के अवतार कहे हैं। जब कि उद्धरित निजवार्ता के भाव प्रकाश में नारायण भट्ट को सांडिल्य कहे गये हैं। भाषा से दोनों वार्ताओं के भावप्रकाश के कर्ता एक ही स्पष्ट होते हैं। इस परिस्थिति में यह प्रश्न होता है कि एक ही वार्ताकार के कथनों में इस प्रकार का विरोधाभास क्यों है। इसका उत्तर यह है कि सम्प्रदाय में एक ही स्वरुप की भाव भूतल पर प्रकट होना माना गया है। (देखो सम्वाद) दृष्टांत के लिये, इसी वार्ता ग्रन्थ को ही लीजिये इसमें कृष्णदास मेघन और कुंभनदास दोनों को 'विसाखा' के अवतार माने हैं। इसी प्रकार ग्रन्थों के भी हैं। इसका वृहद् विवेचन और कुंभनदास की वार्ता में है। अतः वह विरोधाभास रूप नहीं है।

✿ नडियाद से प्रकाशित ''श्री हरिराय वाङ्मुक्तावलि''

४-वर्ण्य विषयों से- इस ग्रन्थ में साम्प्रदायिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक और भौगोलिक अनेक बहुमूल्य तत्त्व प्राप्त हैं जिनसे ग्रन्थकार की उच्चकोटि की विद्वता, बहुश्रुता, साहित्य प्रियता और उनका पृथ्वी पर्यटन स्पष्ट होता है। स्थानाभाव से हम इन चारों बहुमूल्य तत्त्वों के कुछ अंशों पर ही यहां विचार करेंगे।

(१) इस ग्रन्थ के साम्प्रदायिक तथ्यों को हमने एक भिन्न सूची रूप में इसी ग्रन्थ में अन्यत्र उपस्थित किये हैं। जिनसे ग्रन्थकार का वेद, शास्त्र, पुराण, ज्योतिष, भागवत, निबंध, सुबोधिनी, तथा सम्प्रदाय के अन्य भी महाप्रभु भी और श्रीविट्ठलेश प्रणित अनेक महत्वपूर्ण ग्रन्थों-जिनकी सूची भी अन्यत्र दी हुई है- का मर्मज्ञ होना निश्चित रूप में जाहिर होता है।

(२) इसी प्रकार उन्ही तत्त्वों से ग्रन्थकार की शुद्धाद्वैत ज्ञान तथाच साम्प्रदायिक सेवा पद्धति की आचार क्रिया और भावना आदि में भी निपुणता स्पष्ट होती है।

ग्रन्थकार ने इस ग्रन्थ के भावप्रकाश में कई स्थानों पर महाप्रभु प्रतिपादित पुष्टि की चतुर्विध अवस्थाओं को प्रेम, आसक्ति, व्यसन, और तन्मयता के लाक्षणिक ढङ्ग में उनके आचारों के साथ मार्मिक रूप से उपस्थित किया है। वह उनके अनुभव सिद्ध कुशल प्रेम प्रणाली के ज्ञान को सूचित करती है। पुष्टि की ये चर्तुविध अवस्थाएं उनके लाक्षणिक ढंग से इस प्रकार प्रेम की चार अवस्था रूप हैं। - पुष्टि प्रवाह से प्रेम, पुष्टि मर्यादा से आसक्ति, पुष्टि-पुष्टि से व्यसन और शुद्ध पुष्टि से तन्मयता इन चारों में ग्रन्थकार ने आसक्ति रूप पुष्टि मर्यादा अवस्था पर्यंत सेवा की शास्त्रीय मर्यादाओं का पालन किस प्रकार करना चाहिये उसका सुंदर विवेचन अनेक वार्ताओं के भावप्रकाश में किया है। विशेषतः सूरदास और कुंभनदास की वार्ताओं के भावप्रकाश में। व्यसन पुष्टि-पुष्टि अवस्था में उन मर्यादाओं का उलङ्घन प्रेम के विशेष भर से स्वतः हो जाता है। उसका भी वर्णन, गञ्जन-धावन और वेश्या आदि की वार्ताओं के भावप्रकाश में किया गया है। शुद्ध पुष्टि, शुद्ध प्रेम रूप तन्मय अवस्था के तदीयत्व का वर्णन दामोदरदास, अच्युतदास आदि की वार्ताओं में है।

इसी प्रकार से इसमें सम्प्रदाय के प्रमाण प्रमेय, साधन और फल इन चारों तत्त्वों का भी सुचारु और सुसङ्ग वर्णन प्राप्त होता है। विवेचनों और सम्प्रदायके निगूढ़ अन्य तत्त्वों के सुसङ्गत और सुचारू वर्णनों से यह स्पष्ट हो जाता है कि इस ग्रन्थ के व्याख्याता सम्प्रदाय का परिपक्व ज्ञानी और महानुभाव सेवा कुशल कोई आचार्य ही होना चाहिये। गो. श्रीहरिरायजी का साम्प्रदायिक परिपक्व ज्ञान, उनकी महानुभावता और सेवा रसिकता आदि उनके ग्रन्थों से स्पष्ट है। अतः यह ग्रन्थ आपही के द्वारा कहा हुआ सिद्ध होता है।

(३) सम्प्रदाय में ऐसे तीन ही आचार्य हुए हैं। जिन्होंने पुष्टिभक्ति की भावनाओं को प्रकट किया है। ओर उन्हीं को अपने संस्कृत और ब्रजभाषाओं के ग्रन्थों में स्वयं लिखी भी है।

ये तीन आचार्य ये हैं -

१ - श्रीगोकुलनाथजी- (वि.सं. १६०७से १९६७) आपकी सेवा भावना, रहस्य भावना आदि प्राकृत ग्रन्थ सम्प्रदाय में प्रसिद्ध ही है।

२- श्रीहरिरायजी - (वि.सं. १६४७ से वि.सं. १७७२) आपके सहस्त्री भावना आदि संस्कृत ग्रन्थ, नित्य लीला आदि ब्रजभाषा के पद्य ग्रन्थ, तथा छप्पन भोग भावना, चिंतन (लीला भावना) छाक बीडी की भावना, बसंत आदि की भावना इत्यादि ब्रजभाषा के कई गद्य ग्रन्थ सम्प्रदाय के प्राचीन साहित्य में उपलब्ध है। इन भावनाओं का संकेत आपके सेवक विट्ठलनाथ भट्ट ने सम्प्रदाय- कल्पद्रुम में श्रीहरिरायजी के ग्रन्थों का उल्लेख करते हुए यों किया है -

''कवितावली रु भावना, वैष्णव लक्षण लक्ष।'' ''

ऐसे- छाक रु बीडी भावना, वर्णत हैं नृप मान ॥'' पृष्ठ १४७

३- श्रीद्वारकेशजी- वि.सं. १७५१ से १८०० (के आसपास) आपके भाव भावना, भाव संग्रह आदि ब्रजभाषा गद्य ग्रन्थ स्वहस्त के लिखे हुए प्रसिद्ध ही हैं।

इन तीन आचार्यो के सिवा आज पर्यंत किसी ने भी कहीं स्वतंत्र ग्रन्थ रुप से कही या लिखी नहीं है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में लीला भावना और अन्य भावनाओं की विद्यमानता से इस ग्रन्थ के प्रणेता गो. श्रीहरिरायजी सिद्ध होते हैं।

(४) इस ग्रन्थ के कई वचनों का यथास्थित साम्य श्रीहरिरायजी के संस्कृत ग्रन्थों के श्लोकों से होता है जिनमें से कुछ ये हैं –

(अ) **भावप्रकाश–** ''तथा दामोदरदास की देह मात्र दीसत है परंतु श्रीआचार्यजी को आवेश अष्ट प्रहर रहत है। जो मुख सों श्रीआचार्यजी बोलत हैं। तातें श्रीगुसाँईजी कहत है, जो हमको यह वार्ता **श्रीआचार्यजी महाप्रभु तुम द्वारा कहैं।''**

इस प्रकार इतिहास से भी यह स्पष्ट है कि गो. श्रीविट्ठलनाथ जी को सम्प्रदाय का रहस्य समझने में दामोदरदास सहायभूत हुए थे। उस बात का संकेत ''श्रृंगार रस मंडन'' के अंत में स्वयं गो. श्रीविट्ठलनाथजी ने भी किया है। वार्ता से उसकी अच्छी तरह से पुष्टि होती है।

दामोदरदास में महाप्रभु की सदा स्थिति मानी गई है। अतः उनके द्वारा कही हुई बातें महाप्रभु के ही वचन रूप मानी हैं। इसीलिये उक्त उद्धरण की श्रीहरिरायजी के ''स्वमार्गीय सेवाफल निरुपण'' के ११ में श्लोक से यों पुष्टि होती है।

''श्री मत्प्रभोस्तु तद्दान माचार्येभ्यो न संशयः।''

अर्थात् ''श्रीप्रभुचरण विट्ठलेश को आचार्यजी से ही पुष्टिभक्ति का दान हुआ इसमें कोई सन्देह नहीं'' इस प्रकार यहां भावप्रकाश के पूर्व उद्धरण के अर्थ का साम्य होता है।

(आ) **भावप्रकाश–** ''और श्रीआचार्यजी के अंग द्वादश हैं सो स्वरूपात्मक हैं।''

यहां श्रीहरिरायजी आचार्य का भगवद् भाव रूप से निरुपण करते हैं।

भावप्रकाश– 'उहां सगरी रहस्य लीला में श्रीस्वामिनीजी की आज्ञाकारी जैसे ललिताजी है तैसे हि इहां श्रीआचार्यजी की आज्ञाकारिनी ललिता रूप दामोदरदास''

यहां और अन्यत्र भी श्रीहरिरायजी आचार्य का स्वामिनी रूप से भी निरुपण करते हैं।

आचार्य जी के इन्हीं दोनों रूपों का श्रीहरिरायजी ने अपने संस्कृत के अनेक ग्रन्थों में यों निरुपण किया है–

''स्वामिनी भावसंयुक्त भगवद भाव भावितः, अत्यलौकिक मूर्ति श्रीवल्लभः शरणं मम। इत्यादि (श्रीवल्लभशरणाष्टक)

(ई) भावप्रकाश–''और वैष्णव सेवा अत्यन्त दुर्लभ दिखाई ठाकुरजी को गुरु को दास होई सेवा करे, परंतु वैष्णव को दास वैष्णव की सेवा होनी बहोत कठिन है। यह सिद्धांत दिखाये। ''''

यहाँ श्रीठाकुरजी और गुरु से भी वैष्णव का उत्कर्ष विशेष रूप से दिखलाया है। अतः वैष्णवों पर अधिक भाव रखना आवश्यक कहा गया है।

श्रीहरिरायजी अपने शिक्षापत्र तथा कीर्तन आदि में इसी बात को यों स्पष्ट करते हैं।

शिक्षा पत्र– ''तदीयेषु च तद्बुद्धया भरः स्थाप्यो विशेषतः।
यथा दूतीषु भवति विषयीणां मति स्तथा॥'' पत्र १/१९

श्रीहरिरायजी स्वयं आचार्य होते हुए भी वल्लभीय अनन्य वैष्णवों के प्रति इस प्रकार का दासत्व दिखलाते हैं।

'ये नित्यं परिभावयन्ति चरणौ श्रीवल्लभ स्वामिनो।
ये वा तद्गुणगान सेवनपरा ये सन्निधि स्थायिनः॥
ये वा तद् गत भाव भावित मनो मोदान्विताः सन्ततं।
तेषामेव सदास्तु दास्यमपरं किंवा फलं जन्मनः॥

इस प्रकार ये समग्र ''दास्याष्टक'' ग्रंथ से श्रीहरिरायजी ने अपने वल्लभियों का दास होने की कामना की है।

इसी प्रकार उनके इस पद में देखिये–

हौं वारि इन वल्लभीयन पर।

मेरे तनकों करों बिछौना सिस धरों इनके चरनन तर ।।

अतः इस प्रकार के भाव से यह स्पष्ट होता है कि श्रीहरिरायजी को वैष्णवों पर अत्यधिक स्नेह था। और उनकी दृष्टि में वैष्णवों की सेवा भी उतनी ही महत्वपूर्ण थी।

ऐसे चारित्र्यवान महानुभाव ही पूर्व उद्धरित भावप्रकाश की पंक्तियाँ कह सकते हैं।

(ई) भावप्रकाश– ''तासों ब्रह्मसंबंध को दान वल्लभकुल ही तें होय। सो और तें फलित नांही है।'' (कृष्ण–अधिकारी की वार्ता)

इसका स्पष्ट अर्थ यही है कि ब्रह्मसंबंध की दीक्षा बल्लभकुल से लेनी चाहिये। तभी शरण जाना सिद्ध होता है।

इसी बात का गो. श्रीहरिरायजी अपने ''स्वमार्गीय शरण समर्पण सेवादि निरुपण'' ग्रन्थ में यों कहा है–

''तत्रादौ शरणं यातः किं कुर्यादित चोच्यते।

श्रीमदाचार्यमार्गीय गुरुणां शरणंगतः ।।१।।

यहां भी श्रीमदाचार्य के मार्ग के गुरु अर्थात् आचार्य वंश के शरण जाने का ही निर्देश है।

(उ) **भावप्रकाश**– 'सो यातें जो गुरू को कार्य करनो। कोई प्रकार सों होई। गुरु सेवा बने।'

यहां किसी प्रकार से गुरु का सेवा अर्थात् उनको संतुष्ट करने पर जोर दिया है। इसी बात को अपना 'स्वमार्ग मर्यादा निरुपण'' ग्रन्थ में श्रीहरिरायजी ने यों कहा है–

''यथा कथञ्चित् स्वस्वामि सन्तोषोत्पादनं हितम्।

तस्मिंस्तुष्टे फलं सर्वं सिद्ध मेव न संशयः ।।''

(५) इस ग्रन्थ मे गोस्वामियों की कुछ घरेलू बातें ऐसी हैं, जो उनके सिवाय अन्य को ज्ञात नहीं हो सकती। यथा –

(१) तातें श्रीगुसाँईजी ने सात लालजीन में बड़े घर (प्रथम पुत्र श्रीगिरिधरजी के घर) यह रीति राखी उपवास। और ठौर उत्संवाते च पारणा। पृ. ३५

(२) तब छोटो स्वरूप करि श्रीआचार्यजी के चिबुक सों मस्तक श्रीठाकुरजी को लग्यो, इनते बड़े भये। सो स्वरूप श्रीयमुनाजी, गिरिराज, सखा, सखी, गाँऊ, कुंज, चौरासी कोस ,सगरो स्वरूपात्मक चिह्न सहित हैं। तातें श्रीआचार्यजी श्रीमथुरानाथजी नाम करे। पृ.६२

(३) ''ता दिन मतें माला नाम ''माधवदास'' कहे (श्रीनवनीतप्रिय के यहाँ आज भी यह माला इसी नाम से पहचानी जाती है।) पृ. १४९

(४) ''और उह रात्रि श्रीगसाँईजी के प्रागटय के गर्भ स्थिति को मुहूरत हतो।'' पृ. ६५

(चैत्र वद नौमी के इस दिन कई स्थानों पर गुप्त उत्सव माना जाता है।)

(५) ''ता दिनतें खीर अनसखड़ी में करें। ताको कारन यह जो अनसखड़ी श्रीठाकुरजी सगरे भोग में अरोगत हैं। और खीर उत्सव के भोग में नांही राखे। नित्य में राखे।'' पृ.१७७

इसी प्रकार के श्रीस्वामिनीजी के लिये प्रत्युक्त ''दूसरे स्वरूप'' आदि गोस्वामियों के घरेलू सांकितक शब्द भी इस ग्रन्थ में प्राप्त हैं।

इसी प्रकार की और भी कोई बातें है जो स्थान संकोच से यहां उपस्थित नहीं की जा रही है। इन बातों के अतिरिक्त महाप्रभु के सेव्य निधियों तथा उनके ग्रन्थ आदि का परिचय और कवियों के प्रासंगिक काव्यों का ज्ञान भी गोस्वामि वर्ग को ही उस समय में हो सकता था।

इन सब ठोस प्रमाणों के आधार पर इसके प्रणेता गो. श्री हरिरायजी ही सिद्ध, होते हैं।

(६) इसी प्रकार इस ग्रन्थ की लीला भावना एक विशिष्ट प्रकार के अनुभव का विषय है। कौन वैष्णव लीला में कौन रूप है उसका ज्ञान भगवद् लीला के साक्षात्कार बिना नहीं हो सकता। गो. श्रीहरिरायजी को भगवान और भगवान की लीलाओं का साक्षात्कार था उसकी पुष्टि उनकी रचनाएँ और चरित्रों से होती है। कैसा भी चतुर व्यक्ति बिना अनुभव ऐसा सुसङ्गत, सम्प्रदाय के सिद्धांतों के निगूढ़ मर्म रूप, ऐसा रोचक और अविरुद्ध वर्णन नहीं कर सकता हैं। अतः इससे भी यहीं मानना होगा कि उसके प्रणेता गो. श्रीहरिरायजी ही थे।

साहित्यप्रियता– इस ग्रन्थ के आद्योपान्त पढ़ने से यह निश्चित होता है कि ग्रन्थकार काफी साहित्य प्रिय होना चाहिये। उसमें काव्य प्रियता भी काफी होती तभी तो उसने कवियों के अप्राप्य परिचय और साहित्य को इसमें एकत्रित करने का इस प्रकार का भारी श्रम उठाया है। प्रभुदास भाट, त्रिपुरदास कायस्थ आदि व्यक्तियों के विशेष परिचय और साहित्य इसके उदाहरण हैं।

श्री हरिरायजी न केवल साहित्य प्रेमी ही थे कि कवि भी थे। आपने संस्कृत और ब्रज आदि भाषाओं के गद्य पद्य में अपरिमित साहित्य तथाच काव्यों का भी सृजन किया है। इससे इस ग्रन्थ के प्रणेता आपही सिद्ध हो सकते हैं।

ऐतिहासिक तथ्य– यद्यपि यह ग्रन्थ विशुद्ध इतिहास के रूप में कहा गया नहीं है, फिर भी इस ग्रन्थ में एतिह्य तथ्यों की भरमार है। काफी अन्वेषण के पश्चात हम अब निश्चयात्मक रूप से कह सकते हैं कि एतिह्य बहुधा अंतः साक्ष्य और विश्वस्त समकालीन बहिः साक्ष्यों के आधार पर ही कहे हुए हैं। अतः वे सबके सब प्रामाणिक है। स्थानाभाव से हम यहाँ अष्टछाप के केवल ४ कवियों के कुछ ही ऐतिह्य अंशों की प्रामाणिकता को देखेंगे –

✶ सूरदास–

१– **जन्मांधता**– ''जो जन्मे पाछें नेत्र जाय तिनकों आंधरा कहिये ,सूर न कहिये। और ये तो सूर हैं।'' (पू. ३)''सो सूरदासजी कों जन्मत ही सों नेत्र नांही हैं।''

(पृ.३) (अष्टसखान की वार्ता)

इस कथन की पुष्टि इन अंतः साक्ष्यों से होती है –

(१) ''नेत्र अछत अरु दिवस होत नहीं॥''

(२) ''सूरदास पर बहुत निठुरता नैनन हू की हानी।''

(३) ''सूर की बिरियां निठुर होय बैठें जन्म अंध करयो।''

(४) ''करम हीन जनम को अंधो मोतें कौन नकारों।'' इत्यादि

२– **बाल्यकाल में गृहत्याग, स्वामित्व**– सूरदास का बाल्य अवस्था में गृह त्याग करना और स्वामी होने के पश्चात देर में शरण आने का भाव प्रकाश का उल्लेख इन अंतः साक्ष्यों से पुष्य हैं –

(१) ''चल्यो सवेरो आयो अवेरो लेकर अपने साजा।''

(२) ''सिमिट जहाँ तहाँ ते सब कोऊ आय जुरै इक ठोर।''

✶ अष्टछाप के चरित्र और सिद्धांतों पर हमने एक स्वतंत्र वृहद् लेख तैयार किया है। जिसका प्रथम अंश है ''सूर –समीक्षा''। इस ग्रन्थ को हम शीघ्र प्रकाशित कर रहे हैं। उसमें इन अंतः साक्ष्यादि प्रमाणों को पूर्ण रूप से उद्धृत करते हुए इनकी समीक्षा भी की गई है।

(३) ''मरियल लाज 'सूर' पतितन में कहत सबै मोहि नीको।''

३– गाम और जाति– '' सूरदासजी दिल्ली पास चारि कोस उरे में एक सींही गाम है... सो ता गाम में एक सारस्वत ब्राह्म के यहाँ प्रगटे।''

(१) सींहों की पुष्टि श्रीगोकुलनाथजी के समकालीन 'प्राणेश' कवि के अष्टसखामृत से होती है।

(२) ब्राह्मणत्व की पुष्टि इन अंतः साक्ष्यों से होती है –

(अ) ''सूरदास भगवंत भजन लगि तजि जाति अपनी।''

(आ) ''गई ज्ञाति अभिमान मोह मद पति हरिजन पहिचानि।''

उत्तम जाति का त्याग ही उल्लेखनीय हो सकता है। इस आधार पर ये ब्राह्मण ही सिद्ध होते हैं।

४– शरण पहले के विरह के पद–

''सो सूरदास बिरह के पद सेवकन कों सुनावते ......''

(१) ''सूर हरिको सुमिरन करिके मिलि जा जातें भयो बिछोयो।''

५– वल्लभशरणागति–

(१) श्रीवल्लभ अवकी बेर उबारो।
सब पतितन में विख्यात पतित हों पावन नाम तिहारो।
'सूर' अधम कों कहुं ठौर नहीं बिना एक सरन तुम्हारो॥

(२) 'सूरदास वल्लभ उर अपने चरन कमल चित्त लावें।

ऐसे अन्य भी वार्ता के कई विषयों पर अंतः साक्ष्य मिलते हैं। जो स्थानाभाव से यहां नहीं दिये जा रहे हैं। उन पर हम अपने आगामी प्रकाशन ''सूर–समीक्षा'' में प्रकाश डाल रहे हैं।

६–सख्यता–

(१) तुम ही मोकों ढीट कियो '' प्रभु तुम मेरी सकुच मिटाई।

(२) आज हों एक एक करि टरि हों।

परमानंददास –

(१) श्रीकृष्णस्वरूप के दर्शन–

''और मोकों श्रीआचार्यजी आपु कृपा करिके श्रीकृष्णजी के स्वरूप को दरसन दियो है।''

(१) ''परमानंददास को ठाकुर जे वल्लभ ते सुंदर स्याम'।

२ क्षत्री कपूर के संग से आचार्य प्राप्ति–

(१) मैं श्रीवल्लभ रतन जतन करि पायो॥

३ नवनीतप्रियजी को दर्शन–

''श्रीनवनीतप्रियजी की सन्निधान कृपा करिके नाम सुनायो।''

(१) ''परमानंददास को ठाकुर नैनन प्रगट दिखायो।''

४ समर्पन–

(१) ''अब तो जिय ऐसी बनि आई कियो समर्पन देह रा।'

५ श्रीनाथजी के कीर्तन की सेवा–

(१) सदा समीप रहों गिरधर के सुंदर वदन चहों।

(२) कारन कौन दास 'परमानंद' द्वारें दाद ने पावें।

६ अडेल से ब्रज में जाने की अभिलाषा–

''ब्रज के दरसन की प्रार्थना कीनी '' (पृ. ४३)

(१) जइये वह देस जहां नंदनंदन भेटिए।
निरखिये मुख कमल कांति विरह ताप मेटिए ॥
इह अभिलाष अंतरगत प्राननाथ पूरिए।
सागर करुणा उदार विविध ताप चूरिए।
छिनु छिनु पल कोटि कलप बीतत अति भारी।
' परमानंद' प्रभु कल्पतरु दीनन दुःख हारी।
गोकुलघाट उतरे समत की विकलता–

(२) खेवटियारे बीर अब मोहे क्यों न उतारे पार।
मेरे संग की सबहि उतरिके भेटी नंदकुमार ॥ ''
'परमानंद' प्रभु सों मिलाय तोहि देऊ गरे को हार।

७ सख्यता–

(१) परमानंददास सब जाने जिहिं खेल्यों मिलि साथ।

(२) दास परमानंद संग हैं नातर परती पांइ।

इत्यादि अनेक अतः साक्ष्य वार्ता की सर्वाशतः पुष्टि करने वाले उपलब्ध हैं जिनको हम अपने ''अष्टछाप और उनके सिद्धांत'' में देंगे।

कुंभनदास–

इनकी वार्ता की पुष्टि के अनेक साक्ष्य वार्ता में ही दिए हुए है। जैसाकि– टोंड के घने का प्रसंग –

(१) लाल तोहि भावे टोंडकों घनो।

सीकरी का प्रसंग ---

''भक्त कों कहा सीकरी काम।''

इनसे विशेष एतिह्य साक्ष्यों को हम 'अष्टछाप और उनके सिद्धांत' में विवेचना पूर्वक देंगे।

कृष्णदास–

१ वल्लभशरणागति–

(१) तबतें स्याम सरन हों पायो।
जब तें भेट भई श्रीवल्लभ निजपति नाम बतायो।

२ श्रीनाथजी के मंदिर और कीर्तन का संबंध–

(१) 'कृष्णदास श्रीनाथजू के मंदिर प्रमुदित मंगल गावे।

(२) कृष्णदास ढाढ़ो सिंघद्वारे पीवत प्रेम पीयूष कों।

३ श्रीगुसांईजी से अनबन और उनके द्वारा क्षमा–

(१) 'कृष्णदास सुरतें असुर भये, असुर तें सुर भये चरनन छोय।'

(२) कृष्णदास की बांह पकरि के मारग में डारयो।

इसी प्रकार बीरबल और बंगालीओं के प्रसंगों की पुष्टि भी श्रीगुसाँईजी के पत्र तथा अन्य साधनों से होती है जिनका विवेचन ''अष्टछाप और उनके सिद्धांत'' नामक ग्रन्थ में किया जाएगा।

इन सब अंतः साक्ष्यों से इस ग्रन्थ की एतिह्य प्रामाणिकता भी सिद्ध होती है।

भौगोलिक वर्णन –

इसी प्रकार इस ग्रन्थ के भौगोलिक वर्णन की प्रामाणिकता भी आज की भूगोल से सिद्ध होती है। उस पर विचार करते समय यह ध्यान रखना आवश्यक है कि उस समय हिन्दुस्तान के स्थान, और आज कासा रास्ता सूचक नकशा प्राप्त न था। अतः अनुभव और पर्यटन के आधार पर ही इस ग्रन्थ में स्थान, तीर्थ और रास्ताओं का वर्णन हुआ है। जिनकी पुष्टि आज के नकशों से भी होती है।

इसमें कई तीर्थ और गाँव ऐसे आये हैं जिनके नाम सहज सुलभ रूप से आज भी ज्ञात नहीं हो सकते। यथा –

वाड, चोइला, मणुंद, पीपरी गाँव, अमीतीर्थ, पृथोदक तीर्थ आदि अप्रसिद्ध सुदूरवर्ती स्थान और तीर्थ। इन नामों की सूची इसी ग्रन्थ में अन्यत्र दी गई है। अतः मानना होगा कि ग्रन्थकार ने भारत का काफी भ्रमण किया होगा उसके आधार पर ही उसने ऐतिह्य और भौगोलिक प्रामाणिक तत्वों का इनमें संग्रह किया होगा।

गो. श्रीहरिरायजी ने भारत का काफी भ्रमण किया था। उस बात को जिस प्रकार उनके वंश परंपरागत उपदेश और सम्प्रदाय के प्रचार पद्धति से जाना जा सकता है, उसी प्रकार उनकी ''बैठकें'' और विविध भाषाओं में उनकी प्राप्त रचनाओं से भी ज्ञात हो सकता है।

इस आधार पर यह मानना पड़ेगा कि श्रीहरिरायजी जैसे व्यापक ज्ञान वाले साहित्य प्रिय कोई आचार्य ही इस ग्रन्थ के प्रणेता हो सकते हैं।

यों सभी प्रकारों से इस ग्रन्थ के प्रणेता के स्थान गो. श्रीहरिरायजी के नाम की ही पुष्टि होती है।

अब इस ग्रन्थ के स्वरूप, लेखन और गद्य पर भी कुछ विचार करना आवश्यक प्रतीत होता है।

१. स्वरूप – इस ग्रन्थ को हमें किस रूप में स्वीकार करना चाहिये यह प्रश्न सब से प्रथम होता है।

ग्रन्थ के प्रारम्भिक कथन और उसकी वार्ताओं के प्रत्येक शीर्षक से यह निसंदेह स्पष्ट है कि यह गो. श्री गोकुलनाथजी की कही हुई ८४ वैष्णवों की वार्ताओं का ही बृहद रूप है। अतः एक प्रकार से यह ग्रन्थ ८४ वार्ताओं की अस्वतंत्र टीका रूप माना जा सकता है। किन्तु इस ग्रन्थ में कुछ विशेष चरित्र और भावनाएँ भी ऐसी उपलब्ध होती है जिनसे हम इसको वार्ताओं की स्वतंत्र व्याख्या रूप भी कह सकते हैं। मूल ८४ वार्ताओं के प्रसंगों में भी प्रायः प्रति वाक्य इस प्रकार की व्याख्याएँ प्राप्त होती हैं। जिनसे इनके स्वतन्त्र रूप की और भी पुष्टि होती है। इस प्रकार यह ग्रन्थ मूल ८४ वार्ताओं के स्पष्टीकरण रूप टीका और विशदीकरण रूप स्वतंत्र व्याख्या इन दोनों तत्वों का मिश्र रूप वाला है। अतः हम इस सारे ग्रन्थ को श्रीहरिरायजी की स्वतंत्र व्याख्या रूप से मानना ही विशेष उचित समझते हैं। क्योंकि स्वतंत्र व्याख्या में भी मूल वार्ताओं का स्पष्टीकरण तो आ ही जाता है।

लेखन – अब प्रश्न यह होता है कि यह ग्रन्थ इस प्रकार लिखा गया है ? ग्रन्थ के अध्ययन से इस प्रश्न का उत्तर यों मिल जाता है –

ग्रंथ के प्रारंभ के 'कहत हैं सो लिख्यते' तथा प्रत्येक वार्ता के शीर्ष में ''अब श्रीआचार्यजी के सेवक........ की वार्ता को भाव कहते हैं'' इस प्रकार के तत्कालीन वर्तमान क्रियाओं के प्रयोगों से यह निश्चित हो जाता है कि यह ग्रंथ व्याख्यान के समय ही तत्कालिक रूप में लिखा जाता था। इस बात की पुष्टि श्रीहरिरायजी के प्रत्यक्ष कथन रूप ''मैं बलिहारी जात हूँ'' इस प्रकार के प्रयोग आदि से भी होती है।

इस प्रकार ग्रंथ के अध्ययन के आधार पर यह ग्रंथ तात्कालिन लेखन सिद्ध होता है। यहाँ यह

प्रश्न हो सकता है कि क्या उस समय आज के जैसी शीघ्र लिपि प्राप्त थी ? इस प्रश्न के समाधान के लिये हमें गो. श्रीहरिरायजी के व्याख्यानों के भिन्न-भिन्न रूपों को जान लेना आवश्यक है।

गोस्वामी श्रीहरिरायजी के व्याख्यान दो प्रकार के होते थे। एक सार्वजनिक कथा रूप और दूसरा एकांतिक वार्ता रूप। इसकी पुष्टि उनके पूर्वजों की इस प्रकार की व्याख्यान शैलियों से भी हो सकती है। महाप्रभु से लगाकर गो. श्री गोकुलनाथजी पर्यंत और उनके बाद में भी उनके विद्यमान वंशजों पर्यंत भी यही शैली ज्यों की त्यों चली आ रही है। जिसके फलस्वरूप सम्प्रदाय में अनेक वचनामृत, वार्ता तथा भावनाओं के ग्रंथ प्राप्त होते हैं। इस सबकी सूची इसी ग्रन्थ में अन्यत्र दी गई है।

महाप्रभु सुबोधिनी की कथा कहने के पश्चात अपने मुख्य और अंतरंग सेवक दामोदरदास हरसानी से एकांतिक गोष्ठी करते थे। इसी प्रकार श्रीगुसांईजी, चाचा हरिवंश आदि से, गो. श्री गोकुलनाथजी, कल्याण भट्ट प्रभृति से और श्रीहरिरायजी, हरजीवनदास आदि से एकांतिक वार्ताएँ करते थे। इनके उल्लेख ८४, २५२ और अन्य वचनामृत साहित्य में मिलते हैं।

गो. श्रीगोकुलनाथजी के समय से एकांतिक वार्ता आदि को तात्कालिक लिखने की सम्प्रदाय में प्रणाली चली है। उसके कुछ उद्धरण यहाँ दिये जा रहे हैं -

गो. श्रीगोकुलनाथजी के वचनामृत - (हस्तलिखित)

(१) एक समैं श्रीमहाप्रभुजी यैं भट कल्यान नैं ए प्रसंगे कह्यूं -

''अस्मिन प्रसादे प्रसादो जात। मनोर्थांतः परस्पर है। .....''

ए प्रसंग सम्वत् १६९० ना पोष वदी ६ ना रात्रे लख्यूं घड़ी ६ जातें ॥२३॥

(२) ''हागसिर वदी १२ नैंदिने श्री महाप्रभुजी आगल भट कल्यानैं खंभालीयानैं प्रसंग सर्वोत्तम नौं चलाव्यो --''

ऐसा ही एक आधुनिक समय का उद्धरण लीजिये -

गो. श्रीगिरिधरलालजी के १२० वचनामृत। ❀ (समय १९३३ सं.)

''एक समय श्रीमद्गोस्वामी श्रीपुरुषोत्मजी श्रीगिरिधरलालजी महाराज आप प्रसन्न होयके मिती सम्वत् १९३३ के पौष शुक्ला १० भोमवार श्रीसंखेडावारे दासानुदास अनुचर अमथा खुशालदास को बेटा पास बैठ्यौ हतो आपने कृपा अनुग्रह करिके पास राख्यो हतो तासों आपने परम कृपा करिके वचनामृत लिखिवे की योग्यता देकर आज्ञा करी सो याने लिखे।''

सो वचनामृत प्रथम लिख्यते। पहले दिन रात्रि को पोढ़े जा बिरियां अत्यन्त प्रसन्नता समय आज्ञा करी ''जो श्रीरामचन्द्रजी ने चार कार्य पुष्टि के करे हैं।''

इन उद्धरणों से यह स्पष्ट होता है कि एकांतिक वार्ता में जो अंतरंग सेवक उपस्थित होते थे वे व्याख्यान की इच्छानुसार आज्ञा प्राप्त कर उन वार्ताओं को तात्कालिक लिख लेते थे। ये एकांतिक वार्ताएँ जाहिर व्याख्यानों के समान एक धारा वाणी के प्रवाह रूप में नहीं होती थी। किन्तु अपने अंतरंगों को मर्मों के समझाने के लिये शंका समाधान के ढङ्ग से कही जाती थी। अतः शीघ्र लिपि की यहाँ कोई आवश्यकता नहीं थी।

अब हम एक संदेह और उपस्थित करेंगे। इसके समाधान से उक्त बात की विशेष पुष्टि हो सकती है।

यहाँ यह संदेह हो सकता है कि यह तत्कालिन लेखन शैली के स्थान पर यहीं क्यों न माना जाय कि किसी विशेष धारणा शक्ति वाले व्यक्ति ने नित्यप्रति एकांतिक वार्ताओं को श्रीहरिरायजी से सुनकर वह अपने घर जाकर उसको लिख देता था। जिसके फलस्वरूप यह ग्रन्थ तैयार हुआ।

इस संदेह पर विचार करना आवश्यक है।

❀ लल्लू भाई देसाई अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित।

इस संदेह में उपस्थित की गई बात को मान लेने में भाषा और समय की दृष्टि से दो आपत्तियाँ आ सकती है। भाषा की दृष्टि से, इस बात को मानने में यह आपत्ति आती है कि श्रीहरिरायजी के वचनों को किसी व्यक्ति द्वारा अपने ढङ्ग से लिखा मानने पर श्रीहरिरायजी की निश्चित मानी हुई पूर्व भाषा में विभेद और वैषम्य होना स्वाभाविक है। किन्तु इस ग्रन्थ में कहीं भी यह दोष नहीं दिखाई देता है।

समय की दृष्टि से यह आपत्ति आ सकती है कि इस ग्रन्थ की भाषा के समान श्रीहरिरायजी के अन्य अनेक भावनाओं के वृहद् ग्रंथों की भी भाषाएँ मिलती हैं जिनके कुछ उद्धरण पूर्व दिये जा चुके हैं। अतः उन सब ग्रंथों का लेखक अतीव दीर्घजीवी और श्रीहरिरायजी के निरन्तर निकट रहने वाला भी होना चाहिए, जो सर्वथा असंभव प्रतीत होता है। श्रीहरिरायजी के प्राप्त इतिहास में भी ऐसा कोई व्यक्ति उपलब्ध नहीं होता है। अतः यही मानना उचित है कि श्रीहरिरायजी की इच्छा और आज्ञा के अनुसार समय-समय पर उपस्थित योग्य व्यक्तियों द्वारा विविध वार्ताओं की विविध व्याख्याओं को लिख लिया जाता था। और श्रीहरिरायजी द्वारा उनका अवलोकन होकर उन भावों के अधिकारियों में उनका प्रचार होता रहता था। जिसके फलस्वरूप वैष्णव समाज में इसकी व्यापकता और प्रतिष्ठा आज भी अवगत हो रही है।

वल्लभी वैष्णवों की गुरु भक्ति के इतिहास के आधार पर भी यह मानना प्रामाणिक होगा कि इस ग्रन्थ के प्रणेता किसी महानुभाव गोस्वामी आचार्य ही थे। अन्यथा किसी सामान्य वैष्णव द्वारा लिखे हुए ग्रन्थ का वैष्णव समाज में इतना आदर और प्रचार सर्वथा नहीं हो सकता है।

अब हम इस ग्रन्थ की गद्यात्मक भाषा पर विचार करेंगे। इस ग्रन्थ की भाषा पर विचार करते समय हिन्दी के कुछ विद्वानों को उसकी प्राचीनता में संदेह होता है। उन लोगों का कथन है कि इस ग्रन्थ की भाषा इतनी प्रौढ़ और परिमार्जित है, जो शायद वह प्राचीन काल की नहीं जान पड़ती इन विद्वानों के पास इस बात का अनुमान के सिवाय कोई आधार नहीं है। इसके विपरीत सम्प्रदाय के पास ऐसे अनेक ठोस प्रमाण हैं जिनसे न केवल इस भाषा की प्राचीनता ही सिद्ध होती है अपितु उसके क्रमशः गद्यात्मक विकास को भी जाना जा सकता है। वे प्रमाण ये हैं -

१. श्रीमद्वल्लभाचार्यजी - (स. १५३५ - १५८७)

महाप्रभु का कहा हुआ ८४ अपराध का ग्रन्थ सम्प्रदाय में उपलब्ध है। किन्तु इस समय वह हमारे पास विद्यमान न होने से हम उसका उद्धरण देने में असमर्थ हैं।

२-गो. विट्ठलनाथजी ✶ - (वि.सं. १५७२ से वि.सं. १६४२) एक पत्र -

स्वस्ति श्री विट्ठल दीक्षितानां धर्मसी वैष्णवेषु सायणा कृष्णदास यो श्राशिषः। शमिहा भवदीयं भद्रमाशास्महे। अपरञ्च तुम्हारे समाचार तुम्हारे पत्र तें पाये।

सदा भगवत् शरण रति रहियो, ऐहिके दुःख प्राप्त हू भये भगवदीच्छा (जानि), तादशी निजकरि भगवदाधीन आपुन हें, इह जानि के दुःख न करनों। स्व प्रभु चरणारविंद ऐहिके पारलौकिक जानि करि भजियहु। किमधिकं। (पत्र १४)

३-गो. श्री गोकुलनाथजी - (समय वि.सं. १६०८ सं. १६९७)

वचनामृत -एक बार श्रीमुखे वार्ता ना प्रसंगे आज्ञा करी जो ''तुलसीदास मर्यादा मार्गीय हुते परि टेक केसी हती ते उपर दोहा कह्यो -

---

गो. श्री विट्ठलनाथजी के नाम से आज पर्यन्त हिन्दी साहित्य के इतिहासों में श्रृङ्गार रस मंडन की टीका की ब्रजभाषा का जो उद्धरण दिया जा रहा है वह अशुद्ध और भ्रमपूर्ण है। गोस्वामीजी की भाषा का शुद्ध रूप इस पत्र से प्राप्त होता है। इस पत्र की असली प्रति बम्बई गट्टुलालजी के मन्दिर में प्राप्त है।

''बने तो रघवरतें बने, बिगरे तो भरपूर।
तुलसी औरनतें बने, ता बनिवे में धूर ।।''

✶✶✶ सो नंददासजी अष्टकाव्य वारे सो तुलसीदासजी के छोटे भाई। तुलसीदासजी बड़े भाई। सो नंददासजी जब श्रीगुसांईजी के सेवक भए तब तुलसीदास ने कह्यो, भाई तैने व्यभिचार कियो। तब नंददासजी ने कह्यो व्यभिचार तो कियो परन्तु सुख बहुत पायो। –वचनामृत २२०

एक ताम्र पत्र : – (सं. १६६२ मिती मार्गशीर्ष कृष्णा ११ सौम्यवासरे)

स्वस्ति श्रीगोस्वामि श्रीगोकुलनाथजी नां वचनात् ------ निज सेवक जादोजी व्यास ब्राह्मण दीसाबाल कों नाम सुनायवे की आज्ञा दीनी ।। वाराणसी प्रभृति के वैष्णवनकों नाम सुनावे। ठाकुरजी की सेवा और पादुकाजी इनके माथे पधराए ।। श्री श्री संवत् १६६२ मिती मार्गशीर्ष कृष्णा ११ सौम्यवासरे ।। श्री ।। (काशी के सेठ गोकुलदासजी के यहां विद्यमान)

४ गो. श्रीहरिरायजी – (समय वि.सं. १६४७ से वि.सं. १७७२)

पुष्टि दृढाव ♦ –

जैसे श्रीहनुमानजी नें मुक्ताफल को हार फोर डारचो जो रामचंद्रजी को वामें नाम नहीं हतो। तातें हार डार दीनों। तैसे अपने श्री प्रभुजी के गुणानुवाद गान न होत होवें तहाँ ते उठि जैये। ऐसो पतिव्रता को धर्म है। जैसे मीराबाई के घर कीर्तन होत हते। तहां श्रीआचार्यजी के पद गावत हुते। तब मीराबाई बोली जो अब श्रीठाकुरजी के पद गावो। तब रामदास वैष्णव ने कही, जो दारी रांड, ये कौन के पद गावत हैं। जा तेरो मुख न देखुंगो। तब सब अपुनो कुटुंब लेकें और गाम गयो।

तातें सर्वथा चरणामृत लिये बिना जल न लीजिये। जैसे श्रीआचार्यजी के सेवक त्रिपुरदास कायस्थ ने चरणामृत प्रसाद बिना जल न लीनो। (यहाँ विस्तार से वार्ता दी गई है)

तातें वैष्णवकों वैष्णव सों स्नेह राखनों। यों जानिये जो हम सों जूदे मति होवे। ताको दृष्टान्त, जैसे मोहनदास और हरिदास वे श्रीगुसांईजी के सेवक हते। ✶✶ (यहाँ विस्तार से वार्ता है)

इसी प्रकार इस ग्रन्थ में ३२ लक्षणाराजा की वार्ता आदि २५२ की वार्ताएँ भी उपलब्ध है।

५–गो. श्रीगोपेश्वरजी–(श्रीहरिरायजी के छोटे भाई) वि.सं. १६४९ से १७५० के आस–पास।

शिक्षापत्र की टीका – पत्र ३ श्लोक ८ पर की टीका में –

''अन्य मार्ग के धर्म सुनिये नांही, अन्यमार्गीय क्रिया कछु न करिये। सो गोविंददुबे की वार्ता में प्रसिद्ध है जो एक समें गोविंद दुबे मीराबाई के घर गये तहाँ मीराबाई ने आदर सन्मान करि गोविंद दुबे कों राखे। सो मीरा बाई भगवद्भक्त हती परन्तु श्री आचार्यजी महाप्रभु के पुष्टिमार्ग में नांही हती मर्यादा मार्ग में हती। सो यह गोविंददुबे की बात श्रीगुसांईजी ने जानी जो गोविंद दुबे मीराबाई के घर है तब श्रीगुसांईजी एक श्लोक लिखे'' –

भगवत्पदपद्मपरागजुषो न हि युक्तिपरं मरणोऽपितराम्।

इसी प्रकार पत्र ३ श्लोक ११ टीका में –

''श्रीसर्वोत्तम की टीका श्रीगोकुलनाथजी विरचित है तामें लिखे हैं जो पद्मनाभदास सरीखे भगवदीय विरले हैं।''

शिक्षापत्र ३६ श्लोक १३ की टीका –

''भक्त के दुःख कों सहन नाहीं करि सके ऐसे प्रभु वाही समय वा प्रतिबंधकों निश्चय निवृत्त करें।

♦ सम्प्रदाय कल्पद्रुम में श्रीहरिरायजी रचित ग्रन्थों की यादि पुष्टिदृढविका भी नाम है। यथा – ''पुष्टि दृढावलि ग्रन्थ किय गद्यारथ उर धार।'' – पत्र १६४

✶ डाकोर की प्रति में श्रीआचार्यजी छपा है वह गलत है।

काहेतें जो अपन सों कछु न बे तहाँ हरिही रक्षक हे ऐसी ही श्रीमहाप्रभुजी को वचनामृत हे।''

६–श्रीहरिरायजी के समकालीन सेवक का पत्र –

'स्वस्ति श्री हरिरायस्य परमाप्तमेषु यादवेंद्र भट्ट, मधुसूदन भट्ट, गोपीकांत प्रभृतिषु तनयः ॥ शमत्र ॥ तत्रत्यमाशासे ॥ अन्यच्च ॥''

''तुम्हारो पत्र खेपिया कासिद के हाथ समधियानें तें आयो हे सो हम तुम पास पठ्यो हे जैसो जाने तैसो उत्तर लिखियो हमवारो पत्र हू तुमकों पठयो हे पाछें जो तुम्हारो विचार होई सो करियो। मथुरानाथ भाई के संग ठाकुर पास हे ठाकुर राणा के देश में तलाब के पास हे राणा दूसरो गाँव देन कह्यो हे, नयो, तहाँ बैठेंगे, आज हूँ बैठे नाँही ॥ किमधिकं ॥''

''सत्तुजी षुनतिः बंसाभट्ट भागवदासादिष्वाशिषः। जमुनायामीशः मुरलीधरे आशिषः ॥ मानाख्यामामाशी ॥ जमुना कों प्रसन्न राखियो। मेरी दिसी तें बहुत पूछियो।''

–बसंतराम शास्त्री अहमदाबाद से प्राप्त।

७ काका वल्लभजी – ५२ वचनामृत – मुद्रित हो चुके हैं। (समय वि.सं. १७२८ से १७८० आसपास।)

(हमारे पास इस समय उपलब्ध नहीं है। अतः इस ग्रन्थ का उद्धरण हम यहाँ देने में असमर्थ हैं।)

८. गो. श्रीद्वारकेशजी–(भावना वाले)

समय वि.सं. १७५१ से १८०० आसपास।

भावभावना –

''श्रीगोकुलनाथजी विषे यश है। चिद्रुप माला को प्रतिद्वन्दी भयो, तब माला स्थापना किये। यह यश प्रसिद्ध ही हे।''✶✶

''श्री रघुनाथजी विषे श्री हे। तुलसीदास श्रीगोकुल में आये, तब श्रीगुसांईजी सों कहे, सीताजी सहित श्रीरामचन्द्रजी को दर्शन होय यह कृपा करो। तबही रघुनाथजी को ब्याह भयो हतो। सो जानकी बहुजी पास ठाड़े हते। तब आप आज्ञा दिये, जो तुलसीदास कों दर्शन देऊ। तब श्रीरघुनाथजी जानकी बहूजी वेसो ही दर्शन दिये। तब तुलसीदासजी कीर्तन कहे –

बरनों अवध श्रीगोकुल गाम।
उहाँ सरजू इहाँ श्री यमुना एक ही लख ठाम ॥

''ऐसो श्रीगुसांईजी की आज्ञा को विश्वास। श्रियोहि परमाकाष्ठा सेवकास्तादशा यदि''✶✶ पृष्ठ ५१

(सं. १९९३ में शास्त्री वसंतराम अहमदाबाद द्वारा प्रकाशित।)

९ श्री द्वारकेशजी (गत्रूजी)

आपने सप्तस्वरूपोत्सव नाम का ब्रजभाषा में एक वृहद् ग्रन्थ लिखा है जो अहमदाबाद से प्रकाशित भी हो चुका है। किन्तु इस समय हमारे पास यह ग्रन्थ उपलब्ध नहीं है। अतः उसका उद्धरण देने में हम असमर्थ हैं।

१० श्री चट्टुजी महाराज –

(श्रीगिरिधरलालजी १२० वचनामृत वाले।)

✶✶ ''ए वचन कृष्णदासजी ने कहे – जो ''असुर ते सुर भयो चरणनन छोइ।'' श्रीगुरुन को अपराध ऐसे महानुभावी कुं हुं बाधक भयो तो अपनी कहा दिशा!'' या कीर्तन में दोय बात सिद्ध भई। एक तो श्रीठाकुरजी में तथा श्रीगुरुदेव में भिन्न भाव न करनो। और एक श्रीगुरुदेव को अपराध न करनो। फेरि श्रीगुसांईजी ने इनको श्राद्ध ध्रुवघाट पै करवायो। और कुंआं अधुरो हतो सो पुरो करवायो। सो कुंआ

कृष्णदासजी कोई बाजे हे। और वे रूखहूं कुंआं के ऊपर हे तापें बैठे रहते। सो कृष्णदासजी की वार्ता में प्रसिद्ध हे। (वचनामृत १०७)

११ श्रीगोकुलाधीशजी – (१८७६ – १९२५ के आसपास)

''पद्मनाभदासजी के माथे श्रीमथुरेशजी बिराजते सो तुलसां सों बहुत हिले। दिन भर तुलसां की गोद में लोटे और अनेक तरह के तुलसां कूं सुख देते। ऐसे करत तुलसां बड़ी भई तब ब्याही तब तो तुलसां कूं लेवे कूं ससुरार तें आये तब तुलसां कूं बड़ो शोच भयो और कही जो, यह देह श्रीमथुरेशजी बिना कैसे रहेगी ? महा चिंतातुर भई ताप आपसूं सहन भयो। सो तत्काल तुलसां के पास पधारे। तुलसां सों कही, तू सोच मत कर, मैं तेरे संग चलुंगो। ऐसे आपके प्रवचन सुनि के तुलसां रोम रोम प्रफुल्लित भई सवेरो भयो।'' (वचनामृत २०)

१२ श्रीगोवर्द्धनलालजी के वचनामृत – (१९१९ – १९७४)

फेरि एक समय श्रीकाकाजी महाराज ने ऐसे आज्ञा करी जो ''आगे चौरासी, दो सौ बावन कों ब्रह्मसंबंध बेगहि होय जातो हतो और प्रभु सानुभाव भी जल्दी होय जाते हते ताको कारण यह जो वह जीव सारस्वत कल्प में मर्यादा। पुष्ट मातृचरण की गोपी तथा ग्वाल गोप हते। सो वे श्रीमहाप्रभुजी तथा श्रीगुसांईजी द्वारा शुद्ध पुष्ट होय गये।'' — वचनामृत २४।''

(उज्जैन से सं. १९१९ में प्रकाशित श्रीगोकुलाधीशजी तथा श्रीगोवर्द्धलालजी के वचनामृत)

ब्रजभाषा के इन गद्य ग्रन्थों के उद्धरणों से ये बातें स्पष्ट होती हैं –

१ – ब्रजभाषा गद्य का निर्माण विकास और प्रचार का समस्त श्रेय वल्लभ सम्प्रदाय को है। क्योंकि अन्य कहीं भी ब्रजभाषा का गद्य नहीं मिलता है।

२ – ब्रजभाषा का परिमार्जित रूप गोकुलनाथजी के समय से ही प्रारंभ होता है।

३ – इन गोस्वामि वर्ग की ब्रजभाषा में संस्कृत शब्द और प्रयोग का प्राधान्य रहा है।

४– ८४–२४२ वैष्णवों की वार्ताओं को महानुभाव श्रीगोस्वामी आचार्य भी प्रमाण मानते थे। इन उद्धरणों से जहाँ वार्ता की भाषा की प्राचीनता जानी जा सकती है वहाँ उनकी सम्प्रदाय में प्राप्त प्रतिष्ठा का ज्ञान भी स्वतः हो जाता है।

मथुरा
सं. २००५ राधाष्टमी

–द्वारकादास परीख

चतुर्थ प्रिया मुकुन्द रतिवर्धिनी श्रीयमुना महारानीजी

उत्सव चैत्र शुक्ल षष्ठी

अखण्ड भुमण्डलाचार्य वर्य जगद्गुरु **श्रीमन्महाप्रभु श्रीमद्वल्लभाचार्यजी**

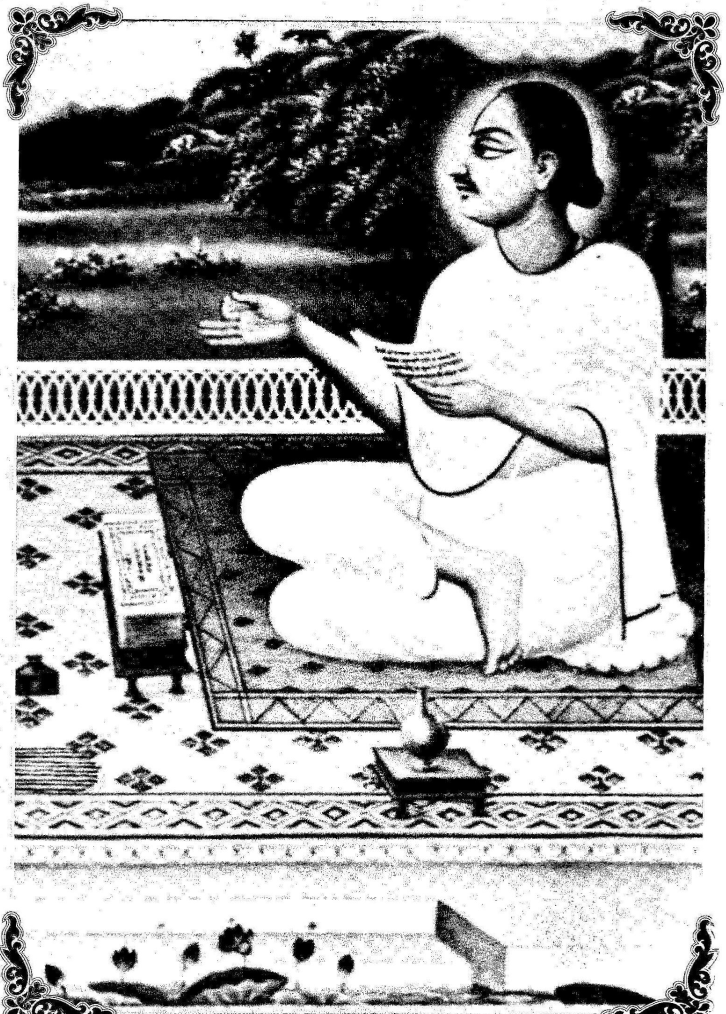

प्रादुर्भाव – विक्रमी संवत १५३५
वैशाख कृष्ण एकादशी

तिरोभाव–विक्रमी संवत् १५८७
आषाढ़ शुक्ल द्वितीया उपरान्त तृतीया

८४ वैष्णवों की वार्तओं की सूची

वार्ता-सं.	नाम		पृष्ठ सं.	प्रसंग सं.
१	दामोदरदास हरसानी की वार्ता	...	१	१०
२	कृष्णदास मेघन की वार्ता	...	१४	८
३	दामोदरदास संभलवाले की वार्ता	...	२४	९
३/१	लोडि की वार्ता	...	३९	१
४	पद्मनाभदास की वार्ता	...	४०	७
४/१	तुलसां की वार्ता	...	५३	२
४/२	पारवती की वार्ता	...	५७	१
४/३	रघुनाथदास की वार्ता	...	५८	२
५	रजो क्षत्राणी की वार्ता	...	६२	१
६	सेठ पुरुषोत्तमदास की वार्ता	...	६५	१०
६/१	रुकमिनी की वार्ता	...	७८	३
६/२	गोपालदास की वार्ता	...	८१	२
७	रामदास सारस्वत की वार्ता	...	८३	३
८	गदाधरदास कपिल की वार्ता	...	८९	३
९	बेनीदास माधवदास की वार्ता	...	९७	२
१०	हरिवंस पाठक की वार्ता	...	१०२	१
११	गोविंददास भल्ला की वार्ता	...	१०५	२
१२	अम्मा क्षत्राणी की वार्ता	...	११०	२
१३	गुज्ञन धावन की वार्ता	...	११३	२
१४	नारायणदास ब्रह्मचारी की वार्ता	...	११७	५
१५	एक क्षत्राणी की वार्ता	...	१२२	२
१६	जीयदास सूरी की वार्ता	...	१२८	१
१७	देवा कपूर क्षत्री की वार्ता	...	१३०	१
१८	दिनकर सेठ की वार्ता	...	१३१	१
१९	दिनकरदास मुकंददास की वार्ता	...	१३४	१
२०	प्रभुदास जलोटा क्षत्री की वार्ता	...	१४०	४
२१	प्रभुदास भाट की वार्ता	...	१४७	१
२२	पुरुषोत्तमदास स्त्री-पुरुष की वार्ता	...	१५०	१
२३	त्रिपुरदास कायस्थ की वार्ता	...	१५४	२
२४	पूरनमल जेंवल क्षत्री की वार्ता	...	१६१	१
२५	जादवेंद्रदास कुम्हार की वार्ता	...	१६५	३
२६	गुसांईदास सारस्वत की वार्ता	...	१६७	१
२७	माधवभट्ट कश्मीरी की वार्ता	...	१६९	४
२८	गोपालदास बांसबाडे वाले की वार्ता	...	१७४	१
२९	पद्मारावल सांचोरा की वार्ता	...	१८२	४
३०	पुरुषोत्तम जोसी सांचोरा की वार्ता	...	१८८	१

३१	जगन्नाथ जोसी की वार्ता	...	१९१	४
३१/१	जगन्नाथ जोसी की माता की वार्ता	...	१९७	१
३१/२	नरहरि जोसी का वार्ता	...	२०१	३
३२	राना व्यास सांचोरा की वार्ता	...	२०७	३
३३	रामदास सांचोरा की वार्ता	...	२१६	१
३४	गोविंद दुबे सांचोरा की वार्ता	...	२२२	२
३५	राजा दुबे माधो दुबे की वार्ता	...	२२९	२
३६	उत्तम श्लोकदास की वार्ता	...	२३८	१
३७	ईश्वर दुबे सांचोरा की वार्ता	...	२३९	१
३८	वासुदेवदास छकड़ा की वार्ता	...	२४१	७
३९	बाबावेनु, कृष्णदास घघरी, जादव खवास की वार्ता	...	२५५	१
४०	जगतानंद सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता	...	२६१	१
४१	आनंददास विश्वंभरदास की वार्ता	...	२६३	१
४२	अडेल की एक ब्राह्माणी की वार्ता	...	२६६	१
४३	प्रयाग की एक क्षत्राणी की वार्ता	...	२६९	१
४४	गोरजा समराई सास बहू की वार्ता	...	२७२	१
४५	कृष्णदासी की वार्ता	...	२७७	२
४६	बूला मिश्र की वार्ता	...	२८०	१
४७	रामदास मेवाड़ा,मीराबाई के प्रोहित की वार्ता	...	२८५	१
४८	रामदास चौहान की वार्ता	...	२८८	२
४९	रामानंद पंडित की वार्ता	...	२९१	२
५०	विष्णुदास छीपा की वार्ता	...	२९७	३
५१	जीवनदास क्षत्री की वार्ता	...	३०४	१
५२	भगवानदास सारस्वत की वार्ता	...	३०८	१
५३	भगवानदास सांचोरा की वार्ता	...	३११	१
५४	अच्युतदास सनोढ़िया की वार्ता	...	३१४	१
५५	अच्युतदास गौड़ ब्राह्मण की वार्ता	...	३१६	१
५६	अच्युतदास सारस्वत ब्राह्मण की वार्ता	...	३१९	१
५७	नारायणदास कायस्थ की वार्ता	...	३२१	१
५८	नारायणदास भाट की वार्ता	...	३२५	१
५९	नारायणदास लुहाणा दीवान की वार्ता	...	३२७	१
६०	सिंहनंद की एक क्षत्राणी की वार्ता	...	३३३	१
६१	दामोदरदास की माता वीरबाई की वार्ता	...	३३९	१
६२	दोऊ स्त्री पुरुष सिंहनंद वाले की वार्ता	...	३४४	१
६३	अड़ेल के एक सुतार कारीगर की वार्ता	...	३४८	१
६४	एक क्षत्री जाको अन्य मार्गीसो स्नेह हतो ताकी वार्ता	...	३५१	१
६५	लघु पुरुषोत्तम क्षत्री की वार्ता	...	३५५	१
६६	कविराज भाट की वार्ता	...	३५६	१
६७	गोपालदास पंजाब के वासी तिनकी वार्ता	...	३५९	

६८	जनार्दनदास चोपड़ा क्षत्री तिनकी वार्ता	...	३६१	१
६९	गडू स्वामी सनाढय ब्राह्मण की वार्ता	...	३६५	१
७०	कन्हैयालाल क्षत्री की वार्ता	...	३६६	२
७१	नरहर गोडिया की वार्ता	...	३७३	१
७२	नरहर सन्यासी की वार्ता	...	३७७	२
७३	सदू पांड़े, भवानी, नरो की वार्ता	...	३८०	४
७४	गोपालदास जटाधारी की वार्ता	...	३८९	२
७५	कृष्णदास स्त्री पुरुष की वार्ता	...	३९३	१
७६	संतदास चोपड़ा क्षत्री की वार्ता	...	३९९	३
७७	सुन्दरदास माधोदास की वार्ता	...	४०७	१
७८	मावजी पटेल और विरजो की वार्ता	...	४१४	२
७९	गोपालदास क्षत्री नरोडा वाले की वार्ता	...	४१९	४
८०	बादरायणदास की वार्ता	...	४२५	१

वार्ता सं.	**नाम**			**पृष्ठ सं.**	**प्रसंग सं.**
१	सूरदास (अष्टसखान की वार्ता)	...	...	४२८	१०
२	परमानंददास	...	...	४७३	७
	कपूर क्षत्री	...	...	३५	
३	कुंभनदास (अष्टसखान की वार्ता)	...	...	५१०	१५
४	कृष्णदास	...	...	५६८	१०
		...	...	से	
		...	...	६१६	

साम्प्रदायिक सूची – १

८४ वैष्णवों के आधिदैविक स्वरूपों की सूची।

★

वार्ता सं.	नाम	आधिदैविक स्वरूप
१	दामोदारदास हरसानी	श्रीललिताजी
	श्रीमहाप्रभुजी	श्री स्वामिनीजी
२	कृष्णदास मेघन	श्री विसाखाजी
३	दामोदरदास संभलवारे	चित्रा
३/९	लोंडि	कृष्णावेशनी
४	पद्मनाभदास	चंपकलता
४/१	तुलसां	मणिकुंडला
	एक वैष्णव	सौरभी
४/२	पारवती	रूप विलासिनी
	पुरुषोत्तमदास महेरा	सुचरिता
४/३	रघुनाथदास	गुनाभिरान्या
	परमानंद सोनी	चंद्रका
५	रजो	रतिकला
६	सेठ पुरुषोत्तमदास	इंदुलेखा
६/१	रुकमनी	मोदिनी
६/२	गोपालदास	गानकला
७	रामदास सारस्वत	प्रेममंजरी
८	गदाधरदास कपिल	कलकंठी
९	बेनीदास	वृषभानजी का बेजार
	माधवदास	रतनप्रभा
	वेश्या	चन्द्रलता
	श्रीगुसाँईजी	श्रीचंद्रावलीजी
१०	हरिवंश पाठक	उत्तालिका
११	गोविंददास भल्ला	''मनसुखा'' पगोप
	मथुरा को हाकिम कंस का कोषाध्यक्ष	(श्वेतवाराहकल्प)
१२	अम्मा	
	रोहिनी	
	दो बेटा	अर्जुन–भोज सखा
१३	गज्झन धाबन	शुभआनना
१४	नारायणदास ब्रह्मचारी	मधुरेक्षणा
	श्रीरघुनाथजी पंचमलाजी	राधा सहचरी
	भतीजी चतुरा	चतुरा
१५	एक क्षत्राणी महावन की	भद्रा
१६	जीयदास सूरी	श्यामा
	पुरुषोत्तमदास	कावेरी

		छबीलदास	...	मनोहर
		कृष्णदास	...	हीरा
		हरिजी	...	छबिधामा
		मथुरा मल्ल	...	मंजुकि
१७	देवा कपूर		...	प्रवीना
		देवाकपूर की स्त्री	...	रसलीना
१८	दिनकर सेठ		...	मन आतुरी
१९	दिनकरदास		...	धरानंद गोप
		मुकुंददास	...	ध्रुवनंद
२०	प्रभुदास जलोटा		...	मन्मथ मोदा
२१	प्रभुदास भाट		...	कलहंसी
		चौधरी	...	कंस का धोबी (कृष्णावतार में)
२२	पुरुषोत्तमदास		...	माधवी
		स्त्री	...	मालती
२३	त्रिपुरदास		...	हरनी
२४	पूरनमल क्षत्री		...	चित्रलेखा
२५	जादवेंद्रदास		...	मदोन्मत्ता (बिजार)
२६	गुसांईदास		...	सूआ
		एक वैष्णव	...	चतुरा
२७	माधव भट्ट		...	रत्ना
२८	गोपालदास बांसवाडे के		...	रसप्रकाशिका
२९	पद्मारावल		...	विमला (द्वारकालीला)
३०	पुरुषोत्तमदास जोसी		...	गुनचूडा
		स्त्री	...	दुर्वासा (सखी)
३१	जगन्नाथ जोसी		...	सौरभी
३१/१	जगन्नाथ जोसी की माता		...	छविसिंधि
३१/२	नरहर जोसी		...	गंधरेखा
		महीधर	...	कुरंगाक्षी
		फूलबाई	...	चपलानेंनी
३२	राना व्यास		...	नागवेलिका
		एक रजपूतानी	...	रसेनी
३३	रामदास साँचोरा		...	सुभगा
		स्त्री	...	सुभद्रा
३४	गोविंद दुबे		...	तन्मध्या (द्वारकालीला)
३५	राजा दुबे		...	कुंजरी
		माधो दुबे	...	रसालिका
३६	उत्तमश्लोकदास		...	सुसीला
३७	ईश्वर दुबे		...	मेना
३८	वासुदेवदास छकड़ा		...	मनसुखा (खवास)

३९	बाबाबेनू		...	सोरसेनी
		कृष्णदास	...	कामलता
		जादवदास	...	तिलकनी
४०	जगतानंद पंडित		...	माधुरी
४१	आनंददास		...	नागरी
		विश्वंभरदास	...	मल्लिका
४२	एक ब्राह्मणी अडेलकी		...	शशीकला
४३	एक क्षत्राणी प्रयाग की		...	नीला
४४	गोरजा		...	नंदा
		समराई	...	वृंदा
४५	कृष्णादासी		...	ब्रजमंगला
४६	बूला मिश्र		...	सुमन्दिरा
४६	रामदास मीरा के प्रोहित		...	कंदर्पा
४७	रामदास चौहान		...	मधुएनी
४९	रामानंद पंडित		...	निकुंज के तमचर
५०	विष्णुदास छीपा		...	कमला
५१	जीवनदास क्षत्री		...	ईश्वरी
५२	भगवानदास सारस्वत		...	सुगंधिनी
५३	भगवानदास साँचोरा		...	सुन्दरी
५४	अच्युतदास सनोढ़िया		...	मधुरा
५५	अच्युतदास गौड़		...	मोहिनी
५६	अच्युतदास सारस्वत		...	रसात्मिका
५७	नारायणदास कायस्थ		...	ब्रजविलासिनी
५८	नारायण भाट		...	गोकुल के वानर
५९	नारायणदास लुहाणा		...	केतकी
६०	एक क्षत्राणी सिंहनंद की		...	सुनन्दा
६१	दामोदरदास कायस्थ की माता		...	वनदेवी
६२	एक क्षत्री सिंहनंद के		...	रंगा
६३	सूतार अड़ेल को		...	श्रीदामा
६४	एक क्षत्री पूर्व को		...	मोहनी
	अन्यमार्गीय		...	लक्षनी
६५	लघु पुरुषोत्तमदास		...	उमाशंकर
६६	कविराज भाट		...	शाडिल्य मुनि
६७	गोपालदास ईटोडा क्षत्री		...	नृत्य-कला
६८	जनार्दनदास चोपड़ाक्षत्री		...	कृष्णावती
६९	गडूस्वामी		...	बंदी
७०	कन्हैयाशाल		...	कमोदिनी
७१	नरहरदास गोडिया		...	सुगंधरा
७२	नरहरदास सन्यासी		...	गुलाबी
		वेणी कोठारी	...	पाँडरी

७३	सदूपांडे		...	चन्द्रभान
		नरो	...	रामदे
		भवानी	...	श्यामदे
		माणिकचंद	...	मधुमंगल
७४	गोपालदास जटाधारी		...	रसभद्रा
७५	कृष्णदास ब्राह्मण		...	नंदा
		स्त्री	...	शुभदा
		ज्ञानचंद	...	पैंली गोप
७६	संतदास चोपड़ा		...	चंद्रिका
७७	सुंदरदास		...	शीला
		माधोदास	...	लीला
७८	मावजी		...	रूपा
		बिरजो	...	हरखा
७९	गोपालदास क्षत्री		...	जसवंत खवास
८०	बादरायनदास		...	श्रुतिरूपा
		स्त्री	...	गंगा
१	सूरदास		...	कृष्णसखा चंपकलता सखी
		बनिया	...	बिरजा
२	परमानंददास		...	तोएक सखा-चंद्रभागा
		कपूरक्षत्री	...	सोनजूही
३	कुंभनदास		...	अर्जुनसखा-विसाखा सखी
		भैंसा	...	वृंदामालिन
		राजपूत	...	नेना गोप
		भतीजी	...	सरोवरी
४	कृष्णदास		...	ऋषभसखा-ललिताजी
		अवधूतदास	...	कैतिनी
		बडेरामदास	...	मनोरमा
		श्यामकुम्हार	...	रसतरंगिनी
		वेश्या	...	बहुभाषिनी
		गंगाबाई	...	तामसीभक्त

ऐतिहासिक सूची–१

भगवत् स्वरुपों की सूची

✶

सं.	स्वरुपो के नाम	सेवकों के नाम	वार्ता सं.	विद्यमान स्थान
०	श्रीमहाप्रभुजी की पादुका	दामोदरदास हरसानी (तृतीयगृह)	(१)	कांकरोली में
१	श्रीद्वारकानाथजी	दामोदरदास संभलवाले	(३)	कांकरोली में
२	श्रीमथुरानाथजी	पद्मनाभदास	(४)	कोटा में (प्रथमगृह)
३	(छोटे) श्रीमथुरानाथजी	तुलसां	(४/१)	कोटा में
४	श्री बालकृष्णजी	रजो क्षत्राणी	(५)	बंबई में
५	श्रीमदनमोहनजी	सेठ पुरुषोत्तमदास	(६)	गोकुल में
६	श्रीनवनीतप्रियजी	रामदास सारस्वत	(७)	गोकुल में
७	श्रीमदनमोहनजी	गदाधरदास कपिल	(८)	जामनगर में
८	श्रीबालकृष्णजी	माधवदासजी, वेश्यावाले	(९)	गोकुल में
९	श्रीबालकृष्णजी	हरिवंश पाठक	(१०)	कोटा
१०	श्री श्रीमथुरानाथजी	गोविंददास भल्ला	(११)	काँकरोली में
११	श्रीबालकृष्णजी	अम्मा क्षत्राणी	(१२)	नाथद्वारे में
१२	श्रीनवनीतप्रियजी	गज्जन धावन	(१३)	नाथद्वारे में
१३	गोकुलचंद्रमाजी	नारायणदास ब्रह्म	(१४)	कामबन (पंचमगृह)
१४	श्रीमहा, के चरण चिन्ह कुंकुम के	एक क्षत्राणी महाबन	(१५)	?
१५	श्रीलाड़लेशजी	जीयदास सूरी	(१६)	बरहानपुर
१६	श्रीललित त्रिभंगीजी	देवा कपूर क्षत्री	(१७)	बंबई
१७	श्रीमहा. के हस्ताक्षर (ब्रह्मसंबंध की पत्री)	दिनकरदास मुकुंददास	(१९)	?
१८	श्रीमदनमोहनजी	प्रभुदास जलोटा	(२०)	गोकुल
१९	श्रीबालकृष्णजी	प्रभुदास भाट	(२१)	?
२०	श्रीबालकृष्णजी (श्रीवृंदावनचंदजी)	पुरुषोत्तमदास स्त्री पुरुष	(२२)	नाथद्वारा
२१	चतुर्भुज स्याम	स्वरूप गुसांईदास	(२६)	?
२२	श्रीबालकृष्णजी	माधवभट्ट कस्मीरी	(२७)	?
२३	श्रीबालकृष्णजी	गोपालदास	(२८)	?
२४	श्रीअष्टभुजाजी	पद्मारावल	(२९)	वीरमगाम
२५	श्रीबालकृष्णजी	पुरुषोत्तम जोसी	(३०)	?
२६	श्रीबालकृष्णजी	जगन्नाथ जोसी	(३१)	खेरालु
२७	श्रीबालकृष्णजी	रानाव्यास	(३२)	नाथद्वारा
२८	श्रीनटुवा गोपाल श्रीमहा. पादुका	रामदास साँचोरा	(३३)	अहमदाबाद

६२	गद्यश्लोक पंचाक्षर मंत्र	गोपालदास	(७९)	?
६३	वस्त्र पत्री	बादरायणदास	(८०)	?

विशेषः- निधि स्वरूपों की वार्ता के अनुसार शरण आने से पूर्व सूरदासजी श्रीश्याम मनोहरजी की सेवा करते थे, जो आज चापंपासेनी में विद्यमान है।

छीतस्वामि के ठाकुर भी मथुरा में है, ऐसा कहा जाता है।

भौगोलिक सूची- स्थान और तीर्थो के नाम

✶

पृ.सं.	स्थान	तीर्थ	पृ.सं.	विशेष स्थल	पृ.सं.
६	श्रीगोकुल	...	...	सुंदर सिला	२१
२१	बद्रिकाश्रम	...	...	परली-किरणी परवत	२२
				व्यास गुफा	२३
२५	गंगासागर	...	...	...	
२६	सोरों	...	...	...	
३५	कन्नौज	...	...	...	
३६	कासी	...	...	...	
३७	अड़ेल	...	...	...	
६२	कर्णावल	...	...	रमन स्थल (रमनरेती)	६२
६३	प्रयाग	...	...	....	
७४	श्रीनाथजी द्वार	(जतीपुरा)	...	...	
		मधुसूदन पर्व	१०७	मधुसूदन ठाकुर	१०७
११२	गया जी	मणिकर्णिका	११५		
१३०	कड़ा	त्रिवेणी	१३१		
१५२	पटना	...	...		
१५३	थानेश्वर	...	...		
१५४	महावन	...	...		
१५६	आगरा	...	...		
१५६	मथुरा	...	...	केसोरायजी	१५९
१९७	उज्जैन	...	...	दंडकारण्य	१७३
२०४	सिंहनंद	...	...		
२०६	राजनगर	(अहमदाबाद)	...	सिकंदरपुर	२०६
		राधाकुंड	२११	...	
२१२	वृंदावन	...	...	विश्रांत	२१६
		पृथोदक	२१८	राजघाट	२२०
२२६	सेरगढ़	...	....	रुद्रकुंड	२४२
२४४	द्वारका	...	...	...	
२४६	कास्मीर	...	...	...	

२५४	वांसवाडा	...	...	....	
२७८	खेरालू	...	...	..	
२८९	पुरुषोत्तमपुरी (जगन्नाथजी)		...	जगन्नाथरायजी	२८९
२९६	अलियाणा	...	...	श्रीरंगनाथजी	३०१
३०१	गोधरा	...	...	हनुमानघाट कासी	३०३
३०८	सिद्धपुर	...	...	सरस्वती नदी	३०८
३३२	मणंद	...	...	श्रीरणछोड़जी	३३३
		...	...	आगरा छारछू दरवाजा	३६२
		...	...	कृष्ण जन्मस्थान मथुरा	३६४
		...	...	चित्रकूट	३८३
४०७	लाहौर	...	...	...	
४१५	मेवाड़	...	....	...	
४१९	बुंदेलखंड	...	....	...	
४४४	दिल्ली	...	...	...	
४५०	हाजीपुर	...	...	...	
४६०	आन्योर	...	...	परासोली	४६०
		...	...	अप्सराकुंड	४६३
		...	...	राधाबाग	४७७
४०७	ठट्ठा (नगर ठट्ठा)...		....		
५३९	गोवर्द्धन	...	...	भूतेश्वर (मथुरा)	५२३
५४६	बंगाला	...	...	झारखंड (दक्षिण)	५५८
५७६	बाड, चोइला	...	...	सेउको बजार आगरा	५८४
		रेनुका (आगरा)	...	...	
५९६	पीपरी	(जगन्नाथ से १० कोस दूर पर)		...	
६१३	नरोडा	(अहमदाबाद के पास)		...	
६२२	मोरबी	...	...	...	

अष्टसखान की वार्ता

१	सूरदास	सींही (दिल्ली से चार कोस)		गौघाट ,(आगरा) सूरभीकुंड, गोविदकुंड	
	सूरदास	परासोली	(चन्द्रसरोवर) अप्सराकुंड, कदमखंडी, मानसीगंगा, बिलछू।		
२	परमानंददास–सुदामापुरी		(पोरबंदर)		
३	कुंभनदास	जमुनावता	...	...	
		चीरघाट	...	...	श्यामढाक
		सामी	...	...	सुंदुरी, कजली, बाजनी सिला

	नन्दगाम	...	...	रुद्रकुंड
	बरसाना	...	...	बंसीबट
	संकेत	...	...	केशीघाट
	पूछरी	...	...	रामदास की गुफा
	(फतेहपुर) सिकरी		...	
	टोंडको घनो	...	...	
	अड़ीग	...	...	
	मांट गाम	...	...	
४	कृष्णदास– चलोतर	...	...	विश्रांत
	राजनगर (अहमदाबाद)		...	
		...	...	ध्रुवघाट

साहित्यिक सूची

कवियों की सूची

सं.	नाम		वार्ता संख्या
१	दामोदरदास हरसानी	...	१
२	पद्मनाभदास कन्नौज के	...	४
३	गोपालदास कासी के	...	६
४	गदाधरदास कडाके	...	८
५	मुकुंददास उज्जैन के	...	१९
६	प्रभुदास भाट सिंहनंद के	...	२१
७	त्रिपुरदास कायस्थ सेरगढ़ के	...	२३
८	कृष्णदास घघरी	...	३८
९	कृष्णदासी	...	४५
१०	रामदास प्रोहित मीराबाई के	...	४६
११	विष्णुदास छीपा	...	५०
१२	जीवनदास क्षत्री सिंहनंद के	...	५१
१३	भगवानदास साँचोरा गुजरात के	...	५३
१४	लघुपुरुषोत्तमदास	...	६५
१५	कविराज भाट	...	६६
१६	गोपालदास ईटोड़ा क्षत्री पंजाब के	...	६७
१७	कन्हैयालाल क्षत्री आगरे के	...	७०
१८	गोपालदास नरोडा के	...	७९
१९	सूरदास अष्टकाव्य वाले	...	अष्टखानकी वार्ता
२०	परमानंददास अष्टकाव्य वाले	...	,,
२१	कुंभनदास	...	,,
२२	कृष्णदास	...	,,
२३	बड़े रामदास श्रीनाथजी के मुखिया	...	,,
२४✶	अवधूतदास (अद्भुतदास)	...	,,

✶ इस चिन्ह वाले कवियों के कावन्यों का उल्लेख इस ग्रंथ में नहीं है। किन्तु अन्य वार्ता साहित्य और अंत: साक्ष्यादि से उनका कवि होना प्रसिद्ध है।

ब्रजभाषा के विशिष्टि शब्दों की सूची।

पृष्ठ	शब्द	अर्थ	पृष्ठ	शब्द	अर्थ
६	पांउधारे	पधारे	८९	बांटे में	भागमें
१४	दीसत	दीखत	८९	लीटी	रोटी
१७	मोतें	मेरे से	८९	खरखरात	खरास पड़ना
१८	अज हू	अब भी	८९	सालन सामग्री	साग सामग्री
१८	दिनलों	दिन तक	९७	नेग	लागा
२१	बरजे	राके	९८	नातो	संबंध
२४	बहुरि	फिर	१००	नाँहि	''नाँय'' का रूप
२६	अटकर	अटकल	१०१	छलावा	छली
४०	परकालो	थान	१०४	उह	वह
४३	ततहरा	गरमजल का करने का पात्र	१०५	बैठे है	बैठे हते
४३	अस्सी	स्त्री	१०५	आजु	आज
४३	कान	मर्यादा	१०९	जदपि	यद्यपि
४६	बियारि	पवन	१०९	तू	तब भी
४९	खुनस	[illegible]स	१०९	संकेलना	समेटना
५१	दायजी	द[illegible]ज	११०	व्है	होकर
५३	डाकोतिया	भ[illegible]री	११६	उरिन	रुण से मुक्त
५३	महतारी	मा[illegible]	१२०	अरू	और
५८	तिहारो	ते[illegible]	१२५	उचापत	लेना
६०	कराड़ो	कछार	१३६	नागो	बंधी
६२	सारीखे	सारखे	१६३	बरजते	रोकते
६३	बिरियां	समय	१६३	ओंचका	अचानक
६५	डोंगी	नाव	१८७	दहैड़ी	दही का पात्र
६६	आगता	सागता/आवभगत	२०७	सुखेन	सुखपूर्वक
६७	बिसावनो	खरीदनो	२०८	दुबरावल	दुर्बल
६७	गाढ़ो	मजबूत	२१३	वेरागिया	वैरागी
६५	छोला	तले भये चना	२२०	उछंडे	खुले
८१	दहींथरा	दहीबड़ा	२२३	किनकों	किसको
८१	व्यौहार	व्यहार	२२४	कसेरे	ठरेरे
८१	बिला	दर	२२४	निघटना	कम होना
८२	साझे	भागीदारी	२२९	सकारे	सवेरे
८३	बिछुरिके	बिछुड़के	२२९	कलालौ	अछत
८६	नीकी	अच्छी			(कसालो)
८८	हों तो	मैं तो	२५१	नाँई	जैसे

पृष्ठ	शब्द	अर्थ	पृष्ठ	शब्द	अर्थ
२५६	ब्याह	विवाह	३८९	टटोरे	ढूँढे
२५९	उचाट	उद्विग्र	३९३	आहट	आवाज
२५९	बतरात है	बात करते हैं	४०७	बोलि	ठोलि व्यंग
२६९	कहो	कह्यो। (ग्राम्य ब्रज-	४०८	पठावे	भेजे
		भाषा का प्रयोग)	४१८	खसम	धनी
	इसी प्रकार पूछौ-चलौ आदि भी है।		४२१	बुरो	अनिष्ट
२८८	दंडौत	दंडवत	४३७	निवहेगी	निभेगी
२९२	रुख	वृक्ष	४७०	रगडा	खेंचतानी
२९२	पसरिके	लंबो करिके	४७५	भाग	भाग्य
३०८	मूंड	मस्तक	४८९	निवरि गयो	समाप्त हुआ
३१९	उपरा	कंडे	५२५	साखितें	साक्षी से
३३१	गदहा	गधा	५४९	बजाज	कपड़ा का व्यौपारी
३४२	भावज	भाभी	५७६	टीवो	टीला
३६४	द्वैयसे	दोसें	५७८	हाट	दुकान
३७४	दुतिय	द्वितीय	६०४	राखो	राख्यो
३८४	खेवो	चलावो			

तिलक वाले पुष्टिमार्ग के संरक्षक चतुर्थलालजी वार्ताकार श्री गोकुलनाथजी महाराजश्री

प्राकट्य मार्गशीर्ष शुक्ल ७ वि.सं. १६०८   तिरोधान–फाल्गुन कृष्ण ९ वि.सं. १६९७

शिक्षा सागर वार्ता भावप्रकाश श्रीहरिरायजी महाप्रभु

प्राकट्य आश्विन कृष्ण पंचमी वि.सं. १६४७ ✶ तिरोधान – वि.सं. १७७२

अब चौरासी वैष्णवन की वार्ता श्री गोकुलनाथजी प्रगट किये ताकौ भाव श्रीहरिरायजी कहत हैं सो लिख्यते -

श्रीहरिरायजी कृत भावप्रकाश -

चौरासी वैष्णवन कौ कारन यह है, जो - दैवी जीव चौरासी लक्ष योनि में परे हैं, तिनमें तें निकासिवे के अर्थ चौरासी वैष्णव किये। सो जीव चौरासी प्रकार के हैं। राजसी, तामसी, सात्विकी, निर्गुण, ये चार प्रकार के (भूतल में) गिरे, तामें तें गुणमय राजसी, तामसी, सात्विकी, रहन दिये, सो श्रीगुसांईजी उद्धार करेंगे।

श्रीआचार्यजी बिना श्रीगोवर्द्धनधर रहि न सके, तातें अपने अंतरंगी निर्गुण पक्षवारे चौरासी वैष्णव (प्रगट) किये। सो एक एक लक्ष योनि में तें एक एक वैष्णव निर्गुण वारे को उद्धार (इन) वैष्णवन द्वारा किये।

और रस शास्त्र में रसादिक बिहार के आसन चौरासी वर्णन किये हैं। सो न्यारे न्यारे अंग के भावरूप ये चौरासी वैष्णव रस लीला संबंधी निर्गुण हैं, श्रीठाकुरजी के अंगरूप। तातें शास्त्र रीति सों आसन चौरासी या भाव सों अलौकिक हैं।

और श्रीआचार्यजी के अंग द्वादस हैं, सो स्वरूपात्मक हैं। एक एक अङ्ग में सात सात धर्म हैं। ऐश्वर्य, वीर्य, यश, श्री, ज्ञान, वैराग्य ये छह धर्म, एक धर्मी सातमो। या प्रकार बारह सत्ते चौरासी वैष्णव, श्रीआचार्यजी के अङ्ग रूप अलौकिक सर्व सामर्थ्य रूप हैं।

और साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम की लीला चौरासी कोस ब्रज में है। सो एक एक जीव कों अङ्गीकार करि, दैवी जीव जो चौरासी लक्ष योनि में गिरे हैं, तिनकौ उद्धार करि, चौरासी कोस ब्रज में जो जीव (जा) लीला संबंधी है, तिनकों तहाँ प्राप्त करिवे के अर्थ चौरासी वैष्णव अलौकिक प्रगट किये ।

इह भाव तें चौरासी वैष्णव श्रीआचार्यजी के हैं।

सो एक दिन श्रीगोकुलनाथजी चौरासी वैष्णवन की वार्ता करत कल्याण भट्ट आदि-- वैष्णवन के संग रसमग्र होइ गये, सो श्रीसुबोधिनीजी की कथा कहन की सुधि नाहीं, सो अर्द्ध-रात्रि होइ गई। तब एक वैष्णव ने श्रीगोकुलनाथजी सों बिनती

करी, जो–महाराजाधिराज आज कथा कब कहोगे ? अर्धरात्रि गई। तब श्रीमुखतें श्रीगोकुलनाथजी ने कही, (जो) आज कथा को फल कहत हैं। वैष्णव की वार्ता में सगरो फल जानियो। वैष्णव उपरांत और कछु पदारथ नाहीं है। यह पुष्टिमार्ग है सो वैष्णव द्वारा फलित होयगो। श्रीआचार्यजी हू यही कहते, जो –दमला ! तेरे लिये मार्ग प्रगट कियो है। तातें वैष्णव की वार्ता है सो सर्वोपरि जानियो। या प्रकार चौरासी वैष्णव श्रीआचार्यजी के निर्गुण पत्र के मुखिया जाननें।

अब रहे राजसी, तामसी, सात्विकी, गुणमय। तिनके उद्धारार्थ श्रीगुसांईजी ने चौरासी वैष्णव राजसी किये, चौरासी वैष्णव तामसी किये (और) चौरासी वैष्णव सात्विकी किये। ये तीनों जूथ मिलि के दोयसौ बावन श्रीगुसांईजी के अङ्ग संबंधी हैं।

या प्रकार श्रीआचार्यजी, श्रीगुसांईजी के सेवकन को भाव कहे।

अब श्रीआचार्यजी के चौरासी वैष्णवन की वार्तानि–में गूढ आसय श्रीगोकुलनाथजी कहे हैं, तहाँ श्रीहरिरायजी कछुक भाव प्रगट करत हैं, पुष्टिमार्गीय वैष्णवन के जनाइवे के अर्थ।

अब प्रथम सेवक सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के दामोदरदास, जिनकों श्रीआचार्यजी ''दमला'' कहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहते हैं।

भावप्रकाश – श्रीआचार्यजी महाप्रभु दामोदरदास कों ''दमला'' कहते। सो यातें, जो – दमला सो ''अमला'', मल करि कै रहति। तहां यह संदेह होय, जो – साधारण वैष्णव में मल नाहीं, तो दामोदरदास के दरसन तें, इनके नाम लिये तें पाप जाय, तो इनको नाम दमला सो अमला कहे, ताको प्रयोजन कहा ? यह संदेह होय तहाँ कहत हैं, जो–यह भक्तिमारग में श्रीठाकुरजी में प्रीति होइ तहाँ तांई अमल है। जब श्रीठाकुरजी तें अधिक श्रीआचार्यजी में प्रीति होय तब तासों अमला कहिये। दामोदरदास को एक दृढ़ भाव श्रीआचार्यजी में है। क्यों जो दामोदरदास की गोदि में माथो धरि कै श्रीआचार्यजी पोढ़ें हते, सो गोवर्द्धनधर साक्षात् पधारे तब बरजे ''निंकट मति आवो, महाप्रभुजी जागेंगे'' ऐसो दृढ़ भाव है, जो–उठि कै श्रीठाकुरजी कों दंडोत हू न किये।

और श्रीगुसांईजी पूछे, जो–श्रीठाकुरजी सों बड़े क्यों कहे? तब दामोदरदास ने कही, जो–दान बड़ो के दाता बड़ो ? दाता जहाँ चाहे तहाँ दान चल्यो जाय। जहाँ चाहे तहाँ दाता दान कूँ राखे। यह भाव दृढ़ है। तातें श्रीआचार्यजी ''दमला'' कहते। जो–कोई प्रकार सों अन्य संबंध कौ गंध हू नाहीं है। तातें अमला है।

और इनकौ नाम दामोदरदास याते हैं, जो– ''पुरुषोत्तम सहस्रनाम'' में श्रीआचार्यजी कहे हैं, ''दामोदरो भक्तवश्यो'' और श्रीसुबोधिनीजी में विस्तार करिकें

लिखे हैं। जो पुरुषोत्तम साक्षात् भक्तन के बस दिखाये। सो अपनो बंधन छोड़ि न सके, और जसोदाजी को, ब्रजभक्तन को स्वरूप दिखाये। जसोदाजी इतने भक्त हैं, जो-श्रीठाकुरजी कों बांधे। सो उन भक्तन की संमति देखि कै बंधाने, जो-दाम ब्रजभक्त लाये हैं। परंतु जसोदाजी को बंधन छुड़ायवे की सामर्थ नाहीं है। तातें यमलार्जुन वृक्ष गिरे, तब सोर भयो, तब ब्रजभक्तन ने दाम छोरे हैं। तातें श्रीठाकुरजी सों जसोदाजी बड़े, श्रीदामोदरजी सों ब्रजभक्त बड़े। सो भक्त वत्सलता प्रगट करी।

तैसें ही दामोदरदास नाम करि, दामोदर जो- अनन्य भक्त हैं -तिनके बस श्रीआचार्यजी हैं। तातें कहते, ''दमला ! यह मार्ग तेरे लिये प्रगट कियो है।'' तामें यह आयो, जो- और भक्त बहोत हैं परन्तु तेरे मैं बस हों, यह जताये।

और दामोदरदास को अलौकिक स्वरूप है सो ललिताजी को प्रागट्य है। उहां सिगरी रहस्य-लीला में श्रीस्वामिनीजी की आज्ञाकारी जैसे ललिताजी, तैसे ही इहाँ आचार्यजी की आज्ञाकारिनी ललितारूप दामोदरदास। जो- जनम ही तें बाल ब्रह्मचारी सखी रूप, गृहस्थाश्रम कों जानत नाहीं।

सो ललिताजी को भाव यह कीर्तन में जाननो -

★ राग केदारो ★

हँसि हँसि दूध पीवत नाथ।
मधुर कोमल बचन कहि कहि, प्रानप्यारी साथ ॥१॥
कनक कटोरा भरचो अमृत, दियो ललिता हाथ।
लाड़िली अचवाय पहले, पाछें आप अघात ॥२॥
चिंतामनि चित्त वस्यो सजनी, निरखि पिय मुसिकात।
स्यामा स्याम की नवल छवि परि, ''रसिक'' बलि बलि जात ॥३॥

याको यह भाव है, जो - दोऊ स्वरूप रतन खचित सज्या ऊपर बिराजे हैं, तहाँ ललिताजी कनक कटोरा में दूध ओटि के मिश्री सुगंध डारि ले आई। तब ललिताजी ने बिचार कियो, जो-दोऊ स्वरूप बिराजे हैं तातें पहले मैं श्रीस्वामिनीजी के हाथ में दऊंगी तो श्रीठाकुरजी कों पान कराय कै पान करेगी। तहाँ मनोरथ सिद्ध न होयगो। तातें श्रीठाकुरजी के हाथ मे दऊंगी तब पहले पान श्रीस्वामिनीजी करेगी। तातें दूध को कटोरा श्रीठाकुरजी के हाथ में दियो। तब ''लाड़िली अचवाय पहलें पाछें आप अघात।'' काहेतें उनके हाथ सों वे आरोगे। उनके हाथ सों चिंतामनि रूप श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी के हृदय में वे आरोगे। तातें श्रीस्वामिनीजी के पान किये तें श्रीठाकुरजी तृप्त होत हैं। या प्रकार ललिताजी को प्रीति चातुर्य देखि कैं श्रीठाकुरजी मुसिकाने। यह नवल छवि दूध पान करिवे के समय की शोभा ऊपर मैं-श्रीहरिरायजी बलिहारी जात हों।

या प्रकार कौ भाव दामोदरदास को श्रीआचार्यजी महाप्रभुन में है। तातें न्यारी श्रीठाकुरजी की सेवा नाहीं पधराई। श्रीआचार्यजी महाप्रभु ठाकुर हैं। यह ''मानसी सा परामता'' मानसी सेवा के अधिकारी हैं। लीला रस में मगन रहत हैं।

वार्ता – प्रसंग १ – पाछें एक समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप ब्रज में पांउ धारे तब दामोदरदास साथ हे। श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप दामोदरदास कों दमला कहते और कहते, जो– ''दमला ! यह मार्ग तेरे लिये प्रगट कियो है।''

सो श्रीगोकुल में चोंतरा एक गोविंदघाट ऊपर हतो, सो ता ठोर छोंकर के नीचे श्रीआचार्यजी आप विश्राम करते। ताके पास श्रीद्वारिकानाथजी को मंदिर है। तहाँ श्रीआचार्यजी कों चिंता उपजी। क्यों जो श्रीठाकुरजी ने आज्ञा दीनी है, जो जीवन कों ब्रह्मसंबंध करवाओ। तातें श्रीआचार्यजीने बिचारयो, जो– जीव तो दोष सहित हैं, और श्रीपूर्णपुरुषोत्तम तो गुण निधान हैं, ऐसे संबंध कैसे होय ? तातें चिंता उपजी, सो अत्यंत आतुर भये।

ता समें श्रीठाकुरजी तत्काल प्रगट होइके श्रीआचार्यजी सों पूछी, जो–तुम चिंतातुर क्यों हो ? तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप कहे, जो–जीव को स्वरूप तो तुम जानत ही हो, दोषवंत है। जो–तुमसों जीवन को संबंध कैसे होय ? तब श्रीठाकुरजी कहें, जो– ''तुम (जा) जीव कों नाम देउगे तिनके सकल दोष निवृत्त होइंगे, तातें तुम जीवनकों अंगीकार करो।''

भावप्रकाश – जीवन के उद्धारिवे की चिंता भी ताको कारन यह जो– उत्तम वस्तु कों अंगीकार कराइ सुख लेय, प्रीतम कों मध्यम वस्तु दोष सहित जीव कैसे अंगीकार कराइये ? यह मारग की रीति है।

तथा जगत में महात्मी जीव हैं, जो आप ब्रह्मसंबंध करावें तो लोक में जीव कों

दृढ़ विश्वास कोइ एक कों होय। तातें श्रीठाकुरजी के श्रीमुख तें ब्रह्मसंबंध की आज्ञा कराये। तामें जीवन कों दृढ़ विश्वास कराये, जो–श्रीआचार्यजी कों वचन दिये हैं, जाकों ब्रह्मसंबंध होइगो ताकों न छोड़ेंगे। यह महात्म्य तें जीव ब्रह्मसंबंध करेंगे, तातें श्रीठाकुरजी सों कहवाये।

ये बातें श्रावण सुदि एकादसी के दिन मध्यरात्र कों भई। प्रातःकाल पवित्रा द्वादसी हती। तातें पवित्रा सूत को सिद्ध करि राख्यो हतो, सो पवित्रा धराये। ता समे के अक्षर हैं, ताको श्रीआचार्यजी ने ''सिद्धान्त–रहस्य'' ग्रन्थ कियो है।

ता समें दामोदरदास नेक दूरि सोये हते। तातें दामोदरदास सों श्रीआचार्यजी ने पूछी, जो दमला ! तें कछु सुन्यो ? तब दामोदरदास ने कह्यो, जो–महाराज मैंने श्रीठाकुरजी के बचन सुनै तो सही परि समुझ्यो नाहीं।

तब श्रीआचार्यजी आप कहे, जो–मोकों श्रीठाकुरजीने आज्ञा कीनी है, जो–तुम जीवन को ब्रह्मसंबंध करवा, तिनकों हों अंगीकार करूंगो। और जिनकों तुम नाम देउगे तिनके सकल दोष निवृत्त होइंगे, तातें ब्रह्मसंबंध अवश्य करनो।

भावप्रकाश – दामोदरदास ने कही, जो मैंने श्रीठाकुरजी के बचन सुने परि समुझ्यो नाहीं। ताको कारन यह जताये, जो– एकादशाध्याय में भगवद्गीता में श्रीठाकुरजी के बचन हैं, जो अपुने पढ़िकै समुझो चाहे सो समुझे न जाय, जब गुरु कृपा करें तब समुझो जाय। तातें श्रीठाकुरजी के कहेतें दामोदरदास समुझे तब श्रीठाकुरजी के सेवक भये। तातें दामोदरदास तो श्रीआचार्यजी के सेवक हैं, जब श्रीआचार्यजी समुझावें तब ही समुझे।

यह कहि यह जताये, जो–हृदय में दृढ़ ज्ञान गुरुकी कृपा ही तें होय स्वामी–सेवक भाव प्रकट दिखाये। जो दामोदरदास समुझे तो श्रीआचार्यजी की बराबरि ज्ञान कह्यो जाई, तातें कहे मैं समुझ्यो नाहीं। अथवा कहे, जो–मैं समुझ्यो नाहीं, सो मेरे समुझिवे को कहा प्रयोजन है ? आप कहें ताके समुझिवे को प्रयोजन मोकों है।

और कथा कहत में श्रीआचार्यजी दामोदरदास सों कहते,

जो-दमला ! बड़ी बार भई है, श्रीठाकुरजी की वार्ता नाहीं करी।

भावप्रकाश – ताकों तात्पर्य यह है, जो-श्रीठाकुरजी की वार्ता आपु श्रीस्वामिनी रूप दामोदरदास ललिता सखीरूप सों नाहीं करी। ललिता सो एकांत रहस्य वार्ता श्रीठाकुरजी के मिलन को प्रसंग प्रथम जा प्रकार लीला करी है सो नाहीं करी। सो करन के लिये सबन के आगे ऐसे कहतें, कथा कहत समय, जो-ठाकुरजी की वार्ता नाहीं करी।

वार्ता – प्रसंग २ – और श्रीआचार्यजी ने श्रीठाकुरजी की पास तीन बार यह माँग्यो, जो-मेरे आगे दामोदरदास की देह न छूटे। ताको हेतु यह है, जो-श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप सन्यास ग्रहण करिवे को विचार मन में करे। ता समे श्रीगोपीनाथजी तथा श्रीगुसांईजी दोऊ भाई बालक हते। तातें मारग की वार्ता श्रीआचार्यजी महाप्रभु दामोदरदास कों समझाइ के थापी। दामोदरदास सों कछु गोप्य न राख्यो।

और श्रीआचार्यजी श्री भागवत अहर्निस देखते, कथा कहते और दामोदरदास सुनते। और मारग को सब सिद्धांत, भगवल्लीला- रहस्य श्रीआचार्यजी ने दामोदरदास के हृदय विषे स्थाप्यो।

दामोदरदास के हृदय विषे मारग स्थापि कितेक दिन पाछे श्रीआचार्यजी आप सन्यास ग्रहण किये। तब कितेक दिन पाछे श्रीगुसांईजी ने श्रीअक्काजी सों पूछी, जो-श्रीआचार्यजी ने मार्ग प्रकट कियो है सो उत्सव को कहा प्रकार है ? हम तो कछु जानत नाहीं। तब अक्काजी ने कह्यो, जो-मार्ग तथा उत्सव को प्रकार सब दामोदरदास सों कह्यो है, सो उनसों तुम पूछो। तुम सों दामोदरदास सब कहेंगे।

तब श्रीगुसांईजी दामोदरदास के घर पधारे। तब

दामोदरदास ने बहुत सन्मान करि भक्तिभाव सों घर में पधराये। ता पाछे श्रीगुसांईजी ने उत्सव के प्रकार पूछे, सो सब दामोदरदास ने कहे।

भावप्रकाश – यामें संदेह बहोत हैं, जो श्रीआचार्यजी कर्तुम्, अकर्तुम् अन्यथा कर्तुम्, सर्वसामर्थ्ययुक्त हैं, सो श्रीठाकुरजी ग्रास क्यों मांगे।

ताको अभिप्राय यह है, जो– दामोदरदास कों प्रेमलक्षणा भक्ति दृढ़ होय चुकी है, और ललिताजी को स्वरूप है। सो श्रीठाकुरजी कों परम प्रिय हैं। ललिताजी मध्या हैं, दोउ स्वरूप की सेवा में मगन हैं। सो इनकों श्रीआचार्यजी के दर्शन और श्रीठाकुरजी के दर्शन दोउं में भाव है। जातें श्रीआचार्यजी श्रीठाकुरजी सों कहे, जो मैं दामोदरदास कों जैसे नित्य अनुभव करावत हों तैसे तुमहू नित्य अपने स्वरूप को अनुभव कराइयो। यह कहिके यह जताये, जों दामोदरदास पर अत्यन्त प्रीति श्रीआचार्यजी की है। तातें जाने, जो मति कहूँ मेरे पाछें दमला कोई बात सों दुःख पावे, तातें श्रीठाकुरजी सों कहे।

और मार्ग दामोदरदास के हृदय में स्थापन किये सो श्रीगुसांईजी के लिये। ताको तात्पर्य यह है जो–यद्यपि श्रीगुसांईजी ईश्वर हैं, बालक हैं, तो कहा भयो ? परन्तु श्रीआचार्यजी महाप्रभु अपनो भक्तिमार्ग दामोदरदास के हृदय में स्थापन करते। आपु श्रीमुख तें कहते, ''यह मार्ग दमला तेरे लिये प्रगट कियो है।''तातें वैष्णव के हृदय में स्थापन करें तो आगे वैष्णवन में फैली जो श्रीगुसांईजी के हृदय प्रथम धर्म रहे, तो गोकुल में ही धर्म रहतो। गोकुल में तो पहले ही सों शेष अशेष माहात्म्य धारण किये हैं। काहेतें, बिन्दु सृष्टि है, और वैष्णव सो तो नादसृष्टि है। तातें इनकों तो भक्ति दियेतें होइ। यातें गोपालदास गाये हैं ''भक्तिमारगीय जीव स्वतंतर केवल भक्त न थाय।'' तातें भक्तिमार्गीय जीव स्वतंत्र है, दैवी, परन्तु केवल आप तें भक्ति न बढ़े। तातें श्रीआचार्यजी 'नवरत्न' में कहे हैं, जो – ''निवेदनं तु स्मर्तव्यं सर्वथा तादृशैर्जनैः।''

या प्रकार भक्तन के हृदय में राखें, तातें भक्तिमार्ग प्रकट भयो। नहीं तो ईश्वरमार्ग कहावतो (तहां) केवल ईश्वरमार्ग कहावे, भक्तिमार्ग में ईश्वर मार्ग हू कहावे। जहां भक्ति तहाँ भगवान, जहाँ भक्ति नाहीं तहाँ भक्तिमार्ग की रीति सों भगवान न रहें, अंतरयामी ह्वे रहें। तातें भक्तन को उत्कर्ष जामें होई सो भक्तिमार्ग कहावे।

वार्ता-प्रसंग ३– बहुरि एक समय दामोदरदास और श्रीगुसांईजी एकांत में बैठे हते। तब श्रीगुसांईजी दामोदरदास

सों पूछे। जो तुम श्रीआचार्यजी कों कहा करि के जानत हो ? तब दामोदरदास ने कह्यो, जो- हम तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों जगदीस सों संसार में सब कोऊ कहत हैं जो सबतें बड़े जगदीस श्रीठाकुरजी हैं, तिनतें अधिक करि जानत हैं। तब श्रीगुसांईजी दामोदरदास सों कहे, जो-तुम ऐसे क्यों कहत हो। जो श्रीठाकुरजी तो बड़े हैं ? तब दामोदरदास ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो महाराज! दान बड़ो के दाता बड़ो ? काहू के पास धन बहोत है तो कहा करे ? देई ताको जानिये। और श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को सर्वस्व धन श्रीनाथजी हैं। सो हम जैसे जीवन कों आपु दान कियो है। तातें हम श्रीआचार्यजी कों सर्व ते बड़े करि जानत हैं।

वार्ता-प्रसंग ४ - बहुरि एक समय श्रीगुसांईजी बैठक में बैठे हते। द्वै चार वैष्णव कुंभनदास, गोविंददास आदि एकांत हँसिवे खेलिवे के लिये पास बैठे हते। आपु उनसों हँसत खेलत मसकरी करत बहोत ही प्रसन्नता में खेल की वार्ता करत हते। ता समैं दामोदरदास तहां आये। तब श्रीगुसांईजी बहोत आदर सन्मान किये। पाछै दामोदरदास तहाँ आय के दंडवत् करि के बैठे। तब श्रीगुसांईजी सों दामोदरदास ने कह्यो, जो-महाराज! अपनो मारग निश्चिंतता को नहीं। यह मार्ग है सो तो अत्यन्त कष्ट आतुरता को है, दुःख को है। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो तुम धन्य हो। साँची कहत हो। परि हमको जब श्रीआचार्यजी की कृपा होइगी तब कष्ट आतुरता होइगी। यह मार्ग तो श्रीआचार्यजी के अनुग्रह बिना न होई।

तब दामोदरदास दंडवत् किये और कहें, जो-हमकों

राजसों एक बेर बिनती करनी सो करी। पाछे आप प्रभु हो, भली जानोगे सो करोगे। परि यह मारग तो या भाँति को है। तब श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये और कहैं, जो–हमकों यह वार्ता श्रीआचार्यजी महाप्रभु तुम द्वारा कहे। जो–तुम न कहोगे तो और कौन कहेगो ? तुमकों देखत हैं तब चित्त अति प्रसन्न होत है, तातें सुखेन कहो। आप सारिखे श्रीआचार्यजी के सेवक जानिके कहत हैं। पाछें दामोदरदास की शिक्षा अंगीकारि करत भये। तातें बड़े सो बड़े।

भावप्रकाश – यह लोकरीति सों विरुद्ध है। जो–सेवक स्वामी सों सिक्षा करें। यह संदेह होय तहाँ कहत हैं, दामोदरदास ललितारूप हैं सो श्रीचंद्रावलीजी कों (श्रीगुसांईजी कों) परकीया रसभाव है। परकीयारस में प्रीति बहोत हैं, अष्टप्रहर चित्त प्यारे सों लग्यो रहत है। सो जारभाव को प्रकार दिखाये। जो– और के संग हाँसी कैसी ?

तथा दामोदरदास की देह मात्र दीसत है, परन्तु श्रीआचार्यजी को आवेस अष्ट प्रहर रहत है। जो–मुख सों श्रीआचार्यजी बोलत हैं तातें श्रीगुसांईजी कहत हैं, जो हमकों यह वार्ता श्रीआचार्यजी महाप्रभु द्वारा कहे।

वार्ता –प्रसंग ५– और एक दिन दामोदरदास के पिता को श्राद्धदिन हतो। ता दिन श्रीगुसांईजी तहाँ पधारे। वाके पिता को श्राद्ध करवायो। पाछें उत्थापन के समें दामोदरदास दरसन कों आये। तब श्रीगुसांईजी ने कही, जो–मोकों श्राद्ध की दक्षिणा देउ। तब दामोदरदास ने कही, जो–दक्षिणा में एक बात कहूँगो। सो 'सिद्धान्तरहस्य' के डेढ़ श्लोक को व्याख्यान कहे। यह ऐसी बात है। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो–आगे कहो। तब दामोदरदास ने कही, जो मैंने तो इतनो संकल्प कियो है। तब श्रीगुसांईजी चुप करि रहें। पाछें दामोदरदास ने मारग की प्रणालिका कही। श्रीभागवत की टीका श्रीसुबोधिनीजी,

श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ग्रन्थन की टीका और रहस्यवार्ता श्रीगुसांईजी की आगे सब कहें।

ता पाछें श्रीगुसांईजी दामोदरदास कों नमस्कार करन न देते। यातें, जो–श्रीगुसांईजी अपने मनमें यों विचारे, जो–श्रीआचार्यजी महाप्रभु दामोदरदास के हृदे विषे (सदा) सर्वदा बसत हैं। तो इन पास क्यों नमस्कार करन दीजे? यातें नमस्कार न करन देते। और दामोदरदासकों श्रीगुसांईजी अपनो चरणोदक हू न देते।

पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभुनने दामोदरदास कों दरसन दीनो और आज्ञा दीनी, जो–तू श्रीगुसांईजी को चरणोदक नित्य लीजियो। तब प्रातः काल दामोदरदास श्रीगुसांईजी के पास आये। चरणोदक मांग्यो। तब श्रीगुसांईजी ने चरणोदक की नाहीं कीनी। तब दामोदरदास ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो–मोकों श्रीआचार्यजी की आज्ञा भई है और श्रीआचार्यजी को दरसन भयो है। और कह्यौ है, जो–चरणोदक लीजियो। तब श्रीगुसांईजी ने चरणोदक दीनो।

भावप्रकाश – श्राद्ध करायवे को अभिप्राय यह (है) जो–दामोदरदास के पितरन को उद्धार तो होइ चुक्यो। जब ए भक्त में (है)। मर्यादामारग में नृसिंहजी ने प्रह्लाद सों कह्यो है। एकीस पुरषा भक्त के तरे। सो दामोदरदास तो पुष्टिमार्गीय है। तातें इनके पितर तरे यामें कहा संदेह है? परन्तु पुष्टिमार्ग के संबंध बिना पुष्टिमार्ग में अंगीकार न होई। तातें श्रीगुसांईजी को संबंध श्राद्ध द्वारा पाय पुष्टिमार्ग में अंगीकार भयो। जो–दामोदरदास के श्राद्ध तें पुष्टिमार्ग में अंगीकार होई। परंतु गुरु की अपेक्षा है। गुरु बिना अंगीकार में दृढ़ अंगीकार नाहीं। तातें श्रीगुसांईजी को संबंध कराये।

तहाँ यह संदेह होय, जो–दामोदरदास कों श्राद्ध कराये। इनके पितरन को पुष्टि को संबंध भयो। और भगवदीय को नाहीं कराये। सो उनके पितरन को कैसें होयगो? यह संदेह होय तहाँ कहत हैं। यह पुष्टिमार्गीय दैवी जीव के आधिदैविक

(मूलभूत) दामोदरदास हैं। जहाँ इनके पितरन को पुष्टि संबंध भयो तब सगरे पुष्टिमार्गीय के पितरन को पुष्टि संबंध भयो। जैसे मारग, दामोदरदास के पितरन को पुष्टि संबंध (भयो) ऐसे मारग दामोदरदास के लिये। तामें सगरे पुष्टिमारग के (जीवन के) लिये। या प्रकार मूल में भक्ति ता करि के सब में फेले। या प्रकार दामोदरदास की भक्ति करि के जीव में भक्ति बढ़ी हैं। जीव को सामर्थ्य नाहीं है जो–पुष्टिमारग की भक्ति एक छिन करि सके।

और दक्षिणा में दामोदरदास ने 'सिद्धांत रहस्य' के डेढ़ श्लोक को व्याख्यान कियो। तब श्रीगुसांईजी कहें आगे कहो। तब दामोदरदास ने कही, जो–मैंने तो इतनो (ही) संकल्प कियो है। ताको कारन यह है, जो–सत्य संकल्प (तो) इतने ही में सगरो मारग है।

श्रीगुसांईजी चरणोदक दामोदरदास कों न देते, दंडोत् करन न देते। सो यातें, जो–श्रीस्वामिनीजी की अनन्य सखी है। उनही कों करे। तातें दामोदरदास ने हठ नाहीं कियो। चरणोदक न लियो। तातें श्रीआचार्यजी (ने) दामोदरदास कों समझायो। जो–तू श्रीगुसांईजी को चरणोदक लीजियो, दंडोत् करियो। मैं श्रीगुसांईजी के हृदय में विराजत हूँ। मेरो स्वरूप मोतें प्रगटे हैं। तब दामोदरदास श्रीगुसांईजी सों यह भेद कहें। तब श्रीगुसांईजी कहे, लेहू। प्रसन्न होइ के चरणोदक दिये। जाने, जो–श्रीआचार्यजी के भावतें लेत हैं। मेरे भाव तें नाहीं।

याही तें श्रीगोपीनाथजी (श्रीआचार्यजी के बड़े पुत्र) यद्यपि श्रीगुसांईजी के बड़े भाई हैं। परंतु काहू वैष्णव ने चरणोदक नाहीं लियो। या भाव तें श्रीगुसांईजी के सात बालक और वल्लभकुल के चरणोदक में श्रीआचार्यजी को भाव जनायो। तातें चरणोदक लेनो। दंडोत करनो। यह सिद्धांत जनायो।

वार्ता – प्रसंग ६– और दामोदरदास कों श्रीआचार्यजी तीसरे दिन दरसन देते। मारग की रहस्यवार्ता कहते। ऐसी कृपा करते। और कदाचित तीसरे दिन दरसन न होतो तो ता दिन दामोदरदास के पेट में पीड़ा बहुत होती, अत्यन्त कष्ट पावते। और पाछे दरसन होतो तब तत्काल कष्ट निवर्त्त होई जातो। ऐसी भांति केतेक वर्ष पर्यंत श्रीआचार्यजी दरसन दीनो, ऐसी कृपा करते। जो बात होती सो सब दामोदरदास श्रीगुसांईजी की आगे कहते। और मारग के प्रकार (प्रकाश ?) की वार्ता

अहर्निस करते। श्रीगुसांईजी दामोदरदास की ऊपर बहोत कृपा करते और कहते, जो दामोदरदास के हृदय में श्रीआचार्यजी महाप्रभु सदा बिराजे हैं।

भावप्रकाश – दामोदरदास कों तीसरे दिन श्रीआचार्यजी दरसन देतें। ताको हेतु यह जो– तीन दिन लों दरसन को आवेस तामें मगन रहते। तीसरे दिन सरीर की सुधि होती। सो विरह कष्ट होतो। सो दरसन करि फेरि स्वरूपानंद में मगन होई जातें।

वार्ता–प्रसंग ७ – और पहले दामोदरदास श्रीगुसांईजी की आधी गादी दाबि के बैठते। सो एक दिन श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने देख्यो। तब श्रीआचार्यजी ने दामोदरदास सों पूछी, जो– दमला ! तू श्रीगुसांईजी कों कहा करिके जानत है ? तब दामोदरदास ने कही, जो–महाराज हों तो इनकों तुमारे पुत्र करिकें जानत हूं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु दामोदरदास सों कहें, जो–जैसें तू मोकों जानत है। तैसे इनको स्वरूप जानियो।

वार्ता–प्रसंग ८–एक समें श्रीगुसांईजी बैठे हे। तब दामोदरदास ने कही महाराज ! अपनो मारग निसंगता को नाहीं। रूप प्रगट कर्ता (है)। (और कहीं, जो) एक समें श्रीमहाप्रभुजी पौढ़े हते। तब श्रीगोवर्द्धनजी आप कहे, जो–जीव को उद्धार करो। लीलाकर्त्ता अवलंबन, सुद्धि करता उद्दीपन भाव, या प्रकार डेढ़ श्लोक कहे :–

श्रावणस्यामले पक्षे एकादश्यां महानिशि।
साक्षात् भगवता प्रोक्तं तदक्षरश उच्यते॥१॥
ब्रह्मसंबंधकरणात् सर्वेषां देहजीवयोः।

यह डेढ़ श्लोक में सब आयो।

भावप्रकाश – सो (अभिप्राय) कहत हैं। श्रावण महिना के पति भगवान

हैं। एक अमल जो उजयारो पक्ष भक्तजनन को है। तिन एकादशि को दिन प्रभुन को है। एकादश्यां। एकादस इंद्रिय की सुद्धि भक्तजनन कों करायवे कों। महानिशि, जो- अर्द्धरात्रि, रासलीला में साक्षात् भगवान (भक्तन) सों निसंक होई रहस्यवार्ता करत हैं लीला में, तेसे ही श्रीआचार्यजी सों बोले। सगरे अक्षर कहत हैं। यहां तांई श्रीआचार्यजी ऊपर भाव। श्रीगोवर्द्धननाथजी अब कहें। ब्रह्मसंबंध करावो। सबकों देह जीवकों। तातें (दामोदरदास ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो) जो-भक्ति-मारग के विस्तार की आज्ञा हैं, सो तुम करो। अज्ञान जीव हैं। याही ब्रह्मसंबंध तें दोष जांइगे अंगीकार कराये। एक श्लोक में लीला। आधे श्लोक में मारग की रीति। सब इनमें आयो। या प्रकार श्रीगुसांईजी सों दामोदरदास ने कह्यो।

और ता पाछे दामोदरदास की सहायता सों आपने 'शृंगाररसमंडन' ग्रन्थ कियो।

वार्ता - प्रसंग ९- और प्रथम श्रीआचार्यजी महाप्रभु दामोदरदास सों कह्यो, जो-यह मारग तेरे लिये प्रगट कियो है। जो-जहां लगि श्रीआचार्यजी के मारग की स्थिति है तहां तांई दामोदरदास की (भी) मारग में स्थिति गोप्य है।

और दामोदरदास ने कह्यो, जो-मैंने श्रीठाकुरजी के बचन सुने परि समुझ्यो नाहीं। ता समें श्रीआचार्यजी ने कह्यो अज हू, दस जन्म को अंतराय है।

भावप्रकाश - ताको हेतु यह, जो-जब लगि श्रीआचार्यजी महाप्रभु के मारग की स्थिति है तब लगि दामोदरदास को प्रागट्य फेरि फेरि हैं। (गोप्य रीति सों) मारग को स्तंभ यातें हैं, जो-श्रीआचार्यजी ने दामोदरदास के हृदय में भगवदलीला स्थापी। सो संपूर्ण सृष्टि के उद्धार के निमित्त। दामोदरदास के जनम दसलों मारग की स्थिति है, जैसे वल्लभकुल को प्रागट्य है। तेसें हि भक्ति दृढ़ करने के लिए दामोदरदास को हू अनेक वैष्णवन में प्रागट्य है।

वार्ता - प्रसंग १०- एक समें श्रीआचार्यजी 'सुन्दर' सिला के पास (जाकों 'पूजनी' सिला कहें हैं तहां छोंकर के नीचे श्रीआचार्यजी की बैठक है तहां) दामोदरदास की गोदि में मस्तक धरि आप पौढ़े हे। ता समय श्रीगोवर्द्धननाथजी मंदिरतें

श्रीआचार्यजी के पास पधारे। तब दामोदरदास ने सेनही में गोवर्द्धननाथजी सों कह्यो जो तुम अब हि यहां मति आवो। तुम चंचल हो (तातें) श्रीआचार्यजी जागि उठेंगे। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाड़े होय रहे। तब श्रीआचार्यजी जागि उठे। कहे, बाबा ! उहां क्यों ठाड़े होय रहे हो ? पास पधारो। तब श्रीगोवर्द्धनधर पास आय श्रीआचार्यजी सों कहे। जो तुम्हारो सेवक (ने) मोकूं बरज्यो, जो–यहां मति आवो। श्रीआचार्यजी जागि उठेंगे। तातें मैं दूरि ठाढ़ों रह्यो। तब श्रीआचार्यजी दामोदरदास उपर खीजने लागें। जो–तैं श्रीगोवर्द्धननाथजी कों क्यों बरजे ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहें इनसों क्यों खीझत हो? इननें अपनो धर्म राख्यो। इनकों ऐसेहि चाहियें। तब श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धनधर कों गोदि में बैठाय कपोल परस करि कहें, बाबा, कछू आज्ञा करो। तब श्रीगोवर्द्धनधर कहें। मोकों गाय बहुत प्रिय हैं। तब श्रीआचार्यजी सदूपांडे कों बुलाय वेदकर्म करिवे की पवित्री हती सो दे कहे, याके दाम करि श्रीगोवर्द्धननाथजी कों गाय ल्याय देउ।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक कृष्णदास मेघन क्षत्री, सोरों में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– सो कृष्णदास विसाखा सखी तें प्रगटे हैं। विसाखाजी श्रीस्वामिनीजी की छायारूप है। जैसे छाया सरीर के संग लागी डोले तैसें विसाखाजी श्रीस्वामिनीजी के संग रहत हैं। ताही प्रकारसों कृष्णदास हू श्रीआचार्यजी के संग रहत हैं। कृष्णदास में ऐश्वर्य को आवेश बहोत है। सो आगे (वार्ता में) वरनन करत हैं।

वार्ता –प्रसंग १– श्रीआचार्यजी महाप्रभु नें पृथ्वी परिक्रमा करी। तीनों बेर कृष्णदास संग रहे। प्रथम परिक्रमा में

बदरीनारायन के 'परली' ओर 'किरणी' नाम पर्वत हैं, तहांते एक बड़ी शिला गिरी। सो कृष्णदास मेघन ने हाथ सों थांभी। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप बहुत प्रसन्न भये। सो अलौकिक फल देते। परंतु परीक्षा देखन अर्थ कृष्णदाससों कह्यो, जो–तु मांगि कहा माँगत है ? तब कृष्णदास तीन वस्तु मांगे। १–मारग को सिद्धांत हृदयारूढ़ होई। २– मुखरता दोष जाई। ३–मेरे गुरुके घर पधारो और उनकों अंगीकार करो। तामें दोइ वस्तु दीनी। गुरुके घर पधारिवे की नाहीं कीनी।

भावप्रकाश – यह पहले को गुरुभाव हृदय में हतो सो बाहिर प्रगट्यो। तातें अलौकिक दान श्रीआचार्यजी ने छिपाय लियो। दो वस्तु दिये। गुरुकी नाहीं किये। सो दैवी न हतो। दैवी बिना एतन्मारग में अंगीकार नाहीं। या प्रकार दो वस्तु दिये। परंतु और को गुरुभाव रहे। तातें मारग को अनुभव हू न भयो। मुखरता दोष हू न गयो। प्रथम सामर्थ्य तें कछुक सामर्थ्य हू घटी।

वार्ता – प्रसंग २ – बहुरु श्रीआचार्यजी श्रीबदरिकाश्रम तें आगें व्यासजी की गुफामें पधारे। सो तहां जीवकी गम्य नाहीं। तातें कृष्णदास सों श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो–ठाड़ो रहियो। (सो) जब श्रीआचार्यजी आगे कों पधारे। तब वेदव्यासजी सामें ही आये। सो श्रीआचार्यजी कों पधारि के अपने धाम ले गये। पाछें वेदव्यासजी ने श्रीआचार्यजी सों कह्यो। जो तुमने श्रीभागवत की टीका करी है सो मोकों सुनावो। तब श्रीआचार्यजी ''युगलगीत'' के अध्याय को एक श्लोक कहे, सो श्लोक –

''वामबाहुकृतवामकपोलो वल्गितभ्रूरधरार्पितवेणुम्।
कोमलांगुलीभिराश्रितमार्गं गोप्य ईरयति यत्र मुकुन्दः'' ॥१॥

या श्लोक को व्याख्यान कियो, सो तीन दिन में संपूर्ण भयो। तब वेदव्यासजी ने कह्यौ, जो–मैं यह व्याख्यान की अवधारना नाहीं करि सकत, तातें अब क्षमा करो। पाछें

श्रीआचार्यजी कह्यौ, जो-तुम वेदांत के ऐसे सूत्र कहा किये, जो-मायावाद पर अर्थ लग्यो। तब व्यासजी ने कह्यो, जो-मैं कहा करूं ? मोकूं आज्ञा ही एसी हती। जो-ऐसे करियो। जामें दोइ अर्थ प्राप्त होइ। तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो-हमने तो ब्रह्मवाद पर अर्थ कियो है, सो सुनायो सो सुनके वेदव्यासजी बहोत प्रसन्न भये। ता पाछें वेदव्यासजी सों विदा होइ के श्रीआचार्यजी तीसरे दिन पधारे। तब कृष्णदास कों ठाड़ो देखि प्रसन्न भये। कहे, तू ठाड़ो है। तू गयौ नाहीं। सो काहेते ? तब कृष्णदास ने कह्यो, जो-महाराज ! हौं कहाँ जाउं। मोकों तुमारे चरणारविंद बिना कछू और आश्रय नाहीं है। तब यह सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप बहुत प्रसन्न भये। और कह्यो, जो-माँगि। तब फेरि वेई तीनि वस्तु मांगी। तामें दोई तो दीनी गुरु के घर की नाहीं कीनी।

भावप्रकाश - और को गुरुभव हतो। तातें प्रथम तें कछुक सामर्थ्य हू घटी। सो व्यासजी की गुफा में श्रीआचार्यजी कृष्णदास सों संग नहि ले गये। सो यातें 'युगलगीत' को प्रसंग कहनो हैं। ताकी धारना अब ही कृष्णदास सों होइगी नाहीं। व्यासजी सों हू धारना ना भई। सो यातें व्यासजी कला अवतार हैं। पुरुषोत्तम की बानी भावरूप की धारना कैसें होइ ? यह श्रीभागवत व्यासजी में श्रीपुरुषोत्तम आप विराज कें कहि गये। व्यासजी द्वारा मात्र हैं। श्रीभागवत के रस को अनुभव नांहि है। सो रहस्य हरजीवनदास नें या पद में कह्यो है -

★ राग केदारो ★

जोंलों हरि आपुनपों न जनावें।
तोलों वेद पुरान स्मृति सब पढ़े सुनें नहिं आवें ॥१॥
सुनि विरंचि नारायण मुख सों नारद सों कहि दीनो।
नारद कहि वेदव्यास सों आप सोध नहि कीनो ॥२॥
वेदव्यास औषध की नांई पढ़ि तन ताप नसायो।
तिनतें पढ़े मुनि सुकदेवा परिक्षित कों जु सुनायो ॥३॥

जदपि नृपति सुनि ब्रज की लीला दसम कही सुकदेवा।
तोऊ सर्वात्मभाव न उपज्यो तातें करी न सेवा ॥४॥
श्रीभागवत अमृत दधि मथिके श्रीवल्लभ सर्वोत्तम।
करि आवरन दूरि निजजन के हाथ दिये पुरुषोत्तम ॥५॥
सेवा अरु शृंगार विविध रस श्रीवल्लभ प्रगटायो।
करि कृपा निज दैवी जीवन पर हरिजीवन स्वाद चखायो ॥६॥
या प्रकार श्रीआचार्यजी की कृपा तें रस की प्राप्ति की है।

वार्ता - प्रसंग ३ - बहुरि एक समय श्रीआचार्यजी गंगासागर पधारे। तहाँ श्रीआचार्यजी आप पौढ़े हते। और कृष्णदास पांव दाबत हते। तब श्रीआचार्यजी आप मनमें बिचारे, जो-धान के मुरमुरा होइ तो आरोगें। तब यह बात श्रीआचार्यजी के मन की कृष्णदास मेघन ने जानी। सो इतने में श्रीआचार्यजी कों निद्रा आई। तब कृष्णदास उठिकें गंगासागर उपर आये। तब देखे तो पार एक दीया बरत है। ताकी अटकर तें पेरि कें गंगाजी के पार गये। तहाँ एक गाँव हतो। तहाँ खेत में तें गीलों धान कटवायो। टका की जगे द्वै टका दे के मुरमुरा सिद्ध करवाये। पाछे कृष्णदास श्रीगंगाजी में पैरि कें श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी के चरणारविंद दाबि कें जगाये। मुरमुरा आगे राखे। कह्यो, जो-महाराज आरोगो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें पूछी, जो-तू कहाँ तें लायो ? तब कृष्णदास सब वृत्तांत कह्यो। तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होई कहें, जो-कछु मांगि। तब बेई तीन वस्तु माँगी। तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो-जीव कहा माँगि जानें ? या समें जो माँगतो सोई देतो। जो कहेतो तो श्रीठाकुरजी को स्वरूप दिखावतो।

पाछे श्रीआचार्यजी आप सोरों पधारे। तब कृष्णदास ने

बिनती करिकें कह्यो, जो-मेरे गुरु कों ले आउँ ? तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो-तू खेद पावेगो। पाछे कृष्णदास इकेलेई गुरु के इहाँ गये। सो जब गुरु ने कृष्णदास कों देख्यो तब कह्यो, जो-तेनें और गुरु किये ? तब कृष्णदास नें कह्यो, जो-मैंने तो और गुरु नाहीं किये। मेरे गुरु तो आप ही हो। परि तुम्हारे प्रताप तें मैंने पूर्ण पुरुषोत्तम पाये हैं। तब वाने कह्यो, जो-पूर्ण पुरुषोत्तम कैसें जानिये ? तब गुरु के आगे अग्नि की अंगीठी धकधाकात हती। तामेंते कृष्णदास ने दो हाथ की अंजुली भरि के अंगार हाथ में लिये और कहैं, जो-श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप पूर्ण पुरुषोत्तम होई तो मेरे हाथ मति जरियो। और, जो-अन्यथा होई तो मेरे हाथ जरि करि भस्म होई जैयो। सो एक मुहूर्त लों अग्नि में राखी। तब उन गुरु ने भय खाई। तब कह्यो के डारि दे। पाछें उन गुरु ने कृष्णदास के हाथ पकरि के अपने हाथ सों अग्नि डारि दीनी। तब कृष्णदास तहाँते खेद पाइ के उठि आये।

यह प्रसंग सब वल्लभाष्टक की टीका में श्रीगोकुलनाथजी ने विस्तार पूर्वकर कह्यो है।

भावप्रकाश- सो गंगासागर के तीर पधारे। सो रात्रि कों पोढ़े हते। सो अर्धरात्रि कों मुरमुरा की मन में आई जो भाग धरिये। सो कृष्णदास पर कृपा करन के लिये। काहेतें, पुरुषोत्तम कों कछू वस्तु की अपेक्षा होइ नाहीं। कदाचित होई तो काहू के ऊपर कृपा करन के अर्थ। सो कृष्णदास कों जनाई। तब कृष्णदास तैरिके पार जाय ले आये। यह ईश्वरकार्य है। जीवसों न होइ। तब कृष्णदास चरन दाबि के जनाये (जगाये) तब श्रीआचार्यजी आप आरोगि के बहोत प्रसन्न भये। तब कहे मांगि। पाछे वही तीन वस्तु माँगे।

तब श्रीआचार्यजी कहे, जीव कहा माँगे ? जीव को माँगनो ही बाधक है। तातें परमानंददास ने गायो है ''माँगे सर्वस्व जात हैं परमानंद भाखे''।

और गुरु को भाव चित्त में हतो। ता करि महाप्रभु के वचन को विश्वास न

भयो। जो-एकबार दिये सो दृढ़ हैं। फेरि कहा माँगनो ? और मारग की दुर्लभता दिखाये। श्रीमहाप्रभुजी के मन की बात मुरमुरा की जाने। परंतु मारग हृदयारूढ़ कृपा ही तें होइ। दोष को स्वरूप है, जो-मुखरता दोष, जीव को स्वभाव हू जीव के हाथ नाहीं। जब श्रीआचार्यजी छोड़ावें तब ही छूटे। तातें श्रीआचार्यजी बिना और में ईश्वरबुद्धि तथा गुरुबुद्धि करे ताकों एतन्मारग को फल कबहू सिद्ध न होइ। यह भाव जताये। पाछें कृष्णदास गुरु के यहाँ सूँ दुःख पाय, अन्याश्रय छोड़ि, महाप्रभु के पास आये। तब मारग को सिद्धांत हृदयारूढ़ भयो और मुखरता दोष हू गयो। तातें फेरि श्रीआचार्यजी सों नाहीं माँग्यो। अन्याश्रय एसो बाधक है।

वार्ता – प्रसंग ४– बहुरि मार्ग हृदयारूढ़ भये पाछे कदाचित् गोप्य वार्ता होइ सो सबन के आगे कहें। तब काहू वैष्णव ने श्रीआचार्यजी सों कही, जो-महाराज ! कृष्णदास गोप्य वार्ता सबन के आगे कहत है। तब श्रीआचार्यजी ने कृष्णदास सों पूछी, जो-तू गोप्य वार्ता सबन के आगे क्यों कहत है ? तब कृष्णदास ने कह्यौ, जो-महाराज ! आप उनहीं सों पूछिये, जो-मैंने कहा कह्यौ है ? तब उन वैष्णव सों श्रीआचार्यजी ने पूछी, जो-तुमसों इन कृष्णदास ने कहा वार्ता कही ? तब उन वैष्णव नें कह्यौ, जो-महाराज ! हमकों तो कछु सुधि रही नाहीं। तब श्रीआचार्यजी मुसिकाई के चुप करि रहे।

भावप्रकाश – मारग हृदयारूढ़ भयो। सो रसके भरते रह्यो न जाई। सो रहस्यवार्ता वैष्णव सों करे। तामें यह जताये, कृष्णदास अपुने अनुभव करन अर्थ कहते। परंतु पात्र बिना रस ठेरे नाहीं। (तातें वैष्णव ने कही, कछु सुधि रही नाहीं)। और कृष्णदास की कछू दामोदरदास तें उतरती दसा। जो-कहे बिना रह्यो न जातो। यह दोऊ भाव जताये।

वार्ता-प्रसंग ५-और एक समें श्रीआचार्यजी सों कृष्णदास ने प्रश्न पूछ्यो, जो-महाराज ! श्रीठाकुरजी कों प्रिय वस्तु कहा है ? ताको प्रतिउत्तर श्रीआचार्यजी कहत हैं, जो-श्रीठाकुरजी उत्तम तें उत्तम वस्तु को भोक्ता हैं। परंतु गोरस अति प्रिय है।

गोरस शब्देन बाणी कहियत है। ताको भाव अनिर्वचनीय है। और सबन तें भक्त को स्नेहमय प्रभाव अतिप्रिय है। जातें भक्तवत्सल कहवावत हैं।

तब कृष्णदास ने फेर पूछी, जो–श्रीठाकुरजी कों अप्रिय वस्तु कहा है ? तब श्रीआचार्यजी नें कह्यौ। जो–श्रीठाकुरजी कों धुंआ समान अप्रिय और नाहीं है। ताहूतें अप्रिय श्रीठाकुरजी कों भक्त को द्वेषी है।

भावप्रकाश – गोरस सो वैष्णव को स्नेह परस्पर, और वैष्णव को क्लेश सो धुंआ। जहां स्नेह तहां श्रीठाकुरजी पधारे जानिये। जहाँ क्लेश तहाँ तें श्रीठाकुरजी दूरि जानिये।

फेरि कृष्णदास ने प्रश्न पूछ्यो, जो–महाराज! श्रीरघुनाथजी संपूर्ण सृष्टि कों ले के स्वधाम पधारे और राजा दशरथ कों स्वर्ग दियो। सो काहेते ? ताको प्रतिउत्तर श्रीआचार्यजी कहे, जो–श्रीरघुनाथजी तो परमदयाल हैं। तातें स्वर्ग दीनो नांतर स्वर्ग की (हू) योग्यता राजा दशरथ कों न हती। काहेते, जो–अपनो वचन सत्य करिवे कों श्रीरामचंद्रजी कों बनवास पठाये। ऐसो कर्म कियो।

भावप्रकाश – यह प्रश्न हीनाधिकारी को है, काहेते, साक्षात् पुरुषोत्तम की लीला तें मन बाहर करि यह प्रश्न कहा ? यामें यह जताये। (कृष्णदास कों) अबही ''मानसी सा परा मता'' यह फल नाहीं भयो। तब कृष्णदास के समाधान के अर्थ आप कहे, जो– रामचन्द्रजी दयाल हैं।

यह कहि अपने मारग को सिद्धांत जताये। जो–अपने हठधर्म करि धर्मी, जो श्रीठाकुरजी तिनकों श्रम करावे तो हीन फल धर्म को स्वर्ग ही मिले। श्रीठाकुरजीको फल न मिले।

वार्ता–प्रसंग ६– और एक समे श्रीआचार्यजी सों कृष्णदास नें फेर प्रश्न पूछ्यो, जो–भक्त होइ के श्रीठाकुरजी की

लीला को भेद नाहीं जानत सो काहेतें ? तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो–ये विधि पूर्वक समर्पन ज्यों कह्यो है त्यों नाहीं करत।

विधि, सो समर्पन पदार्थ को ज्ञान नाहीं। अहंता–ममता अपनी सत्ता अहंकार को समर्पन। जो– अब दास भयो। प्रभु आधीन हों। प्रभु करें सो सर्वोपरि सिद्धांत है। यह भेद अपने में नाहीं। और अपनी योग्यता मानी भगवदीय को संग नाहीं करत है। तातें योग्यता मानें तब प्रभु अप्रसन्न होई जात है। यह मारग दैन्य को है। सो दैन्य नाहीं है। इत्यादिक अंतरायतें अपनो स्वरूप और भगवदीय को स्वरूप, श्रीठाकुरजी को स्वरूप नाहीं जानत है। और भगवद्भक्त को संग करे तो श्रीठाकुरजी की लीला को भेद जाने। सो तो योग्यता समझ नाहीं करत है। और जो–कछू करत है सो अंत:करण पूर्वक नाहीं करत है। तातें श्रीठाकुरजी को स्वरूप और लीला को भेद नाहीं जानत है।

उत्तम भक्त को संग करे। श्रीभागवत श्रीसुबोधिनीजी आदि ग्रन्थ को अहर्निस अवगाहन करे। तब भगवद्भाव उत्पन्न होई। श्रीठाकुरजी ब्रजभक्तन बिषे सदैव रहत हैं। तहां सेवा करि के बंधे हैं। तहां एतन्मार्गीय वैष्णव ताके हृदय में श्रीठाकुरजी बिराजत हैं। ताको संग करनो। तहां गजनधावन आदि वैष्णव को दृष्टांत दीनों। जिन–जिन ने भावपूर्वक सेवा करी तिन–तिन के सकल मनोरथ सिद्ध भये। जातें लीलास्थ ब्रजभक्तन के भाव को विचार करनो।

जो वैष्णव श्रीठाकुरजी को स्वरूप जानत है। तिनको स्वरूप अलौकिक दृष्टि सों जान्यो जाय। जो आज्ञा होइ सो

जाने। जो वैष्णव श्रीठाकुरजी कों जानत है, सो जो कछू काज करत है सो श्रीठाकुरजी के अर्थ करत हैं, और श्रीठाकुरजी विषे विरह ताप भाव करत हैं। अपुने स्वदोष को विचार करत हैं। (ऐसे जीव) अपुने स्वरूप विचारे, जो–हों कौन हों ? पहले कहा हतो। भगवद् संबंध किये तें हों कौन हो गयो ? अब मोकों कहा कर्तव्य ? रात्रिदिवस ऐसे विचार करत रहे तब अपनो स्वरूप जाने। ये प्रागट्य श्रीब्रजभक्तन के अर्थ है। तातें उत्तम संग होइ तो एतन्मार्गीय ठाकुर कों जाने। और शास्त्र पुरान अनेक इतिहास हैं। तातें ब्रजराज के घर प्रगटे सो स्वरूप जान्यो न जाय। ये ठाकुर तो तब ही जाने जाय जब भगवद्भक्त को संग करे। सेवा को प्रकार एतन्मार्गीय वैष्णव जानत हैं। तिनसों मिलि, भाव पूछि के सेवा करनी। तब भगवद्भाव उत्पन्न होइ। श्रीठाकुरजी की लीला को सब भेद जाने।

वार्ता – प्रसंग ७ – और एक समें श्रीआचार्यजी श्रीबद्रीनाथजी के मंदिर पाँउ धारे। तब वेदव्यासजी साथ हे। तब श्रीआचार्यजी वेदव्यासजी सों पूछी, जो–भ्रमरगीत के अध्याय में उद्धव कों ब्रजभक्त पास पठाये। ता प्रसंग में आधो श्लोक घटत है। तब वेदव्यासजी ने अर्द्धश्लोक कह्यो, सो श्लोक– ''आत्मत्वाद्भक्तवश्यत्वात्सत्यवाक्तवात्स्वभावतः'' सो याकी टीका श्रीआचार्यजी नें पहले ही कीनी ही। सो सुनिके वेदव्यासजी कहै, जो–तुम धन्य हो। ता पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीबद्रीनाथजी के मंदिर में पधारे। ता दिन बामनद्वादसी हती। ता दिन श्रीआचार्यजी व्रत करते। सो फलाहार व्यासजी हू ढूंढे। और कृष्णदास हू ढूँढे। परंतु मिल्यो नाहीं। तब बद्रीनाथजी

ने श्रीआचार्यजी सों कह्यौ ! जो–मैंने फलाहार को सर्वत्र खोज कियो। परि पावत नाहीं। तातें तुम रसोई करि के श्रीठाकुरजी कों भोग समर्पि के भोजन करो। तब श्रीआचार्यजी विचारे, जो–श्रीठाकुरजी की इच्छा ऐसी ही दीसत है। इतने में कृष्णदास ने आइ के कह्यौ, जो–महाराज ! इहां कछु फलाहार पाइयत नाहीं। तब वेदव्यासजी द्वारा श्रीठाकुरजी ने कही, जो सामग्री करि भोजन करो। ''उत्सवांते च पारणा'' यहू वचन है। ता पाछे श्रीआचार्यजी आपु रसोई करिके श्रीठाकुरजी कों भोग समर्पि के आप भोजन कियो।

पाछें ता दिनतें वामनद्वादसी के दिना व्रत न करते। पाछे श्रीआचार्यजी श्रीबद्रीनाथजी तें विदा होइके कृष्णदास कों साथ लैकें पधारे।

भावप्रकाश – फलहार ना मिल्यो। ताको प्रयोजन यह, जो–श्रीआचार्यजी चाहें सो सबहि मिले। व्यासजी कृष्णदास सारिखे ढूँढनहारे। सो फलाहार यातें न मिल्यो, जो–श्रीआचार्यजी के मन में सामग्री उत्सव की करनी। ऊपर तें मर्यादा राखिवे के लिये फलाहार की कही। सो फलाहार न मिल्यो। तातें वेदव्यासजी द्वारा श्रीठाकुरजी ने कहवाई।

तातें श्रीगुसांईजी ने सात लालजीन में, बड़े घर (प्रथम पुत्र श्रीगिरिधरजी के घर) यह रीति राखी उपवास। और ठौर ''उत्सवांते च पारणा'' श्रीठाकुरजी सब सामग्री अरोगे।

वार्ता – प्रसंग ८ – (पाछें) श्रीआचार्यजी ने जब आसुर-व्यामोह लीला करी, तब कृष्णदास ने हू विप्रयोग करि देह को त्याग कियो। वार्ता ॥२॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक दामोदरदास संभलवारे खत्री। कन्नौज के वासी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– दामोदरदास कों बालपनें तें विरह हतो, जो–श्रीठाकुरजी की प्राप्ति कौन प्रकार सों होई ? सो दामोदरदास एक समय प्रयाग में आये हते मकर स्नान कों। सो कृष्णदास सों मिलाप भयो। तब चर्चा करत कृष्णदास (मेघन) ने कही, श्रीवल्लभाचार्यजी प्रकट भये हैं। सो दक्षिण में पधारे हैं। कृष्णदेव राजा के समीप मायावाद खंडन किये हैं। उनकी कृपा तें निश्चय श्रीठाकुरजी मिलेंगे। मेरे गुरु सों नेह है तिनसों कछू कार्य मेरो भयो नाहीं। तातें अब मैं जहाँ श्रीआचार्यजी होइंगे तहाँ जाऊंगो। यह दामोदरदाससों कहि कें कृष्णदास दक्षिण देस गये।

जब तें दामोदरदास के पास तें कृष्णदास मेघन श्रीआचार्यजी के पास गये। तब तें दामोदरदास कों विरह बहोत रहे। जो मोकों श्रीआचार्यजी कौन प्रकार मिलेंगे ? या प्रकार विरह करत महा महीना में मकर–स्नान दामोदरदास किये। सो महा सुदी १५ कों दामोदरदास मकर–स्नान करत हते। ता समय एक तांबेको पत्र गंगा–यमुना के संगम में ते दामोदरदास के हाथ आयो। सो दामोदरदास घर लाये। जब रात्रि कों दामोदरदास सोये। तब दामोदरदास कों स्वप्न भयो। यह पत्र बांचे ताकी तू सरन जैयो। तब सबारे उठि के प्रयाग में बड़े–बड़े पंडित ब्राह्मण महापुरुष मकर–स्नान कों आये हते। तिन सबन कों बँचायो। कोई बाँचि न सके। तब दामोदरदास कासी में सेठ पुरुषोत्तमदास के यहाँ व्यौहार हतो। (तहाँ गये) खरच की हुंडी सेठ पुरुषोत्तमदास के यहाँ ले गये हते। तिनसों सगरी बात दामोदरदास ने कही, जो–यह पत्र श्रीआचार्यजी बाँचेंगे। और काहू की सामर्थ्य नाहीं। मोसों कृष्णदास मेघन कहि गये हैं। जो–श्रीआचार्यजी की सरन तें श्रीठाकुरजी मिलेंगे। (सो) यह सुनिके सेठ पुरुषोत्तमदास कों चटपटी लागी, जो–मोकों कब श्रीआचार्यजी को दरसन होइगो ? सो सेठ पुरुषोत्तम की वार्ता के भाव में वर्णन करेंगे। या प्रकार दामोदरदास दिन १५ कासी रहे। परंतु पत्र कोऊ न बांच्यो। तब कन्नौज में अपने घर आये। एसे विरह करत कछूक महिना में श्रीआचार्यजी महाप्रभु कन्नौज पधारे। तब गाम के बाहर बाग में उतरे।

वार्ता – प्रसंग १– जब श्रीआचार्यजी कन्नौज पधारे तहाँ गाम के बाहिर एक बाग हतो तहां आप उतरे, और कृष्णदास कों गाम में पठायो। जो–सीधो सामग्री ले आउ। परि काहू सों कहियो मति। जो–श्रीआचार्यजी आप पधारे हैं।

भावप्रकाश – यह कहे ताको अभिप्राय यह है, जो–दामोदरदास कृष्णदास

कों मिलेगो सो दामोदरदास सों पहिले आपहि कहे, जो–श्रीआचार्यजी पधारे हैं। सो दामोदरदास द्रव्यपात्र है। तातें इनके बुलायवे की अपेक्षा यह मन में आवे तो कृष्णदास को बिगार होइ। सो तातें बरजि दिये, जो–काहूसों कहियो मति। प्रीति होइगी तो आपुही आवेगी। यह अभिप्राय जाननो।

और दूसरो अभिप्राय यह है, जो–जा दिन श्रीआचार्यजी कन्नौज पधारे तातें पहेलेई श्रीआचार्यजी आपकों (श्रीठाकुरजी की) आज्ञा भी हती। जो–यहाँ के (कन्नौज के) जीव पावन करने हैं। तातें श्रीआचार्यजी आप बिचारे, जो–आग्या भई है तो आपही होइगो ताके लिये नाहीं करी हती।

तब कृष्णदास गाम में गये। सीधो सामग्री सब लीनी ! सो सब ले के चले। तहाँ दामोदरदास राजद्वार तें आवत हते। सो मारग में जात कृष्णदास कों पहचानें। तब दामोदरदास घोड़ा तें उतरि के पास आये। तब दंडवत् करि के कह्यो और पूछ्यो जो – श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारे हैं। तब कृष्णदास ने बिचार्यो तातें कछु उत्तर दियो नाहीं।

तब दामोदरदास ने बिचार्यो, जो– श्रीआचार्यजी बिना ए काहे कों आवे ? सो जब कृष्णदास चले तब दामोदरदास पाछे पाछे आये। घोड़ा घर पठवाइ दियो।

तब कृष्णदास कों ओर दामोदरदास कों दूरितें आवत श्रीआचार्यश्री ने देखें। तब दामोदरदास नें दंडवत् किये। तब कृष्णदास सों श्रीआचार्यजी ने पूछी, जो–तेंने वासों क्यों कह्यो? तब इनने (कृष्णदास नें) कही। महाराज ! मैंने तो इनसों नाहीं कही। तब दामोदरदासनें श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी, जो– महाराज ! इननें तो मोसों नाहीं कही। हों तो इनके पाछे चल्यो आयो हूँ।

पाछे श्रीआचार्यजी (ने) दामोदरदास सों पूछी, जो–पत्र पायो है सो लायो है ? तब दामोदरदास ने विनती कीनी, जो–

महाराज ! पत्र को कहा काम है ? तब श्रीआचार्यजी आप कही, जो–तोकों आज्ञा भई है। जो–पत्र बांचे ताकी सरन जैयो। तातें पत्र ल्याऊ। तब पत्र मँगवायो।

भावप्रकाश – श्रीआचार्यजी ने कृष्णदास सों कह्यो, जो–तेनें इन सौं क्यों कह्यो ? यह कहे ताको कारन यह जो 'तेनें आज्ञा नाहीं' यह कह्यो तामें हमारे पधारनो तो, कह्यो। तब दामोदरदास ने कही, जो–इनने नाहीं कह्यो। मैं इनके पाछे चल्यो आयो हूँ। या प्रकार दैन्यता सिद्ध किये।

और दामोदरदास ने कह्यो, पत्र को कहा काम है ? यह कहि दामोदरदास ने यह जतायो, जो–आप ईश्वर हो। मोकों अनुभव भयो है। तब (श्रीआचार्यजी) कहे ल्याव, भगवद् आज्ञा होय तेसे हि करनो।

तब श्रीआचार्यजी ने पत्र मँगवायो हतो सो बांच्यो। पाछें वाको अभिप्राय दामोदरदास सों कह्यो। पाछें दामोदरदास कों नाम सुनायो। पाछें श्रीआचार्यजी को दामोदरदास नें अपने घर पधराये। पाछें दामोदरदास की स्त्री हू सरनि आई। तब दामोदरदास कों और उनकी स्त्री कों समर्पन करवायो। एक लोंडी दैवी जीव हती, सोउ सरन आई।

तब दामोदरदास नें विनती करी, जो–महाराज ! अब कहा आज्ञा होत है अब हम कहा करें ? तब श्रीआचार्यजी श्रीमुख तें आज्ञा किये, जो–अब तुम सेवा करो। तब दामोदरदास नें कही, जो–महाराज ! सेवा कौन प्रकार करे ? तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने कही, जो–कहूँ श्रीठाकुरजी को स्वरूप होय सो देखो। सो एक दरजी के यहाँ श्रीठाकुरजी को स्वरूप हतो। ताकों द्रव्य देके स्वरूप अपने घर ले आये। पाछें घर सब पोते पात्र सब बदलाये। पाछें श्रीआचार्यजी ने वा स्वरूप कों पंचामृत करवायो। श्रीद्वारकानाथजी नाम धर्यो।

भावप्रकाश – श्रीद्वारकानाथजी नाम यातें धरयो, जो–राजनीति सो प्रथम

सेवा को विस्तार दामोदरदास के माथे सोंपे हैं।

पाछें सिंहासन पाट बैठाये। दामोदरदास के माथे सेवा पधराय के पाछें श्रीआचार्यजी आप रसोई करि के भोग समर्प्यो। समयानुसार भोग सरायो। तब बीड़ा समर्पन लागे। तब देखें तो पान हरे हैं। तब श्रीआचार्यजी दामोदरदास सों खीज के कहें, जो-हरे पान श्रीठाकुरजी कों न समर्पिये। उत्तम तें उत्तम सामग्री होइ सो श्रीठाकुरजी कों समर्पिये। श्रीठाकुरजी तो उत्तम तें उत्तम वस्तु के भोक्ता हैं। (तातें) उत्तम तें उत्तम सामग्री होइ सो श्रीठाकुरजी कों समर्पिये। ता पाछें स्त्री पुरुष भली भाँति सों सेवा करन लागे। सो श्रीद्वारकानाथजी की सेवा भली भांति सों होन लागी। और श्रीआचार्यजी नें आज्ञा दीनी, जो उतर्यो परकालो (वस्त्र को थान) होय तामें तें श्रीठाकुरजी कों न समर्पिये। सारे परकालें में तें प्रथम श्रीठाकुरजी कों लीजिये। और उत्तम सामग्री होइ तामें ते और ठौर न खरचिये। ता पाछे स्त्रीपुरुष नीकी भांति सों सेवा करन लागे।

और सेवा सामग्री ऐसी होती जो-सोने के कटोरा में अमरस राखते, सो ऐसो उच्यतातें सो और कोई न जानें, जो-यामें कछु सामग्री धरी है। या भांति सों दामोदरदास सेवा करन लागे।

भावप्रकाश - पाछे वस्त्रादिक की रीति बताये। जो- और कार्य में कछु आयो होय तो (सो वस्तु) श्रीठाकुरजी के काम न आवें। जाके अर्थ उठे तिनको प्रसादी कहावे। तातें पहले श्रीठाकुरजी कों सब सामग्री में ते लेनो। श्रीठाकुरजी की सामग्री में ते अन्य ठौर खरच न करनो। या प्रकार पुष्टिमारग की रीति सबकों बताये।

सामग्री पोरी सोने के पात्र में मिलि जाइ। उज्ज्वल सामग्री रूपे के पात्र में मिलि जाइ। यह गूढ़ भाव जनाये। सोने के मिष श्रीस्वामिनीजी के भाव तें, रूपे के

मिष श्रीचंद्रावलीजी के भाव सों सेवा करते।

पाछें श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे।

और दामोदरदास श्रीठाकुरजी को जल आप भरतें। सो एक दिन दामोदरदास को सुसर दामोदरदास के घर आइकें दामोदरदास सों कहन लागे, जो–तुम जल भरि लावत हो, सो हमकों जाति में लज्ञा आवति है। तातें तुम मति भरो। लोंडी पास जल भराओ।

तब दामोदरदास बिचारे, जो–सूरदासजी गाये हैं। ''सूर भजन कलि केवल कीजे लज्ञा का'न निवारि'' और कीर्तन में गाये हैं। ''का नन काहूकी मन धरिये व्रत अनन्य एक लहीए हो'' यह विचारी स्त्री सों कहे तुमहू जल लेंन चलो। तब दामोदरदास ने दूसरे दिन एक घड़ा तो आप लियो, एक घड़ा स्त्री के हाथ में दीनो। तब स्त्री भगवदी सो घड़ा (गागरि) ले ससुर के (दामोदरदास के) हाट आगे तें चले। तब दोऊ जने (फेर) बाकी हाटके नीचे होय के निकसे। तब जल लैके आये। तब पाछे दामोदरदास को ससुर आयो। सो आइ के दामोदरदास के पाइन पर्यो। और कह्यो, जो–मैं चूक्यो, जो–तुमसों कह्यौ। अब तें तुमही जल भरो, परि स्त्रीजन पास जल मति भरावो। आज पाछे हम कछू न कहेंगे। तब आपहि जल भरन लागे। श्रीठाकुरजी दामोदरदास सों सानुभावता जनावन लागे। जो–कछु चाहिये सो दामोदरदास पास माँगि लेइ। बातें करे। सेवा करि के दामोदरदास ने श्रीठाकुरजी कों ऐसे प्रसन्न किये। सो इनकी सेवा देखि के श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न भये। तब आप अपने श्रीमुखतें कहें, जो–जिन राजा अंबरीष न देख्यो होइ सो

दामोदरदास कों देखो, राजा अंबरीष तो मर्यादामार्गीय हुतो। और ये पुष्टिमार्गीय है। इनमें इतनी अधिकताई है।

भावप्रकाश – दामोदरदास जलकी सेवा श्रीयमुनाजी के भावतें करते। तातें श्रीआचार्यजी कहें। मर्यादामें अंबरीष पुष्टि में दामोदरदास राजसेवा किये। तब ततहरा रूपे के, अंबरीष की उपमा कैसे जानिये ? जैसे श्रीठाकुरजी की मुखकी उपमा चंद्रमा की। काहेतें ? कहां मर्यादा कहां पुष्टि ? कोटि गुनो तारतम्य जाननो।

जब दामोदरदास के सुसर ने कही, स्त्री सों जल मति भरावो। तब दामोदरदास कहे, जल न भरावेंगे। पाछे ससुर गयो। तब दामोदरदासनें बिचार्यो, जो जलकी सेवा (स्त्री जनसों) कराई। सो जो अब मैं छुड़ाऊँ तो मोकों ससुर की का'नको दोष परे। परन्तु एक बार बरजोंगो, प्रीति होइगी तो स्त्री आपुहि न छोड़ेगी। (यों बिचार के) जो–एकबार भयों सो सौ बार भर्यो। अब गाम के (लोग तो) जान चुके। अब मैं सेवा क्यों छोड़ों ? प्रीति होइगी तो या भांति (बिचार के) भरेगी। तातें मैं हठ करिके भराऊँ तो प्रीति बिना श्रीठाकुरजी अंगीकार न करेंगे। तातें एकबार बरजों तो सही। तब (स्त्री सों) कहें। अब मैं ही जल भरोंगो। तुम मति भरो। तिहारे पिता को लाज लागत है। तब स्त्री नें कही तुमहि भरो। या प्रकार पिता की का'नको दोष भयो। सो आगें जाय के अन्याश्रय भयो। जो दामोदरदास ससुर के आग्रह का'न तें जल की सेवा छुडावते (छोड़ते ?) तो इनहूकों बाधक होतो। तासों फेर सेवा करन लागे।

वार्ता – प्रसंग २ – और एक समें उष्णकाल के दिन हते। तब दामोदरदास श्रीठाकुरजी कों मंदिर में पधराइ पोढ़ाइ के आप चौबारे जाइ सोये। तब श्रीद्वारकानाथजी ने लोंडी कों आज्ञा दीनी, जो–तू किंवाड़ खोले मोकों गरमी बोहोत होत है। तब लोंडी ने मंदिर के किवाड़ खोलि। तब श्रीद्वारकानाथजी ने लोंडी सों कह्यौ, जो–पंखा करि। तब लोंडी ने पंखा कियो। तब श्रीठाकुरजी ने लोंडी सों कह्यौ, जो–तू जा, रहन दे। तब लोंडी किंवाड़ खुले छोड़िके सोयवे गई। तब सवारो भयो। तब दामोदरदास देखे तो मंदिर के किंवाड़ खुले हैं। तब पूछे, जो–किंवाड़ कौन ने खोले हैं ? तब लोंडी ने दामोदरदास सों कह्यो,

जो-मोकूँ श्रीठाकुरजी ने आज्ञा दीनी ही, जो-तू किंवाड़ खोलि। तब मैंने किंवाड़ खोले हैं। तब दामोदरदास ने कही, जो मोसूँ खोलिवे की क्यों न कही ? आप खोले। फेर दामोदरदास के मन में आई जो श्रीठाकुरजी ने मोसों किंवाड़ खोलिवे की क्यों न कही ? और लोंडी सों क्यों कहैं ? पर प्रभु बड़े दयाल हैं। जाके विषे स्नेह होई, ताही सों संभाषन करे। श्रीआचार्यजी के अंगीकार में सब समान हैं। लौकिक में कोऊ ऊंच नीच कहियो। (परि) श्रीठाकुरजी स्नेह के बस हैं। पाछें श्रीठाकुरजी ने दामोदरदास सों कह्यो, जो-मैंने खुलाए हैं और इन (नें) खोले हैं। जो-तू यासों क्यों खीजत हैं ? तू तो चौबारे जाय सोयो। और मोकों भीतर सुवायो। तब दामोदरदास ने कह्यौ, जौ-प्रसाद तब लेहूँ (जब) मंदिर नयो समराऊं। तब स्त्री नें कह्यो, जो-ऐसे क्यों बने? यह तो कछु पांच-सात दिनको तो काम नाहीं। तब दामोदरदास नें कह्यो, जो-सखड़ी महाप्रसाद तो नहीं लेऊँगो। फलाहार करूंगो। तब त्योंही करत मंदिर सिद्ध भयो। तब आछो दिन देखि के श्रीद्वारकानाथजी कों मंदिर में बैठाये। तब बड़ो उत्सव कियो। पाछें सब वैष्णवन कों महाप्रसाद लिवायो। ता पाछें आपु महाप्रसाद लियो।

भावप्रकाश - श्रीठाकुरजी ने लोंडी की पास पंखा कराये, परि स्त्री कों नाहिं जताये। सोउ जल की सेवा छोड़ी, तातें इनकों न कहे। काहें तें ? पहले स्त्री जल की सेवा न करती तो चिंता नाही। (सेवा) करि के छोरनो हतो तो दस-पांच दिन जल भरि कें। पाछें अपने मनतें न भरते तो चिंता नाहीं। ससुर के कहतें छोड़े, तातें श्रीठाकुरजी लोंडी सों किंवाड़ खोलाय पंखा की सेवा कराये।

और श्रीआचार्यजी की यह आज्ञा हैं, जहां तांइ पूरन स्नेह को प्रकार हृदयारुढ़ न होई तहाँ तांई सेवा (यथा देहे तथा देवे) अपनी देहकों सीत-उष्ण बिचारि कें करे। सो दामोदरदास चौबारें सोये। श्रीठाकुरजी कों बियारि आयवे को

मारग न हतो। तातें मंदिर की रीति प्रकट कराईवेके लिये श्रीठाकुरजी ने लोंड़ी सों किंवाड़ खुलाये। लोंड़ी कों मानसी सेवा को अधिकार हतो। अष्ट प्रहर गोप्य-रीति सों मानसी करती। कोई जानतो नाहीं। तातें श्रीठाकुरजी उह लोंड़ी के उपर बहोत प्रसन्न हते।

जब दामोदरदास लोंड़ी पर खीजे। सो ठाकुरजी सहि न सके। जो मोकों प्रिय है ता पर खीझत है ? सो लोंड़ी की पक्ष श्रीठाकुरजी ने करी। तथा दामोदरदास कों अपराध तें छोड़ाइवें कों बोले, जो-मैंनें यासों खुलाए। तू क्यों खीझत है ? आज पाछें या पर प्रीति राखियो। याको स्वरूप अलौकिक जानियो। तू जाय चौबारे पर सोयो। मोकों वियारि आयवे की ठौर नाहीं। चित्रा सखी होइ अपनी सेवा भूलि गयो ? मंदिर सँवारनो। तब दामोदरदास चौंकि परे, सो यह, जो अपने स्वरूप को अनुभव भयो। तब कहे मंदिर बने तब खानपान करूं, यह टेक चित्रा के आवेस में कहे। पाछें कारीगर बुलाय काम लगाये। पाछें स्त्री नें कही खानपान बिना कैसें चलेगा ? एक दिन को काम नाहीं है। तातें खानपान बिना रह्यो न जायगो। वह आवेस रहेतें, तब खान पान मति करियो। अब तो करो। तब कहे फलाहार लेऊंगो। या प्रकार मंदिर सँवराये। जारी, झरोखा, निजमंदिर, तिबारी, चोक, टेरा, परदा, जैसें लीलासृष्टि में करत हतें ताही भाव सों सगरे मंदिर कों व्योंत किये। मुहूरत देखि पधराये। बड़ो उत्सव (कियो) वैष्णव को समाधन श्रीआचार्यजी की भेट काढ़े।

वार्ता - प्रसंग ३ - बहुरि एक दिन दामोदरदास श्रीठाकुरजी कों राजभोग समर्पि सैय्या मंदिर में सैय्या सँवारन गये। तब देखे तो दुलीचा उपर बिलाई ने बिगाड्यो है। तब दामोदरदासने कह्यो, जो-श्रीठाकुरजी तो अपनी सैया हू राखि सकत नाहीं। ऐसें कह्यो, तब श्रीठाकुरजी ने थार चौकी उपरसूं लात मारि डारि दीनों और दामोदरदास सों श्रीठाकुरजी नें कह्यो, जो-सेवक तू के सेवक मैं ? सेवक होइ के ऐसें बोलत है ? ऐसे बहुत खीजे पाछें। दामोदरदास नें बिनती कीनी ओर बहुत मनुहार करी। सब सामग्री सिद्ध करि श्रीठाकुरजी कों भोग समर्प्यो। श्रीठाकुरजी अरोगे। परि तोहू दोय मास लों बोले नाहीं। पाछें बहोत बिनती करन लागे। तब बोलन लागे।

भावप्रकाश – श्रीठाकुरजी ने राजभोग को थार लात मारि के डारि दियो। सो या भाव तें, जो–श्रीआचार्यजी नें अब ही दासभाव को अधिकार दियो है। और यह हांसी तो सख्य भाव को अधिकार भयो होइ तब ही बने। तातें बिना श्रीआचार्यजी के दिये तू (तें) विशेष भाव कर्यो। तातें तेरो धर्यो भोग नाहीं अंगीकार करूंगो। या प्रकार सिक्षा किये। तातें अधिकार बिना विशेष विचार किये इतनो अंतराय जताये, वैष्णव कों।

वार्ता – प्रसंग ४ – बहुरि एक समय दामोदरदास हरसानी इनके घर पाहुने आये। सों संभलवारे के घर दिन पांच सात रहे। तब इन बहुत भली भाँति सों समाधान कियो। पाछें दामोदरदास हरसानी इनसों बिदा होइके अडेल आये। तब श्रीआचार्यजी दामोदरदास सों पूछे, जो–दमला ! तू कहाँ उतर्यो हो ? कहा प्रसाद लियो हो ? तब दामोदरदास हरसानी ने श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, जो–महाराज ! कन्नौज में दामोदरदास संभलवारे के घर उतर्यो हो। अनसखड़ी महाप्रसाद लेतो। तब श्रीआचार्यजी दामोदरदास संभलवारे उपर अप्रसन्न भये और कहे, (मनमें विचारे जो) यह मेरो अंतरंग सेवक याकों सखड़ी महाप्रसाद क्यों न लिवायो ? यह बात श्रीआचार्यजी के मनकी दामोदरदास संभलवारे नें घर बेठे जानी। जो–श्रीआचार्यजी महाप्रभु मेरे ऊपर अप्रसन्न भये हैं। तब स्त्री सों कही, जो–तू श्रीठाकुरजी की सेवा नीकी भाँति सों करियो। और मैं तो श्रीआचार्यजी कें दरसन कों अड़ेल जात हों। तब दामोदरदास अड़ेल कों चले। सों अड़ेल जाइ पहोंचे। तब श्रीआचार्यजी के दरसन किये। साष्टांग दंडवत् किये। तब श्रीआचार्यजी पीठ दे बेठे। तब दामोदरदास संभलवारे ने श्रीआचार्यजी सों विनती करि के कह्यो, जो–महाराज! मेरो अपराध कहा है ? और जीव

तो अपराध करत ही आयो है। परि अपराध कर्यो जानिए तो भली बात है। तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो तेनें दामोदरदास हरसानी कों सखड़ी महाप्रसाद क्यों न लिवायो ? और अनसखड़ी प्रसाद क्यों लिवायो ? तब दामोदरदास संभलवारे नें श्रीआचार्यजीसों बिनती कीनी, जो–महाराज, दामोदरदास सों पूछिये ! तब श्रीआचार्यजी नें दामोदरदास हरसानी सों पूछी, जो–दमला ! तेनें दामोदरदास संभलवारे के यहाँ सखड़ी महाप्रसाद क्यों न लियो ? तब दामोदरदास नें कह्यो, जो–महाराज ! श्रीठाकुरजी प्रातःकाल बाल भोग अरोगते सोई लेतो। सो सखड़ी की रुचि रहती नाहीं, तातें न लेतो। तब श्रीआचार्य ने कह्यो, जो–तू तो तेरी इच्छा तें न लेतो। परि मोकों तो याके ऊपर बड़ी खुनस भई हती। सो भक्तन के अंतःकरण की भक्ति देखिवे को प्रभू को नाट्य है। काहे तें जो–दामोदरदास संभलवारे ने कन्नौज में अपने घर बैठे श्रीआचार्यजी के अंतःकरण की जानी। सों श्रीआचार्यजी तो भक्त के हृदय में सदा स्थित हैं। वह भक्त हृदे की बात कहा न जाने ? परि भक्त परीक्षार्थ यह प्रभु का नाट्य है। पाछें दामोदरदास कों बहुत सन्मान करि के श्रीआचार्यजी ने घर पठाये। तब दामोदरदास अपने घर कन्नौज आइ पहोंचे। पाछें स्त्री पुरुष भली भांति सों सेवा करन लागे।

भावप्रकाश– दामोदरदास हरसानी संभलवारे के ऊपर कृपा करन के अर्थ इनके घर पाहुने आये। दामोदरदास संभलवारे तनुजा वित्तजा भली भाँति सों राजसेवा करे हैं और जो वैष्णव (इनके यहाँ होय के) श्रीआचार्यजी के दरसन कों जाते तिन सबन के संग न्यारी–न्यारी भेट पठावते। वैष्णव को समाधान बहोत करते। खड़िया में बिना कहें खरची वैष्णव कों भरि देते। सो श्रीआचार्यजी के आगें बड़ाई बहोत भई। जो–आवे सो (बड़ाई) करे। तब श्रीआचार्यजी के मनमें यह आई, जो हृदय के भीतर को भाव सुद्ध होइ तब काम होइ। जो अन्याश्रय न होइ। यह श्रीआचार्यजी के

हृदय की जानिके दामोदरदास हरसानी इनके यहां पाहुने आये (कृपा करन के अर्थ)। सो दामोदरदास के हृदय की सगरी रीति आछी देखी, परन्तु स्त्री में रंच पिता की का'नि जानि सखड़ी महाप्रसाद न लिये। दिन पांच सात रहे। परंतु अपने हृदय को अभिप्राय कछू दामोदरदास सों मार्ग की वार्ता नाहीं कहे। पाछें श्रीआचार्यजी पास आये। तब श्रीआचार्यजी पूछे कहांते आये ? तब विनती करी, जो-दामोदरदास संभलवारे के यहां पाहुने गयो हतो सो सखड़ी नाहीं लियो, अनसखड़ी लियो। यह कहिके यह जताये, जो-दामोदरदास को भाव दृढ़ है। तातें अनसखड़ी लीनी। स्त्री को भाव दृढ़ नाहीं है तातें सखड़ी (महाप्रसाद) नाहीं लियो। तब श्रीआचार्यजी दामोदरदास संभलवारे के ऊपर अप्रसन्न भये। जो-मेरे अंतरंग सेवक कों पायके स्त्रीकूं अन्याश्रय सों न छुड़ायो? फेर ऐसो समें कब पावेगो ? सो यह बात श्रीआचार्यजी के हृदय की संभलवारे ने जानी। स्त्रीकों पराश्रय है तातें नाहीं जानी।

वार्ता-प्रसंग ५ - और सिंहनंद के वैष्णव श्रीआचार्यजी के दरसन कों जाते सो कन्नौज में दामोदरदास के घर उतरते। सो दामोदरदास सबन कों प्रसाद लिवावते। ता पाछें जब वैष्णव अड़ेल कों विदा होते तब जितने वैष्णव होते तिन सबन प्रति एक-एक मोहौर, एक-एक नारियल, श्रीआचार्यजी की भेट कों पठावते। काहेते ? जो मेरी दंडवत खाली हाथ कैसे करोगे ? सो वे दामोदरदास ऐसे भगवदीय है।

वार्ता - प्रसंग ६ - और दामोदरदास को ससुर बहुत संपन्न हतो। तिनने एक सौ लोंड़ी बेटी के दायजे में दीनी हती। जो-मेरी बेटी बैठी रहेगी। और कामकाज सब लोंड़ी करेंगी। परि वह लोंड़ी पास काम न करावती। सेवा संबंधी कार्य सब आपुही करती। और लोंड़ी सब और कामकाज करती। सो वह ऐसी भगवदीय ही।

वार्ता - प्रसंग ७ - बहुरि एक समें श्रीआचार्यजी आप दामोदरदास संभलवारे के घर पौढ़े हते और। दामोदरदास

संभलवारे पांव दाबत हते। तब श्रीआचार्यजी इन सों पूछे, जो–तोकों, तेरे मनमें काहू बात को मनोरथ है ? तब दामोदरदासने कह्यो, जो–महाराज ! मोकों तो आपके अनुग्रह तें काहू बात को मनोरथ रह्यो नाहीं। तब श्रीआचार्यजी ने कह्यौ, जो–तू जाइके अपनी स्त्री सों पूछि आउ। तब दामोदरदास अपनी स्त्री सों पूछी, जो–तेरे काहू बात को मनोरथ है ? तब स्त्रीनें कह्यो, जो–और तो कछु मनोरथ रह्यौ नाहीं। एक पुत्र को मनोरथ है। तब श्रीआचार्यजी सों आइ के दामोदरदास नें कह्यौ, जो–महाराज ! स्त्री कों तो एक पुत्र को मनोरथ है। तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुख ते आज्ञा करे, जो–पुत्र होइगो। पाछें श्रीआचार्यजी आप श्रीनाथजीद्वार (जतीपुरा) पधारे। ता पाछे समय भयो तब वाके गर्भ की स्थिति भई। ता पाछे केतेक दिन में वा बाखरि में एक डाकोतिया आयो। तब ताको सब स्मार्त की स्त्री पूछन लागी। तब तामें तें काहूने दामोदरदास की स्त्री सों कही, जो–अमूकी तु हू पूछि, तेरे कहा होइगो ? पाछें एक लोंड़ीने जाइके वा डाकोतिया सों पूछी, जो–कहा होइगो ? बेटा होइगो कि बेटी होइगी ? तब वा डाकोतिया ने कह्यो, जो–बेटा होइगो।

ता पाछे केतेक दिनमें श्रीआचार्यजी कन्नौज पधारे। तब दामोदरदास चरन छूवन लागे। तब श्रीआचार्यजी नें कह्यौ, जो–तू मोकों छुवे मति। तोकों अन्याश्रय भयो है। तब दामोदरदास नें कह्यौ, जो महाराज ! हों तो कछु जानत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो–तू अपनी स्त्रीकों पूछि। तब दामोदरदास ने अपनी स्त्रीसों पूछी। तब स्त्रीने जो प्रकार भयो हतो सो सब कह्यो। सो

सब बात दामोदरदासनें श्रीआचार्यजी सों आय कही । तब श्रीआचार्यजी दामोदरदास सों कहे, जो-पुत्र तो होइगो परि म्लेच्छ होइगो । पाछे श्रीआचार्यजी आप अडेल पधारे ।

पाछे यह बात दामोदरदास की स्त्रीने सुनी, तब तें श्रीठाकुरजी की सामग्री तथा पात्र कों आप स्पर्श न करती। कहेती, जो-मेरे पेट में म्लेच्छ है, तो मैं श्रीठाकुरजी की सामग्री तथा पात्र कैसें छूओं ? या भांति सों रहे । पाछें जब प्रसूति के दिन आये । तब दामोदरदास की स्त्री नें अपनी महतारी सों कह्यौ, जो-मेरे पुत्र होय तो होत मात्र ही तू तत्काल ले जैयो । मैं वाको मुख न देखोंगी । जो-वाको महोड़ो हम देखें तो हमारो अनिष्ट होइ । तातें वाको महोंड़ो नाहीं दीखे ऐसो उपाइ तू करियो। पाछें बाकी महतारी नें त्योंही कियो । प्रसूत होत मात्र तत्काल अपने घर ले गई । सो धाइ कों देकें बड़ो कियो ।

भावप्रकाश- एक समें जब श्रीआचार्यजी कन्नौज पधारे तब दामोदरदास सों आज्ञा करी, कछू मनोरथ होइ सो मांगि ले। या प्रकार फेरि दामोदरदास की परीक्षा किये । (काहतें ?) जो-स्त्री कों पराश्रय है । ताके संगतें याहुकों पराश्रय होई । तो कछू वर दीजे । इतने पुष्टिमार्ग के फल सों रहित होई । परि दामोदरदास तो दृढ़ है । तातें कहे, महाराज ! आपु के चरणारविंद की सेवा मिली अब मोकों काहू बात को मनोरथ नाहीं है । तब श्रीआचार्यजी ने दामोदरदास सों कह्यो, स्त्री कों पूछि आउ । यामें यह जानिये, जो-श्रीआचार्यजी दामोदरदास सों बोले परि स्त्री सों कछू बोले नाहीं। और स्त्री हू आप आय श्रीआचार्यजी सों बिनती नाहीं कीनी। यामें यह जानिये, जो-(स्त्री) बहोत श्रीमहाप्रभुजी की निकट हुं नाहीं आवती, और मन में अन्याश्रय हतो। तातें कह्यो, एक पुत्र सेवा अर्थ होय। सो यह विचार नाहीं आयो, जो-पुष्टिमार्ग की सेवा मांगे ते मिले । पुत्र को कहा प्रमान है, जो-सेवा करेगो ? इतने यह वचन में (श्रीआचार्यजी ने जान्यो) जो-मेरो आश्रय छूटयो । जाउ, पुत्र लेके सगरी भक्ति

सकामी होइ गई। तातें मुकुंददास ने सप्तम स्कंध में प्रह्लाद नृसिंहजी सों कहे हैं, "स्वामि सों, निज अर्थ हि चाहें। निंदन भक्ति अवगाहें।" स्वामी सों लौकिक वैदिक अपनो सुख कछू चाहे सो निंदित है, वाकों भक्ति न मिले। या प्रकार पुत्र दे आप श्रीगोवर्धनधर पास गिरिराज पधारे। फेरि जब स्त्री ने अन्याश्रय कियो तब आप कन्नौज पधारे। और दामोदरदास कों चरन यातें छूवन नहीं दिये जो-स्त्री के हाथ को खानपान दामोदरदास ने कियो है। तातें चरनपरस करिबे को अधिकार नाहीं है। यह दामोदरदास कूं जतायो।

तातें अन्याश्रय बराबरि दोष दूसरो नाहीं है। जैसे, एक पति छोड़िकें दूसरो पति करे तब स्त्री को सगरो धर्म जाई। ताही प्रकार अन्याश्रय रंच करे तो वैष्णव को धर्म नाश होई। यह सिद्धांत दिखाये। फेरि स्त्री कों अनन्यता भई, तातें श्रीठाकुरजी की सामग्री-सेवा परस नाहीं करती। तब वह अन्याश्रय पुत्र द्वारा हृदय तें निकर्यो। काहे तें, श्रीभागवत में कहे हैं भक्त को श्रीठाकुरजी बिना और ठौर ममत्व होई सो वस्तु कों श्रीठाकुरजी तत्काल नाश करे। तब ज्ञान वैराग्य दृढ़ होइके आश्रय सिद्ध होई। भक्ति न होइ तो वस्तु गये और हू अन्याश्रय सदा करे। सो स्त्री की पुत्र में ममता देखि के नष्ट श्रीआचार्यजी ने अपने जानि के किये। तब स्त्री कों ज्ञान भयो। तब अपनी माता सों कहे, जो-मैं पुत्र को मुख न देखोंगी। सो पुत्र होन समय नेत्रन सों पट्टी बांधि लीनी। सो उनकी माता पुत्र को जन्मत ही अपने घर ले गई। तहां पुत्र बरस १० को ह्वे पाछें म्लेच्छ भयो। स्त्री पुरुष मन लगाइकें श्रीद्वारकानाथजी की सेवा करी।

वार्ता-प्रसंग ८ – बहुरि एक समय दामोदरदास की देह छूटी। तब स्त्री नें घर में छिपाय राखी। पाछें वैष्णव सो कह्यो, जो-तुम एक नाव अड़ेल कों भाड़े करि लावो। सो वैष्णव नाव भाड़े करि लाये। तब नाव में श्रीद्वारकानाथजी और घर में की सब सामग्री तृण पर्यंत कछु घर में राख्यो नाहीं। घर में हतो सो सब नाव में धर्यो। तब वैष्णवन सों कह्यो, जो-यह नाव अड़ेल ले जाउ। सब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के मंदिर में पहोंचाओ। सो वैष्णव नाव लेके चले। सो कोस तीस चालीस उपर नाव गई। पाछें स्त्री नें प्रगट कियो। जो दामोदरदास की देह छूटी है।

तब वैष्णव सब आये। संस्कार कियो। तब दामोदरदास को बेटा तुरक भयो, सो आयो। सो आय के देखे तो घर में कछू नाहीं। जल को करवा भर्यो है। सो देखिके मूंड पटकि रह्यो। पाछें दामोदरदास को ससुर आयो। तिननें बेटी सों कह्यो, जो–बेटी तेनें घर में कछू राख्यो नाहीं। जो–अब तू कहा खायगी ? तब वानें कही, जो–तुम देउगे सो खाऊंगी। क्षत्री लोगन के या समें सगे सहोदरे कछू देत हैं। एसी ज्ञाति की रीति है। तब दामोदरदास की स्त्री ने जलपान न कर्यो। सो थोरे ही दिन में देह छूटी। कृति दोउन की साथ भई। तब यह बात केतेक दिन पाछे काहू वैष्णव नें श्रीआचार्यजी आगे कही। तब श्रीआचार्यजी नें कह्यो, जो–इनकों ऐसो ही चाहिये। सो वे दामोदरदास तथा उनकी स्त्री ये दोउ श्रीआचार्यजी के सेवक ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं, सो कहां तांई कहिये।

भावप्रकाश – पाछें दामोदरदास की देह छूटी। तब स्त्री ने देह छिपाइ यातें राखे, जो–पुत्र म्लेच्छ है। सगरी वस्तु श्रीजी की है सो ले जायगो। तातें नाव भरिकें सब वस्तु श्रीआचार्यजी के यहाँ पहुँचाई। जब कोस चालीस नाव गई तब स्त्री ने जाहेर कियो। ससुर आदि ज्ञाति के सबने दामोदरदास की देह को संस्कार कियो। पाछें बेटा दोरि के आयो सो देखे तो माटी को करुवा जलसों भर्यो है। और कछू है नाहीं। जब खबर पाई तब नाव लेके दोर्यो। परंतु पायो नाहीं। तब माथो पीटि रह्यो। यामें यह जतायो, जो–लौकिक होइ के अलौकिक वस्तु लेन को उपाय करे सो दुख ही पावे। परंतु हाथ लागे नाहीं।

और ससुर ने कह्यो, कछू राख्यो नाहीं। अब तू कहा खायगी ? यह लौकिक पूछ्यो। तब स्त्री ने अलौकिक बात कही, जो–अब तुम देउगे सो खाऊंगी। या समें क्षत्री लोगन में देत हैं। तासों निर्वाह करूंगी। ताको अर्थ यह, जो– श्रीठाकुरजी पधारे सो सेवा बिना घर की वस्तु कैसे लेऊं ?

अलौकिक वस्तु के संग गई। सेवा बिना मैं लौकिक हों। सो लौकिक सों निर्वाह करूंगी। या प्रकार स्त्री ने हू देह छोड़ि दियो। क्रिया–कर्म सब दामोदरदास के संग भयो।

लोंडी की वार्ता

और वह लोंड़ी बड़ी भगवदीय हती ताकी वार्ता नाहीं लिखी। सो याते श्रीजमुनाजी की सखी है। लीला में इनको नाम कृष्णावेसनि है। सदा कृष्ण के स्वरूप को आवेस रहतो। सो द्वापर में विदुरजी की स्त्री यह लोंड़ी हती। सो श्रीठाकुरजी में अत्यंत स्नेह। विदुरजी के घर बिना बुलाये जाते। सो अब दामोदरदास के यहाँ आई। सो लोंड़ी दामोदरदास के ब्याह में आई। याकों पुष्टि संबंध भयो। मानसी में मगन रहती।

एक दिना दामोदरदास (के) सेवा करत में मन में आई, जो–नकास में जाइ घोड़ा खरीदिये। ताही समय एक वैष्णव दामोदरदासकों मिलन कों आयो। तब लोंड़ी ने कही, नकास में घोडा खरीदन गये हैं। तब वह वैष्णव चल्यो गयो। पाछें यह बात काहू ने दामोदरदास सों कहीं, जो–तुम सेवा में हते (तब) लोंड़ी ने ऐसे कही। तब दामोदरदास लोंड़ी सों पूछी। तब लोंडी ने कही, तिहारो मन वा समय कहाँ हतो ? जहाँ मन तहाँ देह जानियो। तब दामोदरदास चुप होइ रहे।

सो जब नाव में सगरी सामग्री धरी। तामें सामग्री सदृश लोंड़ी हू है। सो वह नाव पर श्रीद्वारकानाथजी के संग गई। तब श्रीआचार्यजी सों वैष्णव ने आइ कही, महाराज ! श्रीद्वारकानाथजी वैभव सहित पधारे हैं। ता समें श्रीगोपीनाथजी ढांड हते। (तब) श्रीगोपीनाथजी कहे लक्ष्मी सहित नारायण पधारे हैं। त श्रीआचार्यजीकहे, वैभव ठाकुर को देखि के तिहारो मन प्रसन्न भयो है ? (तब श्रीगोपीनाथजी कहे, तिहारो कहाइके श्रीठाकुरजी की वस्तु में अपनो मन करेग ताको निरमूल नास जायगो। तब श्रीआचार्यजी कहें, हमारो मारग तो ऐसोई है। स द्रव्य तें कछुक गोपीनाथजी प्रसन्न भये हते। सो एक पुत्र भयो। परंतु बंस नाहीं चल्यो पाछे श्रीआचार्यजी वैष्णव सों आज्ञा किये। सगरी सामग्री श्रीजमुनाजी में पधरा देउ। श्रीद्वारकानाथजीकों हमारे घर पधराई लावो। तब वह लोंड़ी हू सामग्री रूप है सो देह सहित श्रीजमुनाजी पास चली गई। सगरी सामग्री श्रीजमुनाजी में पधराई श्रीद्वारकानाथजी श्रीआचार्यजी के घर बिराजे यह लोंड़ी की अलौकिक बात हत सो लोगन में विरुद्ध सी लागी। तातें श्रीगोकुलनाथजी प्रकास नाहीं किये। सामग्र रूप कहें। पाछें काहू वैष्णव ने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी, महाराज ! सामग्री त दामोदरदास की स्त्री वैष्णव ने पठाई। सो आप अंगीकारि क्यों नाहीं किये ? त श्रीआचार्यजी कहे, जो–बेटा म्लेच्छ है। सुनके आवे झगरो करे। द्रव्य दुःख को मू है। दामोदरदास की स्त्री ने पठायो। श्रीमहारानीजी (कों) अंगीकार हू करायो लौकिक झगरो हू मिटायो। पाछें काहू वैष्णव नें, स्त्री ने हू देहँ छोड़ी इनकी बा

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक पद्मनाभदास कन्नौजिया ब्राह्मन कन्नौज के वासी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

वार्ता –प्रसंग १– सो प्रथम पद्मनाभदास व्यासासन बैठते। सो कन्नौज में आप अपने घर कथा कहते। ऊंचे आसन बैठते। काहू के घर जानो न परतो। वृत्ति घर बैठे चली आवती। या भाँति रहते। सो एक समय श्रीआचार्यजी आप कन्नौज पधारे। तब पद्मनाभदास दरसन कों आये। तब पद्मनाभदासने श्रीआचार्यजी महाप्रभु के श्रीमुखतें भगवद् वार्ता को प्रसंग सुन्यो। तब जानी, जो–ए साक्षात ईश्वर हैं। श्रीपूर्ण पुरुषोत्तम यही है। सो पुरुषोत्तम जानि के पद्मनाभदास श्रीआचार्यजी की सरनि आये। नाम पायो। पाछे समर्पन करवायो। पाछे उत्थापन के समे श्रीआचार्यजी ने पोथी खोली। तहाँ दामोदरदास संभलवारे के घर विराजे हते। सो पद्मनाभ अपने घर तें आये, श्रीआचार्यजी कों दंडवत् करिके बैठे। तब श्रीआचार्यजी नें निबंध को श्लोक कह्यो, सो श्लोक –

पठनीयं प्रयत्नेन सर्वहेतुविवर्जितम्।
वृत्त्यर्थं नैव युंजीत प्राणैः कण्ठगतैरपि॥१॥
तदभावे यथैव स्यात् तथा निर्वाहमाचरेत्।
त्रयाणां येन केनापि भजन् कृष्णमवाप्नुयात्॥२॥

यह श्लोक पढ़े। सो पद्मनाभदासजी ने अंजुली भरि के संकल्प कियो, जो–कथा कहि के वृत्ति न करूँगो। ऐसे श्रीआचार्यजी के आगे संकल्प कियो। तब श्रीआचार्यजी कहे, जो–श्रीभागवत वृत्त्यर्थ न कहनो और तो तुम्हारि वृत्ति है तुम ब्राह्मन हो। तातें और महाभारत इत्यादिक तो कहनो। तब

पद्मनाभदास ने कह्यो, जो–महाराज ! अब तो संकल्प कियौ सो तौ कियौ। तातें कछू न कहनो। तब श्रीआचार्यजी नें कही, जो–तुम तो गृहस्थ हो। कौन भांति सों निर्वाह करोगे ? तब पद्मनाभ नें श्रीआचार्यजी सों कह्यौ, जो–श्रीभागवत वृत्यर्थ न कहूँगो। और जिजमान के घर वृत्ति कर लाऊंगो। तातें निर्वाह करूंगो। पाछे जिजमान के घर वृत्यर्थ गये। तिननें बहुत आदर कियो। तब पद्मनाभदास के मनमें ग्लानी आई। जो–पहिले तो कबहू भिक्षा करी नाहीं। अब वैष्णव भये पाछे भिक्षा मांगन निकस्यो। सो उचित नाहीं। पहले तो उपवीत गरे में हतो। माला पहरी। ताकों तो यह भिक्षा–वृत्ति उचित नाहीं। तब फेरि संकल्प कियो, जो–भिक्षावृत्ति न करूँगो। तब फेरि श्रीआचार्यजी ने पूछी, जो–अब निर्वाह कैसे करोगे ? तब पद्मनाभदास ने कही, जो–वैश्यवृत्ति करि निर्वाह करूँगो। पाछे कोड़ी बेचते, लकड़ी लै आवते। परि और बात न विचारी। देहादि पर्यंत सेवा कीनी। ऐसे टेकी।

भावप्रकाश – सो पद्मनाभदास चंपकलता सखी है, श्रीस्वामिनीजी की। जब पद्मनाभदास ने श्रीआचार्यजीसों बिनती करी, जो–हम ब्राह्मन हैं। भिक्षावृत्ति करेंगे। यह टेक देखि श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न भये। (और कह्यो), जो–वैष्णव कों टेक ही बड़ो धर्म है।

पाछें पद्मनाभदास के सगरे कुटुम्ब कों (जब) अंगीकार किये तब पद्मनाभदास ने कही, महाराज ! हमकों कहा कर्तव्य है ? तब श्रीआचार्यजी कहे भगवत्सेवा करो। तब पद्मनाभदास ने कही, महाराज ! मैंने तो पुराण, महाभारत आदि शास्त्र बहोत देखे हैं। सो मोकों श्रीठाकुरजी के स्वरूप में विश्वास आवनो कठिन है। जो–स्वरूप को माहात्म्य प्रगट होत ही देखूँ तब मेरो विश्वास दृढ़ होई। काहेतें विश्वास ही फलरूप है। तब श्रीआचार्यजी कहें, हमारे संग ब्रज चलो। तुमकों (माहात्म्य) दिखावेंगे। तब पद्मनाभदास ब्रजकूं चले। सो महावन के पास रमनस्थल है। तहां श्रीजमुनाजी के किनारे (सामने पार कर्णावल में) श्रीआचार्यजी बिराजे हते।

प्रात:काल को समय है और श्रीजमुनाजी को करोड़ो टूट्यो। तामें ते एक भगवत्स्वरूप जैसे ताड़ को वृक्ष (होय) इतने बड़े, श्रीआचार्यजी के आगें आइ कहें, मेरी सेवा करो। तब श्रीआचार्यजी कहे, महाराज ! या काल में वैष्णव की सामर्थ्य नाहीं जो-आपकी सेवा-शृंङ्गार करे। सेवा कराइवे को मनोरथ होइ तो भक्तन सों पधराये जाय (ऐसे) गोद से बैठो। तब सेवा होई। तब छोटो स्वरूप करि श्रीआचार्यजी के चिबुकसों मस्तक श्रीठाकुरजी को लग्यो इतने बड़े भये। सो स्वरूप करि श्रीयमुनाजी, गिरिराज, सखा, सखी, गांऊ, कुंज, चौरासी कोस सगरो स्वरूपात्मक चिह्न सहित है। तातें श्रीआचार्यजी श्रीमथुरानाथजी नाम करे। (और) पद्मनाभदास कों कहै। क्यों तेरो मनोरथ भयो ? तब पद्मनाभदास प्रेम में विह्वल होइ कहैं। महाराज ! आपु सारीखे मेरे धनी हो। आपकी कृपातें कहा न होई ? तब श्रीआचार्यजी कहे, ''यथा लाभ संतोष'' करि भावपूर्वक सेवा करियो। तब आज्ञा माँगि श्रीमथुरानाथजी कों कन्नौज में अपने घर पधराइ लाये। प्रीतिपूर्वक सेवा करन लागे। (पहले) भिक्षावृत्ति करतें। तब पद्मनाभदास के मन में आई, जो-मैं वैष्णव कहाई के भीख मांगौ ! श्रीआचार्यजी 'यथा लाभ संतोष' सों कहे हैं। और उत्तम पक्ष यही है। ''अव्यावृत्तो भजेत् कृष्णं पूजया श्रवणादिभिः'' ॥२॥ या प्रकार अव्यावृत्त को नेंम ले सेवा मन लगाई के करन लागे।

वार्ता - प्रसंग २ - एक समे श्रीआचार्यजी प्रयाग में हते। तहां पद्मनाभदास पास है। तब रात्र प्रहर एक गई हती। तब पद्मनाभदास सों श्रीआचार्यजी नें कह्यो, जो-श्रीअक्काजी पार है। सो पार तें पधराय लाओ। सो इतनो सुनि कें उठि चले। तब पांच सात वैष्णव उहां सोये हते। सो कहन लागे, जो-ब्राह्मण बावरो भयो है। या समे कहां जायगो ? नाव सब बंधी हैं। घटवारे सब घर गये हैं। तातें या बिरियां जायवे की नाहीं। परि याकों (पद्मनाभदास कों) श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की आज्ञा को विश्वास है। जो यह बात अवश्य होइगी। सो घाट ऊपर आये। तब इत उत देखन लागे। इतने में ही अकस्मात् एक लरिका एक डोंगी लेके आयो। तब वानें पद्मनाभदास सों पूछी, जो-तू पार जाइगो ? तब पद्मनाभदास ने कह्यो, जो-हां, हां,

जाउँगो। सो उन पार उतार दीनों। पाछे फेरि पूछ्यो, जो-तू फेरि आवेगो ? तब पद्मनाभदास नें कह्यो, जो-घड़ी दो में आऊंगो। तब उन लरिका नें कह्यो, जो-डोंगी राखत हों, बेग आईयो। पाछे अड़ेल में आइके श्रीअक्काजी कों पधराइ ल्याये। वाही डोंगी में बैठारि पार उतरे। तब, पाछें फेरि देखें तो डोंगी नाहीं और लरिका हू नाहीं। पाछे श्रीअक्काजी कों पधराय के लाये। तब श्रीआचार्यजी पद्मनाभदास कों आज्ञा दीनी, जो-जाउ, सोय रहो। तब पद्मनाभदास जहां वैष्णव सब जाइ के सोये हते, तहां आये। तब वैष्णव पूछन लागे, जो-तुम कहा करि आये। तब पद्मनाभदास ने कह्यो, जो-ऐसे श्रीअक्काजी कों पधराय लायो हूँ। तब सब वैष्णव नें कह्यो,जो-तुमने श्रीठाकुरजी कों श्रम बहुत करायो। पाछे उन वैष्णव नें (जब) श्रीआचार्यजी सों कह्यो, जो-महाराज ! पद्मनाभदास ने श्रीठाकुरजी कों श्रम बहुत करवायो। तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, (जो) यह, जो-कछू भयो है, सो मेरी इच्छा सों भयो है। तातें तुम इन पद्मनाभदास सों कछु मति कहो।

भावप्रकाश - यह वार्ता में यह सिद्धांत भयो, जो-गुरु के कार्यार्थ प्रभु कों कष्ट (श्रम) करावे तो वैष्णव कों बाधक नाहीं। गुरु के प्रसन्न भये सब कार्य सिद्ध होइ और उह रात्रि श्रीगुसांईजी के प्रागट्य के गर्भ-स्थिति को मुहूरत हतो। तातें श्रीआचार्यजी आज्ञा किये। श्रीठाकुरजी डोंगी लाये। तातें यह जताए, जो-श्रीगुसांईजी के लिये सगरो कार्य करें यामें कहा कहनो ? यामें श्रीगुसांईजी के स्वरूप की श्रीठाकुरजी तें अधिकता दिखाए और पद्मनाभदास को पूरन विश्वास दिखाए। जो-श्रीआचार्यजी के बचन खाली कबहूँ न जाइ। सर्वथा कार्य सिद्ध होयगो।

वार्ता - प्रसंग ३ - बहुरि एक समें श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोकुल तें अडेल कों जात हते। तब एक व्यौपारी क्षत्री कछुक

वस्तु लेके साथ में चल्यो। सो कन्नौज के उरे रह्यो श्रीआचार्यजी तो कन्नौज बीच पधारे। ब्यौपारी पाछे रह्यो सो ताके ऊपर चोर परे। वस्तु सब लूटि लीनी। श्रीआचार्यजी आप रसोई करि के श्रीठाकुरजी कों भोग समर्प्यो। इतने में ही पाछेंतें व्यौपारी रोवत पीटत आयो। तब पूछी, जो–श्रीआचार्यजी कहा करत हैं ? तब पद्मनाभदास नें कह्यो, जो–भोजन करत होइँगे। तब व्यौपारी ने कह्यो जो–हमारो माल सगरो लूटि गयो है। और श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप भोजन करत हैं ! तब पद्मनाभदास ने मन में बिचार्यो, जो–यह बात श्रीआचार्यजी सुनेंगे तो भोजन न करेंगे। तातें आप सुने नहीं (ऐसें करनो)।

तब पद्मनाभदास वा व्यौपारी की बांह पकरि के बाहिर ले आये। तब पूछी, जो–साँच कहे। तेरो माल कितनो गयो है ? तब उन व्यौपारी नें बतायो। तब वा ब्यौपारी की बांह पकरि के पद्मनाभदास एक साह की दूकान पे ले गये। ता साह नें पद्मनाभदास की बहुत आगतासागता करी। पाछे वा साह ने कह्यो, जो–आज्ञा करो, कैसे पधारे हो ? तब पद्मनाभदास नें साह सों कह्यो, जो–या व्यौपारी कों इतनो द्रव्य देनों चाहिये। या द्रव्य को खतपत्र ब्याज हम लिखि देइंगे। तब वा साह नें कही, जो–पद्मनाभदासजी ! तुमकों जितनो द्रव्य चाहिये तितनो द्रव्य लेउ। खतपत्र की कहा बात है ? तब पद्मनाभदास ने कह्यो, जो–पहिले तो खतपत्र लिखूंगो। और पाछे द्रव्य लेउंगो। बिना खतपत्र लिखे तो मैं लेउंगों नाहीं। तब साह ने कही। जो–तुम्हारी इच्छा। पाछे पद्मनाभदास ने खतपत्र ब्याज लिखि अपनो

धरम गहने लिखि दीनो। पाछे ब्यौपारी तो द्रव्य लेके अपने घर गयो। तब पद्मनाभदास सों श्रीआचार्यजी ने पूछी, जो-तू कहाँ गयो हो ? तब पद्मनाभदास नें कह्यो, जो-महाराज ! एक काम हो तहां गयो हो। सो श्रीआचार्यजी आपु तो ईश्वर हैं। तत्काल बात कों जानि गये। तब पद्मनाभदास सों श्रीआचार्यजी नें कह्यो, जो-हमकों वा व्यौपारी के संग कछू बिसावनों हतो कहा ? जो वाको माल देते ? वह पाछें रह्यो तो हम कहा करें ? परि तेनें बुरी करी। जो-रिन काढ़ि के पैसा दीनो। तब पद्मनाभदास नें कह्यो, जो-महाराज ! रिन तो काल्हि देऊँगो। यह कितनीक बात है। परि वह ब्यौपारी पुकारतो तो राज भोजन घड़ी दोय अवेरो करते। तो मेरो सगरो जन्मारो बृथा होय जातो । तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो-तेने धर्म गहने लिखि दीनो सो कहा है ? तब पद्मनाभदास ने कह्यो, जो-महाराज ! ऐसे गाढ़ो लिखे बिना दियो न जाय। पाछे श्रीआचार्यजी आप तो अड़ेल पधारे। पाछे पद्मनाभदास एक राजा हतो ताके पास गये। पाछें राजानें कह्यो, जो-मोकों कृपा करिके कथा सुनावो। तब पद्मनाभदास नें कह्यो, जो-राजा ! श्रीभागवत तो न कहूँगो। कहो तो महाभारत सुनाउं। तब राजा नें कह्यो, जो-भलो, महाभारत ही सुनावो। तब महाभारत कहन लागे। सो जब युद्ध को प्रसंग आयो, तब सबन के हथियार छुड़ाइ धरे। तब आगे कहन लागे। सो कथा में कोऊ (ऐसो) वीररस उपज्यो सो आपुस में लात मुक्किन सों लरन लागे। पाछें केतेक दिन में महाभारत समाप्त भयो। तब राजा बहुत दक्षिणा देन लाग्यो।

तब पद्मनाभदास ने कह्यौ, जो-इतनो द्रव्य नाहीं लेऊंगो। मेरे माथै रिन है। सो तितनो लेऊंगो। पाछे वा साहकों जितनो मूल ब्याज देनो हतो तितनो लीनो। बाकी सब फेरि डार्यो। सो वे पद्मनाभदास ऐसे भगवदीय हे।

भावप्रकाश - तब व्यौपारी ने कह्यो, जो-हमारो माल सब लूटि गयो। आप भोजन कों पधारे हैं ? यह कह्यो ताको कारन यह, जो-आपु दयाल है के जीव दुःखी जानिके भोजन कैसें करत हैं ? जो-दयाल है सो परायो दुःख दूरि करिकें भोजन करत है। श्रीआचार्यजी ने कही (जो तैने) व्यौपारी कों द्रव्य क्यों दिवायो ? रिन काढ़िके। कछू हम बीमा कियो हतो ? पाछें रह्यो लूटि गयो। तें बुरी करी। ताको कारन यह, जो-रिनहत्या माथें लीनी। सो बुरी करी, सरीर को कहा भरोसो है ? देहि छूटि जाय तो रिन माथे रहे।

तब पद्मनाभदास ने कही। या व्यौपारी को रुदन सुन घरी दोय आप भोजन अबेरो करते। मेरो जन्म वृथा होइ जातो। (ताको अभिप्राय) सेवक के आगे स्वामी कों कछू श्रम होइ, सेवक श्रम दूरि न करें, तो धर्म जाइ। पाछें धिक्कार वह सेवक कों जीवे सो वृथा है। और रिन की केतिक बात है ? अब चुकाई देऊँगो। ताको कारन यह, जो-काल की कहा सामर्थ्य है ? आपुकी कृपातें बाधक न होइगो। और धर्म गहने धर्यो तामें एक भाव यह है, (जो) अपनो वैदिक ब्राह्मन को धर्म गहने धर्यो होइगो यह गौन भाव है। काहेतें, श्रीआचार्यजी की सरन आये। तब (सब) समर्पन कियो। जो-वैदिक धर्म न्यारो रहे,तो पुन्य को फल स्वर्ग भोगनो परे। तातें इनने तो सर्व समर्पन करि एक पुष्टि भक्तिरूप धर्म राखे है। ताहीतें श्रीआचार्यजी हू पूछ्यो, (जो) ऐसो धर्म साहके इहां गहने धर्यो ? परंतु पद्मनाभदास कों श्रीआचार्यजी को स्वरूप हृदयारूढ़ हतो। श्रीआचार्यजी के सुख के लिये धर्महू की अपेक्षा राखें नाहीं। गहने धरे। और व्यौपारीकों द्रव्य देके बहोत मन में प्रसन्न भये। भली भई (व्यौपारी) इहाँ आयो। जो-चल्यो जातो तो जहाँ तहाँ देसमें निंदा करतो। जो-मैं श्रीआचार्यजी की संग लुटि गयो। काहेतें ? लौकिक राजा के संग लूट्यो न जाइ तो ऐसे ईश्वर के संग लूटि गयो ? सो पद्मनाभ कहे, मेरे धर्म की परीक्षा अर्थ लूट्यो गयो। सो व्यौपारी कों द्रव्य दियो। अब जहां जाईगो तहाँ श्रीआचार्यजी की बड़ाई करोगो। मोकों नफा सहित द्रव्य दिये। या भावसों पद्मनाभदास की श्रीआचार्यजी में अनिर्वचनीय प्रीति है।

और राजा जादा द्रव्य देन लाग्यो सो आप (पद्मनाभदास) यातें न लिये, जो-इनकों अव्यावृत को नेम है। वृति के अर्थ कथा नाहीं कहनी। यह संकल्प है। यह सगरो काम श्रीआचार्यजी के सुख के अर्थ किये। सो साह कों रुपैया दिवाय धर्म को कागद लिखे हते सो ले आये। पाछें घर आय सेवा करन लागे।

वार्ता - प्रसंग ४ - और पद्मनाभदास के घर बेटी कुमारी हती। ताके निमित्त एक वर श्रीआचार्यजी को सेवक चहियत हतो। सो वैष्णव सो पूछन लागे। तब वैष्णव ने कह्यौ, जो-एक वर श्रीआचार्यजी को सेवक है। परि सनोढ़िया ब्राह्मण है। सो पद्मनाभदास कों सेवक सुनत ही लौकिक व्यवहार की तो सुधि नाहीं आई। वैष्णव नें कह्यौ, जो-भलो वैष्णव है। याकों कन्या दीजिये। तब पद्मनाभदास नें कह्यो, जो भलो। तब पद्मनाभदास ने वा वैष्णव कों कुंकुम मँगाई तिलक कियो और कह्यो, मैं बेटी तुमकों दे चुक्यो। लगन को दिन तुम पूछो ता दिन ब्याह करूँ। विवाह सही करि प्रसन्न होइ अपने घर आये। तब बड़ी बेटी एक तुलसां हती, सो ब्याह होत ही विधवा भई। लौकिक पति को मुख नाहीं देख्यो। सो श्रीमथुरानाथजी की सेवा में तत्पर हती, तासों कह्यौ, जो-अपनी बेटी को विवाह अमुके वैष्णव सों सही करि आयो हूं। तब तुलसां ने कह्यौ, जो-वह तो सनोढ़िया ब्राह्मण है। हम कन्नौजिया ब्राह्मण हैं। सो ऐसे कैसे होइ ? तब पद्मनाभदास ने कह्यो, जो-अब तो भई सो भई। तब तुलसां नें कही, जो-सगाई फेरो। तब पद्मनाभदास ने कही, जो-छुरी लाओ। अंगूठा काटो। जा अंगूठा करि तिलक कियो है। तब तुलसां ने कह्यो, जो-अंगूठा कैसे काटिये ? तब पद्मनाभदास ने कही, तो सगाई कैसे फेरिये ? अंगूठा कटे तो सगाई फिरे। पाछें पद्मनाभदास नें विवाह करि

दीनों। जाति के सब झख मारि रहे। वैष्णव के कहो को ऐसो विश्वास, तातें सगाई न फेरी।

भावप्रकाश – जब तुलसां ने कह्यो, अंगूठा कैसे काट्यो जाय ? तब पद्मनाभदास ने कह्यौ, श्रीआचार्यजी के सेवक पर तन, मन, धन न्योछावरि करिये। सो सगाई कैसे फेरी जाइ ? या प्रकार तुलसां कों मारग को अभिप्राय बताए।

ता दिन तें तुलसां को प्रेम वैष्णवन में पद्मनाभदास के संगतें भयो। सो श्रीठाकुरजी तुलसांहू कों अनुभव जतावन लागे। पाछे प्रसन्न होइके वैष्णवकों अपनी बेटी ब्याह दिये। जाति सगरी झखि मारि रही। ताको कारन यह है, (जो) जहां तांई दृढ़ स्नेह नाहीं, तहां तांई लौकिक वैदिक को डर है। जब दृढ़ स्नेह प्रभु में भयो। तब सगरी चिंता मिटी। लौकिक वैदिक बाधा हूँ न करि सके। ऐसे एक वैष्णव पद्मनाभदास भये।

वार्ता – प्रसंग ५ – और एक क्षत्राणी पद्मनाभदास के घर नित्य आवती। तब पद्मनाभदास की बेटी तुलसांने एक दिन वासों कह्यौ, जो–क्षत्राणी ! तू नित्य क्यों आवत है ? तब वा क्षत्राणी नें कही, जो–ए महापुरुष हैं। बड़े भगवदीय हैं। और मेरे संतति नाहीं होति है। तातें आवति हों। तुम मेरी बिनती पद्मनाभदासजी सों करियो। तब एक दिन तुलसां नें पद्मनाभदास सों कह्यौ, जो–या क्षत्राणी के संतति नाहीं। ताके लिये तुमसों बिनती करत है। तब पद्मनाभदास नें तुलसां सों कह्यौ, जो–जल लाउ। तब तुलसांने जल आगे लाइ धर्यो। तब वह जल लेके चरणोदक करि वा क्षत्राणी को दियो और कह्यौ, जो–जा, तेरे पुत्र होइगो। ताको नाम मथुरादास धरियो। पाछें वाके पुत्र भयो। (ताको) नाम मथुरादास धर्यो।

भावप्रकाश – अपनो चरणोदक क्यों दिये ? भगवदीय अपनी बड़ाई तो करावत नाहीं। तातें श्रीठाकुरजी को चरणोदक दियो होयगो। तहाँ कहत हैं, जो–पद्मनाभदासनें बिचारी, जो–तुच्छ कामना पुत्रादिककी है। याके लिये श्रीठाकुरजी को चरणोदक कहा ? श्रीठाकुरजी कों श्रम काहेकों कराऊँ ? तातें अपनो चरणोदक

दिये। परंतु पद्मनाभदास सदा श्रीआचार्यजी के स्वरूप में मगन रहत हैं। सो जल ले श्रीआचार्यजी के भाव तें दिये और इनकों कछू कामना की बड़ाई की अपेक्षा नाहीं है। भगवदीय को आश्रय करें, सो सगरो मनोरथ वाको पूरन होइ। यह पुत्र की कहा बात है ? ताकों (क्षत्राणीकों) पुत्रकामना हती सो पुत्र दिये। परन्तु बाधक नाहीं। जो–अपने किये को अहंकार नाहीं। ता समय, जो–बुद्धि की प्रेरणा भई। सो भगवद् इच्छा तें कार्य करत हैं। अपनो कियो जानत नाहीं है। श्रीगुसांईजी लिखे हैं ''बुद्धि प्रेरक कृष्णस्य पादपद्मं प्रसीदतु'' जो–कार्य होत है। जैसी ताकी बुद्धि प्रेरक होई करत है सो कार्य सब कृष्ण ही को जाननो। जो–अपनो, और को जाने सोई संसार समुद्र में भ्रमत है। तातें पद्मनाभदास ने अपनो चरणोदक दियो। परंतु यह भाव नाहीं, जो–मेरे चरणोदकसों पुत्र होइगो। भगवद् इच्छा तें सब होत है। यह सिद्धांत दिखाए।

वार्ता – प्रसंग ६ – और एक समें बड़े रामदासजी अपने सेव्य श्रीठाकुरजी कों पद्मनाभदास के घर पधराइ के श्रीनाथजी के दरसन कों गये। सो श्रीनाथजी की सेवा में श्रीआचार्यजी की आज्ञा तें रहे और श्रीनाथजी की सेवा करन लागे। श्रीनाथजी के भीतरिया भये। तब पद्मनाभदास श्रीठाकुरजी की सेवा करन लागे। कितनेक दिन पाछें मुगल की फौज आई। सो तानें गाम लूट्यो, सो श्रीठाकुरजी कों एक मुगल ले गयो। तब पद्मनाभदास वा मुगल के साथ दिन सातलों रहे। जलपान हू न कर्यो। तब आठमे दिन मुगल सो मुगलानी ने कह्यो, जो–यह ब्राह्मन जलपान नाहिं करत है। याकों सात दिन भये हैं। अन्नजल छोड़े। सो जो–यह मरेगो तो तेरे माथे हत्या चढ़ेगी। ताते याको देवता है। सो वाकों दे। तब मुगल ने श्रीठाकुरजी पद्मनाभदास कों दिये। सो लेके पद्मनाभदास अपने घर आये। ता पाछे आप स्नान करि श्रीठाकुरजी कों पंचामृत स्नान करवायो। अंग वस्त्र करि शृंगार कर्यो। रसोई करि भोग समर्प्यो। पाछें समयानुसार भोग सराय अनोसर करि पाछें वैष्णवन कों महाप्रसाद लिवायो। पाछें आप

महाप्रसाद लियो। और जा दिन श्रीठाकुरजी कन्नौज में मुगल के हाथ परे। ता दिन बड़े रामदासजी ने हू यह बात जानी। सो ता दिन तें बड़े रामदासजी ने हू सात दिनलों भोजन नाहिं कियो। परि श्रीनाथजी की सेवा सावधानतासों करत रहे। यह बात पद्मनाभदासजी ने अपने घर बैठे जानी। सो-रामदासजी ने हू या बातके ऊपर बहोत दुःख पायो। यह जानि पद्मनाभदास श्रीनाथजी के दरसन कों तथा रामदासजी के मिलिवे कों श्रीनाथजी द्वार गये। सो श्रीनाथजी के दरसन किये। पाछें रामदासजी कों मिले। तब रामदासजी सों पद्मनाभदासजी नें कह्यो, जो-होंतो दुःख पायो सो तो न्याव है। जो-तुम मेरे माथे सेवा पधराय आये। परि तुमने दिन सातलों प्रसाद न लियो, सो काहेते ? तब रामदासजी नें कह्यो, जो-तुम कहत हो सो तो साँच, परि मैं हूं तो बहोत दिनलों सेवा करी है। तातें इतनो संबंध तो चाहिये। पाछें कितनेक दिन रहिके पद्मनाभदास श्रीनाथजी सों तथा रामदासजी सों बिदा होइके अपने घर कन्नौज आये। पाछें फेरि सेवा करन लागे।

भावप्रकाश-या वार्ता में यह सिद्धांत दिखाये, जो पुष्टिमार्गीय वैष्णव के ठाकुर अपने घर पधारे तो भिन्न भाव न राखनो। श्रीआचार्यजी के संबंधी जानि माथे पधारे जानि सेवा करनी। और रामदासजी के भाव में यह जताए, जो-अपने सेव्य ठाकुर कहूँ पधराइ निश्चिंत न होई। उनके दुःखतें दुःखी होई। उनके सुखतें सुख पावे। यह सिद्धांत दिखाए।

वार्ता-प्रसंग ७- बहुरि एक समय पद्मनाभदास ने बिचारी, जो-श्रीठाकुरजी सहित कुटुंब सहित श्रीआचार्यजी के दरसन करिये। श्रीमुख के वचनामृत सुनिये। सो श्रीठाकुरजी सहित कुटुंब सहित अड़ेल में आये। सो कछुक दिन रहे। परि

द्रव्य को संकोच बहुत हतो। तातें श्रीठाकुरजी कों भोग समर्पे ! सो छोला तलि के समर्पे। सो छोला आछी रीति सों बीनि के पहले दिन भिजोइ राखे, दूसरे दिन नीकी भांति सों तलि के समर्पे। सो या भांति, पातरि में एक मूठि दारि की भावना करते। एक मूठि भात की। एक मूठि खीर की। सागादिक सब को नाम ले न्यारि न्यारि मूठि धरतें। सो श्रीठाकुरजी सगरी सामग्री को भावसों आरोगते। या प्रकार नित्य करें। पाछें एक दिन एक वैष्णव श्रीआचार्यजी सों यह सब प्रकार कहे, जो–महाराज ! पद्मनाभदास श्रीठाकुरजी कों या भांति छोला समर्पत हैं। सो एक दिना श्रीआचार्यजी भोग समर्पवे की बिरियां पद्मनाभदास के घर पधारे। सो पद्मनाभदास सों पूछे, जो–यह ढेरि न्यारि न्यारि क्यों है ? तब पद्मनाभदास ने कही, यह दारि है। यह भात है। यह खीर है। यह कढ़ि है। यह सागादिक है। या प्रकार सब ढेरि कों सामग्री बताए। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को हृदय भरि आयो। और जान्यो, जो–याके द्रव्य को संकोच है तातें यों करत है। परंतु द्रव्य को उपाय नाहिं करत है। बड़ो धैर्य है। तातें याके ऊपर श्रीठाकुरजी बड़े प्रसन्न हैं। पाछें श्रीआचार्यजी घर पधारे भोजन किये। और श्रीअक्काजी सों कहे। जो–पद्मनाभदास के घर द्रव्य को बहोत संकोच है। सो छोला नित्य श्रीठाकुरजी कों धरत है। तब श्रीअक्काजी ने संझा समय सगरी सामग्री सिद्ध करि एक वैष्णव के हाथ पठाई। तब तुलसां ने पद्मनाभदास सों कह्यो, जो–श्रीआचार्यजी के इहाँ सों सामग्री आई है। तब पद्मनाभदास ने कह्यो, हम जाने अब हमकों काढ़िवे को उपाइ किये हैं। जतन सों धरि राखो। तब तुलसां ने धरि राखी। पाछे

दूसरे दिन फेरि सामग्री सांझ कों श्रीअक्काजी ने पठाई। तब तुलसां ने फेरि पद्मनाभदास सों कही। तब पद्मनाभदास ने कही, हमकों बेगि बिदा दिये। तातें सबेरे चलेंगे। अब धरि राखो। पाछें प्रातःकाल भयो। तब श्रीठाकुरजी कों बेगि ही राजभोग सों पहोंचि, श्रीमथुरानाथजी सों पूछे, जो–महाराज ! आपकों श्रीआचार्यजी के घर पधारिवे की इच्छा होइ, तो उहां नाना प्रकार की सामग्री है। मेरे इहां तो जो समय जैसो प्राप्त होइ, तैसो धरूंगो। तब श्रीमथुरानाथजी ने कही, मोकों तेरो कियो भावत है। तातें जो धरेगो सो प्रीति तें आरोगूंगो। तब अनोसर कराई, एक नाव भाड़े करि लाये। तुलसां सों कहे। दोउ दिन को सीधो सामग्री है। सो श्रीअक्काजी कों दे आव। तब तुलसां सारी सामग्री श्रीआचार्यजी के यहाँ दे आई।

पाछें सगरी वस्तु नाव पर धरि श्रीमथुरानाथजी कों नाव पर पधराई श्रीआचार्यजी के पास बिदा होन आये। और दंडवत् करि विनती कीनी, जो–महाराज ! आज्ञा होइ तो घर जाँय। तब श्रीआचार्यजी पूछे, जो–श्रीठाकुरजी कहाँ है ? तब पद्मनाभदास ने कही, महाराज ! नाव पर पधारे हैं। तब श्रीआचार्यजी बिदा किये। और मनमें विचारे। जो–ओंचको पद्मनाभदास क्यों गयो ? तब श्रीअक्काजी ने कही, दोय दिन सीधो पठायो सो फेरि दे गये। तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो–सीधो पठवायो तातें गयो। नाहीं तो न जातो। ऐसे श्रीआचार्यजी ने श्रीमुख तें कह्यो। पाछें पद्मनाभदास घर जाय सेवा करन लागे।

भावप्रकाश–या वार्ता में यह जताये, जो–गुरु–द्रव्य श्रीठाकुरजी के द्रव्य तें हू भारी है। तातें श्रीभागवत में (स्कं ११ अ. १७ श्लोक २८) कहे हैं। भिक्षा मांगि के लाइ गुरु के आगे धरिये। जो–गुरु आज्ञा देइ तो खाई। नाहीं तो भूख्यो रहि जाइ।

परंतु मांगे नाहीं। मांगी भिक्षा हू आज्ञा बिना नहिं लीनी जाय तो गुरु को (द्रव्य) कैसे लियो जाइ ? तातें श्रीआचार्यजी 'विवेकधैर्याश्रय' में लिखे हैं, जो ''त्रिदुःखसहनं धैर्यम्'' ॥

जब मुगल ठाकुर ले गयो तब पद्मनाभदास चाहे तो भस्म करि डारें, परि पद्मनाभदास (कष्ट) सहे। आप सात दिन भूखे रहे। वासों कछू न कहे। (यह अलौकिक दुःख कह्यौ) लौकिक दुःख जो बेटी परज्ञात कों दीनी। यह ज्ञाति में निंदा सो सहे। खानपानादिक को दुःख सो सहे। परंतु धर्म न छोड़े। तातें श्री गोकुलनाथजी श्रीसर्वोत्तम टीका में लिखे हैं। कोटिन वैष्णवन में दुर्लभ पद्मनाभदास सारिखे हैं। सो श्रीआचार्यजी के मारग को श्रीआचार्यजी के स्वरूप कों जानत हैं।

सो उन पद्मनाभदास की ऊपर श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप सदा प्रसन्न रहते, तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं। सो कहां तांई कहिये।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी के सेवक पद्मनाभदास की बेटी तुलसां तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ए लीलामें पद्मनाभदास की सखी है। पद्मनाभदास तो चंपकलता अष्टसखीन में। और चंपकलता की सखी मणिकुंडला, जैसे मणि की ज्योति की कुंडाली चारों ओर फूले। सो (यह) तुलसां सात्त्विक भक्त है। पद्मनाभदास की आज्ञा में तत्पर है।

वार्ता–प्रसंग १– एक दिन तुलसां के घर वैष्णव आयो। सो श्रीआचार्यजी को सेवक हतो। सो श्रीमथुरानाथजी के दरसन राजभोग आरती के किये। तब तुलसां ने उन वैष्णव सों कह्यो, जो–उठो स्नान करो। महाप्रसाद लेउ। तब उह वैष्णव ने कह्यो, जो–होंतो घर जाइ स्नान करूंगो। तब तुलसां चुप करि रही। पाछे वह वैष्णव उठि के अपने घर गयो। तुलसां के मनमें बहोत खेद भयो, जो–मेरे घर तें वैष्णव भूख्यो गयो।

भावप्रकाश– ताको कारन यह, महाप्रसाद की नाहीं करी, जो–ज्ञात

व्यौहार के लिये लियो नाहीं। सो तुलसां समझ गई। तातें आग्रह नाहीं कियो। यह गौड़ ब्राह्मन हतो और लीला में ललिताजी की सखी है। सौरभा इनको नाम है। इनके अंगतें अतर गुलाब की सुगंध आवती। यह वैष्णव ललिताजी की सखी है। और तुलसां चंपकलता की सखी है। और तुलसां के बस श्रीमथुरानाथजी है। तातें यह वैष्णव नें महाप्रसाद न लियो। जो–ललिताजी की आज्ञा बिना कैसें लेउ ? तातें यह वैष्णव अपने घर चल्यो गयो। तब तुलसां के मनमें खेद भयो।

तब मनमें आई जो–ज्ञाति व्यौहार के लिये सखड़ी न लीनी होइगी। तो भलो, परि सबेरे पूरी प्रसाद लिवाऊंगी। पाछे मैंदा छानि सिद्ध करि राख्यो। पाछे सोइ रही। ता दिन तुलसां ने महाप्रसाद नाहीं लियो। पाछे रात्रिकों श्रीमथुरानाथजी ने तुलसां सों स्वप्न में कह्यों, जो–सवारे वा वैष्णव कों महाप्रसाद लिवाइयो। वह वैष्णव अपने घर महाप्रसाद न लेइगो।

भावप्रकाश–यामें यह जताए, जो–काल्हि उह वैष्णव महाप्रसाद लेइगो। तू चिंता मति करे। पाछें श्रीठाकुरजी नें उह वैष्णव कों जताये, जो–तुलसां के इहां महाप्रसाद क्यों न लियो? सबेरे लीजियो। ललिताजी की हू आज्ञा है। सो ललिताजी हू कहे। तुलसां के इहां महाप्रसाद लीजो। हमारे उनके भाव में भेद नाहीं।

वार्ता–प्रसंग २–पाछे प्रातःकाल तुलसां ने पूरी करी। श्रीठाकुरजी कूं जगाये। सेवा सिंगार करन लागी। इतने ही में उह वैष्णव सवारे नहाय के श्रीठाकुरजी की सेवासों पहोंचि तुलसां के घर आयो। जब तुलसां भोग समर्पि के बाहर आई। तब वा वैष्णव सों जयश्रीकृष्ण कियो। और तुलसां ने कह्यो, जो–उठो स्नान करो, भगवद्स्मरण करो। तब वा वैष्णव ने कही, मैं स्नान करि अपरसही में आयो हूँ। (तथा कहुं वार्ता में यहू है, जो–स्नान करि तिलक मुद्रा करि भगवद्स्मरण कियो)। समय भये तुलसां ने राजभोग सरायौ, आरती करी। वैष्णव ने दरसन कियो। पाछे तुलसां श्रीठाकुरजी कों अनोसर करि बाहर आई।

और वा वैष्णव कों प्रसाद की पातर धरी। तामें पूरी, बूरा, दहीथरा, संधानो धर्यो। और कह्यो, जो–प्रसाद लेउ। तब वा वैष्णव ने कही, जो–यह नाहीं लेउंगो। सखड़ी महाप्रसाद धरो, लेऊंगो। तब तुलसां ने कह्यो, कछू संकोच मति करो, यह तो ज्ञाति को ब्यौहार है। तब वैष्णव ने कह्यो, जो–सो तो साँच। पहले तो मेरे मन में ऐसी ही। परि अब तो आज्ञा भई है। तातें अब तो सखड़ी महाप्रसाद लेउंगो। तब तुलसां (ने) सखड़ी, अनसखड़ी दोऊ धरी, वैष्णव के आगे। पाछे वा वैष्णव ने सखड़ी प्रसाद लियो। प्रसाद ले वह वैष्णव अपने घर गयो। तब तुलसां मनमें बहोत प्रसन्न भई।

भावप्रकाश–यामें यह जताये। वैष्णव घर आवे तिनको यथाशक्ति सन्मान करनो। काहेते ? श्रीभागवत में कहे हैं, जा घर में जलादिकनको हू सन्मान नाहीं है, वाको घर सर्प को घर बिला सो जाननो। सो तुलसां को वैष्णव पर ऐसो ममत्व हतो।

वार्ता–प्रसंग ३– बहुरि एक समें तुलसां के घर गुसांईजी पधारे। तब तुलसां ने बहुत भली भांति सों सेवा कीनी। श्रीठाकुरजी तें अधिक जानि के सेवा कीनी। तब श्रीगुसांईजी बहुत प्रसन्न भये। और एक दिन श्रीगुसांईजी भोजन करि के पौढे हते। तुलसां भगवद्वार्ता करि श्रीगुसांईजी कों प्रसन्न किये। तब तुलसां सों अति प्रसन्नता में भगवद्वार्ता करत में श्रीगुसांईजी ने श्रीमुख सों कह्यो, जो–पद्मनाभदास की संतति ऐसी ही चाहिये।

भावप्रकाश–याको अर्थ यह, जो–लीला में सखी है, ऐसी क्यों न होई ? तहां श्रीगुसांईजी चंद्रावलीजी रूप हैं। सो इनको परकीया भाव श्रीठाकुरजी सों है। तातें हास्य बहोत प्रिय है। सो कटाक्ष के वचन पूछे, जो–श्रीठाकुरजी अपने स्वरूपानंद को अनुभव जतावत हैं ? तुम हू तो सखी हो। श्रीठाकुरजी की सेवा करि के बस किये

हो। तातें हमारे साझे में तुमहू हो। या प्रकार व्यंग के वचन कहे। परंतु तुलसां सुद्ध सात्विक है। इनकों कटाक्ष बहोत नाहीं है। सुधी है।

पाछें श्रीगुसांईजी ने तुलसां सों पूछी, जो–श्रीठाकुरजी सानुभावता जतावत हैं ? तब तुलसां ने कह्यो, जो–महाराज ! अब तो (हम) पेट भरि खइयत है और नींद भरि सोइयत हैं। परि श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ को पाठ नित्य करियत हैं। तब श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये।

भावप्रकाश–पेट भरिके खइयत हैं। नींद भरिके सोइयत हैं। सो यह, जो–जितनो रस हमारे पेट में समात है, जैसें हम पात्र हैं, तितनो श्रीठाकुरजी अनुभव जतावत हैं। तातें श्रीठाकुरजी की संग नींद भरि सोइयत हैं। काहेतें, हमारो स्वकीया भाव है। तातें सुखी हैं। चिंता नाहीं है। मुख्य अर्थ यह। और गुरु भाव सों यह अर्थ, जो–महाराज ! हम अनेक जन्म श्रीठाकुरजी सों विछुरिके पायो। परंतु काहू योनि में पेट नहीं भर्यो। और सुख सों नींद नाहीं आई। अब आपु कृपा करिके सरन लिये। सो अबके जनम में पेट हू भर्यो। और श्रीठाकुरजी को एक आश्रय करिके सोये हू। सगरे जनम अविद्या करि दुःख में बिताये। एक अर्थ यह।

और दैन्य पक्ष में यह, जो–हमकों कहा अनुभव करावें? पेट भरि के खइयत हैं। नींद भरिके सोइयत हैं। जैसे पसु कों खाइबे को और सोइबे को काम। और काम परबसतें कोई लादे, जो–मारे तब करे। तैसे हमहू प्रीति खानपान में है। सेवा लोगन की निंदा भये तें है, जो–बड़े पद्मनाभदास की संतति, सेवा नाहीं करत। या प्रकार लोगन की प्रतिष्ठा अर्थ। तातें हमकों कहा अनुभव जतावें ? सूरदासजी नें गायो है। ''सूर अधमकी कौन चलावे उदर भरे अरु सोये''। ऐसे अधम जो हैं, जिनकी बात नाहीं करनी। जो–सरीर को सुख चाहत है। या प्रकार के हम है। परंतु श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ को पाठ सदा करियत है। ताको भाव यह, जो–ऐसेहू अधमकों श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ मात्र कहे। भावहू न जानत होइ तो पाठ ही के किये तें श्रीठाकुरजी सगरो अनुभव जतावे। तातें यह कहि अंपनो पुरुषारथ नाहीं कहे। श्रीआचार्यजी को प्रताप कहे, जो–उनके ग्रन्थ के पाठतें कृपा प्रभु करत हैं। या प्रकार प्रेम में लपेटे बचन तुलसां के सुनिके श्रीगुसांईजी को हृदय भरि आयो।

ऐसी भगवदीय तुलसां हती। जिनके ऊपर श्रीगुसांईजी सदा प्रसन्न रहते तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं। सो कहां तांई कहिये।

अब श्रीआचार्यजी के सेवक पद्मनाभदास के बेटा ताकी बहू पारवती तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ए राजसी भक्त है। पद्मनाभदास तो चंपकलता अष्टसखीन में। तिनकी सखी सुचरिता, सो इहां पुरुषोत्तमदास मेहरा क्षत्री भये। सो सुन्दर चरित्र सबकों सुखरूप कार्य के करता हैं, ए। और सुचरिता की सखी रूपविलासिनी है। सो यहां पारवती भई। सो लीला में पारवती को रूप बहोत सुन्दर हतो। सो राजसी है। अपनो रूप बहोत सँवारती। सो रूप के गर्व तें लीला सों गिरी।

वार्ता–प्रसंग १– सो पारवती श्रीठाकुरजी की सेवा नीकी भांति सों करती। पुरुषोत्तमदास मेहरा इनकों नीकी भांति सों जानते। सो जब कन्नौज जातें तब याके घर उतरते। सो एक समें पुरुषोत्तमदास मेहरा कन्नौज आइ, अड़ेल श्रीगुसांईजी के दरसन कों गये। यहां पारवती के हाथ पांव सुफेद भये। तब ग्लानि दैन्यता भई। तब अपने पूर्व स्वरूप की हू खबरि परी, जो–मैं पुरुषोत्तमदास की सखी हों। मेरो काम इन द्वारा होयगो। तब पत्र पुरुषोत्तमदास कों लिख्यो, जो–मेरी बिनती तुम श्रीगुसांईजी सों करियो। मेरी देह को यह प्रकार भयो है। तातें मोकों सेवा करत पाक करत बहुत ग्लानि आवति है।

भावप्रकाश–ताको आशय यह है, जो–मैं (ने) श्रीठाकुरजी सों रूप को गर्व कियो ताको फल पायो। अब कृपा करेंगे सो श्रीगुसांईजी सों विनती करि लिखिये।

यह पत्र पठायो, एक मोहौर श्रीगुसांईजी कों भेंट पठाई। सो पत्र पुरुषोत्तमदास नें श्रीगुसांईजी कों बांचि सुनायो। मोहौर आगे राखी। बिनती कीनी। तब श्रीगुसांईजी पुरुषोत्तमदास कों कहे, जो–दिन दोई चारि में कहूंगो।

भावप्रकाश–सो यातें, जो–लीला में रूप को गर्व ता अपराध तें (यह) भयो। तथा और हू कोई अपराध न होइ। सो बिचारे। तब और अपराध नाहीं देखे।

फेरि तीन दिन पाछे श्रीगुसांईजी ने पुरुषोत्तमदास सों कही।

जो–पारवती कों पत्र लिखो, जो–थोरे दिन में सरीर को भोग निवृत्त होइगो। सेवा में ग्लानि मत करियो। श्रीठाकुरजी थोरे से दिन में तेरो रोग निवृत्त करेंगे। तब पुरुषोत्तमदास मेहरा ने पारवती कों पत्र लिख्यो। तामें श्रीगुसांईजी के श्रीमुख के वचन कहे सो लिखि पठाये। सो पत्र पारवती के पास पहोंच्यो। सो पत्र बांचि पारवती प्रसन्नता सों सेवा करन लागी। सेवा करत ग्लानि मन में न लावे। पाछे महिना तीन चारि में। हाथ पांव नीके भये।

तब पारवती बहोत प्रसन्नतासों करन लागी। तब फेर श्रीगुसांईजी कों पत्र लिखि, पुरुषोत्तमदास मेहरा की पास पठायो। तामें लिखी, जो–महाराज के प्रताप तें नीकी भई हों। और भेंट पठाई। सो पुरुषोत्तमदास मेहरा ने श्रीगुसांईजी कों बांचि सुनायो। तब श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये। सो पारवती ऐसी भगवदीय हती, जो–प्रभुन की आज्ञा प्रमाण चलती, तातें श्रीगुसांईजी सदा इनके ऊपर प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं। सो कहां तांई कहिये।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी के सेवक पद्मनाभदास के नाती, पारवती को बेटा रघुनाथदास तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–पारवती लीला में रूपविलासिन राजसी भक्त और रघुनाथदास को नाम गुनाभिरान्या। इनमें गुन बहोत, जो–कोई और सों एक दिन में काम होइ सो एक घरि में यह करें। सो ए तामसी है। सो दोऊ सुचरिता की सखी बराबरि की है। पुरुषोत्तमदास मेहरा की दोऊ आज्ञाकारिनी हैं।

वार्ता प्रसंग १–सो रघुनाथदास कासी गये। तहां बहोत शास्त्र पढ़ि के श्रीगोकुल आये। श्रीगुसांईजी के दरसन किये। दंडोत करी। तब श्रीगुसांईजी श्रीआचार्यजी के सेवक जानि

(के) बहोत आदर सन्मान किये। आप कथा सुबोधिनीजी की कहते। तब रघुनाथदास कों आगे बैठावते। सो एक दिन परमानंद सोनी ने रघुनाथदास सों पूछी, जो-तू तो कासी में बहोत शास्त्र पढ्यो है। सो आज श्रीगुसांईजी ने कहा कथा कही है, सो कहो।

भावप्रकाश-श्रीगुसांईजी श्रीआचार्यजी के सेवक पद्मनाभदास की सखी जानि रघुनाथदास को बहोत आदर करते। और परमानंददास को नाम लीला में चंद्रका है। चंद्रमा की उजियारीवत् इनकी देह की कांति है। श्रीगुसांईजी (श्रीचंद्रावलीजी) अनेक चंद्रमारूप तिनकी अंतरंगिनी यह है। तातें रघुनाथदास सों कटाक्ष के वचन कहे।

तब रघुनाथदास ने परमानंद सोनी सों कह्यो, जो-तुम सांच पूछो तो मैं कछू समुझत नाहीं। श्रीआचार्यजी के मारग की परिपाटी और मारग की बात नाहीं जानत हों। रघुनाथदास को मान सब मर्दन ह्वै गयो।

भावप्रकाश-यामें यह जताए, जो-शास्त्रादिक वेद पुरान के पढ़े तें श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ को सिद्धान्त जान्यो न जाइ। कृपा ही को मारग है। सो कृपा हीतें जान्यो जाइ।

पाछे परमानंद सोनी नें श्रीगुसांईजी सों कही, जो-महाराज! रघुनाथदास तो कछू समुझत नाहीं। तब श्रीगुसांईजी ने रघुनाथदास कों चारि ग्रन्थ अर्थ सहित पढ़ाए (और) मारग की प्रणालिका कही।

१. 'सिद्धान्तरहस्य' ग्रन्थ में सगरे मारग को सिद्धान्त बताए। २. 'कृष्णाश्रय' ग्रन्थ में एक आश्रय दृढ़ करि दिये। ३. 'नवरत्न' ग्रन्थ में लौकिक वैदिक चिंता दूरि करि दीनी। ४. 'सेवाफल' में सेवा को फल बताइ दिये। पाछे रघुनाथदास

समुझन लागे। श्रीगुसांईजी की कथा को भेद लीला को प्रकार सब जानन लागे। बड़े पंडित भये।

वार्ता-प्रसंग २-सो केतेक दिन पाछे कन्नौज में अपने घर आज्ञा मांगि के आये भगवत्सेवा में ममत्व बढ्यो। तब माता पारवती सों कह्यो, जो-होंतो न्यारो होउंगो। श्रीठाकुरजी की सेवा करोंगो।

भावप्रकाश-यह कहेवे में अभिप्राय यह है, जो-पारवती और रघुनाथदास बराबरि की सखी हैं। तामें पारवती राजसी है। और रघुनाथदास तामसी भक्त है। सो पारवती ने श्रीठाकुरजी बस किये हैं, सेवा करि के। सो भेद रघुनाथदास ने देख्यो। सो एऊ बराबरि के तामसी। सो सह्यो न गयो, जो-मेरे श्रीठाकुरजी इनने मन लगाइ के बस कियें हैं, सो अब मैं बस करों तातें पारवती तें कहें, मैं न्यारो होइ के सेवा करूंगो।

तब पारवती ने कही, जो-भलेही सेवा करि। प्रीति काहू के बांटे में नाहीं। श्रीआचार्यजी की कृपा ते होइगी। पाछे रघुनाथदास न्यारे भये। सो वाकी माता पारवती जल भरि लावे। पात्र मांजे। श्रीठाकुरजी की परचारगी सब करि पाछे अपने न्यारे घर में आय अकेली लीटी करि के भाव सों भोग धरे। पाछे जल के घूँट सों उतार के लेइ। श्रीठाकुरजी की सेवा श्रृंगार बिना सगरो राजस खानपान देह सुख सब त्याग कियो। या भांति सों करत दिन द्वै चारि बीते। पाछे श्रीमथुरानाथजी ने कह्यो, तू धन्य है, मेरी सेवा नाही छोड़े। अपनो सुख सब छोड़े। मन में तापहू बहुत कियो। अब तू कबहु तो दारि करि। मेरो गरो अकेली लीटी लेत खरखरात है। तब पारवती ने कह्यो, जो-महाराज! तुम तो रघुनाथदास के इहां दारि भात खीरि आदि सब सालन सामग्री नित्य अरोगत हो। गरो क्यों खरखरात है ? तब श्रीठाकुरजी ने पारवती सों

कह्यो, जो–मोकों तो तेरो कियो भावत है। तातें लीटी अकेली आरोगत हों।

भावप्रकाश–यह कहि (यह) जताए, तो–प्रीति की लीटी मोकों प्रिय है। अहंकार करि छप्पनभोग प्रिय नाहीं है। रघुनाथदास के इहांहू अरोगत हों। श्रीआचार्यजी की का'नि तें। परंतु तेरो कियो बहोत भावत है। यह कहि यह जताए, जो–भक्तजन सुख लेइ श्रीठाकुरजी लिये जानिए। और इतनो कहे पारवती सों, सो पारबती के लिये। जो–मैं अपने गरे को नाम लेउंगो, तब यह सगरी सामग्री करेगी। पाछें प्रसाद लेइगी। तब मोको सुख होइगो।

या प्रकार पारवती को सुख बिचारे। तब पारवती सगरी सामग्री अपने घर करन कों दौरी आवती। दारि, भात, सालन सब करती। पारवती ने विचार्यो, जो–श्रीठाकुरजी सुखी होइ सो करनो।

पाछे रघुनाथदास कछूक दिन सेवा करी। पाछे ज्ञान भयो। जो–पारवती की सेवा अहंकार करि छुड़ाई। तातें प्रभु मोपर अप्रसन्न हैं! तातें भगवदीय सों मिलि के चलूंगो, तो श्रीठाकुरजी प्रसन्न होइंगे। अहंकार किये मेरी यहू सेवा जाइगी। यह ज्ञान श्रीगुसांईजी ने मारग को सिद्धान्त बतायो हतो, तातें उनकी कृपा तें भयो। तब रघुनाथदास पारवती सों कहें, माता! अब तुम ही सेवा करो। तुम आज्ञा करो सो मैं करूं। मैं चूक्यो। तब पारवती कों कछू ईरष्या तो नाहीं। सुद्ध भक्त है। सो प्रसन्न होइ रसोई करन लागी। रघुनाथदास सों शृंगारादि करावे। या प्रकार ऐसें करत पारवती के संग करि रघुनाथदास कों प्रीति भई। तब दोऊन कों बराबरि अनुभव होन लाग्यो। या प्रकार पद्मनाभदास को परिवार अलौकिक भयो। या प्रकार वैष्णव सात भये। परंतु पद्मनाभदास के कुटुंब सहित वार्ता एक जाननी, तातें वैष्णव ४ भये। ॥ वार्ता ॥४॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक रजो क्षत्राणी
तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–सो रजो क्षत्राणी लीला में ललिताजी की सखी है। इनको नाम रतिकला है। रति, जो–प्रीति ताकी कला। अथवा रति, जो–विहार ताकी कला, जो–जिनकों श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी को विहार सिद्ध हो। यही भाव में मगन हैं। और जानत ही नाहीं। श्रीस्वामिनीजी के लिये नाना प्रकार की सामग्री करनी। निकुंजादिक में रात्रि कों दुधादिक अरोगावनो। यह ललिताजी की सेवा है। तातें यहां हू रजो कों यह नेम, जो– रात्र की सामग्री नित्य नेम सों श्रीआचार्यजी कों आरोगावनो। सो लीला में रतिकला कों बहोत ताप हतो। जो–श्रीस्वामिनीजी कों परोसों (ऐसो) भाग्य मेरो कब होय ? काहेतें, (जो) अरोगावनो सो ललिता की सेवा है। सो कैसें मिले ? ललिताजी तो अत्यंत प्रिय मध्याजी हैं। सगरी लीला की सिद्धि करता। सो ताप रतिकला के हृदय को है। (सो) अब श्रीआचार्यजी (श्रीस्वामिनीजी) मनोरथ पूरन करें ताप मिटाए ? काहेतें ? नारायणदास ब्रह्मचारी ब्राह्मन हते। तिनकी करी खीरि श्रीगोकुलचंद्रमाजी खीरि लेवे कों श्रीआचार्यजी सों कहे। तब श्रीआचार्यजी कहे, पाक कैसें लियो जाइ ? पाछे श्रीगोकुलचंद्रमाजी के ग्रन्थ (वाक्य) तें लिये।

और इहां रजो क्षत्राणी हती। ताकी अनसखड़ी आप नित्य नेम सों लेते। सो लीला संबंध को भाव विचारि के। तथा रजो एकांगी अनन्य भक्त के बस होइके, सो प्रेमके भरतें मर्यादा छूटी जाय। यामें रजो को प्रेम जताए। रजो के प्रेमतें मर्यादा स्वरूप को तिरोधान होइ जातो। लीला रस में मगन होइ सामग्री अंगीकार करें।

वार्ता–प्रसंग १–सो रजो नित्य पकवान सामग्री करि रात्रकों ले आवती। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन आरोगते। वाके नेम हतो।

सो एक दिन लक्ष्मन भट्ट को श्राद्ध दिन हतो। सो श्रीआचार्यजी ने ब्राह्मण भोजन कों बुलाए हते। तहां घृत थोरो सो चहियत हतो। तब श्रीआचार्यजी ने एक वैष्णव सों कह्यो, जो–रजो के इहां ते घृत ले आवो। सो एक वैष्णव जाइ के रजो सों कह्यो, जो–श्रीआचार्यजी ने घृत मँगायो है। तब रजोने वा

वैष्णव सों कह्यो, जो–घृत काहेकों मँगायो है ? तब वा वैष्णवने कह्यो, ज़ो–लक्ष्मण भट्टजी को श्राद्ध दिन आज है। सो ब्राह्मण भोजन कों बुलाए हैं तहां घृत घट्यो है। सो तातें मँगायो है। तब रजो ने कह्यो, जो–घृत मेरे नाहीं है, जाय कहियो। तब वैष्णव फिरि आयो। और श्रीआचार्यजी सों कह्यो, जो–महाराज ! रजो के घृत नाहीं है। तब श्रीआचार्यजी कहे। जो–एकबार तू फेरि जा। खीजि के कहियो जो घृत दे। तब वह वैष्णव फेरि आयो। रजो सों कह्यो, जो श्रीआचार्यजी खीझत हैं। तातें घी देउ। तोहू रजो ने घृत दीनो नाहीं। कह्यो, मेरे घृत नाहीं है, कहां ते देऊं ? तब वैष्णव फिरि आय श्रीआचार्यजी सों कह्यो, जो–महाराज ! रजो घृत नाहीं देत। पाछे और ठौरतें घी मंगाइ काम चलायो। पाछे रात्र भई। तब रजो सामग्री सिद्धि करि श्रीआचार्यजी के पास आई। तब श्रीआचार्यजी पीठि दे बैठे। तब रजोने कह्यो, जो–महाराज, जीव तो दोष ते भर्यो है। अपराध कहा, जो–आप दरसन नाही देत ? तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो, जो–आज लक्ष्मण भट्टजी को श्राद्ध हतो। सो तेंने घृत क्यों नाहीं दीनो ? तब रजोने कही, मेरे घी नाहीं हतो। तब श्रीआचार्यजी ने कही, सामग्री कहाँ ते करि लाई ? तब रजो ने कही, महाराज ! आपु के घर में हू घी हतो क्यों नाहीं लिये ? तब श्रीआचार्यजी कहे, उह तो श्रीठाकुरजी को हतो। वामें ते कैसें लियो जाई ? तब रजो ने कहो, मेरे घर में कौन है ? श्रीठाकुरजी तें अधिक आपको स्वरूप है। सो आपकी लीला–संबंधी सामग्री में तें श्राद्ध में कैसे देऊं ? और मैं लक्ष्मन भट्टकी लोंड़ी नाहीं हों। मैं तो आपकी लोंड़ी हों, आप मेरी परीक्षा लेन अर्थ घी मंगायो। सो

पहले वैष्णव पठायो तब तो लौकिक आवेस सों घी घट्यो। तब आपु कहे, रजो सों ले आवो। यह लौकिक प्रवाह आज्ञा जानि के मैंने घी की नाहीं करी। सो पाछें आपु यह मनमें विचारे, जो-श्राद्ध के लिये ब्राह्मण भोजन में वेगे चाहिये। फेरि जो उह वैष्णव आईकें कह्यो, जो-खीजि के कहे घी देहू। तब मैं मर्यादा जानी। जो-पुष्टि कार्य में क्रोध को प्रयोजन है नाहीं। काहेतें, भावही सों सगरी वस्तु सिद्ध है। और मर्यादा में तो वेउ-वस्तु बिना कर्मको नास होई। (वस्तु तें) पूरनता है। तातें वस्तु के लिये क्रोध है। जो-यह वस्तु आवश्यक चहिये। तातें मर्यादा की आज्ञा हु नाहीं माने। और मर्यादा के कार्यार्थ घी हू नाहीं दियो। पाछें तीसरे पुष्टि के आवेस ते मांगते तो मैं घी देती। और आपको घी मंगावनो हतो। (तो) इतनो उह वैष्णव सों कहि देते, जो-रजो सों कहियो। तेरे पुष्टि-धर्म में हानि नाहीं है, घी दीजो। तो मैं काहे कों फेरती ? और महाराज ! जानि बूझि के कूआ में कैसे परूं ? आपु की कृपा तें इतनो ज्ञान भयो तब मैं घी नाहीं दियो। आपु तो बुद्धि प्रेरक हो। मेरे हृदय में बैठि के घी देवे की नाहीं कहे। उहां के घी मंगाये। सो मैं बिना मोल की दासी हों। आपु कृपा करिये।

भावप्रकाश-याही तें शिक्षापत्र में कह्यो है। श्रीठाकुरजी की आज्ञा तीन प्रकार की है। लौकिक आज्ञा प्रवाहसे के करन अर्थ। याही तें श्रीभागवत में लौकिक आदि कार्य यह तीन ही बरनन हैं। अलौकिक कार्य में श्रीठाकुरजी को आश्रय और भगवदीय को संग। वैदिक कार्य में तीर्थ देव-पूजा कर्मादि। लौकिक में कुटुंब पालनों खानपान सरीर को सुख। सो तीन्यों फलहू न्यारे न्यारे कहें हैं। लौकिक तें संसार। वैदिक तें स्वर्गादिक। अलौकिक तें भगवद् प्राप्ति। या प्रकार के भेद सों घी नाहीं दियो।

तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होइ के दरसन दिये। तब रजो ने सामग्री श्रीआचार्यजी के आगे राखी। और कह्यो, जो अरोगो।

तब श्रीआचार्यजी ने रजो सों कह्यो, जो–आजु श्राद्ध दिन है। सो दूसरी बेर लेनो नाहीं। तब रजो ने कह्यो, जो–महाराज! घर की होइ सो लोगन के मर्यादा के लिये मति लेहू। यह तो लियो चहिये।

भावप्रकाश – ताको अर्थ यह, जो–लीला के भाव सों अपने निज स्वरूप सों अरोगे। अब मर्यादा को आवेस कहां राखोगे ? लीला के आवेस में मन दीजे। भक्तन को मनोरथ पूरन करो। इतनो सुनत ही आप (में) पुष्टिलीला को आवेस ह्वे गयो। मर्यादा की आज्ञा सब जात रही। सामग्री अरोगे। जैसे परमानंदजी गाये, ''हरि तेरी लीला की सुधि आवे।'' इतनो सुनत ही तीन दिन लों सरीर को अनुसंधान न रह्यो। ऐसे लीला में आवेस होइ, रजो को मनोरथ पूरन किये। तातें रजो एकांगी भगवदीय है।

तब रजो के आग्रह तें श्रीआचार्यजी ताहू दिन सामग्री अरोगे। सो वह रजो क्षत्राणी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की ऐसी कृपापात्र भगवदीय ही। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं! सो कहां तांई कहिये॥ वार्ता ॥५॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, सेठ पुरुषोत्तमदास काशी में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–सेठ पुरुषोत्तमदास कों दामोदरदास संभलवारे को संग है। जब ताँबे को पत्र बँचाइवे कों कासी गये ता दिन तें सेठ कों श्रीआचार्यजी के दरसन की आरती भई। सो श्रीआचार्यजी पहली पृथ्वी परिक्रमा करि कासी पधारे। तब सेठ ने मनिकर्निका घाट पर श्रीआचार्यजी के दरसन पाये। सो कृष्णदास सों पूछे, श्रीआचार्यजी दक्षिण देस में कृष्णदेव राजा की सभा में मायावाद खंडन किये हैं, सोई हैं? तब कृष्णदास मेघन ने कही, एही हैं। तब सेठ पुरुषोत्तमदास श्रीआचार्यजी के सन्मुख जाइ दंडोत् किये। विनती करी, महाराज! कृपा करके सरन लीजे। कृपा करि घर पावन करिए। तब श्रीआचार्यजी दैन्यता देखि सेठ पुरुषोत्तमदास के घर पधारे। सेठकों, सेठ की बेटी रुकिमिनी कों, सेठ के बेटा गोपालदास आदि सब कों नाम सुनाए, ब्रह्मसंबंध कराए। तब सेठ नें विनती करी, महाराज! अब हमकों कहा कर्तव्य है? तब श्रीआचार्यजी कहे, भगवत् सेवा पुष्टिमार्ग की रीति सों करो। सो सेठ

के घर श्रीमदनमोहनजी ठाकुर हते। पास हजार दस पन्द्रह रुपैया हतो सों घर बनाए। सो नींव में तें श्रीमदनमोहनजी ठाकुर निकसे। और द्रव्य बहुत निकस्यो, करोड़धुजी कहाए। साठ करोड़ द्रव्य पाये। सो पिता कछुक दिन श्रीमदनमोहनजी की पूजा करि देह छोड़े। पाछे सेठ ने पूजा बहोत दिन लों करी, द्रव्य बहोत कमाए। सो श्रीमदनमोहनजी कों श्रीआचार्यजी ने पंचामृत स्नान कराए, पाट बैठाए, सेठ के माथे पधराए।

सो सेठ पुरुषोत्तमदास लीला में श्रीस्वामिनीजी की सखी हैं। इंदुलेखा इनको नाम है। और सेठ की बेटी रुकिमिनी इन्दुलेखा की सखी, मोदनी नाम है। और गोपालदास सेठ को बेटा, सो इंदुलेखा की सखी गानकला है। सो सेठ पुरुषोत्तमदास श्रीमदनमोहनजी की राजसेवा करते। बावन बीड़ा को नेग हतो। याको कारन यह है, जो–लीला में बीड़ा अरोगाइवे की सेवा इंदुलेखा की है। तातें पुरुषोत्तमदास ने बावन बीड़ा राखे। सो श्रीठाकुरजी के भावतें बीस, और बत्तीस बीड़ा श्रीस्वामिनीजी के भावतें। याकौ आसय यह. जो–श्रीठाकुरजी कों बिस्वास प्रिय है। तातें बीसों बिस्वा निश्चयात्मक दृढ़ विश्वास जताइवे कों बीस बीड़ा, श्रीठाकुरजी के भावतें। श्रीस्वामिनीजी कों शृंगार प्रिय हैं, तातें जुगल रूप के सिंगार सोरह दूने बत्तीस भये। या प्रकार श्रीस्वामिनीजी कों प्रसन्न किये। या प्रकार कहि (यह जताए, जो–)जितनी सेवा सेठ पुरुषोत्तमदास करते, सो भावपूर्वक करते। सामग्री वस्त्र आभूषण हू में। और श्रीमदनमोहनजी की सेवा श्रीठाकुरजी के भावतें अधिक श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के भावतें करतें। तातें श्रीआचार्यजी प्रसन्न होइकें श्रीमदनमोहनजी के दोऊ चरन स्याम दरसन कराए। ताको आसय यह, जो–सर्वाङ्ग गौर, सो तो श्रीआचार्यजी महाप्रभु को निजस्वरूप–श्रीस्वामिनीजी को श्रीअंगवर्ण। और चरन दोऊ स्याम, सो श्रीकृष्ण के श्रीअंगवर्ण। तामें चरन स्याम को अभिप्राय, निकुंजादिक लीला में श्रीठाकुरजी दूसरे स्वरूप (श्रीस्वामिनीजी) के चरनाश्रित हैं। तातें श्रीठाकुरजी के भावतें श्रीआचार्यजी की सेवा दिखाए। या प्रकार सेठ पुरुषोत्तमदास पर अनुग्रह श्रीआचार्यजी किये।

सो श्रीमदनमोहनजी कों श्रीआचार्यजी ने पंचामृत स्नान कराइ पाट बैठारे, सेठ के माथे पधराए।

वार्ता–प्रसंग १– और सेठ कासी मुख्य बिश्वेस्वर महादेव, सो कासी के राजा है, तिनके दरसन कों कबहू नहिं जाते। सो एक दिन बिस्वेस्वर महादेव ने स्वप्न में सेठ पुरुषोत्तमदास सों

कह्यो, जो–गांव को नातो तुम नाहीं राखत, तो वैष्णव को नातो तो राखो, कबहूं हम कों महाप्रसाद तो दियो करो। तब सबेरे सेठ पुरुषोत्तमदास सेवा सों पहोंचि कें महाप्रसाद को डबरा बीरा ले बिस्वेस्वर महादेव के देवालय कों चले। तब गांव के लोग सब आश्चर्य ह्वे रहे, जो–सेठ कबहू नाहीं आवते सो आजु क्यों आये ? सो कितने लोग संग सेठ के चले। सो सेठ महाप्रसाद को डबरा, बीड़ा चारि धरे, श्रीकृष्णस्मरण करिके उठि चले। तब बड़े–बड़े सैव ब्राह्मण हते सो सेठ पुरुषोत्तमदास सों कहे, तुम दंडवत् नमस्कार नाहीं किये ? श्रीकृष्णस्मरण करि उठि चले सो उचित नाहीं। तब सेठ पुरुषोत्तमदास ने कही, हमारे इनके भगवत्स्मरण को ब्यौहार है। तुम पूछि लीजो। तुम सों बिस्वेस्वर महादेवजी कहेंगे।

सो उन ब्राह्मणन में एक ब्राह्मण महादेवजी को कृपापात्र हतो। सो उन ब्राह्मण सों महादेवजी ने कही, जो–हमने सेठ सों महाप्रसाद मांग्यो हतो। हमारे इनके भगवत् स्मरण को ब्यौहार ही है। तातें इन सों और कछु मति कहियो। ता पाछें बड़े उत्सव के पाछें महाप्रसाद बिस्वेस्वर महादेव कों ले जाते।

भावप्रकाश–यह कहिवे को अभिप्राय यह, जो–सेठ पुरुषोत्तमदास अब सेवक भये तब इनकी आज्ञा में सगरे लोग द्रव्य अर्थ रहें। सो महादेवजी ने जाने, जो–अब सगरे अनन्य होंइगे। तो हमारो महात्म्य हू घटि जायगो, और भगवद् आज्ञा कलिकाल आयो, सो जीवन कों बहिर्मुख करने हैं। और सेठ पुरुषोत्तमदास ने भक्ति फैलाई सो इनसों तो कछू चले नाहीं। तब महादेवजी ने यह उपाइ कियो जो–सेठजी तो महाप्रसाद देंन जाइ, ता करि सगरे लोग महादेवजी के देवालय जान लागे, जो–कोउ बरजे जो उत्तर करें, सेठजी सरीखे जात हैं तो हमारी कहा ? महादेवजी बड़े भगवदीय हैं। या प्रकार जीव बहिर्मुख भये। परन्तु यह न जाने, जो–सेठकों आज्ञा भई सौ गये, परन्तु रुकमिनी गोपालदास कबहूं नाहीं गये, हम कैसे जाइ ! परन्तु

सबको उत्तम फल नाहीं देनो है। तातें सेठ पुरुषोत्तमदास हू गये।

वार्ता-प्रसंग २-और एक दिन बिस्वेस्वर महादेवजी ने कालभैरव कों, कोतवाल कासी के हते, तिनसों कह्यो, जो-सेठ पुरुषोत्तमदास वैष्णवन के घरतें अर्द्धरात्रिकों आवत हैं अवेरे सवेरे, सो सेठ पुरुषोत्तमदास के घर की चौकी दीजो। कोई छलावा, चोरादिक उपद्रव न करे। तब कालभैरव नित्य सेठ पुरुषोत्तमदास के घर की चौकी पहरा देते।

सो एक दिन वैष्णव के घरतें अर्द्धरात्रि समें सेठ पुरुषोत्तमदास आवत हे। सो घर के द्वार ऊपर काहुकों देख्यो। सो पाछें फिरि कें देखें तब पूछे, जो-तू कौन है ? तब कालभैरव ने कह्यो, जो-मोकों महादेवजी ने तिहारे घर की चौकी पहरा देवे की कही है, सो नित्य चौकी देत हों। तब सेठ पुरुषोत्तमदास बोले नाहीं, किंवाड़ दै घर में आये।

भावप्रकाश-यह कहि के यह जताये, जो-सेठ ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते। परन्तु वैष्णव के संग अर्थ आपु चलाइ के जाते। तातें वैष्णव को संग अवश्य करनो। काहेतें ? श्रीआचार्यजी लिखे हैं, ''पोषकाभावे तु शिथिलम्'' (अर्थात्) पोषक को अभाव होई तब मन सिथिल ह्वे जाइ, भक्ति घटि जाइ। सो पोषण सत्संग तें होइ।

और कालभैरव कों महादेवजी राखे सो यातें जो-कासी में भूत, छलाबा, बहोत तथा चोरादिक। सो महादेवजी विचारे, जो-मोकों भगवान ने कासी को राज दिये हैं, जातें या गाँव में अन्याव होइ सो मेरे माथें। ताते भगवदीय को कछू बिगार होइ तो भगवान् मोपर अप्रसन्न होइ जाई। और सेठजी हमकों महाप्रसाद (हू) कृपा करिकें दिये, हमारो तो कछू लेते नाहीं। तातें इतनी चौकसी तो करी चाहिये। तातें कालभैरव सों चौकी पहरा की कहे। (सो यातें), जो-कदाचित् कछु बिगार हू होइ तो दंड कालभैरव के माथें। तातें आपु नाँहीं दिये।

वार्ता-प्रसंग ३- और एक दक्षिण देस को ब्राह्मण कासी में आयो, सो सैवी महादेवजी को कृपापात्र हतो। जब महादेवजी

दरसन देइ तब वह ब्राह्मण खानपान करे। सो ऐसें करत जन्माष्टमी को उत्सव आयो। सो सेठ पुरुषोत्तमदास बड़े मंडान सों जन्माष्टमी को उत्सव करते। सो महादेवजी जन्माष्टमी के दिन सेठ पुरुषोत्तमदास के घर आये। सो नौमी कों नंद महोत्सव पाछें दुपहर कों आये। तब ब्राह्मण कों दरसन भयो। तब वह ब्राह्मण नें बिस्वेस्वर महादेवजी सों पूछ्यो, जो–काल्हि तिहारो दरसन नाहीं भयो। आजु दुपहर कों भयो, ताको कारन कहा ? तब महादेवजी ने कही, मैं जन्माष्टमी को उत्सव देखन कों (सेठ के घर) गयो हो, काल्हि सवारे तें। सो आजु आयो। तब वह ब्राह्मण नें कही, जो–ऐसे सेठ कौन हैं ? जिनके घर तुम उत्सव देखन जात हो ? तब बिस्वेस्वर महादेवजी ने कही, जो–वे बड़े भगवद् भक्त हैं, हम सों श्रेष्ठ हैं।

भावप्रकाश–ताकौ यह अर्थ, जो–सेठ पुष्टिमार्गीय भगवद्भक्त हैं, हम मर्यादामार्गीय हैं।

तब ब्राह्मण ने कह्यो, जो–ऐसे भगवद् भक्त हमहू कों करो। तब महादेवजी ने कह्यो, सेठ पुरुषोत्तमदास के सेवक जाइ के होउ। वे नाम सुनावत हैं, उनकों श्रीआचार्यजी की आज्ञा है। तब वह ब्राह्मण ने कही, जो–तुम ही नाम सुनावो। तब महादेवजी ने कही, जो–हमारो दियो नाम फलेगो नाहीं।

भावप्रकाश–ताको अर्थ यह, हमारो नाम दिये मर्यादाभक्ति को अधिकारी होइगो। तातें पुष्टिमार्ग को अधिकार उनहीं को है।

तब वह ब्राह्मण सेठ पुरुषोत्तमदास के द्वार पर आइ सेठ कों खबर कराई तब मनुष्यन नें कही, एक ब्राह्मण तुमसों मिलन आयो है। तब सेठ नें कही, जो–माथो खाली करन आयो होइगो।

भावप्रकाश–याको अर्थ यह, जो–महादेवजी को भक्त है, नाम सुनेगो, परन्तु दृढ़ भक्ति बहुत दिन लों पचेंगे तब होइगी।

पाछें सेठ सेवा तें पहोंचिके बाहिर आये। तब वह ब्राह्मण ने दंडवत् कियो। तब सेठ पुरुषोत्तमदास ने कही, तुम यह अनुचित क्यों करत हो ? हम क्षत्रिय हैं, तुम ब्राह्मण होइके दंडवत् करत हो ? तब उह ब्राह्मण ने कही, जो–हमकों नाम देहु, सेवक करो। तब सेठ ने कही, हम तो काहू कों नाम देत नाहीं। सेवक नाहीं करत।

भावप्रकाश–ताकों अर्थ यह, नाम देवे वारे, सेवक करवे वारे तो श्रीआचार्यजी महाप्रभु हैं। यह बात तो वह ब्राह्मण समुझ्यो नाहीं।

तब बहोत आग्रह किये, परन्तु सेठ ने नाम नाहीं दियो। तब महादेवजी पास फिरि आयो। कह्यो–सेठ तो नाम नाहीं देत। तब विस्वेस्वर महादेव ने कह्यो, जो–तू फेरि जाइकें सेठजी सों कहियो, जो–मोकों महादेवजी ने पठायो है। जो अबकें नाहीं फेरेंगे। तब वह ब्राह्मण फेरि आइकें सेठजी सों कही, जो–मोकों महादेवजी ने पठायो है, सो नाम देउ।

भावप्रकाश–ताको यह अर्थ, जो–जीव पुष्टिमार्ग को है। तातें नाम देऊ।

तब सेठ ने उह ब्राह्मण कों नाम सुनाय हाथ जोरि कें जै श्रीकृष्ण कियो। तब वह ब्राह्मण ने कह्यौ, तुम मोकों नाम सुनाए, अब हाथ जोरि कें नमस्कार क्यों करत हो ? तब सेठ ने कही, हम श्रीआचार्यजी की आज्ञा तें नाम देत हैं। हमारे तिहारे गुरु श्रीआचार्यजी महाप्रभु हैं। जब श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारें तब उनके पास फेरि नाम सुनियो। हमारे तिहारे भगवत् स्मरण को व्यौहार भयो। पाछें वह ब्राह्मण अड़ेल में जाइ श्रीआचार्यजी के

नाम निवेदन पाये। तब वह कछूक दिन रहि दक्षिण देस गयो। वैष्णव भयो।

भावप्रकाश–यह वार्ता में यह संदेह हैं, जो–महादेवजी जन्माष्टमी को उत्सव देखन सेठ पास आये। सो श्रीआचार्यजी संबंधी लीला (है), सो गोपालदास गाये हैं–''यह मारग श्रीवल्लभवर नो, जहाँ नहिं प्रवेश विधि हर नो।''

यहाँ यह भाव जाननो, जो–सेठ के घर सारस्वत कल्प की पूर्णावतार की लीला है। तहां सगरी लीला हैं। सो महादेवजी कों कल्पाँतर की लीला, सो अंसकला है, ताको अनुभव भयो। यह कहि यह जताए, जो–श्रीआचार्यजी के ठाकुर हैं, तहां पुष्टिमार्गीय वैष्णव कों पूर्ण पुरुषोत्तम के स्वरूप को दरसन होइ। अन्यमार्गीय कों ऐसे दरसन न होइ। तातें महादेवजी उह ब्राह्मण सों कहे, जो–सेठ के सेवक होउ। तब तुमारो पुष्टिमार्ग में अंगीकार होइगो।

वार्ता–प्रसंग ४– और सेठ पुरुषोत्तमदास एक दिन मंदिरमें बैठे हे, मंदिर वस्त्र करत हते। सो दूरितें गोपालदास देखि के मनमें बिचार कियो, जो–अब सेठजी वृद्ध भये हैं। तातें अब मैं सेवामें तत्पर होउं। तब गोपालदास न्हाइ आये। तब गोपालदास के मनकी जानिके बुलाए। बेटा ! आगे आउ। तब गोपालदास निकट आइकें देखे तो बीस पच्चीस बरस के सेठ हैं। तब सेठ पुरुषोत्तमदास ने गोपालदास सों कही, जो–भगवदीय सदा तरुन हैं। परन्तु जो अवस्था होइ ताको मान दियो चाहिए। तातें आजु पाछें ऐसी मनमें मति लाइयो।

भावप्रकाश–याको अर्थ यह, जो–गोपालदास के मन में यह आई, जो–मैं **तरून हों**, सेठजी वृद्ध हैं, अब मैं सेवा में तत्पर होउं। या बात में गोपालदास को **बिमार जान्यो**, जो–तू हम कहा सेवा करेंगे ? श्रीआचार्यजी जासों कृपा करेंगे वासों ही **श्रीठाकुरजी** सेवा करावेंगे। सो तरुन कहा, वृद्ध कहा ? आजु पाछें ऐसी मनमें कबहू मति लाइयो। सो या प्रकार मान मर्दन करि बेगिही समुझाए। काहेतें ? गोपालदास लीला में सेठ की सखी हैं, तातें ए न समुझावें तो और कौन समुझावें ?

वार्ता–प्रसंग ५– और एक समय सेठ दक्षिण में गये। तहां

झारखंड में मंदार पर्वत है, ताके ऊपर मंदारमधुसूदन ठाकुर हैं। सो उह पर्वत तें मनुष्य गिरै तो चोट न लगै, अनजाने। और जानि के सगरे पार कहि कें ऊपर तें गिरे तो देह छूटै। पाछे दूसरे जनम में कामना सिद्ध होय। एसो वा पर्वत को महात्म्य लोक में प्रसिद्ध है।

तहां एक बेर श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा करत पधारे हे। तहां एक समय सेठ पुरुषोत्तमदास और एक ब्राह्मण वैष्णव विरक्त संग दोउ जने गये। सो उहां रात्रि ह्वै गई। तातें पर्वत पर सोइ रहे। अर्द्ध रात्र समय एक ब्राह्मण-सिद्ध को रूप धरि श्रीठाकुरजी आपु आये। तब सेठ बोले नाहीं। उह वैष्णव सेठ के संग को पूछे, जो-तुम कौन हो ? तब उन कह्यो, जो-मैं ब्राह्मण हों, या पर्वत पर रहत हों। तुम कौन हो ? तब वाने कही-हम श्रीवल्लभाचार्यजी के सेवक हैं। तब उन ब्राह्मण ने कही, हमारे पास मणि है, तु लेउगे ? तब वैष्णव ने कही, मणि में कहा गुण है ? तब उह ब्राह्मण ने कही, जितनों द्रव्य चाहिए सो मणि सों मिलै। तब उह विरक्त वैष्णव ने कही, जो-मैं कहा करूंगो ? जगदीस सेर चून देइगो। तातें सेठ पुरुषोत्तमदास गृहस्थ हैं, इनकों बहोत खरच हैं, इनकों देउ। तब ब्राह्मण ने कही, जो-सेठजी कों जगावो। तब उह वैष्णवनें जगाइ के सेठजी सों कही, यह मणि लेउ। यासों जितनों द्रव्य चाहिए तितनो होइगो। तब सेठ पुरुषोत्तमदास ने कही, जो-हमारे तो मणि नाहीं चाहिए। तब उह सिद्ध-ब्राह्मण मणि लेके फिरि गयो। तब वैष्णव ने सेठजी सों कह्यो, तुम मणि क्यों न लिये ? तब सेठ ने कही, तू क्यों न लियो ? पहले तो तोकों देत हो। तब उह वैष्णव ने कही,

मैं विरक्त हों, मणि कहा करूंगो ? जगदीस सेर चून जहां तहां तें देइगें। तब सेठ ने कही, तोकों सेर चून देइगें तो मोकों दस सेर हू देइगें। कहा जगदीस के कछु टोटो है ? सो ब्राह्मण बावरे ! मैं श्रीठाकुरजी को आश्रय छोड़ि मणि को आश्रय करूं ? पाछे सेठ अपने घर आये।

भावप्रकाश–यह वार्ता में बहोत संदेह हैं, जो–सेठ सेवा छोड़ि कें दक्षिण क्यों गये ? इनके कछु कामना तो नाँहीं। सो दक्षिण में उहां मधुसूदन ठाकुर के वहाँ क्यों गये ? तहाँ कहत हैं, जो–सेठ के मन में यह आई, जो–दक्षिण में श्रीआचार्यजी को जनम है। सो जनमस्थान के दरसन करि आऊं, ताके लिये दक्षिण गये। तब मंदार मधुसूदन ठाकुर सेठजी सों कहे, जो–तुम कृपा करिकें या पर्वत में मेरे पास आओ तो या स्थल को पाप दूरि होय। काहेतें ? मेरे यहाँ अनेक पापी आवत हैं, सो कोऊ पर्वततें महात्म्य सुनकें गिरत है। सो उनके पाप बहोत भये हैं। तातें सगरे तीर्थ गंगाजी आदि भगवदीय के आइवे को माग देखत हैं। तातें तुम या देस में आये हो तो पवित्र करो। और तुम आवोगे तो या तीरथ को महात्म्य बढैगो। तिहारो तो कछू बिगरे है नाहीं, प्रभु के आश्रयतें। या प्रकार मंदार मधुसूदन कहे। तब सेठजी उह परवत पर गये। तब मणि लेइके लुभ्याए। परंतु सेठजी निष्काम हैं, इनकों कछु डर नाहीं। तातें, जो–ऐसे निष्काम होई वामें तीर्थ कों पवित्र करिवे को सामर्थ होय, तिनकों बाधक न परें। और सकामी कों तीर्थ हू बाधक है। यातें, जो–उह स्थल के महात्म्य तें पर्वत तें गिरै तब मनोरथ के फल पावें। यह कहि जताये, जो–मनोरथ कामना कछु वस्तु की कामना भई तब पुष्टिमार्ग सों गिरै। और निश्चय मणि न लिये ताकौ अभिप्राय यह जताए जो–बिना माँगे (हू) कछु फल मिलै ताके लिये में (भी) बाधक अन्य–संबंध होई, तो कामनातें तो निश्चय अन्याश्रय होय। तातें सेठ नें उह विरक्त वैष्णवसों कही, जो–''बावरे'' ताकौ कारन यह, जो–मणि आदि कछू फल देंन आवें, तासों बोलनो नाहीं ''आपुहि चल्यो जाइ। या प्रकार सेठ के दृढाश्रय हतो।

वार्ता–प्रसंग ६– और एक समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु कासी पधारे। सो सेठ पुरुषोत्तमदास के घर उतरे। तब सेठ पुरुषोत्तमदास के ठाकुर श्रीमदनमोहनजी कों पंचामृत स्नान कराइ आपु भोग धरि भोजन किये। तब दामोदरदास हरसानी

नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, जो–महाराज ! यह कहा ? यहां पंचामृत ठाकुर कों न्हवाए ? तब श्रीआचार्यजी कहे, जदपि यह हमारी आज्ञा तें नाम देत है, तऊ इतनी मर्यादा राखी चाहिए।

भावप्रकाश–याको आसय यह, जो–सेवक करें ताके सन्मुख शिष्य के पाप आवत हैं, सो गुरु सामर्थ्यवान होइ, सो पाप कों जरावे। सो सेठ जदपि मेरी आज्ञातें नाम देत हैं, भगवदीय हैं, तातें पाप कहा करें याकों ? परंतु तऊ मर्यादा सों सेव्य कों पंचामृत के न्हवाएतें सेठ के पंचतत्व को सरीर सुद्ध होय, एक यह गौणभाव। और उत्तम भाव यह, जो–सेठ श्रीमदनमोहनजी की श्रीआचार्यजी महाप्रभु के भावसों सेवा करत हैं। तातें श्रीआचार्यजी पंचामृत स्नान कराइ, श्रीगोवर्द्धनधर रूप करि भोग धरत हैं। यह मुख्य भाव जानानो।

वार्ता–प्रसंग ७–बहुरि एक दिन कासी के राजा के मन में आई, जो–सेठ पुरुषोत्तमदास सो हम मिलिए। सो राजा गंगा पार रहत हतो। तहां ते प्रातःकाल आयो। ता समय सेठजी छोटी परदनी पहरे गोबर संकेलत हते। तब सेठ के लोगन नें सेठ सों कह्यो, जो–तुम सों मिलन कों राजा आवत हैं। सो आछे वस्त्र पहरिकें गादीपर बैठो। तब सेठ कहे, जो–आवन दे। राजा को कहा डर है ? तब राजा आयो। तब सेठ गोबर भरे हाथ राजा के आगे आये। तब राजा चतुर हतो सो कहे, सेठजी ! तुम धन्य हो। या संसार में मान बड़ाई एक तिहारी छूटी है। तब सेठ नें कही, हम गृहस्थ हैं, घर को काम कर्यो चाहिए। तब राजा प्रसन्न होइके घर गयो। या प्रकार सेठ कों प्रतिष्ठा की चाह रंचक हू नाहीं। गाय की टहल, सो अपने घर को काम कहे।

भावप्रकाश–ताको आसय यह, जो–जैसे श्रीठाकुरजी की सेवा जैसे गाय की सेवा। यही घर को काम है। लौकिक वैदिक काम है सो बाहिर को काम हैं। या भांति तें सेठ ने कही।

वार्ता-प्रसंग ८- सो ऐसे सेवा करत जन्माष्टमी आई। तब श्रीआचार्यजी ने नंदरायजी के घर जन्म-उत्सव भयो ता लीला के भाव तें पालना नन्दमहोत्सव किये। तब नंदरायजी, यशोदाजी, गोपी-ग्वाल सों रह्यो न गयो। सो साक्षात् पधारे। नंद-महोत्सव अनिर्वचनीय भयो। सो दरसन सेठ पुरुषोत्तमदास कों रुकिमिनी कों, गोपालदास कों भये।

भावप्रकाश-काहेतें ? ये लीला संबंधी पात्र हैं।

पाछें श्रीआचार्यजी ने जसोदाजी गोपीग्वाल सों कहे। जो-या काल में तुम साक्षात् पधारे सो उचित नाहीं। तब सबनने कह्यो, जहां तुम साक्षात् स्वामिनी रूप ह्वै उत्सव करो तहां हमसों क्यों रह्यो जाइ ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, जो (अबसों) हम सब तिहारे भेष धरावेंगे। तिनके भीतर ह्वै पधारियो। तब कहे, जो-आछो भेष सों पधारेंगे। ता दिन तें श्रीआचार्यजी ने भेष की रीति जन्माष्टमी पें किये। या प्रकार प्रथम ही जन्म-उत्सव सेठ पुरुषोत्तमदास के घर कियो। ता पाछें सेठ पुरुषोत्तमदास नित्य श्रीमदनमोहनजी कों पालने झुलावते। जन्म-उत्सव के भाव में सदा मगन रहते।

वार्ता-प्रसंग ९- और श्रीआचार्यजी के पास वादी बहोत आवें। सो वाद करत संझा ह्वै जाय। सो आपुके भोजन बिना किये वैष्णव महाप्रसाद लेइ नाहीं। तब श्रीआचार्यजी पत्रावलंबन ग्रन्थ करिकें एक कागद पर लिखे, एक वैष्णव कों दिये, जो-विस्वेस्वर महादेवजी के देवालय में लगाई भीति सों, यह कहियो-जितने पंडित सैव, ब्राह्मण वादी आवें सो संदेह होइ, सो यामें देख लेउ। जो उत्तर न पावो तो श्रीआचार्यजी पास आइयो।

तब वैष्णव ''पत्रावलंबन'' ग्रन्थ ले जाइ महादेव के पास भीति में लगाइ, सगरे मायावादी तो तहां आवें ही, तिनसों वैष्णव ने कही, जो-संदेह श्रीआचार्यजी सों पूछनो होइ सो याकों बांचि लेउ। सो सबन कों उत्तर मिल्यो, सब चुप ह्वै रहे। और कहे, जो-श्रीआचार्यजी ईश्वर हैं, इतने छोटे ग्रन्थ में हजारन मायावादीन कों निरुत्तर किये।

भावप्रकाश-महादेवजी के पास लगाइवे कौ आसय यह है, जो-हमारो कियो तिहारे इष्ट महादेव कों प्रमाण है। तो तुमकों जीतने कितनीक बात है। और इतने पर या कासी के राजा विस्वेस्वर हैं। उनके पास यह झगरो डारे हैं। खोटे खरे के महादेव साक्षी हैं। अब जो न मानोगे तो तुम कों महादेव दंड देइंगे। या प्रकार महादेव सों कहवाइ सगरे पंडितन कों जीते। जैसे पुष्टिमार्गीयन कों इष्ट ब्रजभूमि और श्रीकृष्ण तैसे सैब कों इष्ट कासी, महादेव। सो कासी में महात्म्य दृढ़ जताए बिना जगत में भक्तिमार्ग को विस्तार न होय, वैष्णवन कों पाछे ते सैव द्वेष करि दुख देइ। तातें श्रीआचार्यजी कासी में या प्रकार कौ महात्म्य पत्रावलंबन द्वारा जताए, सबकों। यातें, जो-कोई पंडित बादी काहू वैष्णवसों बोलि न सके।

वार्ता-प्रसंग-१०-और एक सेठ के सगे संबंधी में मामा लगत हो। सो सेठजी सों कहे नित्य, जो-गया कों चलौ तो मैं तिहारे संग चलों। तब सेठ कहे, अवकास पाइके चलेंगे। सो चैत महिना आयो। तब उह मामा ने बहोत-बहोत आग्रह कियो, जो-गया चलो। तब सेठ ने दोइ गाड़ी की तैयारी कराई। एक गाड़ी पर राजभोग पाछे सेठ चले। सो कोस पांच छह गये। तब एक बेंगन को खेत (आयो), तामें ते खेतवारे नें सुंदर बेंगन चीनिकें बड़ो टोकरा भरि के धरयो, सो सेठ की दृष्टि परी। तब सेठजी नें गाड़ी ठाड़ी कराई। यह विचारे, जो-श्रीमदनमोहनजी के सेनभोग लायक साग होइगो। तब वासों कहे, जो-यह बेंगन को कहा लेइगो ? तब उह कह्यो, एक रुपैया लगेगो। तब सेठ नें

रुपैया दे बेंगन सब गाड़ी में धरि गाड़ीवान सों कहे, बेगे गाड़ी पाछें कों घर कों हांकि, तोकों एक रुपैया देउंगो । इहां श्रीमदनमोहनजी रुकिमिनी सों कहें, बेग तू उठि कै न्हाइ कें पूरी करि, सेठ साक लेकें आवत हैं। तब रुकिमिनी ने कही, महाराज! सेठ तो गया कों गये हैं। तब श्रीठाकुरजी ने कही, सेठ गया करि आयो, उनकी गया पूरण भई। तू उठि के पूरी बेगे करि। तब रुकिमिनी न्हाइ के, मैदा घर में सिद्ध हतो, सो पूरी करन लागी। पहर एक रात्रि गई हती। कछुक पूरी बाकी रही, तब सेठ घर पर आई पुकारे। तब गोपालदास ने किवाड़ खोलि दिये। तब सेठ रुकिमिनी सों पूछे, कहा समय है ? तब रुकिमिनी ने कही, पूरी करी हैं, साक नाहीं है। तब सेठजी ने कही, मैं साक लायो हों। तब रुकिमिनी ने कही, बेगे सँवारि देउ, थोरी सी पूरी रही है। तब सेठजी और गोपालदास मिलिकें बेंगन सँवारि दिये। रुकिमिनी ने सामग्री सिद्ध करी। सेठहू न्हाइकें भोग धरे। तब सेठ गोपालदास सों कहे, दस पांच वैष्णव बेगे मिले सो लिवाइ लाउ। तब गोपालदास वैष्णवन कों बुलाइ लाये। इतने समय भयो भोग सराए। सेन आरती करि श्रीठाकुरजी कों पोढ़ाए। अनौसर कराइ वैष्णवन सों मिलिकें महाप्रसाद लिये। पाछें उह मामा कछूक दिन में गया करि आयो। तब कह्यो, तुम पाछे तें क्यों फिरि आये ? तब सेठने कही, मोकों कहा पूछत हो, मेरे घरमें कछु काम हतो। तातें फिरि आयो।

भावप्रकाश–या वार्ता में यह सिद्धांत भयो, जो–सामग्री उत्तम देखिये तामें अपने प्रभु को स्मरण करिये। वाकों बहोत मोल में (खरीदिये), झगरो न करिये। अपने सामर्थ प्रमान लीजिए। और भगवत सेवा रूप यह धर्म के आगे सगरे वैदिक धर्म तुच्छ जानिये। तब श्रीठाकुरजी प्रसन्न होंइ। सेठ की प्रीति अर्थ दूसरे फिरि सेनभोग श्रीठाकुरजी अरोगे। तातें स्नेह है सोई प्रभु प्रसन्नता को कारन है।

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, सेठ पुरुषोत्तमदास की बेटी रुकिमिनी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ए रुकिमिनी लीलामें श्रीस्वामिनीजी की सखी है इंदुलेखा, तिनकी सखीमोदिनी है। श्रीठाकुरजी की सेवा में तत्पर है। मोदिनी जो आनन्द ताकी उपजावनहारी हैं, तातें इनको नाम मोदिनी हैं।

वार्ता–प्रसंग–१– सो एक समें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सरन रुकिमिनी आई। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने वाकों नाम सुनायो। ता पाछें निवेदन करवायो। सो उह रुकिमिनी बड़ी कृपापात्र हती।

सो एक समय श्रीगुसांईजी कासी पधारे हे। सो तहां सूर्यग्रहण भयो। तब श्रीगुसांईजी मणिकर्णिका घाट स्नान कों पधारे। तब रुकिमिनी (हू) श्रीमदनमोहनजी कों स्नान कराइ कें आपु मणिकर्णिका स्नान कों आई, सो श्रीगुसांईजी पधारे जानिके। सो स्नान करिकें वस्त्र पहिरे। तब एक वैष्णव ने श्रीगुसांईजी सो कह्यो, महाराज! सेठ पुरुषोत्तमदास की बेटी गंगास्नान कों आई हैं। तब श्रीगुसांईजी कहे रुकिमिनी! आगे आउ। तब रुकिमिनी आगे आई। तब श्रीगुसांईजी पूछे, तू कितनै दिनन में गंगास्नान कों आई है ? तब रुकिमिनी ने कही, महाराज! चौबीस बरस पाछें गंगा–स्नान कों आई हों। यह रुकिमिनी के वचन सुनिके

श्रीगुंसाईजी को हृदय भरि आयो। जो–ऐसी सेवा में मगन है। जो–गंगास्नान कों अवकास नाहीं है।

भावप्रकाश–तहां यह संदेह होई, जो–चौबीस बरस पहिलें तो गंगाजी स्नान कों आई हती। अब श्रीगुसांईजी पधारे तातें आई। परन्तु गंगास्नान या आग्रह तें रुकिमिनी सेवक भये पाछें आई नहीं। ऐसी सेवा में मगन है।

सो श्रीगुसांईजी रुकिमिनी कों देखि के कहतें, जो–इनसों श्रीठाकुरजी उरिन कबहूं न होंइगे।

भावप्रकाश–ताको अर्थ यह, जैसे रास पंचाध्याई में श्रीठाकुरजी ब्रजभक्तन सों कहे, जो–तिहारो भजन ऐसो है, जो–मैं सदा रिनि रहुँगो। तैसे रुकिमिनी सों श्रीठाकुरजी रहेंगे। या भावसों श्रीगुसांईजी ने कही।

वार्ता–प्रसंग–२–और क्षत्रिय लोगन में बहुबेटी कासी में कार्तिक, माह, वैशाख गंगास्नान करति हैं। सो रुकिमिनी नें सेठ पुरुषोत्तमदास सों कह्यो, जो–तुम कहो तो मैं कार्तिक–स्नान करूं। तब सेठ ने कही, करो, जो–चाहिये सो लेऊ। तब रुकिमिनी ने कही, घृत, खांड मंगाइ देहु, मैंदा तो घर में हैं। तब सेठ ने घी, खांड मंगाइ दियो। सो रुकिमिनी पहर रात्रि पिछली सों उठि नित्य नेगतें अधिक सामग्री करें। सो मंगलातें राजभोग पर्यन्त आरोगावे। पाछे उत्थापन के पहर एक पहले न्हाइ सामग्री करें। सो उत्थापन तें सयन पर्यन्त अरोगावे। ऐसे करत कितनेक दिन बीते। तब सेठ नें रुकिमिनी सों पूछ्यो, जो–कार्तिक न्हाते तो तोकों कबहू देख्यो नाहीं, तू गंगाजी कौन समय न्हाति है ? तब रुकिमिनी कही, मेरे कार्तिक न्हाइवे को कहा काम है। जाकों कछू कामना होइ सो कार्तिक न्हाइ। मैं तो याही भांति न्हात हों। तब सेठ पुरुषोत्तमदास बहुत प्रसन्नए भये।

भावप्रकाश–तहाँ यह संदेह होइ, जो–रुकिमिनी ने कार्तिक न्हाइबे को

नाम लेके सेठ पास सामग्री क्यों लीनी, अरोगाइवे को नाम लेती तो कहा सेठ सामग्री न देते ? तहाँ कहत हैं, जो–जैसे कुमारिकान को मन श्रीठाकुरजी सों लाग्यौ तब न्यारे मनोरथ (कियो), (सो) जसोदाजी सों कह्यो चाहिये। तब जसोदाजी सों कहे, जो–तुम कहो तो हमें कात्यायनी देवी को पूजन करें, मागसिर महिना, श्रीयमुनाजी स्नान। तब श्रीजसोदाजी ने श्रीनंदरायजी सों कहि न्यारी सामग्री पूजन की घी खाँड सब कुमारिकान कों दिये। तब कात्यायनी देवी को मिस करी श्रीयमुनाजी को पूजन कियो। काहेतें ? श्रीठाकुरजी श्रीयमुनाजी एक ही हैं। तातें ''पुरुषोत्तमसहस्रनाम'' में श्रीआचार्यजी कहे हैं, ''कात्यायनी व्रत व्याज सर्वभावाऽऽश्रिताङ्गनः''। कात्यायनी व्रत को व्याज, जो–मिस करि सर्व प्रकार को भाव सगरे अंग में आवेस करि प्रभुको आश्रय कियो, तेसे ही रुकिमिनी ने हू कार्तिक, मागसिर, माह, वैसाख इत्यादिक को नाम ले ब्रजभक्तन के भावपूर्वक सेवा करी। यामें यह जताये, जैसे ब्रजभक्तन के भाव की खबरि काहुकों न परी तैसे रुकिमिनी के भाव की खबरि काहुकों न परी। और की कहा? सेठ पुरुषोत्तमदास हू रुकिमिनी के हृदय के भावकों पहोंचि न सकते, ऐसो अगाध हृदय हतो।

वार्ता–प्रसंग ३– बहुरि एक समय रुकिमिनी की देह असक्त भई। तब रुकिमिनी ने कह्यो, अब देह छूटे तो आछो। जा देह तें भगवान की सेवा न भई सो देह कौन काम की ? पाछें भगवत् इच्छा तें देह छूटी। तब काहू वैष्णव ने श्रीगुसांईजी सों कही, महाराज ! रुकिमिनी ने गंगा पाई। तब श्री गुसांईजी कहे, जो–ऐसे मति कहो। ऐसे कहो, जो–गंगाजी ने रुकिमिनी पाई।

भावप्रकाश– काहेतें, जो–गंगाजी किनारे तो अनेक जीव देह छोड़त हैं। परन्तु गंगाजी कों ऐसी भगवदीय कहाँ मिलै ? या प्रकार श्रीमुखतें कहें। ताको कारन यह, जो–भगवदीय गंगाजी आदि तीरथ कों पवित्र करत हैं। तातें नन्ददासजी नें (हू) पंचाध्याई में गायो है–''गंगादिकन पवित्र करन अवनि पर डोलें''। भगवदीय को प्रागट्य जीवन के उद्धारार्थ ही है। जैसे भगवान् को प्रागट्य तैसेही भगवदीय को प्रागट्य हैं। सो ''पुष्टिप्रवाहमर्यादा'' ग्रंथ में श्रीआचार्यजी भगवदीय को स्वरूप लिखे हैं–

''तस्माज्जीवाः पुष्टिमार्गे भिन्ना एव न संशयः।
भगवद्रूपसेवार्थं तत्सृष्टिर्नान्यथा भवेत्॥१२॥

स्वरूपेणावतारेण लिंगेन च गुणेन च।
तारतम्यं न स्वरूपे देहे वा तत्क्रियासु वा ॥१३॥

पुष्टिमार्गीय जीव यह संसार के जीवन तें भिन्न हैं, यामें संसय नाहीं। भगवान को रूप ही हैं। भगवान की सेवा ही के अर्थ जगत में पुष्टि धर्म प्रगट करिवे के लिये जन्मे हैं। भगवान के स्वरूप में, भगवान के अवतार में, भगवान के जैसे गुन हैं, भगवान की जैसी क्रिया हैं, तैसे ही भगवदीय में लक्षण हैं तातें भगवान में अरु भगवदीय में तारतम्य नाहीं हैं। या प्रकार श्रीगुसांईजी भगवदीय के गुण सब रुकिमिनी में कहै।

सो यह रुकिमिनी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवक ऐसी कृपापात्र भगवदीय ही। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं, सो कहां तांई कहिए।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, सेठ पुरुषोत्तमदास के बेटा गोपालदास, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–सेठ पुरुषोत्तमदास लीला में इन्दुलेखा श्रीस्वामिनीजी की सखी हैं, ताकी सखी गायनकला सो ये हैं। ब्रजभक्तन को विरह संयुक्त गायन तिनकी कला गोपालदास में झलकत है। यह कहि यह जताए, जो–गोपालदास विरह में सदा मगन रहतें।

वार्ता–प्रसंग १–सो गोपालदास सों श्रीमदनमोहनजी सानुभाव हते, सो जो चहिए सो मांगि लेते। ऐसे सदैव कृपा करते। और गोपालदास कीर्तन बहुत करते। सो एक समय होरी के दिनन में गोपालदास कों बहोत विरह भयो। होरी के भाव संयोग रस की विस्मृति ह्वै गई। तब नित्य जैसें ब्रजभक्त वेणुगीत जुगलगीत गावत हैं, ता भावसों दोइ कीर्तन ललना कहिकें गाये।

भावप्रकाश– सो ललना को अर्थ यह, जो–ब्रज की ललना या प्रकार विरह में गान करति हैं।

सो ललना गावत ही श्रीठाकुरजी लीला सहित दरसन

दिये। तब गोपालदास बलिहारी लिये। तातें गाये, जो–
''मदनमोहन के बारनें बलि बलि दास गोपाल।''

वार्ता–प्रसंग २– सो कितनेक दिन पाछे गोपालदास की देह असक्त भई। तब भगवत् नाम को उच्चार करते। तब श्रीमदनमोहनजी आप हुंकारी देते, एसी कृपा करते। ऐसे करत रात्रि कों गोपालदास कों नींद आवती, फेरि चोंकि कें विरह में पुकारते। श्रीमदनमोहनजी ! तब मंदिर सों श्रीठाकुरजी कहते, क्यों पुकारत हो ? मैंतो तेरे निकट हों। तब गोपालदास कहते, महाराज ! आपु क्यों जागत हो ? मेरो तो पुकारिवे को सुभाव पर्‍यो है। तब मदनमोहनजी कहते, मोसों तेरो विरह सह्यो नाहीं जात। तातें तेरो समाधान करत हों। या प्रकार गोपालदास मंदिर को अरु चौक को ताला लगाइ चौखटि पर माथो धरि के, एक वस्त्र बिछाइ विरह में परे रहते। सरीर के सुख की खबरि ही नाहिं रहती। तातें विरह के कीर्तन बहुत गाये हैं।

और श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ सुबोधिनी, निबंध, श्रीगुसांईजी के रहस्य ग्रन्थ सो सब गोपालदास अनोसर में देख्यो करते। समय पर भगवत् सेवा करते। व्यौपार–बनिज लौकिक वैदिक सर्व त्याग करि लीलारस में मगन रहतें। सो श्रीगुसांईजी गोपालदास ऊपर बहोत प्रसन्न रहते। काहेतें, जो–सेठ पुरुषोत्तमदास को परिवार ऐसो ही चाहिये। विरह की दसा अनिर्वचनीय है। तातें गोपालदास की वार्ता को विस्तार नाही किये। सेठ पुरुषोत्तमदास के परिवार सहित वार्ता एक। या प्रकार वैष्णव ग्यारह भये परन्तु परिवार सहित वार्ता एक गिनवे

तें वैष्णव छै भये। वार्ता ॥६॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक रामदासजी सारस्वत ब्राह्मण, पूरव में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं-

भावप्रकाश-सो ए रामदासजी लीला में राधा सहचरी की सखी है। 'प्रेम मंजरी' इनको नाम है। ए कुमारिका के जूथ में है।

जो रामदास के पिता के पास द्रव्य बहोत हतो। परंतु पुत्र नाहीं हतो। सो सूर्य की उपासना बहोत करी। तब सूर्य प्रसन्न होइ के एक पुत्र दियो। सो रामदासजी बरस आठ के भये तब पिता ने विवाह रामदास को कियो। पाछें देह छोड़ी। सो रामदास कों एक मर्यादामार्गीय वैष्णव को सत्संग भयो। तब मर्यादामार्गीय वैष्णव ने कही, कोई तीरथ करे हो ? तब रामदासजी कहे, पिता की देह छूटी, अब घर छोड़ि के कैसे जाँइ ? तब वा मर्यादामार्गीय वैष्णव ने कही, भलो ! गंगासागर तो तिहारे निकट है। यहां तो न्हाइ आवो, चलो मैं संग चलूं। तब रामदास संग चले। तब रामदासजी उह मर्यादामार्गीय के संग गंगासागर जाइ न्हाए। तीन दिन यहां रहे। चौथे दिन तहाँ रहे, न्हाइ के, गंगासागर के किनारे रसोई करन के लिये थोरीसी रेती डारे। तब लालजी को स्वरूप उहाँ ते निकस्यो, सो रामदासजी गंगासागर के जल सों न्हवाइ उह मर्यादामार्गीय वैष्णव सों कह्यो, मोकों भगवत्स्वरूप प्राप्ति भयो। तब वह मर्यादामार्गीय वैष्णव ने कही, तिहारे बड़े भाग्य हैं। तुम इनकी पूजा करियो, परंतु तुम सेवक काहू के हो ? तब रामदासजी बरस सोरह के हते। सो कहे, मैं सेवक तो अब ही नाही भयो। तब मर्यादामार्गीय वैष्णव ने कह्यो, मैं तुमकों सेवक करों, जो-तिहारो मन होय। तब रामदासजी कहै, घर जाइ के स्त्री सहित सेवक होउंगो। तब उह मर्यादामार्गीय वैष्णव ने कह्यों, जो-श्रीवल्लभाचार्यजी, सो (जिनने) दक्षिण में, कासी में, मायावाद खंडन किये हैं, सो पुरूषोत्तमपुरी में पधारे हैं। उनकी सरन तोकों मिलै तो तेरे बड़े भाग्य हैं। तब यह सुनत ही रामदासजी श्रीठाकुरजी कों लेके घर कों वेगे चले। उह मर्यादामार्गीय तो गंगासागर ऊपर रह्यो। सो चौथी मजलि करि अपने गाम के बाहर एक बगीचा है, तहां रामदास मध्याह्न समें आये। सो श्रीआचार्यजी हू पुरूषोत्तमपुरी सों एक दिन पहले के आइ उतरे हते। तब श्रीआचार्यजी रामदास सो कहें, तुमकों गंगासागर में भगवत् स्वरूप कैसा प्राप्त भयो है ? सो हमकों दिखाउ। तेरो नाम रामदास है। तब रामदास चक्रत होइ रहे। जो-मैं अब ही चल्यो आवत हों, काहू कों भगवत् स्वरूप दिखायो नाहीं। तातें ए महापुरुष हैं। तब पास वैष्णव हे, तिनसों पूछे, ये महापुरुष को नाम कहा है ? तब कृष्णदास मेघन ने कही,

श्रीवल्लभाचार्यजी सगरे प्रसिद्ध हैं ! मायावाद खंडन करि भक्तिमार्ग को स्थापन किये हैं। तब रामदास साष्टांग दंडवत् करि विनती किये, महाराज ! मेरे घर पधारिये। तब श्रीआचार्यजी कहे, तुम सारस्वत ब्राह्मण हो; तिहारे क्षत्री सों खानपान को व्यौहार कैसे छूटेगो ? तब रामदासजी कहे, आपु की कृपा तें मेरे द्रव्य बहोत है। मैं तो काहू सों जल को व्यौहार हू न राखोंगो । आपु आज्ञा करोगे तैसें करूंगो । तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होइ के रामदास के घर पधारे, तब स्त्री सहित रामदास कों नाम-समर्पन कराए। श्रीठाकुरजी कों पंचामृत सों स्नान कराइ, पाट बैठारें। श्रीठाकुरजी को नाम नवनीतप्रियजी धरें। पांच रात्रि रामदास के घर रहि के सगरी रीति सेवा की बताए, आपु पृथ्वी परिक्रमा कों पधारें।

वार्ता-प्रसंग-१-सो रामदासजी अष्ट-प्रहर अपरस में रहते जलपान बीड़ा अपरस में लेते।

भावप्रकाश-यह कहि यह जताए, जो-लौकिक काहू सों बोलते नाहीं। ब्यौहार-बनिज कछू न करते, स्त्री-संग हू छोड़े।

या प्रकार भगवत् सेवा करते। श्रीठाकुरजी को नेगहू बहोत हतो। द्रव्य हू बहोत हतो। सो कछुक दिन में द्रव्य थोरो सो आइ रह्यो।

भावप्रकाश-ताको अभिप्राय यह, जो-रंच द्रव्य को अहंकार हतो। सो अन्याश्रय श्रीठाकुरजी कों छुड़ाय दैन्य करनो है। तातें द्रव्य थोरो सो रह्यो।

तब रामदास ने विचार्‌यो, जो-कछू द्रव्य को उपाइ कर्‌यो चहिए। तब पूरब देस में पटवस्त्र बुनावत हैं तिनकों तांती कहत हैं। सो तांतीन कों ब्याज द्रव्य दिये। सो ब्याज बहोत आवन लाग्यो, तब रामदासजी के मन में कछुक हरख भयो। तातें श्रीठाकुरजी आज्ञा किये, जो-तू मोकों तांतीन ऊपर राख्यो?

भावप्रकाश-ताकौ आसय यह, जो-मैं भाव-प्रीति सों रहत हों। सो पहले द्रव्य पर राख्यो। जो-द्रव्य घट्यो तब ब्याज पर राख्यों। जो-तांती सों ब्याज आवै। तामें मेरी सेवा (करी) ब्याज को द्रव्य महाहीन, द्रव्य को मैल। सो तासों (सेवा) करे, सो तापर मैं कैसें रहूँगो ?

तब यह आज्ञा सुनि के रामदास चोंकि परे।

भावप्रकाश–सो यह, जो–हाय–हाय! मैं बुरो काम कियो। अब भगवत् इच्छा होइगी सो सही, परन्तु ऐसो कार्य कब हूँ न करनो।

तब तांतीन पास गये। कहे, मेरो सगरो द्रव्य देहु। तब तांतीन ने कही, तुम कों ब्याज दिये जात हैं तो द्रव्य कहा देय? कहा थोरे दिनन में (ही) मांगन लागे? तब रामदासजी कहे, मोकों लरिका साथ काम पर्‍यो है, लरिका कहे सो करनो।

भावप्रकाश–यह कहि यह जताये, जो–बालक कौ ख्याल विरुद्ध है। कोई खिलोना कों ऊंचे बैठारे, काहू कों नीचे बैठारे। काहू कों फोरि डारे। सोई प्रभु कौ स्वभाव, कर्तुं, अकर्तुं अन्यथा कर्तुंम् सर्व सामर्थ्य। जो–मन में आवे सो करें। यह सिद्धांत कहे। परन्तु तांती जाने कोई बालक होइगो।

सो सगरो द्रव्य भेलो करिके रामदासजी कों दिये। सो घर लाये। सेवा करन लागे। सो कछूक दिन में सगरो द्रव्य उठि गयो।

भावप्रकाश–तब द्रव्य कौ आश्रय तो छूट्यो। परन्तु पहले को गर्व ताकौ बीज है, सो श्रीठाकुरजी अब दूरि करेंगे।

तब रामदासजी एक बनिया के इहां उधारे उचापति करन लागे। तब माथे रिन भयो। बनिया इनकों टोके। तब वा बनिया की उचापति छोड़ि और बनिया के इहां उचापति करन लागे।

तब एक दिन उह बनिया ने बहोत तगादो कर्‍यो और कह्यो, जो–अब मेरे इहां उचापति नाहीं करत तो मेरो दाम चुकाई देहु। तब वाकों बहोत कहि सुनिके विदा किये। परन्तु लज्ञा के मारें बहोत दुःख भयो।

भावप्रकाश–तामें पिछलो अहंकार दोष दूरि भयो।

तब श्रीठाकुरजी रामदास को रूप करि, उह बनिया को करज सब चुकाइ दिये। रुपैया १००) अधिक दै अपने हस्त सों रामदास के जमा लिखि आये। रामदासजी को दुःख सह्यो न गयो।

भावप्रकाश–जो–मेरे लिये इन इतनो दुख पायो है यातें श्रीठाकुरजी करज चुकाये। परन्तु सौ रुपैया अधिक धरे ताको कारन यह, जो–अधिक धरे तें कदाचित द्रव्य संबंधी प्रसन्नता गर्व होइ तो पुष्टिमार्गीय फल न होय, दासभाव जात रहै। श्रीठाकुरजी करज चुकाये। रामदास बैठे रहे। तातें थोरेसे रुपैया १००) धरें। यह परीक्षा अर्थ। और कछू दूसरे बनिया को करज हू भयो है। कछू खरच के लिये।

पाछें एक दिन रामदासजी कों वैष्णव बुलावन कों आये। तिनके संग रामदासजी चलें। सो उह बनिया की हाट आगे होइकें निकसे। सो उह बनिया की नजर बचाइ आनाकानी देइ के निकसे, जो–यह मांगेगो। सो बनिया ने रामदासजी कों देखे। और विचार्यो, जो–ये नजर बचाइ कें यातें आगे निकसे, जो–मैं इनसों तगादो बहोत कियो है। तब बनिया रामदासजी के आगे आइ पाँवन पर्यो। कह्यो, मेरे अभाग्य, जो–तुम उचापति अपनी हाट सों नाही करत। परन्तु सौ रुपैया अधिक धरें हैं सो तो ले जाउ। तब रामदासजी ने कह्यो, मैं पाछें आउंगो। अब काम जात हों। तब बनिया हाट पर आयो। रामदासजी नें अपने मनमें विचार कियो, जो–मैं तो याकों कछु द्रव्य दियो नाहीं। तातें मति कहूं श्रीठाकुरजी याकों दिये होई।

सो वैष्णव के इहां जाइ कछू छुवा–छाई को काम हतो सो बताइ पाछे रामदासजी उह बनिया के हाट पर आइ कहें, अपनो लेखो निकार। तब बनिया ने कही, तुम लेखो चुकाइ रुपैया १००) अधिक धरि अपने हाथ सों लिखि गये हो, फेरि देखि

लेहु। सो बही में श्राठाकुरजी के हस्ताक्षर देखे, तब चुप करि रहै। तब घर में आइ बिचारे, जो–अब घर में रहनो नाहीं। चाकरी करूंगो।

भावप्रकाश– ताको कारन यह, जो–घरमें रहों तो श्रीठाकुरजी कों श्रम होय, द्रव्य खानो परें, स्त्री की प्रीति साधारण है। तातें यह खायगी।

तब एक घोरा लिये। हथियार बांधि चाकरि करन प्रयाग में आये। तब जलपान बीड़ा, बिना अपरस में लेन लागे।

भावप्रकाश–ताको कारन यह, जो–कछु अपरस को अहंकार हतो, जो–और सों ऐसी अपरस नाहीं बनत सोउ श्रीठाकुरजी छुड़ाई अहंकार मिटाये। और यह जताये, जो–ऐसी अपरस कौन कामकी, जामें श्रीठाकुरजी कों श्रम करनो परै।

पाछें एक दिन रामदासजी प्रयाग तें अड़ेल में श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के दरसन करन आये। सो पांचो कपरा पहरि हथियार बांधि दंडवत् किये। तब श्रीआचार्यजी रामदास सों देखिकें कहे, धन्य है। तब वैष्णव पास बैठे है सो कहन लागे, महाराज! अब याकों धन्य क्यों कहत हो? याकी अपरस तो छूटी, सिपाइन में रहत है, हथियार बांधत है? तब श्रीआचार्यजी कहे, यह धन्य है। श्रीठाकुरजी कों श्रम नाहीं करावत है। तातें या समान धीरज काहू कों नाहीं, यह श्रीमुख तें कहे।

भावप्रकाश–ताकों कारन यह, जो–कहा बहोत अपरस सों कार्य होत हैं? पुष्टिमार्गीय धर्म बहोत कठिन है। द्रव्य सगरो गयो, रिन माथे भयो, परन्तु धीरज नाहीं छुट्यो। सो कहा? जो–मन श्रीठाकुरजी में रह्यो। हृदय के भीतर चिंता रूप कष्ट नाहीं भयो। पाछें श्रीठाकुरजी रिन चुकाये। सो मनमें प्रसन्न न भयो। चाकरी को कार्य कियो। अब दैन्यता याकों भई है, मन श्रीठाकुरजी में है। या आसयतें श्रीआचार्यजी धन्य कहे।

वार्ता–प्रसंग–२–और श्रीआचार्यजी के द्वार आगे एक खाड़ा हतो। सो आपु न्हाइवे कों पधारे, तब कहे, यह खाड़ा

अजहू भर्यो नाहीं है ? यह कहिकें आपतो श्रीयमुनाजी-स्नान कों पधारे, सगरे वैष्णव खाड़ा भरन लागे। तब रामदासजी एक बड़ो टोकरा ले जहां तांई श्रीआचार्यजी न्हाई के पधारें तहां तांई खाड़ा पूरि बराबर धरति करि दिये। तब श्रीआचार्यजी आपु रामदास कों देखे खाड़ा भरते, सगरे कपड़े धूरि सों भरे देखिके फेरि श्रीआचार्यजी प्रसन्न होइ के कहे, रामदास धन्य है।

भावप्रकाश–सो यातें, जो–और वैष्णव आछे कपरा उतारि एक धोती पहरि खाड़ा भरें। रामदास श्रीआचार्यजी की आज्ञा सुनि के परम भाग्य सेवा मानि खाडा भर्यो, सिपाइपने की लाज सरम सब छोड़ी। ता पर श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न भये। जो–या प्रकार भगवत् सेवा में प्रतिष्ठा मन में न आवे, छोटी मोटी हीन सेवा भाग्य मानि के करनो। यह सिद्धान्त जताए।

फेरि रामदासजी बरस एक में द्रव्य बहोत कमाइ घर आये। पाछे भली भांति सों सेवा करन लागे।

भावप्रकाश–सो ठाकुरजी कों धीरज देखनो हतो। पाछे द्रव्य की कहा है ? जो चाहिए सो सब सिद्ध है।

वार्ता–प्रसंग ३–पाछे एक दिन स्त्रीने कही, तुम दूसरो ब्याह करो तो संतति होइ।

भावप्रकाश–ताको कारन यह, जो–स्त्री कों रामदास के हृदय के अभिप्राय की खबरि नाहीं। तातें जान्यो, जो–मोसों राजी नहीं हैं, तो दूसरो ब्याह करो। ब्याह करें एक पुत्र होइ।

तब रामदास ने कही, जो–मोकों पुत्र की इच्छा नाहीं है। तब स्त्री ने कही, मेरे एक पुत्र की इच्छा है। तब रामदास ने कही, जो–तिहारे इच्छा है तो श्रीनवनीतप्रियजी की सेवा बालभाव सों करि। जैसे खानपान सों लडावत है। तिहारो मनोरथ पूरन होइगो। पाछे कछुक दिनन में पुत्र भयो।

भावप्रकाश–सो रामदासजी ने तो भावरूप अलौकिक बात कही, जो–

श्रीठाकुरजी को बालभाव सों लड़ावोगी तो एई बालक होइगें। जसोदाजी के सौभाग्य कों पावोगी। सो तो स्त्री उत्तम अधिकारी होइ तो समुझे। तातें पुत्र की कामना सहित श्रीठाकुरजी की बालभाव सों सेवा करी । सो श्रीठाकुरजी ने पुत्र दियो । परन्तु रामदासजी के फल कों नाहिं पायो रामदास कों कबहू लौकिक कामना में मन न भयो। तातें श्रीआचार्यजी प्रसन्न रहते। तातें रामदास के भाव की कहां तांई कहिये।

सो रामदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते । सो इनकी वार्ता को पार नहीं, सो कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गदाधरदास कपिल सारस्वत ब्राह्मन, कड़ा में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहते हैं–

भावप्रकाश–सो गदाधरदास मकरस्नान कों तीर्थराज प्रयाग बरस के बरस जाते । सो एक समय गदाधरदास प्रयाग में हते । तहां श्रीआचार्यजी पधारे । सो पंडित सब श्रीआचार्यजी सों चर्चा करन आवते । सो गदाधरदास को काका प्रयाग रहतो, तहां गदाधरदास उतरते। सो गदाधरदास को काका पण्डित हतो, परन्तु सैव हतो। सो काका ने गदाधरदास सों कही, श्रीवल्लभाचार्यजी पधारे हैं। तिनसों कछू सन्देह पूछनो है, सो मैं जात हों। तब गदाधरदास कहे, जो–मैं हूँ चलूंगो, सो दोऊ आये। तब गदाधरदास के काका ने श्रीआचार्यजी सों पूछ्यो, जो–महाराज ! ठाकुर तो एक हैं परन्तु वैष्णव सम्प्रदाय में न्यारे–न्यारे क्यों मानत हैं ? कोई कृष्ण कों , कोई राम कों, कोई नृसिंह, कोई नारायण आदि, तामें निश्चय कौन ठाकुर हैं ? तब श्रीआचार्यजी कहे, जैसे चक्रवर्ती राजा को राज तो सगरी पृथ्वी पर, और राजा देस–देस के गाँव–गाँव के, सोऊ राजा कहावें, परन्तु चक्रवर्ती के आज्ञाकारी। तैसे ही पूर्णपुरुषोत्तम श्रीकृष्ण, सो सर्वोपरि। और अवतार अंसकला करिके होइ, सब श्रीकृष्ण के आज्ञाकारी। ठाकुर सब कों कहिए। तब गदाधरदास को काका चुप करि रह्यो । गदाधरदास दैवी जीव तिनके मन में सिद्धांत बैठि गयो, जो–श्रीआचार्यजी की सरन जइए तो श्रीकृष्ण की प्राप्ति होइगी। तब गदाधरदास ने श्रीआचार्यजी कों दण्डवत प्रणाम करि बिनती किये । महाराज ! सरन लीजिए । मै संसार में बहोत भटक्यो। तब श्रीआचार्यजी ने कही जो–तुम अपने काका कों तो पूछो। इनको चित्त दुख पावै तो सेवक काहे कों होउ ? तब गदाधरदास के काका ने कही, महाराज ! हमारे तो गायत्री मंत्र सों काम है, और तो हम जानत नाहीं, गदाधरदास की ए जाने।

ना हम हां कहें, ना हम ना कहें। तब गदाधरदास ने कही, अब मैं आपको दास भयो अब संसारी जीव सों व्यौहार मेरे नाहीं है। तातें मैं आपु के सरन आयो हों, कृपा करिके सरन लीजिये। और यह बहिर्मुख कब कहेगो, जो–तू सेवक होउ। या प्रकार गदाधरदास के बचन सुनिके, गदाधरदास को काका उहां तें उठि बाहर आइ ठाड़ो भयो।

तब श्रीआचार्यजी गदाधरदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। कहे, बिना सेवक ऐसी टेक है तो सेवक भये भलो वैष्णव होइगो। पाछे श्रीआचार्यजी कहे, जा, त्रिवेणी न्हाइ आव, तब गदाधरदास न्हाइ के अपरस में आये। तब श्रीआचार्यजी ने नाम सुनाइ ब्रह्मसंबंध करायो। पाछे गदाधरदास ने विनती कीनी, महाराज! अब मोकों कहा कर्तव्य है? सो आज्ञा दीजे। तब गदाधरदास सों श्रीआचार्यजी कहे, जो–तुम भगवत्सेवा करो। स्वरूप कहूँ तें लावो। तब गदाधरदास ने विचारयो, जो–एक स्वरूप ये मेरे काका के घर है, सो कैसे मिले? मैं तो या बहिर्मुख सों बोलत नाही हों। यह बिचार करत बाहर निकसे, माला तिलक करिके। सो गदाधरदास के काका ने पूछी, जो–सेवक भयो सो भली करी, परन्तु मेरे घर तो चलो। तब गदाधरदास ने कही, मोकों तिहारे घर में ठाकुर हैं सो देउ तो मैं चलो। तब उन कही, जो–ले जाउ। मेरे ठाकुर सों कहा काम है? तब गदाधरदास काका के संग वाके घर गये, श्रीठाकुरजी मांगे। तब उन कह्यो खान–पान तो करो, दुपहर भयो है, श्रीठाकुरजी पाछे ले जैयो। तब गदाधरदास ने कही अब हमारे तिहारे जल–ब्यौहार नाहीं। श्रीठाकुरजी देउ, फेरि तुम श्रीठाकुरजी सों काम न राखो तो देउ। तब काका ने कही, हम सैवमार्गीय हैं। हम सों ठाकुर सों कहा? हम तो महादेवजी कों जानें तातें बेगे ले जाउ।

श्रीठाकुरजी गदाधरदास के काका को मन याते फरे जो भगवदीय जाको घर छोड़े तहाँ श्रीठाकुरजी हू न रहें। यातें बेगि दिये। तब श्रीआचार्यजी पञ्चामृत स्नान कराइ श्रीमदनमोहनजी नाम धरयो। गौर स्वरूप हैं। तब तीन दिन गदाधरदास श्रीआचार्यजी पास रहे। सेवा की सगरी रीति सीखी। सो श्रीआचार्यजी ''भक्तिवर्द्धिनी'' ग्रंथ किये, ताको व्याख्यान किये। तामें यह कहे, जो–

''अव्यावृत्तो भजेत्कृष्णं पूजया श्रवणादिभिः।
व्यावृत्तोऽपि हरौ चित्तं श्रवणादो यतेत्सदा॥''

तामें मुख्य सेवा अव्यावृत होय करे, यह कहे। तासों उतरती व्यावृत्ति कहे। हरि में मन राखे। यह सुनत ही गदाधरदास ने संकल्प किये, जो–व्यावृत्ति कछू न करनी। पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों विदा होइ ओरछा वे अपने घर आये। सो इनको ब्याह तो भयो न हतो, माँ बाप हू न हते। इनहू की अवस्था बरस तीस की

हती। सगे संबंधीन सों कहे, अब तुम और घर में जाइ रहौ, मैं वैष्णव भयो। मेरे तिहारे जल-ब्यौहार नाहीं। तब और घर में जाइ रहे। गदाधरदास सगरो घर खासा करि सेवा श्रीमदनमोहनजी की प्रीति सों करन लागे।

वार्ता-प्रसंग १- सो गदाधरदास कों श्रीमदनमोहनजी सानुभावता जतावते। आगे जजमान के घर जाते, जो-चाहिए सो ले आवते। वैष्णव भये पाछें अव्यावृत्त से रहते। सो सब ठौर को जानो छोड़ दियो। जो आवे तामें निर्वाह करें। चित्त मानसी सेवा फलरूप में इनको लग्यो। ''चेतस्तत्प्रवणं सेवा'' या भाव में मगन रहें। तनुजा, वित्तजा जो बने सो करें। बहोत संग्रह करे नाहीं। जो आवे ताकी सामग्री करि श्रीमदनमोहनजी कों भोग धरें। वैष्णव कों महाप्रसाद लिवाइ देते। यह प्रकार त्यागपूर्वक रहते।

सो एक दिन भगवद् इच्छा तें जजमान के घर तें कछु आयो नाहीं।

भावप्रकाश-ताको कारन यह, जो-श्रीठाकुरजी ने इनकी परीक्षा लिये। सो अब्यावृत को संकल्प तो होनो सहज ही है, परन्तु न मिले तब धीरज रहे यह महा कठिन है। ताते कछू न आयो।

तब मंगला में जल की लोटी भोग धरे। सिंगार में, राजभोग में जल ही धरे। पाछे उत्थापन में सेन पर्यन्त जल ही धरे। परन्तु उधारो न लिये।

भावप्रकाश-काहे तें, यह ब्यौहार हैं। और उधारो लेय जहाँ ताँई वाको द्रव्य न देय तहाँ ताँई वाकी सेवा है। इनकी नाहीं। और काल को प्रमाण नाहीं। उधारो लियो देह छूटि जाय तो रिन माथे रहे, जन्म लेनो होइ। यह शास्त्र में कहे हैं। परन्तु इनके तो काल को डर नाहीं। अव्यावृत श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ग्रन्थ को आश्रय किये।

ऐसे करत रात्रि प्रहर डेढ़ गइ, सोइ रहे ! परन्तु छाती में आगि सी लागी, जो-आजु मेरे ठाकुर भूखे रहे।

भावप्रकाश–याको हेतु यह, जो–जदपि ये जल धरिकें मानसी में सब आरोगाये हैं, श्रीठाकुरजी अरोगे हैं। काहेतें ? येहू श्रीराधा सहचरी की सखी हैं। कलकंठी इनको नाम है। कुमारिका के जूथ में हैं। इनकों श्रीयमुनाजी को आश्रय है। राधा सहचरी के गान समय ये सुर भरत हैं। इनहूँ को कंठ बहोत सुन्दर है। तातें जमुनाजी के भाव सों सगरे भोग में जल ही धरे। तातें सगरी सामग्री भाव करि सिद्ध हैं। परन्तु या सामग्री में वैष्णव को समाधान नाहीं। सगरी इन्द्रिय की सेवा नाहीं, सामग्री हाथसों धरे और ब्रजभक्तन की मानसी हू करे। और श्रीठाकुरजी को न्यारो मनोरथ हू करे। यह पुष्टिमार्ग की रीति है, जो–सामग्री हाथ सों भोग धरन में प्रीति न होइ तो ब्रजभक्तन के भाव हू छूटि जाँइ। ज्ञान मार्ग की रीति है जाइ। ''पत्रं, पुष्पं, फलं, तोयं, यो मे भक्त्या प्रयच्छति'' या वाक्य में बोध अर्थ है। मर्यादामार्गीय के भाव में पत्र, पुष्प, फल, जल, जैसो बन्यो सो धरयो। सामग्री को आग्रह नाहीं है। और गीता में कहे, जो–भक्त धरें। यामें यह अर्थ, जो–भक्त होई सो चारों वस्तु विवेक पूर्वक धरें। स्नेही होय ताको भक्त कहिये। तामें पत्र, जो–पान तथा पौई के पात, अरई के पात तिनके पत्रोडा करि स्नेह सों सँवारि धरें। ज्ञानी कों स्नेह नाहीं, सो मीठे करई सगरे पत्ता धरें। और फूल में गुलाब के फूल कों खाँड में सामग्री करि प्रेम सों अरोगावे। फल सुन्दर मीठे करुवे चाखि के धरें। सो भक्त होय तो चाखै। जदपि मर्यादा में भीलनी सबरी हती, सो बन के फल कों खाई के धरे, जो फल जहरी कोई कीरा को खायो होइ तो पहले मोकूँ दुःख होइ। परन्तु श्रीरामचंद्रजी कों मति होइ। तब श्रीरामचंद्रजी सराहना किये, जो–ऐसे फल दसरथ पिता के घर और जनक विदेही के इहां ब्याह में हू नाहीं खाये। सो वहां ऐसी प्रीति नाहीं। भक्त सँवारि के धरे, ज्ञानी जैसे मिलें तैसे धरें। तातें गदाधरदास तो पुष्टिमार्गीय लीला संबंधी हैं, जो–भावपूर्वक जल धरें। परन्तु स्नेही हैं तातें छाती में आगि लागी, जो–आजु कछू न आयो। सो छाती में विरह रूप आगि लागी, जो–आजु कछू नाही धरयो, जो–वैष्णव के लिवाये बिना श्रीठाकुरजी भूखे ही हैं। या प्रकार को गूढ़भाव जिनके हृदय को है। और श्रीठाकुरजी कों विरह को दान करनो है। तातें कछू न आयो। सो छाती में विरह रूपी अग्नि लागी। मुख्य अधिकारी भये। जिनकों विरह नाहीं उनकों पुष्टिमार्ग को फल नाहीं। या प्रकार डेढ़ प्रहर रात्र गई।

सो तब एक जजमान आयो। गदाधरदास कों पुकारि, किवाड़ खोलाय के रुपैया ४) और कछू वस्त्रादिक दियो। और कह्यो, जो–आजु मेरे सुद्ध श्राद्ध हतो ताकी दक्षिणा लेहु। यह कहि उह घर गयो। तब गदाधरदास कों हृदय में विरह बहोत,

जो-बेगिही कछू धरिये ; यह भावसों एक रुपैया ले सामग्री लेनकों बजार में बेगे गये । सो एक हलावाई जलेबी करत हतो । सो देखत ही वासों पूछी, यामेंते काहूकों दीनो तो नाहीं ? तब उन कही, अब करी है, बेची नाहीं। तब रुपैया दै, कहे, बेगि तोल दें। सो लेकै आइ घरमें न्हाइ, श्रीठाकुरजी कों भोग धरी । पाछें श्रीठाकुरजी कों पोढ़ाइ वैष्णवन कों बुलाइ महाप्रसाद सब लिवाइ दियो । आपु भूखेई सोइ रहै । परन्तु मनमें सुख पाये, जो-श्रीठाकुरजी आरोगे । और वैष्णवन को नागो न पर्‍यो । पाछें तीन रुपैया को सीधो सामान लाइ सामग्री करि भोग धरि पाछें श्रीठाकुरजी कों पोढाइ वैष्णवन कों बुलाइ, महाप्रसाद की पातरि धरी। तब वैष्णव महाप्रसाद लेत बोले, जो-गदाधरदास ! रात्रि कों तुम महाप्रसाद दिये सो यह सामग्री तो हमहू करत हैं, परन्तु ऐसो स्वाद नाहीं होत। सो ऐसी क्रिया हमहू कों बतावो । कैसे करी हती ? तब गदाधरदास ने कही, काल्हि मेरे घर कछू न हतो। सो रात्रिकों रुपैया चारि आये । एक रुपैया की जलेबी बजार सों लायो । या प्रकार सब कहे । तब सगरे वैष्णव गदाधरदास के ऊपर प्रसन्न भये ।

भावप्रकाश-ताको हेतु यह है, जो-श्रीठाकुरजी श्रीआचार्यजी इनके ऊपर प्रसन्न हैं। सो सगरे वैष्णवन के हृदय में हैं। बुद्धि के प्रेरक श्रीकृष्ण हैं तातें निष्कपट सुद्ध भाव वारे वैष्णव पर कोई अप्रसन्न न होय। या प्रकार वैष्णव प्रसन्न भये। तब गदाधरदास ने एक कीर्तन गायो-

''गोविंद-पद-पल्लव सिर पर बिराजमान,
तिनको कहा कहि आवै सुखको प्रमान ।
ब्रज-दिनेस देस बसत कालानल हू न त्रसत,
बिलसत मन हुलसत करि लीला रस पान ।
भींजे नित नैन रहत, हरि के गुनगान कहत,
जानत नहिं त्रिविध ताप मानत नहिं आन।

तिनके मुख-कमल दरस, पावन पदरेंनु परस,
अधम जन ''गदाधर'' से पावत सन्मान ।"

जो-मैं अधम जन हों, परन्तु तुम भगवदीय हो। सो मो सारिखे को सन्मान करत हो। या प्रकार वैष्णवन में और श्रीठाकुरजी में दृढ़ प्रीति एक रस हती। तातें श्रीठाकुरजी और वैष्णव इनके बस हते। ऐसे गदाधरदास उत्तम भगवदीय हे।

वार्ता-प्रसंग २-और एक दिन गदाधरदास ने वैष्णव महाप्रसाद कों बुलाए हते। सगरी सामग्री करी, परन्तु साग कछु न हतो। तब गदाधरदास ने वैष्णव बैठे हते, तिनसों कही-ऐसो कोई वैष्णव है, जो-साग लै आवे ! सो माधोदास, बैनीदास के भाई जिनने वेस्या घर में राखी हती सो बोले, कहो तो मैं ले आऊं।

भावप्रकाश-ताको आसय यह, जो-मैं वेस्या राखी है, मेरो लायो लेहुगे

तब गदाधर कहे, ले आवो।

भावप्रकाश-सो गदाधरदास के हृदय में दोषदृष्टि नाहीं है। श्रीआचार्यजी को संबंध जानत हैं। तातें कहे ले आवो।

तब बथुवा की भाजी ले आये। तब गदाधरदास प्रसन्न ह्वै कै कहे, बेगे सँवारी देउ।

भावप्रकाश-यामें यह जताए, जो-प्रीति सों लाये, तब सँबारिवे की मुख्य सेवा हू दिये। तामें जताए, जो-सेवा प्रीति सों करै। कैसे हू होउ ताके हाथ को श्रीठाकुरजी प्रीति सों अंगीकार करें।

पाछें सामग्री सिद्ध करि श्रीठाकुरजी कों भोग धरें। समय भये भोग सराइ अनोसर करि सगरे वैष्णवन कों महाप्रसाद की पातरि धरें। सो सब वैष्णव महाप्रसाद लेत साग बखान्यो। तब गदाधरदास परोसत माधवदास पास आये, तब प्रसन्न होइकै माधोदास सों कहे, जो-तिहारो लायो साग श्रीठाकुरजी आरोगे। तातें तोकों हरि-भक्ति दृढ़ होऊ। यह आसीर्वाद दिये।

भावप्रकाश–यामें यह जताए, जो–रंच सेवा साग की माधोदास दीनता सो किये। तातें श्रीठाकुरजी प्रीतिसों आरोगे। यह तब जानिए, जो–वैष्णव प्रसाद लेइ सराहना करें। तब दोऊ सेवा सिद्ध होय और भगवदीय समान उदार कोऊ नाहीं, जो–रञ्च साग की सेवा किये जनम जनम को संसार मिटाइ हरिभक्त करि दिये। ऐसे गदाधरदास भगवदीय हे।

वार्ता–प्रसंग ३–और एक दिन गांव के बाहिर बनजारा आइ उतर्‍यो। ताकों बैल चहिए। सो गाम में आइ दस–पंद्रह गदाधरदास के सगे ब्राह्मन बैठे हते। सो गदाधरदास की ईरष्या करते, जो–भगत भयो है। सो बनजारे ने उन ब्राह्मणन सों पूछ्यो, हमकों बैल मोल कों लेने सो कहां मिलेंगे ? तब उन ब्राह्मणन ने कही, गदाधर भगत है, उनके यहां जितने चहिए तितने लेहु। परन्तु यों तो वे न देइंगे। उनके पास रुपैया दे आवो। कहियो, हमकों जहां सों चाहो तहां सों मंगवाइ देहु। पाछे दूसरे दिन जइयो। तब बैल तुमकों मिलेंगे। तब बनजारा १००) रुपैया लै गदाधरदास के पास गयो। कह्यो, हमकों बैल लेने हैं। सो तुम मँगाइ देहु। तब गदाधरदास ने कही, बाबा ! हमारे बैल कहां ? गांव में पूछो, हम तो जानत नाहीं। तब बनजारे ने १००) रुपैया गदाधरदास के आगे धरि दिये। उठि चल्यो। कह्यो, काल्हि बैल लेन आऊंगो। मोसों गांव के लोगन ने या भांति बताए हैं। तब गदाधरदास ने जानी, जो–हमारी जातिके ने याकों बहकायो होइगो। तब गदाधरदास ने कही, काल्हि मध्याह्न समे तो न देखोगे। तौउ बनजारा प्रसन्न होइके कहै, जो–आछो। यह रुपैया राखो। पाछें गदाधरदास १००) रुपैया की सामग्री मँगाये। सगरे पाक सिद्ध करि दूसरे दिन भोग धरे। फेरि सगरे वैष्णवन कों परसत हते मध्याह्न समे, तब

बनजारा आयो। तब गदाधरदास ने कही, भले समय आयो। ए सब ठाकुरजी के बैल हैं। यामें बछरा हू हैं, तरुन हू हैं। जैसे चहिये तैसे देखि लेहु।

भावप्रकाश– याको आसय यह, बैल धर्म को रूप है। सो गदाधरदास कहे, आजुके काल में धर्म इन वैष्णवन में हैं। सो धर्म लेनो होइ तो देखि ले। बैलकों यह, जो–जा कारज में लगावै सोई करे। नाहीं न करे। जो–खबावै सोई खावै। संतोष करे तैसे ये वैष्णव हैं। जो–जा कार्य में चलत हैं सो प्राप्त होय, तामें संतोष हैं।

सो बनजारे की सामग्री श्रीठाकुरजी अरोगे। वैष्णव महाप्रसाद लिये। और गदाधरदास प्रसन्न होइके कहें। सो उह बनजारे कों ज्ञान होइ गयो। जो–ए तो भगवद्भक्त हैं। गांव के लोगन ने मसखरी करी, लराइबे को उपाय कर्‍यो हतो। परन्तु मेरे बड़े भाग्य हैं, जो–या मिष मो सारिखे पापी की सत्ता अंगीकार किये। अब मैं इनकी सरन जाऊंगो। कृतार्थ होऊं। तब साष्टांग दंडवत् गदाधरदास कों करि कह्यो, मैं रात्रि–दिन संसार समुद्र में भटकत हों। अब तिहारी सरन आयो हूँ। मेरो उद्धार करो। तब गदाधरदास नें कही, हम तो सेवक करत नाहीं। परन्तु ए सगरे वैष्णव और हम श्रीआचार्यजी के सेवक हैं, सो अड़ेल में बिराजत हैं, तिनके सेवक होउ। पाछें गदाधरदास ने दैवी जीव जानि वाकों महाप्रसाद दिये। तब बनजारा अड़ेल आइ श्रीआचार्यजी पास नाम पाइ कृतार्थ भयो।

भावप्रकाश–यामें यह जताए, जो–भगवदीय के एक क्षन के संग तें, जो–उत्तम जीव होय तो वाको कार्य ह्वै जाइ। गदाधरदास ऐसे भगवदीय हे। इनके हृदय को अगाध भाव है, सो कैसे कह्यो जाय।

सो वे गदाधरदासजी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं, सो

कहां तांई कहिये। वार्ता ॥८॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, बेनीदास माधवदास, दोऊ भाई क्षत्री हते, कड़ा में रहते, तिनक वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–वेनीप्रसाद वृषभानजी के गाड़ा को बैल है। सो ऋषभ सखा कों सींग मार्‍यो। सो तीन दिन ऋषभ सखा दुख पायो। ताके शाप तें गिरे भूमि पर। और माधवदास रतनप्रभा ललिताजी की सखी है। सो इहां भगवद् इच्छा तें दोउ भाई भये। परन्तु मन मिले नाहीं। सो माधोदास ने वेस्या घर में राखी हती, सो वैष्णव सब निंदा करते। परन्तु उह वैष्णव दैवी हती। चंद्रावली की सखी चन्द्रलता लीला में इनकौ नाम हतो। सो अलौकिक संबंध बिना दैवी जीव की दृढ़ प्रीति बँधे नाहीं।

वार्ता–प्रसंग १– पाछें एक समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु कड़ा में पधारे। तब सगरे वैष्णव दरसन कों आये। पाछें माधवदास सुने। सोऊ आय श्रीआचार्यजी कों दंडवत् कियो। तब सगरे वैष्णव दरशन कों आये। तब सगरे वैष्णवन नें श्रीआचार्यजी सों कही, महाराज ! माधवदास ने वेस्या राखी है। तब श्रीआचार्यजी पूछे, क्यों माधवदास ! वेस्या राखी है ? तब माधवदास ने कही, महाराज ! मेरो मन वाके ऊपर आसक्त है। तातें राखी है। या प्रकार तीन बेर श्रीआचार्यजी पूछे। तीनों बेर माधवदास ने कही, महाराज ! मेरो मन वा पर आसक्त है, तातें राखी है। तब श्रीआचार्यजी चुप ह्वै रहे।

भावप्रकाश–याको अभिप्राय यह, जो–प्रथम वैष्णव निंदा करते, सोउ माधोदास कों वेस्या को संग छुड़ावन कों। जो–निंदा तें लाज पाइ छोड़ेंगे, यातें करते। अपने भाई जानिकें, ईरष्या द्वेष भाव नाहीं हतो। जो–द्वेष होइ तो सगरेन कों बाधक होई। पाछें श्रीआचार्यजी सों वैष्णवन ने कही। सोउ माधोदास के लिये, जो–श्रीआचार्यजी के कहे तें छूटै तो आछो। लौकिक में वैष्णव की निंदा होत हैं सो छूटै। सो श्रीआचार्यजी सर्व लीला को प्रकार जानत हैं। तातें कहैं, क्यों रे माधवदास ! तू वेस्या राखे है ? यह कही। यह कहते, जो–वेस्या को संग छोड़ दे तोकों बाधक है।

तो माधवदास छोडि देते। आपु बड़ाई करी। क्योरे माधवदास! वेस्या सरीखी हीन कों अंगीकार करि राखे? संसार में बही जात हती! लौकिक सोंउ न डरप्यो? तब माधवदास कहे, मन वा पर आसक्त ह्वै गयो। जो-याकों कहूँ ठिकानो नाहीं है ताते संसार की लाज सरम वैष्णव की हू का'नि छोड़ि राखी है। सो मैं नाहीं राखी, मनके प्रेरक आपु हो। आपही वा पर आसक्त कियो, सो आप ही राखी है। या प्रकार तीन बार कहे। सो यातें जो-साँची प्रीति होइगी (तो) एक दृढ़ बचन साँचे निकसेंगे। सो साँचे ही तीन बार माधवदास ने कही। तब आपु प्रसन्न भये। जो ऐसे टेक के वैष्णव दुर्लभ हैं।

तब सगरे वैष्णव श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कहे, महाराज! अब तांई तो आपुकी का'नि हती। अब आपु सों हू कहि छूट्यो। आपु वासों कछू कहे नाहीं?

भावप्रकाश-यह कहे यातें, जो-वैष्णवन कों बड़ी चिंता भई, जो-आपु आगे कहि दियो। अब याको कैसे कल्यान होइगो? यह चिंता करि फेरि वैष्णव ने कही, आपु यासों कछू कहे नाहीं? सो कही, यह जताये।

तब श्रीआचार्यजी वैष्णवन को समाधान कियो। तुम चिंता मति करो। याको मन वा पर आसक्त है, सो श्रीठाकुरजीकों फेरत कितनीक बार लगेगी? और गदाधरदास ने याकों आसीर्वाद दियो है, जो - हरि - भक्ति दृढ़ होइगी सोई यह माधवदास है।

भावप्रकाश-यह कहि यह जताये, जो-याकी चिन्ता तुम मति करो। यह संसार में परिवेवारो नाहीं है। वेस्या आदि और हू कों संसार तें काढ़न वारो है। गदाधरदास ने दृढ़ भक्ति दीनी सो मैंने दीनी। अब, जो-मैं हठ करिके छुड़ाऊँ तो गदाधरदास भगवदीय की कृपा कैसें जानी जाय? यातें गदाधरदास ने हरि-भक्ति दीनी सो दृढ़ होइगी। तुम याकी चिंता मति करो।

तब सब वैष्णव प्रसन्न होइके चुप ह्वै रहे। ता पाछे माधवदास को मन फिर्‍यो। सो वेस्या दूरि कीनी। वैष्णव की रीति मर्यादा में चलन लागे। भले वैष्णव भये।

भावप्रकाश-यामें यह जताये, जो-वेस्या कों दूरि कीनी सो यह अर्थ वेस्या कों बताए, जो-तू श्रीगुसांईजी की सखी है। जब श्रीगुसांईजी पधारेंगे तब तेरो कार्य

होइगो। तातें अब हमसों तोसों न बने। यह कहि के काढ़े। तब वह वेस्या बिना घी की चुपरी रुखी अँगाखरी खाइके निर्वाह पन्द्रह वर्ष लौं कियो। पाछें श्रीगुसांईजी कड़ा में पधारे, तब वेस्या ने सुनी तब श्रीगुसांईजी सों आइ विनती करी, महाराज ! मेरो अङ्गीकार करिए। तब श्रीगुसांईजी कहे, हम वेस्यो कों सेवक नाहीं करत। तब घर आइ कें परि रही। अन्न, जल छोड़ दियो। सो आठ दिन श्रीगुसांईजी कड़ा में रहे। दूरि तें वेस्या दरसन करि जाइ। पाछें नौमें दिन श्रीगुसांईजी पधारन लागे। तब वेस्या दोइ मनुष्यन के हाथ पकरि कें आई। कह्यो, महाराज ! आजु नौमो दिन है। बिना अन्नजल मेरे अब प्रान छूटेंगे, जो-आप अंगीकार न करोगे। तब श्रीगुसांईजी ने जानी, जो-अब याको दोष दूरि भयो, सुद्ध भई। तब उह वेस्या कों नाम सुनायो। पाछें उह ब्रह्मसंबंध की बिनती करी, महाराज ! माधवदास कहि गये हैं, जो-तू श्रीगुसांईजी की दासी हैं। सो आपके लिए पन्द्रह बरस लों सूखी अङ्गाकरी खाय देह राखी। अब नौमें दिन तें जल हू त्यागो है। और जो मोकों आज्ञा करो सो मैं करों। मैं तो दुष्ट हों, परन्तु माधवदास के सम्बन्ध तें मोको श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के दरसन हू भये, और आपके हू भये। तातें मोकों ब्रह्मसंबंध कराइ मेरे माथे भगवत् सेवा पधरावो, तो मेरे प्रान रहेंगे। तब श्रीगुसांईजी शुद्ध भाव देखि के ब्रह्मसंबंध कराए। लालजी पधराय दिये। वैष्णवन सों कहे, याकों रीति भांति सब बताइ दीजो, ता प्रकार यह सेवा करै। ऐसे करत वेस्या को अटकाव भयो। सो वैष्णव तो बरजे, जो-चारि दिन लों कछू मति जलादि छूवो। परन्तु वाको प्रेम बहोत सो रह्यो न जाइ, अटकाव में सेवा करै। पाछें पांचवें दिन अपरस काढ़ै। श्रीठाकुरजी कों पञ्चामृत स्नान करावै। सो वैष्णवन ने उनसों व्यौहार छोड़ि दियो। पाछें कछुक दिन में श्रीगुसांईजी कड़ा पधारे। तब सबन ने श्रीगुसांईजी सों कही, महाराज ! वह वेस्या अटकाव में हू बहोत बरजे परन्तु मानत नाहीं, सेवा करत है। पाछें वेस्या सों, ऐसे सुनि श्रीगुसांईजी निकट बुलाइ कहे, अटकाव में लोटी क्यों भरत हो ? तब वेस्या ने कही, महाराज ! मेरे जितने रोम हैं इतने धनी लौकिक में किये। सब आपकी कृपा तें छूटे। अब एक धनी अलौकिक आपु करि दिये, तिन बिना कैसें चारि दिन रह्यो जाइ ? सो आपु तो अन्तर्यामी हो। एक क्षण को अन्तराइ सह्यो नाहिं जात है। अरु पाँचवें दिन अपरस हू काढ़ि पञ्चामृत सों श्रीठाकुरजी कों स्नान करावत हों। यह मर्यादा हू राखत हों। अब आप सबके अन्तर की जानत हो। जो आज्ञा देउ सो करों। तब श्रीगुसांईजी याके ऊपर श्रीठाकुरजी प्रसन्न देखिकैं कहे, जैसे करति है तैसेई करियो। या प्रकार वाको समाधान करि घर पठाई। जो-वेगि जा, तेरे लिये श्रीठाकुरजी बैठि रहे हैं। तब वह दंडोत् करिके गई।

पाछें श्रीगुसांईजी वैष्णवन सों कहें, जो-वह वेस्या करें, सो करन देऊ। वासों

मति कछु कहियो। बाकी देखादेखी और कोई मति करियो। वा पर श्रीठाकुरजी वाही भांति प्रसन्न हैं, तुम पर मर्यादा ही सों प्रसन्न होंइगे। या प्रकार उह वेस्या कों माधवदास के संग तें प्रेम भयो।

वार्ता-प्रसंग २- माधवदास, बेनीदास सों मिलि के रहते। सो एक दिन मोती की माला बहोत मोल की भारी बिकान आई। सो देखिकै माधवदास ने बेनीदास सों कही, यह माला श्रीनवनीतप्रियजी लाइक है, सो लेहु। तब बेनीदास ने कही, माला की कहा है? हमारे जो कछू वस्तु है सो सब श्रीठाकुरजी की ही है। यह कहिकैं बात टारि दिये।

भावप्रकाश-यामें यह जताए, जो-संसार में आसक्त, सो लोगन के दिखाइवे के लिये सब श्रीठाकुरजी को कहै। परन्तु श्रीठाकुरजी के लिये खर्च न करे।

तब माधवदास नें कही, जो-सब श्रीठाकुरजी को है तो श्रीठाकुरजी के लिये माला क्यों नाहीं लेत? तब भाई बेनीदास ने कही, जो-हमसों कैसे लीनी जाइ? तब माधवदास ने कही, जो-मेरो द्रव्य बांटि देहु। मैं तुमसों न्यारो रहूंगो।

भावप्रकाश-यामें यह कहे, तुम बैल हो, सो केवल गृहस्थाश्रम को ब्यौहार लादो। हों तो न्यारो रहि मनोरथ करूंगो।

सो द्रव्य आधो बांटि के न्यारे भये। सो थोरो द्रव्य हतो, सो माला लीनी न गई। परन्तु मन में यह, जो-ऐसी श्रीनवनीतप्रियजी कों अंगीकार होई। सो द्रव्य लै के दक्षिण कमावन गये। और यह माला कों माधवदास ने अलौकिक अंगीकार विचारे। सो लौकिक में जाय नाहीं, सो प्रयाग में बिकन आई। तब प्रयाग के वैष्णव मोल ले श्रीआचार्यजी कों दिये। श्रीआचार्यजी ने श्रीनवनीतप्रियजी कों पहराए। उहां माधवदास ने द्रव्य बहोत कमायो, सो पहिली माला तें उत्तम माला लेके

चले। सो मारग में एक बड़ी नदी आई। तहां नाव पर बैठे, और हू बहुत लोग बैठे। और नांव मध्य धारा में जब आईतब श्रीनवनीतप्रियजी लाल छरी ले कैं आये। सो एक माधवदास कों दरसन भये तब श्रीमुख तें कहे, नाव डूबाऊं ? तब माधवदास कहे, ''निजेच्छातिः करिष्यति।'' तब श्रीनवनीतप्रियजी कहै, तू कहां गयो हतो ? तब माधवदास कहे माला लेन गयो हो। तब श्रीनवनीतप्रियजी कहे, कहा हमारे माला नाहीं हैं ? देखि उहि माला श्रीआचार्यजी धराए हैं। और मेरे बहोतेरी हैं। तब माधवदास कही, महाराज ! आपके बहोतेरी हैं, परि सेवक को यह धर्म नाहिं जो बैठे रहे। उद्यम करनो। तब नाव डूबत तें रही।

भावप्रकाश–श्रीठाकुरजी नाव पर आइकें कहें सो यातें, जो–तेरे पीछे मोकों दक्षिण जानो पर्यो, सो तू क्यों गयो ? मेरे कहा माला नाहीं है ? तातें नाव डुबाऊँ तो तू कहा करै ? मनोरथ तेरो धरयो रहै। तब माधादास कहै, ''निजेच्छातः करिष्यति'' सो ''निजानां सेवकानां तस्य (तेषाम्) इच्छातः करिष्यति''। जो–भक्तन की इच्छा होइ सो ही सदा आपु करत आए हो। ''भक्त मनोरथपूरकाय नमः'' आपको नाम है। सो माला को अङ्गीकारि श्रीआचार्यजी महाप्रभुन द्वारा होइ। ता पाछे सरीर रूपी नाव डूबे ताकी मोकों कछू चिन्ता नाहीं है। जब तिहारी इच्छा में आवै तब डुबाइयो। और तिहारे माला बहोत हैं सो यामें मेरो कहा उद्यम ? जो–तिहारो मनोरथ कछू बनि आवै तो उद्यम सुफल है। नाहीं तो गृहस्थाश्रम हू वृथा पचि मरनो है, तातें सेवक को धर्म यह, जो–तिहारे अंगीकार को मनोरथ करत रहैं। तब श्रीठाकुरजी नाव डूबत तें राखी। नाहीं तो जैसे श्रीठाकुरजी नाव डुबावन की कही। तैसे माधवदास हू भगवद् इच्छा कहते। भक्त की आज्ञा होइ तो डूबे ही। परन्तु निजेच्छातः कहे। निज जो–भक्त तिनकी इच्छा माला अंगीकार कराने की है। या प्रकार कहे। और माधवदास कों तो नाव डूबन की चिन्ता नाहीं। परंतु और हू नाव पर बैठे सो भक्त के संग बचे चहियें। वे कैसे डूबन माधवदास देहि ? तातें भगवदीय की बानी गूढ़ है। भगवान समुझें, के कृपा होइ सो समुझें। और नाव हाली हती तब सबको मुख सूखि गयो। मलाह ने कही, हमारे हाथ नाहीं है। ता समय माधवदास को मन प्रसन्न है सो नाव डूबन तें रही। तब सबननें कही, जो–ए महापुरुष बैठे हैं तातें नाव बची। नाहीं तों सबरे डूबते।

पाछें पार उतरें कछुक दिनन में श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पास माधवदास आये । तब माधवदास सों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कही, नाव डूबत तें कैसे रही ? तब माधवदास ने सब समाचार श्रीआचार्यजी सों कहे । तब श्रीआचार्यजी सगरे वैष्णव सों कहे, जो–देखो, यह वही माधवदास है, कैसी टेक को वैष्णव भयो ? ता दिन तें माला को नाम माधवदास कहे, सो सगरे कहत हैं ।

भावप्रकाश–यह कहि यह जताए, जैसे लीला में इनकौ नाम रत्नप्रभा तैसे ही रतन जैसो प्रकाश माधवदास की वार्ता को है । ऐसे माधवदास भगवदीय हे । या वार्ता में भगवदीय के आशीर्वाद को उत्कर्ष प्रगट कियो ।

सो माधवदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे । तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं, सो कहां तांई कहिये । वार्ता ॥९॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, हरिवंस पाठक सारस्वत ब्राह्मन कासी के, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ए लीला में गति उत्तालिका विसाखाजी की सखी हैं । सगरी सेवा तत्काल सामग्री सिद्ध करत हैं । तातें इनकी चाल, इनकी क्रिया, उतावली, सों बेग करत हैं । तातें बिसाखाजी इन पर बहोत प्रसन्न रहते ।

सो हरिवंस पाठक पहलें गनेश के उपासक हते । सो जब श्रीआचार्यजी 'पत्रावलंबन' कासी में किये । पंडितन कों जीतें तब हरिवंस पाठक के मन में आई, जो–मैं हूँ श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के दरसन करि आऊं । सो दरसन कों आये । तब विप्ररूप देखिकें मन में आई, जो–ए ऊ ब्राह्मण हैं, हम हूँ ब्राह्मण हैं । ए पंडित हैं । सो मेरे कहा काम है ? मेरे गनेश के दरसन में ढील लगे सो ठीक नाहीं हैं । यह बिचारि दूरि तें देखि पाछे फिरे । सो घर में आइ गनेश की पूजा कौ सामान लै चलन लागे । सो द्वार पर ठोकर लगी, गिरि परे, सो मूर्छा आई गई । तब गनेश ने सपने में हरिवंस पाठक सों कहे, तू श्रीआचार्यजी के दरसन करे बिना मेरे पास आवत हतो, सो मैं तेरो मुंह न देखोंगो, श्रीआचार्यजी को अपराध कियो । श्रीआचार्यजी पूर्णपुरुषोत्तम

हैं। तिनसों अपराध क्षमा कराइ मेरे पास आइयो। तब हरिवंस पाठक कों सरीर की सुधि भई। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन पास दोरयो आयो। दंडवत् करि बिनती करी, महाराज! आप पूर्णपुरुषोत्तम हो, मैं नाहि जान्यो। अब मेरो अपराध क्षमा करि सरन लेहु। तब श्रीआचार्यजी कहे, हम हूँ ब्राह्मण हैं। तुम हूँ ब्राह्मण हो। सरन आइवे की क्यों कहत हो ? तब हरिवंस पाठक ने कही, महाराज! हम तो अज्ञानी जीव हैं, संसार समुद्र में पड़े हैं। सो आपके स्वरूप कों कहा जानें ? हम तो गनेश के उपासक हैं। सो गनेश हू आप के अपराध सों डरपत हैं। तातें मोकों तिहारे पास पठाये। जो-अपराध क्षमा कराइ आव। सो मैं अब जान्यो, जो-हम सों बड़े आप हो, अब मोकों सरन लेहु। तब श्रीआचार्यजी सेठ पुरुषोत्तमदास के इहाँ उतरे हते। तहाँ हरिवंस पाठक कों नाम सुनाये। तब हरिवंस पाठक ने बिनती करी, महाराज! घर में स्त्री है, एक बेटा, एक बेटी है। ताकों अंगीकार करिये। तब श्रीआचार्यजीने कही, तुम भगवत् स्वरूप कहूँ ते लावो। तब तेरे घर पधारि सबकों नाम-निवेदन कराइ, श्रीठाकुरजी पधराइ देइंगे। तिनकी तुम सेवा करियो, और की सेवा मति करियो। तब हरिवंस पाठक ने कही, महाराज! पुरुषोत्तम पाये पाछे ऐसो को अभागो है, जो-और देवता के पाछे द्वार भटकेगो। यह कहि बजार में आइ कछू न्योछावर दे, एक छोटे से लालजी को स्वरूप लियो। सो श्रीआचार्यजी के पास आय बिनती करी, महाराज! अब कृपा करिके वेगि पधारिये। काहेतें ? सरीर को भरोसो नाहीं। और कदाचित कोई को काल आइ जाइ तो जीव को अकाज होइ। यह आरति देखि श्रीआचार्यजी महाप्रभु प्रसन्न होइ हरिवंस पाठक के घर पधारे। सगरी अपरस सिद्धि कराई। सगरे कुटुम्ब कों नाम निवेदन कराइ श्रीठाकुरजी कों पंचामृत सों स्नान कराइ पाट बैठारे। पाछें आप पाक करि भोग धरि भोजन किये। सबन कों जूठनि धरि। पाछे आप सेठ पुरुषोत्तमदास के घर पाँऊ धारे।

पाछें आप पृथ्वी-परिक्रमा कों पधारे। तब हरिवंस पाठक सों कहे, जो-सन्देह होइ सो सेठ पुरुषोत्तमदास सों पूछि लीजो। सो हरिवंस पाठक सेवा भली भांति सों करते श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे।

वार्ता-प्रसंग १-सो एक समय हरवंस पाठक पटना ब्यौहार कों गये हते। सो पटना के हाकिम सों बहोत मिलाप हतो। सो वह हाकिम मनमें अपने में जाने, जो-ए कछू मांगे तो मैं इनकों देंऊं। सो एक दिन उह हाकिम ने कही, मैं तुम ऊपर बहुत प्रसन्न हों, तातें तुम जो-कछु मांगो सो मैं देहुं। तब हरवंस

पाठक ने कही, कोई दिन कछू काम परैगो तो कहूँगो। सो ऐसे करत डोल उत्सव के दिन निकट आये। तब श्रीठाकुरजी ने हरिवंस पाठक सों जताई जो–तू डोल मोकों न झुलावेगो ? तब हरिवंस पाठक मनमें विचारे, अब कहा करिये ? दिन थोरे रहे, चले सो तो न पहोंचिये। तब वह हाकिम पास गये और कहें, कछू मांगत हैं, सो मोकों दियो चहिए। तब वह हाकिम ने कही, जो–चाहो सो मांगो। तब हरिवंस ने कही, जो–मोकों दिन ३ में कासी पहोंच्यो चहिए। तब वह हाकिम ने घोड़ा और मनुष्य साथ दिये। सो मजलि–मजलि पर घोड़ा की डाक पर चले जाई, घोड़ा मनुष्य पलटत जाई। सो ऐसे करत दूसरे दिन आइ पहोंचे। रात्रि कों सब डोल की तैयारी सिद्ध करि राखी, दूसरे दिन झुलाए, बड़ो सुख भयो। पाछे दिन दस–पन्द्रह रहिके पटना आये। तब वह हाकिम ने हरिवंस पाठक सों पूछी, ऐसो घर में कहा जरूरी काम हतो ? जो–यह मांग्यो। कछू द्रव्यादिक मांगते, तो लाख रुपैये की रीझि देतो। तब हरिवंस पाठक ने कही, जो–हम गृहस्थ हैं। अनेक काम घर के हैं। सो गयो हतो। या प्रकार अपनो धर्म गोप्य राखे। ऐसे भगवदीय हे। ता पाछे बड़े उत्सव, छोटे उत्सव, सगरे घर आइ के करते।

भावप्रकाश–यामें यह सिद्धान्त जताए, जो–स्नेही होइ सो उत्सव अपने ठाकुर पास करे तो ठाकुर प्रसन्न रहें। और श्रीठाकुरजी की सेवा को प्रकार काहू सों कहनो नाहीं, जैसे हरिवंस पाठक उह हाकिम सों कछु न कहे। घरहू में जदपि वैष्णव हते तऊ श्रीठाकुरजी के अनुभव की बात नाहीं कही।

सो हरिवंस पाठक श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं, सो कहां तांई

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गोविंददास भल्ला क्षत्री, थानेश्वर में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–सो गोविंददास थानेश्वर में सिपाइगीरी करते, हथियार बांधते। थानेश्वर के हाकिम पास रहते। रुपैया पांच–सात को रोज पावते। सो थानेश्वर में श्रीआचार्यजी पधारे। तब थानेश्वर में बहोत जीव सरन आये। तब गोविंन्ददास भल्लाने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों बिनती करी, जो–महाराज! मेरे द्रव्य बहोत है, कहा करूँ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, भगवद् सेवा करो। तब गोविंददास भल्ला ने कही–महाराज! स्त्री अनुकूल नाहीं है। ताको आसय यह जो–दैवी नाहीं है। तब श्रीआचार्यजी कहें, स्त्री को त्याग कर। तब गोविंददास ने स्त्री को त्याग करि सगरो द्रव्य लाइ श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों बिनती करी, महाराज द्रव्य को कहा करूं? स्त्री को तो त्याग कर्‍यो। तब श्रीआचार्यजी नें कही, यह द्रव्य के चारि भाग कर। एक भाग श्रीनाथजी की भेंट कर। एक भाग स्त्री कों दें यातें, जो–ब्याह भयो ताको छोड़े को दोष पूँजी दिये छूटयो। दो भाग तू लेकें भगवत् सेवा करि। तब गोविंददास भल्ला नें कही, महाराज! कछू आपु अङ्गीकार करिए। तब श्रीआचार्यजी नें कही, भलो, एक भाग हम कों दे। तब गोविंददास ने द्रव्य के चारि भाग करे। एक भाग श्रीनाथजी कों भेंट किये, एक भाग श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों भेंट कियो। एक भाग स्त्री कों दियो। एक भाग को द्रव्य ले महावन में आइ रह्यो। सो यातें, जो–गांव में स्त्री को प्रतिबंध परे। तातें महावन आइ, श्रीमथुरानाथजी की सेवा करन लागे।

वार्ता–प्रसंग १–सो गोविंददास महावन में नित्य के चौबीस टका की सामग्री करें, भोग धरें। उहांई मर्यादामार्गीय वैष्णव कों लिवाइ देई, बचै सो गाइ कों खवाइ देइ। तामें तें आपु कछू न लेई। आपु न्यारि लीटी करि भोग धरि खाँय।

भावप्रकाश–याको आसय यह, जो–महावन में नन्दरायजी को देवालय कराइ ब्राह्मन कों पूजा सोंपी हती। सो मर्यादा रीति सों करते। खरच नन्दरायजी देते। सो ठाकुर हते। ब्राह्मन पूजा करते। सो देवालय कों आपु कैसे लेइ? तातें न्यारी लीटी करि मन ही सों भोग धरि लेते।

ऐसे करत द्रव्य सब निघटयो। तब श्रीनाथजीद्वार आइ श्रीगोवर्द्धनधर की परचारगी करन लागे। दोऊ समय के पात्र

मांजे। रात्रि पहर डेढ़ रहे पाछली, तब उठि देह कृत्य करि न्हाइ के गागरि ले मथुरा आइ श्रीयमुना-जल की गागर भरि राजभोग पहले आवते। पात्र सब मांजि रसोइ पोति अपनी सब सेवा सों पहोंचि पर्वत ते नीचे आइ, तिलक धोइ माला उतारि गांठि बांधि गोवर्द्धन के आसपास सों कोरी भिक्षा मांगि लावते। सो सेर पांच-सात को आहार हू हतो। सो आहार लाइक आवै तब आइके अपने हाथ सों पीस रोटी करि श्रीगोवर्द्धनधर की ध्वजा कों दिखाइ चरणामृत मिलि कें लेते। पाछें सेनभोग के पात्र मांजते। रसोई पोति सेवा सों पहोंचि सेन करते। या प्रकार सेवा करते। परन्तु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों आछो न लागतो।

भावप्रकाश-ताको कारन यह, जो-भाव प्रीति सों ऐसी सेवा करें, तो श्रीगोवर्द्धनधर वाके पाछे लगे डोलते। परन्तु गोविंददास भल्ला तामसी हते, सो अहंकार सों करते। स्त्री को त्याग हू अहंकार सों कर्यो। महावन में हू चौबीस टका की सामग्री नित्य करते। सो अहंकार सों करते। इहां हू सगरी सेवा अहंकार तें करते। सरीर को कष्ट पावते। परन्तु सगरे सेवकन कों नीचे करि दिये। जो-मो बराबर कौन करेगो। तातें श्रीगोवर्द्धनधर कों आछो न लगतो।

तब श्रीगोवर्द्धनधर ने अड़ेल में श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कह्यो, जो-तिहारो सेवक मोकों बहुत खिजावत है।

भावप्रकाश-यामें यह जताए, जो-अहंकार सों बहोत सेवा करत है, मोकों खिजावत है, अप्रसन्न करत है। और तिहारो सेवक यों कहे तामें यह जताए, जो-हों तो वाकों दण्ड देतो परन्तु तिहारो सेवक है सो तुम ही समुझावो।

तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु अड़ेल तें आगरे पधारिकै सब वैष्णवन सों पूछे, श्रीठाकुरजी किन रुठाए हैं ?

भावप्रकाश-सो सब सों पूछिवे को कारन यह; जो-आप तो जानत हैं, जो-गोविंददास भल्ला ने रुठाए। परन्तु सब सों पूछें, जो-अहंकार सहित और हू कोई सेवा करै तो श्रीठाकुरजी अप्रसन्न होइंगे।

तब सगरे वैष्णवन ने कही, महाराज ! हम तो कछु जानत नाहीं । अहंकार कौन बात को करै ? हम सों (तो) कछू बनत नाहीं। तब प्रसन्न होइ आगरे तें आपु मथुरा पधारे। तब यहांहू सब कहे, महाराज ! हम तो कछु जानत नाहीं । तब आप यहां ते हू प्रसन्न होइ के श्रीनाथजीद्वार पधारें। तब स्नान करि के मंदिर में पधारे। श्रीगोवर्द्धनधर के दोउ कपोलन पर हाथ फेरिकें पूछें, बाबा ! अनमने क्यों हो ? तब श्रीगोवर्द्धनधर नें कही, तिहारो सेवक मोकों बहोत खिजावत है ! तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने सगरे सेवक बुलाइ, सेवा–टहल, महाप्रसाद की पूछे। सो सबकों शिक्षा दिये, जो–अहंकार मति करियो। तब गोविंददास सों पूछे, सो वे सब कहें। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, श्रीनाथजी की रसोई में सगरे सेवक महाप्रसाद लेत हैं। तुमहू लियो करो।

भावप्रकाश–यह कहि यह जताए, जो–सगरे सेवक की रीति चलो। अहंकार छोड़ो। और प्रभु अक्लिष्ट कर्मा हैं, दुःख पाय अहंकार सों करिये सो प्रभु कों भावे नाहीं।

तब गोविंददास ने कही, महाराज ! देव–अंस कैसे लेहुं ?

भावप्रकाश–यामें यह भाव सों कहें, जो–सगरे देव–अंस लेत हैं मैं कैसे लेऊँ?

तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे, जो–हमारी रसोई में महाप्रसाद लेउ।

भावप्रकाश–ताको आसय यह, जो–आपकी रसोई होइ, यह कहि यह जताये, जो–श्रीगोवर्द्धनधर की सेवा छोड़ि हमारी करो। इहां रहो। सब सेवकन सों मिलेके चलो तो निर्वाह होय। नाहीं तो हमारे पास रहो महाप्रसाद लेहु।

तब गोविंददास फेरि अहंकार करि कहें, देव–अंस, गुरु–अंस कैसे लेहुं ? तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें कही, जो–सेवा छोड़ि देउ।

भावप्रकाश–यामें यह जताए, जो–श्रीनाथजी के यहाँ अहंकार किये तब सहज में सेवा छूटि गई। सो सेवा छोड़ि दीनी, परन्तु आज्ञा न मानी। तातें श्रीगोकुलनाथजी कहे क्षत्री अहंकारी ने सेवा छोड़ि दीनी। बाको आसय यह, जो–श्रीगोकुलनाथजी कों अहंकार प्रिय नाहीं है। तामसानां अधोगतिः। काहेतें, अहङ्कार दास–भाव में विरोधी है। तातें क्षत्री अहंकारी कहे। ताको आसय यह, और क्षत्री सेवक बहोत भये परन्तु अहङ्कार क्षत्रीपने को छोडि दिये और इनको वैष्णव नाहीं कहें, क्षत्री अहंकारी कहें। सों क्षत्रीपनो दासहू भये पै नास न भयो, गुरु आगें। तातें उत्तम कुल–मद बाधक दिखाए। जो–एक दिन अहंकार सों सेवा छूटे। सेवा ठाकुर न करावें। यह सिद्धांत दिखाये।

तातें शिक्षापत्र में लिखे हैं–

असाधनः साधनो वा न साधुः साधुरेव वा।
शरणादेव निखिलं फलं प्राप्नोत्यसंशयः ॥

या मार्ग में कितने असाधन हैं। जिनसों भगवद्धर्म नाहीं बनत। कितने साधन बहोत करत हैं, सेवा–स्मरण, जप–पाठ। वामें कोई साधु, जो–सात्विक है कोई असाधु राजसी–तामसी है। परन्तु सरन रात्रि दिन दृढ है प्रभु की। तिनही कों प्राप्ति निश्चय है, यह जताये।

वार्ता–प्रसंग २–तब क्षत्री अहंकारी में सेवा छोड़ि दीनी, पाछे मथुरा आयो। परन्तु बिना सेवा–पूजा रह्यो न जाइ, दैवी है। तब केसोरायजी की सेवा इजारे लीनी। सो विपरीत किये।

भावप्रकाश–काहे तें, पहले महावन में मथुरानाथजी की सेवा छोडि दिये, श्रीगोवर्द्धनधर की सेवा किये, सो तो ठीक किये। परन्तु श्रीगोवर्धननाथजी की सेवा छोड़ि फेर मर्यादा में गये, तातें विपरीत भये, सो कहत हैं।

पाछे एक दिन गोविंददास ने केसोरायजी की सैया–निवार भराए। सो बुननवारे कों मेवा खवाइ बुनाये। सो बहोत सुन्दर भई। और मथुरा के हाकिम ने खाट–निवार, सो बुनाइ। तब काहू ने कही, केसोरायजी की सैया भई तैसी न भई। यह सुनिकें वह हाकिम केसोरायजी के मंदिर में आयो। सो तिवारी में केसोरायजी की सैया धरी हती। तापर चढ़ि बैठ्यो। सो कोई ने

गोविंददास भल्ला सों कही, जो–मथुरा को हाकिम आइ श्रीठाकुरजी की सैया पर बैठ्यो है। तब गोविंददास गुपती लेत आये। सो हाकिम कों उहांई मार्‍यो पाछे हाकिम के मनुष्यन ने गोविंददास को अपराध कियो। यह बात मथुरा के वैष्णवन ने सुनी। सो गोविंददास की देह को अग्नि–संस्कार कियो।

पाछें यह बात एक वैष्णव नें श्रीआचार्यजी सों कहे, महाराज! ऐसे वैष्णव की यह गति कैसे भई? तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कही, याके परलोक में तो कछु हानि नाहीं भई (परि) यह मेरी आज्ञा न मान्यो तातें ऐसो भयो। यह पहले जन्म में नन्दरायजी को भेंसा हतो। सो याके ऊपर श्रीठाकुरजी चढ़ते। सो याने एक दिन श्रीठाकुरजी के पूंछ की मारी, ताको दंड भयो। और श्रीनन्दरायजी के इहां श्रीठाकुरजी को मंदिर बन्यो तब याकी पीठ पर पानी–माटी बहोत ढोयो है।

भावप्रकाश–यह कहि यह जतो, जो–तहांहू भार उठायो और यहांहू भार उठायो। परन्तु प्रीति सों सेवा नाहीं करी, जैसो अधिकार पूर्व को होय तैसोई कार्य बने।

और गोविन्ददास सारस्वत कल्प में नन्दरायजी के पास हथियार बाँधि के रहते सो मथुरा में कंस कों कर देते, सो इनके हाथ देते। लीला में इनको नाम ''मनसुखा'' गोप है। सो श्रीठाकुरजी नें जब धोबी के वस्त्र लूटे, मारे, तब मनसुखा, कंस को पैसा टका राखतो, ताकों लूटिके मारग में बहोतन कों मारे। सो सब अधमरे दस–पांच भये। सोऊ बैर भाव इनको चल्यो आयो।

पाछें ये श्वेतबाराह कल्प भयो, यामें श्रीनंदरायजी के घर भेंसा भये। ता बात कों पांच हजार बरस भये। तहाँ श्रीठाकुरजी कों पूंछ की दीनी, यह अपराध पर्‍यो। सो मथुरा को हाकिम मलेच्छ हतो। सो कंस को तोषा–खाना करतो। ताकों गोविन्ददास ने मारें, जो–याने नन्दरायजी पास तें पैसा बहोत लियो है। और अब श्रीठाकुरजी की सैया पर बैठ्यो। यह मारन लायक है, तातें मारे। और दस–पांच अधमरे पहले किये, तिन सबन मिलि कें गोविन्ददास कों मारे। सबको बैर छूट्यो।

पाछे अब नन्दरायजी पास फेरि गोप भये। या प्रकार कहि यह जताए, जो-पिछले बैर सों बैर होइ, पिछले स्नेह सों स्नेह होइ। सो गोविन्ददास भल्ला ऐसे भगवदीय हते। इनकी वार्ता में यह सिद्धांत जताए, जो-अहंकार न करनो। और अपुने हठ करि गुरु की आज्ञा उलङ्घन न करनो। और पुष्टिमार्गीय श्रीठाकुरजी की सेवा छोड़ि के मर्यादामार्गीय श्रीठाकुरजी की सेवा न करनी।

सो वे गोविन्ददास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥११॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवकनी, अम्मा क्षत्राणी, कडा में रहती, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं-

भावप्रकाश- ये लीला में रोहिनी हती। सो श्रीनंदरायजी के उहां रही। पाछें मथुरा गई। परंतु ब्रज में इनको मन रह्यो। तातें अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को संबंध पाइ ब्रजलीला में अंगीकार भयो। तातें इनको पुत्रभाव ही दृढ़ है। सो अम्मा क्षत्राणी कड़ा में रहती, कुटुंब बहोत हतो। सो अम्मा के दोइ बेटा भये। एक वर्ष दोइ को। एक वर्ष चारि को। तब अम्मा को पति, सास, ससुर, मा, बाप, सब मरि गये। अम्मा और दोऊ बेटाई रहे। सो गदाधरदास कड़ा में रहते। तहां श्रीआचार्यजी पधारे हे। सो अम्मा के एक रात्र, सुपन श्रीठाकुरजी ने दियो, जो-तू श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सरनि सबेरे जैयो। मैं श्रीआचार्यजी महाप्रभुन पास हों। सो मोकों पधारी सेवा करियो। तब अम्मा की नींद खुली। सो विरह बहोत भयो। जो-कब सबेरो होइ ? कब मैं श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सरनि जाँउ ? सो सवेरो होत ही न्हाइ के श्रीआचार्यजी महाप्रभुन पास आई, दंडवत् कियो। महाराज ! मोकों सरनि लीजिए, और आपके पास श्रीबालकृष्णजी हैं, सो मोकों कृपा करिकें रात्र कों, या प्रकार आज्ञा करी है। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आपु अम्मा को सुद्ध भाव देखि कें आपु नाम-निवेदन कराए। और एक ब्राह्मन दक्षिन सों आयो हतो, सो वाके पास छोटे से लालजी हते। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु कों दे, बद्रिकाश्रम में जाई कछू दिन तपस्या करि देह छोड़ी। सो ठाकुर अम्मा के माथे पधराय दिये। और आज्ञा किये, (जो) इनको नाम श्रीबालकृष्णजी है। इनकी बालभाव सों पुत्र की नाँइ स्नेह करि सेवा करियो। या प्रकार कृपा किये। और अम्मा के दोइ बेटा। सो श्रीठाकुरजी के अंतरंग सखा हैं। बड़ो ''अर्जुन'' ; छोटो ''भोज'' तिनहू कों नाम निवेदन कराइ,

अम्मा कों आज्ञा दिये, जो-इन दोऊ बेटान कों काहू के हाथ को खान मति दीजो। ये ठाकुर की महाप्रसादी दीजो। येऊ लीला संबंधी हैं। महाप्रसाद बिना और खाइंगे तो इनकों अंतराय होइगो। या प्रकार अम्मा कों अंगीकार करि श्रीआचार्यजी महाप्रभु आपु कासी पधारे। सन्यास ग्रहण करि आसुरव्यामोह लीला करी।

वार्ता-प्रसंग १-सो यह अम्मा क्षत्राणी सेवा बालभाव सों प्रीति सों करें। सो वाके दोऊँ बेटा अम्मा कहते। सो श्रीठाकुरजी हू सानुभाव होइ कें अम्मा कहते। सो ऐसे करत श्रीठाकुरजी हू दोऊ बेटा के संग खेलते। ईंट घसि के आपुस में लगावते, उड़ावते। सो देखिके अम्मा मन में बहोत सुख पावती। पुत्रभाव सों बरजती। जो-यह कहा खेल ? कहूँ नेत्रन हू में परेगो। ऐसे करत कछुक दिन में एक बेटा वाको बड़ो मरि गयो। तब अम्मा श्रीठाकुरजी सों पहोंचि के रोवन बैठती। क्षत्रीन में बहोत रोवत हैं। तब अम्मा कों रोवति देखि श्रीठाकुरजी कहतें, अम्मा मति रोवे। या प्रकार बरजते। खेद करते। सो अम्मा मानती नाहीं। ऐसे करत अम्मा को दूसरो बेटा छोटो हू मरि गयो। तब अम्मा बहोत रोवन लागी। तब श्रीठाकुरजी बरजते, अम्मा रोवे मति। परंतु रोवते तें न रहेती। तब श्रीठाकुरजी अड़ेल में श्रीगुसांईजी सों कहे, जो-अम्मा रोवति है। तो मैं बहोत दुख पावत हों। तातें तुम आय कें समुझावो।

भावप्रकाश-ये दोऊ बेटा की देह यासों छूटी, जो-बडे होंइ तो संसार के कार्य में लगें। अम्मा को मन इनके ब्याहादिक में लगे। सो वे अंतरंग सखा हैं। तातें बेगि बुलाइ लिए। परन्तु अम्मा भगवदीय होइकें क्यों रोई ? ताको आसय यह है, जो-लोगन में पुत्र-सोक, सो तो अम्मा के नाहीं है। परन्तु श्रीठाकुरजी दोऊ बेटान के संग खेलते, ईंट घसि कें परस्पर देह सों लगावते, उड़ावते। सो खेल अनेक प्रकार को अम्मा दर्सन करती। सो खेल को सुख गयो। दोऊ श्रीठाकुरजी के खिलौना बेटा हते। सों अब किन सों खेलेंगे ? या भाव सों अम्मा रोवती। तातें श्रीठाकुरजी अम्मा

के ऊपर प्रसन्न है कें बरजते। अम्मा को दुःख सहि न सकते। और जो–पुत्र को ममत्व करिके रोवती तो श्रीठाकुरजी न बोलते।

तब श्रीगुसांईजी अड़ेल तें कडा पधारिकें, अम्मा के घर जाइ अम्मा सों कहे, तू मति रोवे। श्रीठाकुरजी खेद पावत हैं।

भावप्रकाश–या प्रकार कहि अम्मा के बेटान को स्वरूप दिखाए। जो–अंतरंग सखा हैं। बड़े होइ तो संसार में ठीक न परे। तातें तू रोवे मति।

तब अम्मा रोवत तें रही। सो अम्मा को ऐसो स्नेह हतो। जो–जब श्रीठाकुरजी कों उठावें तब दोऊ हाथ सों सोंधो अतर आदि लगाइ श्रीअंग परस करें। जो–मेरे हाथ कठिन हैं। कोमल बालक को श्रीअंग है। या प्रकार सगरी सेवा प्रीति पूर्वक करती।

भावप्रकाश–यह सोंधो है, सो श्रीस्वामिनीजी के स्नेह रूप सचिकन है। यह कहि यह जताये, जो–ब्रजभक्तन के जसोदा–रोहिनी के भाव सों सेवा करती। तातें श्रीठाकुरजी अम्मा के ऊपर बहोत प्रसन्न रहतें।

वार्ता–प्रसंग २–और एक समय श्रीठाकुरजी के आगें दूध को कटोरा भरिकें धर्यो। टेरा लगाइ के अम्मा बाहर आई। ऐसे में श्रीगुसांईजी अम्मा के घर पधारे। तब अम्मा सों यह पूछे, जो–श्रीठाकुरजी के कहा समय है ? तब अम्मा ने कही, बाबा, पधारो। आपुकों सदा समय है। तब श्रीगुसांईजी टेरा सरकाय भीतर गये। सो देखें तो श्रीठाकुरजी कटोरा हाथ में लिये दूधपान करत हैं। तब श्रीगुसांईजी टेरा लगाइ पाछें वैसेही फिरि आये। तब अम्मा ने कही, जो–बाबा, पाछें क्यों फिरि आये ? तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो, जो–श्रीठाकुरजी आपु दूध पीवत हैं। तब अम्मा ने कही, यह तो लरिका है। कहा तुम नाहीं जानत हों ? तब श्रीगुसांईजी ने कही, यह दूध हमारे डेरा पहोंचाय दीजो। तब अम्मा ने कही, तुमही अरोगनहारे हो। भावे यहां अरोगो,

भावे ऊहां अरोगो। यह अम्मा के स्नेह के बचन सुनिकें श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये। अपुने डेरा पधारे। पाछें अम्मा हू दूध लेकें आई, श्रीगुसांईजी कों पान करायो।

भावप्रकाश–याको कारन यह, जो–अम्मा रोहिनीजी को स्वरूप है। सो श्रीबालकृष्णजी रोहिनीजी के भावतें हैं। तातें श्रीबालकृष्णजी दूध आरोगत हते तब श्रीगुसांईजी पाछें फिरे। सो यातें, जो–श्रीनवनीतप्रियजी श्रीगुसांईजी के ठाकुर हैं। वह होते तो आप पान करावतें। परंतु रोहिनीजी सों और श्रीचंद्रावलीजी सों स्नेह बहोत हैं। रोहिनीजी चंद्रावलीजी को भाव जानत हैं। तातें श्रीगुसांईजी प्रसन्न होइकें कहें, यह प्रसादी दूध हमकों पठाईयो। सो यह पिछलो लीला को स्नेह जतायो। तब अम्मा ने कही, चाहे यहां आरोगो चाहे उहां आरोगो। ताको कारन यह, जो–तुमही अरोगनहारे हो। सो ये ठाकुरजी कों तुमही राखनहारे हो। ये ठाकुर तिहारे हैं।

पाछें श्रीगुसांईजी ने अम्मा की देह छूटे पाछें श्रीनवनीतप्रियजी के पास पधराये।

भावप्रकाश–काहेतें ? रोहिनीजी सों श्रीगुसांईजी को भाव मिल्यो है। रोहिनीजी हू लीला की साधक है। यातें अम्मा की का'नि श्रीगुसांईजी बहोत राखते।

सो अम्मा ऐसी कृपापात्र भगवदीय हती। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥१२॥

भावप्रकाश–या वार्ता में यह सिद्धांत जताये, जो–भक्तन को क्लेश श्रीठाकुरजी सों सह्यो न जाइ। तातें लौकिक वैदिक दुःख आनि पड़े तो वैष्णव धीरज राखि क्लेश न करे। जो क्लेश हू करे तो श्रीठाकुरजी संबंधी क्लेश करे।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गज्जनधावन क्षत्री, आगरे में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

वार्ता–प्रसंग १– इनके माथें श्रीनवनीतप्रियजी श्रीआचार्यजी ने पधराये। सो प्रकार एक क्षत्राणी की वार्ता में कहेंगे।

भावप्रकाश–सो गज्जन श्रीचंद्रावलीजी की सखी, लीला में 'सुभआनना' इनको नाम है। सो श्रीठाकुरजी प्रगटे ताके दूसरे दिन ये प्रगटी है। दसमीं कों। तातें सुभआनना श्रीठाकुरजी के संग बाललीला खेल बहोत खेली हैं। श्रीचंद्रावलीजी कों सगरे खेल के मिलाप को भेद ये बतावती। तातें श्रीचंद्रावलीजी कों अति प्रिय हैं। तातें श्रीआचार्यजी गज्जन के माथे श्रीनवनीतप्रियजी पधराये। जो ये श्रीगुसांईजी के ठाकुर हैं। गज्जन श्रीगुसांईजी की सखी हैं, सदा संग खेले हैं। सो संबंध अब फेरि खेलेंगें।

सो कछुक दिन में गज्जन सों श्रीनवनीतप्रियजी सानुभावता जनावन लागे। गज्जन कों गाय करते, घोड़ा करते। आपु ऊपर चढ़तें। सो गज्जन के घोंटू घसि गये। परन्तु देह की सुधि नाहीं। सो एक दिन गज्जन सों श्रीनवनीतप्रियजी कहे, मोकों श्रीआचार्यजी के इहां पधराइ के तुमहू उहां रहो।

भावप्रकाश–ताको कारन यह, जो–गज्जन को ऐसो स्नेह बढ़्यो, जो–सेवा की रीति भूलि गये। खेल में अनोसर आदि। तब श्रीठाकुरजी बिचारे, जो–*याकों व्यसन अवस्था की सिद्धि होइ चुकी है। अब यह अपने गाम घरमें रहेगो तो* बाधक होइगो।

तब गज्जन तत्काल श्रीनवनीतप्रियजी कों गोकुल पधराय कें आये। श्रीआचार्यजी कों दंडवत् करि कहें, जो–महाराज ! श्रीनवनीतप्रियजी आपुके घर पधारे हैं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, सैया न्यारी नाहीं है। कछू पात्र नये नाहीं। या प्रकार ओंचका कैसे पधारे हैं ? तब गज्जन नें कही, अब तो श्रीनवनीतप्रियजी की इच्छा तो ऐसी है। तब श्रीआचार्यजी, जो–कछू सामग्री बनि आई सो सिद्ध करि अरोगाय, अपने श्रीअंग में सोंधो लगाई पास लै पौढ़े।

भावप्रकाश–सोंधो लगायवे को कारन यह, जो–अत्तर आदि सुगंध श्रीस्वामिनीजी के श्रीअंग को गंध स्नेह रूप है, सो प्रगट नाहीं कहे। सो यों कहे, तामें जताए, जो–श्रीस्वामिनी स्वरूप है संग लै पौढ़ें।

पाछें मर्यादा राखिवे के लिये छोटीसी पलंगड़ी बनवाये।

ता पर दूसरे दिन श्रीनवनीतप्रियजी कों पौढ़ाए। तब श्रीनवनीतप्रियजी ने कही, सैया छोटी है। मेरे पाँव नीचे लटकत हैं। तातें मैं तिहारे संग पौढ़ूंगो।

भावप्रकाश–यामें यह जताए, जो–कहा मैं बालक हों तिहारे भाव सों ? तिहारे घर तो तरूण हो। और जसोदाजी के भावसों बालक हों। तातें तुम मेरो छोटो स्वरूप देखिकें सैया छोटी क्यों बनवाई ? तातें मैं तिहारे पास पोढ़ंगो। मोको भावत हैं।

तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु फेरि सोंधों श्रीअंग में लगाई पास लै पौढें। पाछें सबारे श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने बड़ी सैया सँवराई, ता पर पौढ़ाये। तब फेरि श्रीनवनीतप्रियजी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कहें, जो–मैं तिहारे पास पौढ़ूंगो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप कहें, जो–महाराज ! लोगन में मर्यादा राखी चाहिये। और तिहारे पास मूंढा को साज सब राखि श्रीस्वामिनीजी स्वरूप सों मैं पास ही हों। ऐसे श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप कहें।

भावप्रकाश–यामें यह जताये, जो–ऊपर की मर्यादा छोड़े तें जीव को बिगार होइ। देखादेखी कोई करे।

तब श्रीनवनीतप्रियजी सैया में पोढ़न लागे।

वार्ता–प्रसंग २–सो गज्जन मंदिर के द्वार में सन्मुख सेवा समय बैठे रहें। अनोसर में हूँ मंदिर में रहें। श्रीनवनीतप्रियजी संग खेलें, न्यारे न रहें। सो एक दिन पान न हते। सो श्री अक्काजी ने गज्जन सों कहें, यह पैसा ले जाव, पान ले आवो।

भावप्रकाश–सो गज्जन अक्काजी सों कहि न सके, जो–मोसों श्रीनवनीतप्रियजी हिलै हैं। यह सिद्धांत बताए। जदपि श्रीठाकुरजी वैष्णव सों बोलें, पास राखें, तो हू गुरु आज्ञा देंय तों आज्ञा माथे पर धरिकें गुरु के कार्य कों जाय तो धरम रहें। ठाकुर प्रसन्न रहें। तातें गज्जन गये। परंतु श्रीनवनीतप्रियजी हू बरजे नाहीं। वैष्णव को भाव देखिवे के लिये।

तब गज्ञन पान लेन कों गये। सो बाहर निकसत ही विरह ज्वर ऐसो चढ्यो जो एक हाट पर परि रहे।

भावप्रकाश–काहेतें, इनको ब्यसन अवस्था ह्वै चुकी है। सो श्रीआचार्यजी सों और कोई भगवदीय, जो–भाव में मगन है, तिनसों बोलनो मिलनो। और सों सब देह–संबंध छूटि गयो।

इहां श्रीआचार्यजी ने श्रीनवनीतप्रियजी कों राजभोग धरे। तब श्रीनवनीतप्रियजी ने कही, गज्ञन आवें तब मैं अरोगों। तब श्रीआचार्यजी ने सब सों पूछी, जो–गज्ञन कहां गयो है ? तब श्रीअक्काजी ने कही, मैं पान लेंन पठायो है। तब श्रीआचार्यजी कहें, गज्ञन कों क्यों पठवाए ? गज्ञन सों श्रीनवनीतप्रियजी हिले हैं। आजु पाछें इनसों कछू मति कहियो, कहूं मति पठाईयो।

भावप्रकाश–यामें यह जताए, जो–फलदसा कों पाये। इनकों मानसी सिद्ध होइ चुकी हैं।

तब श्रीअक्काजीने कही, अब इनसों कछू टहल न कहोंगी। तब एक वैष्णव सों श्रीआचार्यजी ने कही, गज्ञन कों बेगि पठाइ दीजो। हाट पर पर्यो है। तुम पान लाइयो। तब वैष्णव जाइ देखें तो द्वार के पासई एक हाट पर परे हैं। तब कहें बेगि जाव तुमकों श्रीआचार्यजी बुलाये हैं। तब यह सुनत ही गज्ञन कों विरह–ज्वर उतरि गयो। दोरि के आये। तब श्रीनवनीतप्रियजी सों कहे, बाबा ! भोजन क्यों नाहीं करत ? तब श्रीनवनीतप्रियजी कहें, तू आयो ! अब मैं भोजन करूंगो। यह प्रकार गज्ञन के और श्रीनवनीतप्रियजी के स्नेह हतो। सो गज्ञन ऐसे भगवदीय हते। सो तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं, सो कहां तांई कहिये।

वार्ता ॥१३॥

भावप्रकाश–इनकी वार्ता में यह सिद्धांत जताए, जो–व्यसन अवस्था सर्वोपरि

है। जामें श्रीठाकुरजी बस होंई। सो कुंभनदासजी गाये हैं ''जोपै विरह परस्पर ब्यापे तो कछू जीय बनि आवें'' सो गञ्चन की परस्पर प्रीति दिखाये ।। वैष्णव त्रयोदस ।।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, नारायनदास ब्रह्मचारी, सारस्वत ब्राह्मन, महावन में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं-

वार्ता-प्रसंग १- सो नारायनदास ब्रह्मचारी के माथे श्रीगोकुलचंद्रमाजी पधराये। सो प्रकार एक क्षत्राणी की वार्ता में कहेंगे। जहां चारि स्वरूप चारि वैष्णवन के माथे पधराये हैं।

भावप्रकाश-नारायनदास लीला में सोरह हजार अग्निकुमारिका हैं, तिनमें मुख्य राधा सहचरी है। तिनकी सखी हैं, मधुरेक्षणा, सो इनको नाम है। मधुर है इक्षण (जो) दृष्टि जिनकी। सो श्रीठाकुरजी के मुख की सुंदरता देखत देह की सुधि भूलि जाती। ऐसे स्वरूपासक्ति। स्वरूप को चिंतवन अष्ट-प्रहर करती।

सो नारायनदास श्रीगोकुलचंद्रमाजी की सेवा भली भांति सों करते। गाय कों घास धोइकें खवावते। जो-मति कहूँ दूध में रज आवें। श्रीठाकुरजी अत्यंत सुकुमार हैं।

भावप्रकाश-यह कहि यह जताये, जो-दूध में रज कों संदेह करते। सो साग-सामग्री जल सब में भली भांति सों चौकसी राखते। जो-प्रभु कों कोई वस्तु में दुःख न होइ।

और नारायनदास त्याग दसा में रहते। उत्तम रीति सों चुकटी लेते। सो कोरो अन्न न्यारो-न्यारो तथा बिना मांगे घर आवें तामें निरवाह करते। सो नारायनदास जहां तहां पांव धोइबे कों माटी लेते तहां द्रव्य देखते। सो वा पर माटी डारि उठि चलते। परंतु द्रव्य को परस न करते सो एक दिन रात्रि कों इनकी खाट के आसपास द्रव्य बहोत फैल्यो। सो सबेरे देखि के भतीजी सों कहें, घरमैं बिगार पर्यो है। सो बुहारि डारि आव।

तब भतीजी ने बुहारिसों बुहारिकें डारि दियो। जगे सब लींपि डारि।

भावप्रकाश–याको आसय यह, जो–नारायनदास में ब्रह्मचर्य बालपने सों धारन करि द्रव्य मिलिवे को उपाइ बहोत किये। सो द्रव्य प्राप्त कछू न भयो। पाछें चालिस बरस के भये। तब श्रीआचार्यजी के सेवक भये। तब श्रीठाकुरजी के स्वरूप को ज्ञान भयो। तब द्रव्य को हू ज्ञान भयो। तब द्रव्य कों अग्निकी विष्टा हू कहे हैं। सो या प्रकार जानन लागे। तब रिद्धि सिद्धि इनके छलिवे कों आई। तब जहां तहां द्रव्य दिखें। परंतु बिगार विष्टावत् जानें। तातें वापर माटी डारें। सो यातें, जो–और के हाथ यह माया रूप द्रव्य परेगो तो वाहू को बिगार होइगो। तातें ऊपर माटी डारि देते। और जब घर में द्रव्य फेल्यो देखे तब भतीजी सों कहें, जो–बिगार पर्यो है। परंतु आपु छूवे न बुहारे। तब भतीजी हू श्रीआचार्यजी की सेवकनी कृपापात्र हती। नारायनदास के स्वरूपकों जानती।

नारायनदास तो ''मधुरेक्षणा'' राधा सहचरी की सखी हैं। इनकी सखी ''चतुरा'' भतीजी को नाम है। सो नारायनदास कों बहोत प्रिय याते हैं, जो–सामग्री करन में बहोत चतुर हैं। बाल बिधवा भई। तातें नारायनदास के इहां रहेती। सो लीला को नाम इहां हू चतुरा हतो। सो चतुर भतीजी ने नारायनदास के सब्द सुनत ही द्रव्य बुहारि कें बाहर डारि दियो। नारायनदास ने बुहारिवे की कही परन्तु इननें जान्यो, जो–नारायनदास बिगार कहे सो जगे हू लींपनी। ऐसी बुद्धि भतीजी की देखि श्रीठाकुरजी इनसों बहोत प्रसन्न रहते। या प्रकार दोऊ श्रीगोकुलचंद्रमाजी की सेवा करते।

वार्ता–प्रसंग २–और एक दिन नारायनदास न्हाइ के मंदिर में जाइ श्रीठाकुरजी कों मंगल–भोग धरि पाछें सिंगार किये। श्रीठाकुरजी के मुखचंद्र की सोभा देखि थकित ह्वे बड़ी बेरलों निहारी रहे। पाछें पूछी, जो–महाराज ! इह घटा कहां बरसेगी ? तब श्रीठाकुरजी प्रसन्न होइकें कहे, जो–श्रीरघुनाथजी के ऊपर बरसेगी। तब नारायनदास बहोत प्रसन्न भये।

भावप्रकाश–ताको कारन यह, जो–श्रीरघुनाथजी को प्रागटय राधा सहचरी को है। इनकों दंडकारण्य में श्रीरघुनाथजी को वरदान है, जो–ब्रज में मनोरथ

पूरन होइगो। तातें श्रीगुसांईजी हू नाम रघुनाथजी धरें, जो-बहोत रमावे, सबके मनकों हरे तिनकों राम कहिये। तातें श्रीरघुनाथजी हू परम सुंदर राधा सहचरी रूप। तैसें सुंदर श्रीगोकुलचंद्रमाजी, सो राधा सहचरी की सखी नारायनदास। तातें श्रीरघुनाथजी के ऊपर घटा की वृष्टि सुनकें बहोत प्रसन्न भये, जो-हमारे स्वामी को संबंध सदा रहेगो।

वार्ता-प्रसंग ३-और एक दिन नारायनदास श्रीठाकुरजी कों राजभोग धरिकें बाहर आय बैठे। तब हृदय भरि आयो। तब भतीजी सों कहें, श्रीठाकुरजी कौन भांति सों अरोगत होइंगे ? यह विचार करन लागे। तब भतीजी ने कही, तुम या विचारतें हो? श्रीआचार्यजी के साधारन सेवक श्रीआचार्यजी की का'नितें भोग धरत हैं सो अरोगत हैं। तुम तो श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हो। तातें तिहारो समर्प्यो तो अरोगेही। तब नारायनदास ने कही, बेटी ! सुनि, श्रीठाकुरजी भली भांति सों अरोगे तब जानिये, जो-कोई वैष्णव अचानक आइ महाप्रसाद लेई। तब जानिए, भली भांति सों अरोगे।

भावप्रकाश-यामें यह जताये, जो-भोग धरिये सो तो अरोगेही, परंतु अचानक को भाव यह है, जो-वैष्णव न्यौते होइ तब तो वैष्णव के भाव करि अधिक सामग्री होई। तब तो श्रीठाकुरजी वैष्णव के भाव सों अरोगें। परि न्यौते न होंइ तब नित, जो-अपुने घर उठत होइ तितनी सामग्री होइ, तामें तें वैष्णव कों लिवावें तो अपुने भाग में ते वैष्णव लिये जानिये। यों तो श्रीठाकुरजी सबकों महाप्रसाद देत हैं। यह कहि वैष्णव में प्रीति दिखाई, जो-ओचकां वैष्णव आये वैष्णव पर प्रीति होइ, जो-आपु भूखो रहे, वैष्णव कों भाग्य जानिकें लिवावें, सो ठाकुर आरोगे जानिए। तातें शिक्षापत्र में कह्यो है-''तदीयाश्चेत्स्वतस्तुष्टास्तुष्टः कृष्णो न संशयः।'' तदीय संतुष्ट होइ या भांति, तब श्रीठाकुरजी संतुष्ट प्रसन्न भये। जानिए। या प्रकार नारायनदास के हृदय में अनिर्वचनीय प्रीति वैष्णव पर हू हती।

वार्ता-प्रसंग ४- और एक समय नारायनदास श्रीगोकुलचंद्रमाजी को शृंगार करि शृंगार-भोग खीर सिद्ध कियो।

थार में पधरायो। इतने में एक वैष्णव ने नारायनदास कों बधाई दई, जो–श्रीगोकुल में श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारे हैं। तब नारायनदास ताती खीर भर्यो थार श्रीगोकुलचंद्रमाजी कों भोग धरिकें श्रीआचार्यजी के दरसन कों श्रीगोकुल चले। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु महावन पधारत हते। सो मारग में दरसन भयो। तब नारायनदास ने दंडवत् कियो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीमुख तें कहें, नारायनदास ! श्रीठाकुरजी को कहा समय है ? तब नारायनदास ने बिनती करी, महाराज ! शृंगार–भोग धरि आपुके दरसन कों आयो हों। तब श्रीआचार्यजी उतावलि पधारे। सो तत्काल अस्नान करि मंदिर में पधारे। झारी लिये। तब देखे तो श्रीगोकुलचंद्रमाजी हाथ खेंचि रहे हैं। श्रीहस्त खीर सों भरे हैं। सिंघासन पर, वस्त्रन पर खीर के छांटा परे हैं। तब श्रीआचार्यजी ने श्रीगोकुलचंद्रमाजी सों पूछ्यो, जो–बाबा ! हस्त क्यों खेंचि रहे हो ? तब श्रीगोकुलचंद्रमाजी ने कही, नारायनदास ताती खीर समर्पि के गयो। सो मैं हस्त सों खीर उठाई। सो ताती लागी। तब मैं हस्त झटकि कें आंगुरि चाटी है। सो मेरो ओष्ठ हस्त दाझें है। और मंदिर में जहां तहां छांटा परे हैं। तब श्रीआचार्यजी श्रीहस्त सों ओष्ठ देखे तो अत्यंत आरक्त हैं। तब खीर पंखा सों सीरी करिके भोग समर्पि आपु बाहिर आये। तब नारायनदास कों खीजि के कहें, क्यों तू श्रीठाकुरजी कों ताती खीर समर्पी ? तब नारायनदास ने कही, महाराज ! आपुकी बधाई सुनि उतावलि में खीर समर्पी। तब श्रीआचार्यजी कहें, आजु पाछें ऐसो काम कबहू मति करियो।

भावप्रकाश–याको आसय यह, जो–नारायनदास श्रीआचार्यजी की बधाई

सुनि परवस है गये। सो जाने, जो–ताती होइगी तो श्रीठाकुरजी सीरी करि लेंइगे परंतु श्रीआचार्यजी के दरसन कों ढील करनो धरम नाहीं। या भाव सों गये। तब श्रीगोकुलचंद्रमाजी, नारायनदास के हाथ को धर्‍यो तातो हू अरोगत हों यह जताइवे के लिये सगरो हस्त खीर में डारि झटकें। तथा उतावलि में, जो–कोई भोग धरे, श्रृंगार करें, तो कछु अपराध परे यह जताए। और नारायनदास श्रीआचार्यजी के पास जाइवे कों मन कियो अलौकिक, तउ सेवा में इतनो श्रम श्रीठाकुरजी कों भयो, जो–लौकिक वैदिक कार्य के लिये उतावलि करें, ताको तो बहोत ही अपराध परे। तातें सेवा करत मन ठिकाने राखनो। अथवा खीर की सामग्री को स्वरूप प्रगट कियो, जो–यह श्रीस्वामिनीजी के भावकी है। और श्रृंगार–भोग हू उनहि के भाव को है। तातें खीर कों देखत श्रीठाकुरजी प्रेम सों प्रथम हस्त खीर में डारत हैं। तातें खीर सीरी करि अँगुरी डारि देखिये। सुहाय तब भोग धरिये। यह सिद्धांत दिखाये।

पाछें समय भये श्रीआचार्यजी आचमन, मुख–वस्त्र कराइ बीड़ी अरोगाई, भोग सराये। तब श्रीगोकुलचंद्रमाजी श्रीआचार्यजी के दोउ श्रीहस्त पकरि के कहें, जो–यह खीर महाप्रसाद आपु लेहु। तब श्रीआचार्य कहें, जो–महाराज ! ज्ञाति–ब्यौहार कठिन हैं, तातें मर्यादा राखी चाहिये। तब श्रीगोकुलचंद्रमाजी कहें, मेरी आज्ञा है तातें लेहु। तब श्रीआचार्यजी खीर महाप्रसाद अरोगे। सो तब ताही दिनतें खीर अनसखड़ी में होति है।

भावप्रकाश–यामें, या कारन तें श्रीगोकुलचंद्रमाजी कहें, खीर ऐसी सामग्री में ज्ञाति की मर्यादा अपने भक्तन में मति राखो। तब आरोगे। ता दिन तें खीर अनसखड़ी में करें। ताको कारन यह, जो–अनसखडी श्रीठाकुरजी सगरे भोग में अरोगते हैं। और खीर उत्सव के भोग में नाही राखे। नित्य में राखे। ताको कारन यह, जो–उत्सव में राखे तो वैष्णव उत्सव में करें। तातें खीर सदा प्रिय है। यामें रीतु के, उत्सव को विचार नाहीं। तब बने तबहि करिये।

वार्ता–प्रसंग ५–या प्रकार नारायनदास सेवा बहोत करी। पाछें इनकी देह थकी। तब एक दिन नारायनदास सों श्रीठाकुरजी नें कही, कछू मांगि। तब नारायनदास ने श्रीगोकुलचंद्रमाजी सों

कह्यो, मैं यह तुम सों मागत हों श्रीगुसांईजी के घर पधारि के सेवा कराईयो।

भावप्रकाश–ताको कारन यह, जो–श्रीगुसांईजी के घर बिना श्रीठाकुरजी सुख न पावेंगे।

तब श्रीगोकुलचंद्रमाजी बहोत प्रसन्न भये, जो–तू मेरो सुख मांग्यो। अपुनो सुख कछू न मांग्यो। पाछे नारायनदास की भतीजी की देह छूटी। ताके तीसरे दिन नारायनदास की देह छूटी। ता पाछे कृष्णदास स्वामी महावन में रहते। नारायनदास की ज्ञाति के हते। श्रीगुसांईजी के सेवक। तिन पास कछूक दिन श्रीगोकुलचंद्रमाजी सेवा कराये।

भावप्रकाश–सो यातें, जो–लीला में येहू नारायनदास की सखी है। मृदुबेनी इनको नाम है। तातें सेवा कराये। पाछें मथुरा में श्रीगुसांईजी के घर पधारें। इनकी वार्ता को यह सिद्धांत भयो, जो–ब्रह्मचारी के धर्म दिखाये। जो–अपनी महाप्रसाद की पातरि धरि प्रसन्न होनों श्रीठाकुरजी सों अपुनो सुख न मांग्यो। प्रभु को सुख विचारे, यह पुष्टिमारग की रीति हैं।

सो नारायनदास की वार्ता को पार नाहीं सो कहां तांई कहिये। वार्ता ॥१४॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवकनी, एक क्षत्रानी, महावन में रहती, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश–सो ये क्षत्रानी लीला में श्रीस्वामिनीजी की अंतरंगिनी सखी, भद्रा इनको नाम है। सो एक क्षत्री के घर जन्मी। सो ग्यारह बरस की भई। तब माता–पिता ब्याह करिवे की कहें। तब ये कहे, जो–मेरो ब्याह मति करो। जा दिन मेरो ब्याह करोगे ता दिन वर मरेगो। और तुमहू मरोगे। तब वे डरपि के चुप है रहते। सो तेरह बरस की भई तब माय–बाप की ज्ञाति में निंदा होन लगी। सो एक सों सगाई करी। सो उह ब्याहन आयो। सो फेरा परत ही याके मा, बाप, उह वर, तीनों मरि गये। तब यह घर में अकेली रहे। यासों गाम में संबंधी कोऊ न बोले। जो–इन ने

ब्याह होत ही मा–बाप और वर सब कों मारे। यामें प्रीति करेगो सो मरेगो। यह लोग कहते। सो नारायनदास के घर श्रीआचार्यजी पधारत हते, तब यह क्षत्रानी कों दरसन भयो। सो सुद्ध जीव हती सो जान्यो। इनकी सरनि जइये। तब श्रीआचार्यजी सों बिनती करि दंडवत् कियो, महाराज ! मोकों अंगीकार करो। अब मेरे प्रतिबंध लौकिक सब छूटें। तब श्रीआचार्यजी नाम निवेदन कराये। तब यह क्षत्रानी ने कही, महाराज ! अब मोकों कहा आज्ञा है ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, भगवत्सेवा करो। तब क्षत्रानी ने कही, महाराज ! लीला में सदा आपु की सेवा करी है। अरु आपु भगवत्सेवा की कही। सो भगवत्सेवा तो बहोत लोग करत हैं। परंतु आपु के चरनारविन्द मिलनो बहोत दुर्लभ हैं। सो मोकों साधन में मति डारो। मोकों सदा अपुनी सेवी देउ। सो सदा आपु के संग रहों। आपु के दरसन करों। मोकों एक आपु के चरनारबिंद को आश्रय है। तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होइ के कहें, जो–तू सांच कही, परंतु हमकों पृथ्वी–परिक्रमा करनी हैं। तातें स्त्रीजन को संग ठीक नाहीं। पाछें श्रीआचार्यजी कुमकुम मँगाइ एक वस्त्री पर दोऊ चरन में कुमकुम लगाइ छाप करि वह क्षत्रानी कों दियो ? और कहे, इनकी सेवा करियो। मैं तोपर प्रसन्न हों। तेरो सगरो मनोरथ पूरन होइगो। तब उह क्षत्राणी श्रीआचार्यजी कों भली भांति सों घर में पधराय श्रीआचार्यजी की श्रीस्वामिनीजी के भाव सों सेवा करती। श्रीआचार्यजी दरसन देते। सब रस को अनुभव करावते। पाछें श्रीआचार्यजी पृथ्वी–परिक्रमा करत कासी में पधारे।

इहां एक दिन उह क्षत्रानी श्रीजमुना–जल भरन अपरस में गागरि लेकें ब्रह्मांडघाट गई। सो गागरि लें श्रीयमुनाजी में पैठी। तब किनारे पर थोरे जल में चारि स्वरूप देखे। तब क्षत्रानी ने कही, तुम परम सुन्दर जल में क्यों बिराजे हो ? तब चारचो स्वरूप ने कही, तू हम कों घर पधराव। अब कछूक दिन में श्रीआचार्यजी पधारेंगे। तब उनकों दीजो। तब उन क्षत्रानी ने कही, मैं घर में श्रीआचार्यजी सों पूछि आउं, तब पधराऊं। तब गागरि भरि के बेगे दोरि आई, मंदिर में जाइ बिनती करी, महाराज ! चारि स्वरूप श्रीयमुनाजी के किनारे हैं। सो कहे, मोकों पधराव। सो कहा आज्ञा है ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, जा, बेगि पधराई लाव। तब आई के चारों स्वरूप पधराइ मंदिर में वस्त्र पहराइ भोग धरचो। यामें यह जताये, जो–वह क्षत्राणी को ममत्व श्रीआचार्यजी की सेवा को हतो। भगवद् सेवा पर न हतो। परन्तु श्रीठाकुरजी चारि स्वरूप ह्वै आपु ही पधारे। तातें श्रीआचार्यजी की सेवा है, ता वैष्णव के पास श्रीठाकुरजी बिनु जतन आप सों पधारत हैं।

यह बात कासी में श्रीआचार्यजी ने जानी। तहां तें ब्रज कों पधारे। सो प्रथम अड़ेल आये। पाछें कड़ा में पधारे। कड़ा में देवाकपूर क्षत्री हते। सो गदाधर के पास ही इनको घर हतो। सो एक दिन गदाधरदास के इहां वैष्णव महाप्रसाद लेत हते

गदाधरदास परोसत हते। सो देवाकपूर को घर कछूक ऊंचो हतो। सो देवाकपूर ऊपर ते देखत हुते। सो एक वैष्णव के पास बैठे श्रीठाकुरजी भोजन करत हते। सो मूरछा खाये। सो घरि एक में सावधान है गदाधरदास पास आइ कहें, सगरे वैष्णव कहां गये ? तब गदाधरदास ने कही महाप्रसाद लें अपुने घर गये। तब देवाकपूर ने कही, तिहारे वैष्णव के बीच में श्रीठाकुरजी भोजन करत मैं देखे, सो मोकों मूरछा आई। सो अब दोरचो आयो हों। सो अब मोकों श्रीठाकुरजी के दरसन कैसे होई। तब गदाधरदास ने कही, तेरे बड़े भाग्य हैं, जो-दरसन भये। अब कहां दरसन ? तब देवाकपूर ने कही, कोई उपाव बतावो, मैं तिहारी सरनि हों। जो-मोकों श्रीठाकुरजी मिलें। सगरो जनम योंही गमायो। तब गदाधरदास ने कही, श्रीआचार्यजी की सरनि जाव। श्रीआचार्यजी की कृपा तें वैष्णव कों श्री ठाकुरजी मिले हैं। उनकी कृपा तें तुमहू कों मिलेंगे। अब कासी तें पधारे हैं। सो दोय चारि दिन में इहां पधारेंगे। सो देवाकपूर नित्य गदाधरदास के इहां आइ पूछे। जो-आरति बढ़ी। सो घर को कार्य भूलि गये। सो दोय चारि दिन पीछें श्रीआचार्यजी कडा में पधारे। तब देवाकपूर आइकें श्रीआचार्यजी कों दंडवत् कियो। बिनती करी, महाराज! कृपा करिकें सरनि लीजिये। तब गदाधरदास नें श्रीआचार्यजी सों देवाकपूर के समाचार कहें। या प्रकार याकों वैष्णवन में श्रीठाकुरजी के दरसन करि आरति भई है। दैवी जीव है। तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न ह्वे देवाकपूर कों नाम निवेदन करायो। तब देवाकपूर ने विनती करी, अब हमकों कहा आज्ञा है ? तब श्रीआचार्यजी कहे, तुमहू हमारे संग ब्रज चलो। तहां श्रीठाकुरजी तिहारे माथे पधराइ देंइगें। तुम सेवा करियो। तब देवाकपूर की स्त्री घर रही। देवाकपूर संग चले।

पाछें श्रीआचार्यजी आगरें पधारे। सो आगरे में गज्जनधावन क्षत्री हते। सो इनके पिता पास द्रव्य बहोत हतो। चारि बेटा हते। तामें गज्जन छोटो हतो, और घर में गज्जन की माता हती। स्त्रीजन में कोई न हतो। सो गज्जन के पिता ने नाव के ऊपर भवैया को नाच करायो। सो गज्जन सहित चारयो बेटा पास और गांव के मिलापि सगे संबंधी मिलि पचास-साठि मनुष्य हते। सो रात्रि अर्द्ध गई। इतने नाव अकस्मात् फाटी, सो सगरे डूबे। एक गज्जन के हाथ नाव को टूक परचो, सो गज्जन ने पकरचो, सो वह टूक बहिके आगरे तें कोस चारि पर लग्यो। सबेरो भयो। तब गज्जन घर आये अपनी मांसों समाचार कहें। भाई पिता सब डूबे। तब गज्जन की माता सती भई। गज्जन अकेले रहे। व्यौपार करनो छोड़ि दियो। दोई चार घरी श्रीयमुनाजी पर जाइ बैठे। पाछें अपने घर बैठे रहें। बहोत काहु सों बोलनो नाहीं, मन में वैराग्य आयो। जो-पिता, भाई सब मरें, हम हू मरेंगे। कहा करें ? भगवान कृपा करें तो आछो है। या प्रकार सब सों उदास रहें।

और जीयदास सूरी क्षत्री हु आगरे में रहें। सो जीयदास बरस साठि के भये। सो आगरे में कोतवाली लिये। सगरे आगरे को न्याव करते। सो एक दिन एक ब्राह्मणी को, एक सूद्र को झगरो आयो। सो ब्राह्मणी के पास सूद्र ने द्रव्य लीनो सो देय नाहीं। तब ब्राह्मणी पुकारी। तब सूद्र नें कछू रुपैया जीयदास कों दिये। और कह्यो, ब्राह्मणी कों झूठी करियो। तब जीयदास नें ब्राह्मणी कों लोभ के बस झूठी किये। जोरावरि फारकती लिखाइ दिये। सो वह ब्राह्मणी कलपें। सो जीयदास के सगरे सरीर में कोढ़ भयो। तब जीयदास दैवी है, तातें ज्ञान भयो। जो–मैं ब्राह्मणी कों लोभ के बस झूठी कीनी। तातें यह कोतवाली को काम महा बुरो है। तब कोतवाली छोड़ि वह ब्राह्मणी कों बुलाय कहें, माता ! मैं लोभ के बस झूँठी तुमकों या रीति सों कीनी। सो ब्याज सहित रुपैया मोसों ले जाव। तिहारे अपराध तें मेरी यह गति भई हैं। सो ब्याज सहित वाकों रुपैया दिये। और दस रुपैया और अपनी ओर तें दीनें। तब वह बहोत आसीरवाद देंन लगी। तब (तें) जीयदास हू वैराग्य करि श्रीयमुनाजी के किनारें जाइ बैठें सो तीसरे पहर घर आइ खान पान करतें। कछुक दिन में जीयदास की देह आछी भई। कोढ़ सब जात रह्यो।

पाछें एक दिन गज्जन श्रीयमुनाजी के तीर बैठे हते। तहां जीयदास हू आइ बेठे, पास। तब परस्पर बतराये। तब गज्जन ने अपनी बात कही। जो–हमारे पिता भाई सब डूब मरे। माता सतीभई। तब तें वैराग्य भयो है। तब जीयदास नें अपनी बात कही। जो–मैं ब्राह्मणी को द्रव्य अन्याय करिके लियो। ताएं मेरी देह बिगरी। तब ज्ञान भयो। अब कोई प्रकार भगवान की प्राप्ति होई तो आछो। तब गज्जन ने कही, चाह मेरे हू है। परंतु कैसे मिले ? भगवान तो कोई बड़े महापुरुष की कृपा होइ तो मिलें। तब जीयदास ने कही, जो–सो तो सांच, परन्तु हम महापापी ! हमकों महापुरुष कहां मिलें ? सो अब भगवान को आश्रय करि श्रीयमुनाजी को आश्रय किये हैं। जो–बने सो सही। या प्रकार दोऊ जनें नित्य मिलैं, बातें करे।

सो ऐसे करत कडासों श्रीआचार्यजी आगरे पधारे। सो श्रीयमुनाजी के तीर संध्यावंदन करत हते। इतने में गज्जन और जीयदास आये। सो श्रीआचार्यजी को दरसन भयो। तब दोउ बतराये; ये महापुरुष हैं। इनकी सरनि जाँय। पाछें गज्जन ने कृष्णदास मेघन सों पूछ्यो, ये कौन हैं ? तब कृष्णदास मेघन ने कही, श्री बल्लभाचार्यजी हैं। दक्षिण में, कासी में, मायावाद खंडन करि भक्तिमारग प्रगट किये हैं। तब गज्जन नें और जीयदास नें दंडोत् किये। और बिनती करी, जो–महाराज ! हम संसार–समुद्र में डूबत हैं। हमकों सरनि ले उद्धार करो। तब श्रीआचार्यजी ने श्रीयमुनाजी में न्हवाय के नाम निवेदन कराये। पाछें जीयदास नें कही, महाराज ! हमारे घर पधारो। तब जीयदास के घर पधारि जीयदास के बेटा दोइ हते,

पुरुषोत्तमदास, छबीलदास, तिनकों नाम–निवेदन कराये। पाछें गज्जन को घर खाली हतो। तहां पधारिकें सामग्री करि भोग धरि भोजन किये। गज्जन कों जीयदास कों जूठन दिये। तब गज्जन नें, जीयदास नें बिनती करी, महाराज ! अब हमकों कहा कर्तव्य है ? तब श्रीआचार्यजी कहें, हमारे संग श्रीगोकुल चलो। दोऊ जनेन कों श्रीठाकुरजी पधराइ देइगे। सो सेवा करियो। तब गज्जन और जीयदास संग चलें। देवाकपूर कड़ा तें संग आये हे।

और नारायनदास ब्रह्मचारी महावन में रहतें। सो इनको पिता मथुरा में जाइ क्षत्री पास जीविका लावतो। तासों निर्वाह होतो। सो एक दिन नारायनदास कों संग लै मथुरा आयो। सो एक क्षत्री के घर जाइ कछू मांग्यो। तब क्षत्री ने रिस करि कह्यो, जो–धिक्कार है ब्राह्मण कों, नित सबेरे होत ही तेरो जनम मांगते बीत्यो। परंतु कबहू पेट न भर्‍यो तातें तोकों कबहू लज्जा न आई। यह सुनत ही नारायनदास कों बुरी लागी, सो महावन चले आये। पिता और ठोर तें मांगि के महावन आयो। तब नारायनदास ने कही, अब मेरो मुख मति देखो। मैं तेरो लायो भीख कछू न खाऊंगो। तब पिताने समुझायो। अपनो ब्राह्मण को यही कर्म है । मांगन जैये तहां तो अनादर होइगो। सो न मांगिये तो काम कैसे चले ? तब नारायनदास ने कही, तिहारो कर्म मांगन को है,सो मांगो। मैं तो तिहारे न रहोंगो। सो श्रीयमुनाजी के तीर ब्रह्मांडघाट जाई बैठें। जो–आवे तामें निर्वाह करें। गायत्री जपें काहुसों बोले नाहीं। ऐसे करत नारायनदास के पिता–माता की देह छूटी। ता पाछें घर में आइ रहे। सो द्रव्य को उपाय साधन बहोत किये। परंतु द्रव्य न पाये। तब एकादश स्कंध में अष्टसिद्धि कहे हैं। ताहू के साधन बहोत किये परंतु साधन कछू सिद्ध न भयो। तब हार मानि रहें। ऐसे करत चालीस बरस के भये। तब वैराग्य आयो। जो–द्रव्य के पीछें इतने दिन वृथा पचे। अब मथुरा जाइ भगवान के लिये तप करों। जहां ध्रुवजी तप कर्‍यो है। सो आइके सगरो दिन गायत्री जपें रात्रि कों पावसेर दूध लेइ। या प्रकार दिन छै बीते। तब श्रीआचार्यजी आगरे तें मथुरा पधारे। सो ध्रुवघाट पर मध्याह्न की संध्या करत नारायनदास की ओर देखे। तब नारायनदास के मनमें यह आई, जो–इनके सेवक होंइ तो श्रीठाकुरजी कृपा करें। तब श्रीआचार्यजी कों दंडौत् करि बिनती किये, महाराज ! मोकों कृपा करि सेवक करिये। तब श्रीआचार्यजी कहे, तुम ब्रह्मचारी हो। पहले तो द्रव्य के लिये बहोत उपाय कियो। सो सिद्ध न भयो। अब तू श्रीठाकुरजी के लिये तप करत है, तातें सेवक होइवे की क्यों कहत हो ? तब नारायनदास ने कही, महाराज ! आपु पूरणपुरुषोत्तम हो। मेरे जनम की सगरी बात कहि दीनी। सो आपु की कृपा बिना श्रीठाकुरजी दुर्लभ हैं तातें अब मैं बहोत भटक्यो। अब आपु मोपर कृपा की दृष्टि करी, तब मेरो मन सेवक होंन कों भयो। तैसे

कृपा करिके सरन लीजे।

तब श्रीआचार्यजी नारायनदास कों नाम निवेदन कराये। तब नारायनदास ने बिनती करी, महाराज ! अब हमकों कहा कर्तव्य है ? सो आज्ञा दीजें। तब श्रीआचार्यजी कहे, हमारे संग महावन चलो। तिहारे माथे श्रीठाकुरजी पधराय देंइगे। तिनकी तुम सेवा करियो। तब नारायनदास ने कही, मेरो घर महावन है। सो पधारिये। और मेरे एक भतीजी है ताकों सेवक करिये। सो श्रीआचार्यजी सांझकों श्रीगोकुल पधारे। रात्रिकों रहे। प्रातःकाल नारायनदास के घर महावन पधारिकें नारायनदास की भतीजी को नाम निवेदन कराये। इतने उह महावन में क्षत्रानी सों चारों स्वरूप ने कही, श्रीआचार्यजी नारायनदास के घर पधारे हैं, तहां हमकों ले चलो।

वार्ता-प्रसंग १- सो एक समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु पृथ्वी-परिक्रमा करत महावन पधारे। सो तब वा क्षत्रानी ने ब्रह्मांडघाट पें श्रीयमुनाजी में तें चारों स्वरूप प्राप्त भये हते, वे चारों स्वरूप लायकें श्रीआचार्यजी के पास राखे। सो श्रीआचार्यजी ने चारों स्वरूप चारों वैष्णवन के माथे पधराये। श्रीनवनीतप्रियजी, गज्जनधावन के माथे पधराये। श्रीगोकुलचंद्रमाजी, नारायनदास के माथे पधराये। श्रीलाडलेसजी, जीयदास सूरी क्षत्री के माथे पधराये। श्रीललितत्रिभंगीजी, देवाकपूर के माथें पधराये। और चारों वैष्णवन सों श्रीआचार्यजी ने कही, ये मेरे सर्वस्व हैं। सो तिहारे माथें पधराये हैं। सो सेवा प्रीति सों नीकी भांति सों करियो। और तुम सों न बनि आवें तब हमारे घर पधराइयो। सो चारों कों सेवा की रीति बताये। पाछें देवाकपूर और जीयदास सों कहे, तुम घर पधराइ ले जाव, गज्जन पाछें तें आवेगो। तब जीयदास घर आये। सेवा करन लागें, आगरे में। सो इनकी वार्ता में आगें कहेंगे। और देवाकपूर कडा में आये। तिनकी सेवा को प्रकार देवाकपूर की वार्ता में कहेंगे नारायनदास कों सेवा की रीति

बताये। सो नारायनदास ने सेवा करी। सो नारायनदास की वार्ता में पहलें कहि आये हैं।

वार्ता-प्रसंग २-अब श्रीआचार्यजी गज्जन कों और श्रीनवनीतप्रियजी कों संग लेके श्रीगोकुल पधारें। संग में दामोदरदास हरसानी, कृष्णदास हैं। श्रीगोकुल आये। प्रातःकाल जन्माष्टमी ही। सो श्रीगोकुल में उत्सव किये। एक दहेंडी दहीं सों दधिकादो किये। एक उपरनामें श्रीनवनीतप्रियजी कों झुलाये। एक ओर दामोदरदास हरसानी। एक ओर कृष्णदास मेघन पकरे। गज्जन ने नृत्य कियो। श्रीआचार्यजी पालने झुलाये। साक्षात् नन्दराय यसोदाजी, ब्रजभक्त, गोप गोपी सब नंदालय की लीला प्रगट करी। अनुभव सेवक कों कराये।

पाछें गज्जन कों श्रीनवनीतप्रियजी पधराइ आगरे को बिदा किये। सो गज्जन आगरे आइ सेवा किये। सो प्रकार गज्जन की वार्ता में ऊपर कहि आये हैं। पाछें श्रीआचार्यजी पृथ्वी-परिक्रमा कों पधारें। सो उह क्षत्रानी श्रीआचार्यजी की ऐसी कृपापात्र ही। तिनकों श्रीआचार्यजी की सेवा पे दृढ़ भाव हो। चार स्वरूप प्रथम ही पधारें। परि श्रीआचार्यजी की सेवा में ममत्व राखें। सो इनकी वार्ता गूढ़ है। सो बहोत प्रकास नाहीं कियो।

वार्ता ॥१५॥

कृष्णदास भये। छबिधामा सखी सो इहां हरजी भये। मंजुकि सखी, सो इहां मथुरामल्ल भये। अब छहो जने जा प्रकार श्रीलाडिलेसजी की सेवा करि लीला में प्राप्त भये, सो प्रकार कहत हैं।

वार्ता-प्रसंग १-अब जीयदास सूरी क्षत्री के माथे श्रीआचार्यजी श्रीलाडिलेसजी पधराये। सो आगरे आये। प्रातःकाल तें संध्या लों सेवा मन लगाइ कें तनुजा-वित्तजा मानसी करें। सो अनोसर करत विरह ऐसो भयो, जो-देह छूट गई। या प्रकार श्रीलाडिलेसजी चारि प्रहर जीयदास सों सेवा कराई।

भावप्रकाश-काहेतें, जीयदास उत्तम अधिकारी हैं। लीला में मगन ह्वे गये। पाछें लौकिक-वैदिक न देखें।

पाछें जीयदास के दोय बेटा हते। पुरुषोत्तमदास, छबीलदास, सो कोइ दिन सेवा करी। सो इन दोऊ भाईन कें संतति न भई।

भावप्रकाश-सो काहेतें, जीयदास की देह छूटे पाछें दोउ भाई लौकिक में ब्यौहार छोड़ि कें श्रीठाकुरजी में मन लगाइ सेवा करी।

सो जब जानें अब देह छूटेगी तब ये दोऊ भाई के मामा कृष्णदास चोपड़ा क्षत्री हते, तिनके माथें श्रीलाडिलेसजी पधराये। सों कृष्णदास चोपडा नें कछूक दिन भली भांति सों सेवा कीनी। पाछें एक समय महामारी आई। सो तब कृष्णदास के सब कुटुंब की देह छूटी। कृष्णदास आपु अकेले रहे।

भावप्रकाश-सो काहेतें, जो-कुटुंब दैवी न हतो। तातें कोई सेवक न भयो। और द्रव्य जितनो दैवी हतो, तितनो श्रीठाकुरजी अंगीकार किये। पाछें आसुरी रह्यो, सो आगरे में पठान आयकें गाम लूटे, मारे। तामें कृष्णदास श्रीलाडिलेसजी रहें। इनको द्रव्य सब लूटि गयो।

तब कृष्णदास के मित्र हरजी, मथुरामल्ल है। सो

श्रीआचार्यजी के सेवक हे। तिनके घर कृष्णदास जाइकें रहें। सो मथुरामल्ल तो दिन तीन लों सेवा करि देह छोड़ी। भगवत्प्राप्ति भई। पाछें हरजी और कृष्णदास मिलि के सेवा करी। पाछें कृष्णदास की देह छूटी, लीला में प्राप्त भये। पाछें हरजी ने डेढ़ बरस लों श्रीलाडिलेसजी की सेवा करी। ता पाछें श्रीगुसांईजी के घर श्रीगोकुल पधारे। सो जीयदास श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपा पात्र भगवदीय हते। इनकी वार्ता को पार नाहीं, सो कहां तांई कहिये। वार्ता ॥१६॥

भावप्रकाश–पाछें हरजी की देह बिगरी सो बड़े श्रीगरिधरजी के लालजी श्रीदामोदरजी, श्रीमुरलीधरजी, श्रीगोपीनाथजी। इनके घर श्रीगोकुल में श्रीठाकुरजी की सगरी सामग्री वस्त्र–आभूषन सहित पधराइ, विरह करि देह छोड़ी। सो ये छेहों श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हे। लीला संबंधी हते, सो एकही जनम में प्रभुकों पाये।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, देवाकपूर क्षत्री, कड़ा में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–देवाकपूर और देवाकपूर की स्त्री दोऊ श्रीजसोदाजी की सखी हैं। देवाकपूर को नाम प्रवीना लीला में, देवाकपूर की स्त्री को नाम लीला में रसलीना है।

वार्ता–प्रसंग १–सो देवाकपूर के माथे श्रीआचार्यजी ने श्रीललितत्रिभंगीजी की सेवा पधराये। सो देवाकपूर ने स्त्री सहित बहोत दिन श्रीललितत्रिभंगीजी की सेवा करी। पाछें देवाकपूर की देह छूटी। तब देवाकपूर की स्त्री ने बहोत दिन सेवा करी। कितनेक दिन पाछें देवाकपूर की स्त्री की देह छूटी। सो तब वाके सगे संबंधीन नें याको अग्नि–संस्कार कियो। ता पाछें घर आइ मंदिर के किंवाड़ खोलकें बेटान ने देख्यो तो सगरो सामग्री ज्यों की त्यों स्थित हैं। और श्रीठाकुरजी नाहीं। सैया खाली परी हैं!

श्रीठाकुरजी अंतरधान भये। सो काहू कों जानी न परी। ऐसे अंतरध्यान भये। देवाकपूर के बेटा चारि हते। परि सेवा श्रीठाकुरजी उनतें न कराये।

भावप्रकाश–काहेतें, जदपि नाम श्रीगोपीनाथजी, श्रीगुसांईजी के बड़े भाई के पास पाये हते। परन्तु लौकिक वैदिक कार्य में आसक्त हते। तातें सेवा श्रीठाकुरजी ने न कराई। और श्रीगोपीनाथजी जिनकों नाम दिये, सो मर्यादामार्गीय भये। ये बलदेवजी मर्यादा रूप हैं। और श्रीललितत्रिभंगीजी श्रीआचार्यजी के सेव्य पुष्टि पुरुषोत्तम, सो संबंध कैसे बनें ? और चारि बेटान के आगें वैष्णव कों सेवा कैसे मिले ? तातें श्रीठाकुरजी अंतरधान व्है गये। पाछें सिंहनंद में एक श्रीगुसांईजी की सेवकनी ब्राह्मणी हती, वाके घर प्रगट ह्वै सब बात वा ब्राह्मणी सों कही। गोप्यरीति सों बहोत दिन लों सेवा कराये। सो श्रीगुसांईजी की वार्ता के भाव में लिखे हैं। जा प्रकार श्रीगुसांईजी के कुल में पधारे।

सो वह देवाकपूर और देवाकपूर की स्त्री बड़े भगवदीय हैं। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥१७॥

भावप्रकाश–इनकी वार्ता में यह सिद्धांत जताए, जो–दैवी जीव बिनु श्रीठाकुरजी में स्नेह न होइ। श्रीठाकुरजी सेवा हू न करावें।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, दिनकर सेठ क्षत्री, प्रयाग में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश–ये दिनकर सेठ लीला में भगवद् संबंधिनी सखी श्रीठाकुरजी की है। सो श्रीस्वामिनीजी सों बहोत प्रीति है। श्रीठाकुरजी की वार्ता सब पूछती। इनसों सगरी अपनी प्रीति की बात कहती। सो लीला में इनको नाम ''मनुआतुरी'' है। सदा श्रीस्वामिनीजी की वार्ता सुनि श्रीठाकुरजी सों कहती। दोऊन की वार्ता सुनन में मन आतुर, जो मन रहि न सकतो सुनिवे को व्यसन हतो। तातें श्रीठाकुरजी कों, श्रीस्वामिनीजी कों परम प्रिय हैं। सो दिनकर सेठ प्रयाग में एक बड़ो द्रव्यमान क्षत्री हतो, वाके घर जन्में। सो पांच बरस के भये ता दिन तें श्रीठाकुरजी की कथा–वारता होई, सो सुनन में इनकों मन लाग्यो। पाछे बरस दस बारह के भये। तब गहना–कपड़ा अपुने तथा घर में जो हाथ लगे सो कथा कहेनवारे कों दे आवें। तातें इनके मा–बाप, तीन भाई हते सो सब दिनकर सेठ कों चोर कहते। घर में इनको

विश्वास न करते। सो एक समय दिनकर सेठ के बड़े भाई को ब्याह हतो। तातें इनहूँ कों सुन्दरी जरी को बागा, चीरा पहराये। आभूषन पहराये। घोरा पर चढ़ाये। बरात में ले चलें। तब दिनकर सेठ के मन में यह आई, जो–आजु भाजिवे को दाब परें तो यह सब कथा कहनवारें कों दे आऊं। सो जब बरात बेटीवारे के द्वारे गई तब सगरे कुटुंबी ब्याह के कार्य नें लगें। दिनकर सेठ भाजिकै दस–पांच कथा कहनवारे के घर जाइ सगरे आभूषन–वस्त्र बांटि दिये। और कहें, जो–हमारे भाई, पिता, कुटुंबी, काहू सों कहियो मति। पाछें दिनकर सेठ एक धोती पहरे घर में आई बैठे। तब माता ने पूछी, आभूषन वस्त्र कहां हैं ? पाछें पिता ढूंढत–ढूँढत आइ के दिनकर सेठ कों बहोत मारयो। तीन दिन लों कोठा में मूंदि राखे। परंतु दिनकर सेठ बोले नाहीं। कछू न बताये। तब पिता, भाई हार मानि कें बैठि रहें। दिनकर सेठ सगरे दिन कथा वार्ता सुनें। जहां जाइ तहां श्रोता वक्ता इनकों सेठ कहें। इनकी सराहना करें। और लोगन में ज्ञाति कुटुंबीन में याकों चोर कहें। सो दिनकर सेठ कहाये। सो सांझ कों घर आवें। तब मा बाप खाइवे कों देइ सो खाँई। जैसो पहिरवे को देइ सो पहरें। एक बार सांझ कों खांय। कथा कहनवारे के घर कहूँ जागरन होई, भगवद् वार्ता होइ, तहांई सोइ रहते। घर में रहन न देते। जो कछू नजर परेगो सो नजर चुकाइ कें ले जाइगो। ज्ञाति में चोर कहाये। तातें इनको ब्याह न भयो। ऐसे करत माता–पिता रहें तबलों खानपान चल्यो गयो। पाछे माता–पिता मरे। तब भाई सों न बने। तब दिनकर सेठ ने बिचारयो। अब यह गाँव छोड़िये तो आछो। सो प्रातःकाल त्रिवेनी न्हाइवे कों घाट पर दिनकर सेठ आये। और श्रीआचार्यजी नें अड़ेल तें कृष्णदास मेघन सों कह्यो, जो–सहर में जाई खांड दोइ–चारि रूपैया की ले आउ। सो कृष्णदास मेघन त्रिवेनी में आये। दोऊ स्नान करत है। तब दिनकर सेठ नें कही, तुम कौन हो ? तब कृष्णदास पूछे, तुम कौन हो ? हम सों पूछो सो तुमकों कछू काम है ? तब दिनकर सेठ ने कही, मोकों यह गाँव छोड़नो है। सो तुमकों परदेसी जानि पूछ्यो। जो–काहू कों भगवद् वार्ता–कथा आवत होइ तो मैं उनके संग जाऊं। मेरे घर में द्रव्य बहोत है। सो माता–पिता हते तबलों निर्वाह भयो। अब तीन भाई हैं, सो मोकों चोर कहि बुरें बचन बोलत हैं। मेरो ब्याह भयो नाहीं। सो ठाकुरने आछी करी। तब कृष्णदास दैवी जानि कहें, तुमकों (कथा) सुनिवे को व्यसन है तो अड़ेल में श्रीआचार्यजी के श्रीमुख की कथा तो एक दिन सुनो। पाछें जहां मन होई तहां जैयो। तब दिनकर सेठ इतनो सुनत ही उहां ते नाव पर चढ़ि अडेल आये। ता समय श्रीआचार्यजी पोढ़ि कें उठे हे। पहर सवा दिन पिछलो हतो। तब दिनकर सेठ नें दंडौत् कियो। तब श्रीआचार्यजी ने कही, आवो दिनकर सेठ ! बैठो कथा सुनो। पाछें आपु दसमस्कंध में भ्रमरगीत को व्याख्यान किये। सो दिनकरदास के नैनन सों आंसू के प्रवाह बहें, मन में कहें, हाइ हाइ ! इतने दिन मेरे योंई बृथा गये।

अब तो इनकी सरनि व्हें सदा इनके पास रहि कथा श्रुति कों पान करों। पाछें कथा व्हे चुकी। तब दिनकर सेठ ने बिनती करी, महाराज! मोकों कृपा करिकें सरनि लीजिये। तब श्रीआचार्यजी ने कही, तू कथा तो बहोत सुनी। परंतु अबलों सेवक नाहीं भयो? तुमकों बड़े बड़े पंडित स्वामी मिलें तिनके सेवक क्यों नहिं भये? तब दिनकर सेठ ने कही, महाराज! जितने स्वामी पंडित मिले तितने द्रव्य के संगी मिले। जहांलों भेट करी तहांलों प्रीती बहुत करते। अब कोई मोसों बोलत नाहीं। परंतु श्रीठाकुरजी ने कृपा करी, जो-आपु के दरसन भये। आपु साक्षात् भगवान हो। मैं कहुं देस में जातो तो जनम बिगरतो। अब मेरो उद्धार करो। मेरे कोई लौकिक प्रतिबंध नाहीं है। तब श्रीआचार्यजी कहें, श्रीयमुनाजी में सगरे कपरा सहित न्हाई आव। तब दिनकर सेठ न्हाई आये। तब श्रीआचार्यजी ने नाम निवेदन कराये। पाछे कहें, भगवद् सेवा करो। तब दिनकर सेठ ने कही, महाराज! आपु तो अंतःकरन की जानत हो। मैं तो आपु के मुख की कथा सुनोंगो। यामें सगरी सेवा है। तब श्रीआचार्यजी कहे, आछो, हमारे संग रहो। सो दिनकर सेठ पास सौ रुपैया हते। तामें पचास श्रीआचार्यजी को भेट धरें। पचास रहें तामें नित अंगाकरि-दारि करतें।

वार्ता-प्रसंग १- सो दिनकरदास कों कथा उपर बहोत आसक्ति हती। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु आपु अड़ेल में कथा कहते। सो तब एक दिन दिनकर सेठ श्रीयमुनाजी के तीर रसोई करन कों गये। तहां न्हाइ के चून सानि अंगाकरि गढि, पातरि पर धरि उपरा बराइ दियो। ताही समय श्रीआचार्यजी को एक जलघरिया जल भरन आयो। तब तासों दिनकरदास ने पूछी, जो-श्रीआचार्यजी महाप्रभु आपु कहा करत हैं? तब वह जलघरियाने कही, श्रीआचार्यजी पोथी खोले हैं, अब कथा कहेंगे। तब दिनकर सेठ उन जलघरिया के बचन सुनत ही कच्ची लीटी ले जलपान किये। सेके नाहीं। बेगि ही आय कथा सुने। पाछें कथा श्रीआचार्यजी कहि चुके तब जलघरिया ने श्रीआचार्यजी सों कह्यो, महाराज! दिनकर सेठ कच्ची अंगाकरि बिना सेकी खायकें आयो है। तब श्रीआचार्यजी दिनकर सेठ तें पूछे, तू बिना सेकी अंगाकरि क्यों खायो? तब दिनकर सेठ बोल्यो,

महाराज अंगाकरि तो नित्य सेकि कें लेऊंगो परंतु यह आपुके मुख सों कथामृत कब सुनोगों ? जो–अंगाकरि सेकतो तो यह अमृत कैसे मिलतो ? तब श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न होइ कें कहें, आजु पाछें रसोई सँवारिकें भोग धरिकें महाप्रसाद लेकें आइयो। जब तू आवेगो तब कथा कहुंगो। तेरे आये बिना कथा न कहुंगो। आजु तें तू मुख्य कथा को श्रोता है। ता पाछें दिनकर सेठ हू बेगी रसोई करते। जो–श्रीआचार्यजी मेरे लिये बैठि रहें सो आछो नाहीं। और कोई दिन रंच ढील हू लगे तो जब दिनकर सेठ आवें तब आपु कथा कहतें।

भावप्रकाश–यामें यह सिद्धांत भयो, जो–काची अंगाकरि असमर्पित को महादोष है। परंतु *श्रीआचार्यजी की कथा में दृढ़ स्नेह है। ताके अर्थ लीनी।* तातें बाधक नहीं भयो। और प्रसन्न भये। तातें श्रीआचार्यजी में दृढ़ स्नेह होई ताकों कोई दोष बाधक न होई। यह जताये।

पाछे जहां लों जीये तहां लों श्रीआचार्यजी के मुख की कथा सुनी। रात्रि दिन लीला की भावना में मगन रहतें। लीला में हू श्रीस्वामिनीजी इनसों सगरी वार्ता करते। सो श्रीआचार्यजी कथा सुनाय अपने स्वरूप को अनुभव जतायो।

सो दिनकर सेठ ऐसे भगवदीय है। वार्ता ॥ १८॥

भावप्रकाश–इनकी वार्ता में यह सिद्धांत वैष्णव कों जताये, जो कथा सुनिवे को मन होइ (तो) पहलेंही बेगि रसोई करि श्रीठाकुरजी सों पहोंचि के जैये। तातें श्रीआचार्यजी ''भक्तवर्द्धिनी'' में कहे हैं, ''सेवायां व कथायां वा यस्यासक्तिर्दृढा भवेत्'' प्रथम सेवा है, पाछे कथा है। दोऊ करिके प्रभु में आसक्ति भई चाहिये। कोई प्रकार सों होउ, सर्वोपरि आसक्ति है। सो दिनकर सेठ की भई। ता करि लीला की प्राप्ति भई।

★ ★ ★

हैं और मुकुन्ददास ध्रुवनंद हैं। सो ये मालवे में एक कायस्थ के जन्में। सो उनके पिता उज्जैन में हाकिम के पास रहते। सो एक दिन हाकिम सों बोला-चालि ह्वै गई। तब दिनकरदास मुकुन्ददास को पिता चाकरि छोड़ि घर उठि आयो। सो दिन दस-पांच में देह छोडी। तब दोऊ भाई बरस दस-बारह के भये। सो घर में द्रव्य को संकोच भयो। तब घरतें निकसि के कासी गये। तब द्रव्य बहोत कमाये। तब दोऊ जने घर चलन लागे। सो कासी तें कोस एक बाहर निकसे। तब एक सर्प निकस्यो। सो मुकुंददास कों काटिकें बिल में धसि गयो। सो जहर चढ्यो। तब दिनकरदास कासी में उठाय ल्याये। सो बहोत झारनवारे जतन किये। परंतु विष उतरे नाहीं। तब दिनकरदास ने पुकारिकै रुदन कियो। सो श्रीआचार्यजी कासी में पुरुषोत्तम के घर बिराजत हते। कृष्णदास बाजार कछू कार्यार्थ आये हते। सो कृष्णदास ने दिनकरदास को विलाप सुनि, भगवदीय को हृदय कोमल सो, पूछ्यो। ऐसो दुःख तुम क्यों करत हो ? तब दिनकरदास ने कही, पहले द्रव्य के दुःख सों घर तें निकसि इहां आये, द्रव्य कमाये। सो घर जात हते सो हमारे भाई कों सर्प काट्यो। सो बहोत जतन कियो। परन्तु जहर उतर्यो नाहीं। अब हमहूं कासी में गंगाजी में डूबि मरेंगे। घर जाय कहा करें ? तब कृष्णदास कों दया आई। और दैवी जाने। सो श्रीआचार्यजी को चरणामृत पास हतो। सो मुकुंददास कों पानी में घोरि के पिवाये। सो तत्काल जहर उतरि गयो। मुकुंददास उठि बैठे। चरणामृत सों बुद्धि निर्मल ह्वै गई। सो मुकुंददास ने कृष्णदास कों भगवद्स्मरन करि दंडौत् किये। और पूछे, श्रीआचार्यजी कहां बिराजे हैं। तब कृष्णदास ने कही, तुम हम कों दंडवत् क्यों करी ? तब मुकुन्ददास ने कही, तुम्हारे हृदय में श्रीआचार्यजी बैठिके मोपर कृपा करी। नाहीं तो संसारसमुद्र में हम परे हैं सो श्रीआचार्यजी हू कों नाहीं जाने। और तुमकों हू न जाने। परन्तु तुम कृपा करिके जताये। तातें भगवदीय कों दंडौत्। किये बाधक नाहीं हैं। तब कृष्णदास ने कही, यह चरणामृत की बात श्रीआचार्यजी सों मति कहियो। नाहीं तो मोपर खीझेंगे और गांव में काहू सों मति कहियो। हमकों सब आयकें दुःख देंयगे। तब यहां रहनों कठिन परेगो। पाछें मुकुंददास ने कृष्णदास सों पूछी, जो-श्रीआचार्यजी कहां बिराजे हैं ? तब कृष्णदास ने कही, जो-श्रीआचार्यजी से पुरुषोत्तमदास के यहाँ बिराजे हैं। यह कहि के कृष्णदास तो कारजकों गये। तब मुकुंददास ने कही, भाई श्रीआचार्यजी की सरनि चलो। तब दिनकरदास ने कही, श्रीआचार्यजी कौन हैं ? तब मुकुंददास ने कही, साक्षात् भगवान् हैं। मोकों उनके चरणामृत के पाये ज्ञान भयो। तुमहु जब दरसन करि चरणामृत लेहुगे तब श्रीआचार्यजी के स्वरूप कों जानोगे। तातें बेगे चलो, ढील मति करो। तब दोउ भाई आई श्रीआचार्यजी कों दंडौत करि विनती किये, महाराज ! हम महा अपराधी हैं। संसार के दुःख सुख में परे हैं। सो हमारो

उद्धार करो। तब श्रीआचार्यजी कहे, तुम कायस्थ हो, सो यह पुष्टिमार्ग कैसे सधेगो ? तब मुकुन्ददास ने कही, महाराज ! आपकी कृपा तें सब सधेगो ? आपकी कृपा सूद्र–चाण्डाल पर होइ तो वासों हू सब सधे। आपकी कृपा बड़े पंडित ब्राह्मन पर न होय तो वासों न सधे। तातें आप हमकों कृपा करिके सरनि लेहु। सो सरन के प्रताप तें हमारो कल्यान होइगो। तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न ह्वे कें कहें, हम जाने, यह कृष्णदास मेघन को काम है। पाछें दिनकरदास मुकुन्ददास कों न्हवाय के नाम निवेदन कराये। सो कछूक दिन उहां श्रीआचार्यजी के पास रहिकें मारग की रीति सब सीखें। पाछे बिनती किये, महाराज ! आज्ञा होइ तो घर जैये। हमकों अब कहा कर्तव्य है ? तब श्रीआचार्यजी ब्रह्मसंबंध की पत्री लिखि हस्ताक्षर दिये। कहे, इनकी सेवा करियो। जो कछू खानपान करो सो इनकों भोग धरिकें लीजो। तब दोऊ भाई बिदा होइकें मालवा में अपने घर आये। स्त्रीजन कों रसोई करि भोग धरि न्यारे धरि देय। काहेतें, दैवी नाहीं। श्रीआचार्यजी के सेवक होनको मन नाहीं। सो मुकुंददास कों श्रीआचार्यजी को चरणामृत मिल्यो। ताते सगरे शास्त्र वेद–पुरान कंठाग्र भये।

वार्ता–प्रसंग १–सो मुकुंददास कवित्त बहोत सुंदर करते। श्रीआचार्यजी के, श्रीगुसांईजी के, श्रीठाकुरजी के, एकसे करते। और मुकुंददासनें एक 'मुकुंदसागर' ग्रन्थ भाषा में कियो है। तामें श्रीभागवत द्वादसस्कंध (पर्यंत) को अर्थ धरि दिये हैं। और मुकुंददास एक समय उज्जैन के कारकून ह्वे कें गये। सो उज्जैन के ब्राह्मन पंडित सब आइ के मिलें। और कहें, कहो तो हम तुमकों श्रीभागवत सुनावें। तब मुकुंददास ने कही अवकास नाहीं है। अवकास होयगो तब सुनेंगे।

भावप्रकाश–याको कारन यह, जो श्रीआचार्यजी के सुबोधिनी आदि ग्रन्थ तिनके आगे तुमारी कथा सुनिबे को अवकास कहां ? और ब्राह्मण को मन उदास न होय तातें कहें अवकास होयगो तब सुनेंगे।

सो वह ब्राह्मन दूसरे चौथे मुकुंददास को पूछें, जो–जब कहोगे तब श्रीभागवत सुनावेंगे। ऐसे करत बहोत दिन बीते। सो एक दिन मुकुंददास चौपड़ खेलत हुते सो वह पंडित ने देख्यो।

तब मन में बिचारयो, जो-आजु बात कहन को दाव पायो। इतने चोपड़ खेलि चुके। तब पंडित ने कही, तुम कहो तो श्रीभागवत तुम कों सुनाऊं। तब मुकुंददास ने कही अवकास होयगो तब सुनेंगे। तब पंडित नें कही, चोपड खेलिवे को अवकास है। (और) श्रीभागवत सुनन कों कहे अवकास होयगो तब सुनेंगे। याको कारन कहा ? तब मुकुंददास ने बिचारयो, इनने तो प्रतिउत्तर भारी दियो। अब अपनहू याकों देनो। तब कहें, हमारो श्रीभागवत जानें है ? तब पंडित नें कही, तुम्हारो श्रीभागवत न्यारो है ? तब उन नें कही, हमारो श्रीभागवत न्यारो है। तब पंडित ने कही, तुमहि अपनो श्रीभागवत सुनावो। तब मुकुंददास ने कही, कोई समय पाय के तुमकों सुनाय देंइगे। या प्रकार कहिकें टारे। परन्तु उह मार्गीय ब्राह्मन न हतो, तातें वाके मुख की कथा न सुने।

भावप्रकाश-तातें छासठ अपराध में लिख्यो है, ''अवैष्णावानां श्रीभागवत श्रवणं वृक्षजन्मत्रयं'' इत्यादिक। पुष्टिमार्गीय वैष्णवन कों दोष लगे। इह, जीव कों बहोत संदेह हैं। काहेते ? भगवन्नाम में सबन को अधिकार है। सूद्रादि चांडाल पर्यंत जो कहे सुने सो सब को कल्यान होय। श्रीभागवत में हू अजामिल आदि पवित्र भये हैं। सो यह सब महात्म्य जगत में प्रसिद्ध है। और पुष्टिमार्ग में भगवद्नाम कीर्तन श्रीभागवत सुनन कों अन्यामार्गीय सों क्यों नाहीं ? जो-भगवद्नाम सुने तें दोष कैसे ? यह सन्देह बड़ो गूढ़ है। तहां कहत हैं, जो-मर्यादामार्ग में तो मुक्तिफल है। और पुष्टिमार्ग मैं तो एकांगी पुष्टिभक्ति सो फल है। सो भक्ति श्रीआचार्यजी के आश्रय तें होय। सो आश्रय और अन्याश्रय को भेद खोलत हैं। यह हृदय कमल है, तहां आश्रय, प्रेम, सगरे धर्म, भगवान के बिराजवे को ठिकानो है। सो हृदय में श्रीआचार्यजी संबंधी आनंद सर्व प्रकार तें प्रवेश करे तो आश्रय सिद्ध होय। सो हृदय में रस आनंद जाइवे के इतने प्रकार। एक तो नेत्र, सुंदर देखि कें कछू वस्तु, हृदय में आनंद होई। तातें श्रीआचार्यजी संबंधी ठाकुर के दरसन करि सुख पावनो। और ठौर के दरसन तथा लौकिक वैदिक कछू संसार संबंधी आछी वस्तु देखि कें श्रीआचार्यजी के संबंध

बिना में आनंद आवें सोऊ अन्याश्रय। यह नेत्र को अन्याश्रय महादोष। और श्रवण द्वारा दुःख सुख हृदय में रस जात हैं। तातें जाके मुख सों सुनिये ताकी जूठन कर्ण द्वारा हृदय में रस जाय। तातें जहां दासभाव राखनो तिनके मुख सों सुननो। दासभाव तो बल्लभकुल में के पुष्टिमार्गीय वैष्णव में। तातें उनहि के मुख सों सुननो जातें हृदय में धर्म दृढ़ होय। और के मुख सों सुने प्रीति सों, तो अन्याश्रय (क्योंजो) ताको जूठो हृदय में गये श्रीआचार्यजी कौ आश्रय दृढ़ न होइ। ऐसे कोइ को संकोच करि सुननो परे तों मन न लगावें। अपनो अष्टाक्षर में मन लगावें। तातें मुख्य सिद्धांत तो एतन्मार्ग में यह है, जो–और सों वचन–बिलास करनो नाहीं। बानी द्वारा मिलाप है। तातें "मौनं सर्वार्थसाधकम्।" तातें अन्यमार्गीय सों न भगवद्धरम की बात पूछनी न अपनी कहनी। या प्रकार सगरी इंद्रिय मन श्रीआचार्यजी के संबंध बिना सुख कों न पावे। यह श्रीआचार्यजी के आश्रय को साधन है। तातें मुकुंददास कों तो श्रीआचार्यजी को आश्रय दृढ़ है, जो–ये उह पंडित की कथा सुनते तउ इन कों बाधक न होई। परंतु इनकी देखादेखी और वैष्णव साधारन सुनते सो उनको बिगार होतो। तातें यह जताये, जो–हम कों इतनो ज्ञान दृढ़ (न होय तो) अन्यमार्गीय तें न सुनें। काहेतें ? मन है, वाके वचन में दृढ़ विश्वास व्है जाय तो सनैः सनैः एतन्मार्ग में ते मन वाके बताये साधन में जाय, तातें हम न सुने। यातें कच्ची दसावारे कों तो एक श्रीआचार्यजी के संबंधी सों ही भगवद् धर्म कहनो सुननो।

और मुकुन्ददास, जो चोपड़ खेलत हुते, सो यातें, जब जाने, जो–कोई अन्यमार्गीय अनेक कर्म धर्म की बात कहन सुनन आवते तब मुकुंददास चोपड़ निकासि बैठतें। सो सगरे अन्य मार्गीय उदास व्है के उठि जातें। चोपड़ के मिस तें काहू को बुरो न मनावनो परतो। लोग जानते, चोपड़ में आसक्ति है। या प्रकारं सों अपने हृदय में पुष्टिमार्गीय धर्म छिपाये हते।

सो एक समें सूर्यग्रहण पर्‍यो। तब मुकुंददास नदी में न्हाय कें भगवद् नाम नदी में ठाड़े लेत हते। ता समे वह पंडित ने आय के कही, भलो, या समें अपनो श्रीभागवत कछू सुनावो। तब मुकुंददास ने एक श्लोक श्रीभागवत को कहि कें वाको अर्थ करन लागे। सो सगरो दिन, सगरी राति बीति गई, सबेरो भयो। गांव के लोग नदी न्हानकों आये। तब वह पंडित ने कही, दूसरो दिन

भयो। अब या श्लोकको अर्थ पूरो करोगे ? तब मुकुंददास ने कही, यह श्लोक को भाव छै महिना लों होइगो। तब वह पंडित थकित है रह्यो। कह्यो, तुमकों ईश्वर की दीनी सामर्थ्य है। जीव कहा जाने ? तब मुकुंददास ने कही, हमारो श्रीभागवत ऐसो है। कछू जानत होय तो हमकों सुनाव। तब उह पंडित हारि मानि के घर गयो। और पंडित आय कछू पूछते तो वाके प्रश्न कों बहोत दूषन लगाय प्रतिउत्तर देते, जो–फिरि वह पंडित न आवें। ऐसो श्रीआचार्यजी को कृपाबल हतो। श्रीसुबोधिनी आदि सब सास्त्र में प्रवेस हो। सो वे मुकुँददास कछूक दिन पाछें मानसी सेवा की भावना करिकें देह छोड़ि लीला में प्राप्त भये तब काहू वैष्णव आयकें श्रीआचार्यजी सों कह्यो, मुकुंददास अवंतिका पाई। तब श्रीआचार्यजी वैष्णव कों बरजे, जो–ऐसे मति कहो। ऐसे कहो, जो–अवंतिका ने मुकुंददास पाये। सो मुकुन्ददास ऐसे टेक के भगवदीय भये। वार्ता ॥१९॥

भावप्रकाश–काहेतें, जो–संसारी लोग हैं तिनकों तीर्थ की चाह है। और तीर्थ है, सो भगवदीयकों चाहत हैं। जो–भगवदीय तीर्थ को परस करें। जो–तीर्थ के पास जाइ सो (सब पापन तें मुक्त होंय) और दिनकरदास बड़े भाई की वार्ता को विस्तार यातें नाहीं किये, जो–जा दिन तें उह श्रीआचार्यजी के सेवक व्है मालवा में आये ता दिन तें श्रीमहाप्रभुजी के हस्ताक्षर ब्रह्मसंबंध को प्रकार बांचि नित्य माथो पीटि के रोवे। ओजो–हम लीला में नंदरायजी के भाई व्है के अब इतने दिन तें संसार में भटकत हैं। हमकों धिक्कार। या प्रकार विरह करत तीन महीना में लीला की प्राप्ति भई। तातें इनकी वार्ता अनिर्वचनीय विरह दसा की है। सो लोक में विरुद्ध चलेंगे तातें बहोत प्रकास नाहीं किये। तातें दोऊ भाई दिनकरदास मुकुंददास बड़े भगवदीय कृपापात्र हे। वैष्णव ॥१९॥

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, प्रभुदास जलोटा क्षत्री, सिंहनाद के वासी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ये प्रभुदास जलोटा क्षत्री, लीला में ललिताजी की सखी हैं। ''मन्मथमोदा''इनको नाम है। कामलीला की सामग्री सब सिद्ध करत हैं। और बिहारलीला की वार्ता में ललिताजी सों वार्ता करि मग्न रहत हैं। तातें इनको नाम ''मन्मथमोदा'' है। सो सिंहनंद में एक क्षत्री के घर जन्मे। सो बरस तेरह के भये। तब इनको ब्याह भयो। सो स्त्री महाकुपात्र आई। सो सबन कों गारी देय। जो–वस्तु पावे सो चुराय कें मा–बाप कों दे आवे। ऐसे करत प्रभुदास के माय–बाप ने देह छोड़ी और सगरे संबंधी उह स्त्री के दुःख सों कोई घर में आवे नाहीं। सो एक दिन वह स्त्री ने प्रभुदास सों कही, कहूं तें द्रव्य ल्याव। तब प्रभुदास ने कही, द्रव्य कहां है ? मिलेगो तो लाऊंगो। तब स्त्री ने प्रभुदास कों मारयो। प्रभुदास को रीस चढ़ी। सो स्त्री कों मारयो। तब स्त्री ने चूरी फोरि मूंड़ मुड़ाय गाँव के हाकिम सों कहि आई, मैं यह प्रभुदास की अब स्त्री नाहीं। जो–यह घर में आवेगो तो याके ऊपर मैं मरूँगी। तब प्रभुदास हू आये। सो कहे, मैं घर छोडि के जात हों। मेरे तेरे बेदावो। या प्रकार बेदावो करिकें गाँव तें निकसी गये। सो राजनगर सिकंदरपुर में आये। तहाँ रामदास क्षत्री इनकी ज्ञाति को हुतो, तहां उतरे। सो उह रामदास कों मर्यादामार्गीय वैष्णव को संग भयो हतो। सो वहाँ प्रभुदास कछू दिन रहे।

सो श्रीआचार्यजी राजनगर सिकंदरपुर के पास बगीची हती तहां उतरे हे। सो वह बगीची में प्रभुदास आये। सो श्रीआचार्यजी को दरसन करिकें मन में यह आई, जो–इनके सेवक होंई। तब श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज ! मोकों सेवक करिये, कृपा करि के। तब श्रीआचार्यजी ने कही, तेरे रामदास मरजादा मारगीय को संग है। तातें हमारो सेवक मति होउ। तब प्रभुदास ने कही महाराज ! आप कहो तो उह रामदास कों हू आपको सेवक कराउं। तब मोकों सेवक करोगे ? मेरो कह्यो रामदास नटेगो नाहीं। तब श्रीआचार्यजी कहे, कहा भयो सेवक कराये ? वाको अंगीकार मर्यादा में ही है। परंतु जा, रामदास कों ले आउ। दोउन कों संग ही सेवक करेंगे। तब प्रभुदास के पास आइ कें कह्यो, श्रीबल्लभाचार्यजी साक्षात् पुरुषोत्तम हैं। सो पधारे हैं। गांव बाहर बगीची में। सो हम तुम दोऊ जनें सेवक होय तो मिलि के सेवा करें। तब रामदास ने कही, मेरे तो एक वैरागी गुरु है। वाकी कंठी बांधी हैं। सो अब दूसरो गुरु कैसे करूं ? तब प्रभुदास कहें, अब हमारे तेरे न बनेगी। मेरे वस्त्र–पात्र देहु। तब रामदास ने कही, तुम्हारे लिये सेवक होउंगो। परंतु मैं अपुनी टेब न छोंडोंगो। तब प्रभुदास कहे, सेवक तो होऊ। रीति मति करियो। तब रामदास

प्रभुदास दोऊ आये। श्रीआचार्यजी न्हवाई के दोऊन कों नाम सुनाये। तब प्रभुदास कों तो श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान भयो। रामदास कों न भयो। तब प्रभुदास ने बिनती करी, महाराज ! दोउन कों कृपा करिकें निवेदन करावें। तब श्रीआचार्यजी कहें, रामदास कों नाहीं। तब प्रभुदास समझि गये। तब कहें, मोही कों कृपा करिकें करावो। तब श्रीआचार्यजी ने प्रभुदास कों ब्रह्मसंबंध करायो। पाछें भगवद् सेवा की प्रभुदास रामदास हू मिलि कें कही। तब श्रीआचार्यजी कहें, अब ही नाहीं। कछू दिन पीछें। यह कहि कें आप तो श्रीगोकुल पधारे। प्रभुदास पुष्टिमार्गी रीति बतावे। रामदास मर्यादामार्ग की रीति करें। ऐसे करत कछू दिन में श्रीआचार्यजी के बड़े पुत्र श्रीगोपीनाथजी राजनगर सिकंदरपुर में पधारें। तब रामदासजी ने बिनती करी, महाराज ! सेवा पधराय दीजे। तब श्रीगोपीनाथजी ने एक ब्राह्मन के घर श्रीमदनमोहनजी हते सो कछू ब्राह्मन कों देके दोउन के माथे पधराये। पाछें श्रीगोपीनाथजी अड़ेल पधारे। सो रामदास मर्यादा मार्ग की रीति आह्वाहन विसर्जन पूजा की रीति करें। पाछे एक दिन प्रभुदास अर्धरात्रि कों अपनी वस्तु ले भाजि चल्यो (क्यों), जो–रामदास के संग कहां तांई माथो पचाऊँ ? याकों तो ज्ञान नाहीं। जेसो यह जेसे हि मर्यादामार्गीय ठाकुर श्रीगोपीनाथजीने पधराइ दिये। तातें तहां ते चले श्रीगोकुल में श्रीआचार्यजी कों दंडौत् किये। तब श्रीआचार्यजी ने कही, प्रभुदास आयो ? तब प्रभुदास ने बिनती करी, महाराज ! नीठ नीठ दुःसंग तें छूट्यो। तब श्रीआचार्यजी ने कही, हम तोसों पहले ही कह्यो, उह मर्यादा मार्ग को अधिकारी है। तू पुष्टिमार्गीय है। भली करी संग छोड़ि के आयो। तब प्रभुदास ने बिनती करी, महाराज ! अब मोकों चरणारविंद के पास राखो, मैं बहुत संसार में भ्रम्यो। तब श्रीआचार्यजी कहें, अब हमारे पास रहे सुखेन। तब ता दिन तें प्रभुदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी के संग ही रहें।

वार्ता–प्रसंग १– सो एक दिन श्रीआचार्यजी महाप्रभु मथुरा पधारे। सो विश्रांत घाट पास आय बैठक है तहां संध्यावंदन करत हते। पास चार वैष्णव ठाड़े हते। दामोदरदास हरसानी, कृष्णदास मेघन, प्रभुदास और एक वैष्णव मथुरा को हतो। सो तब तहां रूप–सनातन कृष्णचैतन्य के सेवक, श्रीआचार्यजी के पास दरसन करि दंडौत् कियो। पाछें रूप–सनातन नें श्रीआचार्यजी सों पूछ्यो, जो–महाराज ! ये वैष्णव कौन हैं ?

तब श्रीआचार्यजी ने कही, ये हमारे सेवक हैं। तब रूप-सनातन ने कही, महाराज ! आपको मारग तो पुष्टि है और ये दुबरावल क्यों है ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, हम तो इनकों बरजे, जो-यह मारग में मति परो। परंतु ये मेरो कह्यो न मान्यो। ताको फल भोगत हैं। या प्रकार गूढ रीति सों श्रीआचार्यजी कहें, परंतु रूप-सनातन कछू समुझे नाहीं। पाछें रूप-सनातन आज्ञा मांगि श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन कों गये। तब कृष्ण चैतन्य ने पूछी, तुम कहां तें आये ? तब रूप सनातन ने कही, हम ब्रज के दरसन करिकें आये हैं। तब कृष्ण चैतन्य ने पूछी, वहां श्रीवल्लभाचार्यजी के दरसन भये तुमकों ? तब रूप-सनातन ने कही, मथुरा में विश्रांत घाट पर दरसन भये। तब कृष्ण चैतन्य नें पूछी, वार्ता को प्रसंग कियो ? तब रूप-सनातन ने कही, हम पूछें, आपको मारग पुष्टि, आपुके वैष्णव दुर्बल बहोत ? तब आपु कहें, हम तो इनको बरजें, जो-या मारग में मति परो। सो ये मानें नाहीं कह्यो, ताको फल भोगत हैं। यह सुनत ही श्रीआचार्यजी को भाव, कृष्ण चैतन्य कों एक महूरत लौं मूर्छा आई। ऐसे तीन बार कही, सो तीनों बेर मूर्च्छा आई। पाछें चौथी बार पूछी, तब रूप-सनातन ने कही, अब हमसों कही न जाई। सो कृष्ण चैतन्य कछू समुझे।

भावप्रकाश- काहेतें ? कछुक श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान हतो। तातें कछुक समुझे। जो-सगरो समुझते तो उनकी देह छूटि जाती। और श्रीआचार्यजी कहें, यह मारग में मति परो। सो कह्यो न मान्यो तब फलदसा कों भोगे। जैसे पंचाध्याई में ब्रजभक्तन सों श्रीठाकुरजी कहें, घर जाउ, परंतु ब्रजभक्त यह बात न माने। तब रासलीला के फल कों पाये। सो अब तो मर्यादा रीति सों कहें। काहेते ? वेद की मर्यादा यह, जो-सेवक होन आवे तो एक बार ना कहनो। उह सेवक को भाव दृढ़ता देखन कों। पाछें वाके पूरन प्रीति सेवक होन की होय तो सेवक किये वाको फल मिलें। तातें वैष्णव कों ना कहनो। और ''यह मारग में मति परो,'' सो यह

मारग ब्रजभक्तन को है। जैसे ब्रजभक्त सर्व समर्पन करि सरन भये तब खानपान देह-सुख सब छूट्यो। विप्रयोग की फलदसा कों भोगत हैं। तातें देह कृष होय विरह के उदास उठें। नेत्रन में जल भराय, कंठ रुकि जाय, सगरि देह में पसीना होय, मूर्छित होई, हसि परे, रुदन करे, निर्त करे इत्यादि भक्त के लक्षन हैं।

वार्ता-प्रसंग २- और प्रभुदास रसोई हाथ सों सदा करते। सो एक दिन रसोई बिगरि गई। दारि काची रही और लीटी जरि गई। तब प्रभुदास के मनमें यह आई, जो-ऐसी बिगरी रसोई श्रीठाकुरजी कों कहा समर्पे ? तातें चरणामृत मिलाइ के लिये।

भावप्रकाश-काहेतें ? पुष्टिमार्गीय वैष्णव है। तिनको मन कोमल है। जैसे श्रीठाकुरजी अत्यंत कोमल है, तेसे भक्तन को मन हू है। तातें यह विचारे, जो-कहा ऐसी सामग्री समर्पो ? अरु दग्ध अन्न को दोष हू है। ''वृन्ताकं च कलिंगं च दग्धान्नं च मसूरिकाः।'' इत्यादि विचारि कें श्रीठाकुरजी कों समर्पे नाहीं। और अनप्रसादी को महादोष है। तातें चरणामृत मिलाइ के लिये।

तब श्रीठाकुरजी ने श्रीआचार्यजी सों कह्यो, जो-मैं प्रभुदास की बाटि देखी, सो आजु मोकों भोग न धरयो। आपु लिये।

भावप्रकाश-यामें यह जताये, जो-श्रीठाकुरजी जदपि एक हैं, नंदराजकुमार। परंतु भक्तन के भाव करि कें जितने भक्त हैं तिनके तितने ठाकुर हैं। सो प्रभुदास के भाव के ठाकुरजी नें कही, जो-प्रभुदास ने भोग नाहीं धरयो।

तब श्रीआचार्यजी नें प्रभुदास सों कह्यो, तू आजु श्रीठाकुरजी कों भोग समर्पे बिना क्यों लियो ? तब प्रभुदास ने बिनती करी, महाराज ! दारि काची रही अंगाकरि जरि गई। तातें चरणामृत मेलि कें लियो। श्रीआचार्यजी कहे, ऐसी रसोई क्यों करी ? श्रीठाकुरजी बड़ी बेरलों बाट देखी। तातें सावधानी सों आछी रसोई करि भोग धरिके लीजो। ता दिन तें प्रभुदास सावधानी सों रसोई करते।

भावप्रकाश– यामें यह जताये, जदपि चरणामृत मिलाय कें लियो सो अन्न दोष मिट्यो। परंतु भगवद् भोग पदारथ न भयो। तातें वैष्णव कों जेसे श्रीठाकुरजी कों भोग धर्यो होय तेसे लेनो। दहीं न्यारो धर्यो होइ तो दही में भात मिलाइ के अपने न लीजें। काहेतें ? दूध-भात, दहींभात, न्यारे न्यारे भक्तन के भाव की सामग्री हैं। तातें चरणामृत यथा प्रसादी वस्तु पधराय ले, काहू सामग्री में ते अपने भोग अर्थ न लेनो। दासधर्म प्रभु को उच्छिष्ट जैसो अरोगे होई वाही प्रकार को लेनो। पतिव्रता को यह लक्षन है। इत्यादि भाव जताये।

वार्ता-प्रसंग ३– और एक समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु ब्रज में पधारे। सो गोवर्द्धन के पास राधाकुंड स्थल है। तहां सीतकाल के दिन हते। सो बेगहि श्रीआचार्यजी ने रसोई करि भोग धरें, आपु भोजन कर्यो। पाछें प्रभुदास सों कहें, जो-महाप्रसाद ले। तब प्रभुदास नें कही, महाराज ! मैं स्नान नाहीं कियों।

भावप्रकाश–ताको आसय यह, जो–श्रीआचार्यजी के सेवक सगरे अपनी न्यारी न्यारी रसोई करते, सो लेते। परंतु श्रीआचार्यजी श्रीकुंड में स्नान करि, रसोई करि, भोग धरे। सो वह स्थल श्रीस्वामिनीजी को हैं। सो आपुकों बहोत प्रिय है। तातें प्रभुदास ऊपर कृपा करनार्थ श्रीआचार्यजी कहे, महाप्रसाद ले। तब प्रभुदास मर्यादा के वचन कहें, मैं न्हायो नाहीं। ता समें श्रीआचार्यजी पुष्टिलीला में मग्न हे। सो प्रभुदास कों ब्रज को स्वरूप दिखाये।

तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आपु दोय श्लोक कहिकें ब्रजको स्वरूप दिखाये। सो श्लोक–

वृक्षे वृक्षे वेणुधारी पत्रे पत्रे चतुर्भुजः।
यत्र वृन्दावने तत्र लक्ष्यालक्ष्यकथा कुतः ॥१॥
जलादपि रजः पुण्यं रजसोऽपि जलं वरम्।
यत्र वृन्दावनं तत्र स्नात्वास्नात्वाकथा कुतः ॥२॥

यह कहें कृपा करिकें। सो प्रभुदास ब्रज को स्वरूप अलौकिक देखें।

भावप्रकाश–वृक्ष वृक्ष के नीचे वेणुधारी साक्षात् श्रीगोवर्द्धनधर भक्तन के

संग लीला करत हैं। ऐसे वृक्ष भगवदीय हैं। तिनके पत्र कैसे हैं ? चत्रभुज रूप हैं। तथा वृन्दावन के वृक्ष वृक्ष वेणुधारी श्रीगोवर्द्धनधर रूप हैं। तिन को आसय, चत्रभुज रूप नारायण पत्र रूप होई आश्रय वृक्षन को कियो है। ऐसा वृन्दावन है। सो लक्ष्यालक्ष्य कथा हैं। लौकिक लोगन कों अलक्ष्य है। और भगवदीयन कों स्वरूपात्मक हैं। सो कथा कही न जाई। या बातकों भक्तजन जाने, कृष्ण रूप जाने। कृष्णरूप वृक्ष है सो लोगन कों न दीसें। तैसेहि श्रीवृन्दावन की रजसों जल श्रेष्ठ है। और जलतें रज श्रेष्ठ है। तहाँ न्हायबे की कथा कहा कहिये ? भावे जलसों न्हाय, भावे रज लगाये। सो रज उड़िकें लागी तब न्हाइवे की अपेक्षा रहि नाहीं परंतु मर्यादा के लिये न्हानो।

यह सुनकें प्रभुदास कों अलौकिक श्रीवृंदावन के दरसन भये। तब बिना न्हाये महाप्रसाद लिये, श्रीआचार्यजी की आज्ञा तें। या प्रकार प्रभुदास कों श्रीवृन्दावन को अलौकिक स्वरूप वर्णन कियो। जहां वेद–मर्यादा की गम्य नाहीं।

वार्ता–प्रसंग ४– और एक समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोवर्द्धनधर के मंदिर में श्रीगोवर्द्धनधर को श्रृंगार करत हते। तब यह मनमें आई, जो–आज दहीं होय तो समर्पिये। तब प्रभुदास सों कहे, जा, कहुँ दहीं मिले तो ले आव। तब प्रभुदास चले। सो एक अहिरनी मिली। तब वासों पूछे, तेरे पास दही है ? तब उन कह्यो, दही मीठो सुंदर है। परन्तु तू मोकों कहा देयगो ? तब प्रभुदास ने कही, दहीं मोकों दे। जो–तू मांगे सो मैं तोकों देऊ। तब अहिरनी ने कही, एक टका दे और कहा तू मोकों मुक्ति देइगो ? तब प्रभुदास ने कही, जा, तोकों टका और मुक्ति दोउ दीने। तब अहिरनी ने कही, मैं केसे मानों ? तब प्रभुदास ने एक कागद पर लिखि दीनो, जो–दहीं के पलटें मुक्ति दीनी। तब अहिरनी अपने अंचल सों बांधि के अपने घर आई। तब वाने परोसनि सों कही, आजु मैं दहीं के पलटे मुक्ति ले आई हों। तब परोसनि नें कही, अरी जा, तोकों बेरागिया ने ठगि लियो। मुक्ति

कहा देयगो ? जब वा अहिरनी ने कही, ऐसे मति कहे, उह बड़े महापुरूष हैं। मोकों सांचे ही मुक्ति दीनी हैं। मोकों कागद लिखि दियो है। सो मेरे छेडे बांध्यो है। उह झूंठ न बोले। तब उह कह्यो, अब जानि परेगी। पाछें घरि दोय में बाकी देह छूटी। तब जमदूत आये। इतनें में ही विष्णुदूत आयकें जमदूतन सों कहे, छोड़ि देऊ याकों, मुक्ति करेंगे। जब जमदूतन ने कही, यह मुक्ति को कछू साधन तो कियो नाहीं। मुक्ति कैसे होयगी ? तब विष्णुदूत ने कही, याकों श्रीआचार्यजी के सेवक प्रभुदास ने दहीं के पलटे मुक्ति दीनी है। सो ले जायंगे। तब जमदूत फिरि गये। विष्णुदूत याकों विमान पर बैठाय के ले चले तब इनने कह्यो, मेरी परोसनि कों विश्वास नाहीं है। तातें वासों कहि चलो। तब वासों कहें, श्रीआचार्यजी के सेवक ने दहीं के पलटे याकों मुक्ति दीनी हती, सो याकों ले जात हैं। तब वह अपने घर तें दोरि कें आय देखें तो उह अहिरनी मरी पड़ी हैं। तब उह परोसनि ब्रजबासीन सों कहै, छेड़े एक चिट्ठी बँधि है सो देखो तो। तब वाको अंचल देखे तो दहीं के पलटें मुक्ति लिखी है। तब वाकों विश्वास आयो। तब वे हू चली। मैं हू वा महापुरूष पास जाय मुक्ति लेहु। सो वे श्रीआचार्यजी की सेवकनी होय कृतार्थ भई।

और यहां श्रीआचार्यजी दहीं भोग धरें। तब श्रीनाथजी कहे, दहीं बहोत मीठो है। पाछें मंदिर तें पधारे तब श्रीआचार्यजी कहें, प्रभुदास दहीं बहोत मीठो सुंदर लायो। कहा दियो ? तब प्रभुदास ने कही, महाराज ! महा मोंघो आयो है। दहीं के पलटें मुक्ति दीनी है। तब श्रीआचार्यजी कहें, भक्ति क्यों न दीनी ?

श्रीठाकुरजी प्रीति सों आरोगे, मुक्ति तुच्छ कहा दीनी ? तब प्रभुदास कहें, महाराज ! मुक्ति उनने मांगी। जो भक्ति मांगती तो भक्ति देतो। वार्ता ॥२०॥

भावप्रकाश–याको कारन यह, जो–ता दिन दान एकादसी हती। सो वा दिना दहीं अवश्य चाहिये। तातें श्रीआचार्यजी कहें, आजु दहीं आवश्यक चाहिये। और श्रीआचार्यजी के सेवक को माहात्म्य दिखायो, जो–भक्ति मुक्ति देवे को सामर्थ्य हैं।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, प्रभुदास भाट, सिंहनंद में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश–सो ये लीला में ललिताजी की सखी हैं। कलहंसी इनको नाम है। सो ये सिंहनंद में एक भाट हतो ताके घर प्रगटे। सो प्रभुदास को पिता देसाधिपति के आगे चलतो। देसाधिपति के कवित करतो। द्रव्य बहुत हतो। सो प्रभुदास बरस दस के भये। सो महा मूरख भये। पिता ने बहुत पढ़ायो। परंतु कछु पढ़े नाहीं। पाछें पिता की देह छूटी। पाछे जब प्रभुदास बरस पंद्रह के भये तब दिल्ली में आये। सो देसाधिपति पास गये। तब देसाधिपति ने कह्यो, कछु कवित्त कहो। तब प्रभुदास ने कही, कवित्त किन कों कहत है ? मैं तो जानत नाहीं। और मैं कछू तुम तें चाहत नाहीं। ठाकुर खायवे कों देत है। कहा तू पालेगो ? तब देसाधिपति ने कही, याकों गाम बाहिर काढ देउ। तब ये दिल्ली तें उदास ह्वै कें चले। सो मथुरा आय विश्रांत घाट पर रोवन लागे। जो–भगवान मोकों मूरख क्यों किये ? अब मैं कहां जाऊं ? जहां जाऊं तहां आदर सनमान तो कोइ करत है नाहीं। या प्रकार चिंता में हते। ताही समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु मथुरा पधारे, विश्रांत घाट पर। तब आपु दैवी जानि कें कहें, प्रभुदास ! तू रोवत क्यों है, न्हाय ले। तब प्रभुदास न्हाये। तब श्रीआचार्यजी नाम निवेदन करायें। तब प्रभुदास कों अपुने स्वरूप को और श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान भयो। ताही समय दंडौत् करि यह एक दोहा किये–

''जब तें विछुरयो नाथ सों परयो जगत भव कूप।
ता हित वल्लभ प्रगट ह्वै दरसायो निज रूप।''

यह सुनिकें श्रीआचार्यजी बहुत प्रसन्न भये। तब कहें, प्रभुदास ! तोकों यह मानस स्फुरयो। अब तुम भगवत् सेवा करो। तब प्रभुदास ने कही, महाराज ! यह सब

आपु की कृपा, केवल प्रमेय बल तें आप मोकों अंगीकार किये। मो बरोबर दुःखी कोऊ न हतो। और छिन में मोकों सुख के समुद्र को अनुभव करायो। अब यह बिनती है, जो–मोकों कबहु दुःसंग न रहे। एक दृढ़ विश्वास आपु के चरन को रहे। तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होइ के कहें, जा, ऐसोंइ होइगो। पाछें मथुरा में एक स्वरूप न्योछावरि देकें लालजी कों ले आये। सो श्रीआचार्यजी पंचामृत स्नान कराय प्रभुदास के माथे पधराय दिये। और प्रसन्न ह्वे के कहे, तोकों सगरी रीति आपुहि फूरेगी। तातें बेगे अपुने गाँव जाय सेवा करो। तब प्रभुदास दंडौत् करि श्रीठाकुरजी कों पधराय कें सिंहनंद आये। सो घर में कुटुंब को संग छोडि कें न्यारो घर एक ले भगवद् सेवा करन लागे। ब्याह तो इनको भयो नाहीं।

वार्ता प्रसंग १–सो प्रभुदास सदा एकरस प्रीतिसों सेवा करते। रात्र कों वैष्णव को संग करे। द्रव्य घर में बहुत हतो। सो भगवद् सेवा, गुरु सेवा, वैष्णव सेवा, में लगाये। और लौकिक वैदिक सब छोडि दिये। ऐसे करे, सो वैष्णव सराहें और ज्ञाति के निदां करें। परंतु वे काहु की न सुने। ऐसे करत वृद्ध भये। पाछें सरीर में असावधानता भई। सावधानता छूटे। तब सगरे ज्ञाति के मिलि कें पृथोदक तीरथ ले आये। तब तहां सावधानता भई। आंख खोलि देखें तो पृथोदक तीर्थ है। तब सब सों कहे, इहां क्यों मोकों ल्याये ? तब सगरे ज्ञाति के कहें, यह पृथोदक तीर्थ है। तुम विकल भये तब ल्याये। तब प्रभुदास कहे, यह पृथोदक कहा मोकों कृतार्थ करेगो ? हों तो श्रीआचार्यजी महाप्रभु को सेवक हों। तुम मोकों बरस लों इहां राखोगे तोहू मेरी देह इहां न छूटेगी। तातें तुम मोकों सिंहनंद ले चलो। मैं श्रीठाकुरजी के चरणारविंद के दरसन करोंगो। तब वहां मेरी देह छूटेगी। यह प्रभुदास नें कही। परंतु ज्ञाति के सगरे संबंधी माने नाहीं। प्रभुदास कों दिन पांच–सात पृथोदक में राखे। तब प्रभुदास आछे भये, चलन फिरन लागे। संबंधी हारिके प्रभुदास कों घर लाये। तब

प्रभुदास न्हाय कें बिनती किये, महाराज ! श्रीआचार्यजी ने तुमकों मेरे माथे पधराये हैं। सो ये बावरे लोग तुम्हारे चरणारविंद को आश्रय छुडाई के पृथोदक को आश्रय करायो। सो आपु ऐसो क्यों करो, जो–मेरी देह उहां छूटे ? या प्रकार श्रीठाकुरजी सों बिनती करि सिंहनंद में एक वैष्णव के माथे पधराइ, दंडौत करि मंदिर के बाहर आइ, सगरे वैष्णवन सों भगवद् स्मरन करि देह छोड़ि दिये। तब सिंहनंद के सगरे वैष्णव जहां मिलि कें भगवद् वार्ता करि तहां प्रभुदास की बड़ाई करें, जो–प्रभुदास धन्य हैं। बड़े भगवदीय, जो–तीर्थ को आश्रय न किये। श्रीठाकुरजी को आश्रय किये।

सो सिंहनंद में एक कीरत चोधरी हतो।

भावप्रकाश–*सो कंस को धोबी हतो। श्रीठाकुरजी ने वाके वस्त्र मथुरा में लूटे हते। ताको औतार हतो।*

सो उह वैष्णव के पास आय कें निंदा करन लाग्यो, तो–प्रभुदास पृथोदक तीर्थ तें फिरि आयकें हिडंब देश में देह छोड़ी। तिनकी बड़ाई क्यों करत हो ? तब गांव के चोधरी जानि वैष्णव चुप ह्वे रहे। या प्रकार दोइ चार दिन निंदा करी। सो एक दिन रात्रि कों सोयो हतो सो चारि जने आयकें मुगदर ले,कीरत चोधरी कों खाट तें ओधों पटकि दियो। मारन लगे। तब कीरत चोधरी ने कही, तुम मोकों क्यों मारत हो ? तुम्हारो कहा बिगार्‍यो है ? तब वे चारों विष्णुदूत हतें सो कहें, तू प्रभुदास की निंदा क्यों करत है ? तातें आजु तेरो हाड चूर–चूर करेंगे, मारिके। तब कीरत चोधरी हाहा खाय नाक घसिकें कही, अब मैं प्रभुदास की निंदा न करुंगो, बड़ाई करुंगो। तुम मोकों मति मारो। तब

विष्णुदूत कहे, आजु छोड़त है, परंतु अब कबहू निंदा करेगो तो तोकों न छोड़ेंगे। यह कहि विष्णुदूत गये। तब दूसरे दिन वैष्णव मिलिकें प्रभुदास की बड़ाई करत हते तहां कीरत चोधरी आयो। तब सगरे वैष्णव चुप ह्वै रहे। तब कीरत चोधरी ने कही, वैष्णव! तुम कहे सो सांच, प्रभुदास बड़े भगवदीय हे। उनकों तीर्थ सों कहा काम ? उनकों श्रीठाकुरजी को आश्रय है। या प्रकार बड़ाई बहोत करी। तब वैष्णव चकित होय रहे। और पूछी जो–तुम तो पहले निंदा करत हते और आजु बहोत बड़ाई करत हो ताको कारन कहा ? तब कीरत चोधरी ने अपनी पीठि दिखाई। और कहे, जो–चारि जने मोकों रात्रिकों बहुत मारें और कहे, जो तू प्रभुदास की निंदा यों करत है ? तातें वे बड़े भगवदीय हते। तुम सुखेन उनकी बड़ाई करो। तब सगरे वैष्णव प्रसन्न होइ बड़ाई करन लागे। सो प्रभुदास ऐसे भगवदीय हते। वार्ता ॥२१॥

भावप्रकाश–यह प्रभुदास की वार्ता में यह सिद्धांत भयो, जो–पुष्टिमार्गीय वैष्णव कों कोई तीर्थ को आश्रय न करनो। श्रीआचार्यजी को आश्रय राखनो। और भगवदीय की निंदा करे, जो–याहू लोक में दुःख पावें। मरें तब नरक में जाइ। काहेतें ? भगवान कों भगवदीय प्रिय हैं। अपुनो अपराध सहे परंतु भगवदीय को अपराध नहीं सहि सकें।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, पुरुषोत्तमदास स्त्री–पुरुष क्षत्री हते, आगरे में राजघाट पर रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ये पुरुषोत्तमदास लीला में श्रीचंद्रावलीजी की अंतरंग सखी हैं। पुरुषोत्तमदास को नाम माधवी, इनकी स्त्री को नाम मालती है। सो ये आगरे में राजघाट पर दोय क्षत्री के घर पास हते। तहां जन्म दोउ लिये। सो उन दोय क्षत्री के परस्पर बहोत मित्रता हती। सो दोऊ जने कही, अपनें बेटा, बेटी को विवाह करें तो आछो। सो दोऊ के दोऊ भये। तब विवाह किये। पाछें बरस दिन के भीतर दोऊ के

पिता की देह छूटी। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु आगरे पधारे। सो ता समय पुरुषोत्तमदास और इनकी स्त्री बारी पर बैठें हते। सो श्रीआचार्यजी को दरसन होत ही दोऊ आपस में बतराये। जो-इनकी सरनि जैये। सो पुरुषोत्तमदास दौरिकें उछंडे माथें श्रीआचार्यजी कों दंडौत् किये। और बिनती किये, महाराज ! हमकों कृपा करिकें सरनि लीजिये। मेरे घर पधारिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम अड़ेल में आइयो। श्रीगुसांईजी के पास नाम पाइयो। तब पुरुषोत्तमदास नें कही, महाराज ! श्रीगुसांईजी में और आप में कहा भेद है ? तातें आपु सेवक करिये। सरीर को कहा भरोसो है। पाछें आपुके दरसन दुर्लभ हैं। या प्रकार दैवी जीव है सो स्वरूप को ज्ञान भयो। तब श्रीआचार्यजी पुरुषोत्तमदास के घर पधारें। पुरुषोत्तमदास कों और इनकी स्त्री कों नाम निवेदन करायें। तब पुरुषोत्तमदास ने और इनकी स्त्री ने बिनती करी, महाराज ! अब हमकों कहा आज्ञा है ? तब श्रीआचार्यजी कहे, भगवद् सेवा करो। तब पुरुषोत्तमदास नें कही, महाराज ! श्रीठाकुरजी पधराय दीजिये। सेवा करें। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम्हारे माथे कलंक आवेगो। सो तुम गंगा न्हान कों जैयो। तब अड़ेल आवेगो तब तुम्हारे माथे श्रीठाकुरजी पधराइ देइंगे। अबहि तुम्हारे दोऊ जने की माता हैं। सो आसुरी जीव हैं। सो क्लेश करेंगी। तब पुरुषोत्तमदास स्त्री सहित कहें, माता तो हम पर दोउ की बहोत हित करत हैं। सो क्लेश कैसे होइगो ? तब श्रीआचार्यजी कहें, अबलौं तुम वैष्णव न हतें। तातें प्रीति करत हैं। वैष्णव भये सुनेंगी तब देखोगे। तातें हम इहां ते बेगे पधारेंगे। क्लेश मोकों भावत नाहीं। तब पुरुषोत्तमदास स्त्री सहित डरपिके बेग ही भेट जो बनि आई सो करी। श्रीआचार्यजी को विदा किये। श्रीआचार्यजी क्लेशजानि ततकाल अड़ेल पधारे। सो पुरुषोत्तमदास और इनकी स्त्री डरपि कें तीन दिनलों अपनी माता कों वैष्णव भये न बतायें। कोरो दूध ल्याय के पीके रहें। तब पुरुषोत्तमदास की माता नें गरे में माला देखी, तब कह्यो, बेटा ! गरे में माला कैसी ? आपुने क्षत्री जनेऊ सर्वोपरि हैं। माला कैसी ? तब पुरुषोत्तमदास बोले नाहीं। तब वह पुरुषोत्तमदास की स्त्री को माथो गरो उधारिकें देख्यो। सो माला देखिके बहोत रोई। कह्यो, ये स्त्री-पुरुष दोउ वैरागी भये। पाछें जाय के पुरुषोत्तमदास की माता नें पुरुषोत्तमदास की स्त्री की माता सों कह्यो, जो-तेरी बेटी और मेरो बेटा दोऊ माला पहिरी हैं। दोऊ वैरागी भये, अब कहा करनो ? तब उननें कही, चलो इनकी माला उतराउ, नाहीं तो दोऊ मरेंगे। सो दोऊ आयके स्त्री पुरुष सों कहें, जो-याहि छिन माला दोऊ उतारो। नाहीं तो दोऊन की हत्या लेऊगे। तब पुरुषोत्तमदास ने दस-बीस क्षत्री सगे संबंधी बुलाय कें सबके आगें माता सों कही, जो-यह माला हमारे सिर के साटे हैं। माथो जाय तो चिंता नाहीं परंतु माला तो न छोड़ेंगे। तातें तुम्हारो माला सों कहा काम है ? तुम्हारो मन होय तो हमारे भेले रहो, चहिये सो और कहो तो तुमकों न्यारो घर करिकें देय, मनुष्य चाकर

रहेगो। जो तुमको चहिये सो लेहु। हम सों बनेगी सो तुम्हारी टहल करेंगे। चाहो तुम याहि घर में रहो। हम न्यारो घर करिकें रहें। तुम कहो तेसे करें। क्लेश मति करो। परंतु हम माला सर्वथा न छोड़ेंगे। और तुम्हारे हाथ को छुयो खानपान न करेंगे। तुम माला पहिरो, वैष्णव होउ, तब तुम्हारे हाथको पानी काम आवें। यह सुनिके दोउ की माता क्रोध करि कें कह्यो, जो-तुम दोउ वेरागी भये (अब) हमहू कों वेरागी करत हौं? हम पाले हैं, अब हम चमार-भंगी ठेहरे तुमारे लेखे, जो-हमारो छूयो जल न लोगे ! हम दोउ तुमारे ऊपर मरेंगी। या प्रकार पांच दिनलों जल कोइ न लियो। सगरे सगे संबंधी गांव को हाकिम हू आयकें सबकों समुझायो। परंतु दोउ न माने। सो रात्रि कों पुरुषोत्तमदास स्त्री-पुरुष सोय गये, तब दोऊ की माता घर में कूप हतो तामें गिरि परी, सो देह छूटि गई। सबेरे दोऊन को संस्कार पुरुषोत्तमदास ने कियो। तब ज्ञाति के सगरे कहन लागें, जो-तुम दोउ स्त्री-पुरुष कों हत्या लागी तातें गंगाजी न्हाय आवो। तब ज्ञाति में लेय। तब स्त्री-पुरुष विचारि किये, जो-अपुने श्रीआचार्यजी पास जायकें भगवद् सेवा पधरावनो है। सो चलो। तब दोउ जनें तहाँ तें चले। प्रयाग आये। तहां न्हाये। पाछें अड़ेल में आइ श्रीआचार्यजी, श्रीगुसांईजी कों दंडवत् करि सब बात कही, महाराज आपु कहे सोई भयो। दोऊ की माता मरी। अब क्लेश मिट्यो। अब भगवद् सेवा पधराय दीजें। तब श्रीआचार्यजी कहें, उह दोउ आसुरी जीव हती। परंतु तुम वैष्णव भये तातें उनकी गति होइगी। जा कुल में वैष्णव होय ताको सगरो कुल कृतार्थ होयगो। तुम भगवद् सेवा करो। सो अड़ेल में एक पूजा मार्गीय ब्राह्मण वृद्ध हतो वाके घर लालजी हते। उनसों कहे, जो तुमतें पूजा न बनत होइ तो श्रीठाकुरजी हम कों देउ। तब उन ब्राह्मण ने कही, मैं यह विचारत हतो, जो-ठाकुर किनकों देउ। अब मोसों पूजा नाहीं बनत है। तब श्रीआचार्यजी पंचामृत स्नान कराय पुरुषोत्तमदास के माथे पधराये। कछूक दिन अड़ेल में रहि सेवा की रीति सब सीखि कें पाछें विदा होय आगरे में आये। सगरी ज्ञाति की रसोई ब्राह्मण भोजन कराई लौकिक अपवाद हू मिटाय दोऊ स्त्री-पुरुष भगवद् सेवा करने लागें।

वार्ता-प्रसंग १-सो एक समय श्रीगुसांईजी आगरे पधारे। सो पुरुषोत्तमदास के घर उतरे। तब पुरुषोत्तमदास की स्त्री छिपि रही। तब श्रीगुसांईजी ने पुरुषोत्तमदास सों पूछ्यो, जो तेरी स्त्री कहां है ? तब पुरुषोत्तमदास ने कही, महाराज ! जनेउ

टूट्यो होयगो। तब श्रीगुसांईजी जाने भिन्न बैठी होयगी। तब श्रीगुसांईजी स्नान करिकें रसोई करि दार, भात, पांच-सात साक, खीर सब किये। रोटी बेलन के समय पुरुषोत्तमदास की स्त्री न्हाइ के आय बैठी। तब श्रीगुसांईजी पूछें, तू कहां हती अब लों ? तब कह्यो, महाराज ! कछू काम हतो।

भावप्रकाश–सो अब अटकाव को दिन पांचमो हतो। सो स्त्री छिप रही, जो-बिना न्हाये श्रीगुसांईजी कों मुख क्यों दिखाऊँ ?

पाछें रोटी बेलि दियो। सगरी रसोई श्रीगुसांईजी करिकें श्रीठाकुरजी कों भोग धरे। पाछें भोग सराय अनोसर कराये। तब पुरुषोत्तमदास स्त्री-पुरुष श्रीगुसांईजी सों कहें, महाराज ! यही थार कटोरा में भोजन करो। तब श्रीगुसांईजी कहें, श्रीठाकुरजी के पात्र में कैसे करिये ? हम पातरि में करि भोजन करेंगे। तब पुरुषोत्तमदास कहे, महाराज ! द्रव्य तो निघट नाहीं गयो। और कसेरे सब मूए नाहीं। और नये पात्र आवेंगे। या प्रकार उह कहिकें श्रीगुसांईजी कों वाही श्रीठाकुरजी के पात्र में भोजन कराये।

भावप्रकाश–सो यातें जो इनकों श्रीगुसांईजी में भाव है। और लीला में श्रीचंद्रावली श्रीठाकुरजी संग वही पात्र में भोजन करतीं। सो ये श्रीचंद्रावलीजी की सखी हैं। सब लीला की स्फूर्ति हैं। तातें श्रीठाकुरजी के पात्र में भोजन कराये और स्त्री-पुरुष को श्रीगुसांईजी में स्नेह बहोत हैं। सो यह विचारे, दूसरे पात्र में फेर ठलाये तें सामग्री को सबाद फिरि जायगो। सगरी सीतल ह्वै जायगी। तातें और में ठलायवे तें ढील भोजन करिवे में होयगी, सोउ आछी नाहीं। तातें स्नेह सों उही पात्र में भोजन कराये।

पाछें श्रीगुसांईजी भोजन करिवे बैठें। तब पुरुषोत्तमदास की स्त्री पास बैठी। कह्यो, महाराज ! यह सामग्री आरोगो। तब श्रीगुसांईजी कहें, मोकों चहिये सो मैं लेउंगो। तब पुरुषोत्तमदास

की स्त्री ने कही, महाराज ! नंदरायजी के घर जैसे आरोगत हो, तैसेही सगरे वैष्णवन के घर आरोगो।

भावप्रकाश–यामें यह जताये, नंदरायजी के घर तो भक्तन को जैसो मनोरथ है तैसे अरोगत हो। इहां कहें, मोंको रुचे तैसे लेउंगो। सो कैसे बनेगी ?

या प्रकार श्रीगुसांईजी सों प्रेम संयुक्त वार्ता करे। बार बार सगरी सामग्री भोजन कराये, श्रीगुसांईजी कों प्रसन्न किये। पाछें श्रीठाकुरजी की सैया श्रीठाकुरजी के बिछोना तकिया तापर श्रीगुसांईजी कों पौढाय कें स्त्री–पुरुष चरनसेवा करन लागें। तब श्रीगुसांईजी कहें, उठो, अब दोउ जने जाय महाप्रसाद लेउ। तब पुरुषोत्तमदास स्त्री–पुरुष कहें महाराज ! महाप्रसाद तो नित्य लेइंगे। या प्रकार श्रीगुसांईजी कों नित्य नौतन प्रीति सों हठ करिकें पांच–सात दिन राखे। नित्य नये पात्र, सैया, वस्त्र होय। ऐसे स्त्री–पुरुष कृपापात्र भगवदीय हे।। वार्ता ॥२२॥

भावप्रकाश–इनकी वार्ता में यह सिद्धांत भयो, जो–गुरु में श्रीठाकुरजी सों अधिक प्रीति इनकी है। तेसें वैष्णव करें तब फल कों पावे। वैष्णव ॥२२॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, त्रिपुरदास कायस्थ, सेरगढ़ के वासी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश–ये लीला में श्रीठाकुरजी की अंतरंग सखी है, जो भक्तन कों ब्योरा कछू संदेसो कहेनो होई, देनो होई, सो हरनी के हाथ देते। इनके नेत्र विसाल बड़े हैं। तातें इनको नाम हरनी लीला में हैं। सो सेरगढ़ में एक कायस्थ के यहाँ जन्मे। सो एक राजा के सगरो काम (करे) दिवान कहावतो, इनको पिता। सो जब त्रिपुरदास बरस बारह के भये तब उनकों संगहि राखतो। सगरो काम त्रिपुरदास कों सिखायो। सो राजा एक समय आगरे कों देसाधिपति के पास चल्यो। तब त्रिपुरदास को संग ले राजा के संग आगरे आयो। कछुक दिन आगरे में रहिकें राजा देसाधिपति सों बिदा होइकें देस कों चल्यो। सो श्रीगोवर्द्धन, श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन कों आयो। तामें त्रिपुरदास पिता सहित आये। सो दिन तीन गोवर्द्धन में रहे। तब त्रिपुरदास को मन

श्रीनाथजी के स्वरूप में आसक्त होय गयो। सो चोथे दिन राजा बिदा होई कें चलिवे की तैयारी करी। सो सुनकें त्रिपुरदास कों विरह ज्वर चढ़ि आयो। सो व्याकुल भये। तब पिता ने पूछी, त्रिपुरदास कैसे हैं ? तब त्रिपुरदास ने कही, मेरी देह छूटेगी, जो मोकों ले चलोगे। तातें केतो तुमहुं महिना दोय रहो, के राजा के संग जाउ, मैं पाछे तें आछे दरसन करिकें आऊंगो। तब मेरे प्रान रहें। तब त्रिपुरदास के पिता नें राजा सों सब समाचार कहें। या प्रकार मेरो बेटा कहत हैं। तब राजा ने कही, कहा चिंता है ? असवारी और मनुष्य राखि चलो। पाछें तें बेटा आय रहेगो। तब पितानें आय कही, बेटा ! तुम रहो इहां। चिंता मति करो। यह सुनत ही त्रिपुरदास कों आनंद भयो। ज्वर उतरि गयो। तब पिता प्रसन्न होइ पालकी मनुष्य दिये। जो-बेटा ! बेग अइयो। मैं वृद्ध भयो हों। राजा को काम काज करनो है। तब त्रिपुरदास कहें, तुम चलो मैं बेगो आऊंगो। तब पिता राजा के संग गयो। सो मारग में एक जमींदार सों लराई भई। तहां त्रिपुरदास के पिता कों गोली लगी। सो मरि गयो। राजा उह जमींदार कों मारिकें आगे चल्यो। पाछें उह राजा (ने) त्रिपुरदास पास मनुष्य पठायो। सो सब समाचार त्रिपुरदास सों उन (ने) कह्यो। सो सुनिकें त्रिपुरदास प्रसन्न भये। जो भली भई। अब मेरे कोंई बंधन तो है नाहीं। अब श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन सदा करोंगो। पाछें पिता को कर्म मानसी गंगा पर सब किये। सुद्ध भये। सो नित्य सगरे दरसन करते। तब श्रीआचार्यजी एक दिन त्रिपुरदास सों कहें, जो-तू कौन है ? दोय महिना भये दरसन करते अपने घर जाउ। तब त्रिपुरदास ने कही, महाराज ! अब मैं कहाँ जाउं ? माता मरी जन्म तें, पिता अब मर्‍यो, मेरो ब्याह भयो नाहीं। सो अब मेरो मन श्रीनाथजी के स्वरूप में अटक्यो है। सो मैं कहां जाउं ? तब श्रीआचार्यजी त्रिपुरदास की प्रीति देखिकें कहें, हम ऐसो करि देई तोकों, जहां रहें तहां श्रीनाथजी के दरसन करें। एक छिनको वियोग न होई। तब त्रिपुरदास ने दंडौत करिकें बिनती कियो, जो-महाराज ! मोकों यही चहिये। काहेतें, मोसों मांग्यो जाय नाहीं। नित्य खरच हू चहिये। और श्रीनाथजी के दरसन बिना मोसों रह्यो हू नाहीं जाय। सो यह चिंता हती। जो आपु कृपा करिकें जो आज्ञा करो सो मैं करूं। तब श्रीआचार्यजी त्रिपुरदास कों न्हवाइ के नाम निवेदन कराये। और श्रीनाथजी को चरणामृत महाप्रसाद दिये। सो नेत्रन के आगें श्रीनाथजी के स्वरूप को दरसन होन लाग्यो। तब श्रीआचार्यजी कहे, अब तुम इहां तें जाउ। जहां रहोगे तहां प्रभु तुमकों दरसन देइंगे। तू श्रीठाकुरजी कों कबहू पीठ न देइगो। तब त्रिपुरदास श्रीआचार्यजी कों दंडौत् करि, विदा होई चले। तब यह प्रन कियो जो श्रीनाथजी के चरणामृत महाप्रसाद लिये बिना जल न लेनो। यह मन में निश्चय करि घर में आये।

वार्ता-प्रसंग १-सो त्रिपुरदास कों श्रीनाथजी के विषे बहोत ममत्व हतो। जो-श्रीनाथजी कों पीठि कबहू न देते। श्रीनाथजी के चरणामृत महाप्रसाद बिना जल हू न लेते। सो त्रिपुरदास एकतुरक की चाकरी करते। सो तुरक की ओर तें एक परगना पर गये। सो बहोत कमाये। सो, जो-वस्तु नौतन आवें अन्न, साक, फल-फूल, वस्त्र सो पहिले श्रीनाथजी कों अंगीकार होइ। ता पाछें आपु कछु लेय। और त्रिपुरदास बैठे, ठाड़े, चलते, श्रीनाथजी कों पीठ न देते।

भावप्रकाश-सो कहा, जो-श्रीनाथजी के स्वरूप को भूलनो सोई पीठि हैं। सो तदा दरसन करतहि सब काम करते।

और बरस के बरस आछो दगला श्रीनाथजी कों पठावते। सो श्रीगुसांईजी पहिले त्रिपुरदास कों दगला आछो देखिकें अंगीकार करावते। सो एक समय उह म्लेच्छ ने त्रिपुरदास सों लेखो लीनो। सो कछुक दाम त्रिपुरदास के ऊपर निकसे। सो उनसों मांग्यो। तब त्रिपुरदास ने कही मेरे पास अब तो नाहीं है। कमायकें भर देउंगो। तब उह तुरक ने सगरो घर लूटि लियो। त्रिपुरदास कों बंदीखाने दिये। सो अर्धरात्रि गई। तब चार जने आयकें उह तुरक कों खाट तें औंधो डारि दियो। और मुगदर सों मारन लागे। तब उह तुरकने कही, मोकों क्यों मारत हो ? मैं तुम्हारो कहा बिगार्‍यो है ? तब विष्णुदूत ने कही त्रिपुरदास कों बंदीखाने में क्यों दिये ? तोकों मारि हाड तोरि डारेंगे। तब वह तुरक हाहा खाय नाक भूमि में घसिकें कह्यो, मैं अब ही तुरंत जाय त्रिपुरदास कों छोड़ि देउंगो। तुम मोकों मति मारो। तब विष्णुदूत गये। तब उह तुरक त्रिपुरदास पास जाइके कह्यो,

अपने घर जाउ। तब त्रिपुरदास नें कही अब रात्रि बहुत गई है, सकारे जाउंगो। तब उह तुरक ने कही काहू को जीव लेइगो ? याही समय जाउ। तब त्रिपुरदास गर आये।

सो इतने में भेटिया श्रीनाथजी के आये। सो त्रिपुरदास कों चरणामृत महाप्रसाद दिये तब त्रिपुरदास ने बिचारयो, जो-बरस के बरस श्रीनाथजी कों जड़ावर पठावतो हो। परि अब तो कछू पास है नाहीं। सो एक लिखिवे की द्वाति रही। वाको मुहरो ऊपर को रूपे को हतो। सो बेचि एक रंगी खारका को थान ले आय भंडारी कों दियो। और कहें श्रीगुसांईजी सों मति कहियो। श्रीनाथजी के भंडार में दीजो। कहा करिये, अब तो मैं कछू लायक नाहीं हों। सो भेटीआ ने उह रंगी श्रीनाथजी के भंडार में दीनी। पाछें प्रबोधिनी के दिन श्रीगुसांईजी मंडप करि देवोत्थापन करि श्रीनाथजी कों दगला उढ़ाये। तब श्रीनाथजी कहे, जो मोकों सीत बहोत लागत है। तब दूसरो दगला उढ़ाये। तब फेरि श्रीनाथजी नें कही मेरो सीत गयो नाहीं, बहोत लागत है। तब श्रीगुसांईजी दूसरी अंगीठी धरि, एक अंगी करि, रजाई ऊपर उढ़ायें। तउ श्रीनाथजी ने कही मोकों सीत बहोत लागत है। तब श्रीगुसांईजी विचारे, जो-यह वैष्णव की जडावर आई है सो अंगीकार नाहीं भई, ताके लिये सीत है। तब श्रीगुसांईजी भंडारी कों बुलाय कें कहे, जो-जडावर किन किन की आई हैं। सो वैष्णवन के नाम सुनावो। सो भंडारी ने सुनाये। तब श्रीगुसांईजी कहे, त्रिपुरदास की बरस के बरस आवती सो तो सुनाये नाहीं। (तब) भंडारी ने कही, महाराज ! त्रिपुरदास के द्रव्य को संकोच है। सो जड़ावर नाहीं आई। एक रंगी को थान आयो है। सो

भंडार में मेली मरगजी परी है। (तब) श्रीगुसांईजी कहे, उह रज़ी त्रिपुरदास की बेगि ल्यावो। सो भंडारी ले आयो। तब श्रीगुसांईजी दरजी सों कहे, बेगे डोरा डारि दुलाई सी करि देउ। सो दरजी ने डोरा डारि दुलाई करि दियो। तब श्रीगुसांईजी उह दुलाई श्रीनाथजी कों उढ़ाये। तब श्रीनाथजी ने कही, अब मेरो जाड़ो गयो, गरमी भई। सों सीतकाल में दस-पांच बेर उह दुलाई अङ्गीकार करि भक्तवश्यता दिखाई। यह बात त्रिपुरदास ने जानी। तब गद्‌गद् होइ यह पद गायो, सो पद-

राग आसावरी

नवरंग ललन बिहारी मेरो कहे, जाड़ो मोहि अधिक सुहाय।
पहेरि कँवाइ औढ़ि लई फरगुल, तोहू सीत सतावत आय॥
अचरज भये सुनि वल्लभ-नंदन कनक अँगीठी धरी मँगाय।
पुनि जिय सोचि मँगाई उढ़ाई, भजि गई सीत हंसे जदुराय॥२॥
ऐसे परम कृपाल दयानिधि, बिसरत नहीं सुधि करत सहाय।
''त्रिपुरारी'' गिरिधारी की बातें, कहा जानें कोउ देहु बताय॥३॥

भावप्रकाश-यामें यह जताये, जो-मेरो भक्त तिनकी प्रीति की वस्तु होय, सो या प्रकार मैं अंगीकार करत हों। सो भक्ति भाव को अंगीकार, वस्तु को बिचार कछू नाहीं।

वार्ता-प्रसंग २-और एक समय त्रिपुरदास वाहि तुरक के साथ अटक कों गये हते। सो एक दिन सबेरे रसोइया ने कही, जो-आजु श्रीनाथजी को चरणामृत महाप्रसाद नाहीं है। तब त्रिपुरदास ने कही, पहले सों क्यों न कह्यो ? बढ़ाय लेते। पाछें रसोइया सों कही, रसोई करि भोग धरि कै तुम पहुँचियो। मोकों मति बुलाइयो। यह कहिकें त्रिपुरदास अपने मनमें यह निश्चय कियो, जो-जहांलौं देह चलेगी तहां लौं कामकाज करूंगो।

परंतु चरणामृत महाप्रसाद बिना जल न लेउंगो। यह निर्धार करि दरबार गये। तब श्रीगोवर्द्धनधर एक बरस दस को लरिका को रूप धरि तीन थेली लेकें आये। एक थेली में तो श्रीनाथजी को महाप्रसाद, एक थेली में श्रीनाथजी का चरणामृत। एक थेली में श्रीआचार्यजी को चरणामृत। यह ले उह रसोइया सों कही, यह चरणामृत महाप्रसाद की थेली त्रिपुरदास ने पठाई हैं। और कहे हैं, जब तू श्रीठाकुरजी सों पहुँचे, तब मोकों बुलाइ लीजो। तब रसोइया ने उह थेली राखी। तब लरिका अंतर्धान ह्वै गयो। पाछें रसोइयाने रसोई सों पहुँचि श्रीठाकुरजी कों भोग धर्‍यो तब त्रिपुरदास कों बुलावन मनुष्य दरबार पठायो। सो त्रिपुरदास सों जाई कही। तब त्रिपुरदास ने कही, मैं तो कहि आयो हतो, जो-मैं न आउंगो। तुम पहुँचियो। सो जाय कहियो, जो-तुम पहुँचि मेरी बाट मति देखियो। तब उह मनुष्य फेरि आइकें त्रिपुरदास के समाचार कहे, जो-वे न आवेंगे, तुम पहुँचियो। तब उह रसोइया ने कही, तू एक बार फिरि जा। त्रिपुरदास कों कहियो, जो-तुमने लरिका हाथ चरणामृत महाप्रसाद की थेली पठाये और कहे, मोकों बुलाइयो। अब नाहीं क्यों करत हो ? तब फेरि मनुष्य जाई यह बात कही। तब त्रिपुरदास दरबार सों घर आयकें रसोइया सों कहे मोकों क्यों बुलायो ? मैं चरणामृत महाप्रसाद बिना जलहू न लेउंगो। तब रसोइया ने कही, तुम लरिका हाथ चरणामृत महाप्रसाद की थेली पठाये और कहे, मोको बुलाइयो। अब ऐसे क्यों कहत हो ? यह थेली तीनों धरी हैं। तब त्रिपुरदास देखि कें कहें, उह

लरिका कहां है ? तब रसोइया ने कही, लरिका थेली दे चलो गयो। मैं कहा जानों कहाँ है ? तब त्रिपुरदास बिचारे, मैं श्रीठाकुरजी कों बहोत श्रम करवायो। अब तें काहू बात को हठ न करनो। बहोत मनमें खेद कियो। सो त्रिपुरदास ऐसे भगवदीय हे।

भावप्रकाश–सो श्रीठाकुरजी रसोईया कों थेली दे गये, परंतु त्रिपुरदास कों याते नाहीं जताये, जो मोकों लरिका भेखमें देखेंगे तो बहोत क्लेश इनकों होयगो। और त्रिपुरदास कों तो अष्टप्रहर स्वरूप को अनुभव है। तातें नाहीं जताये। और रसोईया साधारन वैष्णव हतो, तातें लरिका भेख करि अपुने स्वरूप को अनुभव कराये। इनकी वार्ता में यह सिद्धांत भयो, जो–इनकों स्वरूपासक्ति हैं। सदा श्रीठाकुरजी के सन्मुख है। और चरणामृत को स्वरूप जताये, जों–चरणामृत कों हू नेम निश्चय वैष्णव राखे तो श्रीठाकुरजी वापर प्रसन्न होइ। और प्रभुको श्रम जानि दुःख न होय तो मर्यादामार्गीय होइ जाय। यों जीवन के कार्य अर्थ प्रभु श्रम करें तातें पुष्टिमार्गीय प्रसन्न नाहीं। काहेतें ? पुष्टिमार्गीय अपने सुख अर्थ कछू चाहना प्रभु तें राखत नाहीं। दुःख हू आवे तो सरीरको भोग बिचारके भोगे। तातें बंदीखाने परे तब मनमें सोच न किये। सो विष्णुदूत उह तुरक कों दंड दे छोड़ाये। तामें भक्तवत्सलता प्रभु प्रगट करी और बरस के बरस आछो दगला त्रिपुरदास पठावते सो मांगि के अंगीकार किये नाहीं। और विरह प्रीति सों रंगी पठाये सो प्रीति के बस होई अंगीकार किये। तब सीत गयो। यामें यह जताये, द्रव्य को संकोच वैष्णव कों होइ सोउ प्रभु अनुग्रह करन के लिये। और द्रव्य बहोत होई सो वैष्णव के संबंध करि अंगीकार करन वे लिये। काहेतें ? बरस के बरस सुंदर दगला पठावते तो संकोच में ताप भयो। जो द्र भये सेवा न करेगो तो ताप कहां ते होयगो ? तातें सेवा करिवे वारो दैवी जीव होई त द्रव्य में हू बने। और संकोच हू में बने, यह जतायो। तातें त्रिपुरदास की वार्ता को पा नाहीं है। इनने भाव हृदय में राख्यो, काहू के आगें प्रकास नाहीं कियो। तातें स्वरूप सेवा नाहीं पधराई। मनहि करि मानसी में अष्ट प्रहर मगन रहते। संयोग रस ही क अनुभव किये। लीला हू में इनकों संयोग रस है। श्रीठाकुरजी संबंधिनी सखी है।

वैष्णव ॥२३॥

सो त्रिपुरदास की वार्ता को पार नाहीं। कहां तांई कहिये

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, पूरनमल, जेंबल क्षत्री, अंबालय में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश–ये लीला में ललिताजी की सखी है। इनको नाम चित्रलेखा है। श्रीस्वामिनीजी की कुंज रचना, तामें नाना प्रकार के चित्र करत हैं। सो अंगलय में एक क्षत्री के घर जन्में। सो पूरनमल को पिता हथियार बांधिके चाकरी करतो। और पूरनमल कों एक जोहरी को संग भयो। सो जवाहर को कसब सीखें। सो बरस बीस के पूरनमल भये। तब माता पिता की देह छूटी। पूरनमल को ब्याह भयो सो स्त्री साधारन मिली। और पूरनमल को मन भगवान में बालपनेसों। सो जहाँ तहाँ कथा वार्ता सुने। मर्यादा की रीति चलें। स्त्री को मन ठाकुरजी में न देख्यो। तब अपने घर में न्यारी जगा करि दीनी। चार रुपैया को महिना करि दियो। द्रव्य बहोत हतो, सो मनुष्य के हाथ स्त्री कों खरच पटाय देते। आपु वासों बोलते नाहीं। वैराग्य हू दृढ़ हतो।

वार्ता–प्रसंग १–सो इन पूरनमल की गांठि में द्रव्य बहोत हतो। सो एक समय रात्रि कों पूरनमल कों दैवी जीव जानि श्रीगोवर्द्धनधर स्वप्न में कहे, जो–ब्रज में गोवर्धन पर्वत है। तहां हम प्रगट भये हैं। सो तू आय कें हमारो मंदिर समराव। और श्रीआचार्यजी को सेवक होउ। तब पूरनमल जागिकें सवेरे भये सगरो द्रव्य भेलो करि ब्रज में गोवर्धन के आइ दरसन किये। पाछें रामदास भीतरिया सों पूछें, जो–मोकों श्रीनाथजी नें मंदिर सँवराइवे की आज्ञा दीनी है, सों मैं आयो हूँ। तब रामदास सदू पांडे सब कहें, जो–श्रीनाथजी तो श्रीआचार्यजी के ठाकुर हैं। सो अब दोय–चारि दिनमें श्रीआचार्यजी पधारिवे वारे हैं। तब उनसों पूछि के उनकी आज्ञा होइ तो मंदिर सँवराऊ। पाछें श्रीआचार्यजी पधारे। तब पूरनमल ने दंडौत करि बिनती करी, जो–महाराज ! मोकों सेवक करिये। और श्रीनाथजी मंदिर सँवरायवे की आज्ञा करी है। सो आपु आज्ञा देउ तो मैं सँवराउ। तब श्रीआचार्यजी पूरनमल कों नाम निवेदन कराय कहे, आगरे

तें कारीगर बुलावो। सो पूरनमल ने कारीगर बुलाये। तब श्रीआचार्यजी वासों कहे, मंदिर को नकसा करि ल्यावो। तब कारीगर ने मंदिर को नकसा सिखरबंद कियो। धुजा कलस सहित। तब श्रीआचार्यजी कारीगर सों कहे, हमारे ठाकुर को मंदिर सिखर बंद धुजा, कलस को नाहीं। नंदराइजी के घर की नांई करो। तब कारीगर ने दूसरी बेर घर की नांई कियो। तब श्रीआचार्यजी के हस्त में नकसा को कागद आयो ! तब उही सिखरबंद धुजा कलस सहित। तब श्रीआचार्यजी कहें, सिखरबंद क्यों किये ? तब कारीगर ने कही, महाराज ! हम तो घर की नांई किये हते। सो अब सिखरबंद धुजा कलस भयो ताको कारन तो हम जानत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी कहें, हम बैठे हैं, हमारे आगे नकसा तैयार करो। तब कारीगर ने घरकी नांई जैसे श्रीआचार्यजी कहे ता रीति सों कियो। जब नकसा तैयार भयो तब उही सिखरबंद धुजा कलस चक्र है गयो। तब श्रीआचार्यजी जाने, जो-श्रीठाकुरजी की इच्छा यह है, जो जगत में पूजाय बहोत जीव उद्धार करेंगे। सो देवालय की रीति यहां राखनो उचित हैं। तब श्रीआचार्यजी गिरिराजजी सों पूछे, जो-प्रभु-इच्छा तुम्हारे ऊपर मंदिर बनाइवे की है। सो मंदिर बनेगो तब लौकिक रीति सों तुमकों श्रम बहोत होयगो। तब गोवर्धनजी कहें, हमकों परमसुख है। हमारे ऊपर हमारे प्रभु के लिये, जो-करें ता पर मैं प्रसन्न हों। तातें सुख तें मंदिर के लिये लौकिक रीति सब करो। मोकों कछू दु:ख नाहीं।

भावप्रकाश-ताहींते, पाछें श्रीगुसांईजी (हू) वैष्णव कों सेवा दरसनार्थ गोवर्द्धन पर चढ़न देते। और जहां तहां बिना सामग्री, सेवा बिना, चढ़न की आज्ञा नाहीं।

तब श्रीआचार्यजी पूरनमल कों आज्ञा दीनी, बेगे मंदिर सँवरावो। सो मंदिर की नींव खोदी। सो नींव भरि गई, इतने में पूरनमल को द्रव्य सब निघट गयो। तब पूरनमल कमायवे कों गये।

भावप्रकाश–सो द्रव्य घट्यो ताको अभिप्राय यह है, जो–पूरनमल के पिता को कमायो द्रव्य हतो। सो पिता के मरे पुत्रकी सत्ता होइ। तातें पूरनमल की सत्ता जानिकें श्रीनाथ अंगीकार किये। परंतु लौकिक मनोरथ करि पिता द्रव्य कमायो हतो। तातें कार्य सिद्ध न भयो। और जो यही द्रव्य सों मंदिर बनें तो वित्तजा सेवा पूरनमल की सिद्धि न होई। ताएं द्रव्य घट्यो। तब पूरनमल मंदिर की सेवा निमित्त कमायवे कों गये। यामें यह जताये, वैष्णव कों ब्यौपार करनो तो भगवद्सेवा, गुरुसेवा और वैष्णव सेवा को मनोर्थ करि करनो। तब ही द्रव्य ते सेवा सिद्ध होइ। तब वित्तजा सेवा कहिये।

पाछें पूरनमल गयो तब और वैष्णव राजसी कितनेन कही, जो–आज्ञा होय तो हम मंदिर सँवराये। तब श्रीआचार्यजी कहें पूरनमल आय के सँवरावेगो।

भावप्रकाश–सो याहीतें, जो–प्रभुने पूरनमल कों मंदिर संवराइवे की आज्ञा दई हैं। सो पूरनमल को मनोरथ सिद्ध करावनो है।

ता पाछें पूरनमल जवाहर को कसब करि थोड़े दिनमें बहोत कमाय कें आयें।

भावप्रकाश–यामें वैष्णव कों यह जताये, जो–कछू सेवा संबंधी मनोरथ करि व्यौपार करिये। और कार्य सिद्ध होनहार न होई तो ब्यौपार हू सिद्ध न होई। तब वैष्णव सब भगवद् इच्छा माने। हरख सोक न करें। प्रभुकों जितनो करनो होइ तितनो सहज ही में सिद्ध होइ।

सो द्रव्य लेके पूरनमल आये। मंदिर सिद्ध कराये। तब श्रीआचार्यजी आछो मुहूरत देखि कें श्रीगोवर्द्धनधर कों मंदिर में पधराये। अक्षतृतीया के दिन। तब पूरनमल ने बहोत द्रव्य खरच कियो। आभूषन वस्त्र सामग्री भेट आदि। तब श्रीआचार्यजी

प्रसन्न होइकें पूरनमल सों कहें, जो-तेरो मनोरथ होइ सो राखे मति। सब करियो। तब पूरनमल नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराजाधिराज ! मेरो यह मनोरथ है, जो-अपने हाथ सों अति सुगंध को अरगजा श्रीअंग में समर्पों। तब श्रीआचार्यजी कहें, सुखेन मनोरथ करो। तब पूरनमल ने अत्यंत सुगंध को अरगजा सिद्ध करिकें सर्वाङ्ग में लगाये। बहोत आनंद पाये। तब श्रीआचार्यजी श्रीअंग को प्रसादी उपरना पूरनमल कों उढाये। पाछें द्रव्य बहोत बच्यो। सो पूरनमल ने श्रीआचार्यजी की भेट कियो।

भावप्रकाश-सो पूरनमल को मनोरथ यातें भयो, जो-पूरनमल कों लीला में ''चित्रलेखा'' सखी अपने स्वरूप को ज्ञान भयो। तब श्रीआचार्यजी कों प्रसन्न जानि मनमें बिचार कियो, जो-मैं मंदिर संवरायो सो सेवा तो लीला हू में मिलत हैं। कुंज संवारिवे की। परंतु श्रीआचार्यजी मुख्य श्रीस्वामिनी रूप हैं। तिनकी कृपा तें कछू श्रीअंग की सेवा करि लेउ, यह विचारी। अरगजा लेपन की सेवा श्रीस्वामिनीजी अपने हाथ सों प्रभु कों समर्पत हैं, संयोग समय। और विप्रयोग समय ललिताजी श्रीठाकुरजी कों समर्पत हैं। काहेतें ? अरगजा श्रीस्वामिनीजी के श्रीअंग के भाव सों है। सो श्रीस्वामिनीजी की कृपा बिना यह सेवा कहां मिले ? सो श्रीआचार्यजी की प्रसन्नता सों पूरनमल को मनोरथ सिद्ध भयो। और श्रीआचार्यजी प्रसादी उपरना अपनो उढ़ाये। तामें सगरो सरीर पूरनमल को अलौकिक मानसी सेवा योग्य ह्वै गयो। तातें पूरनमल भगवद्सेवा नाहीं पधराई। मानसी में मगन भये। मंदिर सँवराये तामें वित्तजा सेवा सिद्ध भई। यामें यह जताये, जो-भाव करिकें एकहि सेवा में फल भयो। एक दिन अरगजा लगाये तन करि। धन करि मंदिर संवराये। तातें भाव बिना जन्म भरि तनुजा वित्तजा सेवा करत हैं परंतु मानसी फल रूप पावत नाहीं। सो प्रीति सों एकही बार में फल पाये। तातें प्रीति सर्वोपरि फलकों सिद्ध करत है। यह जताये।

पाछें बरस के बरस श्रीगुसांईजी पूरनमल कों प्रसादी दगला पठावते। वार्ता ॥२४॥

भावप्रकाश - सो दगला श्रीगोवर्धन को स्वरूप है। सो पूरनमल पास आपुही पधारते। सो पूरनमल के हृदय में अगाध भाव है। अष्टप्रहर लीला में मगन

रहत हैं। तातें इनकी वार्ता को भाव कहां तांई कहिये। ऐसे भगवदीय पूरनमल है। जो-श्रीनाथजी आप ही प्रमेय बल तें घर में दरसन दे मंदिर सँवरायवे की आज्ञा दिये।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, जादवेंद्रदास कुम्हार, महावन में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं-

भावप्रकाश - ये लीला में नंदरायजी की गाय हुती। तिनमें बिजार हे। इनको नाम ''मदोन्मता'' सब कोऊ कहते। कोऊ बिजार इनके संग आय न सकतो। श्रीठाकुरजी बहोत इनकों खवायो हैं। जमुनाजी में न्हवायो हैं। सो महावन में एक कुम्हार कें प्रगटे। सो नारायनदास ब्रह्मचारी के घर मृत्तिका के पात्र ल्यावते। सो नारायनदास दैवी जानि जादवेंद्रदास कों एक दिन महाप्रसाद लिवायो। तब जादवेंद्रदास की बुद्धि निर्मल ह्वे गई। सो नारायनदास सों कहें, मोकों श्रीआचार्यजी को सेवक करावो। तब नारायनदास ने कही, तुम्हारी ज्ञाति कुम्हार हैं। सो कुम्हार को संग तुम तें छूटे तो सेवक करावें। तब जादवेंद्रदास नें कही, यह मैं पहिले ही मन में धारन करि लियो है। जो-आजु पाछें मा-बाप के हाथ सों न खानो, न जल लेनो। श्रीआचार्यजी के वैष्णव के हाथ को लेउंगो। परंतु अब अपुने घर को मुंह न देखोंगो। यह सुनिकें नारायनदास प्रसन्न होयके कहें, तू हमारे घर में रहियो। श्रीआचार्यजी पधारेंगे तब सेवक हुजियो। सो नारायनदास के घर ही में रहते। लकडी छाना ले आवते। पाछें श्रीआचार्यजी महावन पधारें। तब नारायनदास के घर उतरे। तब नारायनदास नें बिचार करिकें जादवेंद्रदास कों सेवक कराये। पाछें, आछें श्रीआचार्यजी के सेवक भये।

वार्ता - प्रसंग १- सो ये जादवेंद्रदास श्रीआचार्यजी के परम कृपापात्र भगवदीय हते। सो जब श्रीआचार्यजी महाप्रभु तथा श्रीगुसांईजी आपु परदेस कों पधारते तब ये परदेस संग रहते। तब जादवेंद्रदास इतनी वस्तु ले चलते। एक कनात, एक हडवाई, दोई चारि दिन की सीधो। एक छोटी रावटी। और मारग में वैष्णव हार चलते सो मंजिल पर जाय सगरी परचारगी करते। रात्रि कों चौकी पहरा देते। ऐसी सेवा करते।

वार्ता - प्रसंग २-और एक समय श्रीगुसांईजी श्रीगोकुल हते। सो एक दिन पहर डेढ़ रात्रि गई हती। फागुन वदि ७ को

दिन हतो। ता समय श्रीगुसांईजी नें श्रीमुख सों कही, जो–या समय मंदिर की नीम खोदी जाय तो भलो दृढ़ होय। ऐसो मुहूर्त है। यह कहिकें आपु तो पोढ़े।

और जादवेंद्रदास तत्काल नीम खोदी। सो दोय प्रहर में सब खोदि कें माटी को ढेर कर्यो। पाछें श्रीगुसांईजी जागे तब देखें। तब कहें, यह माटी कैसी है ? तब वैष्णव नें कही, जादवेंद्रदास ने सब खोदी है। तब श्रीगुसांईजी जादवेंद्रदास सों पूछें यह तुमने खोदी है ? तब जादवेंद्रदास ने कही, जो–आप श्रीमुख सों कही, वाही समय मंदिर की नीम खोदी है। पाछें राजमजूर कारीगर ने एक महिना में नीम भरी। इतनी खोदी। ऐसे सामर्थ्यवान हते। पाछें मंदिर बन्यो, श्रीनवनीतप्रियजी आदि बिराजें। श्रीगुसांईजी जादवेंद्रदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये।

वार्ता – प्रसंग ३ – और श्रीनाथजीद्वार जलको कलालौ जानि रुद्रकुंड के पास एक कूंआ अपने हाथ सों खोदयो। ताकी माटी पकाय पक्को बांधे। परंतु जल खारी निकस्यो। तब जादवेंद्रदास गंगाजी गये। तहां जाय हाथ सों गंगाजी में जाय तर्पन करन लागे। और विनती कीनी, जो–ऐसो जल मिष्ट करो। सो जब जल मिष्ट भयो जाने तब निकसि आये। वार्ता ॥२५॥

भावप्रकाश – याको कारन यह, जो–सगरे जगत में उत्तम गंगाजल निर्दोष हैं। तातें श्रीनाथजी की सेवा में निर्दोष पदार्थ विनियोग होय। तातें गंगाजी गये। सो जादवेंद्रदास श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। सो इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वैष्णव ॥२५॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गुसांईदास सारस्वत, मथुरा में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश – ये लीला में गिरिराज पास गोविंदकुंड पर कदंब को वृक्ष है तहां के सूवा है। सो वेणुनाद श्रीठाकुरजी करते तब नादरस अधरामृत पान करते। सो ये गुसांईदास पूरब में सारस्वत ब्राह्मन के घर जन्में। सो बरस चौदह के भये। तब एक ब्राह्मन के मुख तें श्रीभागवत की पारायन और भगवद्गीता सुने। सो विरक्त होय तीरथ करन लागें। सो तीरथ करत चौबीस बरस के भये। सो मथुरा में आय निकसे। तब विश्रांत घाट पर श्रीआचार्यजी संध्यावंदन करत हते। सो दरसन करि गुसांईदास के मन में आई, जो–मैं अकेलो तीरथ बहोत कियो। परंतु अब इनकी सरन होंउ। तब श्रीआचार्यजी सों बिनती किये, महाराज ! मोकों सेवक करो। तब श्रीआचार्यजी कहे, तेरो मन तीरथ करन में है सो सेवक होइकें कहा करेगो ? तब गुसांईदास ने कही, महाराज ! आप, जो–आज्ञा करोगे सो करूंगो। अब तीरथ करत करत हारयो। अब मथुरा में एक ठौर करिकें रहोंगो। तब श्रीआचार्यजी गुसांईदास कों नाम निवेदन कराये। पाछें कहे, भगवद् सेवा करो। तब कहें, महाराज ! आप श्रीठाकुरजी पधराय देउ तिनकी सेवा करूँ। सो एक वैरागी पास चतुर्भुज स्याम स्वरूप श्रीठाकुरजी को हतो। सो उह वैरागी श्रीआचार्यजी कों स्वरूप दें द्वारिका कों गये। तब श्रीआचार्यजी पंचामृत स्नान कराय गुसांईदास के माथे पधराये।

वार्ता – प्रसंग १ – सो गुसांईदास मथुरा में एक घर ले तहां सेवा करन लागे। सो श्रीठाकुरजी गुसांईदास कों सानुभावता जतावन लागे। सो एक वैष्णव गुसांईदास के घर श्रीठाकुरजी को नित्य दरसन करिवे कों आवें। सो मनमें श्रीठाकुरजी सों प्रार्थना करें, जो–महाराज ! मेरे माथे पधारो तो मैं सेवा करूं। या प्रकार मनमें नित्य बिनती करें। तब गुसांईदास उह वैष्णव सों कहें, जो–तुम मेरे पास रहो तो सेवा करो। तब उह वैष्णव ना कही। वाके मन में यह जो अकेलो स्वतंत्र सेवा की कहे। तातें उह वैष्णव मान्यो नाहीं। पाछें कछुक दिन में श्रीठाकुरजी गुसांईदास कों प्रेरयो। तब गुसांईदास उह वैष्णव सों कहे, अब तुम श्रीठाकुरजी कों पधरावो, सेवा करो। तब उह

वैष्णव नें कही, तुम कहा करोगे ? तब गुसांईदास ने कही, मैं बद्रीकाश्रम जाउंगो । तहां मेरी देह छूटेगी । तब उह वैष्णव ने कही, कदाचित् देह भगवद् इच्छा तें न छूटें, फेर आवो तब ? प्रभु की गति जानि न जाय । तब गुसांईदास नें कही, प्रभु ऐसी न करेंगे । और कदाचित् मैं आऊंगो तो तुम्हारे द्वारें रहूँगो । श्रीठाकुरजी तो तुम्हारे ऊपर प्रसन्न हैं । मैं न पधराऊंगो । एक दरसन करि लेऊंगो । तब उह वैष्णव ने श्रीठाकुरजी कों पधराय भली भांति सेवा करन लाग्यो । और गुसांईदास बद्रीकाश्रम गये । सो विरह करि देह छोड़ी । सो गुसांईदास श्रीआचार्यजी के . . ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे ।

भावप्रकाश–सो देह छोड़ि लीला में सूवा भये ।

पाछें कछुक दिन में गुसांईदास की देह छूटन के समाचार उह वैष्णव कों आये । तब कह्यो, श्रीआचार्यजी के वैष्णव झूंठ न बोलें, देह छोड़ी । पाछें मन लगाय कें सेवा करन लाग्यो ।

वार्ता ॥२६॥

भावप्रकाश–सो गुसांईदास कछू दिन भगवद् सेवा करी । तब अपने स्वरूप को ज्ञान भयो । तब श्रीठाकुरजी जताये, जो–अब तू या वैष्णव के माथे पधराय बद्रिकाश्रम जा । तहां विरह करि देह छोड़ि लीला में पंछी होइगो । तेरो साधन सिद्ध है चुक्यो । तब गुसांईदास गये । और उह वैष्णव श्रीचंद्रावलिजी की सखी लीला में हती । ''चतुरा'' इनको नाम हतो । सो मथुरा में एक सनौढ़िया के घर जन्म पायो । सो माता पिता स्त्री सब मरि गये । अकेलो रह्यो । सो श्रीआचार्यजी को सेवक हतो । सो भगवद् सेवा को ताप बहोत । सो एक दिन श्रीठाकुरजी स्वप्न में कहें, गुसांईदास के ठाकुरजी को नित्य दरसन करियो । सो श्रीठाकुरजी तेरे माथे पधारेंगे । उह वैष्णव आय गुसांईदास के घर नित्य दरसन करतो । सो श्रीठाकुरजी कृपा करिकें पधारे । तातें मूल में जेसो जीव होय ताही प्रकार सों साधन बनेते फल होई ।

वैष्णव ॥२६॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, माधवभट्ट कास्मीरी, कास्मीर में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं-

भावप्रकाश-ये माधवभट्ट लीला में जसोदाजी की दासी है। सो परम चतुर हें। श्रीठाकुरजी की सैया बिछावनो, जल ले आवनो। कुमारि राधा सहचरी के संग में है। ''रत्ना'' इनको नाम है।

वार्ता - प्रसंग १ - सो माधवभट्ट कास्मीर में एक ब्राह्मन के घर प्रगटे। सो प्रथम माधवभट्ट केसवभट्ट के सेवक भये। सो केसवभट्ट कास्मीर में कथा कहते। सो केसवभट्ट श्रीआचार्यजी के पास मिलन कों आये। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीसुबोधिनीजी कहते। सो केसवभट्ट सुनन कों आवते। सो विद्यामद तें उंचे आसन पर बैठ कै कथा सुनते। और माधवभट्ट मन लगाय दास भावसों सुनते। पाछें जब श्रीआचार्यजी कथा कहि चुकते तब माधवभट्ट श्रीआचार्यजी के वैष्णवन के पास जाय बैठते। सो वैष्णवन के मुख तें वार्ता सुनते। सो एक दिन केसवभट्ट ने माधवभट्ट सों कह्यो, जो-मैं कथा कहत हों, सो तू सुनन नाहीं आवत है। और हांसी मसखरी वार्ता क्यों सुनत है ? तब माधवभट्ट नें कही, तुम्हारी कथा तें श्रीआचार्यजी के सेवकन की हांसी मसखरी वार्ता आछी लागत है। तातें उहां जात हों। यह माधवभट्ट की बात सुनि कें केसवभट्ट मनमें बिचार कियो। अब यह हमारे काम को नाहीं। तातें श्रीआचार्यजी कों भेंट करूंगो। पाछें कछुक दिन में केसवभट्ट घर चलन लागे। तब श्रीआचार्यजी सों कहें, मैं आपु की कथा सुनी है। तातें यह माधवभट्ट कों आपकी भेट करत हों। यह मेरे काम को नाहीं है। सो तब माधवभट्ट श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पास रहें। पाछें केसवभट्ट बिदा होय चले गये। तब एक वैष्णव ने

श्रीआचार्यजी सों प्रश्न कियो, जो–महाराज ! आपके श्रीमुख सों कथा माधवभट्ट ने हू सुनी और केसवभट्ट ने हू सुनी। सो माधवभट्ट कों बोध भयो और केसवभट्ट कों क्यों नाहीं भयो ? ताको कारन कहा ? तब श्रीआचार्यजी कहें, जो–केसवभट्ट ने बराबरि बैठिकें कथा सुनी तासों बोध न भयो। और माधवभट्ट दासभाव सों मन लगाय के सुन्यो। तातें याकों बोध भयो।

भावप्रकाश– यामें यह जतायो, कथा श्रवन में दासभाव होय तो फल रूप होई। अहंकारी कों कहें, तोहू सुने को फल न होइ। यह जताये। मूल में माधवभट्ट लीला संबंधी हैं। तातें श्रीआचार्यजी की बानी फलित भई। और केसवभट्ट लीला संबंधी नाहीं है। मर्यादामार्गीय हैं। स्वर्ग तथा मुक्ति के अधिकारी हैं। तातें श्रीआचार्यजी की बानी फलित न भई। पाछें केसवभट्ट बिदा होइकें देस कों गये।

और माधवभट्ट कों श्रीआचार्यजी ने नाम निवेदन करायो। तब माधवभट्ट ने बिनती कीनी, महाराज ! अब हमकों कहा कर्तव्य है ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, तुम भगवद् सेवा करो। तब माधवभट्ट ने कही, महाराज ! लालाजी को स्वरूप मेरे बाप दादा सों सदा रहे हैं। सो स्वरूप सदा मेरे पास राखत हों। तुलसी, चंदन चढाई धूप दीप करि नैवेद्य धरि या प्रकार आह्वाहन विसर्जन पूजा मार्ग रीति सदा करी है। अब आज्ञा देहु ता प्रकार करूं। तब श्रीआचार्यजी कहे, जा स्वरूप ले आउ। तब माधवभट्ट जाइकें ले आये। तब श्रीआचार्यजी पंचामृत स्नान कराय माधवभट्ट के माथे पधराये। सो माधवभट्ट कछूक दिन पुष्टिमार्ग की रीति सिख कें आज्ञा मांगि कास्मीर अपने घर प्रीति पूर्वक सेवा करन लागे। सो कछुक दिन में श्रीठाकुरजी सानुभावता जतावन लागे।

वार्ता- प्रसंग २- और जा गाम में माधवभट्ट रहते, ता गाम में एक बड़ो गृहस्थ रहतो। सो वाको एक बेटा हतो सो मरि गयो। तब उह बहुत दुःख सों विलाप करन लाग्यो। और कह्यो, जो-याकों कोऊ जिवावे तो मैं जीउं। नाहीं तो याके संग मैं हूँ मरूंगो। या प्रकार कहे, गिरि गिरि परें, धरती पर लोटे। सो एक वैष्णव और आय निकस्यो। उह गृहस्थ की दसा देखिकें कह्यो, जा गाम में माधवभट्ट सारिखे भगवदीय हैं तहां ऐसो दुःख क्यों होई ? सो यह बात उह गृहस्थ सुनि के माधवभट्ट पास दोस्यो आयो। दंडौत करिकें बहोत विलाप करन लाग्यो। और कह्यो, तुम बड़े महापुरुष हो। मेरो बेटा मरि गयो। सो ताकों जिवाय देउ। नाहीं तो मैं हू वाके संग मरूंगो। या प्रकार बहोत दुःखी देखि के माधवभट्ट कों दया आई। सो माधवभट्ट एक श्लोक करि कें श्रीठाकुर के आगें धस्यो। सो श्लोक-

दयालोरसमर्थस्य दुःखायैव दयालुता।
विश्वोद्धारणदक्षश्च शास्त्रेष्वेकस्य शोभना॥

भावप्रकाश-याको अर्थ यह है, जो -तुम दयाल हो। सो कैसे दयाल हो ? असमर्थ पर दयालता तुमहि करत हो। काहेतें ? दयालता को लक्षन यह है, जो-दुःखी पर दयालता प्रगट होइ सोई दयालता है। सो ऐसे एक तुम हो। और विश्वोद्धारन में चतुर एक तुमही हो। सगरे शास्त्र में तुमही कों गाये हैं। यह दयालता तुमहि कों सोहत हैं, तातें दुःख को नास करो।

यह श्लोक सुनिकें श्रीठाकुरजी कहें, यह कितनीक बात है ? तुमकों दया आई है तो जाय वासों कहो, तेरो बेटा जीयो। तब माधवभट्ट बाहर आयकें कहें, जो-तेरो बेटा जीयो। तब उह गृहस्थ के मन में आइ नहीं, (क्यों) जो-कछू औषध दिये नाहीं। मुखसों कहे दिये हैं। इतने में वा गृहस्थ के घर के मनुष्य नें आय

के कह्यो, तुमारो बेटा जीयो, बधाई देऊ ! तब वह दौरिकें घर में जाइ देखें तो बेटा जीयो बधाई करी। (पाछें) कह्यो, माधवभट्ट बड़े भगवदीय है। जिनके वचन ऐसे हैं, जो–जीयो कहत मात्र बेटा जीयो। पाछें रात्रिकों माधवभट्ट अपने मनमें बिचार कियो, जो–यह कार्य मैं बहोत अनुचित कियो। संसार में अनेक दुःखी सुखी लोग हैं। तातें अब या गाम में रहिवे को धर्म नाहीं है। सो अर्द्धरात्रि समय श्रीठाकुरजी कों संपुट में पधराय कें चले। सो अड़ेल में श्रीआचार्यजी के पास आय रहे। तातें वैष्णव कों दयाहू विचारि कें करनो। लौकिक में माहात्म्य प्रगट करे तें गाम छोडे तो धर्म रह्यो। नाहीं तो पाछें बहोत दुःख होतो। तातें लौकिक की नांई रहे तो धर्म रहे। श्रीठाकुरजी कों दुःख न होई। वैष्णव कों हू दुःख न होई। माधवभट्ट सर्व सामर्थवान हते। परन्तु तोऊ भाजनो परयो। तातें वैष्णव कों विचारि के काम करनो।

वार्ता – प्रसंग ३– और माधवभट्ट कों लिखिवे को बड़ो अभ्यास हतो। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीभागवत की टीका श्रीसुबोधिनीजी करीं। सो माधवभट्ट लिखत जाय। जहां माधवभट्ट न समझते तहां लेखन छोड़ि बैठि रहतें। तब श्रीआचार्यजी माधवभट्ट कों समुझावते। तब लिखते। और माधवभट्ट श्रीआचार्यजी के आगे ऐसे बैठते, जो–पांव न दीसे।

भावप्रकाश–काहेतें ? शास्त्र में कहे हैं बड़ेन के आगे सिद्ध आसन हू न बैठनो। और पांव न दीसे ऐसे बैठनो। सो दासभावसों बैठते।

वार्ता – प्रसंग ४– और एक समें श्रीआचार्यजी महाप्रभु परदेस हते। तब माधवभट्ट संग हे। श्रीसुबोधिनी लिखते। सो

एक दिन पिछली रात्रि कों माधवभट्ट लघुबाधा कों उठे। तब चोरन ने तीर मारयो। सो माधवभट्ट कों लाग्यो। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु को नाम लियो। और नाम लेतहि माधवभट्ट की देह छूटी। तब वैष्णवन नें इनकी देह को संस्कार कियो। पाछें एक वैष्णव ने श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज ! माधवभट्ट सारिखे भगवदीय कों या प्रकार मृत्यु क्यों भई? तब श्रीआचार्यजी श्रीमुखसों कहे, माधवभट्ट के परलोक में तो कछू हानी है नाहीं। परंतु इनको एक भगवद् अपराध परयो हतो। ताको दंड पायो। तब वैष्णवन ने पूछ्यो, जो-महाराज ! ऐसो कहा अपराध परयो हतो ? सो तब श्रीआचार्यजी आज्ञा करें, जो-ये पहले अपने सेव्य श्रीठाकुरजी की सैया फूलन की बिछावते। सो तब एक दिन फूलन में अनजाने सुई रहि गई। सो माधवभट्ट ने जानी नाहीं। सो तब वह सुई श्रीठाकुरजी के श्रीअंग में स्पर्स भई। सो ता अपराध तें यह ऐसो भयो है। परि याकी देह सावधानता सों भगवद्नाम लेत् छूटी है, तातें याकों कछू बाधक नाहीं है। ये श्रीनाथजी के चरणारविंद पाये। अब कछू कर्तव्यता रही नाहीं।

भावप्रकाश-यामें यह जताये, जो-पुष्टिमार्ग में सैया पर फूल बिछाइवे की रीति श्रीआचार्यजी नाहीं प्रगट किये। (क्यों) जों-ये लौकिक फूल हैं। सो इनकी दांडी कठिन हैं। और एक क्षन में कुम्हलाइ जाय, वस्त्रन में फूलन के दाग परें। तातें न्यारो फूल धरयो रहे। प्रभुकों सुगंध मात्र आवे। और लीला में तो फूल स्वरूपात्मक हैं। सो परम कोमल हैं। तातें फूलन की सैया बनावत हैं। सो माधवभट्ट श्रीआचार्यजी की रीति छोड़ि लीला में फूलन की सैया को वर्णन जानि माधवभट्ट सैया भरें। सों प्रभुकों आछी न लागी। तातें सुई रहि गई। माधवभट्ट कों दंड दे सगरे वैष्णव कों सिक्षा दिये। जो-श्रीआचार्यजी (ने) यह पुष्टिमारग में रीति प्रगट करी हैं, और ग्रंथन में जा प्रकार आज्ञा करी हैं, ताही प्रकार सेवा करनी। और चलनो। और अपने मनते

कल्पित प्रकार करें तो श्रीगोवर्द्धनधर कों भावे नाहीं। जदपि लीलामें वर्णन हू होई, तऊ अपने मारग में जितनी आज्ञा श्रीआचार्यजी श्रीगुसांईजी की होय तितनो ही कार्य करे। तो प्रभु बेगे प्रसन्न होई। अथवा माधवभट्ट प्रथम मर्यादा रीति सों श्रीठाकुरजी की पूजा करते। सो मर्यादा में फूलन की सैया करत हे। सो तबको अपराध है। ताको दंड भयो। पाछें लीला में अंगीकार भये। यह जताये। श्रीआचार्यजी की सरनि तें जनम जनम को अपराध होई सो याही जनम में भोग लेइ। पाछें बाधक न रहे। ऐसो श्रीआचार्यजी की सरनि को प्रताप है। सो-सर्व अपराध भोगि, लीला में प्राप्त होई। इहांई भोग छूटे यह सरन को प्रताप दिखाये। यह भाव है।

सो माधवभट्ट की देह छूटी। तब श्रीआचार्यजी कहे, अब श्रीसुबोधिनीजी रही। भगवद् इच्छा इतनी प्रगट करन की हती। सो माधवभट्ट की वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥२७॥

भावप्रकाश-यामें यह जताये, श्रीठाकुरजी कों पास बुलावने हते। सो दोय आज्ञा आगे भई, सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु न माने। तब माधवभट्ट कों यह अपराध के मिष लीला में बुलाई तीसरी आज्ञा दीनी। तब श्रीआचार्यजी ''अंतःकरणप्रबोध'' ग्रन्थ करि अंतर्धान लीला किये। यहू कारन है।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गोपालदास, बांसबाडे के वासी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं-

भावप्रकाश-ये गोपालदास श्रीयमुनाजी की सखी हैं। ''रसप्रकासिका'' इनको नाम हैं। ये लीला में ऐसी वार्ता भक्तन सों करे, जो-सबन के मनमें रसको प्रकास होय जाय। सो गोपालदास बांसबाडे में के क्षत्री हतो वाके घर प्रगट भये। सो उह क्षत्री वैश्य वृत्ति करतो। और सराफि की दुकान हू करतो। सो दासजनन में। सो उह क्षत्री के बेटा चारि आगें भये सो मरि जाते। पांचमें गोपालदास भये। तब क्षत्री ने मानता करी, जो-यह बेटा जीवे तो तीर्थराज प्रयाग में याको मुंडन करोंगों। सो गोपालदास बरस पांच के भये। परंतु वह क्षत्री को ब्योपार में मन बहोत। सो प्रयाग जाय न सके। सो ऐसे करत गोपालदास बरस ग्यारह के भये। तब क्षत्री ने एक गाड़ी करि अपुनो गुमास्ता चाकर संग करि दिये। और कहे, गोपालदास को प्रयाग में मुंडन करि वेगि ले आवोगे तो गोपालदास को विवाह करिये। सो या प्रकार गोपालदास बांसबाडा तें चलें। तब प्रयाग में आय श्रीगंगाजी श्रीयमुनाजी को दरसन किये। सो

दैवी हते। इनकों अलौकिक दरसन भयो। तब गोपालदास उह गुमास्ता सों कहे, मैं तो इहां बार न मुंडाऊंगो। यह तीरथ क्षेत्र तें कोस पांच बाहर जाय मुंडाउंगो। कहा मोकों नरक में डारोगे ? यह रसरूप जल तिनके मध्य बार डारूं ? जो-गुमास्ता नें बहुतेरो समुझायो, जो-तुम्हारे पिता की मानता है। और यह प्रयाग तीर्थ में मूँड मुंडाये को बहुत फल है। तब गोपालदास ने कही पिता मूर्ख है। जो-ऐसी मानता करी। और मोकों तो फल ऐसो नाहीं चहिये। ब्राह्मन ने तीरथ में दान लेवे के लिये ऐसे फल कहे हैं। मैं तो इहां कबहू न मुडाउंगो। सो गोपालदास प्रयाग सों पांच कोस गंगापार जाय मुंडन कराये। पाछें न्हायकें फेरि प्रयाग में आपु न्हाये। दान पुन्य किये। श्रीजमुनाजी श्रीगंगाजी की पूजा दूध अरगजा माला चंदन सों किये। पांच रात्रि रहे। श्रीआचार्यजी हू प्रयाग पधारे हते। सो गोपालदास नित्य पूजन त्रिवेनी को करते। सो पांचमें दिन श्रीआचार्यजी गोपालदास के पास आपहि स्नान को पधारे। दैवी जीव जानि, कृपा करन कों। सो गोपालदास न्हात हते। तब श्रीआचार्यजी त्रिवेनी में तें एक अंजलि जल भरिके गोपालदास के ऊपर डारि दिये। सो गोपालदास कों अपुने स्वरूप को ज्ञान भयो, और श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान भयो। तब गोपालदास जलहि में माथो न्हवाये। दोऊ हाथ जोरिकें श्रीआचार्यजी सों बिनती किये, महाराज ! मैं बड़ो पापी हों, बहोत जन्म संसार में भटक्यो। अब मो पर कृपा करिये। तब श्रीआचार्यजी दैन्यता देखि गोपालदास कों जलहि में नाम निवेदन कराये। मारग को सिद्धांत हृदय में स्थापन करि दिये। और गोपालदास सों कहे, तुम भगवद् सेवा करो तब गोपालदास बाहिर आय वस्त्र पहरें। और श्रीआचार्यजी न्हाय वस्त्र अपरस के पहिरि, मध्याह्न की संध्या करि, गोपालदास सों कहें, तू कहूँते भगवद् स्वरूप ले अड़ेल आईयो, यह कहि आपु तो अड़ेल पधारे। पाछें गोपालदास प्रयाग में न्योछावरि दे लालजी ले, अड़ेल में आये। तब श्रीआचार्यजी श्रीठाकुरजी कों पंचामृत स्नान कराय गोपालदास के माथे पधराये। पाछें पांच दिन गोपालदास अड़ेल में रहि पुष्टिमारग की रीति सब सीखे। पाछें श्रीआचार्यजी सों बिदा होयकें बांसवाड़े में अपने घर आये। तब गुमास्ता ने गोपालदास के पिता सों सब समाचार कहे, जो यह तुम्हारो लरिका प्रयाग सों पांच कोस गंगापार जाय मुंडन करायो। हम बहोत कहे मान्यो नाहीं। और वैष्णव होइ आयो है। तब गोपालदास के पिताने कही भई सो सही, बोले मति। काहेतें, गोपालदास के ऊपर माता पिता को स्नेह बहोत हतो। जो-यह कहूं घर छोड़िकें निकस जायगो। तातें गोपालदास सों कहे नाहीं। पाछें मा बाप ने कही, भूखे होउगे कछू खाव। तब गोपालदास ने कही, मैं तो तुम्हारो जल न पीउंगो। तुम जाय श्रीआचार्यजी के सेवक है आवो तो मेरे तुम्हारें बनें। नाहीं तो मोकों थोरी सी जगह न्यारी करि देउ। तामें मैं रहुंगो। तब पिता ने कही, तेरो

ब्याह करनो है, सो कैसे होइगो ? तब गोपालदास ने कही, अब या समय जगत तो करि देउ। पाछें, जो–होइगी सो सही। अबही तो ब्याह नाहीं होत है। तब पिताने घर में जगह कर दीनी। तहां गोपालदास जगह खासा करि, श्रीठाकुरजी की रसोई करि, भोग धरि, महाप्रसाद लिये। पाछें श्रीठाकुरजी को मंदिर संवराये। प्रीति सों सेवा करन लागे। पाछें पिताने गोपालदास की सगाई करी। सो ब्याह हू भयो। परंतु सुसरारि में घरमें, काहू के हाथ को जल न लिये। पाछें गोपालदास ने पिता सों कही, जो–तुम श्रीआचार्यजी के सेवक होउ तो आछो है। नाहीं तो मैं स्त्री कों सेवक कराय ल्याउं। तब माता पिता ने कही, द्रव्य चहिये सो लेहु, स्त्री कों सेवक करावो। और हमतो सेवक न होईगे। तब गोपालदास ने स्त्री सों कही, जो–तू सेवक होउ। माता पिता को ज्ञाति को खानपान छोडे तो मेरे तेरें बनें। तब स्त्री ने कही, मैं सेवक तो होउंगी, परंतु माता पिता को खानपान न छोडोंगी। तब गोपालदास मनमें बिचारें, जो–श्रीआचार्यजी की सेवकनी तो कराउं। जो–उत्तम जीव होइगो तो आपुहि सब धर्म सिद्धि होइगो। तब गाड़ी पर स्त्री कों चढ़ाय बांसबाडा सों चले सो कछुक दिन में प्रयाग आये। पाछें अड़ेल में आय श्रीआचार्यजी सों दंडौत करि बिनती किये, महाराज! मेरे माता–पिता तो सेवक न भये, मैं बहोत कहीं। ये स्त्री कों संग ल्यायो हूँ। सो नाम निवेदन कराय कृपा करिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, यह तेरी स्त्री पुष्टि जीव नाहीं है। तातें निवेदन मति करावें। यासों न बनेगो। यह जहां तहां खायगी। और नाम सुनाइ देहिंगे। तेरे संबंध सों तेरे माता, पिता, स्त्री को उद्धार होयगो। लीला संबंध न होइगो। तब गोपालदास ने कही, कृपा करि नाम हि सुनाइये। तब श्रीआचार्यजी ने गोपालदास की स्त्री कों नाम सुनाये। पाछें गोपालदास कछूक दिन श्रीआचार्यजी के पास रहि कै पाछें बिदा होई बांसबाड़ा अपने घर आये, भगवद् सेवा करन लागे।

वार्ता–प्रसंग १–सो गोपालदास ने अपने घर के दरवाजे पास मारग में मिलिवेवारे के लिये एक विश्रामस्थल करि राखे। जो आवे सो वहां उतरे। सो गोपालदास बिचारे, जो–गाम में तो ऐसो कोउ वैष्णव है नाहीं, जासों भगवद् सेवा वार्ता करिये। तातें विश्रामस्थल होइगो तो कोई वैष्णव सों मिलाप होयगो। यह मनोरथ बिचारि विश्रामस्थल किये।

भावप्रकाश–विश्रामस्थल कों धर्मसाला नाहीं कह्यो, सो यातें, जो–

धर्मसाला बनाये को पुन्य बहोत कहे हैं। और पुन्य फल को मनोरथ होय तो पुष्टिमार्गीय कों यहू बाधक है।

सो मारग चलिवे वारे उहां आई उतरतें। सो सांझ के उह स्थल में गोपालदास जातें। जो उतरे होंइ तिनसों पूछते। तामें कोई भूखो होई, तिनकों खाइवे कों देते। और कोई वैष्णव होइ तो उनकों अपुने घर ल्याई प्रीति सों महाप्रसाद लिवावते। दोय चारि दिन राखते। खरची न होइ ताकों खरची देते। ऐसे करत एक दिन पद्मारावल सांचोरा ब्राह्मन आय निकसे। सो गोपालदास ने उन सों पूछ्यो, तुम कौन हो, कहां तें आवत हो, कहां जाउगे ? तब पद्मारावल ने कही, हम सांचोरो ब्राह्मन हैं। हमकों श्रीरनछोडजी के दरसन पर प्रीति हैं। सो हमारो जजमान मावजी पटेल उज्जैन में हैं। सो उनसों खरची ले द्वारिका जाय श्रीरनछोडजी के दरसन करत हों। जब खरची खूटत है तब फेर उज्जैन जाइ मावजी पटेल सों खरची ले द्वारिका जायकें दरसन करत हैं। तब गोपालदास यह बचन पद्मारावल के सुनिकें दैवी जीव जानि बात चलाये। जो जैसी लगन श्रीरनछोड़जी में है ऐसी श्रीआचार्यजी में होइ तो यह ब्राह्मन को काज होय जाय। यह विचारि कें गोपालदास नें पद्मारावल सों कह्यो, जो–तुम सों श्रीरनछोड़जी कबहू बोलत हैं ? बात करत हैं ? तब पद्मारावल नें गोपालदास सों कही, श्रीरनछोड़जी काहू सों बोलत हैं ? बात करत हैं ? सो हम कों बतावो ? तब गोपालदास ने कह्यो, प्रयाग के पास अड़ेल में श्रीआचार्यजी महाप्रभु बिराजत हैं। सो श्रीरनछोड़जी प्रगट भये हैं। सो बोलत बतरात हैं। तब पद्मारावल नें गोपालदास सों कही, मैं जाउं, '' मोकों श्रीरनछोड़जी जैसे दरसन देइगें ? तब गोपालदास ने कही, जैसे श्रीरनछोड़जी

दरसन देत हैं तैसे ही दरसन श्रीआचार्यजी देइगें। और तुमसों बोलेंगे। तब पद्मारावल कों बड़ी आतुरता भई, जो–कब अड़ेल जाउं ? कब श्रीआचार्यजी श्रीरनछोड़जी रूप सों मोसों बोलें ? पाछें गोपालदास अपने घर आये। रात्रि कों पद्मारावल कों नींद न आई। जो कहे, अड़ेल कों कब चलों। सो प्रातःकाल उठि चले। सो कछुक दिनन में उज्जैन आये। तब मावजी पटेल ने पद्मारावल सों पूछ्यो, जो–रावलजी ! अब के तुम बहोत बेगि उज्जैन आये। और तुम्हारो मन उचाट दीसत है। ताको कारन कहा ? तब पद्मारावल ने कहा, अड़ेल में श्रीरनछोड़जी प्रगट भये हैं। सो सब सों बोलत बतरात हैं। सो प्रातःकाल में अड़ेल जाउंगो। तब मावजी पटेल ने कही, रावजी ! मैं हूँ तुम्हारे संग हों। श्रीरनछोड़जी के दरसन कों चलूंगो। तब पद्मारावल ने कही, तुम राजसी लोग हो। हम तो पाइन चलेंगे। तुम्हारे संग भीर जामा–असवारी, सो कैसे बनेगी ? तब मावजी पटेल ने कही, मैं अकेलो तुम्हारे संग पाइन चलूंगो। तब पद्मारावल कहें, तैयारी करो। प्रातः चलेंगे।

तब मावजी पटेल अपने घर आइकें बिरजो स्त्री सों कहें, हम सवेरे पद्मारावल के संग अड़ेल जाइगें। वहां श्रीआचार्यजी श्रीरनछोड़जी रूप सों दरसन देत हैं, सबसों बोलत हैं। तब बिरजो ने कही, मैं तुम्हारे संग चलोंगी। तब मावजी पटेल ने कही, तुम स्त्रीजन कैसे चलोगी ? मैं तो पाइन चलोंगो। जामा–असवारी नाहीं। तब बिरजो ने कही, मैं तुम्हारे संग पाइन चलोंगी। तब मावजी पटेल ने पद्मारावल सों कह्यो, मेरी स्त्री संग चलन कहति है ? तब पद्मारावल ने कही, अकेले पाइन कैसे चलेगी ?

तब मावजी ने कही, अकेले पाइन चलन कही है। तब पद्मारावल ने कही, तो चलो, बेगें आवो, तीनों जनें चलेंगे। तब मावजी पटेल आय घर में तैयारी करी। रखवारो घर में राखि बिरजो को संग ले आये। सो तीनों जने अड़ेल कों चले।

भावप्रकाश–काहे तें ? दैवी जीव हैं, तातें इनको मन श्रीआचार्यजी के दरसन कों सुनत ही मात्र आरति भई। सो लीला में पद्मारावल हैं। सो द्वारका लीला के अधिकारी हैं। श्रीरुकिमिनीजी की सखी हैं। सो जब श्रीठाकुरजी श्रीरुकिमिनी सों परिहास किये तब रुकिमिनी मुर्छित होइ के गिरि परी। पाछें श्रीठाकुरजी ने समुझाऱ्यो। तब यह सखी उहां ठाढ़ी हती। इनको नाम ''विमला'' हतो। सो हँसी। तब रुकिमिनी विमली सखी पर खीझी। जो–मैं मूरछा खाय कें गिरि तब तू क्यों न्यारी ठाढ़ी रही ? श्रीठाकुरजी मेरी टहल करी सो तू क्यों चाही ? श्रीठाकुरजी मेरी बेनी बांधि मुख धोये सो यह हमारो धर्म नाहीं। हम श्रीठाकुरजी की टहल करें सो उचित हैं। श्रीठाकुरजी किये सो अनुचित हैं। जो–तू मेरी टहल करती तो श्रीठाकुरजी काहे कों करते ? यह रुकिमिनी कहें। परंतु वह बोले नाहीं, हँसिकें चुप होइ रही। तब रुकिमिनीजी क्रोध करिकें कहें, जा, भूमि में परि। तू मेरी काहे की सखी ? तू मेरे काम की नाहीं। सो विमला सखी पद्मारावल भये। सो रनछोडजी के दरसन में इनकी आसक्ति अत्यंत याहि तें भई। पूर्व संबंध दृढ़ हैं। और मावजी पटेल और बिरजो ये दोऊ ब्रजलीला संबंधी श्रीचंद्रावलीजी की दोऊ सखी हैं। लीला में मावजी को नाम ''रूपा'' है। और बिरजो को नाम ''हरखा'' है। तातें इनकों श्रीगुसांईजी में, ब्रजलीला में आसक्ति भई।

सो चार पांच मनुष्य संग लिये। सो प्रयाग में आये। तब **अड़ेल** को पार दरसन भयो। सो तीनों जने कों ऐसी आतुरता **भई, जो** – श्रीयमुनाजी में होय के पार जाय। इतने में **श्रीआचार्यजी** महाप्रभु मध्याह्न की संध्या करन के लिये **श्रीयमुनाजी** के तीर पधारे। तब पार पद्मारावल, मावजी पटेल, बिरजो कों अति आतुर देखि कें एक वैष्णव सों कहें, नाव ले बेगे पार जाय, पद्मारावल साँचोरा ब्राह्मन और मावजी पटेल, बिरजो

कों बैठाय के ले आवो। तीनों जने सों कहियो, जो–श्रीरनछोड़जी ने नाव पठाई है। बेगे चलो। तब उह वैष्णव नाव ले पार जाय पूछ्यो, पद्मारावल, मावजी पटेल, बिरजो कौन को नाम है ? तब ये तीनों बोले, जो–हमारो नाम है। तब वैष्णव नें कही, श्रीरनछोड़जी ने तुम्हारे लिये नाव पठवाई है। सो बेगे बैठिकें चलो। तब ये तीनों जने बहोत प्रसन्न भये। जो–श्रीरनछोड़जी सांचे प्रगट भये हैं। हमकों आवत बेर नाहीं भई, हमारो नाम लेकें बुलाये। नाव पठाये। सो अति आतुरता सों नाव पर बैठिके पार आये। तब जायकें श्रीआचार्यजी को दरसन किये। तब श्रीआचार्यजी ने जानी, इनको भाव श्रीरनछोड़जी में है। (यासों) जो–श्रीरनछोड़जी रूप सों दरसन देइंगे तो इनको भाव बढ़ेगो। सो आपु श्रीरनछोड़जी रूप सों दरसन दिये। तब तीनों जने दंडवत् किये। तब पद्मारावल ने बिनती करी, महाराज ! गोपालदास की कृपातें हमकों दरसन भयो। तातें गोपालदास ने हमसों कही है, तुम श्रीआचार्यजी के सेवक हूजो। सो अब कृपा करिकें हम तीनों जने कों अंगीकार करिये। हम आपकी सरन हैं। तब श्रीआचार्यजी श्रीयमुनाजी में तीनों जने कों न्हवाय नाम निवेदन कराये। पाछें मावजी पटेल के संग मनुष्य हते तिनकों नाम सुनाये। पाछें पद्मारावल कों अपुने मंदिर में संग ले आये। पाछें आपु भोजन कों पधारे। तब पद्मारावल के मन में यह आई, जो–श्रीरनछोड़जी कों भोग धरत हैं तैसेहि श्रीआचार्यजी कों भोजन करत दरसन होइ तो जूठन ले। तब यह पद्मारावल के मनकी श्रीआचार्यजी जानि पद्मारावल कों भीतर बुलाये। तब पद्मारावल देखें तो श्रीरनछोड़जी रूप सों

भोजन करत हैं। सो बहोत मनमें प्रसन्न भये। तब श्रीआचार्यजी कहें, अब संदेह गयो ? तब पद्मारावल नें बिनती करी, महाराज! हम जीव तुच्छ बुद्धि हैं। सातें बार-बार मनमें ऐसी आई। आप तो साक्षात् श्रीरनछोड़जी हो। पाछें आपु भोजन करिकें पद्मारावल कों जूठनि की पातरि धरि। मावजी पटेल, बिरजो कों जूठनि धरी। तीनों जनें महाप्रसाद लेकें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पास आये। तब पद्मारावल ने बिनती करी, महाराज! अब हमकों कहा आज्ञा है ? तब श्रीआचार्यजी कहे, सेवा करो। तब पद्मारावल ने बिनती करी, महाराज! जैसो मन मेरो आपके दरसन में आसक्त है, जो-यही मन अष्टप्रहर रहत है, जो-श्रीरनछोड़जी कों निरख्यो करूँ, ऐसो मन सेवा में लगें तो सेवा मैं करूं। नाहीं तो न करूं। तब श्रीआचार्यजी कहें, तेरो मनोरथ श्रीठाकुरजी पूरन करेंगे।

भावप्रकाश-सो यह, जो-श्रीरनछोड़जी पास तेरी प्राप्ति होइगी द्वारका लीला में। सो श्रीठाकुरजी मनोरथ पूरन करेंगे।

और तीनों जनेन कों आज्ञा करी, हम उज्जैन पधारेंगे कछुक दिन में। तब तुम्हारे घर में श्रीठाकुरजी पधराय देइंगे। और मावजी पटेल, बिरजो के माथे सेवा पधरावेंगे। सो तुम सेवा करियो। अब तुम तीनों जने घर जाव। हमहूँ पाछें तें उज्जैन पधारेंगे। तब तुम्हारो मनोरथ सिद्ध होइगो। तब पद्मारावल और मावजी पटेल और बिरजो तीनों जने दंडौत करि बिदा होइ चले। कछुक दिन में उज्जैन आये। सो गोपालदास ऐसे भगवदीय हे। जिनके रंचक संग तें पद्मारावल, मावजी पटेल, बिरजो तीनों श्रीआचार्यजी की सरनि पाये। तातें गोपालदास की वार्ता कहां

तांई कहिये। एक श्रीआचार्यजी को दृढ़ विश्वास जिनकों है।

वार्ता ॥२८॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, पद्मारावल सांचोरा ब्राह्मन उज्जैन के, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

वार्ता–प्रसंग १–ए सेवक भये। सो प्रकार तो ऊपर कहि आये, गोपालदास की वार्ता में। पाछें श्रीआचार्यजी उज्जैन पधारे। तब पद्मारावल के घर उतरे। पद्मारावल की स्त्री कों नाम निवेदन कराये। पाछें पद्मारावल सों कहे, कहूंतें भगवद् स्वरूप ले आव। सो पद्मारावल की ज्ञाति में एक सांचोरा के घर भगवद् स्वरूप हतो। अष्टभुजाजी। सो पद्मारावल कहें, ये ठाकुर हमकों देउ। तब उन कह्यो, ले जाव। हम सों बनन नाहीं। दोय बेर न्हायो नाहीं जात। तब पद्मारावल श्रीठाकुरजी कों ले आये। तब श्रीआचार्यजी पंचामृत स्नान कराय पाट बैठारि पद्मारावल के माथे पधराये। तब मावजी पटेल और बिरजो ने बिनती करी, महाराज ! हमारे माथे पधरावो तो हम सेवा करे। तब श्रीआचार्यजी ने कही, तुम्हारे माथे श्रीगुसांईजी सेवा पधरावेंगे।

भावप्रकाश–काहेतें ? हम सरन तुमकों ले अपुने किये, परंतु सगरो मनोरथ श्रीगुसांईजी द्वारा सिद्ध होइगो।

तब मावजी पटेल और बिरजो दंडवत् करि भेंट धरि घर गये। तब पद्मारावल ने बिनती करी, महाराजाधिराज ! मैं तो मूर्ख हो। कछू पढ्यो नाहीं। कछू समुझत नाहीं। और इहां हमारे ज्ञाति के ब्राह्मन कर्म–जड़ स्मार्त हैं। सो मोकों दुःख देत हैं, जो–तू कहा समुझि के सेवक भयो ? तब श्रीआचार्यजी अपुने

चरणारविंद को प्रसादी चंदन और चरणामृत पद्मारावल कों दिये। सो मुख में मेलत ही सगरे वेद पुरान सास्त्र को ज्ञान ह्वे गयो। सो बड़े बड़े पंडित सबन कों प्रति उत्तर देहि। माथो नीचो करि सगरे हारि के उठि जाते।

भावप्रकाश–और श्रीआचार्यजी ने प्रसादी चंदन और चरणामृत दिये सो दोऊ देवे को अभिप्राय यह है, जो–चंदन के लिये तें सगरो ज्ञान होई, उच्छलित रस ह्वे जाय तो कहूँ सरीर छूटि जाय, अथवा सबकें आगें लीला की वार्ता करें, बिना कहें रह्यो न जाइ। तब चरणामृत तें सरीर दृढ़ ह्वे जाई, भक्ति दृढ़ रस उच्छलित होई बाहर न जाय, हृदय में स्थिर होय रहें, तातें प्रसादी चंदन और चरणामृत दिये।

वार्ता–प्रसंग २–सो एक समय पद्मारावल ने सैया नई बनवाई। तब श्रीठाकुरजी पद्मारावल सों कहें, सैया छोटी है। मोसों पौढ्यो नाहीं जात। तब पद्मारावल प्रसन्न होई बड़ी सैया बनवाये। तब श्रीठाकुरजी सुखसों पौढ़न लागे। या प्रकार सानुभावता जनावन लागे। और एक दिन पद्मारावल की स्त्री नें खीर ताती समर्पी। पाछें भोग सराय आरती करी। ताही समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारें। तब श्रीठाकुरजी नें श्रीआचार्यजी कों अपने हस्त और ओष्ट दिखाये, जो–पद्मारावल की स्त्री नें ताती खीर समर्पी। सो मेरे हस्त और ओष्ट आरक्त भये हैं। या प्रकार श्रीआचार्यजी सों कहे। पद्मारावल की स्त्री सों न कहें।

भावप्रकाश–काहेतें ? स्त्री साधारन वैष्णव है। सो उद्धार होयगो सरन के प्रताप तें। परंतु लीला संबंधी नाहीं है।

तब श्रीआचार्यजी पद्मारावल और पद्मारावल की स्त्री सों कहें, तुम श्रीठाकुरजी कों ताती खीर क्यों समर्पे ? श्रीठाकुरजी के हस्त और ओष्ठ लाल भये हैं। खीर ताती लागी तातें। तब पद्मारावल ने कही, महाराज ! हम कहा जाने ? जो–ताती

सामग्री आछी तातें समर्पे। तब श्रीआचार्यजी ने कही, और सामग्री ताती धरिये ताकी चिंता नाहीं परंतु खीर ताती न धरिये। अंगुरी डारिये। सुहाय तब भोग धरिये। तब पद्मारावल ने कही, महाराज! खीर ताती हती तो श्रीठाकुरजी सीतल क्यों न होंन दीनी? ताती क्यों अरोगे? तब श्रीआचार्यजी कहें, श्रीठाकुरजी बालक हैं। सो बालक कों खीर बहुत प्रिय हैं, तातें पहिले खीर में हाथ डारे हैं। और सामग्री ताती होई तो पीछे अरोगें। खीर पहलें आरोगे, तातें खीर ताती न धरिये।

भावप्रकाश–या प्रकार श्रीआचार्यजी पद्मारावल कों और उनकी स्त्री कों समुझाये। बालक को नाम लें। परंतु भीतर को खीर को स्वरूप नाहीं कहे। काहेतें? स्त्री लीला संबंधी नाहीं है। और पद्मारावल द्वारका की राज लीला संबंधी है। तातें पद्मारावल कों श्रीठाकुरजी अनुभव जताये। परंतु ब्रजभक्तन की लीला को अनुभव नाहीं है। तातें खीर स्वामिनीजी के भाव की सामग्री है। तातें श्रीठाकुरजी कों बहोत प्रिय हैं। सो खीर को भाव नारायनदास ब्रह्मचारी की वार्ता में कहे हैं ऊपर। तातें खीर देखके श्रीठाकुरजी कों धीरज छूटि जात है। तातें खीरि सीरि करिकें धरिये। और जहां तहां खीर कों सीरी करनी लिखी है। और सामग्री कों सीरी करनो कहूं कहे नाहीं। जैसे श्रीआचार्यजी कों खीर बहोत प्रिय हैं। ऐसे श्रीगुसांईजी कों लाडु बहोत प्रिय हैं। और श्रीआचार्यजी कों सखड़ी और खीर सीरी कोमल भाव प्रिय। तैसेई श्रीगुसांईजी कों नाना प्रकार की अनसखड़ी प्रिय। सो प्रभु प्रौढ भावसों आरोगत हैं। परंतु पुष्टिमारग में वैष्णव को जैसों अधिकार तेसोई अनुभव हैं।

वार्ता–प्रसंग ३– और एक समय पद्मारावल श्रीरनछोड़जी के दरसन कों द्वारकाजी कों चले। तब श्रीरनछोड़जी नें स्वप्न में कह्यो, जो–राजनगर में एक हमारो सेवक है। सो ताके घर तुम जैयों। सो तहां पाक करियो। तब पद्मारावल कह्यो, जो–महाराज! मैं तो वाको जानत नाहीं और बिनु बुलाये कौन के घर जाऊं? तब श्रीरनछोड़जी ने कह्यो, जो–वह आपुहि बुलावन

आवेगो। पाछें पद्मारावल राजनगर में आये।

भावप्रकाश–सो यातें, जो–पद्मारावल श्रीरनछोड़जी की लीला संबंधी है। तातें बिचारे, जो–कहूँ ब्रजलीला में मग्न होय तो मेरे हाथ सों जाय। तातें कहें, हमारो सेवक है ताके घर जैयो। सो पद्मारावल के मनकों भाई, जो–ब्रजलीला में मग्न होते तो यह कहते, तुम्हारो सेवक है, परंतु श्रीआचार्यजी को सेवक होइ तो मेरी ठीक परे। सो इनकों तो श्रीरनछोड़जी पर भर भाव बहोत है। श्रीआचार्यजी को स्वरूप श्रीरनछोड़जी को जान्यो। ब्रजलीला संबंधी नाहीं जान्यो। तातें इनके घर श्रीठाकुरजी हू श्रीरनछोड़जी रूप तें सानुभावता जनावत हैं। और पद्मारावल के बेटा कृष्णभट्ट होइंगे। सो श्रीगुसांईजी के लीला संबंधी होइगे। तब कृष्णभट्ट कों श्रीठाकुरजी अनुभव करावेंगे। यामें यह जताये, जो–जेसो जीव होइ तितनो श्रीआचार्यजी कों जानें। तितनो श्रीठाकुरजी अनुभव जनावें। जो–श्रीआचार्यजी कों साक्षात् पुरुषोत्तम जानते तो श्रीगोवर्द्धनधर अनुभव जतावते। जो–श्रीआचार्यजी कों पूर्णपुरुषोत्तम श्रीगोवर्द्धनधर तें अधिक जानते। तब ब्रजलीला को अनुभव होतो। यह सिद्धांत दिखाये।

और श्रीरनछोड़जी रात्रि कों अपने सेवक सों कह्यो, काल्हि पद्मारावल राजनगर तें तेरे गाम में आवेंगे। सो उनकों घर लाइ कें नीकी भांति सों रसोई–पाक करवइयो। तब उह सेवक ने कह्यो, मैं पद्मारावल को कैसे जानूंगो ? तब श्रीरनछोड़जी ने कही पद्मारावल प्रसिद्ध है, तू जानेंगो।

भावप्रकाश–यामें यह जताये, जो–तुम दोऊ मेरे संबंधी हो। सो मैं तुम्हारे दोऊ को मिलाप कराइ देऊंगो।

पाछें पद्मारावल राजनगर में बिचारे, जो–मैं श्रीरनछोड़जी के सेवक कों जानत नाहीं। तातें एक उपाइ करूं। तब संग में विद्यार्थी हतो, तासों कहें, जो–तू गाम में जाइ कोरे अन्न की न्यारी न्यारी भिक्षा पांच–सात ठिकाने सों मांगि लाउ। सो सब की न्यारी न्यारी राखियो। तब वह विद्यार्थी गाम में जाई कोरी भिक्षा पांच–सात ठिकाने सों मांगि ले आयो। तब पद्मारावल ने

उह विद्यार्थी सों कही, जो–जाकी भिक्षा मांगि लायो है ता–ताकों अन्न फेरि आउ। तब वह विद्यार्थी अन्न फेरन गयो। तब उह रनछोड़जी के सेवक ने कही, जो–भिक्षा ले गये सो फेरन क्यों आये ? तब विद्यार्थी ने कही, जो–हमारे स्वामी की जैसी आज्ञा। उन कही, ले आउ, सो ले गयो अब उन कही, भिक्षा है ताको फेरि आव। सो फेरन आयो। तब उन कही, जो–तुम्हारे स्वामी को नाम कहा ? तब विद्यार्थी ने कही, जो–पद्मारावल ! तब उह भिक्षा फेरि लीनी। पाछें उह विद्यार्थी के संग पद्मारावल के पास गयो। कह्यो, रावलजी ! हमारे घर चलो। रसोई करो। तब पद्मारावल ने कही, मैं तो काहू के घर जात नाहीं। तब उह श्रीरनछोड़जी के सेवक ने कही, जो–मोकों श्रीरनछोड़जी की आज्ञा है, जो–पद्मारावल कों अपने घर रसोई पाक कराइयो। तातें मैं बुलावन आयो हूँ। सो मोकों आज्ञा करी है, सो तुमहू कों आज्ञा करी होइगी। तुमहू तो श्रीरनछोड़जी के कृपापात्र हो। तातें मोसों कहें। तब पद्मारावल बहुत प्रसन्न होई कें कहें, जो–मोहू कों आज्ञा है श्रीरनछोड़जी की। तातें चलो। तब वाके घर आई रसोई पाक करि भोग धरि महाप्रसाद उह सेवक कों हू धरे।

भावप्रकाश–वाके हाथ सों यातें नाहीं लिये, जो वह बनिया हतो। तातें दोउ जन महाप्रसाद लिये। उह विद्यार्थी कों महाप्रसाद लिवाये। पाछें रात्रि कों वाई के घर रहे। श्रीरनछोड़जी की दोऊ जनें वार्ता करि प्रसन्न भये। एक भाव तें दोउ मिलें। तहां सुख उपजे।

पाछें प्रातःकाल पद्मारावल चलन लागें। तब वह सेवक नें कही, कछू दिन रहो। तब पद्मारावल कहे, मोसों रह्यो न जाई। श्रीरनछोड़जी के दरसन की बहोत आतुरता है। ऐसे कहें तब

उह श्रीरनछोड़जी के सेवक ने बिदा किये। पद्मारावल द्वारका कों चले।

वार्ता-प्रसंग ४- बहुरि एक दिन आटो बहोत मिल्यो और घी थोरो मिल्यो। तब पद्मारावल ने सगरे चून की रोटी करी। जितनी घीमें चुपरी गई तितनी चुपरे, बाकी की बिना चुपरी नीचें धरें। दारि धरि के भोग समर्पे। और यह बिनती किये, महाराज! चुपरी चुपरी रोटी अरोगियों। बिना चुपरी रोटी रुखी रहन दीजो। मति आरोगियो। तब श्रीठाकुरजी सगरी रोटी अरोगी रोटी उलटि पुलटि दिये। रुखी ऊपर करें। चुपरी नीचे करि दिये। सो जब भोग सराये तब जानें श्रीठाकुरजी सगरी अरोगे। तब श्रीठाकुरजी सों कहे, जो महाराज! रुखी रोटी क्यों अरोगें? तब श्रीठाकुरजी ने पद्मारावल सों कही, जो-मोकों भोग क्यों धरे? जो-मेरे आगें भोग धरेगो सो मैं आरोगुंगो। तब प्रसन्न है महाप्रसाद लैन बैठें। कितनीक रोटी वामें तें बांधि राखें। सो वा दिन की रोटी को स्वाद बहोत अलौकिक भयो। सो नित्य रसोई करि, भोग धरि, महाप्रसाद लैन बैठे, तब वह रोटी में ते एक टूक मिलाई महाप्रसाद लेते।

भावप्रकाश - या प्रकार को महात्म्य हृदय में आयो, सो रोटी की छूति न गिनते। जन्म भर उह रोटी लियें। एक दिन को स्मरन, प्रभुन की दयालुता स्मरन करन के अर्थ।

पाछें श्रीरनछोड़जी सों बिदा होय के चले। तब मारग में बासवाड़े आये। तब पद्मारावल गोपालदास के घर गये। सो गोपालदास के घर रात्रि रहे। तहां रसोई करि भोग धरि महाप्रसाद लिये। तब गोपालदास सों पद्मारावल ने कही, जो-तुम्हारी

कृपातें मोकों श्रीआचार्यजी के दरसन भये। साक्षात श्रीरनछोड़जी प्रगट भये हैं। मोकों अंगीकार करि कृतार्थ किये। तब गोपालदास कहे, श्रीआचार्यजी ऐसेहीं दयाल हैं।

भावप्रकाश–मनमें जाने, जो–यह इतनों ही पात्र हैं। तातें श्रीरनछोड़जी को भाव भयो। भगवद् इच्छा। भलो, संसार सों छूटि कृतार्थ तो भयो।

पाछें प्रातःकाल पद्मारावल गोपालदास सों बिदा होय उज्जैन आय भगवद् सेवा करन लागे। जो ये श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र हे। वार्ता ॥२९॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, पुरुषोत्तम जोसी सांचोरा, गुजरात के वासी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–सो पुरुषोत्तम जोसी लीला में विसाखाजी की सखी हैं। ''गुनचूड़ा'' इनको नाम हैं। और पुरुषोत्तम जोसी की स्त्री ''गुनचूड़ा'' की सखी हैं। सो ''दुर्वासा'' इनको नाम है।

सो दोउ गुजरात में न्यारे न्यारे सांचोरा के घर जन्मे। सो पुरुषोत्तम जोसी को विवाह भयो। बरस सत्रह के पुरुषोत्तम जोसी भये। तब एक समय श्रीआचार्यजी गुजरात पधारे। सो पुरुषोत्तम जोसी मध्याह्न समय एक तालाब पर संध्या करत हते। तब श्रीआचार्यजी तालाब पर पधारि के संध्यावंदन करन लागें। सो पुरुषोत्तम जोसी की ओर कृपा करिकें दैवी जानि देखें। तब पुरुषोत्तम जोसी श्रीआचार्यजी पास आई नमस्कार करि पूछ्यो, महाराज ! यह कर्ममार्ग बड़ो के ज्ञानमार्ग बड़ो ? तब श्रीआचार्यजी कहें, जाके मन में दृढ़ जो–मार्ग आवें, जामें जाको विश्वास होय वाके भाये तो वह मार्ग बड़ो। और बड़ो तो भक्ति मारग है। जामें जीव कृतार्थ होइ। और ज्ञानमारग कर्ममारग सों कृतार्थ कठिनता सो होई। सो काहूसों निर्वाह होय नाहीं। काहेतें ? कष्ट साध्य हैं, सो या काल में सरीर के कष्ट करयो न जाइ, जो–कोऊ सरीर को कष्ट सहे तो मन ठिकाने न रहें। तातें भक्तिमारगी जीव कृतार्थ होई। और आश्रय नाहीं। तब पुरुषोत्तम जोसी ने कही, जो–महाराज ! भक्ति को स्वरूप कहा ? कृपा करिकें कहिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, भक्ति को स्वरूप वर्णन करिये तो पार आवे नाहीं। परन्तु कछुक तोकों कहत हों। तब ''भक्तिवर्द्धनी'' ग्रन्थ करि

ग्यारह श्लोक पुरुषोत्तम जोसी कों सुनाये, सो यह उत्तम अधिकारी है। तातें सगरो बोध ह्वै गयो। तब श्रीआचार्यजी कों दंडवत् करि विनती किये, महाराज! इतने दिन हम कर्ममार्ग में पचि मरे। परंतु कछू हाथ आयो नाहीं। वृथा जन्म गमाये। अब आपु हमकों सरनि लीजिये। आज्ञा करो सो हम करें। तब श्रीआचार्यजी दृढ़ प्रीति देखि कें नाम सुनाइ ब्रह्मसंबंध कराये। और माथे पर चरन धरे। हृदय पर चरन धरे। और कहे, जो–तोकों भक्तिमारग स्फुरेगो। दृढ़ एकांगी भक्ति को तू अधिकारी है। तब पुरुषोत्तम जोसी नें बिनती करी, जो–महाराज! मेरे घर पधारो, स्त्री कों अंगीकार करो। तब श्रीआचार्यजी पुरुषोत्तम जोसी के घर पधारि स्त्री कों नाम निवेदन कराये। पाछें आज्ञा दिये, जो–तुम भगवद् सेवा करो। तब पुरुषोत्तम जोसी ने कही, महाराज! मेरे घर में श्रीठाकुरजी हैं। सो मर्यादा की रीति पूजा करत हतो। अब आपु जैसे आज्ञा करो तैसे सेवा करों। तब श्रीआचार्यजी लालजी कों पंचामृत स्नान कराय पाट बैठाये। पुरुषोत्तम जोसी के माथे पधराये। मा–बाप तो पहले ही देह छोड़ी हती। सो दोऊ जनें प्रीतिसों सेवा करन लागें। पाछें श्रीआचार्यजी श्रीद्वारिका पधारे। सो पुरुषोत्तम जोसी नें बहोत दिन सेवा करी। भगवद्भाव में मगन रहते, अव्यावृत होइ रहें। काहू के आगें अपने हृदय को भाव प्रगट न करते।

वार्ता–प्रसंग १– एक समय पुरुषोत्तम जोसी के मन में यह आई, जो–श्रीगोकुल जाई, श्रीगुसांईजी को दरसन करिये। सो लोगन के आगे ज्ञाति में कहें, हम कासी है आवें। सो बनारस को नाम ले स्त्री संग एक घोरा पर श्रीठाकुरजी कों पधराय के चलें। सो कछुक दिन में उज्जैन आये। तब उज्जैन में पूछे, पद्मारावल के बेटा कहां रहत हैं? श्रीगुसांईजी के सेवक हैं, इनसों मिलिये। तब लोगन ने कही, पद्मारावल के चारि बेटा हैं। तामें तीन बेटा भेले रहत हैं। और एक कृष्णभट्ट न्यारे रहत हैं। तब पुरुषोत्तम जोसी बिचारि किये, पहेलें तीनों बेटा के घर चलिये। सो तीनों बेटा पास आये। जब तीनों बेटा मिलि के कछुक अन्न दियो। तब पुरुषोत्तम जोसी बिचारी किये, जो–पद्मारावल के बेटा ऐसे क्यों बूझिये? ये तो कोरे ब्राह्मन जान परें। जिनमें प्रीति को एक हू लक्षन नाहीं। परंतु अन्न फेरि दीजे तो कहेंगे, थोरो जानि के फेरे।

तातें इनसों बोलनो नाहीं। पाछें यह बात कृष्णभट्ट ने सुनी, जो-पुरुषोत्तम जोसी आये हैं। तब कृष्णभट्ट पुरुषोत्तम जोसी कों प्रीति सों अपुने घर ले गये। सुंदर सामग्री करि, श्रीठाकुरजी कों भोग धरि, पुरुषोत्तम जोसी कों इनकी स्त्री कों प्रीति सों महाप्रसाद लिवाये। दिन चारि-पांच बिनती करि घर में राखें। तब पुरुषोत्तम जोसी ने कही, पद्मारावल को बेटा खरो ऐसे ही चहिये। और तीन बेटा तो थोरो सो अन्न दियो, जामें भूखे रहे। पाछें पुरुषोत्तम जोसी चलन लागे। तब कृष्णभट्ट इनके संग चले। सो मजलि पर जाइ उतरे। सो जब जानें, जो-कृष्णभट्ट सोये। तब स्त्री सों कहें, कृष्णभट्ट सोये ? तब स्त्री कहें, हां सोये। तब भगवद् वार्ता लीला के भाव स्त्री सों कहें, कृष्णभट्ट के आगें न कहें। जाने, जो-जोगता न होई तो कैसे कहिये ? ऐसे दोय चारि दिन बीते। तब कृष्णभट्ट ने मन में जानि। जो-ये मोसों भगवद् वार्ता छिपाइके करत हैं। मोसों नाहीं करत तो मैं इनसों भगवद् वार्ता कहाउं।

पाछें प्रातःकाल जब मजलि चले, तब कृष्णभट्ट ने पुरुषोत्तम जोसी की बहू सों कह्यो, जो-एक ओर तुम थांभियो, हों भगवद् वार्ता चलावत हों। तब पुरुषोत्तम जोसी की बहू घोरा के पास आय कृष्णभट्ट सों कह्यो, जो-भलो। पाछें एक ओर कृष्णभट्ट पकरि कें ऐसी भगवद् वार्ता करी, जो-पुरुषोत्तम जोसी कों देहानुसंधान रह्यौ नाहीं। रस में मगन ह्वै गये। तब घोरा परतें उतरन लागें। तब दोऊ ओर तें इनकों थांभि लिये। पाछें ऐसे करत जब मजलि पे आय पहोंचे, तब घोड़ा ऊपर तें उतारन लागें। तब पुरुषोत्तम जोसी ने कही, अबही मोकों घोरा उपरतें

क्यों उतारत हो ? अबही बैठ्यो हूँ। तब स्त्री ने कही, जो- मजलि आई। सवेरे सों चलत पीछलो पहर भयो है। तब पुरुषोत्तम जोसी सावधान होइ उतरे। परंतु भगवद्-वार्ता को आवेस उतरयो नाहीं। पाछें कृष्णभट्ट सों वार्ता करन लागे। रात्रि दिन भगवल्लीला रस में मगन रहे। ऐसे नित्य करत श्रीगोकुल आये। तब श्रीगुसांईजी कों दंडोत् करि पुरुषोत्तम जोसी ने कही, महाराज! कृष्णभट्ट पर ऐसी कृपा कहांते भई ? तब श्रीगुसांईजी श्रीमुख सों कहे, जो-कृष्णभट्ट कों चाचा हरिवंस को संग है। तातें ऐसी कृपा है। तब पुरुषोत्तम जोसी को संदेह निवृत्त भयो। तबतें मन खोलि कें भगवद् वार्ता करन लागें। पाछें कछुक दिन श्रीगोकुल रहिकें श्रीगुसांईजी सों बिदा होइ कृष्णभट्ट के संग पुरुषोत्तम जोसी स्त्री सहित चले। सो भगवद् वार्ता करत कछुक दिन में उज्जैन आये। सो कृष्णभट्ट ने प्रीति सों चारि दिन घरमें राखे। भगवद् वार्ता करि बहोत प्रसन्न भये। पाछें पुरुषोत्तम जोसी कृष्णभट्ट सों बिदा होई गुजरात अपने घर आये। भगवद् सेवा करते। और भगवद् वार्ता करते। लौकिक जानते नाहीं। ऐसे भगवदीय पुरुषोत्तम जोसी स्त्री सहित है। इनकी वार्ता कहां ताई कहिये।

भावप्रकाश-इनकी वार्ता में यह सिद्धांत भयो, जो-पात्र बिना भगवद् वार्ता करनी नाहीं। वैष्णव ॥३०

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, जगन्नाथ जोसी खेरालू के तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं -

भावप्रकाश-ये जो प्रकार सरन भये सो आगें इनकी माता की वार्ता कहेंगे।

वार्ता-प्रसंग १- एक दिन जगन्नाथ जोसी श्रीठाकुरजी कों श्रृंगार करि बागो पहराय कें राजभोग को थार साजिके, श्रीठाकुरजी के आगें भोग धरयो। पाछें बाहिर आये। तब जगन्नाथ जोसी के मनमें यह आई, जो-ठाकुरजी वागो पहरे आरोगत हैं। सो थार छुई जायगो। यह बात श्रीठाकुरजी ने जगन्नाथ जोसी के मनकी जानी। सो थार लात मारिकें चौकी सों नीचे डारि दिये। तब जगन्नाथ जोसी फेरि सामग्री करि, थार धोई, चौकी धोई, धरें। तब श्रीठाकुरजी लात मारिकें चौकी सों नीचे डारि दिये। तब जगन्नाथ जोसी फेरि सामग्री करि थार धोई चौकी धोई धरें। तब श्रीठाकुरजी लात मारि नीचे डारि दिये। तब फेरि सामग्री करि वैसेई धरे। तब फेरि श्रीठाकुरजी लात मारिकें डारि दिये। तब चौथी बार जगन्नाथ जोसी बहोत श्रमित भये। माथो नीचो करन लागें, जो-कहा अपराध परयो हैं, जो-श्रीठाकुरजी जितनी बार थार धरो तितनी बार डारि दिये। सामग्री अरोगत नाहीं। यह अपने मनमें बिचार करत बहोत आतुरता दैन्यता आई। तब श्रीठाकुरजी ने कही, जो-तू थार छूये तें डरपतु है तो मेरे आगें काहे कों धरतु है ? यह सुनत ही जगन्नाथ जोसी नाक घिसिकें बहोत बिनती करी, महाराज ! मैं चूक्यो। अब मेरो अपराध क्षमा करो। मैं तो कछू जानत नाहीं। या प्रकार बहोत मनुहार करी।

भावप्रकाश-याको अभिप्राय यह, जो-श्रीआचार्यजी श्रीसुबोधिनी में कहे हैं श्रीठाकुरजी की लीला में श्रीठाकुरजी के स्वरूप में दोई भावना करें तब श्रीठाकुरजी अप्रसन्न होई। एक असंभावना, एक विपरीत भावना असंभावना यह, जो-श्रीठाकुरजी पराये सों विहार किये। ठाकुरजी हीन जाति के घर कैसे अरोगत होइंगे ? श्रीठाकुरजी के छुये तें यह वस्तु छूइ जायगी। अहिर ज्ञाति के बिना न्हाये क्यों भोजन

किये ? श्रीठाकुरजी कों फलानो रोग भयो। श्रीठाकुरजी नित्य तो प्रमान अरोगत हैं, अन्नकूट में इतनो सब कैसे अरोगेंगे ? श्रीठाकुरजी अब वृद्ध भये। श्रीठाकुरजी यह लीला क्यों किये ? यह नाना प्रकार के कुतर्क प्रभु में करनो नाहीं। काहे तें 'पुरुषोत्तम सहस्त्रनाम' में कहे हैं–'तर्कागोचर कार्यकृत्'। ऐसे कार्य है। प्रभुको कार्य तर्क तें अगोचर है। कोई की बुद्धि में तर्क में आवे नाहीं। कर्तुं अकर्तुं अन्यथा कर्तुम् सर्व सामर्थ्य युक्त हैं। यह असंभावना, और विपरीत भावना यह, जो–श्रीठाकुरजी के श्रीमुख में बास आवेगी। ताते वासन दातन, करावनो। एक ठिकाने खरचू की भावना करनी। चौरासी कोस ब्रज हैं एक दिन में सगरे कैसे फिरे ? इतनी गाई हैं सब कैसे दुहत होइंगे ? आगे ब्रज में प्रगटे अब ब्रज में कहाँ हैं ? कहूँ ब्रज में दीसत नाहीं। हीन वस्तु गाजर मूरि कलिंगड़ा आदि सब ठाकुर ने प्रगट कियो है, याको भोग धरिवेमें कहा बाधक है ? श्रीठाकुरजी एक सगरी गोपिकान सों कैसे बिहार करत होइंगे ? इत्यादिक विपरीत भावना भई। परंतु जगन्नाथ जोसी कों तो एक सरल सुभाव सों भई। तातें श्रीठाकुरजी बोलें। कहें, थार छूई जायगो मेरे आगे मति धरै। तब अपराध क्षमा कराये। अपने कों अज्ञानी मानें। या प्रकार असंभावना, विपरीत भावना तें श्रीठाकुरजी अप्रसन्न होई। यह जताये। सो न करनो।

वार्ता–प्रसंग २– और जगन्नाथ जोसी श्रीठाकुरजी कों ताती खीर भोग धरें। तैसे श्रीठाकुरजी ताती खीर अरोगते। सो कितनेक दिनकों श्रीआचार्यजी खेरालु गाम में जगन्नाथ जोसी के घर पधारे। सो श्रीठाकुरजी के ओष्ट और जीभ बहोत राती देखे। तब श्रीआचार्यजी श्रीठाकुरजी सों पूछें, बाबा ! जीभ, ओष्ट बहुत राते क्यों हैं ? तब श्रीठाकुरजी ने कही, जो–जगन्नाथ जोसी ताती खीर भोग धरतु है ! तातें मैं अरोगत हों। तब श्रीआचार्यजी जगन्नाथ जोसी सों कहे, जो–तू ताती खीर श्रीठाकुरजी कों भोग क्यों धरतु है ? तब जगन्नाथ जोसी कहें, महाराज ! हम यह जाने, जो–ताती सामग्री अरोगत हैं तातें समर्पत हैं। तब श्रीआचार्यजी कहे, खीर बहोत ताती न समर्पिये। अंगुरी डारि देखिये। अंगुरी सहे तब भोग धरीये। और सामग्री ताती धरिये ताकी चिंता नाहीं। तब तें जगन्नाथ जोसी सीरी

करिकें खीर धरन लागें।

भावप्रकाश–तहां यह संदेह होइ, जो–श्रीठाकुरजी ताती क्यों अरोगे ? जगन्नाथ जोसी सों क्यों न कहे ? तहां यह जाननो, जो–जा दिन तें जगन्नाथ जोसी के मनमें थार छूइवे की असंभावना भई ता दिन तें बहुत अनुभव न करावते। इनकी प्रीति सों अरोगते।

वार्ता – प्रसंग ३ – और एक समें जगन्नाथ जोसी श्रीआचार्यजी के दरसन कों अड़ेल चले। सो मारग में अन्नकूट को दिन आयो। सो एक श्रीआचार्यजी को सेवक माथुर हतो वासों कहें गाम में जाइकें उत्तम सामग्री, जो–मिले सो ले आवो। दारि, चोखा, घी, खांड आदि। सो उह वैष्णव गाम में गयो। सो उह गाम छोटो हतो। एक ज्वारि मिलें। और कछू न मिलें। सो आइकें जगन्नाथ जोसी सों कह्यो, जो–या गाम में ज्वारि मिलती है। और कछू मिलत नाहीं। गाम छोटो है। तब जगन्नाथ जोसी कहें भगवद् इच्छा। ज्वारि ले आवो। तब वैष्णव ज्वारि ले आये। तब कहें, याकों बीन, फटकि ले आओ। तब वह वैष्णव ज्वारि कों आछी भांति सो बीन फटकि के ले आयो। तब जगन्नाथ जोसी ने पानी में चढायो। तब उह वैष्णव ने कही, या ज्वारि की भुसी है ताकों पानी सों बांधिकें ऊपर धरि देउ। तो बाफ सों ढोकला बेगि ह्वै आवेगो। तब जगन्नाथ जोसी वाकों बांधिकें ऊपर धरें। सो जब ज्वारि को ठोंमर खद्खदावन लाग्यो। तब उह भुसी को ढोकला ज्वारि में गिरि पर्‍यो। सो सब एकठोरी मिलि गयो। सो जगन्नाथ जोसी देखिकें मन में बहौत खेद कियो। पाछें भगवद् इच्छा मानि कें जैसो भयौ तैसों भोग धरि महाप्रसाद लियो, पाछें सोये। तब श्रीठाकुरजी जगन्नाथ जोसी सों कहें, जो–मेरे पेट में ठोमर को ढोकला दुःखत है। तब जगन्नाथ जोसी

सोंठि, अजवाइन, लोंन समर्पे। तब श्रीठाकुरजी कहें मेरे पेट में चेन भयो। तब मन में जगन्नाथ जोसी बहोत पश्चाताप कियो। जो–आजु श्रीठाकुरजी को बहोत दुःख भयो। अब आछो गाम देखिकें मजल पर उतरेंगे। सो ता दिन तें आछो गाम देखिकें उतरते।

भावप्रकाश – यह वार्ता कौ अभिप्राय यह है, जो जगन्नाथ जोसी को सरल सुभाव बहोत है। तब श्रीठाकुरजी प्रसन्न भये। जो–पहलें थार छूइवे की असंभावना अज्ञान में आई हती तातें उदास भये हते। बहोत बोलते नाहीं। सो इनको सरल भाव, कुतर्क पंडिताई करि ज्ञान करिकें, तरक न हती। सहज में मन में आई, फिरि कछू नाहीं। तातें श्रीठाकुरजी सरल सुभाव जानिकें प्रसन्न भये। सो सनेह देखिवे के लिये जताये, जो–मेरे पेट में दुःखत है। तब इनको सनेह बहुत तातें मन में दुःख पायो। सोंठि, अजवाइन, लोंन भोग धरे। तब श्रीठाकुरजी इनकी ऊपर बहोत प्रसन्न भये। कहे अब मेरे पेट में चेन है। तब जगन्नाथ जोसी को दुःख मिट्यो। तातें विद्याई की चतुराई, ज्ञानि होते तो काहेतें, श्रीठाकुरजी के पेट में दुःखे हैं ! ए तो ईश्वर हैं। परंतु जगन्नाथ जोसी सूधे निष्कपट भगवदीय हैं। तातें श्रीठाकुरजी फेरि प्रसन्न भये। यामें यह जताये, जो–जाके हृदय में स्नेह होई, सरल सुभाव होई, तो वासों अपराध हू परे तो श्रीठाकुरजी कृपा करें। वाको बिगार न होई।

वार्ता – प्रसंग ४ – और एक समें जगन्नाथ जोसी अपने घर उत्थापन पाछें भोग के किंवाड़ खोलें। सो दरसन होत हते ता समें जगन्नाथ जोसी श्रीठाकुरजी कों मूंठा करत हते। ता समे एक गरासिया रजपूत दरसन को आयो हतो। सो दरसन करत हतो। और हू दस–पांच वैष्णव दरसन करत हते। ता समें एक ढोकली ने फूल की माला लेकें दूरि तें श्रीठाकुरजी के ऊपर डारि दीनी। सो श्रीठाकुरजी के सिंघासन ऊपर आइ परी। तब जगन्नाथ जोसी कों बहोत रीस चढ़ी। सो माला लेकें बाहिर फेंकी। सो दूसरो एक रजपूत हतो ताके गरे में जाइ परी। तब वा गरासिया ने अपने मन में कही, जो–मोकों जोसी नें माला नाहीं दीनी तो

मैं सही रजपूत, जो–जगन्नाथ जोसी कों ठौर मारूं। सो तरवार लिये फिरें। परंतु दाव न पावे, जो–घात करें। सो एक दिन जगन्नाथ जोसी बहिर भूमि, दांतिन करिकें गाम बाहर तें आवत हते। सो गरासिया रजपूत नें पाछें सों आई जगन्नाथ जोसी के उपरि तरवार चलाई। तब श्रीठाकुरजी पाछें तें हाथ वा रजपूत को ऊपर तें पकरि लियो। और कहें, याकों मारे मति। तब वह रजपूत बहोत कियो परि हाथ उपर रहि गयो। चले नाहीं। तब जगन्नाथ जोसी पाछें फिर कें देखे तो श्रीठाकुरजी श्रमित ठाढ़े हैं! तब जगन्नाथ जोसी ने कही, फिटरे पापी! यह कहा कियो? तब वह रजपूत तरवारि डारि कें जगन्नाथ जोसी के पाइन पर्‍यो?

भावप्रकाश – काहेतें? रजपूत ने जानी, ये महापुरुष हैं। मेरो हाथ चल्यों नाहीं। तब तरवारि भूमि में डारि पांवन पर्‍यो।

पाछें कह्यो, मेरो अपराध क्षमा करो। बहोतेरो जगन्नाथ जोसी कहें, परंतु छोड़े नाहीं। कह्यो मोकों सेवक करो। तुम भगवदीय हो, मैं पापी हों। सो तुम्हारी कृपातें मेरो उद्धार होइगो। नाहीं तो मेरो ठिकानो नाहीं। तब जगन्नाथ जोसी कों दया आई। कहे, घर चलो। तुमकों नाम सुनावेंगे। पाछें घर आइ आपु न्हाये। उह रजपूत कों न्हवाईकें नाम सुनाये। पाछें श्रीगुसांईजी गुजरात पधारें तब रजपूत कों श्रीगुसांईजी के पास नाम सुनवाये। सो आछो वैष्णव भयो।

उद्धार भयो। तो जो–प्रीति करि भगवदीय को संग करे तो वाको उद्धार होइ यामें कहा कहनो? और जगन्नाथ जोसी कों मंदिर में श्रीठाकुरजी की आगें क्रोध चढ्यो तातें माला बाहिर फेंकी। सो क्रोध चांडाल को रूप है। सो अपराध पर्‍यो ताको दोष निवृत करने के लिये उह रजपूत द्वारा जगन्नाथ जोसी के ऊपर तरवार चलवाई।

तामें अपराध दूरि भयो। उह रजपूत को उद्धार करनो ! तातें वाकी बुद्धि फिरि गई। जगन्नाथ जोसी के पाइप पर्यो। उह रजपूत लीला संबंधी तो हतो नाहीं। मुक्ति को अधिकारी हतो। काहेतें ? यह बचन रासपंचाध्याई में है ''कामं क्रोधं भयं स्नेहमैक्यं सोहृदमेवच''। सो क्रोध करि उह रजपूत को मुक्ति भई। तातें जगन्नाथ जोसी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हैं।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवकनी, जगन्नाथ जोसी की माता, खेरालु में रहती तिनकी वार्ता को भाव कहते हैं -

वार्ता - प्रसंग १ - ताकों दोई बेटा हतो। तामें बड़ो बेटा नरहरि जोसी, छोटो जगन्नाथ जोसी।

भावप्रकाश - सो लीला में माता तो श्रीस्वामिनीजी की सखी हैं। ''छबिसिंधि'' इनको नाम हैं। और छबिसिंधि की दोई सखी हैं। सो उनको नाम एक को ''गंधरेखा'' एक को नाम ''सौरभी'' है। सो माता छबिसिंधि को स्वरूप और नरहरि जोसी गंधरेखा को प्रागट्य। और जगन्नाथ जोसी सौरभी को प्रागट्य। सो नरहिर जोसी जगन्नाथ जोसी को पिता महादुष्ट हतो। कोई साधु संत पंडित ब्राह्मन वैष्णवं को मानतो नाहीं। गाम में कोई आवे तो दुःख देई। रात्रि कों चोरी करावें। लूटि लेई। तातें भगवद्धर्म को द्वेषी हतो। सो श्रीआचार्यजी अड़ेल तें द्वारिका पधारे। सो कछुक दिन गुजरात में खेरालू गाम में आये। एक बगीचा में गाम बाहिर उतरे ! तहाँ जगन्नाथ जोसी की माता जल भरन कों आई। सो आचार्यजी श्रीसुबोधिनीजी की कथा जज्ञपत्नि को प्रसंग कहें। सो वह बाई सुनिके बहोत प्रसन्न भई। तब श्रीआचार्यजी सों बिनती करि कही, जो-महाराज ! मोकों सेवक करिये। और इहाँ रहो मति। मेरो पति महादुष्ट है। जानेगो तो रात्रि कों चोरी करावेगो। और लूटेगो। तब श्रीआचार्यजी कहें, उह कहा लूटेगो ? वासों तू जाई कहियो, श्रीआचार्यजी बाग में आये हैं। और तू दैवी जीव है। परंतु अबहि तोकों सरन कैसे लेंइ ? धर्म को विरोधी पति हैं। सो बरस पाँच में मरेगो। और तेरे दोई बेटा होइंगे। सो पति के मरे पाछें अड़ेल में आइयो। तोकों सेवक करेंगे। अबहि सेवक करनो उचित नाहीं। तब वह बाई दंडोत करि जल भरिकें घर गई। पाछें श्रीआचार्यजी तीन रात्रि खेरालू में रहे, परन्तु उह बाई को पति सुन्यो तऊ नाहीं आयो। ता पाछें आपुतो श्रीद्वारका श्रीरनछोडजी के दरसन कों पधारे। पाछें उह बाई को गर्भ रह्यो सो बरस दिन के भीतर नरहरि जोसी भये। ताके

तीसरे बरस जगन्नाथ जोसी भये ? पाछें जब पाँच बरस भये तब एक सन्यासी पंडित खेरालू आयो। सगरे ब्राह्मन सों चरचा करी। पाछें रात्रिकों जगन्नाथ जोसी को पिता उह सन्यासी कों लूटन गयो। तब उह सन्यासी पास गड़सा हतो, तासों मारचो। सो सन्यासी डरपिकें भाजि गयो। पाछें सबेरो भये लोगन नें जान्यो। सो ज्ञाति के ब्राह्मन नें मिलिकें वाको संस्कार कियो। तब उह बाई कों श्रीआचार्यजी के बचन सुधि आये, जो–आपु श्रीमुख सों कहे हते तेरे दोई बेटा होइंगे सो भये। पति पाँच बरस पाछें मरचो। अब मैं तीरथ को मिस करि अड़ेल जाइकें श्रीआचार्यजी की सेवकनी होई कृतारथ होउँ। अब मेरे प्रतिबंध तो कोई है नाहीं। तब अपने मन के प्रमानिक कों घर सोंपि, दोऊ बेटान कों घर में राखे। सो द्रव्य बहोत हतो कछुक घर में राख्यो कछुक संग ले तीरथराज प्रयाग न्हाईवे को मिसकरि गाड़ी भारें करि गुजरात सों चली। सो कछुक दिन में प्रयाग आइ न्हाये। तहाँ दान पुन्य कछुक करि अड़ेल में आई, श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि बिनती कियो। महाराज ! आपु कहे सो सब भयो। दोऊ बेटा हू भये, पति हू मरचो अब मेरे प्रतिबंध कछू नाहिं है। तातें आपु साक्षात पुरुषोत्तम हो। मोकों सरनि लेउ। जन्म सगरो वृथा गयो। तब श्रीआचार्यजी उह बाई कों श्रीजमुनाजी में न्हवाय नाम निवेदन करायो। और कहे तू भगवद् सेवा करि। तब श्रीआचार्यजी सों उह बाई कहें आपु सेवा पधराई देउ। मैं सेवा करों। तब श्रीआचार्यजी कहें प्रयाग में जाइ भगवद् स्वरूप ले आवो। तब वह बाई प्रयाग में गई। एक कसेरे के पास श्रीठाकुरजी हते। सो न्योछावरि देकें लाई। तब श्रीआचार्यजी पंचामृत न्हवाई उह बाई के माथें पधराई दिये। पाछे कछुक दिन श्रीआचार्यजी पास रहि पुष्टिमार्ग की रीति सब सीखिकें पाछें बिदा होइ गुजरात आई। राजसेवा मंडानसों प्रीति पूर्वक (सेवा) करन लागी। कछुक दिन में सानुभावता श्रीठाकुरजी जनावन लागें।

पाछें वाके दोऊ बेटा बड़े भये। नरहरि जोसी और जगन्नाथ जोसी। तब इनसों माता ने कही तुम श्रीआचार्यजी के सेवक अड़ेल जाइकें होई आवो। पाछें भगवद् सेवा करो। और एक यह मोहौर मेरी ओर की भेट करि मेरी दंडोत करियो। श्रीआचार्यजी कों साक्षात् पुरुषोत्तम जानियो। तब दोउ नरहरि जोसी जगन्नाथ जोसी गुजरात सो चलें। सो लाठी पोली हती बांस की, तामें मोहौर धरि लीनी। सो कछुक दिन में अड़ेल आइकें पूछे, जो

श्रीवल्लभाचार्यजी कहां है ? तब आपु तो पुरुषोत्तमपुरी श्रीजगन्नाथजी के दरसन कों पधारे हते। तब दोई भाई मिलि कें विचार किये, जो–घर जाइंगे तो माता खीजेगी, जों–तुम सेवक भये बिना क्यों आये ? तातें आपुन तो पुरुषोत्तम्पुरी चलियें। सो दोऊ जने चलें सो पुरुषोत्तमपुरी आये। तब पूछें जो–श्रीआचार्यजी इहां कौन ठौर बिराजत है ? तब एक वैष्णव मिलि गयो। सो बताई दियो। तब दोउ जने आय कें श्रीआचार्यजी के दरसन किये। तब श्रीआचार्यजी दोउन सों पूछें, जो–तुम्हारी माता आछे हैं। दोऊ जने आश्चर्य पायकें चक्रत होइ रहें। जो–हम सों कबहू श्रीआचार्यजी को मिलाप भयो नाहीं। सो माता ने कही, साक्षात् भगवान् श्रीआचार्यजी हैं सो ठीक है। पाछे दोऊ भाई कहे, महाराज ! आपकी कृपा तें आछे हैं। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम श्रीजगन्नाथजी के दरसन करि आये ? तब दोऊ भाई नें कही, महाराज ! अबहि तो हम दरसन नाहीं किये। सूधे आइकें आपुके पास चले आये हैं। तब श्रीआचार्यजी ने कही, जाउ दरसन करि आवो। तब दोउ भाई आइ श्रीजगन्नाथजी के दरसन किये। सो तहां श्रीआचार्यजी के श्रीजगन्नाथरायजी के पास ठाड़े दरसन भये। तब दोऊ भाई कहें, हमें तो घर दरसन करें, कदाचित दूसरो मारग होइगो ता मारग पधारे होइगे। तब उहां ते दोउ भाई दौरे, श्रीआचार्यजी के पास आई देखे, तो श्रीआचार्यजी बिराजे हैं। तब चक्रत होइ के देखन लगे। तब श्रीआचार्यजी पूछे, जो–श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन करि आये? तब दोऊजनें कहें, हां महाराज ! दोऊजने दरसन करि आये। तब श्रीआचार्यजी कहे, तुम्हारे मनको संदेह निवृत्त भयो?

तब दोऊन बिनती करी, महाराज ! हम अज्ञानी हैं, जो–संदेह किये। आपु साक्षात् पुरुषोत्तम हो। तब श्रीआचार्यजी ने कही, हमारी भेंट तिहारी माता नें एक मोहौर पठाई है सो करो।

भावप्रकाश – दोऊ भाई याके लिये मोहौर भेंट न करी हती, जो–ईश्वर होइगें तो मांगि लेइंगे। तब दोऊ भाई कों (और हू) विश्वास भयो !

तब मोहौर भेंट धरिकें बिनती किये, महाराज ! हमकों कृपा करिके सेवक करिये। तब श्रीआचार्यजी दोऊ जनेन सों कहे, जो–जाउ न्हाइ आवो। सो न्हाई आये। पाछें श्रीआचार्यजी ने दोऊ जनेन कों नाम निवेदन कराये। पाछें कितनेक दिन श्रीआचार्यजी के दरसन किये। पाछें विदा होईकें दोऊ भाई चलें। सो खेरालू गाम में अपने घर आई माता सों सब प्रकार कहे। जो–हम अज्ञानी हैं। परि अपुनो माहात्म्य श्रीआचार्यजी हमकों दिखाइ हमको संदेह निवृत्त किये। तब माताने कही मैं तुमसो पहले ही कही हती, जो–श्रीआचार्यजी पूरन पुरुषोत्तम हैं। यामें संदेह क्यों किये ?

भावप्रकाश – श्रीआचार्यजी दोऊ भाई कों माहात्म्य यातें दिखाये, जो–सरल सुभाई के मुग्ध वैष्णव हैं। सो कोई और मारग को माहात्म्य देखें तथा कछू चेतक काहू को देखें तो भटकें नाही। काहेतें, श्रीआचार्यजी को माहात्म्य हृदै में दृढ भये। अब इनको लौकिक वैदिक सब तुच्छ लागन लाग्यो। यह दृढ़ता के लिये इतनो माहात्म्य दिखाये।

पाछें माता की आज्ञा प्रमान सेवा करन लागें। सो माता ऐसी श्रीआचार्यजी की कृपापात्र भगवदीय हती। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये।

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, नरहरि जोसी, जगन्नाथ जोसी के भाई बड़े, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – इनको लीला को अलौकिक स्वरूप उपर इनकी माता की वार्ता में कहि आये हैं।

वार्ता – प्रसंग १ – सो नरहरि जोसी एक समें श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन के मिस पुरुषोत्तमपुरी श्रीआचार्यजी के दरसन अर्थ चले। सो जब पटना तें आगे कों चले, जो मजलि जाइ उतरे। सो न्हाय कें सामग्री रोटी दारि किये। श्रीठाकुरजी कों भोग धरे। ता समें एक रूख परतें एक बरस दसको बालक परम सुन्दर नरहरि जोसी के आगें आइ हाथ पसारि कें मांग्यो। तब नरहरि जोसी आश्चर्य पाये, जो–यह कौन हैं ? पाछें भोग सराय कें चुपरी दोई रोटी ऊपर दारि धरि कें उह बालक के हाथ पर दिये। तब उह बालक उहि रूख पर चढ़ि गयो। सो अंतर्धान ह्वै गयो। सो फेरि नरहरि जोसी देखे तो रूख पर बालक नाहीं है। पाछें दूसरे दिन फेरि मजलि पर जाई उतरे। न्हाई के रसोई किये भोग धरें। तब फेरि रूख पर तें उह बालक उतर कें नरहरि जोसी के पास आगें आइ हाथ पसारि के मांग्यो। तब नरहरि जोसी मनमें बिचारि कियो, जो–कोऊ छलावा होइ तो देनों नाहीं। यह बिचारि कें नरहरि जोसी कछू न दियो। भोग सराई कें गाई को भाग काढ़ि आपु महाप्रसाद लेन बैठे। तब श्रीठाकुरजी बालक भेखसों वैसेही उह रूख पर चढ़ि अन्तर्धान होई घरमें जगन्नाथ जोसी सों कहें, मैं नरहरि जोसी पास जाई हाथ पसारि कें काल्हि, आजु मांग्यो। सो काल्हि तो दोई रोटी और दारि दिये। आजु कछू नाहीं दिये। सो फिरि आयो। तब जगन्नाथ जोसी वह महिना वह तिथि लिखि राख्यो, जो नरहरि जोसी जब आवेंगे

तब पूछूंगो । सो नरहरि जोसी पुरुषोत्तमपुरी जाई तहां श्रीआचार्यजीके दरसनकरे। पाछें श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन करि कछुक दिन वहां रहि उहां तें चले। सो कछुक दिन में खेरालू अपने घर आये। तब जगन्नाथ जोसी नें श्री आचार्यजी के सकल समाचार पूछे। सो नरहरि जोसी ने सब कहे, जो–मायावाद खंडन किये। और भली भाँति सों बिराजत हैं। तब जगन्नाथ जोसी ने नरहरि जोसी सों पूछी, जो–फलाने दिन तुम्हारे पास कौन मांगन आयो सो तुम नाहीं दिये ? तब नरहरि जोसी कहें, पटना के आगें चल्यो तब पहले दिन एक बरस दस को बालक आई मेरे आगें हाथ पसारि मांग्यो सो दोई रोटी दारि ऊपर धरिकें उह बालक के हाथ दियो। सो उह रूख पर चढ़ि गयो। सो फेरि न दीस्यो। पाछें दूसरी मजलि फेरि रूख पर तें उह बालक आयो। तब मैंने बिचार कियो, जो–उह छलावा होइ तो देनो उचित नाहीं। और भगवद् स्वरूप होई तो महाप्रसाद कैसे देउं ? यह बिचार कें मैं कछू न दियो। तब वह बालक रुख पर चढ़ि अंतर्धान ह्वै गयो। सो या प्रकार मनमें संदेह भयो तब दूसरे दिन नाहीं दियो। तब जगन्नाथ जोसी ने कही, तुम बुरी करी। वे तो श्रीठाकुरजी आपु आई हाथ पसार के मांगे। तुमने नाहीं दियो सो आछी नहीं करी। और हम तुम प्रथम श्रीआचार्यजी के दरसन कों श्रीजगन्नाथजी गये तब माता नें एक मोहौर भेंट दीनी सो हम छिपाइ राखें। यही संदेह भयो, जो ईश्वर होइंगे तो श्रीआचार्यजी मांगि लेइंगे। सो मोहौर मांगि लीनी। और श्रीजगन्नाथरायजी के मंदिर में हू दरसन दीनों। और घरहू एक कालावच्छिन्न दरसन दे संदेह मिटाये। सो अपुने ऐसे पुरुषोत्तम

श्रीआचार्यजी के सेवक हैं सो छलावा निकट आवे नाहीं। तुम छलावा को संदेह किये सो आछो न किये। श्रीआचार्यजी की कानि'तें हमारे तुम्हारे पास श्रीठाकुरजी कृपा करिकें मांगि लेत हैं। तब नरहरि जोसी को संदेह गयो।

भावप्रकाश – यह वार्ता को अभिप्राय यह है, जो–जगन्नाथ जोसी पर सेवक होत ही कृपा भई। सो श्रीठाकुरजी में चित्त लागि गयो। और नरहरि जोसी के मनमें इतनी जोग्यता हती, जो–मैं बडो भाई हों, जगन्नाथ जोसी छोटो भाई है। यातें मैं बहोत समुझत हों। तातें नरहरि जोसी कों जदपि श्रीठाकुरजी ने अपनो स्वरूप जतायो, बालक होई रूख पर तें आइ मांगे, तउ नरहरि जोसी श्रीठाकुरजी को जाने नाहीं। तब श्रीठाकुरजी जगन्नाथ जोसी सो कहें। नरहरि जोसी सों न बोले। पाछें जब घर आये तब जगन्नाथ जोसी ने कही, तुम संदेह क्यों कियो ? बुरी करी, जो–श्रीठाकुरजी कों न दिये। यह सुनिकें नरहरि जोसी को मान मर्दन ह्वै गयो, जो–मैं श्रीठाकुरजी कों न जान्यो। जगन्नाथ जोसी बड़े कृपापात्र हैं। या प्रकार अपन कों हीन मानि सेवा किये। ता दिन तें जैसे जगन्नाथ जोसी सों श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावते तैसे नरहरि जोसी कों हू सानुभावता जनावन लागें। तातें वैष्णव कों छोटो जानि अपनी योग्यता जाननी नाहीं। अपने तें सगरे वैष्णव कों बड़े जानने। तब श्रीठाकुरजी कृपा करें। यह सिद्धांत प्रगट किये।

वार्ता – प्रसंग २ – और एक समय नरहरि जोसी गुजरात में अलियाना गाम गये। तहां नरहरि जोसी के जजमान हते। उनको नाम महीधर हतो। और महीधर के एक बहनि फूलबाई हती। तिनसों नरहरि जोसी ने कह्यो, तुम श्रीगुसांईजी के सेवक होउ। वैष्णव होऊ तो हमारो तुम्हारो मिलाप रहे। तब महीधर और फूलबाई नें कही, जो–बहोत आछो, श्रीगुसांईजी को पधरावो। हम सेवक होइंगे। तुम्हारी कृपा तें वैष्णव होंइ तो जन्म सुफल होइ, या प्रकार प्रसन्न भये।

भावप्रकाश– काहेतें ? दोउ दैवी जीव हैं, लीला में श्रीचंद्रावलीजी की

सखी हैं। महीधर को नाम लीला में ''कुरंगाक्षी'' है। और फूलबाई को नाम ''चपलानैनी'' है। सो ये सुन्दर बहोत। नेत्र इनके परम सुन्दर हैं। सो इनके मनमें सुंदरता को गर्व भयो। तातें श्रीचंद्रावलीजी के शाप तें भूमि में प्रगटे। सो पूर्व लीला को संबंध है। तातें महीधर को ब्याह होत ही स्त्री मरि गई। माता-पिता हू मरि गये। एक महीधर और फूलबाई ये दोउ भेले रहते। पिता के द्रव्य बहोत हतो। सो वैष्णव होने की कही, तब दोउ भाई-बहिन बहोत प्रसन्न भये।

पाछें कहें, श्रीगुसांईजी कों बेगि पधरावो, तब नरहरि जोसी खेरालू में आइ श्रीगुसांईजी कों बिनती पत्र लिखे। तामें लिखें, जो-तुम कृपा करिकें गुजरात पधारो तो कितनेक जीवन को कल्यान होइ। तब श्रीगुसांईजी पधारे। खेरालू में जगन्नाथ जोसी के घर उतरे। तब नरहरि जोसी अलियाना गाम में जाई महीधर और फूलबाई सों कहें, बधाई है। श्रीगुसांईजी खेरालू गाम में जगन्नाथ जोसी के घर पधारे हैं। तब फूलबाई ने महीधर सों कही, जो-अब कहा करिये ? तब फूलबाई तें महीधर ने कही, जो-बहनि ! तू चिंता मति करै। रुपैया मोहौर की खिचरी करि श्रीगुसांईजी कों न्यौछावरि करत अपने घर पधराऊँगो।

भावप्रकाश - यामें यह जताये, जो-इतनी न्योछावरि करूँगो तो भेंट की कहा संदेह करति हैं ?

यह सुनिकें फूलबाई नरहरि जोसी मन में बहोत प्रसन्न भये, जो-महीधर की प्रीति तो आछी है। पाछें खेरालू में आई नरहरि जोसी, महीधर, फूलबाई दंडौत करि बिनती करिकें अलियाना गाम में पधराये। तब श्रीगुसांईजी पधारे। सो महीधर और फूलबाई रुपैया मोहौर की खिचरी करि श्रीगुसांईजी के ऊपर न्यौछावर करत लूटावत अनेक बाजिंत्र गानादिक करत घर में पधराये। पाछें महीधर और फलबाई को न्हवाई कें नाम

निवेदन करवाये। इनके घर में प्रथम श्रीठाकुरजी हते, सो मर्यादा रीति सों श्रीलालजी की पूजा करतें। सो श्रीठाकुरजी कों श्रीगुसांईजी पंचामृत स्नान कराई पाट बैठारे। महीधर और फूलबाई के माथे पधराये। महीधर और फूलबाई श्रीगुसांईजी कों बहोत भेट करिकें प्रीति सों पांच दिन घर में राखे। पुष्टिमारग की रीति सब सीखें। पाछें श्रीगुसांईजी द्वारका पधारे। तब महीधर फूलबाई नें नरहरि जोसी सों बहोत बिनती किये, जो–तुम्हारी कृपातें हम वैष्णव भये। अब हमारो नयो जन्म भयो। श्रीगुसांईजी कृपा किये।

भावप्रकाश – सो वैष्णव को संग ऐसो है। ''आर्द्रार्द्री करणत्व'' भींज्यो वस्त्र सूके वस्त्र कों लगें, तो सूको हू भींज्यो होई। तेसे वैष्णव के संग तें वैष्णव होई। जैसें गिरिराज के संग तें पुलिंदी कों भगवद्भाव उत्पन्न भयो। तातें सर्वोपरि तादृशी को संग है।

पाछें नरहरि जोसी, भाई–बहनि सों बिदा होइ अपने गाम खेरालू में आये। तब जगन्नाथ जोसी सों नरहरि जोसी ने कही, जो–महीधर और फूलबाई की प्रीति न कही जाए, जो–भले वैष्णव भये। तब जगन्नाथ जोसी कहे, श्रीगुसांईजी जापर कृपा करें सो भगवदीय होइ यामें कहा कहनो ? पाछें सेवा करन लागें ?

वार्ता – प्रसंग ३ – ता पाछें केतेक दिन में अलियाना गाम में आगि लागी। प्रातःकाल समें नरहरि जोसी खेरालु गाम में बाहिर जाई देह–कृत्य तलाव पर करि, नित्य–कर्म करि, फूल की डलिया में फूल–तुलसी धरि हाथ में लिये घर आवत हते। सो ता समें नरहरि जोसी नें जानी, जो–अलियाना गाम में आगि बहोत लगी है। सो मन में बिचारे, जो–अबहिं महीधर, फूलबाई

नये वैष्णव भये हैं। सो इनको घर जरेगो तो कहेंगे, जो–हम वैष्णव भये तातें उपद्रव भयो। ऐसो मनमे आवेगो तो इनको धर्म जात रहेगो। बिगार होइगो। यह बिचारि आछी धरती देखि तुलसी की डलियां भूमि में धरि झारी सों जल ले आसपास कुंडाली करि पानी डारयो किये। जब अलियाना गाम में आगि बुझी जानें, तब महीधर को घर या प्रकार बचाइ, पाछें नरहरि जोसी फूल लें, तुलसी लें अपने घर आये। पाछें कितनेक दिन पाछें अलियाना गाम में महीधर के घर नरहरि जोसी गये। तब महीधर और फूलबाई ने नरहरि जोसी सों कह्यो, जो–इहां अग्नि को उपद्रव बहोत भयो हतो। सो श्रीगुसांईजी की कृपा तें हमारो घर बच्यो। वैष्णव भये तातें बचे, नाहीं तो कहा जानिये कहा होतो ? तब नरहरि जोसी कहें, श्रीगुसांईजी परम दयाल हैं। वैष्णव की सदा रक्षा छाया करत ही आये हैं। तातें वैष्णव को सदा कल्याण ही हैं। या प्रकार भाई–बहनि को समाधान करिकें पाछें विदा होई खेरालु अपने घर आये। तब दोऊ भाई घर में सेवा सो पहोंचिके बैठें। तब नरहरि जोसी ने जगन्नाथ जोसी सों कह्यो, जो–एक दिन अलियाना गाम में आगि लागी। तब मैं प्रातःकाल तलाब पर तें नित्य कर्म करि आवत हुतो। सो फूल तुलसी की डलियाँ मेरे हाथ में हती। सो मैं अलियाना गाम में आगि लागी जानि तुलसी की डलिया भूमि में धरि, झारी सों जल लें तुलसी के आसपास पानि को कुंडाला करि तासों महीधर फूलबाई को घर बचायो। तब नरहरि जोसी सों जगन्नाथ जोसी ने कही, इतनों हठ करिकें श्रीठाकुरजी कों श्रम करायो सो उचित नाहीं। यह अपुने मारग की रीति नाहीं है। और आपुन कौन हैं,

जो–बचावें ? श्रीठाकुरजी सर्व सामर्थ्य युक्त हैं। सो सब लीला करत हैं। तब नरहरि जोसी ने जगन्नाथ जोसी सों कही, मैं श्रीठाकुरजी सों हठ नाहीं किये। मेरे मन में यह आई, जो–महीधर फूलबाई अबहि नये वैष्णव भये हैं, जो–इनके घर में अग्नि को उपद्रव होइ तो कहूं इनके मन में यह आवे, जो–हम अबहि वैष्णव भये हैं। अबहिं आगि लागी। सो एतन्मार्ग में तें प्रीति घटें। सो इनकों भगवद् प्राप्ति में अंतराई होई। अब इनकों दृढ़ बिश्वास श्रीगुसांईजी में और पुष्टिमारग में भयो, जो–वैष्णव भये तो बचे। यह दृढ़ताके लिये मैं इतनो कियो। और मोकों कछू प्रयोजन नाहीं। तब दोऊ भाई हसिकें चुप ह्वै रहे। सो प्रभु बड़े कौतुकी हैं। इनकी इच्छा तें सब होत हैं। सो ये नरहरि जोसी श्रीजगन्नाथ जोसी और इनकी माता ये तीन्यों बड़े भगवदीय हैं। चाहे सो करें। इनके संग तें महीधर और फूलबाई कों श्रीठाकुरजी में दृढ़ विश्वास भयो। प्रीति सों सेवा करन लागे। पाछें कछुक दिनमें श्रीठाकुरजी महीधर फूलबाई सों सानुभावता जनावन लागें। तातें इनकी वार्ता कहां लों कहिये। नरहरि जोसी जगन्नाथ जोसी और इनकी माता मिलि के वार्ता एक जाननी ॥ ॥ वार्ता ३१॥

★ ★ ★

अब आचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, राना व्यास सांचोरा ब्राह्मन गोधरा के वासी, तिनकी वार्तीकौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– ये राना व्यास लीला में इंदुलेखा श्रीस्वामिनीजी की सखी है। सो बाकी सखी ''नागवेलिका'' इनको नाम हैं। सो बरस बारह के ये राना व्यास भये। तब एक बैरागी को इनकों संग भयो। सो बैरागी चारों धाम फिरि आयो हतो। सो बद्रीकाश्रम की बात, श्रीजगन्नाथरायजी की बात, रंगनाथजी की बात,

श्रीरनछोड़जी की बात, माहात्म्य कह्यो। सो राना व्यास अर्द्धरात्रि कों उठि चले। सो पहले बद्रीकाश्रम गये। तहाँ बहोत मारग में दुःख पाये। सो बद्रीनाथजी के दरसन किये। परन्तु मनमें प्रसन्न न भये, जो–इहाँ सीत बहोत हैं और मारग ऐसो हैं, जो–प्रान जाई। पाछें श्रीजगन्नाथजी कों गये। तब दरसन करिकें कछुक प्रसन्न भये। पाछें रोग सों मांदे बहौत परे। सो एक महिना में आछे भये। तब मनमें कहें, फेरि मांदो परूंगो तो मरूँगो। तातें उहां तें चलें। सो दक्षिण में आई श्रीरङ्गनाथजी के दरसन किये। तब मन में कहें, इनको दरसन कैसे करों ? चरन के करों तो मुख के न होंइ। मुख के करों तो चरन न होंइ ? ए बडे बहोत हैं। तातें अब द्वारिका चलूं। सो द्वारिका आये। सो श्रीरनछोड़जीके दरसन किये। सो चरन छूइवे कों कहें। तब उहां पंड्या नें कही, इतनों द्रव्य खरचो तब चरन छूवों। तब राना व्यास मन में बिचारे, जो–इहां ब्रह्मचारी द्रव्य के लिये चरन छूवन देत हैं। और ठाकुरजी को द्रव्य ले जांई। तातें यहाँ हू रहनो उचित नाहीं। काहेतें ? जहाँ चित्त में दोष उपजे उहाँ के रहें कल्यान न होई। बिगार होई। यह बिचारि द्वारिका सों चले। सो गुजरात में गोधरा, अपने घर आये।

सो माता–पिता बहोत बृद्ध भये हतो। सो आठ बरस में राना व्यास आये। तब माता–पिता नें कही, बेटा ! तू कहाँ निकसि गयो ? घर में रहेतो तो तेरो ब्याह करते। अजहू घर में रहो। अपनी ज्ञाति की रीति चलो तो ब्याह होई। तब राना व्यास ने कही, मैं तो सदा ब्रह्मचारी रहुँगो। ब्याह करिकें कहा नर्क में परों ? मैं तो इन्द्रीजीत हों। तब माता–पिता चुप होइ रहे। पाछे माता–पिता की देह छूटी। सो संस्कार करि मन में प्रसन्न भये, जो–बंधन कट्यो। अब मैं चाहुँगो सो करूंगो दस पाँच हजार रुपैया हू हैं। या प्रकार इन्द्रीजीत को अहङ्कार हतो। द्रव्य को अहङ्कार भयो। सो मारे गर्व के काहू सों बोले नाहीं, बड़े गाम में सिद्ध कहावतें। और जगन्नाथ जोसी हू राना व्यास पास नाम पायो हतो। पाछें माता के कहें सो जगन्नाथ जोसी श्रीआचार्यजी के सेवक भये। पाछें राना व्यास पढ़े हू कछुक हते। सो मन में आई, जो–या गाम में तो सगरे मूरख हैं। कासी में चलि काहू सों वाद करों। यह अहङ्कार करि राना व्यास घरतें कछुक द्रव्य लें कासी में बड़े–बड़े पण्डित जहाँ बाद करते तहाँ गये। तहां हारे सो लाज लागी। तब मन में बिचारयो, जो–अर्द्ध रात्रि समें गङ्गाजी में डूबि मरूँगो। सो संझा समें भूखे ही गङ्गाजी के तीर हनुमान घाट है तहां जाइ बैठें, कहे, जो–रात्रि होई कोई जाने नाहीं तब गङ्गाजी में डूबों। तहां श्रीआचार्यजी पधारे। सो एक वैष्णव नें श्रीआचार्यजी सों पूछी, जो–महाराज ! गङ्गाजी में डूब मरें ताकों कछू फल गङ्गाजी देई। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो–अहङ्कार करिकें काहूसों लरिकें डूबे को फल नाहीं।

सर्प की जोनि पावें। आत्महत्या लागें। महादुष्ट होई, जो–ऐसे मरें। रोग सों ग्रसित होई। दैन्यता पूर्वक संन्यास लेई डूबे तो कछू फल मिलें, जो–मरति वेर ठाकुर में मन रहे तो। नाहीं तो दुर्गति होई। यह बात सुनतहि राना व्यास ने जानी, जो–ये महापुरुष हैं। यों जानि आइकें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, जो–महाराज! भली भई, जो–यह वैष्णव ने बात पूछी। मैं गङ्गाजी में डूबन अर्थ भूखो सबेरे से बैठो हूँ। सो अर्द्ध रात्रि जाई तब डूबूं। परंतु अब मेरो उद्धार होइ सो प्रकार बतावो। आपुकी सरनि हों। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुमहू तो नाम देत हो ? स्वामी कहावत हो, अपने कों बहोत योग्य मानत हो। सो सेवक होन की बात क्यों कहत हो ? तब राना व्यास बिनती करी, महाराज! अहङ्कार तो बहोत हतो परन्तु कासी में जहां जहां पण्डितन सों वाद कियो तहाँ तहाँ हारयो। तातें गङ्गाजी में डूबन कों ठाढ़ो हों। सो मेरे भागि में कछू आछो होनहार है, जो–या समय आपुको दरसन भयो। सो मैं बहौत दीन हों, अनाथ हों। सो आपु मो पर कृपा करो। तब श्रीआचार्यजी राना व्यास सों कहें, जो, जा, गङ्गाजी में न्हाइ आव। तब राना व्यास गङ्गाजी में न्हाइ आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाई ब्रह्मसंबंध कराये। और आज्ञा दिये। अब जहाँ पंडितन सों हारे हो तहाँ तहाँ जाईकें सगरे वाद करिकें। जीति आवोगे। पाछे रात्रि कों राना व्यास रसोई करिभोग धरिकें महाप्रसाद लिये। मन में आनंद भयो। पाछें प्रातःकाल न्हाइ के श्रीआचार्यजी को दंडोत कियो। तब श्रीआचार्यजी चतुःश्लोकी सिखाय कहें, जो–जा पंडितन सों वाद करि आब। सो सगरे पंडितन कों एक ही वचन में जीते। श्रीआचार्यजी के प्रमेय बल प्रताप तें। पाछें तीसरे पहर आय श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि बिनती कियो। तब श्रीआचार्यजी कहें, पंडित तो जीते परंतु अहङ्कार मति करियो। अहङ्कार जा वस्तु को करयो सोई वस्तु को नास होइगो। तब राना व्यास ने बिनती करी, महाराज! अब अहङ्कार न करूंगो, अहङ्कार करि बहोत दुःख पायो। अब ऐसी कृपा करो, जो–कछू भगवद् अनुग्रह होई। मेरो जनम ऐसोई बीत्यो भटकतें। तब श्रीआचार्यजी कहें, कहूँ तें भगवद् स्वरूप ले आवो। तब राना व्यास बजार में जाई एक लालजी को स्वरूप न्यौछावर दे कें ले आये। तब श्रीआचार्यजी पञ्चामृत स्नान कराइ राना व्यासके माथें पधराई कहें, अब तू बहोत भटक्यो। परंतु अब घर में जाई मन लगाई के भगवद् सेवा करो। तब राना व्यास श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि बिदा होई अपने घर आये। पाछें सेवा करन लागें।

वार्ता – प्रसंग १ – सो प्रथम जगन्नाथ जोसी राना व्यास के पास नाम पाये हते। सो जब जगन्नाथ जोसी सुनें, जो राना

व्यास श्रीआचार्यजी के सेवक है आये, तब जगन्नाथ जोसी गोधरा आये। राना व्यास सों मिले। सो दोऊ जनें बहोत प्रसन्न भये। पाछें राना व्यास के पास जगन्नाथ जोसी बहोत रहते।

भावप्रकाश – सो राना व्यास के मन में पंडिताई को अहंकार तो दूरि भयो। परन्तु इंद्रीजीत को अहंकार हतो। सो श्रीठाकुरजी ने यह अहंकार दूरि करिवे के लिये एक कौतुक रच्यो।

सो भगवद् इच्छा तें गोधरा की देसायनि सों राना ब्यास को संग भयो। सो बात काहूने राना ब्यास की दरबार में कही। सो वह हाकिम के प्यादे राना व्यास को लैन आये। तब जगन्नाथ जोसी नें राना व्यास कों और देसायनि कों और गाम भजाइ दिये। और राना व्यास के घर में जगन्नाथ जोसी रहे। भगवद् सेवा करि राजभोग सों पहोंचे। इतने में हाकिम के प्यादे आये। सो कहे, राना व्यास कहाँ हैं ? तब जगन्नाथ जोसी नें कही, कहा काम है ? तब प्यादे कहें, राना व्यास ने अन्याव कियो है सो हाकिम पास ले जाइंगे। तब जगन्नाथ जोसी ने कही, राना व्यास कहूँ गये हैं। चलो मैं हाकिम कों उत्तर दे आऊं। तब प्यादे जगन्नाथ जोसी कों लिवाइ जाय हाकिम आगें ठाढ़े किये। तब हाकिम ने कही, जो–राना व्यास कहाँ है, उनकों लावो ? राना व्यास ने पराई स्त्री सों अन्याव कियो है। उनकों क्यों न लाये ? ये तो जगन्नाथ जोसी हैं। इनको तो नीके जानत हों। जो–जाको नाम जगन्नाथ जोसी सो कबहू अन्याव न करें। तातें राना व्यास ने अन्याव कियो है सो राना व्यास कों ले आवो। तब जगन्नाथ जोसी नें कही जो–तुम मेरी बात सुनो। राना व्यास ने अन्याव नाहीं कियो है। काहू नें झूंठे ही चुगली करी है। जाको नाम राना व्यास सों कबहूँ अन्याव न करें। तब हाकिम ने कही,

कैसे जानिये, राना व्यास अन्याव नाहीं कियो है ? तब जगन्नाथ जोसी कहें, जो-कहो तैसेई करूं। तब हाकिम ने गाड़ी के पैया को एक पहलू मँगाये। ताकों अग्नि में डारि कें तातो कियो। तब लाल भयो तब हाकिम ने कही याकों उठाई कें डारो। न जरो तो राना व्यास सांचे। तब जगन्नाथ जोसी उह पहलू के पास आई ठाड़े होइकें कह्यो, जो-राना व्यास अन्याव कियो होई तो मेरो हाथ जरियो। सो यह कहत ही अग्मिय पहलू सीतल है गयो। सो जगन्नाथ जोसी हाथ में उठाइ उह पहलू गरे में पहरि लिये। घरी एक ठाढ़े रहे। तब हाकिम ने और सगरे लोगन नें कही, जगन्नाथ जोसी काढ़ि, काढ़ि। तुम सांचे हो। तब जगन्नाथ जोसी कहें, यह कौन के गरे में डारूँ ? तब हाकिम नें बहोत मनुहारि करि बिनती करी। पाछें भूमि पर डारें। सो भूमि जरि उठी। तब सगरे आश्चर्य पाय के कहें, जो-जगन्नाथ जोगी तुम धन्य हो। तुम सांचे हो। पाछें हाकिम ने जगन्नाथ जोसी सों कही, मैं तिहारे ऊपर बहोत प्रसन्न हों तातें तुम कछू मांगो। तब जगन्नाथ जोसी ने उह हाकिम सों कही, तिहारे पास जानैं राना व्यास की चुगली करी है तासों कछु मति कहियो। यह मैं माँगि लेत हों। तब जगन्नाथ जोसी के ये बचन सुनिके हाकिम और सब प्रसन्न भये। कहे तुम धन्य हो। चुगल कों हू बचाये। नाहीं तो मैं वाकों मरबाइ डारतो। ऐसे मनुष्य धरती पर कोई एक ही हैं। तब जगन्नाथ जोसी अपने घर आये। पाछें राना व्यास घर आये। जगन्नाथ जोसी सों कहें, तुम मेरे लिये बहोत दुःख पाये। तब जगन्नाथ जोसी कहे, जो-वैष्णव कबहू हीन कार्य न करें।

भावप्रकाश- तब राना व्यास के मनमें इंद्रीजीत को अहंकार हतो सो छूटि गयो।

पाछें राना व्यास भगवद् सेवा में मन लगाये । तब श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागें ।

भावप्रकाश – यह वार्ता में यह सिद्धान्त भयो, जो–अहंकार, गर्व होई तहाँ तांई श्रीठाकुरजी अनुभव न जतावें । और अपने भक्तन को अहंकार आपुही कृपा करिके दंड देइ छुडावत हैं । और वैष्णव सों कबहू हीन कार्य होई नाहीं । और कदाचित भगवदीय सों खोटो काम कछू भयो होई तो मनमें दोष बुद्धि न करनो । (क्यों जो) भगवदीय ऐसो करे नाहीं । वामें भगवत्कृति जाननी । और जीवमात्र ऊपर दया राखनी । चोर होई चुगल होंई ताहू को अपने बसतें बचावनो । रक्षा करनो । यह वैष्णव को धर्म है । इत्यादि सिद्धांत प्रकट किये । और राना व्यास पहलें जब घरतें निकसे तब बद्रीनाथ, जगन्नाथ होई पाछें द्वारका में आये । तहाँ ''माधव सरस्वती'' एक पंडित ब्राह्मण हतो ताके सेवक भये नाम पाये हे । पाछें कासी में श्रीआचार्यजी के सेवक भये । सो तो ऊपर कहि आये हैं ।

वार्ता – प्रसंग २ – सो राना व्यास गोधरा तें सिद्धपुर जाइ रहें । सो एक दिन राना व्यास और जगन्नाथ जोसी सरस्वती में न्हाई कें बैठे संध्या बंदन करत हते । ता समें एक रजपूतानी को धनी मरि गयो । सो वह सती होन कों आई । तब जगन्नाथ जोसी ने राना व्यास सों पूछ्यो, जो–यह सती होत है तिनको कहा प्रकार है ? तब राना व्यास ने मूंड हलाय कें जगन्नाथ जोसी सों कह्यो, जो–प्रेत के संग वृथा यह मनुष्य देह जरावति है । ऐसी सुंदर देह भगवद् सेवा में लगें तो उद्धार होइ जाइ । प्रेत के संग जरति है । सो वृथा जन्म खोवति है । सो प्रकार मूँड हलाय कें राना व्यास कहे । ता समे उह रजपूतानी की दृष्टि राना व्यास पर हती । सो मूँड हलावत देखत ही उह रजपूतानी को सत उतरि गयो । तब रजपूतानी नें साथ के लोगन सों कह्यो जो–मैं सती न होउंगी । मेरो सत उतरि गयो । तब लोगन नें उह रजपूतानी सों कही, जो–तोकों घर में तो जान न देंगे । तोकों

इहांई जरावेंगे। तब रजपूतानी ने कही, जो-मैं घर में नहिं आऊंगी। मोकों इहां नदी के तीर झोंपरी करि दीजो, इहां रहोंगी। और मोकों जोरावरि जरावोगे तो तुम सबन कों हत्या लगेगी। यह कहि सबन कों सोंह दिवाई। जो-मोकों मति जरावो। तब उह मृतक कों जराय सरस्वती नदी पर एक झोंपरी बनाय कें सगे संबंधि अपने अपने घर गये। पाछें दूसरे दिन राना व्यास और जगन्नाथ जोसी सरस्वती न्हान कों गये। तब उह रजपूतानी नें राना व्यास सों पूछी, जो-काल्हि तुम मेरी ओर देखिकें मूँड कैसें हिलायो ? तब राना व्यास उह रजपूतानी सों कहें, हम तो आपुस में ऐसी ही अनेक बात करत हँसत हते। या बात में तू कहा लेइगी ? तब उह रजपूतानी नें कहीं, अब मोसों दुराव क्यों करत हो ? तुमने मूंड हलाइ के बात कही सो मेरो सत उतरि गयो मैं जरी नाहीं। तातें मोसों यथार्थ बात होई, अब जो-मोकों कर्तव्य होई, सो कहो। सोई मैं करूं। तुमने अग्नि में जरत बचाई के कृपा करि बात हूँ कहि चाहिये। या प्रकार रजपूतानी ने बहोत आग्रह कीनों। तब राना व्यास नें कही, हम आपुस में यह कहत हते, जो-मनुष्य देह परम उत्तम पाइकें वृथा प्रेत के संग जरत है। यह देह सो श्रीठाकुरजी को भजन स्मरन न कियो ताकों धिक्कार है। उह महादुष्ट है।

भावप्रकाश – जो श्रीठाकुरजी को अर्थ यह देह आवें तो कृतार्थ होई। वा बराबरि कोई नाहीं। यह बात कहत हते।

तब उह रजपूतानी नें कही अब मैं तिहारी सरनि हों। जा प्रकार मोसों कहो ताहि प्रकार मैं भजन सुमिरन करों। मेरो परलोक सुधरे। सो मोपर कृपा करो। तब राना व्यास ने कही,

अबहि तो तोकों सूतक हैं। सूतक उतरे पाछें आइयो। तब तोसों हम कहेंगे। तब वह रजपूतानी दंडौत करि अपनी झोंपरी में गई। सो आर्ति बहोत बढ़ी। अरु एक एक घरी जुग सम बीते। जो–कब सूतक मिटें, कब राना व्यास मोकों बतावें तेसेही मैं श्रीठाकुरजी को सुमिरन, भक्ति करों।

भावप्रकाश – या प्रकार की आरति दैयी जीव है तातें भई। लीला मे राना व्यास इंदुलेखी की सखी मधुरा और मधुरा की सखी ''नागवेलिका'' को प्रागट्य राना व्यास को है। और नागवेलिका की सखी ''रसएनी'' हैं आज्ञाकारी। सो रसएनी को प्रागट्य यह रजपूतानी है। तातें लीला में हू पूर्व राना व्यास की आज्ञाकारी सखी हैं। तातें राना व्यास के ऊपर यह रजपूतानी को दृढ़ विश्वास भयो, जो–इन द्वारा मेरो उद्धार होयगो।

पाछें जहां लों सूतक रह्यो तहाँ लों राना व्यास सरस्वती ऊपर न्हाइवे कों आवें। तब दरसन नित्य करि, बिनती दैन्यता करि जाय। जो–मेरो अंगीकार कब होइगो। ऐसे करत सूतक उतर्‍यो। तब न्हाइ के सुद्ध होयकें नदी पर बैठि रही। तब राना व्यास सरस्वती ऊपर न्हाइवे को आये। तब वह रजपूतानी राना व्यास के सन्मुख आई। दंडौत करि बिनती करी, अब मोपर कृपा करो। तब राना व्यास ने कही काल्हि सवारे आइयो। तब तोसों कहेंगे। तब उह दंडौत करि झोंपरी में गई। सो मारे दुःख के विरह तें कछू खान पान नाहीं कियो। पाछें प्रातःकाल भयो तब न्हाइ के नदी पर बैठि रहि। इतने राना व्यास आइ सरस्वती में स्नान करिकें वा रजपूतानी सों कही, फेरि न्हाइ लें। तब राना व्यास ने रेसमी वस्त्र दिये। जो–याकों पहरि ले। तब उह रजपूतानी ने पहर्‍यो। तब राना व्यास बैठाइ कें श्रीआचार्यजी को ध्यान स्मरन करिकें नाम सुनाये। सो नाम

सुनत ही रजपूतानी कों भगवद् भाव उत्पन्न भयो। तब स्त्री नें राना व्यास सों बिनती करी, जो–अब मोकों टहल बताओ सो करूं। तब राना व्यास अपनी धोती बताये, जो–आछें धोई कें घरमें आइयो। और अष्टाक्षर मंत्र यह जप अष्टपहर मुखसों कर्‌यो करियो। पाछें और हू सेवा देइंगे सो धोवती आछी तरह छांटि लाई। राना व्यास श्रीठाकुरजी की सेवा करि राजभोगार्ति के दरसन उह राजपूतानी कों कराये। पाछें महाप्रसाद की पातरि धरी। या प्रकार कछुक दिन धोती उपरेना परदनी आदि वस्त्र धोवन की सेवा दिये। सो प्रीति पूर्वक सगरे वस्त्र भाग्य मानिकें धोवें। महाप्रसाद राना व्यास के घर लेई।

भावप्रकाश – सो वस्त्र धोवन को कारन यह, जो–ज्यों ज्यों भगवदीय के वस्त्र धोवें त्यों त्यों हृदय सुद्ध होइ। ज्यों ज्यों वस्त्र को मेल छूट्यो त्यों त्यों हृदय में ते काम, क्रोध, मद, मत्सर, लोभ आदि मोह मेल सब दूरि भये। तब सुद्ध भई।

पाछें राना व्यास के घर में सगरो काम काज सीधो सामग्री समारनो आदि या प्रकार ऊपर की सब सेवा करन लागी। ऐसे करत कितनेक दिन पाछें श्रीआचार्यजी पधारे। तब राना व्यास ने श्रीआचार्यजी कों अपुने घर पधराये। और बिनती करि रजपूतानी की सब बात कही। और कहे, आपु अब कृपा करिकें सेवक करिये। तब श्रीआचार्यजी दैवी जीव जानिकें उह रजपूतानी कों नाम निवेदन कराये। पाछें कछुक दिन सिद्धपुर में रहिकें आपु द्वारिका पधारें। तब उह रजपूतानी रसोई की सब परचारगी करें। सो श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागें। या प्रकार राना व्यास के संग तें उह रजपूतानी कों भगवत्प्राप्ति भई।

भावप्रकाश – यामें यह जताये, जो–भगवदीय को संग परम उत्तम है।

भगवद् भजन स्मरन करत हू बहुत काल में कृपा होइ। परंतु भगवदीय सर्व सामर्थ्य युक्त हैं। इनके छिनक संग तें भगवान कृपा करें। यह जताये।

सो राना व्यास ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। जिनकें संग तें रजपूतानी भगवदीय भई। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये॥

वार्ता ॥३२॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, रामदास साँचोरा राजनगर के वासी तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– ये लीला में श्रीस्यामिनीजी की सखी इन्दुलेखा, इन्दुलेखा की सखी सुभगा, सो 'सुभगा' रामदास को प्रागट्य। और सुभगा की सखी सुभद्रा, सो रामदास की स्त्री को प्रागट्य। सो दोऊ राजनगर में साँचोरा ब्राह्मणके घर प्रगटे। सो बरस नो के रामदास भये, और बरस आठ की यह स्त्री भई। सो मा बाप ने दोउन की ब्याह किये। परंतु रामदास कों वैराग्य दसा बालपने तें हती। काहू सों मोह न करे, काहू कों कह्यो न करे। सो माता पिता ने पढ़ाए बहोत, सो कछू पढ़े नाहीं। सो एक समें रामदास राजनगर के तलाब पर बैठे हते, तहां तेली दस-पाँच पोहे लेके आये। सो बैलन कों पानी पिवायो, तामें एक बैल पानी पीके तलाब के उपर गिरि पर्‍यो, मरि गयो। सो वह तेली रोवन लाग्यो। तब रामदास उह तेली सों पूछें, तू क्यों रोवत है ? तब वह तेली ने कही, मेरो बैल पानी पीके अब ही मरि गयो। तब रामदास तो बरस दस के बालक, सो जाने नाहीं। सो उह तेली सों कहें, याको कहा मर्‍यो ? यह पर्‍यो है, याकों उठावो। तब वह तेली ने कही, अब यह कहा उठे। याको प्राण निकरि गयो। तब रामदास ने कही, याही प्रकार सब मरि जाइँगे ? तब तेली ने कही, यही दसा हैं, दोय दिन आगे पाछें। यह सुनत ही रामदास वहाँ तें भाजे, सो कछुक दिन में द्वारिका आये, श्रीरनछोड़जी के दरसन किये। तहाँ श्रीआचार्यजी सुबोधिनी की कथा कहत हते। सो रामदास तहाँ आये, कथा सुनकें बहोत प्रसन्न भये। सो मन में यह आई, श्रीआचार्यजी के संग रहिके कछुक दिन इनकी कथा सुनियें। इनके सेवक होऊं तो आछौ। पाछे आप कथा कहि चुके तब रामदास दंडवत् करि विनती करी, महाराज ! मोकों सरन लेउ। पास राखो तो कछुक दिन में आपुके श्रीमुख की कथा सुनों। तब श्रीआचार्यजी कहैं, तू कौन है ? कहाँ तें आयो ? तब रामदास ने सगरी बात कही। मैं राजनगर में रहत हों, साँचोरा को बेटा हूँ। तहाँ तलाब पर एक बैल तेली को मर्‍यो, सो देखिके वैराग्य आयो है। सो उठि भाज्यो, इहाँ आपको

दरसन भयौ। तब श्रीआचार्यजी विचारे, जो–जीव तो दैवी है, परन्तु अवस्था छोटी है। जो–याकों पास न राखेंगे, तो संसार में दु:संग हैं, कहूं खराब होई जायगो। तातें कछुक दिन संग राखि, याकों दृढ़ वैराग्य होइ तब छोड़नो। यह बिचारि कें रामदास सों कहें, जा, न्हाइ आउ। सो रामदास न्हाइ आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाए, निवेदन कराए, महाप्रसाद लिवाए, पास राख्यो। सो कछुक दिन रहिके श्रीआचार्यजी द्वारिका तें पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे। सो रामदास संग चले। सगरी रसोई की परचारगी करें। और टहेल छोटी मोटी सब करें। जो–श्रीआचार्यजी रामदास की परीक्षा लेन अर्थ कबहूँ थोरो घरें, कबहूँ अकेली रोटी धरें। परन्तु ए भागि मानि महाप्रसाद लेई। मनमें यह कबहूँ नाहीं लाये, जो–आज हमकों यह नाहीं धरें। तब श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न भये, सो सगरी सामग्री धरते। और मारग में जहाँ काँटो आवतो तहाँ रामदास मारग में बेगे बेगे सँभारत जाइ। सो एक दिन रामदास के पाँव में काँटो बड़ो लग्यो। सो रामदास मनमें बिचार्‍यो, मैं अपने पांव में काँटो काढ़न के लिये बैठि रहूँगो तो श्रीआचार्यजी मेरे लिये ठाडे होइ रहें। सो आछो नाहीं, मेरो धर्म जाई। और बिचारे, जो–और आगे आगे पधारेंगे तो (हू) मारग में काँटो बहुत है, कहूँ श्रीआचार्यजी के चरणारविंद में लागें तोऊ मेरो धर्म जाई। यह बिचारिके अपने पग को काँटो न काढ़े। मारग संभारत चले ! तब थोरी सी दूरि जाय श्रीआचार्यजी ठाड़े रहे, कहैं, रामदास तू अपने पग को काँटो काढ़ि ले। और तेरे उपर मैं बहुत प्रसन्न हों, जो–चाहें सो मांगि। तब रामदास कहें, महाराज ! आपु की सरनि मोकों मिली, अब यासों अधिक कहा है ? तातें यह मोकों कृपा करि कें दीजिये, जो–आपको आश्रय सदा दृढ़ रहै, और को न होई। तब श्रीआचार्यजी बहुत प्रसन्न होइकै कहें, ऐसे ही होयगो। तू सगरो माँगे। परन्तु मैं प्रसन्न हों, तू काँटा काढि ले, मैं ठाड़ो हूँ। तोकों अपराध कबहू न लागेगो। तब रामदास ने काँटा काढ़्यो। या प्रकार बरस दस श्रीआचार्यजी के संग सेवा किये। परन्तु प्रीति सदा एक रस रही। ऐसे भगवदीय कृपापात्र हैं। पाछें दक्षिण में श्रीआचार्यजी दूसरी पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे। तहाँ एक ब्राह्मण ने एक श्रीठाकुरजी का स्वरूप भेंट कियो, और कह्यो, मोसों पूजा नाहीं होत। तब श्रीआचार्यजी उह स्वरूप पास राखे। कछुक दिन सेवा किये। पाछे दक्षिण में एक गाम के बाहिर आइ उतरे। तब कृष्णदास सों कहे, जो–जाउ, गाम में तें सीधो सामग्री ले आवो। और एक सुथार सों बिना खुंटी की पादुका बनवाय ले आवो। सो रामदास सीधो सामग्री ले आये। तब श्रीआचार्यजी रसोई करि भोग धरि आपु अरोगि के रामदास सों कहें, महाप्रसाद ले। तब रामदास महाप्रसाद ले श्रीआचार्यजी के पास आये।

वार्ता – प्रसंग १ – सो श्रीआचार्यजीनें, उह ब्राह्मण ने ठाकुर भेंट कियो हो, सो स्वरूप आप पंचामृत स्नान कराई

रामदास के माथे पधराये । श्रीठाकुरजी को नाम ''नटुवा गोपालजी'' धर्‍यो । और उह पादुका के उपर चरणारविंद धरि रामदास के माथे पधराये ।

भावप्रकाश – काहेतें, श्रीआचार्यजी तो पादुका पहिरतें नहीं, नांगे पाँइन चलते । पृथ्वी पावन करिवे के लिये । पृथ्वी को मनोर्थ पूर्ण करणार्थ । पादुकाजी, सेवा करणार्थ कृपा करिकैं देते । तातें श्रीआचार्यजी की पादुका में खूंटी नाहीं हैं ।

सो रामदास के माथे श्रीठाकुरजी पधराय के कहें, रामदास ! अब तुम भगवद् सेवा करो । जहाँ रहो तहाँ अब तुमकों डर नाहीं । भक्ति तुमकों भई । तब रामदास के मनमें तो यही, जो–सदा श्रीआचार्यजी के पास रहों । परंतु आज्ञा कैसे टारूं ? और जानें, जो–आप कहे सो करनो, याही में मेरो कल्याण है । यह विचारि कें दंडवत करि चले । सो विरह बहोत, बार–बार फिरिकें दरसन करि स्वरूप हृदय में धरि चले। और श्रीआचार्यजी को हृदय भरि आयो । जो–ऐसे वैष्णव सों वियोग होत है । परन्तु रामदास की स्त्री दैवी जीव, पतिव्रता है, सो घरमें दुःखी है, कुटुम्ब में मा–बाप के इहां । ताके उद्धार के लिये, श्रीआचार्यजी रामदास कों बिदा किये । सो रामदासजी तीन दिन लों श्रीठाकुरजी की सेवा, श्रीपादुकाजी की सेवा करे । भोग धरे सो गाय कों लिवाय दिये । श्रीआचार्यजी के वियोग को दुःख बहोत, सो प्रसाद लियो न गयो । सो चौथे दिन भोग धरि के पाछें सरावन लागे, तब श्रीआचार्यजी दरसन दैकें कहे, तू महाप्रसाद क्यों नाहीं लेत ? मैं तो तेरे पास ही हों, तातें महाप्रसाद लीजो । तब रामदास गाय को भाग काढ़ि महाप्रसाद लियो । सो या प्रकार विरक्त दसासों कबहूँ कहूँ रहे, कबहूँ कहूँ रहे एक ठिकाने न रहे ।

सो पृथ्वी परिक्रमा करत करत अपने गाम में राजनगर में आइ निकसे। सो रामदास के माई–बाप तो मरि गए हते। इनकी स्त्री माँ–बाप के घर हती। सो रामदास अपने घरमें आइ रहे। सो रामदास के ससुर नें जानी, जो–रामदास आये। तब बेटी सों कह्यो, जो–तेरो धनी आयो है, सो फेरि कहूँ जायगो, तो तू वाको न पावेगी। तातें तेरो मन होय तो धनी के साथ जा। तेरो मन होय तो हमारे घर रहि। तब बेटी ने कही, जो–मोकों मेरे धनी पास पहोंचाय आवो। और मोकों कछू नाहीं चाहिये। तब ससुर बेटी कों ले रामदास के घर करि चल्यो गयो। यह रामदास के पास आई, सो रामदास स्त्री कों अङ्गीकार न करे, बोले नाहीं। सो रामदास दिन दोय–चारि घर में रहे। पाछें द्वारिका कों उठि चले। तब रामदास की स्त्री रामदास के संग चली। सो रामदास संग आवन न देही, ईंटन सों मारे। परन्तु स्त्री पतिव्रता दूरि दूरि संग चलि आवे। रामदास की पातरि में जूठन बचे सो स्त्री खाइ, न बचे तो भूखी रहि जाइ। ऐसे करत मजलि चारि भई, तब श्रीरनछोड़जी ने रामदास सों कही, तू स्त्री कों अंगीकार क्यों नाहीं करत ? त्याग क्यों कियो ? तब रामदास श्रीरनछोड़जी सों कहो, जो–मैं तो विरक्त वैरागी हूँ। मेरे स्त्री को कहा काम है ? तब श्रीरनछोड़जी ने कही, विवाह काहे कों कियो ? और तू श्रीआचार्यजी को कृपापात्र सेवक होइ के ऐसी निठुरता तोकों न चहिये। और तू श्रीआचार्यजी को कृपापात्र सेवक है, तातें तोसों बहोत मै कहि सकत नाहीं। तातें स्त्री कों अङ्गीकार करि, या प्रकार श्रीरनछोड़जी रामदास सों कहै।

भावप्रकाश – ताको कारन यह, जो–स्त्री दैवी है। अङ्गीकार के लिये तो

अपने पासतें श्रीआचार्यजी विदा तुमकों किये, सो तू क्यों नाहीं करत ? और रामदास कों द्वारिका में श्रीआचार्यजी अंगीकार किये हैं। तातें द्वारिका चले हैं। श्रीरनछोड़जी के केवल दरसन निमित्त नाहीं चले। श्रीआचार्यजी को संबंध विचारि रामदास सगरे देस फिरत हैं। तातें श्रीरनछोड़जी की आज्ञा नाहीं, दंड नाहीं। तातें श्रीरनछोड़जी कहें, तू श्रीआचार्यजी को सेवक हैं। मैं तोसों कहि नाहीं सकत। श्रीआचार्यजी कहिवाए। तब मैं इतनो कह्यो तुमसों, सो स्त्री को अङ्गीकार करि।

तब मजलि जाइ उतरे। सो स्त्री कों पास बुलाय कहैं, तू गांठि देखत रहि, मैं उपरा बीनि लाऊं। तब स्त्री प्रसन्न भई, जो–आजु मोपर कृपा है। तब स्त्री ने कही, मैं ही उपरा बीनि लाऊं। तब रामदास ने कही यह स्त्री कों काम नाहीं, मैं बीनि लाऊंगो। तब उपरा लाइ रसोई करि श्रीठाकुरजी को भोग धरि, पाछे भोग सराई गाय को भाग काढ़ि एक पातर स्त्री कों धरे। एक अपनी धरे। महाप्रसाद दोऊ जने लिये। ऐसे करत द्वारिका आये, श्रीरनछोड़जी के दरसन किये। तब श्रीरनछोड़जी ने कही, तू स्त्री कों नाम देई तो जल सामग्री सिद्ध करें। रसोई की परचारगी करे। तब रामदास कहे, मैं नाम कैसे देऊं ? नाम श्रीआचार्यजी देई सो ठीक है। तब श्रीरनछोड़जी ने कही, मेरी आज्ञा है तू नाम दे। पाछें श्रीआचार्यजी पधारे, तब श्रीआचार्यजी पास नाम सुनैयो। और मैं तोसों कहत हों, सो श्रीआचार्यजी की आज्ञा तें, इच्छा बिना नाहीं कहत। तब रामदास स्त्री कों नाम सुनाये। पाछें स्त्री सों जल भरावन लागे, परचारगी रसोई की करावन लागे। पाछे द्वारिका तें चले। तब रामदासजी मनमें बिचारे, जो–अब स्त्री कों लिये लिये फिरनो उचित नाहीं। अब एक जगे बैठिकें भगवद् भजन करनो। यह बिचारि रामदास कछुक दिन में राजनगर अपने घर आये, भगवद् सेवा करन लागे।

पाछे कितनेक दिन में श्रीआचार्यजी राजनगर पधारे। तब रामदास आगे जाई दंडवत् करि, अपने घर पधराय लाये और बिनती करी, महाराज ! स्त्रीको नाम निवेदन कराइए। तब श्रीआचार्यजी कहें, तू स्त्री कों दियो है, फेरि अब काहे कों नाम देईवे की कहे हैं ? तब रामदास ने कही, महाराज ! मैं तो श्रीरनछोड़जी के कहेतें नाम दिये। और श्रीरनछोड़जी हू यह कहैं, पाछे श्रीआचार्यजी पास नाम दिवाईयो। सो आपकी इच्छा हती तातें श्रीरनछोड़जी द्वारा आप आज्ञा किये, तातें मैं नाम दियो। और आप की इच्छा न होई सो कार्य में कबहू न करूं। और स्त्री के अंगीकार करन के लिये तो आपु मोकों अपने पासतें बिदा किये। तातें यह स्त्री कों अंगीकार करिये। तब श्रीआचार्यजी रामदास के ऊपर प्रसन्न होईके नाम दें ब्रह्मसंबंध करायो। पाछे रामदास के घर पाक सामग्री करि श्रीठाकुरजी कों भोग धरे। पाछे आपु भोजन करि रामदास कों, रामदास की स्त्री कों जूठन धरी। पाछे रामदास कों आज्ञा किये, अब तू एक ठौर घर में बैठिकें दोऊ जने भगवद् सेवा करो। तब रामदास ने कही, महाराज ! यही मेरे मनमें हती, सो आपु आज्ञा दिये। पाछें श्रीआचार्यजी द्वारिका पधारे। रामदास स्त्री सहित भगवद् सेवा करि, अनोसर समें भगवद् वार्ता ग्रंथ को भाव स्त्री सो कहते। सो दोऊ जने भगवद् सेवा में मगन रहते। सो ये रामदास स्त्री सहित ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये

॥ वार्ता ॥३३॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गोविंद दूबे, सांचोरा, खेरालू ग्राम में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ए गोविंद दूबे द्वारिका लीला संबंधी हैं। सत्यभामा की सखी है। इनको नाम लीला में ''तनमध्या'' है। सो इनको स्वरूप सुन्दर बहोत है, कटि सिंहकीसी इनकी। सो श्रीठाकुरजी सत्यभामा के महल पधारे। तब यह सखी तन्मध्या श्रीठाकुरजी सों कहैं, मैं तुम्हारी दासी हों, कोई दिन मोसों मिलो। तब श्रीठाकुरजी मुसिकाइकें कहैं, सत्यभामा के आगें कैसे बने ? सो दूरितें सत्यभामा ने यह बात सुनी। सो क्रोध करिकें शाप दिये, जो–तू हमारी बराबरि करी, तातें भूमि पर गिरो। सो ए लीलातें गिरी, अनेक जन्म पाये। सो अब सांचोरा के घर जन्में। सो बरस पंद्रह के भये। तब माता पिता सों कहै, कोई तीर्थ करो तो आछो है। तब गोविंद दूबे के मां बाप नें कही, जो–बेटा ! तू अब ही तें तीरथ को मन करत है। जो–तू वैरागी होइगो? हमारो तो मन घर छोड़िके कहूं जाईवे को होत नाहीं। घरमें खानपान को सुख है। तब गोविंद दूबे कहै, जो–मैं तो वैरागी होउंगो। तातें मेरो ब्याह भूलिके मत करियो। और तुम सदा घर को काम करत मरोगे, यह मोकों जानि परी। सो मैं तो तीरथ जाऊंगो। तब माता पिता ने कही हम वृद्ध है, हमारे पीछे तुम्हारो मन होई तहाँ जैयो अब या समय तो हमारी टहल करो, रक्षा करो तो आछो। तब गोविंद दुबे ने कही, तुम यह बात कही सो तो साँच, परन्तु काल की कछू खबरि परत नाहीं। कदाचित मैं मरि जाऊं, तब मेरो जन्म तो बिगर्‍यो। तब तुम्हारी टहल कौन करेगो ? तातें श्रीठाकुरजी सबकी रक्षा करत हैं। जीवकी कहा सामर्थ्य है ? तातें मैं तो द्वारिका श्रीरनछोड़जी के दरसन तो करि आऊं। तब माता पिता ने कही, हम तोसों बातन में जीते नाहीं, तुम्हारो मन होइ सो करो। तब गोविंद दूबे द्वारिका आये। श्रीरनछोड़जी के दरसन करि बहोत सुख मनमें पायो। सो वर्ष तीन द्वारिका में रहे। और माता पिता घर में देह छोडी। सो खबर गोविंद दूबे सुनकें मनकों खेद कियो। जो–माता–पिता कोई तीरथ न किये। पाछें गोविंद दूबे के मनमें यह आई, जो माता–पिता को गया–श्राद्ध तो करि आऊं। सो श्रीरनछोड़जी के दरसन करिके चले, सो गया में आइ श्राद्ध किये। पाछें घर कों चले। सो गयातें काशी आये, तब मनिकर्णिका पर स्नान करि संध्यावंदन करत हते, ता समें श्रीआचार्यजी सेट पुरुषोत्तम के घर सो मनिकर्णिका स्नान को पधारे। तब गोविंद दुबे श्रीआर्चाजी को दरसन कियो। तब यह जान्यो, जो–ये बड़े पंडित हैं। तब गोविंद दूबे के मनमें यह आई, जो–मैं इनके पास कछू पढूं। सो श्रीआचार्यजी स्नान करि वंदन किये। तब गोविंद दूबे आई श्रीआचार्यजी कों बिनती करी, महाराज ! आपु बड़े पंडित हो। सो मोकों कछू पढ़ावोगे ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, बहोत विद्या तो तुम्हारे भाग्य में नाहीं। मन लगाई के पढ़ो तो

अक्षर ज्ञान होइगो, पाछें पोथी पाठ बाँचि लेऊंगे। तब गोविंद दूबे ने कही, महाराज! पोथी पाठई सही, जितनो आवे तितनोई सही। गीता भागवत तो बाँचू। तब श्रीआचार्यजी कहें तीसरे पहर डेरा पर आईयो। पाछें गोविंद दूबे ने घर जाई एक व्याकरण की पोथी एक ब्राह्मण सो माँगी। जो-मैं पढ़िके तुमकों देऊंगो। तब उह ब्राह्मण ने कही, तुम ही राखो, पढ़ो। पाछे श्रीआचार्यजी सेठ पुरुषोत्तमदास के घर पधारे। सामग्री करि भोग धरि भोजन किये। इहां गोविंद दूबे रोटी खाई तीसरे पहर श्रीआचार्यजी पास व्याकरण की पोथी लैके आये। नमस्कार करि बैठे। तब गोविंद दूबे ने व्याकरण की पुस्तक निकासें। तब श्रीआचार्यजीने कही, व्याकरण कहाँ ताँई पढ़ेगो ? तोकों गीता पढ़ाऊंगो। सो गीता के पढ़े व्याकरण आपही आइ जायगो। तब गोविंद दूबे ने कही, महाराज ! व्याकरण पढ़े बिना गीता कैसे खुलेगी ? जगत में तो रीति है, व्याकरण पढ़े तब कछू अक्षर को ज्ञान होय, तब शास्त्र देखें। तब श्रीआचार्यजी कहें, हम कहैं तैसे तू करतो सही। तब गोविंद दूबे ने कही, महाराज ! मेरे पास तो गीता की पुस्तक नाही है। तब श्रीआचार्यजी पुस्तक निकारि एक श्लोक गीता को पढाये। पाछे कहें, हमारी आज्ञा है, सगरी गीता पाठ करि। तब गोविंद दूबे सगरी गीता अष्टादश अध्याय पाठ करि गये। तब श्रीआचार्यजी एक श्लोक गीता के अर्थ करि कहैं, तू हू अर्थ करि तब दूबे एक श्लोक कौ अर्थ कियो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, मेरी आज्ञा है, सगरी गीता को अर्थ करि जा। तब सगरी गीता को श्लोकार्थ करि गये। इतने में प्रहर रात्रि गई। तब श्रीआचार्यजी कहैं, अब तू जा, व्याकरण साधि लीजो। गीता, भवन श्लोकार्थ तोकों आय चुक्यो, आगें तेरे भाग्य में नाहीं। तब गोविंद दूबे उह ब्राह्मन के घर आये, जासों व्याकरण लाये हते। सो व्याकरण सब लगाय लिये। पाछें अर्द्ध रात्रि को सोये। तब गोविंद दूबे मन में बिचारी, जो-श्रीआचार्यजी ईश्वर हैं। जो-एक बार एक श्लोक गीता को पढायो तामें व्याकरण हू आयो, गीता हू। श्लोकार्थ को ज्ञान भयो। सो यह जीवकी सामर्थ्य नाहीं। तातें इनको सेवक होऊँ तो आछौ।

तब प्रातःकाल न्हाइकै, श्रीआचार्यजी कों आइ दंडौत् कियो, तब बिनती कीनी, जो-महाराज ! मोकों सरन लीजिये, नाम सुनाइये। तब श्रीआचार्यजी कहे, तुम हूँ तो ब्राह्मन हो, हम हूँ ब्राह्मन हैं। सो सेवक क्यों होत हो ? तब गोविंद दूबे ने बिनती कीनी, जो-महाराज ! हम तो जीव हैं। सो आपके स्वरूप कों कहा जाने ? आपु कृपा करिके जनावें तब जाने। पहेलें तो पंडित ब्राह्मन आपकूं जानत हते। परन्तु अब तो हम यह जानें, जो-आपु ईश्वर हो। जो-एक बार एक श्लोक गीता के पढाये, तामें मोकों सगरी गीता को श्लोकार्थ ज्ञान भयो। तातें कृपा करिके सेवक करिये। हम तो अज्ञानी जीव हैं। आपु हमारे अपराध क्षमा करो। तब श्रीआचार्यजी

कहैं, गङ्गाजी स्नान कों चलेंगे तहाँ तुम कों नाम सुनावेंगे। पाछें आप गङ्गाजी पधारे, गोविंद दूबे कों गङ्गाजी स्नान कराई नाम निवेदन कराए। तब गोविंद दूबे कहैं, अब मोकों कहा आज्ञा है ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, भगवद् सेवा करो। तब गोविंद दूबे श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज ! मेरे पिता के श्रीठाकुरजी हैं, सो हमारी ज्ञाति के ब्राह्मन के घर हैं। सो उनकी सेवा कैसे करों ? तब श्रीआचार्यजी ने आज्ञा दीनी, जो-अपने घर में ठाकुर कों लाई पञ्चामृत स्नान कराई भगवत् सेवा करियो। तब गोविंद दूबे श्रीआचार्यजी सों बिदा होय के कछुक दिन में घर आये। सो वह ब्राह्मन सों ठाकुरजी ले अपने घर पंचामृत स्नान कराई सेवा करन लागे। परन्तु भगवद् सेवा में मन लागे नाहीं, चित्त में उद्वेग रहे। और श्रीआचार्यजी ने यह आज्ञा दीनी, जो-श्रीठाकुरजी कों तू पंचामृत न्हवाई लीजो, सों यातें, जो-गोविंद दूबे ब्रजलीला संबंधी नाहीं है। द्वारिका की राजलीला संबंधी सत्यभामा की सखी है। तहाँ इनकी प्राप्ति है। तातें आप पंचामृत स्नान नाहीं कराये। पाछें श्रीआचार्यजी अड़ेल पधारे। सो एक वैष्णव अड़ेल तें गुजरात गयो। गोविंद दूबे के घर उतर्यो। तब गोविंद दूबे नें श्रीआचार्यजी के कुसल समाचारि पूछे। तब उह वैष्णव ने कही, कासी तें अडेल पधारे हैं। तहाँ कछुक दिन बिराजेंगे। पाछें पृथ्वी परिक्रमा कों पधारेंगे, ऐसे मैं सुनी है। सो तुम सों कह्यो। पाछें आपकी इच्छा। यह कहि उह वैष्णव दूसरे दिन द्वारिका गयो।

वार्ता - प्रसंग १ - सो गोविंद दूबे घर में सेवा करें, परन्तु मन में बहोत विग्रह रहै। सो सेवा में चित्त लागे नाहीं। तब गोविंद दूबे एक पत्र श्रीआचार्यजी कों लिखे, महाराज ! मेरे मन में बहोत विग्रह रहत है। भगवत्सेवा में चित्त लागत नाहीं, सो मैं कहा करूं ? सो पत्र श्रीआचार्यजी पास आयो, सो आपु बांचि के ''नवरत्न'' ग्रन्थ करि लिखि पठाये। और लिखें, यह ''नवरत्न'' ग्रन्थ के पाठ किये तें मेरे मनकी विग्रहता मिटि जायगी। सो पत्र श्रीआचार्यजी को गोविंद दूबे के पास आयो। तब गोविंद दूबे प्रसन्न होइकें ''नवरत्न'' ग्रन्थ को पाठ करन लागे। सो पाठ करत श्रीआचार्यजी की कृपा तें मनकी व्यग्रता चिंता सब मिटि गई। मन भगवद् सेवा करन में लागे।

भावप्रकाश – सो गोविंद दुबे के मन में विग्रहता भई, ताको अभिप्राय यह, जो गोविन्द दूबे जीव तो द्वारिका लीला संबंधी, और सेवा भावना ब्रज की करे। सो मन लागे नाहीं। न राजलीला में दृढ़ता होई, न ब्रजलीला में। सो अनेक साधन में मन दौरे, जो–तीर्थ करूं, के व्रत कोई करूं, कोई जप करूं ? इत्यादि मन भटके। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु ''नवरत्न'' ग्रन्थ लिखि पठाये, तू चिंता मति करे। चित्त की उद्वेगता है, यह प्रभु की लीला जानि, श्रीठाकुर में ते मन और ठौर जाय सोउ भगवद् इच्छा मानि, चिन्ता मति करियो। जितनी बने तितनी सेवा करियो। तब गोविन्द दूबे को मन स्थिर ह्वै गयो। जहाँ मन लौकिक वैदिक में जाइ तो भगवद् इच्छा माने। श्री रनछोड़जी में मन बहोत जाई सो भगवद् इच्ओछा मानें। उहाँ की लीला में मग्न रहै। काहेतें ? शास्त्रपुराण अनेक उपाई प्रभु मिलन के कहे हैं। जीवकों मिस मात्र मार्ग दिखाये, जो–जहाँ को अधिकारी है वामें वाको मन स्वतः सिद्ध लागत है। तातें जैसे मनुष्य, गेल चलिवे वारे कों दस गाम के मार्ग बतावें, परन्तु जाकों जा गाम जानों होई सोइ गाम जात है। तैसे ही कोई भगवदीय द्वारा, कोई गुरु द्वारा, कोई ईश्वर द्वारा, जैसो अधिकारी तैसो संग पाये, उही मार्ग में भाव वाको दृढ होत है। सो गोविन्द दूबे को श्रीरनछोड़जी में दृढ़ भाव भयो, जो–आगे वरनन करत हैं।

वार्ता – प्रसंग २ – एक समें श्रीआचार्यजी द्वारिका अड़ेल तें पधारे। तब गुजरात होइ कें पधारे। सो गोविंद दूबे, जगन्नाथ जोसी आदि पांच–सात वैष्णव संग चले। सो द्वारिका में श्रीआचार्यजी आई पहोंचे। तब गोविन्द दूबे ने श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, जो–महाराज ! कछू कथा को प्रसंग चलाइये, तो बहोत आछो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, जो–बहोत आछो। परन्तु अब ही तो मोकों अवकास नाहीं है। अवकास होइगो तब कहूंगो।

भावप्रकाश – ताको अर्थ यह, जो–तू ब्रजलीला संबंधी नाहीं है। तातें कोई ब्रजलीला संबंधी बिनती करे तो कहूँ। तेरे आगे सुख न होइगो। यह अभिप्राय ते आपु कहैं, मोकों अवकास नाहीं है।

तब गोविन्द दूबे ने कही, महाराज ! थोरी कहिये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु पुस्तक खोलि कथा को आरम्भ किये।

इतने में श्री रनछोड़जी आइ गोविन्द दूबे सों वार्ता करन लागे। सो गोविन्द दूबे श्रीरनछोड़जी सों वार्ता करत मगन है गये। यह न ज्ञान रह्यो, जो – श्रीआचार्यजी कथा कहत हैं। मैं वार्ता कैसे करूँ ? तब श्रीआचार्यजी गोविन्द दूबे सों कहें, पुस्तक खुलाइ कें वार्ता कोनसों करत हो ? पाछें श्रीआचार्यजी पुस्तक परतें दृष्टि फेरि कें देखे तो श्रीरनछोड़जी सों गोविन्द दूबे वार्ता करत हैं। तब श्रीआचार्यजी पुस्तक बांधिकें आपु गोविन्द दूबे उपर अप्रसन्न होइ कें पौढ़े। सो प्रातःकाल उठिकें आपु जब रसोई करि, भोग धरि भोजन किये। पाछें अपने खवास कृष्णदास मेघन सों कही, जो–आजु पाछें हमारी थार को महाप्रसाद काहू वैष्णव कों मति दीजो। दामोदरदास हरसानी और तुम लीजो। सो पहले नित्यनेम सों श्रीआचार्यजी की थार को महाप्रसाद वैष्णव ले, पाछें अपने हाथ को लेते। सो खवास ने ऐसे ही कियो। दामोदरदास, जिनसो दमला कहते, सो और कृष्णदास लिये। और काहू कों न दिये। सो वा दिन सगरे वैष्णव उपवास किये, भूखे रहे। पाछें दूसरे दिन श्रीआचार्यजी श्री रनछोड़जी के दरसन कों पधारे। तब श्रीरनछोड़जी ने कही, काल्हि आपु सगरे वैष्णव कों महाप्रसाद नाहीं दिये, सो सगरे वैष्णव भूखे रहै। तातें जैसे कृपा करिकें आपु सब वैष्णवन कों थार को महाप्रसाद देत हते तैसेइ दिया करो।

भावप्रकाश – याको कारन यह, जो–श्रीमुख की कथा सुनेगो तो ब्रजलीला में मग्न होइ जाइगो। पाछें मेरे हाथ आयबे को नाहीं। तातें गोविन्द दूबे कों वार्ता में लगाई कथा सुनन न दिये। और जो कोई कथा वार्ता करे ता समें, जो–कोई बात करे तो जाको मन कथा में होई वाके मन में बड़ो दुःख होई। जैसे सुन्दर, मधुर भोजन करत कंकर दाँत नीचे आवें दुःख होई। तेसेई कथा में कोई और के बोले दुःख होई।

तब श्रीआचार्यजी अप्रसन्न भये। रसाभाव भयो। आपुकों रस उमड्यो हतो सो अन्तर्धान है गयो। तातें आप पुस्तक बांधि पोढ़ि रहे। अथवा दूसरो अभिप्राय यह है, जो–श्रीआचार्यजी की कथा में श्रीरनछोड़जी विघन कैसें करि सकें ? सो साक्षात् पुरुषोत्तम श्रीगोवर्द्धन विचारे, जो–आप रस में मग्न भये हैं, सो मेरी अनेक प्रकार सों भक्तन संग लीला हैं, सो आवेस में कहेंगे। और आगे, श्रोता राजलीला को अधिकारी है। यह ठीक नाहीं। तातें श्रीगोवर्द्धनधर श्रीरनछोड़जी कों प्रेरणा करि गोविन्द दुबे सों बात कराई। रस गोप्य करि दियो। तातें दूसरे दिन श्रीरनछोड़जी ने श्रीआचार्यजी सों कही, आपु वैष्णव पर अप्रसन्न काहै कों भये ? जो–थार को महाप्रसाद न दिये। यह सगरो काम श्री गोवर्द्धनाथजी की इच्छा तें भयो है। मैं हूँ नाहिं कियो। तातें आपु जैसे नित्य वैष्णव कों थार को महाप्रसाद देते तेसे दिया करो।

तब श्रीआचार्यजी डेरा पर आई, सब वैष्णव सों पूछे जो–तुम काल्हि महाप्रसाद क्यों नाहीं लियो ? तब सगरे वैष्णवन ने बिनती करी, महाराज ! काल्हि थार को महाप्रसाद नाहीं पायो, तातें नाहीं प्रसाद लियो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, थार को प्रसाद तो देतो नाहीं, परन्तु तुम्हारी सिपारस बड़ी ठौर तें भइ, तातें देऊँगो।

भावप्रकाश– याको अर्थ यह, जो–तुम्हारो दोष नाहीं है। यह काम सब प्रभु की ओरतें भयो, तातें महाप्रसाद देऊँगो।

तब सगरे वैष्णवन ने बिनती करी, महाराज ! हम आपुके चरणारविंद सों लागे हैं। हमारो भलो होइगो, सो आपु करोगे। तब श्रीआचार्यजी अपने खवास को आज्ञा दिये जैसे नित्य थार को महाप्रसाद सबकों देते तेसे दियो करियो। तब खवास ने महाप्रसाद दियो। तब सगरे वैष्णव महाप्रसाद लियो। पाछें कछुक दिन द्वारिका में रहि, पाछें श्रीरनछोड़जी सों बिदा होइ अड़ेल पधारे। तब सगरे वैष्णव अड़ेल तांई संग आये। पाछें सगरे वैष्णव बिदा होई अड़ेलतें श्रीआचार्यजी कों दंडौत करि अपने अपने घर आये। तब गोविन्द दूबे अपने घर खेरालू में आये।

भावप्रकाश – सो श्रीरनछोड़जी के कहेतें महाप्रसाद दिये, परन्तु गोविन्द दूबे संग रहै ? तहाँ तांई कोई कथा न कहै। सो अधिकारी बिना वार्ता को रस न होई। यह जताये।

वार्ता – प्रसंग ३ – और एक समें गोविन्द दूबे मीराबाई के घर गये। सो मीराबाई सों भगवद् वार्ता करत कछुक दिन उहाँ अटके। सो यह बात श्रीगुसांईजी ने सुनी, जो–श्रीआचार्यजी के सेवक गोविन्द दूबे मीराबाई के पास हैं, वार्ता चरचा करत हैं। तब श्रीगुसांईजी ने एक श्लोक लिखिकें ब्रजवासी कों दिये। और कहें, मीराबाई के घर गोविन्द दूबे हैं, तिनको यह कागद दे आऊ। तामें एक यह श्लोक लिखें –

भगवत्पदपद्मपरागयुतो न हि युक्ततरं मरणेऽपि तराम्।
इताराश्रयणं गजराजगतो न हि रासभयप्युरसीकुरुते॥११॥

यामें यह लिखें, जो–हाथी की असवारी करी, सो फेरि गदहा पर असवारी न करें, प्राण जाई तहां तांई। तेसे, जो–कोई भगवान् के पदकमल के पराग को आस्वादन करिकें इतराश्रय, और को आश्रय, अन्य रसकों कबहूँ न चाखें। मरन पर्यंत दुःख सहें। परन्तु और रस ग्रहण न करें।

भावप्रकाश – यामें यह जताये, जो–श्रीआचार्यजी को सेवक तू होइ, और अन्यमार्गीय मीराबाई के इहाँ तू भगवद् वार्ता में अटक्यो ? सो या प्रकार हाथी की असवारी छोड़ि गदहा की असवारी है।

सो यह कागद ब्रजवासी ने गोविंद दूबे के हाथ में दियो। ता समें गोविन्द दूबे तलाब के उपर गाम बाहिर संध्यावंदन करत हते। सो तहां कागद बांचि मीराबाई के इहां तें अपनों खड़िया वस्त्र ले चले। मीराबाई ने बहोत समाधान कीनो, परन्तु बोले नाहीं, उठि चले, सो श्रीगुसांईजी पास आये, दंडोत् किये। तब

श्रीगुसांईजी कहें, अपने मार्ग की वार्ता अन्यमार्गीय के आगे करनो नाहीं। या प्रकार समुझाये। पाछें गोविन्द दुबे श्रीगुसांईजी तें बिदा होइ घर आये।

भावप्रकाश – सो यामें यह जताये, जो–गोविन्द दूबे को मन जहाँ तहाँ लगि जातो। और श्रीगुसांईजी गोविन्द दूबे को सिक्षा यातें दिये, जो–और वैष्णव इनकी देखादेखी संग कबहूँ करेंगे तो एतन्मार्ग को फल न होई। और गोविन्द दूबे कों तो ठीक है, जो–द्वारिका लीला संबंधी है। सो ज्ञान तो और कों है नाहीं। तातें श्रीगुसांईजी अपनें वैष्णव कों सावधान करन अर्थ कहे। सो यह पुष्टिमार्ग में श्रीआचार्यजी के संबंध बिना सगरे बाधक जाननों। जो–कोई हठि करें तो वासों कहनों नाहीं। यह सुद्ध पुष्टिमार्गी नाहीं है। याकों ब्रजलीला को अनुभव न होई। सो गोविन्द दूबे मर्यादा पुष्टि हैं। वैष्णव ३४॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, राजा दूबे, माधो दूबे, साँचोरा, मणुंद में रहते तिनकी वार्ता कौ भाव करत हैं –

भावप्रकाश – सो ये दोऊ भाई ललिताजी की सखी हैं। एक को नाम ''कुंजरी'' कुंजरचना में निपूण, सो राजा दूबे प्रगटें। दूसरी को नाम ''रसालिका''। जो–फल के रस में अलि, जो–भ्रमर लोभाय, तेसे लीला रस में मग्न रहते। सो रसालिका माधो दूबे को प्रागट्य हैं। ए दोऊ भाई एक साँचोरा के घर जन्में। सो इनको पिता बहोत साधू हतो। मर्यादा मार्ग की रीति सों श्रीठाकुरजी की पूजा करतो। सो इनके घर साधू, संत, वैरागी भूखौ जाई निकसे तो तिनकों भूखे जान न देतो। प्रीति सों राखतो। एकादसी को जागरन सदा करतो। सो राजा दूबे, माधो दूबे के माता–पिता मांदे भये। तब दोऊ बेटान सों कहें, अब हमकों या समें श्रीरनछोड़जी के दरसन करावो तो बहोत आछो। तब राजा दूबे, माधो दूबे, ये दोऊ डोली भाडे करि माता–पिता कों बैठारि, श्रीठाकुरजी कों संग ले चलें। सो श्रीरनछोड़जी के दरसन माता–पिता कों कराये। तब तहाँ कछुक दिनतें श्रीआचार्यजी द्वारिका में हते। सो उहाँ माता–पिता की देह छूटी। सो राजा दूबे, माधो दुबे, संस्कार किये, सो सूतक लाग्यो। सो डोला पर बेठे रहते। तब राजा दूबे, माधो दूबे, लोगन सों पूछे, इहां कहूँ कथा–वार्ता भगवद्–चर्चा होत होई तो तहाँ जैये। सूतक के दिन कटत नाहीं। तब एक ने कही, श्रीवल्लभाचार्यजी पृथ्वी–परिक्रमा करि इहाँ पधारे हैं, सो कथा बहोत सुन्दर कहत हैं। तहाँ तुम तीसरे प्रहर जैयो। तब राजा दूबे, माधो दूबे

वासो कहैं, हमकों आज तुम ले चलियो, फिर हम नित्य जायंगे। तब उनने कही, आछो। सो (वह) तीसरे प्रहर आई, राजा दूबे, माधो दूबे कों ले गयो। सो दोऊ भाई दूरिते दंडौत करि दूरि बैठें। तब श्रीआचार्यजी कहें, आगें आवो। तब दोऊ भाई कहैं, महाराज हमकों सूतक है, ताते दूरि बैठे हैं। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम दोऊ भाई सदा सुद्ध हो। सो हमारे आगे आइ बैठो। और संदेह होई सो पूछियो।

तब दोऊ भाई प्रसन्न होई आगे आइ बैठे। तब श्रीआचार्यजी नंदमहोत्सव को वर्णन श्रीभागवत दशमस्कंध के पांचमें अध्याय को वर्णन किये। सो नंदालय की लीला को प्रगट अनुभव दोऊ भाईन कों कराय दिये। पाछें सब कथा होय चुकी तब दोऊ दण्डौत करिकें कहें, महाराज ! कहा करिये ? सूतक है, नाहीं तो बिनती करते। अब हमारो जन्म सुफल भयो। जो–आपके दरशन पाये। तब श्रीआचार्यजी कहें, हम तिहारे मनकी बात जाने हैं। जो–तुम दोऊ हमारे हो, सूतक पाछें अङ्गीकार करेंगे। तहाँ तांई हम इहाँ हैं। तुमको अङ्गीकार करि, तुम्हारे सगरे मनोरथ पूर्ण करि, और ठौर जायगें। तुम चिन्ता फिकर मति करियो। अब अपने डेरा पर जाय काल्हि याही समें यहाँ अइयो। तब दोऊ भाई दण्डौत करि प्रसन्न होइ डेरा पे गये। सो सगरी रीति नंदालय की लीला को अनुभव आवेस रह्यो। पाछें सबेरे उठिकें दोऊ भाई आपुस में बतराये, जो–अब आपुन कृतार्थ भये। श्रीआचार्यजी साक्षात् पुरुषोत्तम हैं, जो–एक दिन की कथा में लीलारस को अनुभव कराये। पाछें याही भाँति सूतक के दिन नीठि–नीठि बिताये। ग्यारमें दिन न्हाइ के सुद्ध होई, श्रीआचार्यजी के पास बड़े सबेरे आई बिनती किये, महाराज ! हमको सरनि लीजिये। तब श्रीआचार्यजी दोऊ भाईन को फेरि न्हवाईके नाम सुनाए, ब्रह्मसंबंध कराए। पाछें श्रीआचार्यजी कहें, अब तुम भगवद् सेवा करो। तब राजा दूबे, माधो दूबे कहें महाराज ! हमारे पिता के ठाकुर हमारे पास हैं। पिता–माता पूजा मार्ग की रीति सों करते, सो इहां आय देह छोड़ी। हम पर आपकी कृपा भई, जा प्रकार आज्ञा करो ता प्रकार सेवा करें। तब श्रीआचार्यजी कहें, जाऊ डेरातें श्रीठाकुरजी ले आवो। तब माधो दूबे जाइके ठाकुरजी की झांपी ले आए। सो श्रीआचार्यजी श्रीठाकुरजी कों पञ्चामृत स्नान कराई राजा दूबे माधो दूबे के माथे पधराए। और आज्ञा किये, सब ठोरतें मन छुटाई निरोध करि भगवद् सेवा करियो। तब राजा दूबे माधो दूबे बिनती करी, जो–महाराज ! निरोध को स्वरूप कहा है ? तब श्रीआचार्यजी कहें, निरोध दोई प्रकार को। एक साधन दसा को, एक सिद्ध दसा को। साधन दसा के निरोध के लक्षन यह, जो–संसार लौकिक वैदिक मन में सुहाय नहीं। यह मनमें रहे, जो–कब भगवद् सेवा करूं ? कब कथा वार्ता करूं ? यामें रुचि उपजे। मन कछू लौकिक में

जाय तो, फेरि खेंचि सेवा में लगावे। यह जानें, जो–एक भगवान ही के आश्रय तें सब कार्य सिद्ध होत हैं। यह साधन दसा को निरोध और फल दसा को निरोध यह, जो– मन को स्वतः ही सिद्ध यही सुभाव परे, जो–श्रीठाकुरजी के स्वरूप के ध्यान बिना और ठौर जाय नाहीं। लौकिक वैदिक कार्य हू करे। परंतु मन श्रीठाकुरजी बिना और ठौर जाय नाहीं। यह फल दसा को निरोध। तिनकों यह संसार को दुःख सुख अनेक ताप हैं सो, लगे नाहीं। मन श्रीठाकुरजी और उनके लीला रस में मग्न रहै। यह निरोध को प्रकार है, तब राजा दूबे माधो दूबे बिनती किये, महाराजाधिराज! हमको तो दोई प्रकार को निरोध दुर्लभ है। तातें जैसे आपु हमकों संसार समुद्र में ते डूबते बांहि पकरि के सरनि लिये हैं, यही प्रकार निरोध को दान आपु करोगे तो हमकों कछु सिद्ध होइगो। और प्रकार हमारो तो सामर्थ नाहीं हैं। या प्रकार दोऊ भाई की दैन्यता, सरल स्वभाव, देखि के, दशमस्कंध (जाकों) निरोध स्कंध कहैं हैं, ताको आपु ''निरोध लक्षन'' ग्रंथ करि, दोऊ भाईन कों पाठ कराय कें कहें, तुम दोऊ भाईन कों निरोध सिद्ध होईगो। यह कहि अपनो चरणामृत दोऊ भाईन कों दिये। सो तत्काल दोऊ भाई को मन अलौकिक ह्वै गयो। लीला रस को अनुभव हॊंन लग्यो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, अब अपने घर जाय सेवा करो। जाकों निरोध भयो वाकों, बहुत बोलनो, देस फिरनो नाहीं। तातें घर जाऊं, दैवी जीव आवें तिनकों नाम दीजो। तुमकों तो निरोध सिद्ध भयो और जो–तुम्हारे संग मन लगाय के करेगो, ताहू को निरोध सिद्ध होयगो। तब राजा दूबे, माधो दूबे पास द्रव्य हतो सो श्रीआचार्यजी की भेट करि बिदा होई, द्वारिका तें चले। सो अपने गाम मणुंद में आए। घर में आइ दोई भाई भगवद् सेवा करन लागे। कछुक द्रव्य घर में हतो तामें निर्वाह करें। काहू सों बहोत बोले नाहीं। जो–आवे तापर दया करि के खानपान को समाधान करें। भगवद् वार्ता करि दोऊ भाई श्रीठाकुरजी की लीला रस में मग्न रहते।

वार्ता – प्रसंग १ – सो जा गाम में राजा दूबे, माधो दूबे रहते। ता गाम में दोई भाई सांचोरा ब्राह्मण और रहते। सो बड़े भाई को नाम रामजी और छोटे भाई को नाम हरिकृष्ण। तामें बड़ो भाई रामजी पढ्यो हतो। सो गाम में पटेल के आगे चोंतरा पर बैठिके कथा कहतो। और छोटो भाई मूरख हतो, सो बड़े भाई के खेत की रखवारी करतो। सो बड़ो भाई रामजी और गाम कार्यार्थ गयो, तब कथा रही। तब एक दिन बरसा बहोत

भई। सीतकाल के दिन हते। सो छोटो भाई सांझ कों खेत पर तें आयो। तब भावज ने कह्यो, रोटी खायगो ? तब उह देवर ने कही, मोकों सीत बहोत लागत है, तू मोकों रोटी ताती करि देइ तो मैं जेंऊँ। तब भावज ने कह्यो, खानो होइ तो खा, नातर मैं सोइ रहोंगी। तू कहा गाम के पटेल के चोंतरा पर कथा बांचेगो, के दादे को ग्रास बहोत दिन को अटक्यो है, सो फेरेगो ? जो-हों ताकों ताती रोटि करि देऊं ? खानो होइ तो खा, नांतरु सोइ रहि, मेरे आगे तें उठि जाऊं। ये बचन भावज के सुनि कें मनमें बहोत दुःख भयो। जैसे मन, हृदय में, बान लागें। सो तत्काल घर में सों बाहर निकस्यो। तब मन में बिचार कियो, जो-अब देह को त्याग करनो। के कहूँ यह गाम छोड़ के कोई और देस कों जानो। फेरि मन में यह आई, जो-गाम में राजा दूबे, माधो दूबे महापुरुष हैं, उनकों नमस्कार करिके कहूँ जाऊं। सो राजा दूबे, माधो दूबे के घर आइ, दोऊ भाईन कों नमस्कार कियो और रोवन लाग्यो। तब दोऊ भाई कहें, तू कौन है ? पाछें पास आइ पहचानि कें कहें, तू तो फलाने को बेटा है, हमारी ज्ञाति हैं। तब उनने कही, मेरे दुःख को पार नाहीं है, अब मैं देह त्याग करूंगो। सो तुमकों नमस्कार करन आयो हूँ। तब माधो दूबे ने कही, श्रीठाकुरजी सर्व सामर्थ युक्त हैं, वे दुःख दूरि करेंगे, तातें तू अपनो दुःख तो कहि। तब इन सगरे समाचार कहे। जो-मोकों भावज ने ऐसे बचन कहे, सो हृदय (में) खूंचत हैं। सो मैं तिहारी सरनि हों। मेरो दुःख दूरि करिये। सो तब दोऊ भाई वाको समाधान कियो, जो-श्रीठाकुरजी सब आछी करेंगे। पाछे वाकों महाप्रसाद लिवाये, कह्यो, अब सोइ

रह। पाछें प्रातःकाल भयो। तब माधो दूबे वाकों उठाइ के कहें, अब तू स्नान संध्या-वंदन करिके यहाँ अइयो। तब उह देह कृत्य करि स्नान संध्या करिकें आयो। तब माधो दूबे ने राजा दूबे सों कह्यो, अब यासों कहेनो होई सो कहो। तब राजा दूबे ने कही, तुम्हारी जीभ चली है, सो कछू कहोगे। ये झार लगाए हो। अपने ऐसे काहे कों करनों ? अनेक संसार में दुःखी सुखी हैं। तब माधो दूबे ने राजा दूबे सों कह्यो, तुम श्रीआचार्यजी के सेवक हो, सो यह बहोत दुःखी है, या पर कृपा करो। तब राजा दूबे कहे, तुम कहो तब माधो दूबे कहे, यह काम तुम्हारे आगे मोकों कहनो उचित नाहीं है। तब राजा दूबे कहे, हमारी आज्ञा है कहो ?

भावप्रकाश *–सो राजा दूबे कहें, झार लगायो है, ताको कारन यह, लीला संबंधी दैवी नाहीं है, कृपा करि उद्धार होइगो।*

तब माधो दूबे श्रीठाकुरजी के मन्दिर के द्वार आगे बैठाइकें, श्रीआचार्यजी को स्मरन करि अष्टाक्षर मंत्र को उपदेश किये। नाम दे पाछें अष्टाक्षर की माला जाप कराये। सो उह संस्कृत बोलन लाग्यो। तब माधो दूबे ने राजा दूबे सों कह्यो, आज्ञा होई तो याकों एक माला को जाप और कराऊं। तब राजा दूबे ने कही, अवस्य जाप और करावो। तब माधो दूबे ने एक माला अष्टाक्षर को और जाप कराये। तब वह श्रीभागवत पुराण शास्त्र सबके अर्थ कों जानन लाग्यो। तब माधो दूबे ने राजा दूबे सों कही, आज्ञा होइ तो एक जाप और कराऊं। तब राजा दूबे ने कही, यह इतनो ही पात्र है। आगे रस उछरेगो।

भावप्रकाश– नाहीं करी ताको अर्थ यह, जो–तीसरी माला जपावे तो

लीलारस को अनुभव होई। परन्तु लीला संबंधी नाहीं हैं। इतनो ही याकों बहोत है।

पाछें राजा दूबे ने माधो दूबे सों कही, जो–तुम अपने मन में यह मति लाइयो, जो–हमने याकों (ऐसो) कियो, तासों यह ऐसो भयो है। यह सब श्रीआचार्यजी की कृपा तें भयो है। हमारो तिहारो स्वरूप तो तुम जानत हों। तब माधो दूबे ने कही, मेरे कहा है ? कर्ता तो श्रीआचार्यजी हैं। पाछें वाकों राज–भोग आरती पाछें महाप्रसाद लिवाये। पाछें तीसरी प्रहर भयो तब माधो दूबे ने बासों कही, जाउ पटेल के चोंतरा पर कथा कहो, पोथी हमसों ले जाऊ। तब वह पोथी ले दोऊ भाइन को नमस्कार करि, पटेल के चोंतरा ऊपर बैठि कथा कहन लाग्यो। सो दोय–चारि पटेल देखिकें सगरे पटेल सों जाइ कहे, जो–भट्टजी कथा कहे हैं सो बेगे चलो। तब सगरे पटेल आये। सो इनको कहनो कृपा बलको, सो बहोत सुन्दर कथा कही। तब सगरे पटेलन कही, तुम कथा तो बहुत सुन्दर कहत हो, आगे क्यों न कहै ? तब इन कही, मेरो बड़ो भाई कहतो, तातें मैं नाहीं कहतो। तब सबन नें कही, अब तुमही कथा कह्यो करो। हमारे बड़े भागि हैं, सो ऐसो ब्राह्मन मिल्यो। पाछें सगरे पटेलन मिलिकें बिचार कियो, जो भट्टजी प्रथम कथा कहें, सो खाली हाथ जाई, सो आछो नाहीं। तब सगरे पटेलन भट्टजी की भली भांति पूजा करी। तब उह उठिकें माधो दूबे पास आइ, वह पूजा को द्रव्य आगे धरि बिनती करी, तुम मेरे गुरु हो, तुम्हारी कृपा तें पटेलन कें चोंतरा पें कथा कहि आयो, सगरे पटेल प्रसन्न भये। तब माधो दूबे ने कही, ऐसे आज पाछें मति बोलियो। हमारे तिहारे गुरु श्रीआचार्यजी हैं। हम तो उनकी आज्ञा तें नाम देत हैं। तातें यह सब द्रव्य उनको है। श्रीआचार्यजी पधारेंगे तब उनकी भेट करियो,

उनके सेवक हूजियो। तब इन कही, मैं कहां धरों, तुम आछो जानो सो करो। तब माधो दूबे पूजा को द्रव्य धरि राख्यो। सो ऐसे में जगन्नाथ जोसी और रामदास अड़ेल श्रीआचार्यजी के दरसन कों जात हते, तिनके संग वह द्रव्य श्रीआचार्यजी कों पठाई दियो। पाछें पटेल के चोंतरा पर नित्य कथा कहत हतो। सो कछुक दिन में बड़ो भाई आयो। तब यह आइ माधो दूबे सों कह्यो, जो–आज्ञा होय तो दादा को ग्रास बहोत दिन सों ग्राम में अटक्यो है, सो फेरिन कों जाऊं। तब माधो दूबे नें कही, अब तुम कार्य करोगे सो सिद्ध होइगों। श्रीआचार्यजी की कृपा हैं, तातें तुम जाऊ।

तब दोऊ भाइन सों आज्ञा ले नमस्कार करि वा गाम में गयो, उहां के रजपूत उठि के पांइन परे और कहें, हमारे बड़े भाग्य हैं, जो–तुम आये। पाछें इनकों सुन्दर ठौर रहने कों दिए। सीधा–सामग्री दे रसोई कराए। पाछें सगरे भेले भये, रात्री कों। तब इनकों बुलाय के कहें, कछू कथा सुनावो। तब एक श्लोक कहि के अर्थ सबन कों सुनाए। सो सगरे बहुत प्रसन्न भये। कही, भट्टजी बहोत योग्य हैं। पाछें कहे, पांच रात्री यहाँ रहो, पाछें तिहारी बिदा करेंगे। जो–सब मिलिकें, बिचार करन लागे, जो–भट्टजी की बिदा कहा करिये ? बहोत दिन में अपने प्रोहित को बेटा आयो है, इनको ग्रास बहोत दिन सों अटक्यो है, सो ब्राह्मन को ऋण आछो नाहीं। (तातें) सौ मन तो अन्न देऊ, और सौ रुपैया रोक देऊ, और इनको भूमि को कागद फेरि के लिख देऊ। या प्रकार सों, आगे को ऋण ब्राह्मन को अपने ऊपर है तासों छूटें। तब सबनने कही, बहोत आछो। पाछें एक

सौ रुपैया रोक दिये और सौ मन अन्न दिये। सब जने मिल कें। तब इन कही, अन्न मेरे घर पठाइ देऊ। तब गाड़ा पर लादिकें गाड़ा संग दिये। और फेरिकें नयो कागद लिख दिये, और कहें हम जमींदार हैं, सो बरस के बरस अपनो ग्रास ले जाइयो।

भावप्रकाश – काहेतें ? ब्राह्मन को रिन बहोत माथे बढ़े तब दियो न जाय।

पाछें वस्त्र नये दिये। एक गाय एक भैंस आछो दूध की संग दें मनुष्य संग करि दिये। सो लेकें सब अपने घर आए। सो अपने घरके द्वार पर आए। भावज कों पुकार्‍यो, जो–पटेल के चोंतरा पर कथा हू कहि आयो, और दादे को ग्रास हू फेरि ले आयो हूँ, अब द्वार खोलो। तब भावज ने किंवाड खोल्यो, इनकों तेज देखि कें चक्रित ह्वै रही। पाछें बड़े भाई देखे तो इनके मुख पर भगवत तेज बिराजत हैं। तब डरपि के कह्यो, भाई ! भीतर आवो। तब ये भावज कों नमस्कार करि के कहे, जो–तुमनें मोकों सिक्षा दीनी। सो श्रीठाकुरजी मेरो मनोर्थ पूर्ण कियो। पटेल के चोंतरा पर कथा हू कहि आयो, और दादे को ग्रास हू फेरि ले आयो। तब भाई, भोजाई दोऊ डरपे। जो–या पर कृपा भगवान् की भई है, जो–शाप देइ तो भस्म होइ जायंगे। तब भाई भौजाई ने कही, स्नान करो, कछु खाउ ! तब इन कही, राजा दूबे माधो दूबे कों नमस्कार करि आऊँ तब कछु करों। तब बड़े भाई ने कही, उनके पास पहले जाइवे को कहा कारन है ? तब इन कही, तुम तो मेरे स्वरूप कों जानत हो, यह सब कृपा तो उनही की भई है। मेरे में कहा है ? तब बड़ो भाई संग चल्यो, जो–मोपर कृपा करें तो आछो। सो दोऊ भाई आइ राजा दूबे, माधो दूबे कों नमस्कार किये। तब छोटो भाई सब प्रकार कह्यो,

सौ रुपया कपड़ा आगें धरें और कह्यो, सौ मन अन्न है सो राखो। तब माधो दूबे ने कही, अन्न कों बेचि के दाम करो, यह सब श्रीआचार्यजी को है। यामें हमारे तुम्हारो कहा है ? तब राजा दूबे ने माधो दूबे सों कही, जो–दूसरे भाई सों यह प्रकार मति कहियो। पाछें बड़े भाई ने बिनती करी, जो–जैसे मेरे छोटे भाई पर कृपा कीनी, तैसे मोहू पर करो। मैं तुम्हारी सरनि हों, तब माधो दूबे ने राजा दूबे सों कहीं, जो–यह बिनती करत है। तब राजा दूबे ने कही–जो हम तो तुमसों पहले ही कही हती, जो–झार मति उरझावो। तातें अब तुमकों करनो होइ सो याहू कों नाम मात्र सुनाइ देउ। तब बड़े भाई कों न्हवाइ के नाम सुनाये। पाछें अन्न बेचि के दाम किए। पाछें कछुक दिन में श्रीआचार्यजी द्वारिका पधारे। सो सिद्धपुर में रानाव्यास के घर उतरे। सो खबरि राजा दूबे, माधो दूबे पाई। सो दोऊ भाई कों संग ले, द्रव्य सगरो ले, सिद्धपुर आये। श्रीआचार्यजी को दण्डौत करि द्रव्य सगरो भेट करि दोऊ भाई की सगरी बात कही। पाछें बिनती करी, जो–महाराज ! ये दोऊ भाईन कों आपु नाम सुनाइये। तब श्रीआचार्यजी दोऊ भाई कों नाम सुनाये। पाछें आपु द्वारिका पधारे। (पाछें) राजा दूबे, माधो दूबे, दोऊ भाईन कों अपने संग लै घर आये। सो राजा दूबे, माधो दूबे के संग करि दोऊ भाई सांचोरा कृतार्थ भए। सो राजा दूबे माधो दूबे ऐसे भगवदीय हे। सो इनकी वार्ता कहां तांई कहिये।।। वार्ता ३५।।

भावप्रकाश – और राजा दूबे माधो दूबे के निरोध भयो। सो इनके हृदय को अलौकिक भाव है, लीला संबंधी सो कह्यो न जाई।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, उत्तमश्लोकदास साँचोरा ब्राह्मन, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

वार्ता – प्रसंग १ – सो ये उत्तमश्लोकदास श्रीनाथजी के सेवकन की रसोई करते। सो सबन कों आपु ही परोसते प्रीति सों। सो सगरे वैष्णव महतारि कहि बोलते। ये उत्तमश्लोकदास कों सेवकन के ऊपर ममत्व बहोत हतो। तातें श्रीगुसांईजी इन पर प्रसन्न बहुत रहते।

भावप्रकाश – सो उत्तमश्लोकदास, ईश्वर दूबे लीला में श्रीचन्द्रावलीजी की सखी हैं। सो सात्विक भाव इनमें बहुत है। श्रीचन्द्रावलीजी कों और सब सखीन कों प्रीति सों सामग्री अरोगावती। सो एक समें श्रीचन्द्रावलीजी श्रीठाकुरजी और श्रीस्वामिनीजी कों अपनी कुंज में पधराए। सो श्रीचन्द्रावलीजी अपने हाथ सों दोऊ स्वरूपन कों परोसत हती। सो ये दोऊ सखीन के मनमें यह गर्व भयो, जो–सगरी सखीन कों नित्य परोसत हैं, सो आजु दोऊ स्वरूप पधारे हैं। तिनहू कों (हम) परोसे तो आछो। सो श्रीचन्द्रावलीजी सों पूछे नाहीं। और दूसरो थार उठाई के चली। इतने में श्रीचन्द्रावलीजी आई कहे, कहां जात हो ? तब गर्व सों कहे, कहा हम न परोसें ? श्रीठाकुरजी कों। तब श्रीचन्द्रावलीजी कहे, इहां गर्व करे ताको काम नाहीं। भूमि पर गिरो। सो ये दोऊ भूमि पर अनेक जन्म पाए। लीला में इनको नाम सुशीला, एक को नाम मेंना। सो उत्तमश्लोकदास सुशीला को प्रागट्य और ईश्वर दूबे मेंना सखी को प्रागट्य। सो अब गुजरात में गोधरा में दोऊ सांचोरा के जन्में। सो एक कायस्थ की रसोई दोऊ जने करते। सो वह कायस्थ आगरे आयो, देसाधिपति पास। तब ये दोऊ जने आये। सो श्रीआचार्यजी आगरे पधारे हैं। सो राजघाट पर श्रीयमुनाजी के तीर संध्या वंदन करत हते। ता समें उत्तमश्लोकदास और ईश्वर दूबे श्रीयमुनाजी स्नान कों आये, सो न्हात हते। श्रीआचार्यजी संध्यावंदन करि के यह बचन कृष्णदास सों कहे, जो–ब्राह्मन होइ के शूद्र की टहेल करनो उचित नाहीं है। शूद्र ब्राह्मन की टहेल करे तो ठीक है। ऐसे श्री भागवत में कह्यो है। सो यह बात उत्तम श्लोकदास और ईश्वर दूबे सुनि कहैं, महाराज ! आप कहें सो साँच, परन्तु यह पेट के लिये शूद्र की चाकरी करत हैं, कहा करें और गुन तो हमारे में है नाहीं, पढे नाहीं है। तातें शूद्र की रसोई करि निर्वाह करत हैं। तब श्रीआचार्यजी कहें, हम तुम्हारे ऊपर नाहीं कहैं। हम तो अपने सेवकन सों बतरावत हैं। और ईश्वर सबको भरन

पोषन करत हैं। विश्वास ईश्वर पर चाहिये। तब दोऊ जने बिनती किये, महाराज! आप तो शास्त्र की बात कही, परन्तु इहां तो ऐसे हम हैं। सो आप हमकों सेवक करो। हमकों बतावो सो हम करें, जा प्रकार शूद्र की टहेल छूटे। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुमहू ब्राह्मन हो, योग्य हो। सेवक कैसे होउंगे? तब दोऊ जने कहें महाराज! हम ब्राह्मन काहे के हैं? ब्राह्मन को कर्म तो हम जानत नाहीं, तातें हमपे कृपा करो, सरनि लेऊ। जो-हमारी कछु बुद्धि उत्तम होई। तब श्रीवल्लभाचार्यजी कहें, आगे आवो। या प्रकार दोऊ जनें को बुलाई नाम निवेदन कराये। तब दोऊ भाई ने बिनती करी, अब हमकों आज्ञा करो, सो हम करें। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम अपने गाम जाइ माता-पिता सों बिदा होइ, गोवर्द्धन परवत पर आइयो, तहाँ श्री गोवर्द्धनधर की सेवा करियो। तब दोऊ मिलिकें उह कायस्थ सों लेखो करि, अपनो द्रव्य ले चले। तब उह कायस्थ ने बहोत राखन की कही, महिना हू बढ़ाय देबे की कही, परन्तु रहे नाहीं। तहांते चले, सो गोधरा अपने-अपने घर आये। सो माता-पिता सों कहें, हमकों आज्ञा देऊ तो ब्रज जाई। तब दोऊन के माता-पिता ने कही, कछु दिन रहो, हम हूं संग चलेंगे। सो माता-पिता के मन में यह, जो-ऐसे कहिकें पुत्र कों राखे। सो ऐसे बारह महिना बीते। तब दोऊन ने कही, माता-पिता सों, जो-तुम चलोगे? वर्ष दिन तो भयो। तब वे कहें, अब चलेंगे। ऐसे करत पाँच वर्ष बीतें। तब उत्तमश्लोकदास तो माता-पिता कों, और कों जताए बिना गोवर्द्धन उठि आये। श्रीनाथजी को दरसन करि श्रीगुसांईजी कों दंडवत् करि सगरी बात अपनी कही। तब श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धनधर की रसोई की सेवा दिये। सो सगरे सेवकन कों बहुत प्रीति सों परोसते। सो उत्तमश्लोकदास कों सगरे सेवक महतारी कहिकें बुलावते। वैष्णव ॥३६॥

सो ये श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे।

वार्ता ॥३६॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, ईश्वर दूबे साँचोरा ब्राह्मन, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं -

भावप्रकाश - इनको लीला को स्वरूप तो ऊपर कहे हैं। और आगरे में सेवक जा प्रकार भए हैं, सोउ ऊपर कहे हैं। उत्तमश्लोकदास आये, ताके छः महिना पीछे ईश्वर दूबे के माता-पिता ने देह छोड़ी। तब ईश्वर दूबे गिरिराज आइ, श्रीनाथजी

को दरसन करि, श्रीगुसांईजी कों दंडवत् करि, सगरो प्रकार कहें। जो-हम और उत्तमश्लोकदास संग सेवक भये हैं। और याही आज्ञा श्रीआचार्यजी की हैं, जो श्रीगोवर्द्धनधर की सेवा करियो। सो अब आज्ञा करो सो करें। तब श्रीगुसांईजी कहें, उत्तमश्लोकदास श्रीनाथजी की रसोई और सेवकन को परोसना करत हैं, सो तुम दोऊ बेगि मिलके सेवा करो। सो दोऊ सेवा करन लागे।

वार्ता – प्रसंग १ – पाछें कछुक दिन में उत्तमश्लोकदास की देह छूटी, तब श्रीगुसांईजी ईश्वर दुबे को नाम उत्तमश्लोकदास राखे। सो ये उत्तमश्लोकदास श्रीगोवर्द्धनधर की रसोई करते, और सगरे सेवकन को परोसना करते। और अपनी गांठि ते घृत अधिक परोसते।

भावप्रकाश – सो यातें, जो-सेवक अपनो नेग पावें तामें मेरी कहा सेवा है ? कछू अपनी गांठि तें अपनी सत्ता को परोसों तो सेवा है, या भाव सों परोसते। और सामग्री में घृत परोसते ताको कारन यह, जो-घृत तें सगरे सरीर में बल होइ तो प्रभु की सेवा भली भाँति सों करें, हारे नांही। तातें अधकी में घृत परोसते।

तातें सगरे सेवक महतारी कहिकें बोलते। सो यह बात श्रीगुसांईजी सों वैष्णवन ने कही। सो सुनि के श्रीगुसांईजी उत्तमश्लोकदास के उपर प्रसन्न होइ कें पास बुलाइ कें पूछे, तुम अपनी गांठि ते घृत मँगाइ सेवकन कों घृत (क्यों) परोसत हो ? सगरे सेवक अपने नेग तो पावत हैं ? तब उत्तमश्लोकदास ने कही, महाराज ! सेवक कों सेवा में बहोत श्रम होत हैं। परवत पर चढ़त हैं, उतरत हैं। तातें श्रीठाकुरजी कौ मन खेद पावे। तातें अधिक घृत लिये तें सरीर में बल होय तो सेवक भली भाँति सेवा करे। यह बात सुनि के श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न भये। जो-इनकों सेवकन में ऐसी वात्सल्यता है। तब श्रीगुसांईजी कहैं, उत्तमश्लोकदास ! तुम कछु मेरे पास मांगो। मैं तुम्हारे ऊपर बहोत प्रसन्न भयो हों। तब उत्तमश्लोकदास कहैं,

महाराज! मैं तिहारे ऊपर कबहूँ अप्रसन्न न होऊं, यह मैं माँगत हों। तब श्रीगुसांईजी कहैं, ऐसेई होइगो। तब सगरे यह सुनि के कहे, यह इननें कहा मांग्यौ ? जीव प्रसन्न भयो तो कहा ? अप्रसन्न भयो तो कहा ? प्रभु प्रसन्न भये चहिये। तब एक वैष्णव ने श्रीगुसांईजी सों बिनती करी, महाराज ! यह उत्तमश्लोकदास ने कहा माँग्यो ? जो–मैं सदा (तिहारे उपर) प्रसन्न रहूँ। तब श्रीगुसांईजी कहैं, यह बात तुम उत्तमश्लोकदास सों पूछो, जो–यह कहा मांग्यो ? तब सगरे वैष्णव मिलि के उत्तमश्लोकदास सों पूछ्यो, जो–यह तुम कहा मांग्यो ? मैं प्रसन्न भयो रहूँ। तब उत्तमश्लोकदास ने कही, मैं यातें मांग्यो, जो–अब या समें श्रीगुसांईजी प्रसन्न हैं, और कोई समें सेवामें अपराध परे अप्रसन्न होई, तब मेरो मन बिगरे तो ठिकानो मेरो न रहे। यातें मांग्यो, जो–आप अप्रसन्न होई तोऊ मेरो मन न बिगरेगो। यह बात सुनि के सगरे वैष्णव प्रसन्न भये। तब श्रीगुसांईजी सगरे वैष्णवन सों कहैं, जो–उत्तमश्लोकदास बहोत पोंहोच के मांग्यो। अब याको बिगार कबहू न होइगो। सो उत्तमश्लोकदास ऐसे भगवदीय हे। सदा एक रस प्रीति श्रीठाकुरजीमें, श्रीगुसांईजी में, सेवकनि में, वैष्णवन में निबाही, तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये।

वार्ता ॥३७॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, वासुदेव छकड़ा, सारस्वत ब्राह्मन सिंहनंद के वासी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – वासुदेवदास श्रीनंदराय के मुख्य खवास हैं। नंदरायजी जहां जाते तहां नन्दरायजी के वस्त्र–पात्र सब संग ले चलते। लीला में इनको नाम ''मनसुखा'' है। सो वासुदेवदास सिंहनंद में एक सारस्वत ब्राह्मन के घर जनमें। सो

सारस्वत के द्रव्य बहुत हतो, सो वासुदेवदास बरस तेरह के भये। सो हाकिम ने दण्ड सिंहनंद में तें सब पें तें लियो। सो वासुदेवदास के पिता पर दोई हजार को दंड कियो। तब वासुदेवदास नें पिता सों कह्यो, जो–हाकिम को दंड काहेकों देउ ? हाकिम सों लरेंगे। तब वासुदेवदास के पिता ने कही, जो–हाकिम सों कैसे बरि आवेंगे ? तब वासुदेवदास ने कही, या बात की मैं जानी, मोकों बताइ दीजो। सो हाकिम के प्यादे चार आये। तब वासुदेवदास ने उनसों कह्यो, हम दंड कौन बात को देई ? जो–हाकिम सों कह्यो, जो–लरनो होइ तो लरैं। दंड तो हम न देंइगे। तब ये चारों प्यादे गारीगरा दैन लागें, जो–हम तो तोकों पकरि कें ले चलेंगे। तब वासुदेवदास चारों के हथियार छीन के ऐसो धक्का दिये जो–वै चारों दूरि गिरि पड़े। (पाछें) उह हाकिम पास जाइ पुकारे, वासुदेवदास ब्राह्मण हमकों मार्‍यो, और हथियार छीन लीने। और कह्यो, हाकिम सों लरेंगे। तब हाकिम क्रोध में भरि गयो चालीस प्यादे पठाये। और कह्यो, याहि समें वा ब्राह्मन कों बांधि लावो। सो चालीस प्यादे कों आवत देख, वासुदेवदास दौरि के चालीसन के भीतर पैठे। काहू की पाग, काहू के हथियार ले, काहूकों मुक्का, काहू कों लात सों मारि सबन को धरती में गिराये। (और) हथियार छीन एक–एक पाग में पाँच–पाँच, दस–दसकों बांधि के हथियार सबके ले घर आये। सो सगरे हाकिम पास जाई पुकारें, जो–एक बरस तेरह चौदह को बालक है, सो हमारे सबके हथियार छीन के सबकी मुस्क बांध्यो। तातें वह बालक कछू मनुष्य नाहीं है, कोऊ देवता है। तातें तुम सम्हारे रहियो। तब हाकिम ने पांच से मनुष्य आछे अपने संग के पठाये। और मनमें हाकिम हू डरप्यो। सो द्वार के आगे गली में एक छकड़ा आड़े कराय मारग बंद कर्‍यो। और छकड़ा पर हजार मन पत्थर की सिला आड़ी दे आपु हथियार लेकें बीस मनुष्यन सों बैठ्यो। सो पांचसे प्यादे देखि वासुदेवदास फेंटि बांधि एक बड़ो लट्ठ लियो। ताको सगरे लोह सों मढ्यो, मन दोइ को भारि। सो लै, दौरि के प्यादेन के बीच आइ लट्ठ फिरायो। सो एक बार फिराये में पचास–साठ एक के ऊपर एक गिरे। या प्रकार जैसे कुंभार को चाक फिरे ता प्रकार दस पंद्रह फेरा करि सगरे गिराये, प्यादे। पाछें क्रोध के आवेश में वासुदेवदास भरि गये। सो हाकिम जहां रहत हतो तहां दौरे। सो आड़े छकड़ा हजार मन को देखि ताकों एक हाथ को धक्का दे उठाये। सो छकड़ा और पत्थर दूरि जहां तहां जाय परे। छकड़ा टूक टूक भयो। और छकड़ा पत्थरन को सोर भयो। सो बीस प्यादेन सों हाकिम भाजि जाइ सरस्वती नदी में पेरि दूरि भाजि गयो। सो वासुदेवदास हाकिम के चौंतरा तोरि गिराय पाछें अपने घर आये। पाछें रात्रिकों हाकिम अपने घर आई सिंहनंद के भले मनुष्य दोई चारि सराफ बजाज बुलाइ के कह्यो, तुम वासुदेवदास के घर जाय समाधान करि आवो। जो–हम चूकें, तुमसों दंड लिये। अब तुम कहो तो

हाकिमी करों, कहो तो और गाम जाऊँ। अब जन्म भरि तुमको कछु न कहूँगो। तब वे हाकिम की सगरि बात कहे। तब वासुदेवदास कहें, हमारे कहा हाकिम सों बैर है ? आवो रहो। तब हाकिम रह्यो। दूसरे दिन वासुदेवदास सों मिलिकें कह्यो, तुम मनुष्य नांही हो, कोई देवता हो ? सो मो पर दया राखियो। कामकाज होइ सो कहियो। और उह छकड़ा उठाय के डारि दियो, ता दिनतें सगरे गाम के लोग इनकों वासुदेवदास छकडा कहेते। सो वासुदेवदास को गर्व बहुत बढ्यो, काहू कों गाम में मन में लावे नाहीं। गारी दे, तो सब चुपके रहतें। सो एक समें श्रीआचार्यजी थानेस्वर पधारे। सो कृष्णदास सरस्वती में न्हात हते, ता समें भागजोगतें वासुदेवदास न्हाइवे सिंहनंद सों आये। सो वासुदेवदास जल उछालतें कृष्णदास मेघन पास आए। तब कृष्णदास मेघन ने कही, तू कौन हैं ? छींटा देत आयो ? तातें रञ्च दूरि सूधी रीतिसों न्हा। सबकों छींटा तेरे परत हैं। यह कृष्णदास के वचन सुनिके वासुदेवदास कृष्णदास के मारन कों हाथ उठायो। सो कृष्णदास कों श्रीआचार्यजी की कृपा को बल, सो वासुदेवदास के दोऊ हाथ पकरि लिये। सो ये वासुदेवदास बहुतेरो बल किये, परन्तु हाथ छूट्यो नाहीं। तब हार मन में माने। पाछें पूछे, तुम कौन हो ? तब कृष्णदास मेघन ने कही, मैं तो श्रीवल्लभाचार्यजी साक्षात् पुरुषोत्तम प्रगटे हैं तिनको सेवक हों। पाछें कृष्णदास मेघन ने पूछे तुम कौन हो ? तब वासुदेवदास कहै, मैं सारस्वत ब्राह्मन हों। सो मेरे मनमें बडो गर्व हो, जो–मो बराबरि बल काहू में नाहीं। मैं पांच सो प्यादे सहित हाकिम कों हरायो, छकड़ा हजार मन को डारि दियो। सो मेरे हाथ तुम सहजमें पकरे मैं बहोतेरो बल कियो छूट्यो नाहीं। तातें तुम्हारो ऐसो प्रभाव है, सो तुम्हारे स्वामी कैसे होइंगे ? सो मैं तुम्हारे संग चलिकें श्रीआचार्यजी के दरसन करूंगो। तब कृष्णदास हाथ छोडि दियो। दोऊ जने न्हाइ के श्रीआचार्यजी पास आये। तब श्रीआचार्यजी दामोदरदास सों कहै, देख दमला ! भगवदीय जाको हाथ पकरे ताकों संसार तें पार उतारे। सो कृष्णदास सहज में वासुदेवदास कों हाथ पकरे, ताके भाग की कहा है ? सो वासुदेवदास आय श्रीआचार्यजी कों दण्डौत करि, पाछें बिनंती करी, जो–महाराज ! सरनि लीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहे, तुमकों गर्व बहोत मन में रहत है, सो सरनि हमारी आइके कहा करोगे ? हमारी सरन तें दैन्यता होत हैं। तब वासुदेवदास कहैं, महाराज ! अब मोकों गर्व नाहीं चहिये। गर्व किये बिगार है। अहङ्कारी कों भगवदीय सूझे नाहीं। कृष्णदास को अपराध कियो हतो। परन्तु भगवदीय मेरे हाथ पकरे, तातें गर्व गयो। अब आपु कृपा करो, जातें मेरो जन्म सुफल होई। और आपको प्रागट्य हम सारिखे अधमन के उद्धार अर्थ है। तब श्रीआचार्यजी वासुदेवदास कों नाम निवेदन कराये, और कहैं, तेरो नाम वासुदेवदास छकड़ा। आगे गर्व में छके रहतें, अब भगवद् रस में छके रहोगे, तातें छकडा। और

पाँचों इंद्रिय विषयकी छट्ठो मन बस करेगो, तातें तेरो नाम छकड़ा और ऐश्वर्य (१) वीर्य (२) यश (३) श्री (४) ज्ञान (५) वैराग्य (६) छहो धर्म श्रीठाकुरजी में रहत हैं, सो तेरे में रहेंगे। तातें नाम छकड़ा। या प्रकार कृपा करि आसीर्वाद दे सगरे धर्म हृदय में श्रीआचार्यजी धरि दिये। सो मानसी सेवा फल रूप में मन लगि गयो। तातें भगवद् सेवा इनके उपर नाहीं पधराये। तब वासुदेवदास ने कही, महाराज ! सिंहनंद पधारिये, तो मेरे माता-पिता कों सरनि लीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहैं, हमकों सरस्वती नदी उलंघनी नाहीं। तातें सिंहनंद न जाइंगे। तातें जा, जाकी श्रद्धा सेवक होन की होय तिनकों लाइयो, और सों मति कहियो। तब वासुदेवदास श्रीआचार्यजी कों दंडौत करि, सिंहनंद आइ माता-पिता सों कहे, श्रीवल्लभाचार्यजी थानेस्वर पधारे हैं। सो साक्षात् भगवान को स्वरूप हैं। तातें तुम सेवक होउ। मैं उनको सेवक है के आयो। तब माता-पिता ने कही, हम काल्हि सबेरे चलेंगे। आजु तो खान पान करि चुके। यह बात कहे सो इनके परोस में सास बहू रहति हती, क्षत्रानी हती। सो सास को नाम ''गोरजा'' बहू को नाम ''समराई''। सो इन यह बात सुनी, (तब) वासुदेवदास सों पूछें, तुम माता-पिता को सबेरे कहां ले जाउगे ? तब वासुदेवदास जा प्रकार सेवक भये हते, सो सब प्रकार कहै, जो-मैं ऐसे अहंकारी दुष्ट हतो, सो मोकों अङ्गीकार किये। तब सास-बहू ने कहीं, सबेरे हमहू कों ले चलियो। पाछें यह बात सब सिंहनंद में लोगन ने सुनी, जो-थानेस्वर में श्रीवल्लभाचार्यजी बड़े महापुरुष पधारे हैं। जिन को सेवक वासुदेवदास छकड़ा ऐसो अहंकारी भयो। सो सगरो गाम दरसन करन कों थानेस्वर आयो। तामें कितनेक नाम पाये, कितनेक समर्पन किये। थानेस्वर गाम में हूँ बहोत जने सवेक भये। सो सबेरे वासुदेवदास माता-पिता को और सास-बहू कों सरस्वती में न्हवाई श्रीआचार्यजी के पास आय दरसन करि, दंडौत किये। पाछें वासुदेवदास ने बिनती करी, महाराज ! ये माता-पिता हैं, इनको सरनि लीजिये और ये सिंहनंद में सास बहू रहति हैं, या बहू को धनि मरि गयो ? सो यो दोऊ आपकी सरनि हैं। तब श्रीआचार्यजी सास बहू कों नाम सुनाइ निवेदन कराये और वासुदेवदास के माता-पिता को नाम सुनाए। तब वासुदेवदास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुनसों बिनती करी, महाराज ! माता-पिता कों ब्रह्मसंबंध कराईये। तब श्रीआचार्यजी कहें, इनको इतनो ही अधिकार है। इनसों निवेदन न सधेगो। तेरे संबंध सूं इनको उद्धार करि दियो। तब सास ने बिनती करी, महाराज ! अब हमकों कहा कर्तव्य है ? सो आप कृपा करिके कहिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम भगवद् सेवा करो। तब सास ने बिनती करी महाराज ! अब हमकों सेवा पधराइ दीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहैं तुम सरस्वती नदी पें जाऊ, तहां तुमकों भगवद् स्वरूप प्राप्ति होइगो, सो लै आवो। तब सास सरस्वती पर आई, देखें तो जल के किनारे एक

ठाकुर बिराजे हैं। सो देखिके बहोत प्रसन्न भई, लाय कें श्रीआचार्यजी कों दियो। तब श्रीआचार्यजी पञ्चामृत कराइ कैं सास बहू के माथे पधराए। श्रीठाकुरजी को नाम ''श्रीदामोदरजी'' धरे। पाछें कहे, घर जाई कें सेवा करो। तब सास बहू घर आई। सास चतुर हती, सो सेवा करें। बहू भोंरी हती सो ऊपर की परचारगी करती। सो सास बहू की वार्ता आगे कहेंगे। तहां इनको लीला को स्वरूप भाव कहेंगे। पाछें वासुदेवदास सों श्रीआचार्यजी कहैं, अब तुम माता-पिता को लेके घर जावो। तब वासुदेवदास ने कही, मेरो मन मन आपके संग रहिये को है। तब श्रीआचार्यजी कहैं, अब तो तुम माता-पिता को घर ले जाइकें गाम में रहो। पाछें माता-पिता की देह कछुक दिन में छूटेगी, तब तू हमारे घर में आइ रहियो। तब वासुदेवदास दंडवत् करि माता-पिता कों सिंहनंद में ले गये। श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे।

वार्ता-प्रसंग १- और एक समें श्रीआचार्यजी अड़ेल में बिराजत हते। सो एक दिन भंडारी नें श्री आचार्यजी सों कही, महाराज ! आज भंडार में सीधो सामान कछू नाहीं है। तब श्रीआचार्यजी एक सोने की कटोरी श्रीठाकुरजी के मन्दिर में ते लाइ दिये। और कहें, आजु के लायक राज भोग पर्यन्त की सामग्री ले आवो, अधिकी मति लाइयो। यह बनिया के यहां कटोरी गहनें धरि आइयो। तब भंडारी सोने की कटोरी ले बनिया के इहां धरि, राजभोग की सामग्री सब लायो। पाछें सामग्री करि श्रीठाकुरजी कों भोग धरि समयानुसार भोग सराय आरती करि अनोसर कराये। महाप्रसाद श्रीयमुनाजी में पधराई दियो। और बाकी गायन कों खवाइ दियो। आप परिकर सगरे सेवक सहित भूखे ही बैठ रहे।

भावप्रकाश-सो यह वैष्णव को सिक्षा दिये, जो-श्रीठाकुरजी की वस्तु होई सो वैष्णव कों लेनो नाहीं, ठाकुर अरोगें। यह रीति सबकों सिखाये।

और यहां सिंहानंद के सगरे वैष्णव मिलि कें श्रीआचार्यजी की भेट की मोहौर तीस हती सो वासुदेवदास छकड़ा कों दीनी। जो-ये श्रीआचार्यजी कों पहोंचती होइ, तो आछो। तब

वासुदेवदास वैरागी को भेष धरि, सगरी मोहौर कों लाख के गोला सालिग्राम जैसे करि, चंदन चढ़ावत चले। सो सिंहनंद के चले थानेस्वर रहे, वैष्णव के घर महाप्रसाद लिये। थानेस्वर के चले दिल्ली रात्रि रहै। वैष्णव के घर महाप्रसाद लिये। दिल्ली के चले मथुरा रहै। वैष्णव के घर महाप्रसाद लिये। मथुरा के चले आगरे रात्रि रहै। वैष्णवन के घर महाप्रसाद लिये। मार्ग में चोर ठग मिले, सो जाने, जो–बैरागी है, सालिग्राम पूजत जात है।

भावप्रकाश–वासुदेवदास के सरीर में बल बहोत हतो, ऐसो क्यों किये ? सो यातें, जाने जो–यह श्रीआचार्यजी को द्रव्य है, कहूँ मार्ग में सोई जाइ, तब कोऊ चोरी करें। सन्मुख तो काहू को सामर्थ नाहीं, जो–ले सके। और गुरु की सेवार्थ, सालिग्राम की रीति करि ले गयो हो, सो भगवद् अपराध हू मन में नाहीं लाये। सो यातें जो गुरु को कार्य करनो, कोई प्रकार सों होइ, गुरु सेवा बने। तासों भगवद् अपराध बाधक नाहीं। भगवद् सेवा में गुरु अपराध सों डरपत रहेनो, यह जताये।

पाछें आगरे सों चले सो दोई दिन चबेना सों काम चलाये। तीसरे दिन, तीसरे प्रहर, जा दिन श्रीआचार्यजी भूखे बैठे रहैं, ता दिन अड़ेल आये। सो गाम बाहिर आई लाख को गोला फोरि, मोहौर काढ़ि आये, श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दियो, मोहौर तीस आगे धरी। महाप्रभुन सों बिनती किये, महाराज ! सिंहनंद के वैष्णव को भेट हैं। तब श्रीआचार्यजी कहैं, वासुदेवदास ! इतनी मोहौर तू कैसे लायो
बहोत हैं ? तब वासुदेवदास ने कही, महाराज ! यह बात तो मैं न कहूंगो, आपु खीजोगे सुनिके। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहै, हम तेरे उपर प्रसन्न होंगे, न खीजेंगे। जैसे लायो सो कहि दे। तब वासुदेवदास ने सब प्रकार कह्यो, जो–लाख को गोला करि, चंदन चढ़ावत आयो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहै,

ऐसे ने करिये। भगवद् स्वरूप को आकार करि पाछें अन्यथा करनो पड़े। तब वासुदेवदास ने कही, महाराज! कछू प्रतिष्ठा करी न हती। लाख को गोला बांध्यो हतो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, तऊ ऐसे न करिये। पाछें भंडारि कों बुलाय तीस मोहौर श्रीआचार्यजी महाप्रभु दिये। और कहें, मंगलातें ले सैन पर्यंत की सामग्री ले कटोरी छुड़ाइ ले आवो। पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभु सैन पर्यन्त पहोंचि श्रीठाकुरजी कों अनोसर कराय आप भोजन किये। ता पाछें श्रीअक्काजी आदि सगरे परिकर भोजन किये। तब वासुदेवदास कों महाप्रसाद की पातर धरी, सगरे सेवक वैष्णव महाप्रसाद लिये। पाछें तीस मोहौर की पहोंच लिखि, श्रीआचार्यजी महाप्रभु वासुदेवदास कों दूसरे दिन बिदा किये। सो वासुदेवदास कछुक दिन में सिंहनन्द आय पहोंचे, पत्र वैष्णवन कों दिये। तब सगरे वैष्णव प्रसन्न होय, वासुदेवदास सों पुछ्यो, जो–तुम इतनी दूरि मोहौर कैसे ले गये ? राह तो निबहत ऐसी नाहीं। ठग चोरन को डर है बहोत ही ? तब वासुदेवदास उन वैष्णवन आगे सब प्रकार कहे। तब सगरे वैष्णव वासुदेवदास की सराहना करन लागे।

वार्ता – प्रसंग २– और एक समय श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के बड़े पुत्र श्रीगोपीनाथजी आगरे पधारे। सो श्रीगुसांईजी की भेट सौ मोहौर हती सो वैष्णव श्रीगोपीनाथजी कों दीनी। इतने ही में सिंहनंद सों वासुदेवदास छकड़ा आगरे आये। ता समय श्रीगोपीनाथजी ने कही, जो–ऐसो कोई वैष्णव है ? जो–ये सौ मोहौर अड़ेल पहोंचावे। तब वासुदेवदास ने कही, जो–महाराज! मोकों देउ, मैं पहोंचाऊंगो। तब गोपीनाथजी श्रीगुसांईजी कों

पत्र लिखि दियो। और सौ मोहौर वासुदेवदास छकड़ा कों दीनी। तब वासुदेवदास वैसे ही लाख को गोला करि चंदन चढ़ावत वैरागी भेष सों चले। मारग में चबेनी कों लेइ। सो तीसरे दिन अड़ेल आई लाख में ते मोहौर निकासी। श्रीगुसांईजी कों आई दंडवत करि श्रीगोपीनाथजी को पत्र देके, सौ मोहौर आगे धरी। तब श्रीगुसांईजी पत्र कों बांचि मोहौर संभारि भंडारि कों दिये। पाछें वासुदेवदास कों महाप्रसाद लिवाये। ता पाछें दूसरे दिन मोहौरन की पहोंच आप श्रीगुसांईजी लिखि वासुदेवदास कों दिये। तब वासुदेवदास श्रीगुसांईजी को दंडवत् करि अड़ेल तें चले। सो तीसरे दिन आगरे आय श्रीगुसांईजी को पत्र श्रीगोपीनाथजी कों वासुदेवदास दिये। तब श्रीगोपीनाथजी वह पत्र बांचि के वासुदेवदास ऊपर बहोत प्रसन्न भये। पाछें पूछे, जो–इतनी मोहौर मार्ग में अकेले कैसे तुम ले गये वासुदेवदास! सो प्रकार तो हमसों कहो ? तब वासुदेवदास सब प्रकार श्रीगोपीनाथजी सों कहें। तब श्रीगोपीनाथजी वासुदेवदास सों कहे, जो–ऐसे कबहू न करिये। तब वासुदेवदास छकड़ा चुप है रहे।

भावप्रकाश–सो यातें, जो–यह मर्यादा की आज्ञा है, जो–दोष लगे। गुरु के कार्यार्थ यामें कहा दोष है। या प्रकार वासुदेवदास एक पुष्टि कार्य सर्वोपरि जानते। तातें या प्रकार सों सेवा करी।

वार्ता – प्रसंग ३ – और एक समय, श्रीगुसांईजी श्रीमथुरा में बिराजत हते। सो श्रीठाकुरजी सों राजभोग सों पहोंचि आप भोजन करि बैठक में पधारे। तब आगरे में रूपचन्दनन्दा श्रीगुसांईजी के सेवक हैं, तिनकों श्रीगुसांईजी पत्र लिखें। तामें

बसंतपञ्चमी की सामग्री मँगाए। पाछें वासुदेवदास कों बुलाई कें, पत्र देके श्रीगुसांईजी कहे, जो–इतनी सामग्री आगरे तें रूपचन्दनन्दा सों लेके सांझ तांइ आइ रहियो। और एक टोकरा महाप्रसाद मँगाइ, एक चादर की झोली बनाई, वासुदेवदास के गरे में डारि महाप्रसाद तामें भराये। तब वासुदेवदास ने श्रीगुसांईजी सों बिनती करी, जो–महाराज ! जोड़ा पहेरे महाप्रसाद कैसे लेतो जाऊं ? तब श्रीगुसांईजी कहैं तुमकों दोष नाहीं, श्रीठाकुरजी की सेवार्थ जात हौ, सो जोड़ा कों पहेरे ही आनन्द सों प्रसाद लेत चले जइयो। तब वासुदेवदास प्रसाद लेते ही मथुरा ते चले। सो आगरे में जाइ के रूपचन्दनन्दा के घर गए। ता समय रूपचन्दनन्दा महाप्रसाद ले हाथ धोवत हते। सो वासुदेवदास छकड़ा कों देखि भगवत–स्मरन करि, घर में कहै, बड़ो हांडा धरि रसोई चढ़ावो। तब वासुदेवदास ने कही, रसोई होयगी तहां तांई मैं न रहूँगो। पत्र बांचि मोकों सामग्री लिवाय देऊ, अबही मथुरा जाऊंगो। तब रूपचन्दनन्दा श्रीगुसांईजी को पत्र माथे चढ़ाई, बांचि के अपने भाई सों कहै, जो–घर में जितनो अनसखड़ी महाप्रसाद होय सो सब एक टोकरा में ले 'छारहूं' दरवाजे जाई बैठये। मैं बाजार में होइ आवत हों। तब रूपचन्दनन्दा वासुदेवदास कों बजार में आई बसंत लायक सुन्दर वस्त्र आदि सामग्री लेके देन लागे। तब वासुदेवदास ने कही, मेरो हाथ प्रसादी है, तातें तुम मेरी पीठि सों बांधी देऊ। तब रूपचन्दनन्दा वासुदेवदास की पीठि सों सब सामग्री बांधि, पत्र लिखि के दिये। वासुदेवदास के संग

छारछू दरवाजे आय, भाई सों, महाप्रसाद को टोकरा ले वासुदेवदास की झोली भरि दीनी, पाछें विदा करिके दोऊ भाई घर आये। और वासुदेवदास महाप्रसाद लेत आगरे सों चले, सो तीसरे पहर भये श्रीगुसांईजी पोढ़ि उठि के मुख धोइके गादी पर बिराजे हते, ताही समय वासुदेवदास आय ठाड़े भये । पाछें श्रीगुसांईजी सों बिनती किये, जो महाराज ! मेरो हाथ प्रसादी है, और सामग्री मेरे पीठि पर बंधी हैं। तब श्रीगुसांईजी प्रसन्न होइ आपु उठि के वासुदेवदास की पीठि सों सामग्री खोलि लिये। पाछे रूपचन्दनन्दा को पत्र ले बांचि के श्रीगुसांईजी प्रसन्न भये । पाछे श्रीगुसांईजी वासुदेवदास सों श्रीमुखते कहें, जो-वासुदेवदास ! तेरे लिये महाप्रसाद की पातर ढांकि राखी है। सो भीतर जाई महाप्रसाद ले। तब वासुदेवदास न्हाइ के महाप्रसाद लिये। पाछें सगरी सामग्री श्रीगुसांईजी सिद्ध करि राखे। सबेरे बसन्तपञ्चमी हती, सो उत्सव किये। वासुदेवदास कों दरसन कराये। सो वासुदेवदास सेवा में या प्रकार तत्पर रहते।

वार्ता- प्रसंग ४ - और श्रीगुसांईजी सेवा तें पहोंचि खवास सों कहे, जो-आसन, झारी, संध्यावंदन को साज लेकें विश्रान्त घाट पर चलियो। सो आपु दस-पांच वैष्णव वासुदेवदास छकड़ा कों संग ले विश्रांत घाट नित्य पधारते । तहां श्रीगुसांईजी संध्यावंदन करिके पाछें श्रीकेसोराईजी के दरसन कों जन्म स्थान, नित्य दरसन कों जाते । सो एक दिन मथुरिया चौबे मिलिकें काजी पास जाई काजी सों कहें, श्रीगुसांईजी की चुगली करी, जो-तुम इनको लागाबांधि द्वै एक दिन करो तो इनके

सेवक ऐसे हैं, जो–तुमकों हजारन रुपैया देंयेगे। तब काजी द्वैयसे मनुष्य हथियारबंद लेके संग, जन्मस्थान के आसपास ठोढ़ो है रह्यो। सो जब श्रीगुसांईजी केसोरायजी के दरसन करिके बाहिर पधारे, तब काजी के लोग सावधान होन लागे। तब श्रीगुसांईजी सों वासुदेवदास ने विनती करी, जो–महाराज! इनकी नजर बुरी दीसत है। तब श्रीगुसांईजी कहैं, तेरो ए कहा करेंगे ? अपने इन सों कछू बैर नाहीं है, तातें चल्यो चलि। तब वासुदेवदास आगे चले। तब काजी के मनुष्य पास आइके कहें, जो–अब कहाँ जाउगें ? तब वासुदेवदास ने फिरि श्रीगुसांईजी सों बिनती करि कह्यो, जो–महाराज ! ये बुरी नजरि सों आये हैं। तब श्रीगुसांईजी कहैं, तोसों होइ सो तू करि। तब वासुदेवदास चार पेंड़ आगे चलि, एक के पास ढाल और गुरज हती ताकों एक थापकी मारी। सो वह थाप के लागत ही गिरि पड्यो। तब वासुदेवदास वाकी ढाल और गुरज लेकें मनुष्य बीस–पचीस गिराय दिये। तब सगरे भाजि कें एक बड़ी हवेली के भीतर काजी सहित जाय, किंवाड़ लगाय लिये। सो वासुदेवदास ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो–भले इकठोरे एक घर में सब धसे हैं। आपु कहो तो चारों ओर तें हवेली की भींति गिराय देऊ, सगरे दबि मरेंगे। तब श्रीगुसांईजी कहें, ऐसे मति करो, तेरो यह कहा बिगारे हैं ? अपने विश्रान्त चलो। तब श्रीगुसांईजी विश्रान्त पधारि के संध्यावंदन करि घर पधारे। पाछें दूसरे दिन श्रीगुसांईजी जन्मस्थान दरसन कों पधारे। तब काजी दोय चार मनुष्य संग ले, गले में पटुका डारि श्रीगुसांईजी सों बिनती कियो, जो–

महाराज ! मेरो अपराध क्षमा करो। मोसों लोगन ने आपकी चुगली करी हती, सो अब उन सों समझोंगो, जो–मोसों कन्हैया और भीम सों लरावत हैं। सो आप साक्षात् कन्हैया हो, जो–इन सबनि कों बचाये। नाहीं तो, यह भीम सबन कों मारतो। परन्तु अब मोसों कछू टहेल आज्ञा करो। तब श्रीगुसांईजी कह्यो, जो–तुम सों जानैं चुगली करी होइ, तासों तुम कछु मति कहियो। तब काजी बिनती करि गयो। और मन में कह्यो, जो–देखो, दुष्टन ने इनकी चुगली करी, और ये कन्हैया ऐसे दयाल, जो बैरी पर हू दया करी। सो वासुदेवदास ऐसे कृपापात्र हते।

वार्ता – प्रसंग ५ – और सिंहनंद में वैष्णवन के घर उत्सव में जब बड़ो उत्सव होतो, तब तो वासुदेवदास कों महाप्रसाद कों बुलावते। और छोटे उत्सव में दस–बीस वैष्णव बुलावते। तामें वासुदेवदास कों न बुलावते। सो कछुक दिन में सिंहनन्द के सगरे वैष्णव श्रीगुसांईजी के दरसन कों श्रीगोकुल आये। तब वासुदेवदास ने श्रीगुसांईजी सों बिनती करि कह्यो, जो–महाराज ! ये वैष्णव उत्सव कीर्तन में मोकों बुलावत नाहीं। तब श्रीगुसांईजी उन वैष्णवन सों कहें, जो–तुम वासुदेवदास कों उत्सव कीर्तन में क्यों नाहीं बुलावत हो ? श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हैं, इनकों बुलाए बिना कैसे चले। तब वैष्णवन ने श्रीगुसांईजी सों बिनती करी, महाराज ! बड़े उत्सव में तो बुलावत हैं और छोटे उत्सव में दस–बीस वैष्णव की सामग्री एक अकेले लेई तोऊ भूखे रहैं तब अपराध परे, तातें नाहीं बुलावत। तब श्रीगुसांईजी कहें, बंधान बांधो, जो–दोसौ वैष्णव बुलायवे कौ मनोरथ होय तो, सौ बुलावो, सौ में वासुदेवदास। और सौ

को मनोरथ होय तो, पचास और पचास में वासुदेवदास। जो-पचास को मनोरथ होय पचीस और पचीस में वासुदेवदास। और दस को मनोरथ होय तो पांच और पांच में वासुदेवदास। दस तांई तो इनकों बुलावो। और पांच बुलावो तो इनकों नाहीं। तब वैष्णवन ने कही, महाराज ! ये भूखे रहे तो अपराध होई। तब श्रीगुसांईजी कहें यामें तुमकों अपराध नाहीं, या प्रकार करियो। सो तब तें श्रीसिंहनंद के वैष्णव वासुदेवदास कों उत्सव में बुलावन लागें।

भावप्रकाश-यामें यह जताये, जो-भगवदीय एकही बुलाइये तामें सब आये। भगवदीय के आये श्रीठाकुरजी बेगे प्रसन्न होय।

वार्ता - प्रसंग ६ - और वासुदेवदास के जजमान आगरे में बहुत रहते। सो पितरपक्ष में वासुदेवदास आगरे जाते, सो सगरे क्षत्रीन कौ न्योता मानते। सबन के घर महाप्रसाद लेते। धोती उपरना तथा कपरा को थान, दक्षिना, सब लेके पंद्रह दिन को भेलौ करि पाछें जब पितर पक्ष होइ चुके तब दक्षिना के पैसान को चामर और खांड़ ले श्रीगोकुल आय भंडार में देते। औक कपरा सब ठौर छन्ना, मन्दिर वस्त्र, पोंछिवे को सागघर, भंडार, पानघर, फूलघर आदि में नये वस्त्र करते। सो श्रीगुसांईजी सब ठौर नये वस्त्र देखिके पूछे, जो- सब ठौर एकही बेर नये वस्त्र कहाँते आये ? तब सगरे सेवक कह्यो, जो-महाराज ! वासुदेवदास लाये हैं, उनने किये हैं। तब श्रीगुसांईजी वासुदेवदास सों पूछे, जो-इनने नये वस्त्र तुम कहाँते लाये ? तब वासुदेवदास कहैं, महाराज ! आगरे में क्षत्री मेरे यजमान रहत हैं। सो पितृपक्ष में मैं उहां जाइ पंद्रह दिन रहि उनके घर

महाप्रसाद लेत हों। वे दक्षिना, और कपरा देत हैं। सो दक्षिना के चामर खाँड लाई भंडार में देत हूँ, वस्त्र के छन्ना आदि करत हूँ। तब श्रीगुसांईजी प्रसन्न होई कहें, जो-देखो भगवदीय को कार्य, अलौकिक में लगाई दिये हैं। पाछे वर्ष के वर्ष जब श्रीगुसांईजी सब ठौर नये छन्ना, पोतना, मंदिर वस्त्र देखते तब पूछते, जो-वासुदेवदास ने करे होंगे ? तब सब सेवक कहते, आगरे तें वासुदेवदास लाए हैं। सो श्रीगुसांईजी वासुदेवदास के ऊपर बहोत प्रसन्न रहते।

भावप्रकाश-यामें यह जताये, जो-लौकिक वैदिक कार्यार्थ भगवदीय वैष्णव कों कछू दीजिए तो भगवदीय अलौकिक करि देय। आगरे के (यजमान) श्राद्ध करिके श्राद्ध के नाम सों देते। और वासुदेवदास ले श्रीगुसांईजी के घर अंगीकार करावते। तामें वे क्षत्री लोग हू कृतार्थ भये। और इनके पितरहू कृतार्थ होई गये। सो वासुदेवदास के हृदय में ऐसो दृढ भगवद् आश्रय हतो, जो-लौकिक कों कछू मनमें लावते नाहीं। श्राद्ध के नाम सों महाप्रसाद हू लेते। श्राद्ध संबंधी ले अलौकिक करते। परन्तु इनकों बाधक कछू न होतो। ऐसो भगवद् बल, सदा नंदालय की लीला को काम काज किये। इहां श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की टहल करे, फेरि लीला रस को अनुभव किये। परन्तु निकुंजलाल को अनुभव नाहीं, नन्दालय की लीला को हैं, तातें नन्दालय की लीला को अनुभव भयो। सो वासुदेवदास छकड़ा ऐसे भगवदीय हे, तातें इनके माथे श्रीठाकुरजी नाहीं पधराये, लीला में हूँ वस्तू सामग्री लाइकें श्रीयसोदाजी कों देते। वैष्णव ॥३८॥

वार्ता - प्रसंग ७ - और जब श्रीगुसांईजी परदेस कों पधारते, तब वासुदेवदास संग जाते। सो एक छकड़ा को भार उठाई ले चलते। तातें सब कोऊ इनकों वासुदेवदास छकड़ा कहते। ऐसे टेक के वैष्णव हे। तातें वासुदेवदास की वार्ता कहां तांई कहिए। वार्ता ॥३८॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, बाबावेनु सारस्वत ब्राह्मन, कृष्णदास घघरी क्षत्री, और यादवेंद्रदास बनिया, बाबावेनु को खवास, ए तीनों की वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये पूरब में कासी प्रयाग के बीच में एक गाम हतो, तहां रहते। सो बाबावेनु और कृष्णदास ये दोऊ लीला में विशाखाजी की सखी हैं। लीला में बाबावेनु तो ''सोरसेनी'' और कृष्णदास को नाम, ''कामलता''। और ''सोरसेनी'' की सखी एक ''तिलकनी'' सो यादवदास, बाबावेनु के खवास भये। सो ये तीनों अनेक जन्म यातें पाये, जो–एक दिन विसाखाजी ने कही, इनसों श्रीनंदरायजी के घर देखि आव, श्रीठाकुरजी जागे होइ तो वस्त्र मांगि ले चलें। सो ए तीनों श्रीनन्दरायजी के द्वार पर आई। ता समय श्रीठाकुरजी तीनोंन सों पूछे, जो–विसाखाजी कहाँ हैं ? सब ए तीनोंन ने कही, हमको खबरि नाहीं। हम तो तिहारे दरसन कों आये हैं। सो जो–कछू विसाखाजी सों कहनो होई, सो हमही सों आज्ञा करो। या प्रकार विसाखाजी की बराबरि को सौभाग्य अपने में जान्यो। तब श्रीठाकुरजी हँसिकैं चुप होई रहे। भीतर जसोदाजी के पास पधारे। ये तीनों सखी द्वार पर बैठि रहीं, जो–श्रीठाकुरजी हँसिकें भीतर पधारे हैं सो फेर अबही बाहिर आवेंगे। यह जानि द्वार पर बैठी। यह बात एक सखी ने बिसाखाजी सों जाय कहीं ! सो बिसाखाजी दौरे आई। आइकै देखें तो, तीनों आपुस में हँसत हैं। तब बिसाखाजी ने शाप दियो, जो–भूमि में जन्म लेऊ। यह अभिमान को फल। सो तीनों गिरी। बाबावेनु एक सारस्यत ब्राह्मण के घर जन्मे, सो बरस तेवीस–चोबीस के भये। सो बाबावेनु और कृष्णदास दोऊ आपुस में परम मित्र हते, संग ही रहतें। और जादवदास के घर खानपास को संकोच हतो। सो यादवदास बाबावेनु की खवासी टहल करते। यो बाबावेनु देवी के उपासक हते, देवीकों सर्वोपरि जानते। सो एक दिन श्रीकल्याणरायजी ठाकुरजी बाबावेनु कों स्वप्न में कहे, मैं कल्याणी देवी हों, या गाम के तलाब में हों। सो तू मोकों बाहर निकास, मेरी पूजा कर। तब प्रातःकाल बाबावेनु यह बात कृष्णदास अपने मित्र सों कहे, तब दोऊ जने तलाब में पेठे। सो छाती बराबरि पानी सगरे तलाब में हतो। सो सगरे ढूँढ़त बाबावेनु के हाथ में श्रीकल्याणरायजी आये। तब बाबावेनु तलाब तें बाहिर आई, वह तलाब के ऊपर ही घर में जो द्रव्य हतो, ताको एक छोटो सो मन्दिर बनवाय दैवी के भाव सों देवी की थापना करी। कल्याणीदेवी नाम धर्‌यो। सो गाम के लोग देवी जानि मानता बहुत करें, तामें बाबावेनु और कृष्णदास और जादवदास को निर्वाह होइ। ऐसे करत वर्ष पांच बीते तब श्रीआचार्यजी कासी तें अड़ेल पधारत हते। सो इह गाम में आइ कल्याणरायजी के मन्दिर पास एक

आम के वृक्ष के नीचे बिराजे। ता समें बाबावेनु और कृष्णदास, पास गाम हतो तहां गये हते। तब मन्दिर में ते श्रीकल्याणरायजी श्रीआचार्यजी कों पुकार्‌यो, जो–आपु भीतर पधारो। तब श्रीआचार्यजी मन्दिर के भीतर जायके देखें, लेहँगा, लुगरा, पहरे हैं। तब श्रीआचार्यजी पूछे, देवी की नांई क्यों बैठे हो ? तब श्रीठाकुरजी ने कही, कहा करूँ ? या गाम में ठाकुरजी कूं कोई जानत नांही। और बाबावेनु, कृष्णदास, यादवदास दैवी जीव हैं। तिनके उद्धार करनार्थ मैं देवी होई बाबावेनु सों पूजा कराई हैं। काहेतें, बाबावेनु देवी को उपासक है। सो अब आपु मोकों श्रीठाकुरजी को स्वरूप करो। इहां चार घडी आपु बिराजो। बाबावेनु, कृष्णदास, यादवदास खवास कों अङ्गीकार करि पाछें पधारो। तब श्रीआचार्यजी लेहँगा, लुगरा, उतारि लेहँगा एक खूंटी पर धरि दिये। और लुगरा कों फारि एक परदनी पहराई, पाग बांधि दिये। पाछें आपु आम के वृक्ष के नीचे जाई बिराजे। इतने में ही बाबावेनु और कृष्णदास और यादवदास खवास तीनों आये। सो श्रीकल्याणरायजी के मंदिर में जाय देखे तो पाग धोती पहरे बैठे हैं। तब बाबावेनु कही, इहां कौन आयो ? जो–मेरी देवी के कपरा उतार्‌यो ? तब कल्याणरायजी ने कही, मोकों छूवो मति। मैं तो कल्याणरायजी ठाकुर हूँ। तब बाबावेनु ने कही, ठाकुर कों तो या गाम में कोऊ मानत नाहीं। और मेरो अपराध कहा, जो–छुइवे की नाहीं करत हो ? तब श्रीकल्याणरायजी ने कही, आम के वृक्ष नीचे श्रीआचार्यजी बिराजे हैं। तिनको तू सेवक व्है आव। और गाम के लोग ठाकुर कों नाहीं मानत तो तेरे हमारे गाम के लोगन सूँ कहा काम है ? तेरे घर में सात सौ रुपैया नीचे कोठा में गढ़े हैं, सो निकासि के मेरी सेवा पूजा करियो। परन्तु अब तुम जाइ श्रीआचार्यजी के सेवक ह्वै आवो। तब तीनों जने श्रीआचार्यजी पास आयके कहें, महाराज ! हमकों सेवक करिये। तब श्रीआचार्यजी कहे, तीनों जने तलाब में न्हाई आवो। तब तीनों जने तलाब में न्हाइके श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी तीनोंन कों नाम सुनाय निवेदन कराये। पाछें श्रीआचार्यजी कहै, बाबावेनु सों, अब तुम एक काम करो। श्रीकल्याणरायजी कों अपने घर ले जाई गोप्य रीति सों सेवा करो। जो कोई गाम के जाने नाहीं। और यह श्रीकल्याणरायजी के मन्दिर में कोई देवी को बैठारी काहू कों राखि देऊ, सो पूजा चलावेगो। तुम कछु देवी की पूजा को मति लीजो। जो–श्रीठाकुरजी को भोग धरियो सो तीनों जने लीजो। तब बाबावेनु ने कही, महाराज ! आपु मेरे घर पधारिके दोई दिन रहि, जैसे सेवा की रीति होय तैसे आप कृपा करि बताए देउ, या गाम में कोई जानत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी कल्याणरायजी कों पधराय बाबावेनु के घर पधारे। तहां बाबावेनु के घर में नीचे के कोठा में सातसैं रुपैया निकसे। सो लायकैं श्रीआचार्यजी के आगे धरे। तब श्रीआचार्यजी कहें, यह हमारे काम के नाहीं, यह तुमकों दिये हैं। और तेरो दृढ़

विश्वास ठाकुरजी में होई, तातें दिये, तुम राखो। पाछें श्रीआचार्यजी चार दिन तांई रहि, श्रीकल्याणरायजी कों पंचामृत स्नान कराई, बाबावेनु और कृष्णदास के माथे पधराय, सगरी पुष्टिमार्ग की सेवा रीति बताये। और आज्ञा दिये, श्रीठाकुरजी तुमकों आज्ञा दें सो करियो। या प्रकार समुझाय आपु अड़ेल पधारे। सो बाबावेनु और कृष्णदास मिलिकें सेवा करन लागे। जादव खवास सगरी उपरी की टहल करत हते। तब बाबावेनु ने एक ब्राह्मनकों दस-पांच रुपैया दे, देवी कों बैठारि तहां पूजा सोंपि दिये। सो वह ब्राह्मन प्रसन्न होई सेवा करतो, गांव की जीविका हती सो वह खातो। और बाबावेनु और जादव खवास के तो कोई सगो रह्यो नाहीं, सब मरे। और कृष्णदास के दोय भाई हते, सो अड़ेल आय श्रीआचार्यजी पास नाम पाये। साधारण वैष्णव भये। या प्रकार बहुत दिन बीते। श्रीगोवर्द्धनधर प्रगट होइ गोवर्द्धन पर बिराजे, पाछें श्रीगुसांईजी सेवा करते, सो सुनिके बाबावेनु और कृष्णदास, जादव खवास को मन भयो, जो-श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन करें। सो बाबावेनु हृदय के नेत्रन सूँ देखते। श्रीगोवर्द्धनधर के स्वरूप को दरसन करते। और कृष्णदास कों विरह अष्टप्रहर रहतो। जो-कब लीला में प्राप्ति होयगी ? सो कीरतन गाय के निर्वाह करते। और जादव खवास भगवद् इच्छा सब बात की मानि प्रसन्नता सों सेवा करते। सो एक दिन श्रीकल्याणरायजी ने तीनो जनेन कों आज्ञा दीनी जो-तुम श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों जाव। अब तिहारी तीनोन की तहां प्राप्ति होयगी। तब बाबावेनु ने कही, आप अब कौन के माथे पधारोगे ? तब श्रीकल्याणरायजी ने कही, कृष्णदास के दोई भाई हैं, तिनके माथे मोकों पधराय के तुम जाव। तब बाबावेनु, कृष्णदास के दोऊ भाई कों बुलाय के कहै, तिहारे बडे भागि हैं। मन लगाय के श्रीठाकुरजी की सेवा करियो। यह घर वस्तू सब तिहारे हवाले हैं। हम तीनों जने ब्रज में जाइंगे। तहां तीनों जनेन की देह छूटेगी, भगवद् इच्छा ऐसी जानि परत हैं। तब दोऊ सेवा करन लागे। तब प्रसन्न होई ये तीनों जने चले। सो कछुक दिन में मथुरा आये।

वार्ता - प्रसंग १ - सो बाबावेनु हृदय के नेत्रन सों देखते। सो ये तीनों जने केसोरायजी के दरसन कों चले। सो मथुरा में आय दरसन करे। सो दरसन करत ही में कृष्णदास कों श्रीगोवर्द्धनधर के स्वरूप सूं दरसन भए। सो कृष्णदास कों श्रीगोवर्द्धनधर के स्वरूप कें दरसन को अत्यन्त विरह भयो, सो यह कीर्तन कृष्णदास ने गायो।

★ राग बिलावल ★

आली ! तू देखरी नयनन गिरवरधर ।
सहचरी कहति दुतिय सहचरी सों परम मुदित प्यारी राधावर ॥१॥
भूषन भूषित अंग, मोहन-बसन मोहत कनक कान्ति हरि ।
चितें चित हरत विश्व जुवतिनके सर्वसु देत कर कमल करि ॥२॥
उपमा कहा देऊ को लायक, वरनों कहा किसोर वैस वरु ।
सुरति अंत लटकत ब्रज आवत ''कृष्णदास'' बड़भाग कल्प तरु ॥३॥

यह पद गावत ही कृष्णदास की देह श्रीकेसोरायजी के मन्दिर में छूटि गई। तब बाबावेनु और जादव खवास ने कृष्णदास की देह को अग्नि संस्कार करि, बाबावेनु ने जादव खवास सों कही, जो कृष्णदास कों गोह मारि गई। और हम तो श्रीगोवर्द्धनाथजी के दरसन करिकें देह छोडेंगे।

भावप्रकाश-याको आसय यह, जो-गोह काल रूप है। सो हमारे संगतें इनकों पहले ही लई। यह कहे। तामें काल दोई प्रकार को है, तहां काल मुख्य अधिकारी श्रीठाकुरजी को है। तब कृष्णदास कों विरह भयो, सो विरहतें इनकी देह दसा भूलि गई। लीला में मग्न होई गये। सो बाबावेनु कों सुनायकें कीर्तन किये, जो-''हे आली।'' दोऊ लीला में विसाखाजी की सखी है, तातें बाबावेनु सों कहै। तू देखि, नयनन गिरवरधर। तू जहां तहां क्यों भटकत हैं ? (मैं) नेननसों गिरवरधर कों देखत हों। और ठौर नेन जात नाहीं। सो आगें खोलि दियो। सहचरी कहत दुतिय सहचरी सों, कृष्णदास सहचरी है, और बाबावेनु सहचरी है। सो कृष्णदास तिनसों कहे, परम मुदित, जो-आनंद मय प्यारी राधा तिनके वर हैं। तिनही सों अपने नेन लगे हैं। या प्रकार कीर्तन करि अपने हृदय को भाव बाबावेनु कों जताये। सो इनको विरह श्रीगोवर्द्धनधर सहि न सके। जो-काल है, सो भगवान की विभूति है, मुख्य अधिकारी है। इच्छा शक्ति रूपवान है। यातें शिक्षापत्र में कहें है। श्लोक-

यतः कालस्तद्विभूतिः कालः कलयतामहम् ।
मुख्याधिकार्यपि हरेरिच्छाशक्तिस्वरूपवान् ॥१॥

सो काल प्रभु की इच्छा जानि तत्काल कृष्णदास कों प्रभु के पास पहोंचते करि दिये। तब बाबावेनु ने कही, कृष्णदास कों गोह मारि ले गई। ताको अर्थ यह कृष्णदास की अहंता ममतात्मक वासना रूप देह कों गोह मारि ले गई। कोहेते, जहां तांई लिंग सरीर देह न गिरे। तहां तांई भगवद् प्राप्ति न होई। सो लिंग देहकों गोह

मारि इनको ले गई, यह कहें। पाछें अपनी बात कहें, जो–यह श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन करि लिंग देह कों छोड़ेंगे। तामें यह जताये, हमकों कृष्णदास को सो विरह नाहीं अब ही भयो। सो श्रीगोवर्द्धनधर को दरसन करेंगे। तब विरह होइगो, तब देह छोड़ेंगे। या प्रकार बाबावेनु नें दैन्यता जताई, जो–हमारो कार्य श्रीगोवर्द्धनधर करेंगे।

पाछें बाबावेनु और जादव खवास दोऊ मथुरा तें चले, सो श्रीनाथजीद्वार आये। सो श्रीनाथजी के दरसन किये। तहां बाबावेनु ने श्रीनाथजी के आगे कीर्तन किये। तब श्रीनाथजी के कंठ तें फूल की माला गिरी। तब रामदास एक बीड़ा प्रसादी और माला ले बाबावेनु कों दीनी।

भावप्रकाश–जाको अर्थ यह, जो–श्रीनाथजी ने तुमकों विरह दियो। और या देह सों बिदा दीनी। अब लीला में प्राप्त होइंगे। और माला श्रीनाथजी के कंठ सों बड़ी भई। सो यह जो–माला भक्त रूप है। सो भक्तन के हाथ विरह है। जब ब्रजभक्त विरह देय। तब आवे। सो माला के लेत ही विरह भयो। और बीडा मंगल रूप देय। सो रामदासजी बीड़ा देय यह जताये, जो–तुम पर प्रभु प्रसन्न हैं।

पाछें बाबावेनु दंडवत् करि माला बीड़ा ले, परवत तें नीचे उतरि, देह छोड़ि दिये। तब बाबावेनु की देह को संस्कार जादव खवास ने कियो। पाछें शुद्ध होय श्रीगुसांईजी के दरसन कों आयो। तब श्रीगुसांईजी ने इनकूं भगवदीय जानि सेवा दीनी, सो यादवदास करन लागे, परि मनमें खेद रहतो। पाछें जादव खवास नें विचारयो, जो–अब इहां रहि के कहा करनो ? जहां बाबावेनु है तहां जाइये। तो आछो।

भावप्रकाश–काहे तें, लीला में हू जादव खवास बाबावेनु की सखी है, तातें बाबावेनु कों टहेल करि प्रसन्न किये हैं। सो अब बाबावेनु के संग बिना इनसों रह्यो न जाई। सो विरह भयो।

तब जादव खवास ने विचारयो, जो–कृष्णदास की देह को संस्कार मैं कियो। अब मेरी देह को संस्कार कोई वैष्णव

सेवक करेगो। तो सेवा में उनकों अंतराय परे, सो अपने न करनो। यह विचारि, दरसन श्रीनाथजी के करि, अनोसर पाछें बन में जाय तहां सूखी भूमि में गिरी लकडी भेली नित्य करि आवे। ऐसे करत जानी, जो–अब देह के संस्कार लायक लकड़ी भई। तब श्रीनाथजी के दरसन करे। पाछें सवेरे सेवकन सों भगवद् स्मरण करि श्रीगुसांईजी सों दंडवत् करी। ता पाछें अग्नि ले के बन में आये, सो जा ओर की ब्यार हती ता ओर चिता में अग्नि धरि, फेरि श्रीनाथजी की ध्वजा कों दण्डवत करि, उह चिता पर बैठि पाछे श्रीआचार्यजी श्रीगुसांईजी के चरणारविंद को स्मरन करि देह छोड़ि, लीला में प्राप्त भये। अग्नि में बरि के अपने हाथ सों सरीर को संस्कार किये। और पहले बाबावेनु ने यादवेन्द्रदास सों कह्यो हतो, जो–विलंब मति करियो, तू वेग अइयो। सो तो श्रीगुसांईजी ने श्रीनाथजी की सेवा सोंपी तातें इतने दिन विलंब कियो। सो जादवदास ऐसे भगवदीय हे, जो–काल इन के वस में। पाछें एक वैष्णव ने श्रीगुसांईजी सों पूछी, जो–महाराज ! जादवदास दिन दोई तीन तें दीसे नाहीं। तब श्रीगुसांईजी कहैं, जादवदास देह छोड़ि प्रभु कों पाये। तब वैष्णवन कही, सरीर को संस्कार कहां भयो ? तब श्रीगुसांईजी कही, बन में लकड़ी भेलि करि आपु ही आप ने संस्कार को उपाय किये।

भावप्रकाश–सो यातें, जो–काहू वैष्णव कों भगवद् सेवा में अन्तराय कैसे करों ? ॥ वैष्णव ३९॥

सो बाबावेनु, कृष्णदास, जादव खवास अलौकिक दैवी जीव हे। इनकों अलौकिक सामर्थ ही, ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥३९॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, जगतानंद, सारस्वत ब्राह्मन, थानेश्वर में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं-

भावप्रकाश-ये जगतानंद भामा सखी श्रीस्वामिनीजी की, तिनकी सखी है। लीला में इनको नाम ''माधुरी'' है। सो ए थानेश्वर में एक ब्राह्मण के घर जनमें। सौ वर्ष बारह के भये। तब कासी में जाय विद्या पढे। वर्ष बारह कासी में रहि विद्या श्रीभागवत पढ़ी। पाछे थानेश्वर में आई सरस्वती नदी के ऊपर श्रीभागवत की कथा कहते, तामें इनकी जीविका निर्वाह लायक चली जाती।

वार्ता - प्रसंग १ - सो एक समय थानेश्वर श्रीआचार्यजी पधारे सो प्रातःकाल की सन्ध्या किये। इतने में जगतानन्द आई सरस्वती में न्हाई श्रीभागवत की कथा कहन लागे। तब श्रीआचार्यजी मन में विचारे, यह जगतानन्द दैवी जीव हमारो है, याकों अंगीकार करनो। यह विचार करि, जगतानन्द के सन्मुख जाइ बिराजे। तब जगतानन्द ने जान्यो, जो-कोई पंडित ब्राह्मण है। तब जगतानन्द ने एक श्लोक श्रीभागवतको यह कह्यो, वेनुगीत को। 'प्रायो बताम्ब विहगा।' यह श्लोक कहि पाछें याकों अर्थ करि, श्रीआचार्यजी सों पूछे, जो-याही भांति अर्थ है के कछू और है ? तब श्रीआचार्यजी कहें, या श्लोक में अनेक भाव है, बहोत अर्थ हैं। और आवत होय तो कहो। तब जगतानन्द ने कह्यो, महाराज ! श्लोकार्थ मोकों आवत हतो, सो मैं कहो। आब आपु और कहो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, व्यास आसन तुम बैठे हो, सो व्यास आसन को अतिक्रम हम कैसे करें ? तब जगतानन्द आसन सों उतर के कह्यो, आपु बिराजि के कहो, मोकों सुनिवे की इच्छा है। तब श्रीआचार्यजी सुबोधिनी को अर्थ उहि श्लोक को करन लागे। सो कहत कहत सवारे तें तीसरो पहर भयो। तब श्रीआचार्यजी कहे, यह श्लोक

की व्याख्या दोई तीन महिना तांई चलेगी, तातें अब तुम भूखे हो, तातें उठो। तब जगतानन्द ने जान्यो, जो–ये साक्षात् ईश्वर हैं। तब जगतानन्द दंडवत् करि बिनती करि कह्यो, महाराज ! आपु साक्षात् पुरुषोत्तम हो। जो चाहो तितने दिन अर्थ करो। अब कृपा करि मेरे घर पधारो। तब श्रीआचार्यजी कहे, हम अपुने सेवक बिना काहूके घर पधारत नाहीं। तब जगतानन्द ने बिनती करी, महाराज ! हमकों सेवक करो। तब श्रीआचार्यजी आज्ञा करें, जो–जाऊ न्हाई आउ। तब जगतानन्द सरस्वती में न्हाइ अपरस में आयो। तब श्रीआचार्यजी ने नाम सुनाय ब्रह्मसंबंध करायो। पाछें जगतानन्द के घर पधारे। तब जगतानन्द सों कहें, तुम भगवद् सेवा करो। तब जगतानन्द ने कही, महाराज ! मेरे एक ठाकुर लालजी हैं, सो सदा तुलसी में बैठे रहत हैं। तिन पर एक लोटी पानी नित्य चढ़ावत हों। तब श्रीआचार्यजी कहें, बेगे श्रीठाकुरजी कों लाव, ऐसे न करिये। तब जगतानन्द श्रीठाकुरजी कों ले आयो। तब श्रीआचार्यजी पंचामृत स्नान कराई पाट बैठाये, जगतानन्द के माथे पधराए। आपु जगतानन्द के घर पाक सामग्री करि, श्रीठाकुरजी कों भोग धरे। पाछें आप भोजन करि, जगतानन्द कों जूठन की पातर धरी। पाछें रात्रकों श्रीआचार्यजी यह श्लोक कहे–

पठनीयं प्रयत्नेन सर्वहेतु विवर्जितम्।
वृत्यर्थं नैव युञ्जीत प्राणैः कंठगतैरपि॥

सो जगतानन्द ने सुनत ही जल तें संकल्प कियो, जो–आजु पाछें वृत्यर्थ श्रीभागवत न कहूँगो, और शास्त्र कहूँगो। तब

श्रीआचार्यजी कहें, श्रीभागवत कों कहि जीविका कबहू न करनो, प्रान जाई तो सुखेन जाऊ। या प्रकार जगतानन्द के घर रहि, पुष्टिमारग की रीति सेवा की सिखाई, आप पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे। तब जगतानन्द मन लगाई के भगवद् सेवा करन लागे। और पुरान की कथा आदि महाभारत कहेते। तासों जीविका करते। सो भगवद सेवा करत कछुक दिन में श्रीठाकुरजी सानुभाव जतावन लागे। सो जगतानन्द बड़े भगवदीय हे। इनकी वार्ता कहां ताई कहिये। वार्ता ॥४०॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, आनंददास विश्वंभरदास क्षत्री, प्रयाग में रहते, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ये लीला में कुमारिका की दोऊ सखी हैं, लीला में आनन्ददास को नाम 'नागरी', और विश्वंभरदास को नाम 'मल्लिका'। सो ये प्रयाग में एक क्षत्री के घर जनमें। सो इनको मन बालपने सों वैराग्य दसा में रहे। खानपान वस्त्रादिक देह सुख कछू न करे। जैसो माता पिता देय सो खायें, पहरें। जो–आछो माता पि पहराय देई तो प्रयाग में त्रिवेनी की कीच में मैलो करिके पहरे। माता–पिता खी गारी देय, मारे, परन्तु बोले नाहीं। जो गहना पहरावे तो काहू ब्राह्मण कों, बैरागी दे आवे। और माता पिता सों कछू बोले नाहीं। जब तब यह कहै, जो–अपने खा पहरे तें कहा है ? कछू परमारथ करो तो आछो है। सो यह बात माता–पिता सुहाई नाहीं। पाछें माता–पिता ने आनंददास की सगाई करी। तब आनन्ददास कही, मेरो विवाह मति करो, मैं तो बैरागी हों। सो माता–पिता माने नाहीं, ब्याह तैयारी किये। तब दिन एक ब्याह को रह्यो। तब आनंददास ने छोटे भाई विश्वंभरद सों कही, जो–माता–पिता तो मानत नाहीं। हमारो ब्याह करि पाछे तेरो ब्याह करें तब अपने बंदीखाने परेंगे। सो अब कहा उपाय है ? तब छोटे भाई विश्वंभरदास कही, यह गाम छोडि कहूँ निकसि चलो। तब आपुन बचेंगे। तब दोऊ भाई सं समें नाव पर बैठि श्रीयमुनाजी की पार होइ चित्रकोट में जाय रहें। तहां पर्वतन सोभा देखें, बनफल खाई, दिन आठ रहें। इहां माता–पिता सगरो गाम ढूँढ़ि के रहें। पाछें पिताने कोई सों सुन्यो, जो–दोई बालक चित्रकोट में जाय रहे हैं।

पिता नोमें दिन चित्रकोट आयो, सो बेटान की दसा देखिकें कह्यो, जो–अब तुम घर चलो, तिहारो ब्याह न करेंगे। हम वृद्ध हैं, हमारी देह छूटे तब तिहारो मन आवे सो करियो। अब ही तुमकों बाल अवस्था में बनवास उचित नाहीं है। तब दोऊ भाई कहें, वनवास तों बालपने ही में ठीक है, परन्तु तुम आये तातें तिहारे संग चेलेंगे। परन्तु हमारे ब्याह की दोनों के ब्याह की चर्चा मति करो। और हमारे पीछे मति परो। चाहेंगे सो करेंगे। कछु चोरी अन्याव करें तो बरजियो। हमकों तो वैरागी अतीत प्रिय हैं, तिनके पास बैठेंगे। सो तुमकों भावत नाहीं। तातें घर छोडे। तब पिताने कही, अब तुम घर चलो। तिहारे मन आवे सो करियो। हम तिहारे पीछे न परेंगे। तब दोऊ भाई पिता के संग आये। सो एक बार दोऊ भाई घर में आइ, खान पान करि जाइ। पाछें कथा वार्ता जहां तहां सुने। तहांई धरती पर परि रहे। देह को दुःख सुख मनमें गिने नाहीं।

सो एक समय दोऊ भाई श्रीयमुनाजी के तीर बैठे ज्ञान की बात करत हे। जो–भाई! जन्म सगरो बीत्यो। प्रभुसों पहचान न भई। मन श्रीठाकुरजी में न लाग्यौ। कथा वार्ता बहोत सुनी, परन्तु मन बस न भयो। सो अपनो मनुष्य जन्म सगरो वृथा गयो। अब फेरि चौरासी भोगेंगे, सो कहा करें? कछू उपाय दीसत नाहीं। या प्रकार परस्पर बतराये, पाछें धीरज छूटि गयो, सो श्रीयमुनाजी के किनारे अपनो मूँड पीट के रूदन किये। सो सरीर की सुधि न रही। रात्रिकों वहांइ दोऊ परि रहे। तब अर्द्धरात्रि समय श्रीठाकुरजी श्रीआचार्यजी सों कहें, जो दोई क्षत्री के बालक श्रीयमुनाजी के वा पार रेति में परे हैं। तिनकों मेरे लिये बड़ो ताप है सो आपु पधारि के उनकों अङ्गीकार करो। नाहीं तो उनको कछू दिन में सरीर छूटि जायगो। तब श्रीआचार्यजी कृष्णदास मेघन आदि वैष्णवन कों जगाइ, वाही समय श्रीयमुनाजी के तीर पधारे। सो घाट पर कोई नाहीं। नाव बँधी है। तब आप वैष्णव सहित नाव पर बैठे। और वैष्णव सों कहें, तुम नाव खेवत तो नाहीं जानत, परन्तु जैसे आवे तैसे खेवो। नाव पार जायगी मेरी इच्छा है। तब वैष्णव खेवे। सो नाव, दोऊ भाई रेति में परे हते, तहां आई लागी। तब श्रीआचार्यजी श्रीहस्त में जमुना जल ले वेद मंत्र पढ़ि दोऊ भाई के ऊपर छिड़के। सो दोऊ उठि के श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि बिनती किये। महाराज! हमकों अङ्गीकार करो। तब श्रीआचार्यजी कहें, सबेरो होय तब नाम सुनावेंगे। तब दोऊ भाई ने कही, महाराज! सबेरे लों देह रहै, न रहै, या देह को कहा प्रमान है? और आज दोऊ जने कछू खान पान तो कियो नाहीं, तातें आप ढील मति करो। श्रीठाकुरजी की कृपा तें आपको दरसन भयो। सेबेरे तांई कहा जानिये कैसी बुद्धि ह्वे जाई? तब श्रीआचार्यजी कहें, तिहारी बुद्धि कबहू बिगरे नाहीं, तुम उत्तम जीव हो। और तुम खान पान किये होऊ तोऊ तुम सुद्ध हो। पाछें दोऊन कों नाम सुनाइ ब्रह्मसंबंध पाछे करायो। नाव पर बैठाय पार आइ अपने घर ले गये। ता पाछें सेवेरो भयो तब

श्रीआचार्यजी स्नान करि श्रीठाकुरजी की सेवा सों पोहोंचि, दोऊ भाई सों कहें, तुम भगवद् सेवा करो। तब दोऊ भाई बिनती किये। महाराज ? हमारो मन तो सन्यास लेन को है। परन्तु और ठौर मन जात नाहीं। सो हमारो मन ठिकाने रहे, त्याग दसा छूटे, घरमें रह्यो जाई, तब भगवद् सेवा बने। तब श्रीआचार्यजी चरणामृत दिये, और 'सन्यास निर्णय' ग्रन्थ करि दोऊ भाईन कों सुनाये। तब रस उछलित हतो, सो हृदय में भगवद् रस स्थिर भयो। मन को उद्वेग मिटि गयो। तब श्रीआचार्यजी वस्त्र प्रसादी श्रीनवनीतप्रियजी के दिये। और कहें, तुम इनकों पधराई सेवा करियो। घरमें जाई। तिहारो मन सदा श्रीठाकुरजी की लीला में रहेगो। लौकिक वैदिक तुमकों बाधक कछू न होइगो। तब दोऊ भाई श्रीआचार्यजी कों दण्डवत् करि बिदा होई घर में आये। तब माता-पिता रोवन लागे, बेटा! दोई दिनतें तुम आये नाहीं। कहां खान पान कियो होयगो ? हम जहां तहां तांई जीवे तहां तांई एक बार हमकों दिखाई दे जायो करो। तब दोऊ भाई ने कही, हमको एक ठौर करि देऊ, तो हम हार ही में रहि जाई। तब माता पिता ने कही, जो-यह सगरी जगह तिहारी है, जहां चाहो तहां रहो। तब दोऊ भाई ने कही, जो-नाहीं, न्यारी करि देऊ। तिहारी जगे में हम न आवें। हम रहें तहां तुम मति आवो, तो हम घर में रहैं। तब एक अलग जगह बताये। सो दोउ भाई खासा करि श्रीठाकुरजी कों पधराये, मिलके रसोई करि भोग धरि महाप्रसाद लेंही। पाछें भगवद् वार्ता करें। मगन होई गये। सन्यास निर्णय को भाव लीला को भी बिचार करि रात्रि दिन भगवद् रस में मगन रहें। और माता-पिता बहोत सुख पाये, जो-पुत्र घरमें है, न मिले तो कहा भयो ?

वार्ता - प्रसंग १ - सो दोऊ भाई भगवद् वार्ता करे, तामें कबहु छोटे भाई को निंद्रा आइ जाइ और बड़ो भाई रस में मग्न होइ कहें जाई, तब श्रीठाकुरजी हूंकारी भरत जाय। जो-छोटे भाई कों निद्रा आई है, जो-हूँकारी न भरोंगो तो यह बड़ो भाई न कहेगो। तातें श्रीठाकुरजी हूँकारी भरें। पाछें जब छोटो भाई जागे तब दोऊ भाई कहें जो मैं यहां तांई सुन्यो, आगे तो मोकों निंद्रा आई। तब बड़े भाई ने कही, तुमकों निंद्रा आई तब हूँकारी कौन भरयो ? तब छोटे भाई ने कही, मैं तो सोय गयो, मोकों खबरि नाहीं। तब बड़े भाई ने कही श्रीठाकुरजी ने हूँकारी भरी होयगी। तब दोऊ भाई प्रसन्न भये, जो-श्रीआचार्यजी की कानि

तें श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागें। सो दोऊ भाई या प्रकार बालपने सों लौकिक वैदिक जाने नाहीं। संसार को ताप रंचक व्याप्यो नाहीं। ऐसे भगवदीय आनंददास विश्वंभरदास श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हे। सो इनकी वार्ता कहां तांई कहिये।

वार्ता ॥४१॥

भावप्रकाश–इनकी वार्ता में यह सिद्धान्त भयो, जो–श्रीठाकुरजी को विरह जाकों होई, ताकों वेगेहि प्रभु कृपा करें।

★ ★ ★

अब आचार्यजी महाप्रभुन के सेवकनी, एक ब्राह्मनी अड़ेल में रहती, तिनकी वार्तो कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश – सो ब्राह्मनी लीला में ललिताजी की सखी है, इनको नाम ''शशीकला'' है। सो अड़ेल में एक ब्राह्मन के घर प्रगटी। सो वर्ष नौ की भई, तब ब्याह अड़ेल में एक ब्राह्मन के घर भयो। सो रोगी रह्यो। तब यह ब्राह्मनी वर्ष पेंतालीस की भई, तब रोग को मारयो याको धनी मरयो। सो लौकिक विषय आदि घर को सुख यह ब्राह्मनी जाने नाहीं। पाछें अकेली भई तब भगवद् इच्छा तें मन में आई, जो–अब श्रीआचार्यजी की सेवक होंऊ। सो जाइ के श्रीआचार्यजी कों दंडवत् करि बिनती करी, जो–महाराज ! मोकों सरनि लीजिये। जन्म सगरो लौकिक पति की टहेल में बीत्यो, सोऊ मरि गयो। अब मैं आप की सरनि आई हों। यह कहि रोवन लागी। तब श्रीआचार्यजी कों दया आई। कहे, जा, यमुनाजी में न्हाई आव। तब वह ब्राह्मनी श्रीयमुनाजी में न्हाई आई। तब श्रीआचार्यजी श्रीनवनीतप्रियजी के आगे बैठारि नाम निवेदन कराई कहें, अब तू भगवद् सेवा करि, जासों कृतार्थ होई। तब ब्राह्मनी ने कही, मोकों सेवा पधराय दीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, काल्हि तोकों सेवा देयगें, आजु यहाँ रहि। पाछें आपु जूठनकी पातर धरी। सो वह प्रसाद ले, तहां रही। रात्र रही, पाछे प्रातःकाल भयो। तब वह ब्राह्मनी देह कृत्य करि श्रीयमुनाजी न्हाइ कें आई। इतने में एक ब्राह्मन दक्षिन सों आयो। सो याने आचार्यजी कों एक श्रीभागवत की पुस्तक और एक लालजी को स्वरूप देके कह्यो, मैं कासी जाय सन्यास ग्रहन करूंगो, सो यह आपु राखो।

वार्ता – प्रसंग १ – सो श्रीआचार्यजी उह श्रीलालजी के

स्वरूप कों पञ्चामृत स्नान कराय, वह ब्राह्मनी के माथे सेवा पधराई, श्रीबालकृष्णजी नाम धरें। तब वह ब्राह्मनी श्रीआचार्यजी कों दण्डवत् करि विदा होई श्रीबालकृष्णजी कों पधराई प्रीति सों सेवा करन लागी। श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागें। सो वह ब्राह्मनी निष्कपट भोली बहोत हती और निष्कंचन, द्रव्य नाहीं। सो माटी के कुंजा श्रीठाकुरजी आगे भरिके राखे। रसोई में हू माटी के पात्र, और घरहूँ निपट छोटो। वही घर में रसोई, मन्दिर, श्रीठाकुरजी कों सामग्री। आचार क्रिया हू बहोत समझे नाहीं और नेत्रन सों हू थोरो दीसे। सो प्रीति पूर्वक सेवा करे। तातें श्रीआचार्यजी, श्रीठाकुरजी प्रसन्न रहैं। यजमान के यहां ते कछू आवे, तामें निर्वाह करे। सो वैष्णव सब आपुस में चर्चा करन लागें। जो–यह ब्राह्मनी के माथें श्रीआचार्यजी ने भगवद् सेवा क्यों पधराई है ? यह कछू आचार समुझत नाहीं, कछू द्रव्य नाहीं। सो हमारे माथे पधरावें तो हम भली भांति सेवा करें। या प्रकार आपुस में चर्चा करें। परन्तु श्रीआचार्यजी सों कहि न सके। पाछें एक दिन एकं वैष्णव नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज ! वह ब्राह्मनी के द्रव्य को संकोच बहोत है, और आचार्य क्रिया में समुझत नाहीं, नेत्रन सों बहोत सूझत नाहीं। श्रीठाकुरजी काहू और वैष्णव के माथे पधराई देउ तो सेवा भली भांति सों होइ। तब श्रीआचार्यजी ने कही, आचार, क्रिया, द्रव्यसों, श्रीठाकुरजी प्रसन्न नाहीं, श्रीठाकुरजी में प्रीति चहिये। सो उह ब्राह्मनी की परम प्रीति है। जैसे उह ब्राह्मनी करत है तैसेही श्रीठाकुरजी मानि लेत हैं। तब वह वैष्णव चुप होइ रह्यो। पाछें श्रीआचार्यजी श्रीयमुनाजी सों संध्यावन्दन करिकें पधारत

हते। सो वह ब्राह्मनी के द्वार ह्वे जाइ निकसे। तब वैष्णव नें कही, महाराज ! उह ब्राह्मनी को घर यही है। आपु पधारिके सेवा की रीति देखिये, वाकों दरसन दीजिये। तब श्रीआचार्यजी वह ब्राह्मनी के घर पधारे, ता समें वह ब्राह्मनी रोटी करत हती। सो श्रीआचार्यजी कों पधारे जाने नाहीं। सो रोटी करिके एक धरे, सो चुपरे, सो श्रीठाकुरजी रोटी उठाइ के आरोगें। सो वह ब्राह्मनी कों नेत्र सों दीसे नाहीं। तब रोटी हाथ सों टटोरे, सो पावे नाहीं। तब मुखसों कहै, रोटी मूसा बिलाई ले जात हैं। हाथ धरती में ठोकि फेरि रोटी करे। तब श्रीआचार्यजी उह ब्राह्मनी सों कहैं, जो–तेरी रोटी श्रीठाकुरजी आरोगति हैं। मूसा बिलाई नाहीं है। तेरे बड़े भाग्य हैं। तब वह ब्राह्मनी कही, महाराज ! आपु पधारे ? मोकों दीसे नाहीं, तातें मैं जानी नाहीं। मेरो अपराध क्षमा करिये। और मेरे द्रव्य नाहीं। आपुकी कानि तें श्रीठाकुरजी आरोगे हैं। तब श्रीआचार्यजी कहे, तू जैसे करत है तैसेही श्रीठाकुरजी प्रसन्न होइ मानत हैं। याही प्रकार सदा करियो। या प्रकार वह ब्राह्मनी पर प्रसन्न होई, समाधान करि श्रीआचार्यजी अपने घर पधारे। पाछें सगरे वैष्णव सों कहें श्रीठाकुरजी स्नेह के भूखे हैं। उह ब्राह्मनी के ऊपर प्रसन्न हैं। तब सब वैष्णव जाने, जो–यह ब्राह्मनी पर बड़ी कृपा है। सो श्रीठाकुरजी या प्रकार सगरी रोटी नित्य हाथ में उठाई लेते। तब वह ब्राह्मनी कहती मैं सगरी रोटी करी। परन्तु जानी न परी मूसा बिलाई लिये। तब श्रीठाकुरजी अरोगि के वह ब्राह्मनी कों सब रोटी देते। सो वह ब्राह्मनी सों नित्य श्रीठाकुरजी ऐसे ख्याल करते। परन्तु उह ब्राह्मनी को सरल स्वभाव, बहोत, नित्य याही प्रकार कहैं। और श्रीठाकुरजी ऐसे प्रीति के बस भये, जो–बिना भोग धरे उह करत जाहीं आपु

आरोगें, पाछे देइ। सो वह ब्राह्मनी ऐसी श्रीआचार्यजी की कृपापात्र हती। वार्ता ॥४२॥

भावप्रकाश – यह वार्ता में यह सिद्धान्त भयो, निष्कपट भाव श्रीठाकुरजी कों बहोत प्रिय है। चतुराइ तें प्रसन्न नाहीं, ऐसे प्रीति के बस हैं।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवकनी, एक क्षत्रानी, सो प्रयाग में रहती, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश – अब जहां तहां नाम श्रीगोकुलनाथजी नाहीं कहें। सो माता पिता हीन नाम राखें, काहू को फकीरा, घसीटा। सो वैष्णव सों हीन नाम श्रीगोकुलनाथजी कहते नाहीं। तातें कोई वैष्णव को नाम प्रगट नाहीं किये।

यह क्षत्राणी लीला में श्रीस्वामिनीजी की सखी है। 'नीला' इनको नाम है। सो प्रयाग में एक क्षत्री के घर प्रगटी। सो क्षत्री बहोत द्रव्यवान हतो। सो काहू कों गिनतो नाहीं। सो प्रयाग में एक क्षत्री के घर बेटी दिये। सो गरीब घर हतो, तहाँ दिये। सो एक दिन जमाई कों बुलायो, सो याको दोय घरी की ढील भई। सो सास सुसर सबन ने अहङ्कार करि जेंय लियो। बेटी सों बोले, तू जय ले। तब बेटी ने कही, जमाई कों बुलाये हो वे आवें तब मैं जेऊं। तब पिता ने कही, वह न आवेगो तो हम बैठे रहेंगे? तू जेंवे तो जेंय, नाहीं तो और कों दे घालें। तब बेटी ने कही, मैं तो मेरे धनी के जेयें बिना न जेऊँगी। तब मा–बाप क्रोध करि सब उठाई डार्यो। पाछें जमाई आयो। सो सास ससुर कोई वासों बोले नाहीं। तब स्त्री ने वह पति सों कही, जो–अब इनके घर जल पीनो धरम नाहीं है। सब बात पति सों कही। तब पति ने कही, तू मा–बाप के घर फेर कबहू आइवे को नाम न लेय, तो मैं तोकों घर ले चलों। तब इन कही, मोकों ले चलो, या जन्म में तो कबहू मा–बाप को नाम न लेऊँगी। तब दोऊ अपने घर आय रसोई करि भोजन कियो। पाछे ससुर के मन में यह आई, जो–बेटी रांड होऊ तो सुखेन होऊ, परन्तु जमाई कों मारनो। सो कछू द्रव्य दे मनुष्य लगाइ राखे। सो एक दिन याके माता–पिता और बेटा बहू मकर न्हाइवे प्रातही चले, सो मनुष्यन नें तीनों मारे। एक उह क्षत्री की बेटी कों छोड़े। पाछें यह बात हाकिम ने जानी, सो वाहू को घर लूटि लियो। पाछें वाके घर में आग लागी। तामें ये क्षत्राणी के माता–पिता कुटुम्ब सब जरे। इकली रहि गई। सो चरखा कांति के निर्वाह करे। सो एक दिन श्रीजमुनाजी न्हान गई, कार्तिक के दिन हते। सो दोय घडी पिछली रात्री सों गई।

तब न्हाइवे कों पेंठी, न्हाइ के कपरा पहर्‍यो। कपरा पहरि के लोटा जल सों भरे। तब एक श्रीठाकुर लालजी को स्वरूप लोटा में आयो। सो याकों खबरि नाहीं। सो न्हाय के घर आई तुलसी के लोटा को जल चढ़ायो। तब तुलसी के पास श्रीठाकुरजी जाय बैठे, सो देखिके चक्रत भई। जो-ए स्वरूप ! कहा इनकी इच्छा है ? यह बिचार करत तुलसी के पास बैठी। सो ऊह बेर देहकी सुधि न रही। ऐसी चिन्ता भई, जो-अब मैं कौन सों पूछों। कोई घर में है नाहीं। सो रसोई की सुधि भूलि गई। कबहूं श्रीठाकुरजी कों हाथ में लेई, कबहू फेरि तुलसी में धरि देई। ऐसे बिचार करत अर्द्धरात्रि गई तब श्रीठाकुरजी कहें, तू-बिचार कहा करत है ? प्रातःकाल मोकों पधराइ श्रीआचार्यजी के पास जाई सेवकनी होइ, मेरी सेवा करि। मैं तो परि कृपा करन के लिये, तेरे माथे श्रीयमुनाजी सो तेरे लोटा में आयो हूँ। तब प्रसन्न होई सगरी रात्रि भूखी तुलसी पास बैठि रही। पाछे प्रातःकाल भयो तब, श्रीठाकुरजी कों ले श्रीआचार्यजी के पास अड़ेल जाइ दण्डवत करि, सगरी बात कहि बिनती करी, जो-मोकों सेवक करो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, तेरे बड़े भाग्य हैं, तेरे कुटुम्ब में तू दैवी है सो श्रीठाकुरजी तेरे ऊपर कृपा किये। जो बिना सेवा किये पहले ही तोसों बोलें। पाछे वह क्षत्राणी कों नाम सुनाय निवेदन कराये। पाछे श्रीठाकुरजी कों पंचामृत स्नान कराई, पाट बैठारि उह क्षत्राणी के माथे पधराये। और कहे, अब तू घर जा, मन लगाई के इनकी सेवा करियो। इनको नाम श्रीबालकृष्णजी हैं। सो बालक की नांई स्नेह राखियो। तब उह क्षत्राणी श्रीआचार्यजी कों दंडवत् करि, श्रीठाकुरजी कों पधराई के प्रयाग में अपने घर आई। सो सेवा करन लागी।

वार्ता - प्रसंग १ - सो चरखा कांते, सूत बेचे, तामें तें दोई पैसा न्यारे धरे। यों करत जब कछू पैसा भेले भये, तब दिन दस बारह की बालभोग की सामग्री करि राखी। तब घी, खांड लाई मेंदा छानि के, लाडू करे। पाछे एक हांडी भरि मुंह बांधि के मन्दिर में छीका पर धर्‍यो। मन में बिचार्‍यो, जो-दिन दस-बारह कों तो बालभोग करन सों निश्चिन्त भई। सो राजभाग सों पहोंचि अनोसरि कराइ, महाप्रसाद ले चरखा कांतन बैठी। तब श्रीआचार्यजी की कानि'तें, श्रीठाकुरजी सिंघासन पर सों उठि छीका पर ते लाडू की हांडी उतारे। पाछें सिंघासन पर लेके बैठे। हांडी में ते निकासिके लाडू आरोगन लागे। सो मन्दिर में हांडी

को आहट होन लाग्यो। तब वह क्षत्रानी ने मन में बिचार कियो, जो–मंदिर में हाँड़ी को सब्द होत हैं, सो सामग्री की हांडी में मूसा बिलाई तो न लागी होई ? यह विचारि के हरुवे सों मन्दिर कें किंवाड़ खोलि, भीतर जाई देखे तो श्रीठाकुरजी हांडी सिंघासन पर लिये बैठे हैं। वामें ते लाडू अरोगत हैं। यह देखिके वह क्षत्रानी छाती कूटन लागी। कहें, यह सामग्री तो आपुही के लिए करी हती, दिन दस–बारह की, सो आजु ही अरोगें सब ? तब श्रीठाकुरजी कहैं, तू इकठोरी करिके सामग्री निश्चिन्त ह्वै के बैठी, दस–बारह दिन कों। सो मोकों तो नित्य नई ताजी होई सो भावत है। बासी सामग्री कौन काम की ? तब वह क्षत्रानी दंडवत् करि बिनती किये, महाराज! मैं चूकी जो ऐसी करी, अब नित्य ताजी करूँगी, आलस्य न करूँगी। तब तें वह क्षत्रानी नित्य नई सामग्री करिकें धरन लागी। वार्ता ॥४३॥

भावप्रकाश– और श्रीठाकुरजी सगरी सामग्री यातें अरोगे, जो–नित्य सामग्री नई करिवे की आरति रहै। जो–निश्चिन्त रहैंगी तो मनको निरोध न होइगो। मन जहां तहां भटकेगो, तातें अरोगे सब। और यह वैष्णव कों जताए, जो–बासी सामग्री काम की नाहीं। ताजी नित्य नौतन अति प्रिय हैं। और वह क्षत्रानी ने छाती यातें कूटी, जो–यह पुष्टिमार्ग की मर्यादा है, जो–वैष्णव भोग धरे सो श्रीठाकुरजी अरोगे । सो ठाकुरजी नें मर्यादा छोडी, सामग्री आपही अपने हाथ सों अरोगें। तो कहूँ मोकों न छोड़े। मर्यादा जैसे छोड़े तेसे मोकों छोड़े, तो अनर्थ होइ। और यह भाव है, जो–श्रीठाकुरजी आपु लेके अरोगे तामें सेवा सिद्ध न भई मोसों आज्ञा करते, मैं अपुने हाथ सों धरती, तो मेरे हाथ सों फल होतो। मेरी सेवा गई, सो सेवा के लिये छाती कूटी। काहे तें, जो सामग्री श्रीठाकुरजी के लिये करी हती, सो श्रीठाकुरजी आरोगे। तामें तो प्रसन्न होइ। सो छाती कूटी, सेवा गई ताके लिये। और यह वार्ता में यह जताये, जो–सामग्री श्रीठाकुरजी के लिये विचार के करिये, तो श्रीठाकुरजी प्रीति सों अरोगें, जो–और मनोरथ किये, जो–लोगन को समाधान करनो है, हमकों यह वस्तु बहोत भावत हैं, इत्यादिक भाव होइ, तो दृष्टि सों अङ्गीकार करें। परन्तु प्रसन्न

होई के न अरोगें। तातें श्रीठाकुरजी के भाव सों सामग्री करनी। सो वह क्षत्रानी श्रीआचार्यजी की कृपापात्र भगवदीय ही। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये।

वैष्णव ॥४३॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवकनी, सास–बहू, सास को नाम गोरजा, और बहू को नाम समराई, क्षत्रानी सिंहनन्द में रहती, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश – ए दोऊ लीला में श्रीस्वामिनीजी की सखी चन्द्रभागा तिन की सखी हैं। इनको नाम लीला में ''नन्दा'' सखी सो सास भई गोरजा। और ''वृन्दा'' सखी बहू, याको नाम समराइ, सो ये सिंहनंद में रहेती। इनकों सेवक श्रीआचार्यजी जा प्रकार किये सो वासुदेवदा छकडा की वार्ता में उपर कहि आये हैं।

वार्ता –प्रसंग १ – सो श्रीठाकुरजी की सेवा करती। सो एक समय श्रीआचार्यजी थानेस्वर पधारे। सो थानेस्वर के और सिंहनन्द के बीच सरस्वती नदी है। सो श्रीआचार्यजी सरस्वती को उल्लंघन न करते।

भावप्रकाश–काहे तें, सरस्वती के पति हैं, स्त्रीको उल्लंघन कैसे करें ? तातें सिंहनंद में आपु न जाते।

सो सिंहनन्द के वैष्णव थानेस्वर आइ, श्रीआचार्यजी को दरसन करते। सो श्रीआचार्यजी जब थानेस्वर पधारे, तब बधैया जाइकें सिंहनंद में सगरे वैष्णवन कों बधाई दीनी, जो– श्रीआचार्यजी थानेस्वर पधारे हैं। तब सास बहू सों कहे, जो– मैं श्रीआचार्यजी के दरसन कों थानेस्वर जात हों। तू श्रीठाकुरजी कों जगाइ पहले मंगला करि, पाछें शृङ्गार करियो। ता पाछे राजभोग धरिके श्रीठाकुरजी सों पहोंचियो। मैं श्रीआचार्यजी के दरसन करि आऊं, पाछे तू जइयो। तब बहू प्रसन्न भई, जो– आजु मैं श्रीठाकुरजी कों शृङ्गार करूंगी, भोग धरोंगी। सो सास

सों कह्यो, तुम दरसन करि आवो, पाछे मैं जाऊंगी। तब सास श्रीआचार्यजी के दरसन करिवे थानेस्वर गई। (इहां) बहू बेगे न्हाइके श्रीठाकुरजी कों मंगल भोग धरि पाछें शृङ्गार कियो। पाछे रसोई सगरी करि थार कटोरा साजिकें श्रीठाकुरजी कें आगे भोग धर्‍यो। टेरा लगाइ बैठी। सगरे पात्र मांजि रसोई पोती, इतने समय भयो। सो भोग सराइवेकों जाइ देखे तो थार कटोरा, सगरी सामग्री सों ज्यों के त्यों भरे हैं। तब श्रीठाकुरजी सों कह्यो, महाराज! मेरी सास तो सिंहनन्द श्रीआचार्यजी के दरसन कों गई है, मैं तो कछू जानत नाहीं। मोसों सास ने कह्यो ता प्रकार कियौ। और तुम आरोगे नाहीं, अब मैं कहा करूं ?

पाछे फेर बहूने जान्यों, जो–मैं कछू चूकी होऊंगी, तथा रसोई कछू छूई गई होइगी। तब फेरि पात्र सगरे मांजि, रसोई पोति, आछी भांति न्हाइ फेरि रसोई करी। फेरि थार कटोरा में सामग्री धरि श्रीठाकुरजी कों भोग धर्‍यो। टेरा लगाई बाहर आई। रसोई के पात्र मांजि रसोई पोती सामग्री फेरि ज्यों को त्यों स्थापित देखि बहोत बिलबिलान लागी। कह्यो, महाराज मैं तो कछू जानत नाहीं, आपु क्यों नाही आरोगत ? सो रुदन करत जाय और मनमें कह्यो, कछू भारी अपराध पर्‍यो मोसों, सो श्रीठाकुरजी नाहीं आरोगे। पाछे फेरि तीसरी बेर अपरस काढ़ि सावधान होइ सगरी रसोई करी। थार कटोरा में धरि श्रीठाकुरजी कों भोग धर्‍यो। पाछे टेरा लगाई रसोई के पात्र साजि रसोई पोति के टेरा सरकाई भोग सरावन कों गई। सो सामग्री सब ज्यों की त्यों देखि महा दुःख भयो। जो–तीन बार मैं रसोई करी, सो तीनों बार श्रीठाकुरजी अरोगे नाहीं। यह दुःखी और श्रमित हू

बहोत भई। सो मुर्छा आई, पछार खाइ कै भूमि में गिर परी। कंठ सूखि गयो। श्रम के मारे। तब श्रीठाकुरजी सिंघासन सों उठि अपनी झारी सों जल वाकों पिवायो। तब सावधान भई नेत्र खोले। सो वह बहू को दुःख श्रीठाकुरजी सों सह्यो न गयो।

भावप्रकाश – सो वह सूधी हती, छल कपट कछू जानत नाहीं।

तातें श्रीठाकुरजी प्रसन्न होइ के बहू सों कहें, तू खेद काहे कों करत है ? तू तीन बार रसोई करी, सों मैं तीनों बार अरोग्यो हूँ। तू सन्देह क्यों करत है ? तब बहू ने कही, मैं कैसे मानूं ? सामग्री तो सब ज्यों की त्यों धरी ही देखती। तब श्रीठाकुरजी कहैं, जामें मेरो हस्त परे सो वस्तू घटे नाहीं। और तू नाहीं मानति तो काल्हि सवारे तेरे देखत आरोगूंगो। तातें अब तू महाप्रसाद ले, मैं तीनों बार अरोग्यो। तें कछु लियो नाहीं, तातें तू सिथिल है। तब बहू उठिके सखड़ी प्रसाद सब गायन कों खवाय दियो। आपु कछू न लियो। उही श्रीठाकुरजी नें झारी सों जल पान कराये, सोई लैकें रही।

भावप्रकाश – सो यातें, जो– श्रीठाकुरजी साँच कहत हैं, के मोकों योंही समाधान करत हैं ? सबेरे भोजन करते देखोंगी, तो महाप्रसाद लेऊंगी।

पाछे सवेरे की सामग्री बिनकै सिद्ध करि रात्रि कों सोइ रही। प्रातःकाल होत ही, देह कृत्य न्हाई कें मंगला शृङ्गार करि बेग ही रसोई सगरी सिद्ध करी। थार कटोरा में पधराइ, श्रीठाकुरजी के आगे भोग धरि, पाछे टेरा लगावन लागी। तब श्रीठाकुरजी कहें, अब तू टेरा काहे कों लगावत है ? पाछे तोकों विस्वास न होइगो। तातें तेरे आगे अरोगत हों। तब वह पास बैठी, श्रीठाकुरजी भली भांति सो सगरी सामग्री अरोगे। तब बहू सों हास्य विनोद करि

सब रस को अनुभव करायो। पाछें श्रीदामोदरजी यह बात सगरी श्रीआचार्यजी सों कहें, जो–मोकों समराई बहोत सुख देत है। सो बात श्रीआचार्यजी ने मन में राखी, जो–समराई आवेगी दरसन कों, तब पूछेंगे। पाछे श्रीठाकुरजी जा प्रकार समराई कह्यो ताही प्रकार अरोगे। सगरी सामग्री ज्यों की त्यों भरी देखी। तब बहू के मनमें विस्वास आयो, जो–श्रीदामोदरजी काल्हि तीनों बार अरोगे, यामें संदेह नाहीं। पाछे अनोसर कराय बहू ने महाप्रसाद लियो। या प्रकार पांच दिन लों नित्य श्रीठाकुरजी कों आपुने आगे अरोगायो। पाछे सास श्रीआचार्यजी सों बिदा मांग्यो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, बहू कों बेगी दरसन कों पठाइ दीजो। सो सास आइ बहू सों कह्यो, जो–अब तू श्रीआचार्यजी के दरसन करि आव। तब बहू श्रीआचार्यजी के पास आइ दण्डवत् कियो। ता समय श्रीआचार्यजी रसोई करत हते। तब बहू सों कह्यो, जा न्हाइ आव, रोटी बेलि दे। तब समराई न्हाइ के आई, रोटी बेलन लागी। तब श्रीआचार्यजी समराई सों कहें, तेरी बात श्रीठाकुरजी श्रीदामोदरजी ने सगरी हमारे आगे कही। तोकों सब रस को अनुभव जतायो। तेरे बड़े भाग्य हैं। तब समराई ने कही, जो–श्रीठाकुरजी के पेट में इतनी बात हू न ठहरी, तो उनसों कहा कहिए आखरि बालक हैं। यह बात सुनिकें श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न भये। और कहे, ऐसे वैष्णव कों तो घर जाई के दरसन देनो उचित है, परन्तु कहा करिये, सरस्वती उल्लंघनि नाहीं। पाछें दिन दोय समराई रहि श्रीठाकुरजी की सगरी बात श्रीआचार्यजी सों कहै। पाछें तीसरे दिन आज्ञा मांगी। तब श्रीआचार्यजी कहैं ऐसे वैष्णव कों आज्ञा क्यों दीजिये ? सदा इनकी वार्ता सुनिये। परन्तु श्रीठाकुरजी इनसों प्रसन्न हैं,

इन बिना रहि नाहीं सकत, तातें बिदा दिये। तब समराई दण्डवत् करि बिनती किये, महाराज ! यह सब आपु की कृपातें है। नाहीं तो कहां श्रीठाकुरजी कहां हम संसारी जीव ? आपु की का 'नी तें श्रीठाकुरजी हम सरीखी पर कृपा करत हैं। यह कहिकें चली। सो बहू की दैन्यता सुनि श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न भये। जो-ऐसे वैष्णव दुर्लभ हैं। श्रीठाकुरजी जिनसों बोलें, तिनही कों ऐसी दैन्यता होइ। पाछे बहू घर आई। सास तें सब श्रीआचार्यजी के समाचार कहै। जो-बड़ी कृपा अपने ऊपर है। इतने बहू की रञ्च आँख लागी, नींद आई। श्रमित आइ हती। सो इतने में सास भोग धरि वासन मांजन लागी। तब बहू चोंकि परी। श्रीठाकुरजी कैसे अरोगते होंयगे ? सो नहाई के मन्दिर में गई। श्रीठाकुरजी कों फेरि अपने आगे अरोगायो। तब सास सों श्रीठाकुरजी ने जताई, जो-रसोई उपर की टहेल तू करियो, और शृङ्गार बहू करेगी। भोगहू बहू धरेगी, बहू के हाथसों मैं भली भांति सों अरोगत हों। तब तें सास ने बहू सों कह्यो, श्रीठाकुरजी तेरे उपर बहोत प्रसन्न हैं, तातें शृङ्गार तू करियो, भोग हू सगरो तू धरियो। मैं रसोई करोंगी। और उपर की टहेल करोंगी।

सो बहू नित्य नौतन शृङ्गार करती, सामग्री बैठिकें नित्य श्रीदामोदरजी कों अरोगावती। श्रीठाकुरजी सदा प्रसन्न रहते। सो सास बहू ऐसे भगवदीय श्रीआचार्यजी के सेवक कृपापात्र हे। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥४४॥

भावप्रकाश – या वार्ता में यह जताये, जो-निष्कपट प्रीति श्रीठाकुरजी कों प्रिय है। वैष्णव ॥४४॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवकनी, कृष्णादासी श्रीरुकिमिनीजी की खवासी करती, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं-

भावप्रकाश - यह कृष्णादासी श्रीस्वामिनीजी की अंतरंगिनी सखी है। ''ब्रजमंगला'' लीला में इनको नाम है। सो ए पूर्व में पटना तें दोइ कोस पर एक गाम है। तहाँ गौड़ ब्राह्मन के घर जनमी। सो वर्ष पांच की भई, सो एक दिन माता के संग गंगा-स्नान कों गई। तहां एक नाव पारतें आवत हती। सो नाव काष्ठ को भर्‍यो हतो, और मल्लाह हते। सो वर्षा ऋतु हती, सो नाव फाटी, मल्लाह तरि कें पार आये। काष्ठ सगरो बहि चल्यो। सो कृष्णो तीर ठाड़ी रही। सो करोड़ो टूटि के गिर्‍यो गंगाजी में। सो कृष्णो और कृष्णो की माता दोऊ गिरी। सो माता की देह छूटि गई। और कृष्णो बालक, सो काष्ठ हाथ में आई गयो। सो काष्ठ कोस पांच जाय लग्यो। तहाँ श्रीआचार्यजी संध्या-बंदन करत हते। तब छोरी यह रोई। तब श्रीआचार्यजी ने कह्यो यह कौन बालक है ? दोखो तो, यह बहि आई है। सो याकों गाम में पहोंचती करो। पटना इहां ते पांच कोस है। तब कृष्णदास वह छोरी की बांह पकरि श्रीआचार्यजी पास ले आये। तब श्रीआचार्यजी दैवी जीव जानि नाम सुनाय निवेदन करायो। पाछे कहें, कोई वैष्णव पास महाप्रसाद होय तो याकों खवायो। तब कृष्णदास नें प्रसाद खवायो। पाछें श्रीआचार्यजी कहें, अपने पुरुषोत्तमपुरी श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन कों पधारनो है, तातें कोई मनुष्य करि लावो, याकों पटना पहोंचावो। तब कृष्णदास एक मनुष्य करि, लाये। वाकों एक रुपैया दिये, सो उह छोरी कों गोद में लियो। तब श्रीआचार्यजी कृष्णदास सों कहें, या छोरी कों पटना में ठिकानो पार तू अइयो। तहां तांई हम इहां बैठे हैं। सो कृष्णदास संग चले, सो पटना आये। हरिवंस पाठक मिले, कासी रहते। पटना में व्यौहार कों आवते। तब हरिवंस पाठक सों कहे, यह छोरी कों ठिकाने तुम पारि दीजो, श्रीआचार्यजी मेरे लिये बैठि रहे हैं, तातें मैं जात हों। तब हरिवंस पाठक वह छोरी कों महाप्रसाद लिवाये। कृष्णदास श्रीआचार्यजी महाप्रभु पास आये। पाछे आप पुरुषोत्तमपुरी कों पधारे, पाछे हरिवंस पाठक ने दिन सातलों सगरे गाम में ठिकानो पारे। तब एकने बतायो, फलाने गाम के ब्राह्मण की बेटी हैं, गोड़ ब्राह्मण है। तब वाके घर कहेवाये, सो पिता आयो। कह्यो, बेटी चलि, माता तेरी मरी तू कैसे बची ? तब बेटी कों नाम समर्पन भयो, दैवी जीव, सो बुद्धि निर्मल ह्वै गई। सो कह्यो, तिहारे लेखे तो मेरी मा मरी और मैं मरी। काहेतें, मैं श्रीआचार्यजी की सेवकनी भई हों, सो वैष्णव बिना और के हाथ को पानी न पीऊंगी। तब पिताने हरिवंस पाठक सों कह्यो, तुम वैष्णव हो , जैसे हमारी बेटी तैसे यह तिहारी बेटी। तुम घर में राखो दोई चारि वर्ष पाछे याको ब्याह करि दीजो। हमारे हाथ को यह

जल पीवन नाहीं कहत है, और हमारे पास कछु पैसा हू नाहीं हैं, सो याको व्याह कहां तें करेंगे ? तब हरिवंस पाठक कहैं, आछो, भगवद् इच्छा। श्रीआचार्यजी के सेवक कों कैसे काढ़ि दीजे ? परन्तु कासी में हमारो घर है, तहाँ स्त्रीन में रहेगी। तब वाके पिताने कही, आछो। यह कहिकें यह छोरी को पिता घर गयो। पाछे हरिवंस पाठक कासी आये। सो वह छोरी कूं ले आये। पीछे वर्ष दस की भई। तब सगाई ढूँढ़े। सो कोई ब्राह्मण करे नाहीं, जो-हम याकों क्यों ब्याहैं ? याकी जात को, खान पान को, ठिकानो नाहीं। और यह छोरी सबकों पुकारि के कहति है, जो-श्रीआचार्यजी को सेवक होई ताके हाथ सों खानपान करोंगी। सों याकों कौन विवाहै। तब हरिवंस पाठक वह छोरी सों पूछे, जो-अब हमारे घर में तेरो निर्वाह नाहीं। वर्ष दोय पाछे तेरी अवस्था तरुन होयगी, तब लोग निन्दा करेंगे। जो-कुंवारी कन्या घरमें राखी है। सो तोकों अब कहा कर्तव्य है ? तब कृष्णो ने कही मोकों अडेल में श्रीआचार्यजी के घर पठाय देउ, तहाँ मैं रहूँगी। तब हरिवंस पाठक कृष्णो कों संग ले अड़ेल आय श्रीगुसांईजी को दंडवत करि, सगरी बात कृष्णो की कही। तब श्रीगुसांईजी कही, कृष्णो हमारी है, सो बहूजी पास रहैगी। तब कृष्णो ने श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि बिनती कियो, महाराज ! मैं तो आप की दासी हों। श्रीआचार्यजी मेरो हाथ पकरे हैं। सो आपुके चरणारविंद बिना मेरो कहूँ ठिकानो नाहीं। तब श्रीगुसांईजी कृष्णो की दैन्यता देखि बहोत प्रसन्न होय के कहें, हमारो प्रागट्य तो तुम सरीखे वैष्णव के लिये है। ताते यह घर तिहारो है सुखेन रह्यो। तब कृष्णो श्रीरुकिमिनी बहूजी की खवासी में रही। हरिवंस पाठक श्रीगुसांईजी सों विदा होई के कासी आये। कृष्णो सगरे घर को काम टहल करे। सो सगरो परिवार प्रीतिसों बस करि लियो। कृष्णो कहे सो होई। श्रीगुसांईजी हूँ श्रीआचार्यजी की कृपापात्र सेवकनी जानि, कृष्णो की का'नि बहोत राखते।

वार्ता – प्रसंग १ – सो कृष्णो रुकिमिनी बहुजीकी खवासी करे। सो एक समय श्रीरुकिमिनीजी बहूजी को गर्भाधान रह्यो। तब कृष्णो ने कही, अबके बहूजी के बेटा होइगो, तीनको नाम श्रीगोकुलनाथजी धरोंगी। सो गर्भ के दिन पूरे भये तब श्रीरुकिमिनी बहूजी के पेटमें पीर उठी। तब कृष्णो जाइके एक पंडित जोतिसी सों पूछे, अब मुहूर्त कैसो है ? तब जोतिसी ने कही, अबही दोइ चारि दिन नीके नाहीं हैं। तब कृष्णादासी आई

श्रीरुकिमिनी बहूजी के पेट पर हाथ फेरि कह्यो, महाराज ! अबही मति पधारो, दोय चारि दिन आछे नाही हैं। तब तत्काल पीड़ा रहि गई। पाछे पांच सात दिन बीते, तब कृष्णादासी फिरि वह पंडित जोतिसी के पास जाइ पूछे, जो–अब मुहूर्त कैसो है ? तब वह जोतिसी ने कही, आज बहोत सुन्दर दिन है, भलो मुहूर्त आज है। तब कृष्णो आई, श्री रुकिमिनी बहूजी के पेट पर हाथ फेरि कह्यो महाराज ! आज बहोत सुन्दर मुहूर्त है, भलो मुहूर्त आज है। अब पधारो। तब ततकाल बालक प्रगट भये। पाछे श्रीगुसांईजी ने नामकरण कियो, सो वल्लभ नाम धरयो। परन्तु कृष्णो ने पहले ही श्रीगोकुलनाथजी नाम धरयो है। तातें जगत में प्रसिद्ध श्रीगोकुलनाथजी नाम परयो। घरमें श्रीवल्लभ कहेतें। और जन्मपत्रिका में श्रीकृष्ण नाम हैं। सो श्रीगुसांईजी गोप्य राखे। सो कृष्णो की ऐसी का'नि राखते और जब श्रीघनश्यामजी को जन्म भयो, तब नामकर्ण समें श्रीवल्लभजीने कही, इनको नाम श्रीगोकुलनाथजी धरो। तब श्रीगुसांईजी कही, यह नाम तो तिहारोई है। घरमें वल्लभ कहेत हैं। और सगरे जगत में तो तिहारो नाम श्रीगोकुलनाथजी है। कृष्णो भगवदीय तिहारो नाम धरयो है, सो फेरयो न जाई।

वार्ता – प्रसंग २ – और एक समय शरद ऋतु आई। तब रुकिमिनी बहूजी ने कृष्णो सों कही, कोई शरद निसा को वरनन करो। तब कृष्णो 'शरद निसा' करिकें गायो। सो श्रीगुसांईजी बहोत प्रसन्न होइकें कहैं, मानों रास में ठाड़े है के गान कियो। सो कृष्णा को नन्दालय की लीला, रासादिक लीला को अनुभव है। सो बहुत कीर्तन किये हैं। अष्टप्रहर भगवद् रसमें मगन रहतीं।

सो कृष्णा दासी ऐसी श्रीआचार्यजी की कृपापात्र भगवदीय हे। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥४५॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, बुला मिश्र पश्चिम में रहते, सो सारस्वत ब्राह्मण हते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ये लीला में श्रीस्वामिनीजी की सखी विसाखाजी, तिनकी सखी हैं। लीला में इनको नाम ''सुमन्दिरा'' है। सो ए लाहौर में पश्चिम दिसा में सारस्वत ब्राह्मण के घर प्रगटे। सो वर्ष दस के भये, तब पिता ने बूला मिश्र सों कह्यो, कछू शास्त्र पढ़ो तो आछो है। नाहिं तो मेरी नांई मूर्ख रहोगे। तब बूलामिश्र ने कही, कहूँ पंडित ठीक करि मोकों बताओ, तहाँ मैं पढूँ। सो लाहोर में एक पण्डित पास बैठाये पढ़न कों। तब वह पंडित ने कही, मेरी दस पांच रुपैया सों पूजा करो तो पढ़ाऊँ। तब बूला मिश्र उठि के घर आय बैंठे। तब पिता ने कही, घर में फेरि क्यों आये ? घर में बैठ्यो पढ़ेगो ? तू जन्म ते घर ही में रह्यो सो लुगाई को काम सिखेगो। बाहर निकसतें लाज लागी होयगी ? तब बूला मिश्र ने कही, इहां तो जाके पास पढ़न जइयें, सो द्रव्य माँगत है। ताते अब मैं कासी पढन जात हूँ मोकों बोली ठोली क्यों मारत हो ? तब पिता ने कही तू घर में ते बाहिर निकसबे को मन नाहीं करत है, सो कासी कैसे जायगो ? तब बूला मिश्र उठिकें पिता कों नमस्कार कियों, जो–मैं कासी चल्यों। तब पिता के मन में नाहीं आई। जान्यो, जो–यह कहां अकेलो जायगो ? काहू गाम में बैठि रहेगो। सो पिता बोल्यो नाहीं। और बूला मिश्र तो चले सो गाम में चून माँगि के अंगाकरि खाय। या प्रकार कछुक दिन में कासी आये। सो भिक्षा वृत्ति सों निर्वाह करें। और पढ़िवे कों पंडित पास जाई। सो तीन बरस लों जतन पढवे को बहुत किये, परन्तु रञ्च हू विद्या न आई। तब पंडित ने कही, हम अनेक विद्यार्थी कों पढ़ाये, परन्तु तेरे सरीखो मूढ़ न देख्यो। तीन बरस लों तु हू पढ़ये कों पच्यो, मैं पढ़ावत पच्यो। परन्तु अक्षर हू को ज्ञान तोकों न भयो। अब तू काहे कों पचत है ? विद्या तेरे भाग में नाहीं है। तब बूला मिश्र के मनमें बहोत दुःख भयो, जो–विद्या पढ़ने के लिये घर छोड्यो, इतनो दुःख सह्यो, परन्तु विद्या न आई। तातें मैं सरस्वती के ऊपर मरूँगो। सो गङ्गाजी के तीर कासी सों दूरिजाइ, जहां कोई मनुष्य नाहीं, तहां जल छोड़ि के बैठे। सो तीन रात दिन बीते, जलहू न लिये। तब सरस्वती गंगा के भीतर होई, बूला मिश्र सों कह्यो, जो–तू मेरे उपर क्यों बैठ्यो, मरिबे ? मैं तो

भगवान की दासी हूँ, सो भगवान जहाँ मोकों पढ़ावे तहाँ जाऊँ। और जगत में सर्व कार्य के करता तो भगवान हैं। सो भगवान को भजन तू करि। भगवान प्रसन्न होंयगे तो विद्या कहा, जो चाहेगो सो मिलेगो। सो मेरे ऊपर मरिवे बैठ्यो सो तू सुखेन मरि। भगवान की इच्छा के बिना काहू के पास जाऊँ नाहीं। और जो भगवान की इच्छा होई तो शुद्र, चांडाल के पास हूं जाऊँ। और वह पंडित ह्वे जाई। भगवान की इच्छा न होई तो पड्यो होई सोई मूर्ख ह्वे जाई। कैसोऊ ब्राह्मण होऊ परन्तु मैं न जाऊँ। यह मैं तोकूं बतायो। अब तेरो मन आवे तो मरि, भावे जीऊ। परन्तु भगवान् की इच्छा तोकूं विद्या देवे की नाहीं है। तब बूला मिश्र ने कही, मोसों भगवद् स्मरण भजन तो बनेगो नाहीं। परन्तु अब तांई तेरे ऊपर मरत हतो सो अब भगवान के ऊपर मरूंगो। परन्तु विद्या आवे तब ही जल पान करूंगो। तब सरस्वती गई। पाछे वह भगवान को नाम विष्णु, विष्णु कहन लाग्यो, सो रात दिन कहे। तब भगवान ने सरस्वती सों कही, तू मेरे माथे मरिवे कों ब्राह्मण बैठायौ, अब जा मेरी इच्छा है। विद्या दे, वाकों खान पान कराय आऊ। तब सरस्वती, स्त्री को स्वरूप करि, बूला मिश्र पास आय कह्यो, ब्राह्मन नेत्र खोलि तब वह पूछ्यो, तू कौन है, तब बाने कही, मैं सरस्वती हूँ, मोकों भगवान पठाये हैं सो अब मैं तेरे पास आई हूँ। सो विद्या चाहिये तितनी ले। तब बूला मिश्र ने कही, अबही काल्ही ही तो तू कहि गई, जो-विद्या तेरे भाग्य में नाहीं। आज अब विद्या देन क्यों आई है ? तब सरस्वती ने कही, भगवान की इच्छा यह भी जो तू विद्या दे, तब हों आई। तब बूला मिश्र ने कही, भगवान की इच्छा अब विद्या देने की क्यों भई ? पहले तो न हती। जो-पहले होती तो तीन बरस पढ्यो, सो कछू ना आयो। सो भगवान तुमकों अब मेरे पास क्यों पठाये ? तब सरस्वती ने कही, तुम रात्रि दिन भगवद् नाम लियो सो भगवान तुम पर प्रसन्न भये। तुम्हारी पाप दूरि हो गये। तातें भगवान ने पठाई मोकों, तुम मन लगाई भगवद् नाम लियो, ताको प्रताप है। तब बूला मिश्र ने कही, जो-भगवान तें भगवान को नाम श्रेष्ठ है, जाके लिये भगवान प्रसन्न भये। तो अब मैं विद्या नाहीं चाहत। विद्या तें भगवत् नाम बडो देख्यो, सो अब तू जा, विद्या मोकों नाहीं चहिये। अब भगवान ही आवेंगे तो दरसन करूँगो। और तब ही कछू लेऊँगो ?

तब सरस्वती भगवान कों जाई कह्यो, जो-महाराज ! वह तो विद्या नाहीं लेत है, आपको दरसन चाहत है। तब भगवान् प्रसन्न भये, जो ऐसो या काल में कौन है, जो-मोकों चाहेगो ? ताकों मैं हूँ चाहूँगो। तब भगवान गङ्गाजी के भीतर ते वानि द्वारा कहैं, ब्राह्मण अब तू खानपान करि। पाँच दिन भये जल नाहीं लियो, सो मै प्रसन्न हूँ तिहारे ऊपर। विद्या आदि वर चहिये सो लेऊ। तब बूला मिश्र ने कही,

महाराज ! अब मेरे कछू नाहीं चहिये, कृपा करिकें मोकों एक बार दरसन देऊ। तब भगवान ने कही, जो–तुम अड़ेल में श्रीवल्लभाचार्यजी बिराजे हैं, तहाँ जाईके उनकी सरनि होउ। तब तुम कूं मेरो दरसन तहाँ होयगो। तब बूलामिश्र कहें, महाराज ! एक बार मोकों दरसन देऊ। जो–आपके दरसन किये मोकों माया ना लागेगी। नाहीं तो मैं खानपान कियो, अनेक लोगन को संग भयो, और माया लागी। पाछे मनको और बुद्धि को ठिकानो नाहीं। अड़ेल में जावे, बीच ही में मोकों मारि डारे तो मैं कहाँ करूँ ? भगवान प्रसन्न होई, बूलामिश्र कों चतुर्भुज रूप सूं दरसन दे कहें, अब तुम अड़ेल जाऊ। श्रीआचार्यजी तिहारो मनोरथ पूर्ण करेंगे। और तुमकों माया न लागेगी। तब बूलामिश्र दंडवत् करि बिनती करी, महाराज ! मेरे अपराध क्षमा करो, जो–मैं आपसों हठ कियो। कहाँ मैं तुच्छ जीव, कहाँ आप पुरुषोत्तम ? सो मेरो कह्यो आप साँचो कियो। परन्तु आपकी माया मोकों जगत में अनेक प्रकार सों भटकाये, बहोत कलेश दियो। ताते मैं आपकों दरसन की बिनती करी। तब भगवान बूलामिश्र को समाधान करि आप अन्तर्धान भये। बूलामिश्र खानपान कियो। भगवद् महात्म्य नाम को देखे, सो दृढ़ विश्वास भयो। सो अष्टप्रहर भगवद् नाम लेत अड़ेल चले। सो कछू दिन में अड़ेल में आय, श्रीआचार्यजी को दरसन करि दंडवत् कियो। तब श्रीआचार्यजी बूलामिश्र सों कहे, जो–तू धन्य है, जो–ऐसी धीरज धरि दृढ़ता करी। जो–यही देह सों भगवान को दरसन पायो। तब बूलामिश्र ने श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज ! दरसन भये सोऊ आपकी कृपा, परन्तु भगवान के स्वरूप को आनन्द है, ताको अनुभव नाहीं है। सो आप कृपा करिके सरनि लेऊ, तब होई। तब श्रीआचार्यजी कहें, अब सरन होइके कहा करोगे ? भगवद् प्राप्ति तो तुमकों होय गई। भगवान को वर हैं। तोसों बचन कहे हैं, जो–माया न लगेगी। अब तुमकों कहा कर्त्तव्य है ? तब बूलामिश्र ने कही, भगवद् प्राप्ति जो मुक्ति है, सो तो मैं चाहत नाहीं, मोकों भक्ति होउ। सो आपकी कृपा ते होइ तातें सरनि लेऊ, तब भक्ति की प्राप्ति होई। सो भगवान नें हू आपकों बताये हैं ? ताते मैं आपकी सरन आयो हूं। तब श्रीआचार्यजी ने बूलामिश्र सों कही, जो–श्रीयमुनाजी में तू न्हाइ के आव, तब बूलामिश्र यमुनाजी स्नान करि अपरस में आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय निवेदन कराये। कृष्णाश्रय ग्रंथ करि ताको पाठ कराये। सो बूलामिश्र कों श्रीठाकुरजी की लीला को अनुभव होन लाग्यो। और सगरे शास्त्र पुरान वेद के आश्रय को ज्ञान ह्वे गयो। मानसी फल रूप सेवा को इनकों दान श्रीआचार्यजी दिये। सो मन अलौकिक होइ श्रीठाकुरजी में लाग्यो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, अब तुम घर जाऊं। तब बूलामिश्र ने बिनती करी, महाराज ! अब मोकों घर काहे कों पठावत हो ? मेरे घर सों कहा काम है ? तब श्रीआचार्यजी कहैं, तुमकों घर यातें पठावत हैं, जो–तिहारे संगतें

कितनेक जीव कृतार्थ होइंगे। और भक्ति को विस्तार होईगो। अब तुमकों संसार दुःख तो लगेगो नाहीं। जहां रहोगे तहां हमारे पास ही हो। और जैसे भगवान सर्व सामर्थ युक्त हैं, तैसें भगवदीय हूँ सर्व सामर्थ युक्त हैं। तातें घर जाऊं, माता पिता वृद्ध हैं। तिहारे संगते उनकी गती होइगी। और वे जानत हैं, जो-पुत्र कहूँ मरयो, के जीवन है। तब बूलामिश्र दंडवत् करि श्रीआचार्यजी सों बिदा होयके चले। सो कछुक दिन में लाहौर आये। माता पिता कों बहोत सुख भयो। पाछें बूलामिश्र घर खासा करि रसोई करि, श्रीठाकुरजी कों मानसी रीति सों भोग धरे। एक पातर माता पिता कों घर दिये एक गाय की काढ़े। एक पातर आए गए वैष्णव की। कोई भूखेकों देके महाप्रसाद ले। श्रीभागवत सुबोधिनी तथा श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ के पाठ के भाव में मग्न रहतें। यजमान क्षत्री बहोत हते, सो जो आवे तामें निर्वाह करें।

वार्ता - प्रसंग १ - सो लाहौर में एक क्षत्री बूलामिश्र के यजमान हतो। ताकी दो स्त्री हती, परन्तु सन्तति न हती। सो काहू ने उह क्षत्री सों कह्यो, तुम हरिवंस पुराण सुनो तो तिहारे संतति पुत्र होई। तब वह क्षत्री बूला मिश्र पास आय बहोत बिनती कियो, जो-तुम मोकों हरिवंस पुराण सुनावो तो तिहारी कृपा तें मेरे संतति होई। तब बूलामिश्र ने कही, अब ही मोकों अवकास नाहीं। अवकास होइगो तब सुनाऊंगो।

भावप्रकाश - याको अर्थ यह, जो-ये पुत्र अर्थ हरिवंस पुराण सुनत है। सो पुत्र होनहार होइ, भगवद् इच्छातें, तो मैं इनकों सुनाऊँ। जो-न होनहार होइ तो श्रीठाकुरजी कों श्रम काहे कों कराऊँ ? काहेतें, मेरे सुनाये श्रीठाकुरजी मेरो जस प्रगट करनार्थ पुत्र देइ, सो मेरे न करनो। तातें कहैं, अवकास होइगो तब सुनाऊँगो। या प्रकार कहि बिदा किये। तब श्रीठाकुरजी विचारें, जो-भगवदीय पास कोइ मनोर्थ करे सो खाली कैसें जाई। तातें बूलामिश्र सों श्रीठाकुरजी ने कही वह क्षत्री कों पुत्र होइगो, तू सुनाईयो।

ता पाछे एक दिन अचानक बूला मिश्र यजमान क्षत्री के घर आये। तब वह क्षत्री बहोत आदर सनमान करि अपने हाथसों बूला मिश्र के चरण छुई माथे धरि, सुन्दर आसन पर बैठाये। तब

बूला मिश्र नें उह क्षत्री सों कही, तुम स्त्री सहित न्हाय के नये वस्त्र पहरि बैठो। तब दोऊ स्त्री पुरुष न्हाय के नये वस्त्र पहरि के आय बैठें। तब बूला मिश्र हरिवंश पुराण महत् एक श्लोक पढ़े, सो श्लोक ''इदं मया ते हरिकीर्तनं महत् श्रीकृष्णमाहात्म्यं परमद्भुतम्।'' या श्लोक कहि याको अर्थ कहें, जो–यह श्रीकृष्ण कीर्ति, उपर कहे सो कृष्णकीर्ति, को महात्म्य परम अद्भुत है। जो–सुने ताके भागि को पार नाहीं, परम दुर्लभ। यह श्लोक में सब फल कों पावे। पाछे मंत्राक्षत पढ़ि कें वह बड़ी स्त्री कों गोद में दिये। तब उह क्षत्री बूला मिश्र सों कहे, यह तुम कहा कियो ? वह बड़ी स्त्री कों तो स्त्री धर्म होत नाहीं। सो छोटी स्त्री कों क्यों नाहीं दिये ? तब बूलामिश्र कहें, श्रीठाकुरजी पुत्र देनहार होइगे तो याही कों पुत्र देहींगे, श्रीठाकुरजी सर्व सामर्थ्यवान हैं। यह कहि बूला मिश्र उठे, घर चलन लागें। तब यह क्षत्री ने कही मोकों कृपा करिके संपूर्ण हरिवंस पुरान सुनावो। यह बूला मिश्र कहे तिहारो मनोर्थ तो पुत्र हेतु सगरो पुराण सुनन कौ है, तासों पुत्र तुमकों होइगो। सगरे पुराण सुनै को फल तुम विचारे सो भयो। अब सगरे पुराण सुनवे को प्रयोजन कहा ?

भावप्रकाश – यह बूला मिश्र ने यातें कह्यो, जो–इनकों अवकास कहां ? जो–सगरो पुराण सुनावें। यह तो भगवद् इच्छा तें कहिवे को संयोग बनि गयो।

यह कहि बूला मिश्र घर आये, सो वह बड़ी स्त्री कों गर्भ रह्यो (पाछे) पुत्र भयो।

भावप्रकाश – सो यह वार्ता में भगवदीय कों बड़ी बड़ाई दई है। काहे तें, भगवदीय भक्ति मुक्ति के दाता है। चाहे तो ततकाल श्रीठाकुरजी सों मिलाय दें। यह तो पुत्र, तुच्छ फल कहा ? तहाँ अर्थ यह है, जो–पुत्र लौकिक नाहीं दिये। परम भगवदीय पुत्र दिये। सो पुत्र श्रीगुसांईजी को सेवक होइ, सगरे कुल को आगे कल्याण

करेगो। तातें भगवदीय जो देय सो अलौकिक देई, लौकिक देइ तो नाहीं दिये बराबर है। काहे तें पुत्र किन कों कहिये ? जो–माता पिता को उद्धार करे, तिनकों पुत्र कहिये। नाहीं तो जैसे पसु, कुत्ता, गदहा के पुत्र होत है। तेसे संसारी होय तो पसु समान है। तातें बूलामिश्र ने जेसो पुत्र शास्त्र में सराहे हैं, तेसो पुत्र दियो।

वैष्णव ॥ ४६॥

सो बूला मिश्र श्रीआचार्यजी के बड़े कृपापात्र भगवदीय हे। सदा मानसीफलरूप सेवा में भगवद् रस में मगन रहते। तातें बूलामिश्र की वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥४६॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, रामदास, मेवाड़ा ब्राह्मण, मीराबाई के प्रोहित हते, मेवाड में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– ये श्रीस्वामिनीजी की सखी विसाखा तिनकी सखी है। लीला में इनको नमा 'कन्दर्पा' है। जो सदा श्रीस्वामिनीजी के नाम को कीरतन ये करती। रूप इनको बहोत सुन्दर हतो। सो एक दिन कन्दर्पा अपनी शृङ्गार करती, सो श्रीस्वामिनीजी पधारी। तब कन्दर्पा शृङ्गार करत हती, सो उठी नाहीं। तब विशाखा ने शाप दियो, जो–इतनो गर्व, हमारी स्वामिनीजी कों उठिके सन्मान न कियो ? जाऊ भूमि में परो। सो इहाँ अनेक जन्म भये। पाछे मेवाड में एक ब्राह्मण के घर जन्में, सो बरस बाईस के भये। तब रामदास के पिता रामदास कों संग ले के श्रीरणछोड़जी के दरसन कों गये। तहाँ श्रीआचार्यजी पधारे हते। सो रामदास कों दरसन भये। तब रामदास ने पिता सों कही, श्रीआचार्यजी के सेवक तुम, हम होई तो आछो। तब रामदास के पिता ने कही, जो–ये ब्राह्मण हैं, हमहू ब्राह्मण हैं, हम सेवक कौन के होइ ? अब कही सो कही, अब कहोगे तो तुम जानोगे। तब रामदास चुप होई रहे। पाछे पिता सों छिपकें श्रीआचार्यजी पास जाइ, रामदास दंडवत करि बिनती किये। महाराज ! मेरो मन आपुके सेवक होंन को बहोत है। सो मेरे पिता हू सेवक होइ तो भगवद्धर्म घर में बने, क्लेश न होइ। सो मेरे पिता कों कछू आप अपनो महात्म दिखावो तो वह सेवक होई। काहेतें, अज्ञानी जीव है अहंकार में भर्‍यो है। तब श्रीआचार्यजी कहैं, तू दैवी है, तेरो पिता साधारण है। सो तेरे पीछे कृतार्थ होइगो। तू, जो बात पिता सों कहेगो सो साँची होइगी, तू ही पिता कों महात्म दिखाईयो। तब रामदास दंडवत करि पिता पास आये। सो पिता रसोई करत हतो। सो रसोई करत

सगरो हाथ जरि गयो। तब पिता बहोत दुःखी भयो। तब रामदास ने कही एक बात हों कहों, जो-तुम मानो। तब पिता ने कही, कहो। तब रामदास ने कही, मैं हाथ में जल ले तिहारे आगे सोंह करत हों, जो-श्रीआचार्यजी साक्षात् भगवान होइ तो यह जलतें तिहारो हाथ आछो होइ जइयो। जो-और भाँति होई तो तिहारो हाथ आछो न होइगो। सो मैं जल या प्रकार कहि तिहारे हाथ पर डारूंगो। जो-हाथ तिहारो आछो होई तो श्रीआचार्यजी के सेवक होऊ। तब पिता ने कही, हां, हां या प्रकार होयगो तो सेवक होऊंगो। तब रामदास हाथ में जल ले कहै, श्रीआचार्यजी साक्षात् भगवान होइ तो यह जल सों पिता को हाथ आछो होइ जैयो। यह कहि रामदास अपने हाथ को जल पिता के हाथ पर डार्‍यो। सो आछो है गयो। तब रामदास ने कही, चलो, अब श्रीआचार्यजी के सेवक होऊ। तब पिता ने कही, बेटा तू बावरो भयो है ? यह ऐसो ही लिख्यो हतो कर्म में, सो मेरे पुन्यतें मैं आछो भयो। रसोई तो करूं। तब रामदास अति क्रोधवंत होई के कह्यो, जो-अब तुम इतने पर नटि गये तो दोनों आँखिन सूं अंधे होई जाऊ। सोऊ ततकाल दोऊ आँखिन में फूली परि गई, आँधरो होई गयो। तब पिता ने रामदास सों कही, यह कहा कियो ? अब मैं सेवक होऊँगो, जो तू कहे सोई करूँ, मेरी आँखि आछी होई तब रामदास ने कही, अब तो सेवक श्रीआचार्यजी के होऊगे तब आँख आछी होइगी, नहीं तो बहोत दुःख पावोगे। तब पिताने कही, चलो बेगे, पाछे दूसरो कार्य होइगो। तब रामदास पिता को हाथ पकरि श्रीआचार्यजी के पास आई दंडवत करी। (तब) पिता ने बिनती कियो, महाराज! आपको प्रताप प्रसिद्ध देख्यो। तऊ मेरे मन में न आयो ताते मैं आंधरो भयो। अब मैं आपकी सरन आयो हूँ, मेरो दुःख दूरि करो। तब श्रीआचार्यजी ने रामदास सों कही, तू श्रीयमुनाजी में न्हाइ आऊ, पिता कों इहां बैठ्यो रहन दे। तब रामदास श्रीयमुनाजी न्हाइ के श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी रामदास कों नाम सुनाय के, ब्रह्मसंबंध करायो। पाछे रामदास के पिता कों नाम सुनाये। तब रामदास श्रीआचार्यजी को चरणामृत आपु लेइ ताके नेत्रन सों लगाइ के कहै, अब नेत्र पहले जैसे खुल जाइ। सो आंख आछी होइ गई। तब पिता ने श्रीआचार्यजी सों दंडवत् करि कह्यो, महाराज, अब मोकों कहा कर्त्तव्य है ? जामें मैं सुख पाऊँ, सो बात बतावो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, तुम रामदास पुत्र के कहे में रहोगे तो सदा सुखी रहौगे, कृतार्थ होइ मुक्ति पावोगे। तब रामदास ने कही, महाराज! मोकों भगवद् सेवा पधराइ दीजिये। तब श्रीआचार्यजी ने प्रसादी वस्त्र दिये (और) कहें, इनकी सेवा मन लगाइ के करियो। तब रामदास दंडवत करि पिता कों ले डेरा पर आये। पाछे पिता सों कही, अब रसोई मैं करूंगो, तुम परचारगी करि दीजियो। तब पिता ने कही, जो तुम कहो सो करूंगो। तब रामदास रसोई करि वस्त्र सेवा कों भोग धरे। पाछे पिता की पातर, गाय को भाग काढि, महाप्रसाद लिये। पाछे श्रीआचार्यजी अड़ेल कों पधारे। और रामदास पिता कों ले मेवाड में आये, घर में

रहे। सो सारे घर के रामदास की आज्ञा में रहें।

वार्ता – प्रसंग १ – पाछे रामदासजी, एक दिन मीराबाई के यहाँ गये। सो मीराबाई के ठाकुर आगे श्रीआचार्यजी के कीर्तन गावत हे। तब मीराबाई ने कही, कोई विष्णु पद श्रीठाकुरजी के गावो। तब रामदास कों रीस छूटी, कहें, दारी रांड़! यह कहा तेरे खसम के हैं? जा, आज पाछे तेरो मुख न देखोंगो। सो वह गाम में ते कुटुम्ब लेके उठि चले। तब मीराबाई ने बहोत कही। इनकों दक्षिणा देन लागी, सो कछू न लिये। कुटुम्ब ले और गाम में जाइ रहै। सो रामदासजी ऐसे टेक के कृपापात्र भगवदीय हते। अपने प्रभु में ऐसे अनुरक्त हते, जो फिर मीराबाई को मुख न देख्यो।

वार्ता ॥४७॥

भावप्रकाश– *यह वार्ता में यह जताये, जो–पहले तो अन्य मार्गीय के* पास जैये नाहीं। और जैये तो अपने मारग की वार्ता न करिये। अपने मार्ग के कीर्तन न करिये, जो करिये तो क्लेश होई। तातें श्रीगुसांईजी 'चतुःश्लोकी' में कहे हैं –

'विजातीयजनाक्रान्ते निजधर्मस्य गोपनम्।
देशे विधाय सततं स्थेयमित्येव भावये॥१॥

या प्रकार अपने धर्म कों गोप्य करि देशान्तर में रहनों। सो रामदास जा समय श्रीआचार्यजी के कीर्तन गाये, ता समय श्रीगोवर्द्धनधर विचारे, जो–रामदास ने श्रीआचार्यजी के कीर्तन गाये हैं, तो मार्ग की वार्ता हू कहेंगे। तातें मीराबाई द्वारा कहवाए, जो–श्रीठाकुरजी के गावो। तब रामदास कों ज्ञान भयो, जो–यह मैं कहा कियो? श्रीगोवर्द्धनधर कों श्रम कराये। तब यह मनमें विचारे, जो–अब या समय गाम में जल पीबनो उचित नाहीं है। काहेतें, कदाचित गाम में रहें, मीराबाई को मुख देखनो परे। हम हैं ब्राह्मण, फिर मीराबाई के प्रोहित। सो द्रव्य की लालच या जग में ऐसी बुरी है। जो–लोभ तें धर्म जाइगौ, तातें या गाम में जल न लेनो सो सब कुटुम्ब सहित और गाम जाई रहै। तातें इनकी वार्ता कहाँ तांई कहिये?

वैष्णव ॥४७॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, रामदास चौहान, रजपूत, बुंदेलखंड के वासी, तिनकी वार्ता को भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – लीला में ये ललिताजी की सखी हैं। सो इनको नाम 'मधुएनी' है। सो इनके मनमें यह रहै, जो–मैं ललिताजी की नांई दोऊ स्वरूपन कों बीड़ी आरोगाऊँ। तब श्रीठाकुरजी ने कही, अब तिहारो मनोरथ कोई काल में पूर्ण होइगो। सो यह बात, ललिताजी सुनिके मधुएनी कों शाप दिये। जो–तू बीड़ी आरोगावेगी छिपिके, ता मैं कहा करोंगी ? जाऊ भूमि में रहो, ऐसो गर्व कियो ? सो संसार में अनेक जन्म भये। सो अबके बुंदेलखंड में एक रजपूत के घर जन्में। तहाँ वर्ष बारह के भये। सो रामदास को पिता बुंदेलखण्ड में राजा को चाकर हतो। सो पिताने कही, एक दिन चलो, राजा सों मिलाऊँ। काहेतें, राजा तें नित्य मिलत रहों, तो तिहारी चाकरी होइ जायगी। तब रामदास ने कही, मैं राजा के पास न जाऊँगो। काहेतें, मैं राजा कों सलाम न करोंगो, और राजा की चाकरी हूँ न करोंगो। मैं तो श्रीठाकुरजी की चाकरी करूँगो, जामें जन्म सुधरे। राजा की चाकरी सों कहा काम है ? यह बात सुनि के पिता ने कही, जो–तोकों वैरागी मिल्यो है, भरमायो है। राजा की चाकरी न करेगो तो खायगो कहांते ? तब रामदास ने कही, कहा सगरे जगत को पालन राजा करत है ? पालन तो श्रीठाकुरजी करत हैं। तुम मूर्ख हो, तातें जानत हों, जो–हमारो पालन राजा करत हैं। यह सुनिके पिता मन में बहोत कुढ्यो। परन्तु एक बेटा प्यारो बहुत, तातें कछु बोल्यो नाहीं। घर में एक मनुष्य राख्यो, जो यहाँ वैरागी आवन न पावें। कोई बैरागी की संगती या रामदास कों भई है, तातें यह ऐसो भयो है। सो मनुष्य ठीक राखे। और रामदास तो 'रामकृष्ण' यह जप करे। और न काहू सों बोले, न बात करे। सो यह बात एक राजपूत ने सुनी, सो रामदास की वार्ता सब राजा के आगे कही। तब राजाने रामदास के पिता सों कही, जो–जा, अपने बेटा कों इहां ले आऊ। इतनो बड़ो भयो। मेरे पास नहीं लायो ? तब रामदास के पिता ने उह राजा के आगे हाथ जोरि कें डरपि के कह्यो, जो–मेरे बेटा की कोई वैरागी के संग तें बुद्धि बिगरी है। सो मोहू कों नाहीं गिनत है। सो मैं मनुष्य रखवारी बैठार्यो है, जो–कोई बैरागी सों मिलवे न पावे। सो कछु दिन में समुझे तो मैं लाऊँ, अबही अज्ञान है। तब राजा ने कही समुझाय के काल्हि मेरे पास लाऊ, नहीं तो मैं वाकों बुलाय के बंदीखाने राखोंगो। तब कैसे भाजेगो ? और हमनें सुनी है, जो–मोको सलाम न करेगो। सो देखों, कैसे न करेगो ? तब रामदास को पिता डरपि, घर आई रामदास सों कहें, जो–अजहू कछू नाहीं बिगर्यो, राजा पास चलि, मिलि आऊ, नाहीं तो राजा बंदीखाने देइगो। तब रामदास ने कही, तुम मोकों कहा डरपावत हौ ? भाग्य में बंदीखानो और जो दुःख लिख्यो होइगो, सो काहू पे टरेगो नाहीं। मैं

राजा पास आपु ते चलाई के न जाऊंगो। तब पिता समुझाय हारयो, परि रामदास ने मानी नाहीं। सो दूसरो दिन भयो तब राजा ने रामदास के पिता सों कही, तू बेटा कों लायो नाहीं , तातें यह तेरो दोष है। अब तू खबरदार रहियो तोसों समुझोंगो। तब रामदास को पिता डरपि के राजा सों कह्यो, मेरे ऊपर रीस मति करो, घर में पुत्र है, बाकों बुलाय के समुझि लेऊ। मैं बहुत समुझायो, उह न मान्यो। तब राजा नें दस मनुष्य बुलाय के कह्यो, रामदास कों ले आवो। तब मनुष्य आइके रामदास सों कहैं, तुमकों राजा बुलायो है। तब रामदास ने कही, मेरो राजा सों कहा काम है ? मैं नाहीं आऊँगो। तब मनुष्य रामदास कों हाथ पकरि बांधि राजा पास ले गये। जायके सब बात कही। जो-या प्रकार बोल्यो, जो-मेरे राजा सों कहा काम हैं ? तब हम बाँधि के लाये। तब राजाने रामदास सों कही, तू मोकों सलाम न करेगो तो मैं ताकूं मारूंगो, बंदीखाने राखूंगो। तब रामदास ने कही, तू अपने कूं बचाव, मोकों कहा मारेगो ? तब राजा ने मनुष्यन सों कह्यौ, याकों बन्दीखाने राखि, कछुक मारीयो, डरपाईयो। खाइवे कों मति दीजियो। जा प्रकार सूधो होई मोकों सलाम करे सो करियो। सो रामदास कों बंदीखाने डारि अनेक दु:ख दियो। रामदास कछू बोले नाहीं। यह बात राजा की रानी सुनि के राजा सों कह्यो, यह तुम कहा काम कियो ? दस बारह बरस को लरिका तुमकों न सलाम कियो तो कहा भयो ? वाकों इतनो दु:ख दीनो, सो आछो नाहीं। कहा जानिये, अब वाको फल कछू बुरो होनहारो है। तातें अबहूं वह बालक कों छोड़ि देऊ। या प्रकार रानी ने समुझायो। परन्तु राजा माने नाहीं। सो तीसरे दिन अर्द्ध रात्रि समय दक्षिण सों दूसरे राजा की फौज आई। सो लराई भई। उह राजा ने यह राजा कों मारयो, गाम लूटयो। रामदास को पिता कहूँ भागि गयो। सगरे बंदीखाने तें छूटे। सो रामदास बुंदेलखण्ड तें चले, सो मथुरा आये, पाछें ब्रज सगरो देखि प्रसन्न भये। तब विचारे जो-कहूँ मेरो पिता आई निकसे, तो मोकों ले जायगो। तातें गोवर्द्धन की कंदरा 'अपछरा कुंड' पर रहै। ताके भीतर सगरे दिन बैठते। भगवद् नाम लेते। रात्रि होय तब ब्रजबासीन के घर सों माँगि के जो मिले तामें निर्वाह करते।

वार्ता - प्रसंग १ - सो जब श्रीआचार्यजी प्रथम ही श्रीनाथजी कों प्रगट किये तब कचो छोटो सो मंदिर करि, तापर छानि छाइकें श्रीनाथजी कों पाट बैठारे। तब रामदास कों श्रीठाकुरजी नें जताई, जो-श्रीआचार्यजी को सेवक तू होई, मेरी सेवी करियो।

भावप्रकाश – काहेतें, जो–लीला में तू मेरे पास माँग्यो हतो, ललिताजी की सेवा मोकों मिले। सो मैं कही हती, जो–कोई कालमें सिद्ध होयगी, सो समय अब सिद्ध है, सो समय अब तेरो सेवा को आयो है।

तब रामदास आइकें श्रीआचार्यजी कों दण्डवत किये। तब श्रीआचार्यजी रामदास कों निकट बुलाई नाम–निवेदन करवाई के कहें, तुम श्रीनाथजी की सेवा करो। ब्रजबासीन के घरतें जो–कछू दूध दहीं अन्न सामग्री आवे सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों भोग धरि तुम निर्वाह करियो। पाछे श्रीआचार्यजी सदू पांडे, कुंभनदास आदि ब्रजबासी सों कहें, तुम श्रीनाथजी कों ठीक राखियो। पाछें दूध, दहीं, माखन, अन्न, सीधा, सामग्री की सोंज सब ब्रजबासी दे जाते। रामदास भोग धरि के निर्वाह करते। पाछे पूरनमल कों श्रीनाथजी नें मन्दिर समरायवे की जब आज्ञा दीनी, तब पूरनमल आये। मन्दिर समरावन लागे। तब द्रव्य निघटि गयो। फेरि कमाईके आइ मन्दिर समरायो, तब रामदास की देह छूटी। लीला में प्राप्त भये।

भावप्रकाश– काहेतें, इनकों मनोर्थ एकान्त सेवा को हतो। सो अकेले सेवा करि लीला में गये।

वार्ता – प्रसंग २ – अब श्रीनाथजी को मन वैभव बढ़ावन को भयो, सो नये मंदिर में बिराजे। तब श्रीआचार्यजी ने सदू पांडे सों कह्यो, दस–पांच ब्रजवासी सेवा लायक होई तो सेवा करें। तब सदू पांडे ने कही, महाराज ! ब्रजवासी सों सेवा न होई सकेगी, घरको काम है। तब श्रीआचार्यजी राधाकुंड सों बंगाली बुलाय रुद्रकुंड पर एक कुटी उनकों कराय दीनी, और श्रीनाथजी की सेवा दीनी। पाछे कृष्णदास अधिकारी ने बंगाली निकासि, रामदास सांचोरा ब्राह्मन कों मुखिया भीतरिया किये। सो सब

कृष्णदास की वार्ता में कहे हैं। सो ब्रजवासी सगरे पहले, देवदमन कहेते । पाछें गोपाल नाम गाय भई तब कहन लागे । पाछे श्रीआचार्यजी ने गोवर्द्धननाथ नाम धरे। या प्रकार सों रामदास भावपूर्वक सेवा किये हैं । और मानसी सेवी में मग्न रहते । सो रामदास ऐसे टेक के कृपापात्र वैष्णव हे ! तातें इनकी वार्ता कहाँ तांई कहिये। वार्ता ॥४८॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, रामानंद पण्डित, सारस्वत ब्राह्मण थानेस्वर के, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये निकुंज में के तमचर हैं। सो एक समय रात्रि घरी छै पाछली रही, तब यह तमचर बोलि उठ्यो। सो श्रीठाकुरजी ने जानी, सबेरो भयो, सो उठे। तब ललितादिक सखी ने कही, जो–अबही रात्रि बहोत है। तब श्रीस्वामिनीजी क्रोध करि के कहें, जो–ऐसे पक्षी को इहां कहा काम ? जो–समें बिना मनकों खेद करायो। तातें याको संसार में जन्म होऊ। तब वह तमचर संसार में अनेक जन्म पाये। सो अबके थानेस्वर में एक सारस्वत ब्राह्मण के घर जन्मे। सो थानेस्वर में ब्याह भयो, वर्ष तीस के भये। तब माता पिता ने देह छोड़ी। सो स्त्री पुरुष रहत हते। श्रीभागवत आदि पुरान बाँचते, कथा कहतें। तातें इनकों सब कोई पंडित कहते। लोगन सों चर्चा करते। सो एक समें श्रीआचार्यजी थानेस्वर पधारे, तब रामानन्द चर्चा करिवे कों आयो। तब श्रीआचार्यजी के आगे वाचा बंद ह्वे गई। कहे कछू, निकसे कछू। तब श्रीआचार्यजी रामानन्द सों कहें, तुम वाद करिबे आये हो, सो ऐसे क्यों बोलत हो ? तब रामानन्द कों लाज लागी, सो घर में जाइ सरस्वती को पूजन और जप करन बैठ्यो। और कह्यो, जो–सरस्वती प्रसन्न होय तब ही जल पान करूँ। रात्रि दिन ऐसे बैठे, तीन दिन बीते। तब सरस्वती प्रसन्न होई कह्यों, मैं प्रसन्न हों, तेरे मन आवे सो माँग। तब रामानन्द पंडित ने कही। मोसों कोई पंडित जीते नाहीं, मैं सबकों जीतों। यह माँगत हों। तब सरस्वती ने कही, जो–जा, ऐसेई होयगो। तब अहंकार करि फेरि श्रीआचार्यजी के पास वाद करन कों आयो। सो फेरि वैसे ही वाचा बंद भई, बोले कछू, वचन कछू कहै। तब श्रीआचार्यजी कहें, अब तू सरस्वती कों प्रसन्न करि वाद करन कों आयो, सो फेरि ऐसे क्यों बोलत हैं ? तब रामानन्द कों बहुत लाज आई। घर में जाई, वैसे ही फेरि सरस्वती आराधन कियो। तब सरस्वती फेरि प्रसन्न होई के

रामानंद सों कही, अब कहा माँगत हो ? विद्या तो तोकों दीनी है। तब रामानंद ने कही, मोकों कहा विद्या दीनी ? मैं श्रीआचार्यजी सों वाद करिवे गयो, तहां तो कछू जुवाब नहिं निकसत। तब सरस्वती नें कही, जो-मैं तोकों पंडित जीतिवे को वरदान दियो है, कछू ईश्वर जीतिवे कों नहीं कही। श्रीआचार्यजी तो साक्षात् भगवान श्रीकृष्णचन्द्र हैं। तिनसूँ तू वाद करन गयो। तो कैसे जीतेगो ? तातें अपनो भलो चाहे तो श्रीआचार्यजी की सरन जा, संसार तें छूटि कृतार्थ होउ। और उनसों तू कबहू न जीतेगो। तब रामानंद जाई के श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि बिनती किये, महाराज ! मैं आपको स्वरूप नहिं जान्यो। आप साक्षात् ईश्वर हो। और कही, मैं जीव हों। मो पर कृपा करि के सरनि लीजिये। मेरो अपराध क्षमा करो, जो-मैं आपसों जीव बुद्धि करि वाद करन आयो। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम पंडित हो, हमारे सेवक होई कहा करोगे ? तब रामानंद ने कही, महाराज ! अब मोकों मति भूलावो, मैं आपकी सरनि आयो हूँ, मोको अङ्गीकार करो। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो-जा, न्हाई आऊ। तब रामानंद पंडित सरस्वती में न्हाई के श्रीआचार्यजी पास आये। तब श्रीआचार्यजी नें नाम निवेदन करायो। तब रामानंद विनती करी, जो-महाराज ! मेरे घर पधारिये। मेरी स्त्री कों अङ्गीकार करिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, अब तो पृथ्वी परिक्रमा जाइवे की तैयारी हैं, तातें बेगि स्त्री कों यहाँ लाउ, नाम सुनाइ देंइ। पाछे फेरि थानेस्वर पधारेंगे। तब तेरे घर उतरेंगे। तब रामानन्द घर जाई अपनी स्त्री कों लिवाय लायो। तब श्रीआचार्यजी ने रामानन्द की स्त्री कों नाम सुनायो। तब रामानन्द ने कही महाराज ! मोकों भगवद् सेवा पधराई दीजे। तब श्रीआचार्यजी कहैं, तेरे श्रीमद्भागवत की पुस्तक हैं, तिनकों तू भोग धरियो। और सेवा तुम सों होनी कठिन है। तब रामानन्द दंडवत करि स्त्री सहित अपने घर आये। श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा कों पधारें।

वार्ता - प्रसंग १ - पाछे एक समें श्रीआचार्यजी थानेस्वर पधारे। सो रात्रि कों रामानन्द के घर रहै।

भावप्रकाश - यामें यह जताये, जो-रसोई पाक और वैष्णव के घर करचो।

सो पिछली रात्रि कों रामानन्दनें उठिकें स्त्री सों कही, बेगिके, गोबर सँकेलि, नांतर वैष्णव उठि के सब गोबर लें जाइंगे। सो यह बात रामानंद की श्रीआचार्यजी ने सुनी। सो आप उठिके मन में बहोत क्रोध किये। जो-या प्रकार गोबर कों कहेत है, उठाई ले जाइंगे ! तो वैष्णव को और समाधान कहा करेगो ?

वैष्णव मेरे प्रानप्रिय, तिनकों यह ऐसी बात कही। तब श्रीआचार्यजी क्रोध करि हाथ में जल लेके, वेद मन्त्र पढ़ि रामानन्द के उपर छिरकि के कहे, मैंने तेरो त्याग कियो। यह कहि वाही समें संग के वैष्णवन को साथ ले उहां ते उठि चले। सो थानेस्वर तें तीन कोस पर एक गाम ''अमीतीर्थ'' है, तहां जाई के स्नान सन्ध्या किये। और जा समें रामानन्द के घरतें श्रीआचार्यजी उठिके चलन लागें ता समें थानेस्वर के वैष्णवन ने बहोत बिनती करी, महाराज ! हमारे घर पधारियें। तब श्रीआचार्यजी कहें, अब तो या समें ये गाम में जलपान न करूंगो। यह कहि पधारे, रहें नाहीं।

भावप्रकाश – सो यातें, जो–श्रीआचार्यजी को अपराध करतो तो आप तोरो दंड दे क्षमा करते। वैष्णव को अपराध है, सो बेगो छूटे नाहीं, तातें या गाम मे रहे नाहीं। और जब ब्रह्मसंबंध की आज्ञा श्रीगोकुल में श्रीठाकुरजी नें श्रीआचार्यजी कों दीनी। तब श्रीठाकुरजी ने कही, जाकों तुम ब्रह्मसंबंध करावोगे ताकों मैं न छोडूँगो। सो परीक्षा देखन अर्थ श्रीआचार्यजी अपराध को मिस पाई त्याग करें। जो यह ठीक परेगी। और श्रीआचार्यजी क्रोध बहोत यातें किये, जो–रामानन्द ने स्त्री सों यह की, बेगि गोबर उठाई नाँतर वैष्णव ले जाइंगे। सो वैष्णव नाम लिये तातें क्रोध उपज्यो। जो–काहू वैष्णव को नाम ले कहते। (तो) एक दोई वैष्णव को अपराध होतो। इनने तो वैष्णव कह्यो। सो वैष्णव में तो मुख्य, ब्रजभक्त आदि सगरे पर बात जाइ लगी। तातें श्रीआचार्यजी कों बहोत क्रोध उपज्यो। काहे तें, आप नवरत्न में कहे हैं– ''निवेदनं तु स्मर्त्तव्यं सर्वथाताादृशैरपि।'' यह निवेदन को स्मरण ताद्रशी वैष्णव सों मिलिके करे तो निवेदन को फल, भाव जाने। सो वैष्णव कों गोबर के लिये ऐसे बोलत हैं ? और धोल में यह कहे हैं, 'तन मन धन समर्पन करिने वैष्णव ने अनुसरियेजी।' और यह कीर्तन –

★ राग केदारो ★

हों वारी इन वल्लभीयन पर।
मेरे तन को करों बिछोना सीस धरों इनके चरनन तर॥१॥

भाव भरि देखो मेरी अँखियन मण्डल मध्य बिराजत गिरिधर।
ये तो मेरे प्रान जीवन धन दान दिये हैं श्रीवल्लभ वर॥२॥

माया वाद खण्ड खण्डन कों प्रगट भये श्रीविट्ठल द्विजवर।
'रसिक' कहैं आस इनकी करि वल्लभीयन की चरनरज अनुसर ॥३॥

यह भाव वैष्णव में होई। सो वैष्णव कों कहें, जो–गोबर उठाई ले जाइगें। सो वैष्णव गोबर के चोर ठहराये। तातें श्रीआचार्यजी क्रोधवंत होइ सगरे वैष्णव कों सिक्षा दिये, जो–सँभारि के बोलिवो। वैष्णव पर प्रीति राखनी, यह जताये।

वार्ता – प्रसंग २ – पाछे श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा कों पधारें। इहां श्रीआचार्यजी के तिरस्कार सों रामानन्द विकल होइ गये। जहां तहां बजार में खान पान करे। मर्यादा सब छूटि गई। परन्तु इतनी मर्यादा रही, जो–कछु खानपान करे सो पहलें यह कहै, श्रीगोवर्द्धननाथजी अरोगियो। या प्रकार समर्पन करिके खाई। सो एक दिन रामानंद बजार में चल्यो जात हतो, सो एक हलवाई जलेबी करत हतो। सो ताजी देख के रामानंद ने मोल ले उही बाजार में कह्यो, श्रीगोवर्द्धननाथजी अरोगियों। या प्रकार समर्पण करि जलेबी खाई। सो जा समें रामानन्द नें जलेबी श्रीनाथजी कों अरोगाई, ता समें श्रीआचार्यजी श्रीनाथजीद्वार हते। श्रीनाथजी कों राजभोग आयो हतो। सो समें भये श्रीआचार्यजी भोगसराइवे कों मन्दिर में पधारे। तब आचमन मुख वस्त्र कराये। तब श्रीनाथजी के मुखारविन्द में जलेबी को टूक देखि श्रीआचार्यजी श्रीनाथजीसों कहें, जो–आज कछू उत्सव तो नाहीं है। जलेबी कैसे अरोगे ? तब श्रीनाथजी ने कही, जो–तिहारे सेवक नें मोकों जलेबी अरोगाई हैं। सो मैं अरोग्यो हूँ। तब श्रीआचार्यजी ने कही, जो–कौन से वैष्णव ने जलेबी अरोगाई है ? तब श्रीनाथजी ने कही, रामानन्द पंडित थानेस्वर गाम के ने अरोगाई है, सो मैं अरोग्यो हूँ। तब श्रीआचार्यजी कही, जो–मैं तो वाको त्याग कर्‍यो है, तुम वाकी

समर्पी कैसे अरोगे ? तब श्रीनाथजी ने कही, मैं तुमकों वचन दियो है, जाकों तुम ब्रह्मसंबंध करावोगे ताको मैं कबहू न छोड़ूंगो। तातें तुम त्याग करो परन्तु तुमने पहले मोकों समर्प्यो हो सो कैसे छोड़ूँ ? तब श्रीआचार्यजी चुप ह्वै रहे। पाछे अनोसर करिके श्रीआचार्यजी मन्दिर तें बाहिर पधारे। तब दामोदरदास हरसानी सों कहै, जो–रामानन्द पंडित के हाथ सों श्रीनाथजी जलेबी आरोगे, और कहै, मैं कैसे वाकों छोड़ों ? तब दामोदरदास ने पूछी, जो–महाराज ! आप याको त्याग कियो है, और श्रीनाथजी पक्ष करी है। सो वा जीव कों अङ्गीकार कब करोगे ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, जो–अब वैष्णव को अपराध न करेगो। तो वाकों लक्ष जन्म में अङ्गीकार करोंगों। कहा भयो, जो–श्रीनाथजी जलेबी अरोगे तो ? पाछें एक वैष्णव श्रीनाथजी के दरसन करि के थानेस्वर गयो। तब रामानन्दनें उह वैष्णव सों पूछी, जो कबहू मेरी बात श्रीआचार्यजी के आगे चली हती ? तब उह वैष्णव ने कही, जो–तेरे हाथकी जलेबी श्रीनाथजी अरोगे। तब श्रीआचार्यजी सों दामोदरदास हरसानीनें पूछी, जो–आप रामानन्द कों कब अङ्गीकार करोगे ? तब श्रीआचार्यजी ने कही, जो–आज पाछे जो वैष्णव को अपराध न करेगो तो लक्ष जन्म में अङ्गीकार करूँगो। इतनी बात चली हती। तब रामानन्द प्रसन्न होइके कह्यो, जो–भलो, लक्ष जन्म में मेरो अङ्गीकार करनो तो कह्यो। ता पाछे रामानन्द की बुद्धि सुन्दर भई। वैष्णव के अपराध तें डरपन लाग्यो। पंडिताई को अहंकार हतो तातें अपराध परयो, सो दैन्यता भई। पाछे स्वप्न द्वारा लक्ष जन्म भुगताई कृपा करि श्रीआचार्यजी अङ्गीकार किये। सो रामानन्द

श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥४९॥

भावप्रकाश– अङ्गीकार किये सो काहेतें, श्रीआचार्यजी वैष्णव कों दंड देत हैं। सो सिक्षा कों। निज त्याग नाहीं हैं। जैसे माता पिता पुत्र कों दंड देत है सो सिक्षार्थ ही। पुत्रको बुरा न करेंगे। तैसेही जाननो। जो–श्रीआचार्यजी को अन्तःकरण सों त्याग होइ तो श्रीनाथजी वाके हाथ की सामग्री कबहू न अरोगें। काहेतें, श्रीआचार्यजी के सेवक हैं। तातें जैसी इच्छा श्रीआचार्यजी की होई ताही भांति श्रीनाथजी करे। काहेतें, श्रीआचार्यजी रञ्च अप्रसन्न होई तो, श्रीठाकुरजी वाकों कबहू अङ्गीकार न करें। तो श्रीआचार्यजी त्याग करें ताके हाथकी सामग्री श्रीगोवर्द्धनधर कैसे अरोगें ? तातें श्रीआचार्यजी के अन्तःकरणको त्याग नाहीं। तातें श्रीआचार्यजी वेद मन्त्र सों जल छिरकिकें त्याग याहीतें किये, जो–मर्यादा रीति सों त्याग है। सो लोगन कों दिखायवे कों, सब जाने, जो–त्याग है। परन्तु लीला सृष्टि के जाने, जो दैवी है सो तो श्रीआचार्यजी के अंग रूप हैं। जैसे अंग को त्याग नाहीं। तैसे जीव दैवी को त्याग नाहीं। तातें श्रीनाथजी अरोगें। तातें श्रीआचार्यजी ''अन्तःकरणप्रबोध'' में कहे हैं–

''चांडाली चेद्राजपत्नी जाता राज्ञा च मानिता।
कदाचिदपमानेऽपि मूलतः का क्षतिर्भवेत् ॥१॥

चांडाली राजपत्नी मानवती जब भई तब अपमान हू होई। परन्तु रानीपनो न जाई। मान अपमान तो होत ही है, और नवरत्न ग्रंथ में कहें–

''अज्ञानादथवा ज्ञानात्कृतमात्मनिवेदनम्।
यैः कृष्णसात् कृतप्राणैस्तेषां का परिवेदना ॥''

ज्ञान अज्ञान करिके जाको निवेदन भगवान में भयो, वह श्रीकृष्ण को प्रानप्रिय भयो, वाकों परिवेदना दुःख चिन्ता काहेकी ? तातें रामानन्द द्वारा इतनो सिद्धान्त प्रगट करन अर्थ आपु मर्यादा रीति सों त्याग किये। जैसे रामपञ्चाध्याई में भक्तन को मान देखि अन्तरधान भये, सो कहा छोड़ि गये ? भक्तन कों प्रभु छोडे ही नहीं। बाहरतें उनके हृदय में जाई बैठे। तैसेही सबके देखत त्याग कियो। सो वैष्णव को अपराध ऐसो भारी बताये। और वैष्णव कों बोलनो सँभारि के। काहेंतें, आश्रय अन्याश्रय सब बचन में है। उह बाई ने संसारी मनुष्य सों प्रसन्न होई के कह्यो, तुमने मोकों जिवाई तब श्रीठाकुरजी उठि गये। और रजो क्षत्रानी तें श्रीआचार्यजी ने घृत

मांग्यो सो न दियो। और रात्रि कों बिनती करि सामग्री अरोगाई। तातें एक बचन अहंकार के सगरे धर्म को नास करे। एक बचन प्रसन्नता के प्रभु ततकाल प्रसन्न होई। सो वैष्णव कों सँभारि के बोलनो, यह जताये। और महात्मी जीव हैं, तिनकों दृढता जताये। पुष्टिमार्ग में अङ्गीकार कियो। श्रीठाकुरजी इतने पर न छोड़े, जलेबी अरोगे। समर्पनी को त्याग नाहीं। श्रीठाकुरजी के वचन दृढ़ किये। जो–ब्रह्मसंबंध की आज्ञा दिये। तब कहे, जिनकों तुम ब्रह्मसंबंध करावोगे ताकों मैं न छोडूंगो। सोऊ कहत हैं, इहां वचन साँचि करि दिखाये। और वैष्णव कों श्रीगोवर्द्धनधर यह जताये, जो–रामानंद विकल, बजार की जलेबी मोकों धरचो सो मैं श्रीआचार्यजी की का'नितें सेवक जानि अरोग्यो। तो आछी भांति सों सामिग्री धरें, तिनकी बहोत प्रीति सों अरोगत हों। और यह जताये, यद्यपि रामानंद भ्रष्ट विकल भयो सोऊ श्रीनाथजी कों समर्पि के खानपान करतो, इतनी मर्यादा नाहीं छोड़ी। और जो वैष्णव असमर्पित खात है, सो रामानंद सों हू गये बीते, त्याग उनही को जाननो। तातें समर्पे बिना कछू न लेनों। और श्रीआचार्यजी रामानंद को त्याग करि उहां रहे नाहीं सो याही तें, जो–अन्तःकरण को त्याग नाहीं। तातें आप उहाँ रहते तो बिनती करि फेरि प्रसन्न करतो। तो इतनो सिद्धांत कहातें प्रगट होई ? और श्रीआचार्यजी श्रीनाथजीद्वार होई तबही जलेबी रामानंद अरोगावें। ताको कारन यह, जो–सगरे वैष्णव रामानंद को त्याग भयो जाने हैं, सो दिखाये त्याग नांही। रामानंद तो श्रीनाथजी के पास बैठे हैं। यह जताये, जो–लौकिक वैदिक देह उहां विकल भई है, जाको त्याग किये। अलौकिक आधिदैविक देह श्रीगोवर्द्धनधर पास ही है, सो सेवा करत है। इत्यादिक भाव प्रगट भये दिखाये। वैष्णव ॥४९॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, विष्णुदास छीपा, ये आगरे के पास गाम है तहां रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश – ए लीला में श्रीचंद्रावलीजी की सखी हैं। 'कमला' इनको नाम है। सो आगरे के पास के गाम में एक छीपा के घरमें प्रगटे। सो बड़े भये वर्ष बीसं के तब ब्याह भयो। सो पिता वस्त्र छाप देय विष्णुदास आगरे में जाइ बेच लावें। सो ऐसे करत एक समय श्रीआचार्यजी आगरे पधारे। सो विष्णुदास सुन्दर छींट के थान ले आगरे गये। तब श्रीआचार्यजी ने कृष्णदास सों कही, यह छीपा के पास छींट आछी है, सो तू ले, जो–माँगे सो दे। तब कृष्णदास ने विष्णुदास सों कही, यह छींट के थान सगरे हमकों दे। याके दाम हैं सो तू ले। सो विष्णुदास ने चौगुनो मोल कह्यो। सो कृष्णदास ने सगरे रुपैया गिन दिये। और कहे, और आछे थान होई सो ले आऊ।

तब विष्णुदास चक्रत होई रहै। जो–एतो बड़े महापुरुष अलौकिक जीव है। जौ–मोल न कियो। सगरे थान लिये, ताके दाम दिये। सो इनकों छींट देनो उचित नाहीं है। इनको पैसा मेरे घर आवेगो तो सगरो घर बैरागी होई जायगो। तब विष्णुदास ने कही, ये सगरे अपने रूपैया लेऊ, मेरे छींट के थान फेरि देऊ। तब कृष्णदास ने कही, तू बड़ो मूर्ख दीसत है ? तें मोल कह्यो, सो दाम दिये। अब यह थान कबहूँ फिरे नाहीं। तेरे टोटा होई तो और हू रुपैया ले। चौगुने तो दाम लिये। तब विष्णुदास ने कही तुम महापुरुष हो, तातें तिहारो द्रव्य घर में आये सगरो घर बैरागी होइगो। यातें मैं नाहीं तुमकों बेचत। जो थान देऊ तो यह रुपैया हू राखो, और थान हू राखो। परन्तु रुपैया तिहारो मोकों पचे नाहीं। तब कृष्णदास ने कही यह थान श्रीआचार्यजीने श्रीमुख सों सराहना करि के कहै, लेऊ, सो तू कोटीन उपाइ करे तो (हू) यह थान फिरे नाहीं। और श्रीआचार्यजी बिना सेवक और को कछू लेत नाहीं। तातें रुपैया तेरे मन आवे सो ले जा, और थान तेरे मन आवे तो लैयो। तेरे मन आवे तो मति लैयो। तब विष्णुदास ने कही, श्रीआचार्यजी कहां हैं ? तब कृष्णदास ने कही यह पीपर के रुख के नीचे बिराजे हैं। तब विष्णुदास आई श्रीआचार्यजी को दरसन करि दण्डवत करि कहैं, महाराज ? आपुके सेवक में इतनो धर्म है, तो आप तो भगवान हैं। अब मोकों सरनि लेऊ। तब श्रीआचार्यजी कहैं, तुम कों सरनि कैसे लेय ? तु छीपन में रहत हो। आचार, क्रिया पुष्टिमार्गीय धर्म कैसे निबहेगो ? तब विष्णुदास ने बिनती करी, महाराज ! अब आपको सेवक भयो। तब ज्ञाति व्यौहार को डर कहा है ? मा बाप मानेंगे, आपुके सेवक होंइगे तो भेले उनके रहूँगो, नाहीं तो न्यारो घर करि रहूँगो। तातें कृपा करि के सरन लीजिये। तब श्रीआचार्यजी ने कही, जा, श्रीयमुनाजी में स्नान करि आऊ। तब विष्णुदास श्रीयमुनाजी में न्हाई अपरस ही में आवत हते, सो छूय गये। कोऊ को जूठो पत्ता उडिके देह सों लाग्यो। तब फेरि के न्हान कों चले। तब श्रीआचार्यजी ने कही, विष्णुदास फेरि क्यों चलें ? तब विष्णुदास ने कही, महाराज ! पत्ता उडिकें देह सों लग्यो सो छुई गयो। सो फेरि न्हान जात हों। तब श्रीआचार्यजी कहै अबही तें तू छूवाछाई में समुझत है ? तब विष्णुदास ने बिनती करी, महाराज ! में कहा जानो, किन सों छूवो कहैत है ? यह आपकी कृपा तें जानि परी है। तब श्रीआचार्यजी कहै ठाड़ो रहि, हमहू कों श्रीयमुनाजी के तीर मध्याह्न की सन्ध्या करनी है, तातें तहाँ तोकों नाम सुनावेंगे। तब विष्णुदास नें बिनती करी, महाराज ! मेरे लिये यह श्रम मति करो, न्हाई के आऊँगो। आप अपनी इच्छातें पधारो तो सुखेन पधारो, मेरे लिये पधारो तो मोकों अपराध परेगो। तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होइके कहैं, तुम सरीखे वैष्णव के लिये तो लीला में ते पधारे हैं। और परिक्रमा करत हैं। मायावाद खंडन करि, भक्तिमार्ग की स्थापन करें हैं। अनेक ग्रंथ सब वैष्णवन के लिये किये हैं। तातें यह तू काहे कों कहत है, श्रम मति करो। तब विष्णुदास ने

कही महाराज मोकूँ तो कही चहिये। सेवक को यह धर्म है। तब श्रीआचार्यजी श्रीयमुनाजी के तीर पधारि विष्णुदास कों न्हवाइ नाम सुनाये, ब्रह्मसंबंध कराये। तब विष्णुदास ने बिनती करी, महाराज ! मैं मूर्ख हों, सो ऐसी कृपा करो, जो-श्रीभागवत आदि आपके ग्रंथ में कछू ज्ञान होई। आपु के मार्ग को सिद्धान्त जान्यो जाई। तब श्रीआचार्यजी "सेवाफल" ग्रंथ करि विष्णुदास कों सुनाये। सो सुनिके विष्णुदास ने बिनती करी, महाराज ! सेवाफल ग्रंथ के सुनेतें सगरे शास्त्र पुराण को ज्ञान भयो। परन्तु सेवाफल ग्रन्थ को अभिप्राय समुझिवे में नाहीं आयो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, ग्रंथ सेवाफल ऐसो ही कठिन हैं। भली करी तू पूछ्यो। पाछे आप "सेवाफल की टीका" करि के सुनाये। तब सगरे मार्ग को सिद्धान्त विष्णुदास के हृदयारुढ़ भयो। सो मगन होइ गए। तब कृष्णदास ने कही, यह तेरो छींट को थान है चहिये तो ले जाऊ। चाहे दाम लेहू, चाहे भेट करो। तब विष्णुदास ने कृष्णदास सों बिनती करी, जो-मैं तिहारे संगतें श्रीआचार्यजी की सरनि पायौ। सो तुम भगवदीय होई ऐसे मोसों मति कहो। किनकी छींट कौन भेट करे ? यह सगरो प्रान सरीर जब जहाँ श्रीआचार्यजी कहैं तहाँ बिनियोग कराइयो। तब कृष्णदास प्रसन्न होइ चुप करि रहै। पाछे श्रीआचार्यजी वैष्णव सों कहैं, अबतुम अपने घर जाऊ। तब विष्णुदास ने कही, जो-महाराज ! अब मेरो घर तो आपुकी चरन कमल की रज में है। सो छोड़ के कहां जाऊँ ? तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होई कें कहे, जो-सो तो साँच, परन्तु हम तो अड़ेल पधारत हैं। तुमहु उह गाम में रहो। पाछे श्रीगुसांईजी श्रीगोकुल वास करें तब तुम गोकुल जाइ, श्रीगुसांईजी पास रहियो। अब तुम कों संसार बाधा करि सकेगो नाहीं। तातें मन आवे तहाँ रहो। और तुम श्रीगुसांईजी की लीला संबंधी हो। तातें तिहारो सगरो मनोरथ पूर्ण श्रीगुसांईजी करेंगे। हम तुमकों अङ्गीकार करि अपने किये हैं। तुम सदा भगवद् सेवा में मगन रहोगे। तब विष्णुदास दंडवत् करि अपने गाम आये। श्रीआचार्यजी अड़ेल पधारिके विष्णुदास की छींट श्रीनवनीतप्रियाजी कों अङ्गीकार कराये। इहां विष्णुदास घर में आई मा बाप सों कह्यो मैं न्यारो रहूँगो। तब मा बाप कहैं, न्यारो रहिवे को कारन कहा ? तब विष्णुदास ने कह्यो, मेरो मन यही करत है। सो न्यारों रहौं। पाछे स्त्री आई, तब स्त्री सों कहै, तू श्रीठाकुरजी की सेवा करे। तो अड़ेल चलि के तोकों सेवक कराऊँ। तेरे हाथ को जल तब लेऊँगो, नहीं तो तू मेरे पास मति आवे। तब स्त्री दस बीस गारी देकें उठि गई। कह्यो, तैं श्रीठाकुरजी की पूजा करन को नाम लियो सो मैं तेरो मुख न देखूंगी। बैरागिनी फकीरनी होय सो ठाकुरजी पूजे। मेरे मा बाप भाई, मैं कैसे पूजोंगी। तब विष्णुदास मन में प्रसन्न भये, जो-श्रीठाकुरजी नें बलाय काटी। भली भई, यह आपुतें छोड़ि गई। सो विष्णुदास थोरो सो कपड़ा छापें। सो आगरे बेचि आवें, जामें देह निर्वाह होई। और सगरे दिन-रात मानसी सेवा श्रीआचार्यजी के ग्रंथ श्रीसुबोधिनीजी के

भाव में मगन रहैं।

वार्ता – प्रसंग १ – सो कितनेक दिन मे श्रीगुसांईजी श्रीगोकुल वास किये। तब विष्णुदास छीपा वृद्ध भये। सो श्रीगोकुल आई श्रीगुसांईजी कों दण्डवत करि बिनती किये, सगरो प्रकार कहैं। जो–या प्रकार श्रीआचार्यजी ने कृपा करि सरन लिये। पाछे आपकों सोंपे, आपकी सरन आयो हूँ। कहूं टहल में राखिये। तब श्रीगुसांईजी विष्णुदास के उपर प्रसन्न होइ कहैं, जो–तुम श्रीआचार्यजी के कृपापात्र सेवक हो, सो कहो तहां राखें। तब विष्णुदास विचारे, जो–अब मैं वृद्ध भयो, और सेवा जन्मपर्यन्त निबहेगी नाहीं। तातें श्रीगुसांईजी की पौरी पर रहूँ।

भावप्रकाश – काहेतें सूरदासजी गाये हैं। ''मारग रोकि पर्‌यो हठि द्वारे पतित–सिरोमनि सूर'' सो मैं पतित हों, श्रीगुसांईजी के द्वार पर मोकों पावन श्रीगुसांईजी आवते जाते दरसन देकें करेंगे। यह विचारि, विष्णुदास ने कही, महाराज! आपकी पौरी पर रहन कों मेरो मन है।

तब श्रीगुसांईजी कहें, आछो, पौरी पर रहो, तब विष्णुदास पौरी पर रहे। सो श्रीगुसांईजी जब पधारें, तब विष्णुदास कों पुकारें (जो) विष्णुदास प्रसन्न हो ? तब विष्णुदास कहैं, यह चरन कमल के आश्रय तें प्रसन्न हों, या प्रकार श्रीगुसांईजी विष्णुदास पर कृपा करते, या प्रकार पौरी पर रहते।

वार्ता – प्रसंग २ – सो जहां तहां तें ब्राह्मण पंडित श्रीगुसांईजी तें वाद करन कों आवते। सो विष्णुदास ने कही, ये पंडित श्रीगुसांईजी सों वाद करन कों आवत हैं, सो इनकों मैं ही प्रतिउत्तर करि बिदा करि देऊँ तो श्रीगुसांईजी कों इतनो श्रम न

करनो पड़े। यह विचारि, जो-पंडित आवते, तिनसों वाद करि निरुत्तर करि देई। तब पंडित जाने, जो-जिनके पौरिया में यह सामर्थ है, जो-हमकों जुबाब न आयो। तो श्रीगुसांईजी सों हम कहा वाद करेंगे ? यह विचारि सगरे ब्राह्मण पौरि परतें नित्य फिरि जाते। तब एक दिन श्रीगुसांईजी नें वैष्णव सों कह्यो, जो-आजकल पंडित ब्राह्मण वाद करन नाहीं आवत हैं ताको कारन कहा ? तब वैष्णव नें कही, महाराज ! पंडित तो बहोत आवत हैं, परि पौरि पर विष्णुदास उनसों वाद करि निरुत्तर करि देत हैं, सो चले जात हैं। तब श्रीगुसांईजी ने विष्णुदास कों बुलाई कें कह्यो, तुमकों तो श्रीआचार्यजी को कृपा बल ऐसोई है। तातें तुमकों सगरे शास्त्र में अभिनेवेस है। सो पंडित कों निरुत्तर करत हो। परन्तु हमारे द्वारे ब्राह्मण खाली हाथ जात हैं, सो आछो नाहीं। तातें हमारे पास पंडितन कों आवन दीजो। उनसों चर्चा करि उनकों कछू देके बिदा करेंगे। तब विष्णुदास दण्डवत् करि कहैं, महाराज ! अब आवन देऊँगो। मैं आपके श्रम होइवे के लिए पंडितन को विदा करि देतो। अब आवन देऊँगो सो विष्णुदास पें ऐसी कृपा हती।

भावप्रकाश - और ''नामरत्न'' ग्रन्थ श्रीरघुनाथजी श्रीगुसांईजी के लालजी किये हैं तामे कहै हैं, ''विप्रदारिद्र्यदावाग्नि।'' ब्राह्मण को दरिद्र रूप जो काष्ट, ताके दावाग्नि (सो) बुझावन हारे। तातें यह नाम प्रगट करन (अर्थ) ब्राह्मण कों बहोत समाधान करि द्रव्यादिक दे बिदा करते।

वार्ता - प्रसंग ३ - और एक मथुरा को भट्ट हतो। सो श्रीगुसांईजी सों नित्य कहतो, जो-तिहारे सगरे वैष्णव कों मैं एक दिन जिमाऊं। तब श्रीगुसांईजी कहते, जो-तुम या बात में

मति परो, यामें कहा लेऊंगे ? सो वह मानतो नाहीं । नित्य कहतो। सो आपु सुनि के चुप रहते। सो वह भट्ट श्रीगुसांईजी को स्वसुर हतो। सो श्रीगुसांईजी कूं न्योतो कियो। तब श्रीगुसांईजी वाके घर मथुरा भोजन कों पधारे। तब श्रीगुसांईजी विष्णुदास सों कहैं, जो-जल की झारी ले हमारे संग चलो। तब विष्णुदास जल की झारी ले श्रीगुसांईजी के संग चले। सो श्रीगुसांईजी उह भट्ट के उहां भोजन करि कें उठे। तब विष्णुदास ने श्रीगुसांईजी के हाथ धुवाई, सुद्ध आचमन करायो। तब श्रीगुसांई कहैं, हम श्रीगोकुल पधारत हैं, तू थाल को महाप्रसाद ले, थाल मांझी के अइयो। सो श्रीगुसांईजी तो श्रीगोकुल पधारें। विष्णुदास अपने जल सों पोतना करि पातरि धरि थाल को सगरो महाप्रसाद पातरि में करे। पाछे थाल मांझि धोईकें न्यारो धरि महाप्रसाद लेन लागे। तब वह भट्ट और सामग्री ले विष्णुदास पास आई कें कह्यो, यह जूठन क्यों खात हो ? मैं सुन्दर सामग्री धरों सो लेऊ। तब विष्णुदास ने कही, मोकों तिहारो नाहिं चहिये। जो-मेरी पातर में में सामग्री धरोगे तो तो मेरी मेरी पातर छूइ जायगी। तब भट्ट क्रोध करिकें चल्यो गयो। विष्णुदास महाप्रसाद ले श्रीगोकुल आये। अपनी पौरी पें बैठि रहैं। पाछें वह भट्ट श्रीगोकुल आई श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो-तुम्हारो सेवक शूद्र ने मोसों ऐसो कह्यो, जो-मेरी पातर में सामग्री धरोगे तो मेरी पातर छूइ जायगी। तब श्रीगुसांईजी कहें तुम तो कहेत हते हम सब सेवकन कों भोजन करावेंगे। सो एक सेवक शूद्र कों जिमाई न सके तो सगरे सेवकन कों कैसे जिमावते ? तब वह भट्ट सरमाई के चुप होई रह्यो। सो विष्णुदास ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। तातें

इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥५०॥

भावप्रकाश – या वार्ता में यह जताये, जो–भट्ट के हाथ को कछू न लेनो। काहेतें, भट्ट के यहां श्रीगुसांईजी को संकल्प द्रव्य है, जातें न लेनो। ताहीतें श्रीगुसांईजी उह भट्ट के इहां विष्णुदास भगवदीय कों ले गये। जो–ए सगरे धर्म में निपुण हैं, न चूकेंगे। जो–साधारण वैष्णव कों ले जाई, और वह भट्ट के हाथ को खाई तो ताकों धर्म जाई। और आगे वैष्णव की बुद्धि ओछी है, सो सगरे खान लगें तो वैष्णव धर्म कैसे बढ़े ? तातें विष्णुदास कों ले गये। सो विष्णुदास कहें, मेरी पातर छूई जाईगी। यामें भट्ट को स्वरूप जताये। जा सामग्री कों स्पर्श भट्ट करें ताकों छूई गई वस्तु जाननो। तहां यह सन्देह बड़ो है, जो–उत्तम ब्राह्मण हैं, श्रीगुसांईजी के सगे संबंधी, श्रीगुसांईजी, इनके हाथ को लेत हैं। तब वैष्णव को कहा दोष है ? यह संदेह है तहाँ कहत हैं, जो–शास्त्र में देह संबंधी कहे हैं, और भाव संबंधी कहे हैं। सो देह संबंधी यादव और कंसादिक और भाव संबंधी ब्रजभक्त। जो जादबन कों हू श्रीठाकुरजी पृथ्वी पर भार रूप जानें, तातें नास किये। और ब्रजभक्तन कों भाव सम्बन्ध हतो, तातें ब्रजभक्तन के प्रेम सों बस भये। यद्यपि श्रीठाकुरजी जादवन के संग रहे, परन्तु भगवद् स्वरूप को ज्ञान न भयो। और ब्रजभक्तन कों जन्म होत ही भयो। नंदरायजी के घर आय सब पांय परी। तैसे श्रीगुसांईजी कों भट्ट सगे संबंधी जानत हैं, कोऊ निंदक हू है। द्रव्यादिक लेवे की चाह राखत है। तातें और कहां ताँई कहिये। आसुरावेसी जानने। और भक्तन कों दास भाव है। सो दास धर्म यह, जो–स्वामी की जूठन लेनो। तातें भट्ट के हाथ को लेय तो वाकी बुद्धि सर्वथा नासही होई। और श्रीगुसांईजी लेत हैं। सो ईश्वर है। जैसे श्रीठाकुरजी दावानल पान करि गये, और सों न होई। तैसे ही श्रीगुसांईजी ज्ञाति–व्यवहार के लिये ले। परंतु वैष्णव कों न लेनो। और जैसे गङ्गाजल यमुनाजल कोई हीन जाती अपने पात्र में भरि लावे सो वैष्णव न लेई तैसे ही। महाप्रसाद तो उत्तम गंगाजल है, जैसे जल आकास तें निर्मल स्वांती की बूंद बरसत है। परन्तु पात्र भेद तें सीप में मोती होइ। बाँस में परे बंसलोचन होई। सर्प के मुख में विष होई। या प्रकार के भेद होते हैं। तातें भट्ट भये तथा अन्य मार्गीय के हाथ को सर्वथा न लेनो। तहाँ कोई कहे, जो–भट्ट नाम समर्पण करि सेवा करत हैं तिनके हाथ को कैसो ? तहाँ कहत हैं, इनकों भगवद् धर्म स्पर्श करे ही नाहीं। काहे तें, नाम समर्पण श्रीगुसांईजी के बालक सों ले, फेरि ज्ञाति बुद्धि करत हैं। तब सगरे धर्म नास होत हैं। उनकी कहा सेवा और कहा समर्पण ? गुरु में ज्ञाति बुद्धि करे जूठन चरणामृत न लेई। तब हीन धर्म होई। और कोई ऐसो होई जूठन चरणामृत ले ज्ञाति बुद्धि न करें, वैष्णव की रीति चले। सोऊ जब दूसरे भट्ट के हाथ को ले तब वैसे

ही होई। तातें भक्ति वैष्णव कों श्रीगुसांईजी ने दीनी है। तहांई है। याके लिये विष्णुदास द्वारा सगरे वैष्णवन कूं सिक्षा दिये। वैष्णव ॥५०॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, जीवनदास क्षत्री सिंहनन्द में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ए जीवनदास लीला में श्रीयमुनाजी की सखी हैं। तहाँ ''ईश्वरी'' इनको नाम है। सो सिंहनन्द में एक क्षत्री के घर जन्मे। बडे भये बरस बीस अठारा के। तब जीवनदास को पिता सिंहनन्द तें दिल्ली कों आयो। सो दिल्ली में दलाली करन लाग्यो। सो जीवनदास कों राग रंग को इस्क बहोत, सो जो-कछू कमाय सो वेश्या भवैया कों दे नाच देखे। पिता कमाइ जामें खाई। सो यह बात पिता ने सुनी तब जीवनदास के ऊपर बहोत खीज्यो। जो-तू आज पाछे नाच तमासे में मत जईगो। तब जीवनदास ने कही, जो-अब न जाऊँगो। पाछे इनसों तो राग रंग सुने बिना रह्यो न जाई। सो पिता सों छिपाई के जाई। तब पिताने फेरि सुनी। तब जीवनदास पर बहोत खीज के कह्यो, तू दिल्ली तें सिंहन्द जा। सहर में तेरो काम नाहीं है। तब दोई रुपैया जीवनदास कों पिताने दिये। और कहे, कछुक दिन सिंहनन्द में रहि अपने घरमें। पाछे मेरे पास अईयो। तब जीवनदास दोई रुपैया ले सिंहनन्द चले। सो मार्ग में विचार किये, मोकों राग रंग बिना तो रह्यो न जाइगो। और सिंहनन्द में सगरे लोग पहिचानि के, तातें वहाँ सुन्यो देख्यो न जाई। और पिता घर पठायो। यह बिचार करत मार्ग में ठाड़े ह्वे रह्यो। सो दोई घरी बीति गई ठाड़े ही। इतने एक भवैया को सङ्ग आयो। सो आगरे जात हतो। सो वह संघ देखिके जीवनदास ने पूछी तुम कौन हो, कहाँ ते आयो हो, कहाँ जाओगे ? तब उनने कही, हम भवैया हैं, पश्चिम तें आये हैं, आगरे में जायंगे। तब जीवनदास ने बिचारी, आगरा बड़ो सहर बतावत हैं, सो देखों, घर जाय कहा करूंगो ? सो जीवनदास उन भवैया के संग आगरे आये। आगरे में कपरा की दलाली करें, तामें खानपान करें। जो अधकी कमाई तामें राग रंग सुनि आवें। या प्रकार बरस तीन रहे। सो पिता ने जानी, जो-पुत्र कहूँ मार्ग में मारयो गयो, के कोई और देस निकरि गयो। राग रंग को इस्क बुरो होत है सो गयो। यह विचारि, रोय के बैठि रह्यो।

यहाँ आगरे में एक समय ठग आछे कपरा पहिर कें आये। सो जीवनदास सों कही, जो-हमकों आछे आछें कपरा लेने हैं। सो जीवनदास एक बजाज की हाट तें रुपैया सौ माल लायो। तब वा ठग बातन में लगाई, सांझ परी। जीवनदास सो कह्यो,

जो-सबेरे तुमकों जो राखेंगे ताके दाम देइंगे। सो तुम भोर ही आई जैयो। सो जीवनदास वा ठग को ऊपर को वैभव गेहना कपरा देखि जाने, जो-ये भले मनुष्य हैं। सो जीवनदास रात्रि कों राग रंग सुनवे गये। यहाँ ठग सगरे कपरा ले चले गये। सो भोर भये आयके देखें तो कोई नाहीं। लोगन सूँ पूछे। तब लोगन ने कहीं, ऊह तो ठक हते। दस पाँच को सीधो सामग्री हू ले गये। तब जीवनदास वह बजाज पास जाई कह्यो, तिहारो माल या प्रकार सगरो गयो। तब वह बजाज ने जीवनदास को बंदीखाने दिये। सो तीन दिन बीते, अन्न जल बिना। तब जीवनदास ने उह बजाज सूँ कह्यो, अब मेरे प्रान तो निश्चय जायेंगे। तातें एक काम तुम करो। मेरे पिता दिल्ली में दलाली करत हैं, वाकों मैं लिखूँगो। और सिंहनन्द में मेरो घर है तहाँ लिखूँगो। सो तिहारे सौ रुपैया उपाय करि भरि देऊँगो। तातें तुम मोकों यमुना स्नान करावो। काहे तें, हमारे गाम मे श्रीवल्लभाचार्यजी के सेवक सब वैष्णव आपुस में बात करत हते, जो-यमुनाजी में नाहेतें, पान कियेतें, सगरो दुःख जात हैं। नौतम देह होत हैं। तातें वैष्णव झूँठ न बोले। सो तुम मोकों जमुनाजी नाह्यवे देऊ, तो तिहारे रुपैया को बिचार कछू करूँ। तब वह बजाज के मन में दया आई, सो कह्यो, हम घर में न्हवाई दे जमुना जल सों। ताते खान पान करो। तब जीवनदास ने कही, जो-बड़ो पुन्य धारा न्हाये को है। सो जो-मोकों जमुनाजी न्हान देऊगे तो आछो है। नाहिं तो मैं जल हूँ न लेऊँगो। मेरो कण्ठ सूखत है, सो आजकल में प्राण जाँईगे। तब हत्या तिहारे ऊपर लगेगी। तब वह बजाज चार मनुष्य संग दिये, जो-इनकों हाथ बाँधिके जमुना न्हवाई लाओ। कहूँ यह डूबि न मरे। तातें गाढ़ो पकरे रहीयो। तब चारों मनुष्य दो हाथ बाँधि के यमुनाजी के तीर ले गये, जीवनदास कों न्हवाये। तहाँ श्रीआचार्यजी संध्यावंदन करत हते। वैष्णव दस बीस गावत हते। ता समय श्रीआचार्यजी की दृष्टि जीवनदास पर परी। तब श्रीआचार्यजी जीवनदास कों देखि कहें, यह कौन है ? याको हाथ बाँधे चार मनुष्य पकरे हैं, यहाँ लावो। तब सगरे वैष्णव जाय उन चारों मनुष्यन कों समुझाये। सो जीवनदास कों पकरे मनुष्य श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी कहे, जीवनदास राग रङ्ग और देखे, सुनेगो ? तब जीवनदास ने कही, महाराज ! यह राग रङ्ग को फल भोगत हों, पिता को कह्यो न मान्यो सो भोगनो (परयो)। तब श्रीआचार्यजी कृष्णदास कों कहे यह जीवनदास कों सौ रुपैया कहूँ सों दिवाय, हमारे नाम लिखके याकें छुड़ाय लाऊ। यह सुनत ही गाँव के दस बीस वैष्णव बिनती करी, महाराज ! इतने के लिये कृष्णदास कों आप काहे कों पठावत हों ? हम छुड़ाय लावेंगे। तब श्रीआचार्यजी कहें, बेगे याकों छुडाय ले लाओ। तब वैष्णव जीवनदास कों संग लाई वह बजाज कों कहे, जीवनदास को छोडि देऊ, रुपैया सौ हम सों लेऊ। (पाछे) सौ रुपैया दे जीवनदास

कूँ श्रीआचार्यजी पास लाये। तब श्रीआचार्यजी को दंडवत करी, जीवनदास ने बिनती करी, महाराज ! यह अलौकिक बंदीखाने तें आप छुड़ाये। तो आप यह संसार रूपी बंदीखाने में ते मोकों छुड़ाओ। और धन्य श्रीयमुनाजी हैं, और धन्य तिहारे वैष्णव हैं। सो सिंहनन्द में एक दिन अपने घर के कार्य हों वैष्णवन के पास गयो हतो। सो वैष्णव आपस में कहत हते। जो-यमुनाजी के न्हाये सब दुःख जाय, नौतन सरीर होय। सो सत्य कहे। मैं अब ही न्हायो, यह लौकिक दुःख गयो और संसार को दुःख हू आपकी कृपा तें जायगो। आप सेवक करोगे तब नौतन सरीर हू होई जायगो। तातें तिहारे वैष्णव धन्य हैं। एक क्षण में संग कियो ताकें फल को पार नाहीं है। तब श्रीआचार्यजी कहे, श्रीयमुनाजी न्हाय आव। तब जीवनदास श्रीयमुनाजी न्हाय के श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी जीवनदास को नाम सुनाय, ब्रह्मसंबंध कराये। पाछे आप कहे, तू हमारे संग चलि, हम सिंहनन्द तोकों पहोंचावेंगे। यहाँ रहेगो तो कछु दुःसंग लगो तो फिर बिगरेगो। पाछे श्रीआचार्यजी वैष्णवन के घर पधारे, रसोई करि भोग धरे। पाछें भोजन करि जूठन की पातर जीवनदास कों धरे। जीवनदास चौथे दिन महाप्रसाद लिये, सो देह उत्तम होय गई। पाछें श्रीआचार्यजी आगरे सूँ जीवनदास कों संग ले पधारे, सो थानेस्वर आये। तब एक वैष्णव को सिंहनंद पठाये, और कहे, जीवनदास के घर कहियो, जो-जीवनदास आयो है। तब वह वैष्णव सिंहनंद जाई जीवनदास के पिता सूँ कह्यो। तिहारो पुत्र श्रीआचार्यजी के संग थानेस्वर आयो है। तब जीवनदास को पिता प्रसन्न होई के सिंहनन्द तें दोर्‌यो आयो, सो जीवनदास कों थानेस्वर में मिल्यो। सो रोइ के छाती सों लगायो, और कह्यो-पुत्र तू कहाँ गयो हतो, हम तो जान्यो कहूँ मरि गयो। तब जीवनदास ने सगरी बात कही। या प्रकार श्रीआचार्यजी मोकों बंदीखाने सों छुड़ाइ संग लियो, कृपा करी। परन्तु अब तुम में जाई मेरी स्त्री, माता सबको इहाँ ले आवो। तुम सगरे श्रीआचार्यजी के सेवक होऊ, तो मैं घर में आऊँ। नाहीं तो मैं घर में न रहूँगो। तब पिताने कही, मैं सबको लिवाई लाऊँगो, तू कहेगो सो करूँगो। तब जीवनदास को पिता सिंहनंद में जाई सबको थानेस्वर ले आयो। श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज ! जीवनदास के प्राण राखे। यह हम पर बड़ो उपकार किये। हम सगरे आपकी सरन हैं। नाम सुनाईये। तब श्रीआचार्यजी ने नाम सुनायो। तब जीवनदास ने श्रीआचार्यजी सूँ बिनती करी, महाराज ! सबनकों ब्रह्मसंबंध होई तो आछो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, ये ब्रह्मसंबंध के अधिकारी नाहीं। इनकों नाम ही ते उद्धार होईगो। पाछे जीवनदास ने कही, महाराज ! अब मोकों कहा आज्ञा है ? तब श्रीआचार्यजी ने श्रीनवनीतप्रियजी के प्रसादी वस्त्र जीवनदास के माथे सेवार्थ पधराई कहें, अब तुम घर में रहि भगवद् सेवा करो। तब जीवनदास पिता माता स्त्री सहित श्रीआचार्यजी

कों दंडवत करि, बिदा होई सिंहनंद में आये। तब जीवनदास ने माता पिता के आगे कही, जो-रूपैया आपु दे बंदीखाने तें मोकों छुड़ाये ऐसे दयाल श्रीआचार्यजी हैं। तब माता पिता ने कही, गुरुको ऋण माथे नहीं राखनो। सो सगरे गहने कपरा बेचे, सो एक सौ दस रूपैया आये। तब पिता ने जीवनदास सों कह्यो, यह रूपैया सगरे जीवनदास श्रीआचार्यजी कों दे आऊं। गुरु को ऋण माथे आछो नाहीं। तब जीवनदास एक सौ दस रुपैया ले श्रीआचार्यजी के आगे जाई धरे। तब श्रीआचार्यजी कहें, यह तुम इतनो संकोच काहे कों कियो ? तुम तो हमारे हो। हम प्रसन्न हैं ताते तुमकों कछू बाधक न हतो। तब जीवनदास ने कही, महाराज ! हम कहा लायक हैं। आप जो उपकार कियो है, सो रोम रोम सब आपके देन हार है। आप जहाँ बेचोगे तहाँ बिकेंगे। बिना मोल के गुलाम हैं। संसार रूप नर्क भोगत हैं। सो आप छुड़ाये। ये बिनती दैन्यता सुनि बहोत प्रसन्न होइ श्रीआचार्यजी कहैं, जीवनदास ! अब तुमकों संसार के दु:ख सुख कछू बाधा न करेंगे। और जो तुम मनमें धारोगे सो मनोरथ तिहारे सगरे पूरण होंइगे। अब घर जाई भगवत सेवा करो। तब जीवनदास दण्डवत करि घर आये। पाछे श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे। सो जीवनदास प्रीति सों सेवा करते। वैष्णव कौ स्नेह पूर्वक नित्य सत्संग करते। सो श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे।

वार्ता – प्रसंग १ – सो एक समें सिहनन्द के वैष्णव सब मिलिकें अड़ेल श्रीआचार्यजी के दरसन कों आवत हे। तामें जीवनदास हू हते। सो एक दिन मार्ग में मजल उतरि अपनो अपनो चौका दे सगरे वैष्णव रसोई करत हते, ता समें मेह चढ़ि आयो। चारों ओर तें घटा आई। सो बूँद बरसन लागी। तब सगरे वैष्णव कहें, मेह आयो, आजु रसोई होनी कठिन है। तब जीवनदास सगरे वैष्णव सों कहे, तुम चिन्ता मति करो। तब जीवनदास मेघ की ओर देखिके कहें, तोकूँ श्रीआचार्यजी की आन है, जो अबही मति बरसे। सो मेहू रहि गयो। पाछे सगरे वैष्णव रसोई करि, श्रीठाकुरजी कों भोग धरि महाप्रसाद ले, अपने ठिकाने जाइ सोये। तब जीवनदास ने कही अब आन

सगरे छूटी। तेरे मन आवे तितनो बरसियो, तब बरस्यो। तब

वैष्णव चक्रत होइ रहै, जो–जीवनदास में भगवद् सामर्थ्य है। पाछे सगरे वैष्णव अड़ेल में आइके श्रीआचार्यजी के दरसन करि दंडवत किये। श्रीआचार्यजी सबको समाधान किये। तब एक वैष्णव नें श्रीआचार्यजी सों कही, महाराज ! मार्ग में एक दिन रसोई करत मेह आयो, सो जीवनदास ने आपुकी आन दिवाई। सो तत्काल मेह रहि गयो। तब श्रीआचार्यजी जीवनदास सों कहे, तू मेरी आन दिवायो हतो और मेह बरसतो तो तू कहा करतो ? तब जीवनदास ने कही, महाराज ! ऐसो ऊह कौन है, जो–आपकी आन दिवाए पाछे बरसे ? इन्द्र सहित धरती पर डारि देऊ। आपके प्रताप तें। तब श्रीआचार्यजी चुप होइ रहे। सो जीवनदास ऐसे टेक के कृपापात्र भगवदीय है। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥५१॥

भावप्रकाश– तहाँ यह सन्देह होई, जो –जीवनदास तो भगवदीय कृपापात्र हैं। अपनी आन क्यों न दिवाई। श्रीआचार्यजी की क्यों दिवाई ? तहाँ कहत हैं, जो–जीवनदास अपनी आन देते तोऊ ना बरसतो। परंतु जीवनदास कों अपनो महात्म्य प्रकट करनो भावत नाहीं। सो यातें, जो–बहोत महात्म्य बढ़े, सो कबहूँ अहंकार आवे। सो बिगार ही होई। तातें श्रीआचार्यजी अप्रसन्न होई। जो–तुच्छ कार्य में श्रीठाकुरजी कूँ श्रम कराये। तातें जीवनदास हृदय में पुष्टिमारग की रीति जानत हैं। तातें श्रीआचार्यजी को माहात्म्य वैष्णव कों दिखाये। वैष्णव ॥५१॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, भगवानदास सारस्वत ब्राह्मण हाजीपुर के, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये लीला में विसाखाजी की सखी हैं। लीला में इनको नाम 'सुगंधिनी' है। सो हाजीपुर में एक सारस्वत ब्राह्मण के घर जन्मे। सो पटना में एक यजमान के घर गये। तहाँ कछुक दिन रहे। ता समय भगवानदास वर्ष सतरह के हते। सो उह यजमान की बहोत टहल करि पाछे चलन लागे तब यह यजमान पावली के टका देन लाग्यो। तब भगवानदास क्रोध करके कहैं, मोकों नाहीं चहिये। तू, लखपति

होय के मोकों इतने दिन राखि के यह दक्षणा दियो ? मेरे कछू न चहिये। सो पावली छोड़ि घर कों चले आये। पिता के आगे रुदन कियो, जो–हम ऐसे ब्राह्मण ठाकुर ने क्यों किये ? दो पैसा के लिये राजसी लोगन की चाकरी करें, मुख देखें। यह बड़े पाप को फल है। तब पिता ने कही, मैं परदेस जात हूँ। सो पूरब तें कमाय ले आऊँगो। सो भगवानदास ने कही, तुम वृद्ध हो मति जाओ, मैं जाऊँगो। सो भगवानदास पटना के आगे चले। सो श्रीआचार्यजी कासी तें पुरुषोत्तम क्षेत्र पधारत हते। सो मारग में भगवानदास को दरसन भयो। तब भगवानदास ने कही, भलो, मोकों पंडित ब्राह्मण को मार्ग में संग तो आछो भयो। सो श्रीआचार्यजी श्रीमुख की वार्ता वैष्णवन सों कहैं, सो पाछे सुनत जाय। पाछे मजलि पर उतरे तब श्रीआचार्यजी भगवानदास सो कहैं, जाउ, कृष्णदास सों चहिये सो सीधो लेउ। और कृष्णदास सों कहैं, जो–अपनो नित्य को सीधो लहें, पाछे ब्राह्मण जो माँगे सो दीजो। सो कृष्णदास भगवानदास कों संग ले गये। अपनो सीधा सामग्री ले कहैं, तुमकों चहिये सो लेऊ। तब भगवानदास कहें, सेर खांड सेर घी और दो सेर चून। सो लोभ के मारे दिन दोय तीन को सीधो ले आये। थोरो सो किये और पास राखे। या प्रकार तीन दिन लों मांगे, सो कृष्णदास ने दियो। तब चौथे दिन कृष्णदास सों कहे, मोकों कछु काम टहल बताओ। पानी लाऊँ, वासन माँजो। तब कृष्णदास कहें, तुम श्रीआचार्यजी के सेवक नाहीं हो तातें तिहारे हाथ को पानी काम न आवे। और पात्रहू छुवायो न जाय। तब भगवानदास श्रीआचार्यजी सों पूछे, महाराज ? आपको जल शूद्र लावत है, वासन माँझत है, सो मैं ब्राह्मण हूँ मोसों क्यों न करावत ? तब श्रीआचार्यजी कहैं, हमारे मत में भगवान कों जो कोई न जाने सो शूद्र तें हू गयो बीत्यो। और भगवान कों जो जाने, सोई सर्वोपरि ब्राह्मण, इतनो भेद है। तातें और सूँ नाहीं करावत। तब भगवानदास ने कही, महाराज ! यह कैसे जानिये, वैष्णव भगवान् को जानत हैं ? तब श्रीआचार्यजी कहैं, श्रीठाकुरजी कृपा करें तब जान्यो जाय। तब भगवानदास ने कही कृपा कौन प्रकार करे ? तब श्रीआचार्यजी कहैं, गुरु प्रसन्न होय तब श्रीठाकुरजी प्रसन्न भये जानिये। तब भगवानदास ने कही, मेरे तो गुरु कोई नाहीं हैं। आपही मोकों सेवक करो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, सेवक होनो बहोत कठिन है। तुम ब्राह्मण अपनो महात्म मानो। और सेवक भये तो दास होनो पड़े, ताते सेवक मति होऊ। तब भगवानदास कहें, अब तो हों दास होऊँगो। स्वामी पद बहोत दिन कियो, तामें दुःख ही पायो। सो अब मोकों सेवक करो। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय, पानी भराये, पात्र मँजाये, चौका दिवाये। पाछे जूठन की पातर धरे। सो महाप्रसाद भगवानदास लिये। तब बुद्धि फिरी। जो–मैं इनको सीधा तीन दिन लोभ करि के खायो, सो बहोत बुरी करी। पाछे गाँठि में पाँच रुपैया हते, सो श्रीआचार्यजी की भेट

धरि बिनती किये, महाराज ! हम आपको सीधो सामग्री खायो लोभ करिके, सो आछी न करी। परन्तु हम अज्ञानी हैं। आपको स्वरूप नाहीं जान्यो, सो अपराध क्षमा करिये। आप साक्षात् ईश्वर हैं। अब मोकों ब्रह्मसंबंध करावो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप कहैं, काल्हि तुम कों समर्पण करावेंगे। और ये रुपैया पाँच तू अपने पास राखि, खरच के, तेरे काम आवेंगे। तब भगवानदास ने बिनती करी, जो-महाराज ! यह आपकी भेट करि चुक्यो। अब मैं कैसे राखूं ? तब श्रीआचार्यजी राखें। पाछे दूसरे दिन ब्रह्मसंबंध करायो।

पाछे भगवानदास एक वर्ष श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के संग रहि टहल करी। उष्णकाल में पङ्खा बड़ो बनाय मारग में छाया करते। जहाँ आप पोढ़ते तहाँ सुन्दर बिछौना धरती सूधी करि बिछावते, रसोई की परचारगी करते। सो श्रीआचार्यजी प्रसन्न होय के अपनी पादुका की सेवा दीनी। और कहें, तुम इनकी सेवा नीकी भाँति सूँ करियो। अब तुम घर जाऊ। तब भगवानदासने कही, मेरे घर पधारो तो आप कुटुम्ब कों सरन लीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, तेरे कुटुम्बी दैवी जीव नाहीं है, सो सरनि न होंयगे। और सेवा तू ही करेगो। तब भगवानदास दंडवत करि बिनती करि बिदा होई, हाजीपुर अपने गाम में आये। सो न्यारी ठौर घर में करि सेवा मन लगाय करन लागे। सो कछुक दिन में श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे।

वार्ता – प्रसंग १ – पाछे कछू दिन में श्रीआचार्यजी महाप्रभु भगवानदास के घर पधारे, पाक सामग्री करि भोजन किये। भगवानदास कों जूठनि की पातर धरी। भगवानदास के मा-बाप कों, स्त्री कों नाम सुनायो। पाछे आप अड़ेल कों पधारे। सो जा ठिकानें श्रीआचार्यजी महाप्रभु बिराजत हते, तहाँ भगवानदास चौंतरी करि नित्य पोतना करते। नित्य सबेरे न्हाय के दंडवत करते। यह भाव जानते (जो) यहां साक्षात श्रीआचार्यजी बिराजे हैं। सो भगवानदास कों दरसन देते, वार्ता करते। सो भगवानदास ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हते। तिनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥५२॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, भगवानदास साँचोरा ब्राह्मण, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये लीला में भगवानदास ललिताजी की सखी है। इनको नाम लीला में 'सुन्दरी' है। सो गुजरात में राजनगर के पास एक गांव है। तहाँ एक साँचोरा के घर जन्में। सो वर्ष आठ के भये। तब राजनगर में एक पंडित पास पढन जाते। सो वर्ष १० में विद्या पढ़े। तब वह पंडित श्रीरणछोड़जी के दरसन कों आयो। ताके संग भगवानदास आप श्रीरणछोडजी के दरसन कों आये। तहां श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप पधारें। तब वह पंडित श्रीआचार्यजी सूँ वाद करन आयो, सो वाद करन में वह पंडित हारयो। सो आपुनें डेरा गयो। पाछे भगवानदास सों वह पंडित नें कही, मैं कासी जाय फेरि और पढ़ि के याद श्रीआचार्यजी सों करूँगो। तू मेरे संग चलि। तब भगवानदास नें वह पंडित सो कह्यो, मोकों तो श्रीरणछोड़जी के दरसन करने हैं। अबहि काल्हि आयो, आजु कैसे चलूं ? एक महिना तो दरसन करूँ। तब पंडित ने कही, मैं तो जात हों फेरि कबहूँ मिलेंगे। सो पंडित तो कासी कों आयो। भगवानदास श्रीआचार्यजी के पास आय दंडवत् करि बिनती किये। जो–महाराज ! वह पंडित वाद करत में निरुत्तर भयो। सो लाज पाय के कासी उठि गयो। मैं वाके पास पढ़त हो सो अब आप मोकों पढ़ावोगे ? तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप कहें, तुम बहोत पढ़िकें कहा करोगे ? तब भगवानदास नें कही, महाराज ! बहोत पढ्यो होऊ तों बहोत कमाऊँ द्रव्य। जहां तहाँ पंडितन की सभा में आदर होय। जो कोई चर्चा शास्त्र की करें तासों वाद करूँ, संसार में पूजा होय। तब श्रीआचार्यजी कहें, विद्या पढ़िके दोय फल होत हैं। विद्या पढे शास्त्र बाँचे। तब शास्त्र हैं सौ सीतल जल रूप दोऊ सुन्दर भीतर के नेत्र हैं, सो खुले सब वस्तू को ज्ञान होई। परन्तु सत पुरुष कों ज्ञान होई। सीतल जलवत्, शान्त चित्त होय जाय। दुःख सुख कों भगवद् इच्छा जानें। जगत में जीव मात्र में भगवद् बुद्धि होय। सो दैन्यता संतोष निर्मलता क्रोधादिक रहित होय। भगवान के आश्रित होय तो वाको पढ़नो सुफल है, याहू लोक में और परलोक में सुख पावे। और ओछो पात्र विद्या पढे, तब वह विद्या वाकों अग्नि रूप होय। एक तो काम, क्रोध, मद, मात्सर्य में लपट्यो हतो ता पर विद्या पढ़े को मद और बढ़े। सो काहू को जगत में गिने नाहीं। रात्र दिन अहंकार रूपी अग्नि में जरयो करे। सो यह लोक में जीव दुःखी रहे, परलोक में नर्क कों पावे। यातें तुम बहोत शास्त्र पढ़ो मति। जो पढे सोई बहोत है। और द्रव्यादिक है सो भाग्य तें मिलत है। पंडित बड़े–बड़े राजसी मूर्खन की चाकरी करत हैं। तातें संतोष दया राखें। काम, क्रोध, लोभादिक मोह कों छोड़ि, श्रीठाकुरजी को भजन करो। जीविका भगवान विचारे है, सो भगवद् इच्छातें भागि प्रमाण मिली रहेगी। या प्रकार सिद्धान्त रूप

श्रीआचार्यजी के बचन सुनिके भगवानदास के हृदय में भगवत्धर्म प्रवेस भयो। सो श्रीआचार्यजी कों दंडवत् करि बिनती किये, महाराज! अब मेरे मन को संदेह सगरो दूरि ह्वे गयो। सब में भगवद् भजन श्रेष्ठ हैं। ताते अब मोकों कृपा करिके सरन लेहू। जा प्रकार आप बतावो ता प्रकार भगवद् भजन करूँ। तब श्रीआचार्यजी कहैं, जा न्हाय आव। तब भगवानदास न्हायके श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय निवेदन करवायो। तब भगवानदास ने कही, महाराज! मेरो मन आपके पास रहि के आपकी सेवा करन को है। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहैं, हमारे पास तुमसों रह्यो न जायगो। अनेक अपराध जीव सों होत है। सो कबहू अप्रसन्नता होय तो तोकों भगवद् प्राप्ति में अंतराय होय। और ये वैष्णव हैं, सो हमारे स्वभाव कों जानि रहे हैं। ये हमारे पास रहिवे लायक है। तातें तुम घर जाव। वैष्णवको संग कछुक दिन करो। पाछें गोवर्द्धन परवत पर श्रीगोवर्द्धननाथजी प्रगट होयंगे। सो तुम तहाँ जाय श्रीगुसांईजी की आज्ञा प्रमान सेवा करियो। तिहारो सगरो मनोरथ श्रीगुसांईजी पूर्ण करेंगे। पाछे आप ब्रह्मसंबंध को श्लोक, अष्टाक्षर, लिखिके दिये, और कहे रसोई करि, इनकों भोग धरि निर्वाह करियो। तब भगवानदास ने बिनती करी, महाराज! आप जहाँ ताँई बिराजो यहाँ, तहाँ ताँई तो आपकी सेवा करूँ। तब श्रीआचार्यजी कहे सुखेन करो। सो भगवानदास जल लावते, रसोई की सगरी परचारगी करते। श्रीआचार्यजी कथा कहते, तब पाछे ठाडे होय चँवर करते। सो श्रीआचार्यजी भगवानदास के ऊपर बहोत प्रसन्न होयके "चतु:श्लोकी" आप किये हे सो भगवानदास कों पढ़ाये। और कहैं, पहले तेरो मन पढ़िवे में रह्यो सो अब तोकों वेद पुरान भागवत सबको अर्थ फुरेगो। मैं प्रसन्न भयो, अब तुम घर कों जाऊ। तब भगवानदास दंडवत करि घरकों चले। श्रीआचार्यजी परिक्रमा कों पधारें। सो भगवानदास बहोत दिनलों घर में रहै। पाछे कछुक दिन पाछे भगवानदास की स्त्री की देह छूटी। तब भगवानदास मन में प्रसन्न भये। जो-अब घर को बंधन छूट्यो, अब ब्रज जाऊँगो। सो कछुक दिन में वैष्णव के मुखसों सुनी, जो-गिरिराज पर श्रीगोवर्द्धनधर बिराजे हैं। श्रीगुसांईजी सेवा शृङ्गार करत हैं। तब भगवानदास घर की वस्तू सब बेचि घर एक ज्ञाति को ब्राह्मण हतो ताकों दिये। मा बाप संग तो कोई हतो नाहीं। पाछे चले सो कछुक दिन में गिरिराज पर आई, श्रीनाथजी को दरसन कियों। पाछे श्रीगुसांईजी के दरसन करि, दंडवत करि, बिनती किये, महाराज! या प्रकार मोकों श्रीआचार्यजी सरन लिये। यह आज्ञा हती, सो आप पास जैयो। सो मैं तिहारे पास आयो हूँ। घर को कछू बन्धन मोकों है नाहीं। सो मोकों सेवा कृपा करिके बताईयो। तब श्रीगुसांईजी प्रसन्न होयके कहैं, तुम श्रीनाथजी के भीतरिया होऊ, रसोई बालभोग की सेवा करो। तब भगवानदास सुन्दर सामग्री करते।

वार्ता – प्रसंग १ – सो एक दिन भगवानदास ने सामग्री करी सो दाझी, सो बिगरी भोग धरे। सो जब श्रीगुसांईजी भोग सरायवे पधारे तब बिगरी सामग्री देखि भगवानदास के उपर बहोत खीजे। सो सेवा तें बाहिर किये। तब भगवानदास एक कौने में बैठि रुदन करन लागे। जो–मैं अब कहा करूँ ?

भावप्रकाश– सो श्रीगुसांईजी यातें खीजे, जो–सामग्री बिगरि गई तो दूसरी करते। बिगरी वस्तू प्रभु कों क्यों भोग धरे ? करिवे को आलस्य कियो। हमसों कहतो तो हम करते। और भीतरियातें कराय लेते। यह विचारि के भगवानदास पर खीजे।

पाछें भगवानदास गोविंदकुण्ड ऊपर अच्युतदास पास आये। सब समाचार कहे, जो–अब मैं कहा करूं ? मोकों सेवा तें बाहिर किये। तब अच्युतदास ने कही, सामग्री सावधानी सों करिये। अब तुम चिंता मति करो, श्रीगुसांईजी परम दयाल हैं। फेरि तुमकों सेवा देइंगे। सो गोविंदकुंड पै जाय बैठो। पाछे श्रीगुसांईजी गोविंदकुंड पर मध्यान्ह की सन्ध्या करन नित्य पधारते। और अच्युतदास वृद्ध हते। मानसी सेवा में मग्न रहत हते, तिनकों नित्य दरसन देवकूँ पधारते। सो गोविंदकुंड पे सन्ध्या करि अच्युतदास के पास श्रीगुसांईजी पधारे सो अच्युतदास के नेत्रन सों जल बहोत बहत है। सो देखिके श्रीगुसांईजी अच्युतदास सों कहैं, तुमकूं ऐसो बड़ो दुःख कहा है ? तब अच्युतदास ने श्रीगुसांईजी सों कही, महाराज ! श्रीआचार्यजी नें जीवन कों तुमकों सोंपे हैं। सो आपकों बहोत जीव अङ्गीकार करनो है। जीव तो दोष सों भरे हैं। सो आप अभी तें जीवको दोष देखन लागे, सो जीवको उद्धार अब कैसे होयगो ? और जब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को ब्रह्मसंबंध की आज्ञा दीने, तब कहें, जाको तुम ब्रह्मसंबंध

करावोगे ताके सकल दोष दूरि होंइगे। आप दोष देखन लागे, सो मोकों बड़ो दु:ख है। जो अब जीवको कौन प्रकार उद्धार होइगो ? तब श्रीगुसांईजी अच्युतदास सों कहैं, तुम चिन्ता मति करो। मैं भगवानदास कों सिक्षा दीनी है। और यह बात तुम द्वारा श्रीआचार्यजी ने मोसों कही है। तातें आज पाछें कोई वैष्णव पर न खीजोंगो। तब अच्युतदास प्रसन्न भये। तब श्रीगुसांईजी गोविंदकुंड तें भगवानदास की बांह पकरि के श्रीनाथजी के मन्दिर में ले गये। कहे सेवा सामग्री सावधानी तें करियो। तब भगवानदास प्रसन्न होयके यह कीर्तन गायो –

''श्रीविट्ठलेश चरन'' कमल पावन त्रैलोक्य करन दरस परस सुन्दर वर वार वार वंदे। समरथ गिरिराज धरन लीला निज प्रगट करन संतन हित मानुष तन वृन्दावन चन्दे ॥१॥

चरणोदक लेत प्रेत ततछन तें मुक्त भये करुणामय नाथ सदा आनंद निधि कन्दे। वारने 'भगवानदास' विहरत सदा रसिक रास जै जै जसु बोलि बोलि गावत श्रुति छन्दे ॥२॥

यह कीर्तन सुनकि श्रीगुसांईजी प्रसन्न भये। ता पाछे भगवानदास सेवा में मन लगाय के भयसंयुक्त सेवा करन लागे। सो कछुक दिन में श्रीनाथजी सानुभावता जनावन लागे। सो भगवानदास ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हे। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥५३॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, अच्युतदास सनोढिया ब्राह्मण, मथुरा के वासी, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ये अच्युतदास लीला में ललिताजी की सखी हैं। 'मधुरा' इनको नाम लीला में है। ए ऐसो वचन बोलत हैं, मानो अमृत श्रयो। सबकों प्रिय है।

सो अच्युतदास मथुरा में एक सनोढ़िया ब्राह्मण के घर जन्में। सो वर्ष नौ के भये तब पिता माताके सङ्ग दिवारी में श्रीगोवर्द्धन की परिक्रमा करन आये। सो अच्युतदास कों गिरिराज की सोभा देखि मन लागि गयो। तब मा बाप सों कहे। मैं तो श्रीगोवर्द्धन में रहोंगो। तब पिता ने कह्यो, क्यों बेटा वैरागी होन को मन है ? तब अच्युतदास ने कही, मैं तो वैरागी हूँ। मेरो ब्याह तो भयो ही नाहीं। परन्तु मेरे सगे संबंधी आन्योर में हैं, तहाँ कछुक दिन रहूँगो। श्रीगोवर्द्धन की दस बीस परिक्रमा दे मन होयगो तब आऊँगो। तब मा बाप सगे सम्बन्धि कों सोंपी के मथुराजी में आये।

वार्ता-प्रसंग १- सो अच्युतदास आन्योर में रहते। कबहूं परासोली, कबहूँ श्रीकुण्ड, कबहूँ श्रीगोवर्द्धन, या प्रकार सों रहते। पाछे श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धन की तरहटी पधारे। तब आन्योर में सदू पांडे कों घर सहित सेवक किये, श्रीगोवर्द्धनधर कों परवत के भीतर तें बाहिर पधराये। तब अच्युतदास को दैवी जीव जानि नाम निवेदन कराय कहें, तुम श्रीगोवर्द्धनधर की सेवा करो। तब अच्युतदास श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि बिनती कियो, महाराज ! मोपर ऐसी कृपा करो, जो-एकान्त बैठिके मानसी सेवा में मन लागे। तब श्रीआचार्यजी अपनो चरणामृत दिये। सो अच्युतदास पान करि, हाथ नेत्रन सों लगाय, मस्तक पर लगाय, हृदय सों लगायो। तब अच्युतदास के नेत्र अलौकिक ह्वै गये। लीला को दरसन करन लागे। मस्तक पर धरे।

भावप्रकाश-जो जैसे मर्यादा मार्ग में गंगाजी मस्तक पर महादेवजी धरि भक्तराज भये। तैसे अच्युतदास माथे पर श्रीआचार्यजी को चरणोदक धरि, ताकी छायामें सदा रहे। हृदय के लगाये सगरी लीला, मार्ग को सिद्धान्त, हृदयारूढ़ भयो। तब श्रीआचार्यजी ने 'सिद्धान्तमुक्तावली' करि पढाये। ताकरि मानसी सेवा में मग्न भये। सो सदा गोविन्दकुंड के पास गुफा में रहते। नेत्र प्रेम रस सों भरे रहते। सो श्रीगुसांईजी नित्य दरसन देवे पधारते, ऊपर यह भाव मर्यादा राखन अर्थ। परन्तु श्रीगुसांईजी दरसन करवे आवते। सो यातें श्रीगुसांईजी कों श्रीआचार्यजी को अनुभव होतो, अच्युतदास के नेत्रन में महाप्रभुजी झलकते। तातें श्रीगुसांईजी मार्ग की रीति

भाँति श्रीगोवर्द्धनधर की लीला को भाव पूछिके बहोत प्रसन्न होते। सो अच्युतदास परमार्थी हूँ ऐसे जो भगवानदास कों श्रीगुसांईजी ने सेवा तें काढ़े, सो फेरि बिनती करि भगवानदास कों सेवा में अङ्गीकार कराये। जो सामग्री श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धनधर कों धरते, सो अच्युतदास गोविन्दकुंड पर बैठे ही सब अनुभव करते। सो श्रीगुसांईजी सों सब कहते, आजु यह सामग्री सुन्दर भई। या प्रकार अङ्गीकार किये। यातें श्रीगुसांईजी अच्युतदास पास राजभोग धरिके नित्य पधारते। सो अच्युतदास की वार्ता को बहोत प्रकास नाहीं किये, सो याते, जो–इनकों विप्रयोग है। रस सम्बन्धी वार्ता लोगन में प्रकास करनो नाहीं। तातें इनको वरनन किये नाहीं।

सो अच्युतदास ऐसे भगवदीय हे, इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥५४॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, अच्युतदास गौड़ ब्राह्मण, महाबन के बासी, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ये लीला में विसाखाजी की सखी अंतर्गृहता में है, तहां इनकी प्राप्ति। लीला में इनको नाम 'मोहनी' है। जब श्रीठाकुरजी कों देखे तब मोहि जाय, सरीर की सुधि न रहै। सो महाबन में एक गौड़ ब्राह्मण के घर जन्में। सो जब नारायणदास ब्रह्मचारी के घर श्रीआचार्यजी पधारे तब अच्युतदास कों नाम दिये। सो वर्ष सात आठ के हते। सो नारायणदास ब्रह्मचारी पास आवते जावते। सो जब वर्ष बीस के भये तब नारायणदास सों पूछे। हमकों नाम सुनाये, सेवक किये, सो कहाँ हैं? कहा उनको नाम हैं? तब तो मैं बालक हतो, कछु समुझत न हतो। अब दरसन करूँ तो समर्पण करूँ। तब नारायणदास ने कही, श्रीआचार्यजी उनको नाम है और तीर्थराज प्रयाग के पास अड़ेल गाम में बिराजत हैं। तब अच्युतदास ने कही, गिरिराज की परिक्रमा दे अड़ेल जाऊँगो। सो अच्युतदास कों गिरिराज की परिक्रमा में बड़ो प्रेम हतो। महीना में दोई चारि देते जाय। सो अच्युतदास गिरिराज की परिक्रमा दे अड़ेल कों चले, सो कछुक दिन में जाय पहोंचे। श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि ठाडे रहे। तब श्रीआचार्यजी कहें, अच्युतदास तुम कहाँ ते आये? तब अच्युतदास ने कही, जो–महाराज! ब्रज सों आयो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, ब्रज में तुम कहा करते? तब अच्युतदास ने कही, दोय चारि परिक्रमा महिना में गिरिराज की करतो। और नारायणदास ब्रह्मचारि आपके वैष्णव है महाबन में, तिनको संग करतो। सो मोकों आप बालपनें में नाम सुनाये हते। सो मैं आपको नाम जानत न हतो। सो नारायणदास

नें सगरो प्रकार बतायो। अब मोकों समर्पन कराइये। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो-जाऊ, श्रीयमुनाजी में स्नान करि आऊ। तब अच्युतदास श्रीयमुनाजी में न्हायके श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय ब्रह्मसंबंध कराए। पाछे अच्युतदास सों कहे, तू गिरिराज की परिक्रमा बहोत दियो, परन्तु कछू चमत्कार देखे ? तब अच्युतदास ने कही, महाराज ! मैं तो कछु चमत्कार देख्यो नाहीं। तब श्रीआचार्यजी कहैं, गिरिराज की तीनि परिक्रमा लगती करेगो तो कछू देखेगो। तब अच्युतदास श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि बिदा माँगि चले। जो-कब श्रीगोवर्द्धन जाय कब तीन परिक्रमा लगती करों ? या प्रकार सूँ अति आतुर भये। सो कछुक दिन में आय नारायणदास सों सगरो प्रकार कहैं, जो-श्रीआचार्यजी ने ब्रह्मसंबंध कृपा करिकें कराये। अब तीन लगती श्रीगोवर्द्धन की परिक्रमा की आज्ञा करी है, सो श्रीगोवर्द्धन जात हों। सो श्रीगोवर्द्धन आय रात्र सोय रहे। तब रात्रि प्रहर एक पाछली रही तब उठि, देह कृत्य करि, मानसी गंगा न्हाय परिक्रमा उठाई। सो प्रहर डेढ़ दिन चढ़े एक पूरी करी। दूसरी उठाई, सो घड़ी छे दिन पाछलो रह्यो तब पूरी करी। तीसरी उठाई, सो जब अपछराकुंड के पास आये सो हारि गये। भूखे, रात्र घरी एक गई। तब ग्वारिया अच्युतदास पास आये कह्यो, वैरागी तू कहाँ जात है, सिंह बैठ्यो है। सो पाछे फिर। तब अच्युतदास ने कही, पाछे कैसे फिरूँ ? श्रीआचार्यजी के बचन है, जो-लगती तीनि परिक्रमा करियो। सो पाछे न फिरोंगो। तब ग्वारिया अन्तरधान ह्वे गयो। तब अच्युतदास आगे चले। सो देखें तो मार्ग के बीचों बीच नाहर ठाड़ी है। तब विचार किये, जो-परिक्रमा तो छोडनी नाहीं। नाहर खाय तो खाउ। सो धीरज धरि सिंह के पास जात ही देखे तो सुन्दर गाय ठाड़ी हैं। तब गाय की परिक्रमा करि पूंछ माथे चढ़ाय पाछे आगे चलें। प्रहर एक रात्र गये परिक्रमा पूरी करी। पाछे महाबन में आयके नारायणदास सों कहे, जो-ग्वारिया, सिंह, गाय देख्यो, याको कारण कहा ? तब नारायणदास ने कही, जो-यह अभिप्राय तो श्रीआचार्यजी जाने तब अच्युतदास अड़ेल फेरि चले। सो कछुक दिन पाछे श्रीआचार्यजी के दरसन आय किये। तब श्रीआचार्यजी पूछे, तीन लगती परिक्रमा गिरिराज की करी, सो कछू देख्यो ? तब अच्युतदास ने कह्यो ग्वारिया देख्यो, पाछें सिंह देख्यो, सो सिंह सों गाय के दरसन भये। सो मैं समुझो नाहीं। तब श्रीआचार्यजी कहैं, ग्वारिया तो श्रीठाकुरजी आप हते। सो तेरो धीरज देखन अर्थ डरपाये। पाछें सिंह गिरिराजजी हते। सो तू पास गयो तब गाय रूप ह्वे दरसन दिये। तेरे बड़े भाग्य है। परन्तु कची दसा है, अब ही तोकों प्रेम नाहीं है। तातें लीला सहिता दरसन नाहीं दिये। तब अच्युतदास दरसन करि, दंडवत करि श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों बिनती करी, महाराज ! प्रेम को दान आप कृपा करिके करो। आप बतावो सो मैं करूं। जा प्रकार मोकों लीला को अनुभव

होय। तब श्रीआचार्यजी कहै, तुम भगवद् सेवा करो तो प्रेम होय। तब अच्युतदास ने कही, महाराज ! सेवा पधराय देउ । जा प्रकार बतावो ता प्रकार मैं करूँ । तब श्रीआचार्यजी कहैं, अब हम ब्रज चले हैं, हमारे संग तू चलि । तहाँ सगरो मनोरथ पूर्ण होयगो। तब श्रीआचार्यजी के संग अच्युतदास चले। सो अड़ेल ते पाँच मजलि पर एक गांम आयो, छोटो सो। ताके उपर एक तलाब। बगीची सघन, तलाब सुन्दर ठिकानो देखि श्रीआचार्यजी कहैं, आज यहाँ पाक सामिग्री करेंगे। तब अच्युतदास सों कही, तू न्हाय के आव, जल भरि ल्याव। सो अच्युतदास तलाब में न्हायके निकसे। सो निकसिके देखें तो तलाब के किनारे एक छोटोसो पीपरि को वृक्ष हैं। ताके नीचे हरी घास पर एक श्रीठाकुरजी बिराजत हैं। तब अच्युतदास दोरिके श्रीआचार्यजी सों कहै, महाराज ! तलाब के किनारे पीपरि नीचे हरी घास पर एक श्रीठाकुरजी को स्वरूप है। तब श्रीआचार्यजी पधारि हाथ में पधराय अपने उपरना तें रज पोंछि, अच्युतदास कों दिये। कहें, तू रसोई करि भोग इनकों धरि। पाछे ब्रज में चलियो। तेरे घर में पधरावेंगे। सो अच्युतदास सुन्दर स्वरूप देखि बहोत प्रसन्न भये। श्रीआचार्यजी के श्रीहस्त को स्पर्श तो ह्वे चुक्यो है। सो रसोई करि भोग धर्यो। पाछे अच्युतदास नित्य ऐसे करत श्रीआचार्यजी के सङ्ग महाबन आये तब अच्युतदास अपने घर में श्रीआचार्यजी कों पधराये तब श्रीआचार्यजी श्रीठाकुरजी कों पञ्चामृत स्नान कराय पाट बैठारे। श्रीमदनमोहनजी नाम धरे। अच्युतदास के माथे पधराये। आप तीन दिन अच्युतदास के घर रहि पुष्टिमार्ग की सगरी रीति बताई। पाछे आप नारायणदास ब्रह्मचारी के घर एक रात्र रहि पाछे गिरिराज ह्वे आप द्वारिका पधारे।

वार्ता-प्रसंग १- सो अच्युतदास श्रीमदनमोहनजी की सेवा भली भांति सों करते। सो श्रीमदनमोहनजी कछुक दिन में अच्युतदास कों सानुभावता जनावन लागे । लीला रस को अनुभव कराए। बातें करते, जो चहिये सो माँगि लेते। पाछे जब श्रीगुसांईजी के पास अच्युतदास आवते । तब श्रीगुसांईजी अच्युतदास कों दंडवत न करन देते। और कहते, तिहारे हृदय में श्रीआचार्यजी बिराजत हैं। सो अच्युतदास ऐसे भगवदीय हे। बहोत दिन लों श्रीमदनमोहनजी की सेवा मन लगाय के करी। पाछे जब श्रीआचार्यजी आसुर व्यामोह लीला करी तब

अच्युतदास ने श्रीमदनमोहनजी पधराये। पाछे विरह बहोत, सो रह्यो न जाय। तब बद्रीकाश्रम जाय अन्न जल छोड़ि देह त्याग करे। सो अन्तरर्गृहता की प्राप्ति भई। श्रीठाकुरजी के श्रीमुख में प्रवेस किये। पाछे श्रीमदनमोहनजी कों श्रीगोपीनीथजी के पास पधराए। सो ये अच्युतदास ऐसे श्रीआचार्यजी महाप्रभु के कृपापात्र भगवदीय हे। जो–श्रीआचार्यजी को विरह सहि न सके तातें इनकी वार्ता कहाँ तांई कहिये। वार्ता ॥५५॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, अच्युतदास सारस्वत ब्राह्मण, सो कडा में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश– ये लीला में श्रीयमुनाजी की सखी हैं। लीला में इनको नाम 'रसात्मिका' है। सदा संयोग में मगन रहती। सो अच्युतदास कड़ा में एक ब्राह्मण सारस्वत के घर प्रगटे। सो वर्ष ग्यारह के भये। तब ब्याह भयो। तब वर्ष चारि पाछे वह स्त्री मरि गई। सो अच्युतदास कों बहोत दुःख भयो। सो दिन चारि लों खाये नाहीं। बहोत दुःख भयो, सो एक दिन माता पिता ने बहोत कही, परि माने नाहीं। कहे मैं बैराग्य लेऊँगो। तब पिताने कही, जो–तू कहे तो तेरे दोय विवाह करि देऊँ। यह कहि के समुझायो, खवायो। पाछे दिन दस पीछे पिता मरि गयो। तब अच्युतदास और हू दुःख किये। पाछे चारि दिन में माता मरि गई। तब अच्युतदास घरतें निकसे। सो बद्रीनाथ होय, जगन्नाथरायजी गये। तहाँ श्रीआचार्यजी पधारे। सो कथा कहत हैं। सो अच्युतदास बैठे, सो कथा सुने। परन्तु दुःख के मारे कछू समुझे नांही। पाछे कथा करि चुकें। तब श्रीआचार्यजी कहें, अच्युतदास तू ऐसो उदास क्यों है ? तब अच्युतदास रोवन लागे, कहें, महाराज ! मेरे दुःख को पार नाहीं है। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे, तू अपनो दुःख कहे तो वाको उपाय होय तब अच्युतदास ने कही, महाराज ! स्त्री मा बाप सब मरि गये। मैं कबहूँ दुःख देख्यो नाहीं, सो मैं कहा करूँ ? कछू उपाय समुझत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी कहें जा न्हाय आउ, तेरो दुःख सब दूरि श्रीठाकुरजी करेंगे। तब अच्युतदास स्नान करि आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय निवेदन कराये। पाछे वेदमंत्र सों पढ़ि एक अंजुलि जल छिडक्यो। तब अच्युतदास के हृदय में विवेक, धैर्य, भगवान को आश्रय दृढ़ होय गयो। तब

श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि अच्युतदास ने कही, महाराज ! मैं इतनो दुःख योंही पायो। कौन की स्त्री कौन माता पिता, यह सरीर मेरो नाहीं, तो सरीर के सम्बन्धी को योंही दुःख कियो। मैं भगवान को दास होय के भगवान कों भूल्यो। तातें दुःख पायो। अब मैं आपकी सरनि होय परम सुख पायो। अब मोकों आप टहल बतावो, सो मैं करूँ। तब श्रीआचार्यजी कहे, तू हमारे संग रहि। जो टहल होय, तोसों बने सो करियो। तब अच्युतदास श्रीआचार्यजी के सङ्ग रहे। सो एक पृथ्वी परिक्रमा में श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की भली टहल तन मन लगाय के कियो। सो श्रीआचार्यजी प्रसन्न होयके अड़ेल पधारे, तब अच्युतदास सों कहे, अब तुम घर जायके सेवा करो। तब अच्युतदास के नेत्रन में जल भरि आयो। कहे, महाराज ! आपके बचनामृत सुने बिना, दरसन बिना, मोकों एक दिन रह्यो न जायगो। लौकिक दुःख सब आप दूरि किये। आप बिदा करो तो यह दुःख दूरि करिवे को कौन सामर्थवान है ? तब श्रीआचार्यजी प्रसन्न होय अपनी पादुकाजी की सेवा दीनी। और कहे, मैं तोपर बहोत प्रसन्न हों। सो जहाँ तू रहेगो तहाँ मैं तुमकों दरसन देऊँगो। तुमकों जो संदेह होय सो पूछियो। तिहारो सन्देह दूरि करोंगो। तातें अब घर जाय भगवद् सेवा करो। तब अच्युतदास श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि श्रीआचार्यजी की पादुकाजी माथे पधराय बिदा होय कडामें घर आये।

वार्ता – प्रसंग १ – सो अच्युतदास भली भांति सों श्रीआचार्यजी की पादुकाजी की सेवा करते। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु अच्युतदास कूँ नित्य दरसन देते, वार्ता करते। पुष्टिमारग की रीति, लीला को भाव कहते। सो अच्युतदास ऐसे भगवदीय हे, कृपापात्र हते। पाछे कछुक दिनमें श्रीआचार्यजी महाप्रभु सन्यास ग्रहण करि कासी पधारे। सो डेढ़ महीना सन्यास राखे पाछे आसुर व्यामोह लीला करी। सो संग एक वैष्णव हतो। सो वाकों बहोत विरह दुःख भयो। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु पहले उह वैष्णव कों कहे, जो–तू कड़ा में अच्युतदास पास जैयो। वे तेरो संदेह दुःख सब दूरि करेंगे। सो जब श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी लौकिक आसुरव्यामोह लीला करी तब वह वैष्णव विरह सों दुःखी होय, कड़ा में अच्युतदास पास आयके, श्रीआचार्यजी के

सन्यास ग्रहण की आसुरव्यामोह लीला की बात कही। तब अच्युतदास ने कही श्रीआचार्यजी ऐसी कबहू न करें। तोकों मोह भयो होयगो। महाप्रभुजी कबहू ऐसी करेंही नाहीं। तोकों भ्रम भयो है। तब वह वैष्णव ने कही, मैं कासी में श्रीआचार्यजी के संग हतो, सो देखिके आयो हों। तब अच्युतदास कहें, उत्थापन को समय अब दोय घड़ी में होयगो, तब तेरो संदेह दूरि होय जायगो। तब वह वैष्णव बैठि रह्यो। पाछे उत्थापन को समय भयो। तब अच्युतदास न्हाय के मंदिर के किंवाड़ खोलि उह वैष्णव कों बुलाय, श्रीआचार्यजी के दरसन कराये। उह वैष्णव देखे तो श्रीआचार्यजी बिराजे पोथी देखत हैं। तब वह वैष्णव दण्डवत करि, चक्रत होय रह्यौ। तब श्रीआचार्यजी उह वैष्णव सों कहैं, जो-तू संदेह मति करे, कासी में लौकिक लीला देखि कें। मैं अपने भक्तन के घर सदा बिराजत हों। अब लौकिक लोगन कों दरसन नाहीं, भगवदीयन कों नित्य दरसन है। तब वह वैष्णव को संदेह गयो। सो अच्युतदास सदा संयोग रस में मगन रहते। ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हे, तातें इनकी वार्ता कहाँ ताँई कहिये। वार्ता ॥५६॥

भावप्रकाश-सो ये श्रीयमुनाजी की सखी हैं। तातें इनकी संयोगी लीला संबंधी वार्ता अनेक हैं, सो प्रगट करी न जाय।

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, नारायणदास कायस्थ, अम्बालय के वासी, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं-

भावप्रकाश-ये लीला में कुमारिका की सखी हैं। लीला में इनको नाम 'ब्रज बिलासनी' हैं। सो अम्बालय में एक कायस्थ के घर जनमे। सो नारायणदास

बड़े भये वर्ष बीस के। तब नारायणदास हू पिता के संग जाते। उह देसाधिपति को काम करतो। सो नारायणदास कों जूआ खेलवे को व्यसन बहुत हतो। पिता बहुतेरो मारे, समुझावे। परन्तु जूआ खेले बिना न रहे। सो नारायणदास एक दिन जूआ खेलते में हजार रुपैया हारे। सो नारायणदास के पिता पास मनुष्य मांगन आये। कहें, नारायणदास जूआ में हारयो है, सो वाकों घेरे हैं, तुम देऊ। तब नारायणदास के पिता ने कही, वही नारायणदास देईगो। सो बड़ो रगड़ो भयो। पाछे नारायणदास के पिता ने हजार रुपैया दिये। और वह देसाधिपति सों कहि के नारायणदास को देस तें बाहिर निकारि दियो। सो नारायणदास दक्षिण देस गये। तहाँ एक ब्राह्मण पास रहिके कछुक विद्या पढ़े। सो पोथी बाँचन लागे, जूआ को व्यसन छूटि गयो। पाछे दस पाँच लरिका पढ़ावें, तामें जीविका करें सो एक दिन बजार में एक हाट पर लरिकान कों पढ़ावत हते। सो एक लरिका सों कछू भूल परी तब मारत हते। सो कृष्णदास बजार में श्रीआचार्यजी के लिये सीधो सामान लेन आये हते, सो कृष्णदास नारायणदास कों दैवी जीव देखिके कहें। नारायणदास! ऐसे लरिकन कों न मारिये, दया राखिये। तब नारायणदास कहे, तुम अपने काम जाव, तिहारे कहा काम है? हमारो तो यही काम हैं। तब कृष्णदास ने कही, या भांति मारत है, सो जूआ के पाछे अम्बालय तें भाज्यो, ऐसे अब जो कोई बालक मरि जायगो तो हत्या लगेगी, और अब भाजिके कहाँ जायगो? तब नारायणदास ने कही, तुम अम्बालय की बात कहा जानो, तुमकों कबहू देख्यो नाहीं। तब कृष्णदास ने कही, मैं श्रीआचार्यजी की कृपातें तेरी बात सर्व जानत हों। मैं हूँ तोकों नाहीं देख्यो, परन्तु तू उत्तम दैवी जीव है। तातें तोसों कह्यो। यह लरिका पढ़ायवे की जीविका छोड़ि दे। तब नारायणदास ने कही, मैं खाऊँ कहाँ ते? तब कृष्णदास ने कही, तू कायस्थ है, काहू की चाकरी करि खा। तब नारायणदास ने कही, अब तेरो कह्यो करूँ तो खराब होऊँ मेरे यही ठीक है। तब कृष्णदास कहें, तू जाने, दुःख पावेगो। यह कहि कृष्णदास सीधो सामग्री ले श्रीआचार्यजी के पास आये, श्रीआचार्यजी सों सब बात कहे। महाराज! नारायणदास कायस्थ एक अम्बालय को यहाँ है। दैवी जीव है। वाकों मैं समुझायो सो मान्यो नाहीं। बालकन कों पढ़ावत है। तब श्रीआचार्यजी कहें, न मान्यो तो कहा भयो? तुमने वाकों समुझायो। तुमकों ढूँढत अब ही आवेगो। पाछे श्रीआचार्यजी रसोई करि, भोग धरि भोजन करे, गाम बाहिर बगीची हती तहाँ पोढ़े। सो तीसरे प्रहर नारायणदास वाकों पाटी खेंचिके मारी। सो वह लरिका मूर्छा खायके गिरयो। तब नारायणदास डरपि के वह लरिका कों कोठा में ले जाय, नाक मुख बहुतेरो मूंद्यो, परन्तु जाग्यो नाहीं। तब नारायणदास कों सुधि आई, जो–दोय प्रहरके उह महापुरुष के बचन साँचे भये। ताते उन कही, जो–मैं तो श्रीआचार्यजी की कृपा तें जानत हों।

सो कोई श्रीआचार्यजी के संग होइगो। तब कोठाकों तारो मारि, गाँव में सबसों पूछत चले। जो–प्रदेशतें कोई श्रीआचार्यजी आये हैं ? तब एक पंडित ब्राह्मण ने कही, जो–श्रीआचार्यजी पधारे हैं, सो मायावाद खंडन किये हैं। भक्तिमार्ग स्थापन किये हैं। सो गाम के बाहिर बगीची में उतरे हैं। सो सुनिके नारायणदास दोरे। वह बगीची के द्वारे आये। सो कृष्णदास कों देखिके नारायणदास ने कही, तुम बात कही, जो–सब साँच भई। उह लरिका कों मैं फेरि मार्‍यो सो मूर्छित भयो। ऐसे कहि कृष्णदासके पाइन परि रोवन लाग्यो। और कह्यो, जो–तुम मेरो अपराध क्षमा करो मैं तिहारो कह्यो न मान्यो। तब कृष्णदास ने कही, तू रोवे मति अब श्रीआचार्यजी को दरसन करि, उनकी कृपातें सब आछो होयगो। तब नारायणदास ने कही, मैं श्रीआचार्यजी कों जानत नाहीं। तुम कृपा करिके ले चलो। तब कृष्णदास नारायणदास कों ले आये। श्रीआचार्यजी पोढ़ि उठे हते। तब नारायणदास ने दंडवत बिनती कीनी, महाराज ! मैं इनको कह्यो न मान्यो, सो दुःख पायो। अब मैं आपकी सरनि आयो हूँ। मेरे माथेको कलंक छुड़ावो। वह गृहस्थ को लरिका मूर्छित भयो। सो मैं कोठरी डारि तारो लगाय के आयो हूँ। तब श्रीआचार्यजी कहैं, वह लरिका तो आछो होहि जायगो, परन्तु पाछे तू फेरि उही काम करेगो ? तब नारायणदास ने कही, महाराज ! मैं आपको दास, गुलाम होय आपके पास रहूँगो। आप आज्ञा देऊगे, सो मैं करूँगो। तब श्रीआचार्यजी झारी तें जल ले वेद–मंत्र सों पढ़ि एक दोना में दिये। और कहे, यह जल लरिका ऊपर छिरकियो, लरिका उठेगो। तब नारायणदास जल लेके आये। कोठरी को तारो खोलि, वह लरिका मूर्छित पर्‍यो हतो तापर छिरके। सो वह लरिका उठ्यो। पाछे उह लरिका कों बिदा करि घर, श्रीआचार्यजी के पास आय दण्डवत करि बिनती किये। महाराज ! मैं आपकी सरनि हों, मोकों सेवक करिये। मेरे माथे तें आप हत्या टारी हैं। तब श्रीआचार्यजी कहैं, जा, स्नान करि आऊ। तब नारायण न्हाय के अपरस में श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय ब्रह्मसंबंध कराये। पाछे कहै, अब तू अपनी वस्तू होय सो लेके हमारे पास आय रहो। कहूँ और ठोर जाय रहेगो तो फेर दुःसंग में परेगो। तब नारायणदास गाम जाय सगरे लरिकान कों उनके मा बाप कों सोंपे। अपनी वस्तू लेके श्रीआचार्यजी के पास आय रहै। सो श्रीमुख की वार्ता सुने महाप्रसाद लिये, चित्त में आनन्द पायें। पाछे आप द्वारिका कों पधारें तहां तांई नारायणदास श्रीआचार्यजी के संग रहै। पाछे श्रीआचार्यजी ने कही, नारायणदास ! तू अपने घर जा। तब नारायणदास ने बिनती करी, महाराज ! मोकों पिता जुवारी जानि देस तें निकासि दीनो। सो अब घर में कैसे राखेगो ? तब श्रीआचार्यजी कहैं, अब राखेगो, चिन्ता मति करे। तब नारायणदास ने कही, महाराज ! माता पिता सेवक नाहीं है, सो मेरो धर्म कैसे निबेहेगो ? उह

प्रतिबंध करे तो मोकूँ कठिनता परे। तब श्रीआचार्यजी कहें, तोसों स्वरूप-सेवा निबहेगी नाहीं। पराई चाकरी करनी, घर में कोऊ सेवक नाहीं, तातें हस्ताक्षर लिख देत हों, सामग्री जो बने सो भोग धरिके महाप्रसाद लीजियो। तब ब्रह्मसम्बन्ध को गद्य को श्लोक अष्टाक्षर लिखिके नारायणदास कूं दिये। तब नारायणदास दण्डवत् करि बिनती किये, महाराज ! इतने दिन आपके पास रह्यो, परन्तु मेरे अन्तःकरण में बोध न भयो। सो ऐसी कृपा करो जो संसार को दुःख सुख कछु मोकों बाधा न करे, चित्त श्रीठाकुरजी के चरणारविंद में लग्यो रहै। तब श्रीआचार्यजी ने अपनो चरणामृत दीनो। और 'बालबोध' ग्रन्थ पढ़ाये। तब नारायणदास श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि द्वारिका तें चले। सो चारि वर्ष पाछे घर में आये। तब माता पिता प्रसन्न होय के कहैं, बहोत दिन में पुत्र आयो। कछू भोजन करो, जल पीवो। तब नारायणदास ने कही, मैं श्रीआचार्यजी को सेवक भयो, सो अपने हाथ कों लेत हों। यह श्रीआचार्यजी की कृपा है। तुम तो मोकों जानत हों, मैं जुवारी हतो। सो सगरो व्यसन श्रीआचार्यजी छुड़ाये। अब थोरी सी मौकों न्यारी ठौर देऊ तहाँ बैठों, भगवद् नाम लेहूँ। तुम काम काज कहो सो करूँ। तब पिता बहोत प्रसन्न भयो, जो जुआ को व्यसन तो छूट्यो। पाछे घर में न्यारो कोठा दिये तहाँ खासा करि नारायणदास रहै। सो बहोत काहू सों बोले नाहीं। माता पिता कहें सो काम करें। अपनी रसोई करि भोग धरि महाप्रसाद ले, नाम लेय। पिता प्रसन्न भयो। जो-मेरे वृद्ध समय नारायणदास आयो, अब याकी बुद्धि (हू) सुन्दर भई। सो पिता नारायणदास कों ले के राजद्वार में गयो। सो बादशाह को काम सब नारायणदास सों करावन लाग्यो। पाछे कछुक दिन में पिता ने देह छोड़ी।

वार्ता- प्रसंग १ - सो नारायणदास हाकिम होय काम करन लाग्यो। सो काम बहोत, छूटि सके नाहीं। श्रीगोकुल आयवे को मन बहोत, श्रीआचार्यजी के दरसन को मन बहोत। तब नारायणदास ने एक मनुष्य चाकर राख्यो। और वाकों महिना रुपैया चारि को कर दियो। और वासों कहैं, तेरो यही काम, जो-मोकों घरी घरी में यह कहियो। भैयाजी ! श्रीगोकुल श्रीआचार्यजी के दरसन कों कब चलोगे ? यही कह्यो करियो। सो वह चाकर नारायणदास के संग रहे। घरी घरीमें यह कहे, भैयाजी ! श्रीगोकुल श्रीआचार्यजी के दरसन कों कब चलोगे ? तब नारायणदास कहते, हाँ, अब चलूंगो। नेत्रन में जल भरि

लीला-रसमें मगन होय जाते। फेरि कामकाज करते। फेरि वह चाकर कहतो। फेरि मगन होय जाते। और वर्ष के वर्ष श्रीआचार्यजी कों भेट पठावते। सो जन्म भरि या प्रकार श्रीगोकुल को स्मरण करि श्रीआचार्यजी में मन लगाय मगन रहे। सो नारायणदास ऐसे भगवदीय भये। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये।

वार्ता ॥५७॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, नारायणदास भाट, मथुरा में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– ये नारायणदास लीला में श्री गोकुल के वानर हैं। सो मथुरा में एक भाट के घर जन्में। सो बड़े भये। परन्तु कवित्त दोहा कछू आवे नाहीं, विश्रान्ति पर बैठे रहैं। जो-कोऊ कछू दे जाय ताही में निर्वाह करें। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारे, विश्रान्त घाट पर सन्ध्या वन्दन मध्यान्ह समय करत हे। तब नारायणदास भाट ने श्रीआचार्यजी को दरसन कियो। तब मन में यह आई, जो-ये महापुरुष हैं, इनसों कछू मैं अपने भाग की पूछों तो सही। जो-मेरे भाग में कहा है ? यह विचारि नारायणदास श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि पूछे, महाराज ! हम ऐसे मूर्ख क्यों भये, भाट होय के। न कवित्त आवे न दोहा आवे। आछे बोलतें हू नाहीं आवें। और जबते जन्म्यों तब ते माँगते खाते बीते दिन। कबहूं मोकों द्रव्य मिलेगो ? मेरे भाग्य में है के नाहीं ? सो मेरो हाथ तो आप कृपा करि देखो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, जो-भली भई, जो-कवित्त दोहा नाहीं आवत। जो-आवते तो, राजसी लोगन के आगे पढ़त डोलते। आछी भई, जो-न पढ्यो। और ओछे पात्र कों प्रभु द्रव्य नाहीं देत। सोऊ कृपा करत हैं। द्रव्य पाये, द्रव्य मदसों अनेक जीवन को बुरो करे। विषय आदि पाप करे। और भूखो तो कबहू रह्यो नाहीं। तातें द्रव्य तेरे भाग्य में नाहीं है। परन्तु ओछो पात्र जानि प्रभु द्रव्य नाहीं देत है। तू रात्रिकों ध्रुवघाट जैयो। तहां द्रव्य देखेगो परि लीजो मति। तब नारायणदास उठिके घर आये सो रात्र भई। तब नारायणदास उठि कें ध्रुवघाट पर गये। सो देखे तो सोना रूपा के ढेर पड़े हैं। सो लोभ करि लेन लागे। तब श्रीयमुनाजी के भीतर तें दोय मनुष्य आय नारायण कों मारे। जो-तोकों श्रीआचार्यजी लेन की कही है ? जो-लेन आयो ? तोकों श्रीआचार्यजी के बचन साँचे मानिवे के लिये द्रव्य दिखायो है। सो श्रीआचार्यजी की आज्ञा लाऊ, तब ले

जैयो। तब नारायणदास घर आय सोय रहे। पाछे सवेरे विश्रान्त घाट पर नारायणदास आय बैठि रह्यो। सो श्रीआचार्यजी प्रातःकाल की संध्या-वंदन करन को विश्रान्त पधारे। तब नारायणदासने दंडवत कियो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, आखरि पशु तो सही, विश्वास नाहीं। तब नारायणदास ने बिनती करी, महाराज! आपके बचन सब साँचे हैं। ध्रुवघाट पर द्रव्य देख्यो, सो लोभ करि लेन लाग्यो। तब दोय मनुष्य जलतें निकसि मारन लागे। और कहे, श्रीआचार्यजी की आज्ञा होय तो ले जा। सो महाराज! वे दोय जने कौन है ? और आप मोकों पशु कहें, ताको कारन कहा ? सो कृपा करि के कहिये। तब श्रीआचार्यजी कहैं, वे दोऊ वरुण के दूत हे, सो तोकों लेन न दिये। और तू लेतो तो तेरो जनम बिगरि जातो। और तू लीला में वानर श्रीगोकुल को है, सो असमर्पित खाय के संसार में परचो दुःख भोगत हैं। तब नारायणदास दंडवत करि बिनती किये, महाराज! मोकों या संसार दुःख सों छुड़ाईये। अब मोकों द्रव्य की चाह नाहीं हैं। तब श्रीआचार्यजी नारायणदास कों श्रीयमुनाजी में स्नान कराय कें नाम निवेदन कराये। तब नारायणदास ने कही, महाराज। मोकों भगवद् सेवा पधराय दीजिये! तब श्रीआचार्यजी कहें, पशु सों कहूँ पुष्टिमार्ग की सेवा बनी है ? तातें तू अष्टाक्षर मंत्र कों रात्र दिन कह्यो करियो। तोकों याही तें भगवद् प्राप्ति होयगी। और आजु पाछें श्रीयमुनाजी के तीर काहु सों कछू लीजो मति। तू घर में रहियों, तोकों घर में ही सब कछू आय रहेगो। विश्वास दृढ़ राखियो। यह कहि आप सन्ध्यावन्दन करि महावन पधारे। नारायणदास घर में आय बैठि रहे। अष्टाक्षर मंत्र मुख सों कहन लागे। सो वाही दिन एक जनौ रुपैया दस घर में दे गयो। तातें नारायणदास को विश्वास बढ्यो। पाछे घर में रह्यो करते, श्रीआचार्यजी को आश्रय करि अष्टाक्षर जप्यो करते।

वार्ता - प्रसंग १ - सो नारायणदास भाटकों श्रीमदनमोहनजी ने आज्ञा दीनी। जो-मैं वृन्दावन में राधाबाग में हों। सो तू मोकों धरती खोदि के बाहिर पधराऊ। तब नारायणदास वृन्दावन में जाय राधाबाग में खोदि के श्रीमदनमोहनजी कों पधराय, मथुरा आये। सो कोइक दिन में अड़ेल तें श्रीगोपीनाथजी मथुरा पधारे। तब नारायणदास ने श्रीगोपीनाथजी सों सगरे समाचार कहे। तब श्रीगोपीनाथजी ने श्रीमदनमोहनजी कों पंचामृत स्नान कराय पाट बैठारे। सो कछुक

दिनलों नारायणदास ने सेवा कीनी। पाछे नारायणदास ने देह छोड़ी ता पाछे नारायणदास के सगे संबंधी कुटुंबी कोई न हतो। तातें वैष्णव ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, महाराज ! नारायणदास की देह छूटी । अब श्रीमदनमोहनजी कों कहाँ पधरावें । तब बंगाली कछुक दिन श्रीनाथजी की सेवा करी हती, सो बंगाली कों श्रीमदनमोहनजी दिये। वार्ता ॥५८॥

भावप्रकाश – ताकों कारन यह है, जो–श्रीगोपीनाथजी के पाट बैठारे हते। सो गोपीनाथजी बलदेवजी को रूप है। तिनके सेव्य मर्यादा मार्गीय ठाकुर हे। ताते श्रीगुसांईजी बंगालीन कों मर्यादा मार्गीय पूजा करन कों दिये। पुष्टिमार्गीय वैष्णव कों नाहीं दिये, न आप राखें। जो–श्रीआचार्यजी के सेव्य होते तो आप राखते। श्रीगोपीनाथजी पाट बैठारे हते तातें श्रीवल्लभकुल वैष्णव दरसन कूं जात हैं। सो नारायणदास ऐसे भगवदीय हे। वैष्णव ॥५८॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, नारायणदास लुहाणा, ठट्टा के बासी, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – सो नारायणदास लीला में विसाखाजी की सखी हैं। लीला में इनको नाम 'केतकी' है। सो ठट्टा गाम में एक लुहाणा के घर प्रगटे। सो लुहाणा गाम में एक बड़ो सेठ हतो। सो बड़ी बधाई करी। पाछे नारायणदास पाँच वर्ष के भये। सो नारायणदास के सगरे देह पर फोड़ा भये। सो पिताने देस देसतें गुनी बुलाय औषध कियो। परन्तु काहू सों आछे न भये। तब नारायणदास के पिताने सबन सों कही, जो–नारायणदास कों कोऊ आछो करे तो लाख रुपैया उनकों देय। सो पाँच वर्ष बीति गये, परन्तु फोरा न गये। सो नारायणदास सूकि गये। पाछे पृथ्वी परिक्रमा करत श्रीआचार्यजी ठट्टे पधारे। सो काहू नें नारायणदास के पिता सों कही, श्रीवल्लभाचार्यजी पधारे हैं, मायावाद खंडन किये हैं। सो उनकी कृपा होय तो नारायणदास अब आछे होय जाय। तब नारायणदास को पिता नारायणदास कूं डोली में बैठारि हजार रुपैया भेट ले आयो। पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दंडवत कियो, हजार रुपैया आगे धर्‍यो। तब श्रीआचार्यजी खीज के कहैं, कहा हम वैद्य हैं, जो–फोरा आछे करें ? हमारे तो, जो–कोई हमारो सेवक है तिनको लेत हैं, उनकों

भगवद् नाम सुनावत हैं। श्रीठाकुरजी कों नाम हमतें सुनि जाय, और यह द्रव्य ले जा। हमकों नाहीं चाहिये। तब नारायणदास के पिता ने पाग श्रीआचार्यजी के आगे धरी। और चरन पकरि दंडवत करि पर्यो रह्यो, कह्यो आप ईश्वर हो। यह पुत्र अपनी ओर तें मोको देत हों। मैं आपकी सरनि हों। मोपर कृपा करोगे तब मैं घर कों जाऊंगो। तब श्रीआचार्यजी कहैं, अब तू अपने बेटा कों ले घर जा। हम तेरे घर पधारि के आछो करि देंयगे, तब जगत जानेगो नाहीं। अब जो-आछो करे तो सगरो जगत अनेक दुःख सों लपटे हैं सो हमारे पीछे पड़े। तब नारायणदास के पिता ने कही, महाराज! मैं घर जाऊँ (और) आप (अन्यत्र) पधारो तो मैं फिर आपके चरन कहाँ पाऊँ ? तातें मेरे माथे हाथ धरो, जो हम तेरे घर आवेंगे। तथा चरन धरो तो मोकों विश्वास होय। या प्रकार बचन देहो तो मैं जाऊँ। तब श्रीआचार्यजी कहै, तेरे माथे तो चरन हाथ कछू नाहि धरूँ, तू दैवी नाहीं। अपने स्वार्थ के लिये दैन्यता करत है। तेरे कछू प्रीति नाहीं है। नारायणदास दैवी जीव है, याकों सरनि लेनो है। सो याके माथे हाथ धरूंगो। तब नारायणदास के पिता ने कही, महाराज! मैं इतनी बिनती या पुत्र के लिये ही करत हों, और मोय कछू नाहीं चहिये। याही के माथे हाथ धरो। तब श्रीआचार्यजी नारायणदास के पास डोली में जाय देखें तो पर्यो है। सो दोऊ चरन माथे पर छाती पर धरि परदा डारि दिये। कहे, अब घर ले जा। तब नारायणदास को पिता घर ले जाय नारायणदास कों देखें तो कहूँ फोड़ा को नाम नाहीं, सुन्दर देह है। तब पुत्र कों गोद लेन लाग्यो। तब नारायणदास ने कही, मोकों आछो किये सो कहाँ है ? तब नारायणदास के पिता ने कही, गाम बाहिर तलाब पर हैं। तब नारायणदास ने कही, एक मनुष्य मेरे साथ करि देऊ, तहाँ मैं जाऊँगो। तब पिता ने कही असबारी पर बैठि के जाऊ. घोडा है पालकी है। तब नारायणदास ने कही, तू मूर्ख है। भगवान के दरसन कों पायन जैये। तब नारायणदास संग मनुष्य ले श्रीआचार्यजी के पास आय दंडवत करिके बिनती करी, मोकों कृपा करिके सरनि लीजिये। और मोकों आप आछो कियो, मेरे मस्तक पर छाती पर चरन धरे परन्तु मोकों दरसन दिये नाहीं ताको कहा कारण ? तब श्रीआचार्यजी तलाब में नारायणदास कों न्हवाय के नाम सुनाये। तब नारायणदास ने कही, महाराज! मैं महा अनाथ हतो सरीर हूँ करि, और बडे घर में जन्म भयो दुःसंग सों घिर्‍यो अष्ट प्रहर। ऐसो मैं महादुष्ट पापी तापर आप इतनी कृपा करी, सो आप ही सों बने। अब मोकों जो आज्ञा आप देऊ सो मैं करूँ, जामें मेरो उद्धार होय। विवेक, धैर्य, कबहू छूटे नाहीं, आपके चरन में मन लग्यो ही रहैं। तब श्रीआचार्यजी कहें, यह तो तोकूँ जब माथे पर, हृदय पर चरन धर्‍यो तबही सगरो धर्म धरि दियो। अब मोकों भगवत् सेवा देत,

हों, तिनकी सेवा करियो। सो कुंकुम मँगाय दोऊ चरणारविन्द में लगाय एक वस्त्र पर छाप के चरणारविन्द की सेवा दीनी और कहें, अब तुम घर जाऊ। तुमकों दृढ़ भक्ति दीनी है। और यह पिता हजार रुपैया डारि गयो है सो पिता कों दीज्यो। तब नारायणदास ने कही, महाराज ! यह मेरी ओर तें भेट राखो। तब श्रीआचार्यजी कहै, तेरी ओर की बहुतेरी भेंट राखेंगे। पिता तो थोरे दिनन में मरेगो। तब राखेंगे। यह दैवी द्रव्य नाहीं है। तब श्रीआचार्यजी कहें, तेरो नाम नारायणदास। आगे सब कोऊ नरिया कहते। तब नारायणदास दंडवत करि श्रीआचार्यजी सों बिदा होय घर आये। पिता को हजार रुपैया दिये। तब पिताने कही, यह तो मैं श्रीआचार्यजी के भेट कर्यो हतो, तू क्यों ले आयो ? उह मेरे ऊपर बड़ो उपकार किये हैं। जो-तोकों आछो कियो। और अधिक लेवे को मन होय तो दस पाँच हजार ले जा। तब नारायणदास ने कही, उनकों कछू नाहीं चहिये। वे तो केवल परमार्थ करन के लिये प्रगटे हैं। तब पिता चुप होय रह्यो। तब नारायणदास एक हवेली न्यारी लेके रहे। तहाँ सेवा श्रीआचार्यजी के चरणारविन्दकी करन लागे। पाछे श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा करन कों पधारे। यहाँ नारायणदास सबके हाथ को जल छोड़ि दिये। कोई वैष्णव आवे तो भरें, के आप भरें। सो पिता सुनिके नारायणदास पर खीज्यौ। जो तू कहा मजूर है ? जो जल भरत हैं। तातें यह किननें तोकों सिखायो है ? तब नारायणदास ने कही, तू मोसों मति बोले। मेरे मन में आवेगी सो मैं करूंगो। तू कौन में कोन ? यह बात सुनिके पिता क्रोध करिके कह्यो, मेरे द्रव्य सों बैठो खात है, खर्च करत है। और मोसों टेढ़ो बोलत है ? तब नारायणदास ने गहना, कपड़ा, बासन जो द्रव्य हतो सो सब पिता के घर पठाय दियो। तब पिता रूठि गयो। सो यह सगरी बात बादशाह ने सुनी। सो बादशाह ने नारायणदास कों कुल दीवानगीरी दीनी। सो वह देसाधिपति के यहाँ नारायणदास करें सो होय। तहां बहोत द्रव्य कमायो। श्रीआचार्यजी कों बहोत भेट पठाये। वैष्णव जो आवे तिनकों मन मान्यो द्रव्य दे, प्रसंन्न करि बिदा करे। ऐसे करत बहोत दिन बीते।

वार्ता - प्रसंग १ - सो एक समय नारायणदास के ऊपर वह बादशाह कोप्यो। सो नारायणदास कों बंदीखाने में दीनो। पाँच लाख रुपैया को दंड कियो। ताकों बंधान बाँध्यो, जो-पाँच हजार रुपैया नित्य भरे। जा दिन रुपैया पाँच हजार न भरे ता दिन पाँचसे कोरड़ा मारनें। सो अड़ेल में दोय ब्राह्मण वैष्णव श्रीआचार्यजी के सेवक हते। तिनके एक बेटी सयानी भई। सो

ब्याह करिवे कों कछू द्रव्य हतो नाहीं तब दोऊ विचार किये, जो ठट्ठा कों चालिये। नारायणदास के पास तें कछू द्रव्य लाय के कन्या को विवाह करिये। यह विचार के दोऊ भाई ब्राह्मण अड़ेल तें चले, सो ठट्ठा में आये। तब यह सुनें, जो नारायणदास मिलने नाहीं, सो प्रातःकाल उठि चलेंगे। सो एक मनुष्य ने नारायणदास सों जाय के कही, जो–दोय ब्राह्मण श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक आये हैं, सो तुमकों बंदीखाने सुनिके प्रातःकाल उठि जायगें। तब नारायणदास नें उन दोय वैष्णव के पास अपनो मनुष्य पठायो, और कह्यो, जो–मोको तुम प्रातःकाल ही दरसन देकें कहूं को जैयो। मेरे बड़े भाग्य हैं, जो–तुम या समय मोकों दरसन दियो। तब वा मनुष्य दोउ ब्राह्मण वैष्णव सों कह्यो, जो–नारायणदास सूँ मिलके कहूँ कों जैयो। तब प्रातःकाल उठि वे दोऊ देहकृत्य करि स्नान किये। पाछे श्रीआचार्यजी को, श्रीनाथजी को, चरणामृत महाप्रसाद की थेली ले नारायणदास के पास आये। सो नारायणदास उठि कें मिले, प्रीति सों निकट बैठाये। तब दोऊ वैष्णव नें श्रीआचार्यजी को चरणामृत, श्रीनाथजी को चरणामृत, महाप्रसाद की थेली दिये। तब नारायणदास उठिके माथे चढ़ाय लिये। तब नारायणदास श्रीआचार्यजी के कुसल समाचार पूछि के पाछे कहैं, मैरो बड़ो भाग्य है, जो–वैष्णव मोकों बंदीखाने में दरसन दिये। तातें आज मेरी बंदी पूरी होयगी। अब मैं जान्यो, जो–मोपर श्रीआचार्यजी की श्रीठाकुरजी की कृपा है। जो–या ठौरहू या समय मोकों वैष्णव दरसन दिये। या प्रकार वार्ता करत हैं। इतने में पाँच हजार की पांच थैली नारायणदास के घर तें आई, सो

द्वारपाल ने उन पाँचो थेलीन पर मोहर छाप करिके नारायणदास के पास पठवाई। सो नारायणदास ने यह थेलीन के लिये वैष्णव कों बातन में लगाय राखे। सो थैली आई तब उह मनुष्य कों बिदा करि वैष्णव सों कहें, यह तुम लेकें बेगे जाउ। के तो और गाम चले जैयो, के यहाँ कहूँ प्रगट मति हूजो, द्वे चार दिन में जैयो। अबतो इतनो ही बने, तुम आये कछू टहल बनी नाहीं। ऐसे कहि वैष्णव कों दण्डवत करि बिदा किये। कहें, श्रीआचार्यजी कों मेरी ओर तें दंडवत करियो। और इनसों कन्या को विवाह करि दीजियो। सो वैष्णव पांच हजार ले घरकों आये। इतने ही में उह बादशाह दीवानखाने में आयके बैठ्यो। तब दीवान सों कह्यो, नारायणदास की पांचों थेली आई ? तब दीवान ने कही, थेली आई द्वारपाल सों मोहर कराय नारायणदास पास पठाई हैं। तब खजानची सों पूछ्यो, जो नारायणदास के पाँचों हजार रुपैया आये ? तब खजानची ने कह्यो, मेरे पास तो नाहीं आये। तब वह क्रोध करि कह्यो नारायणदास कों बंदीखाने ते लाओ।

सो मनुष्य नारायणदास कों लाय देसाधिपति के आगे ठाड़ो कियो। तब देसाधिपति ने कही, नारायणदास आजु थेली क्यों नाहीं आई ? तब नारायणदास नें कही, आजु थेली न आय सकी। तब बादशाह ने कोरड़ा वारेनकों बुलाय कह्यो, डरपैयो, मारियो मति। तब कोरड़ा वारे नारायणदास के दोउ ओर ठाड़े होय डरपावन लागे। तब बादशाह ने कही, अब तेरी खाल देह की उड़ि जायगी, नाहीं तो सांच कहियो, घर तें थेली तेरे पास आई। तें कहां छिपाई है। सो सांच कहि दे। तब नारायणदास

ने कही, मेरे गुरु भाई ब्राह्मण आये हते, उनके कन्या के विवाह में कछू न हतो। सो दूरितें मेरी आसा करि के आये हते सो पांचों थेली उनकों दीनी। मन में विचारयो, जो–आज पांचसे कोरड़ा खाय रहूँगो। इनको तो काम होय। सो मैं उनकों दीनी हैं। अब तिहारे मन में आवे सो करो। यह नारायणदास की बात सुनते ही बादशाह घरी एक चुप रह्यो। मन में बिचारयो, जो–या भूमि पर ऐसे परमार्थी लोग हैं। तातें यह धर्म तें भूमि ठाड़ी है। तब देसाधिपति ने कही, नारायणदास तोकों स्याबास है। मैं तेरे उपर बहोत प्रसन्न भयो। तू गुरु के धर्म में ऐसो सांचो है? पाछे घोड़ा, सिरोपाव मँगाय नारायणदास कों कह्यो, आगे जैसे काम काज करते तैसे ही करो। दंड सब माफ कियो। तब नारायणदास कों सिरोपाव पहराय घोड़ा पै चढ़ाय घर पठाये। सो दोऊ ब्राह्मण वैष्णव सुने, जो–नारायणदास बंदीखाने सूं छूटे। सिरोपाव पहरि घोड़ा चढ़ि घर आये। तब प्रसन्न होय नारायणदास सों मिलन आये। तब नारायणदास उठिके मिले। कहें, तिहारे दरसन तें मैं छूट्यो। पाछे हजार मोहौर की थेली श्रीआचार्यजी के भेट उन वैष्णवन के हाथ दीनी। और उन वैष्णवन कों कछू दे, कहैं, मेरी दंडवत श्रीआचार्यजी आगे करियो। तब दोऊ भाई नारायणदास सों बिदा होय के चले कछुक दिन में श्रीगोकुल आये। तहां श्रीआचार्यजी पधारे हते। सो नारायणदास की दण्डवत करि हजार मोहौर भेट धरे। सगरे समाचार नारायणदास के कहै। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, वैष्णव पर ऐसी प्रीति चहिये। ऐसो धर्म जाके हृदय में होय ताको सदा कल्याण ही होय। पाछे दोऊ ब्राह्मण वैष्णव श्रीआचार्यजी सों बिदा होय अड़ेल में आय

भली भांति कन्या को विवाह करि दिये। सो नारायणदास ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हते। इनको नाम पहले नरिया हतो। सो श्रीआचार्यजी के सेवक भये तब श्रीआचार्यजी इनको नाम नारायणदास धरे। वार्ता ॥५९॥

भावप्रकाश – और दोऊ भाई ब्राह्मन वैष्णव साधारण नाम धारी हते। सो पुष्टि लीला सम्बन्धी तो हते नाहीं, तातें इनकी वार्ता नाहीं कहे। श्रीआचार्यजी सरनि लिये। सो सरनि के प्रताप तें संसार दुःख तें छुटि मुक्ति के अधिकारी होय गये। तातें नारायणदास बड़े भगवदीय हते। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वैष्णव ॥५९॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवकनी, एक क्षत्राणी, सो वह अकेली सिंहनन्द में रहती, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये लीला में नवनन्द में बड़े उपनन्द हैं, तिनकी बहू को नाम 'सुनन्दा' है, सो यह क्षत्राणी को प्रागट्य है। तातें इनकों बालभाव है। सो सिंहनन्द में एक क्षत्री के घर जन्म पायो। सो वर्ष ग्यारह की भई तब ब्याह भयो। सो ब्याह के महिना पाछे याको वर हतो ताके सीतला निकसी, सो मरि गयो। यह मा बाप के घर में रहै। सगरो काम काज करें। पाछे वर्ष तीस की भई तब मा बाप हू मरि गये। एक भाई हतो सो वह भाई सों प्रीति बहोत। परन्तु भाई की स्त्री, भोजाई सों बने नाहीं। तब यह क्षत्राणी ने दूसरो घर लियो। तब भाई ने कही, तू न्यारी क्यों भई ? तब बहनि ने कही, नित्य को क्लेश आछो नाहीं। न्यारी भई तो कहा भयो, मैं तिहारी आज्ञा में हों, कामकाज कहियो। तबभाई सौ रुपैया लेके बहनि सों कह्यो, तू खरच कों राखि। तब बहनि ने कही, मेरे तो अब ही खरची है। न होय तब दीजो। तब भाई ने कही, अब ही मेरो हाथ व्यौहार में चलत है, सो देंउ सो ले लियो करि। पाछे कहा जानिये कहा है ? तब वह राखी। सो सास बहू सिंहनन्द में श्रीआचार्यजी की सेवकनी हती, तहां नित्य जान लागी। तब एक दिन कह्यो कछू काम काज श्रीठाकुरजी की सेवा मोसों करावो। तब सास बहू ने कही, तू श्रीआचार्यजी की सेवकनी हती तो कछू सेवा करावती। तब इन कह्यो, अब श्रीआचार्यजी पधारें तब मोकों सेवकनी करैयो। पाछे सास बहू के श्रीठाकुरजी ने कही, जो–यह क्षत्राणी बूटी भली काढ़े जानें है सो मेरे बागे में बूटी कढ़ाय मोकों पहराव। तब बहू ने श्रीठाकुरजी सों कह्यो। उह

श्रीआचार्यजी की सेवकनी नाहीं है। और बूटि काढ़ि (कछु) लेइगी नाहीं सो मैं कैसे कढाऊँ ? तब श्रीठाकुरजी वह बहू सों कहें, उह क्षत्राणी दैवी जीव है, तातें तू बूटि कढ़ाउ। कछुक दिनन में श्रीआचार्यजी पधारेंगे, तब वह सेवकनी हूँ होयगी। कृपापात्र भगवदीय होयगी। तातें तू बूटि कढ़ाउ, मेरी आज्ञा हैं। तोकों बाधक नाहीं। तब बहू ने एक सुफेद बागा उह क्षत्राणी कों दियो। कह्यो, यामें छोटी छोटी बूटी काढ़ि दे। तब वह प्रसन्न होय भाग मानिकें अपुने घर ले जाय अपरस में बूटि काढ़े प्रीति सों। जदपि कोरे वस्त्र की चिन्ता नाहीं। तोहू श्रीठाकुरजी को जानि अपरस में काढ़ि के बहू कों दिये। सो बहु ने श्रीठाकुरजी को अङ्गीकार करायो। पाछें जब रात्रि भई तब श्रीठाकुरजी ने उह क्षत्राणी कों सपने में कही, मैं तेरी बूटी काढ़ी, प्रीति सों अङ्गीकार कियो। अब श्रीआचार्यजी दिन दोय में पधारेंगे। सो तेरे भाई के घर ठाकुर हैं, सो भाई सों माँगि कें अपने घर ले आव। तिनकी तू सेवा करियो। पाछें वह क्षत्राणी की नींद खुली। सो कहे, जो-कब सबेरो होय, कब मैं उह भाई पास जाऊँ ? सो सबेरो भयो तब क्षत्राणी भाई पास गई। सो उहाँ भाई भोजाई दोय दिन तें लरे हते। कलेश करि रसोई न किये हते। तब भाई नें कही, बहनि ! आजु तुम कैसे आई ? तब इन कह्यो, मेरो मन अकेलें कहूँ नाहीं लागत, सो तुम अपने श्रीठाकुरजी मोकों देऊ तो मैं पूजा करों। तब भाई प्रसन्न होइकें कह्यो, बहनि ! यह भली बात कही। श्रीठाकुर दोय दिन तें भूखे बैठे हैं, मेरी बहू नित्य क्लेश करति है, सो तू ले जा। तब कह्यो, तुम अपने हाथ तें देऊ, मैं ले जाऊँ तो कदाचित् तिहारी बहू मोसों लरे। तब भाई नहाय के श्रीठाकुरजी कों दिये। सो प्रसन्न होय घर लाई। रसोई करि भोग धरि महाप्रसाद लिये।

पाछें श्रीआचार्यजी थानेश्वर पधारे तब बहू ने कही, जो-श्रीआचार्यजी पधारे हैं, मैं दरसन कों जात हों, तू चलेगी ? तब वह क्षत्राणी नें कही, मैं भाई के यहाँ तें श्रीठाकुरजी ले आई हों सो घर तें ले आऊँ। तब बहू ने कही, बेगे ले आव। तब वह क्षत्राणी श्रीठाकुरजी कों ले आई। बहू के सङ्ग थानेश्वर आई। श्रीआचार्यजी कों दंडोत कियो। तब बहूनें वह क्षत्राणी के सब समाचार कहे। पाछे बिनती करी, जो-महाराज ! अब इनकों कृपा करि सरन लीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, मैं जानत हों। याकी ऊपर श्रीठाकुरजी पहलें ही कृपा करी हैं। पाछें वह क्षत्राणी सों कहें, जा, तू स्नान करि आऊ। तब वह क्षत्राणी सरस्वती में न्हाय कें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पास आई। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु नाम सुनाय ब्रह्मसंबंध कराये। पाछें श्रीठाकुरजी कों पञ्चामृत सों न्हवाय 'श्रीनवनीतप्रियाजी' नाम धरे, उह क्षत्राणी के माथे पधराये। कहें, मन लगाय के सेवा करियो। तब क्षत्राणी और बहू श्रीआचार्यजी

को दंडोत करि बिदा होय सिंहनंद में आय सेवा करन लागी। सो चौथे दिनतें उह क्षत्राणी की प्रीति देखि श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे।

वार्ता – प्रसंग १ – सो वह क्षत्राणी को द्रव्य सब निवरि गयो, अकिंचन हती । सो सेवा सों पहोंचि कें सूत कांतती। तामें सेवा करि निर्वाह करती। सो घरके द्वारे काछिनी तरकारी फल मेवा आदि बेचने कों आवे तब श्रीठाकुरजी कहें, अरी मा! तरकारी वारि आई है, तू ले। तब वह क्षत्राणी दमीर दमीर कि सब प्रकार की थोरि थोरि लेय। मेवा वारी फल वारी जब आवे तब श्रीठाकुरजी पुकारिकै कहें, अरी मा! मेवा, फल बिकान आये हैं। तब एक पैसा में सब भांति के लेय। सो वह काछिनी यह जाने, जो–याको बेटा घर में प्यारो बहोत है, सो बाहिर नजरि लागन के लिये नाहीं काढ़ति। सो यह क्षत्राणी कों पहलें दे जाय। सो गाम में कमाई बहोत होय, ताके लिये पहलें दोय चारि बेर द्वार पर बोलि, या बाई कों सब भांति की दे जाय। सो यह क्षत्राणी देय सो ले जाय। सो वह क्षत्राणी कितनी ककडि आदि कच्ची समर्पे। कितनी तलिकें समर्पे। कितनी भुजेना करि, साग, या प्रकार रञ्च रञ्च सब प्रकार सों प्रीति पूर्वक करि भोग धरे। और कोई दिन तरकारीवारी दूरि निकसि जाती; तब श्रीठाकुरजी द्वार पर जाय दौरिकें उह काछिनी कों पुकारे। बेगी आऊ, मेरी मा लेयगी। तब वह शब्द सुन्दर सुनि दौरि आवती, श्रीठाकुरजी पुकारि के भीतर भाजि आवतें। तब काछिनी कोऊ देखती नाहीं। तब वह क्षत्राणी कहती, लाला! बाहिर न जैयें, नजरि लागि जाय। तब श्रीठाकुरजी कहेतें, तरकारी वारी चली जाती तो तू कहाँ ते लेती? कहा भोग धरती? तब वह क्षत्राणी कहती,

लाला ! और काछिनी बहोतेरी आवेगी, परन्तु तुम मंदिर तें बाहिर मति जाऊ। गाम के बुरे लोगन की दृष्टि लागेगी और कबहू तरकारी वारी पुकारि के चली जाय, वह बाई सेवा टहल में न सुने, तब श्रीठाकुरजी लौकिक बालक की नांई आय झगरा करे। जो–तरकारी वारी चली गई। अब तू कहांते लावेगी ? कहां भोग धरेगी ? साग–तरकारी बिना मैं तो नाहीं आरोगूंगो। तब वह क्षत्राणी कहती, लाला ! मैं तो और काछिनी आवेगी तासों लेउंगी। और जो न आवेगी तो मैं बाजार तें लाय सब प्रकार की करोंगी। तुम आरि मति करो, प्रसन्न रहो। तब श्रीठाकुरजी बालक की नांई कांधे पर चढ़िकें कहते, कब लावेगी। या प्रकार कृपा करते। और जा दिन पैसा बालभोग की सामग्री करन कों न होय, ता दिन रोटी चुपरि कें ढांकि धरे। सो श्रीठाकुरजी कबहूँ प्रहर रात्रि गये, कबहूँ आधी रात्रि जागि कें कहते। जो मा ! मोकों भूख लागी है। तब वह बाई कहती, लालजी ! आजु तो पकवान कछू नाहीं है। रोटी है। तब श्रीठाकुरजी कहतें, मोकों तुतई करि दे। तब वह बाई रोटी में घी सगरे लगाय बूरा रञ्च रञ्च भुरकाय, हाथ सों बटिकें श्रीठाकुरजी के हाथ में देती। सो श्रीठाकुरजी दांत सों कुतरि कुतरि कें आरोगते, बालक की नांई। पाछें जल आरोगि, बीरी आरोगि पौढ़ते। तब वह बाई के मन में बहोत खेद होतो। जो आजु लाला कों कछू पकवान न बनि आयो। सो पैसा नाहीं हैं। कहूँ तें उधारो लाय पकवान करि राखुं। रात्रि कों सूकी रोटी आरोगें। सो एक दिन प्रातःकाल उठि पावली को घी, खांड, उधारो लाय, घर मेंदा छानि देय चारि भांति को पकवान करि कें धरि राख्यो। पाछें जब अर्द्धरात्रि भई तब श्रीठाकुरजी

जागे, कहे, मा ! मोकों भूख लागी है। तब वह क्षत्राणी उठि कें पकवान आगें धरयो। सो श्रीठाकुरजी अरोगि के उह क्षत्राणी सों कहे, जो-आज रोटी क्यों नाहीं धरी ? तेरे पास तों पैसा न हते। पकवान कहाँ ते कियो ? तब वह क्षत्राणी नें कही, कहा करूँ लाला ! मेरे कोई कमायवे वारो नाहीं। मेरे पास पैसा नाहीं। सूकी रोटी सवेरे की धरी आरोगो। सो मेरे मनमें दुःख होतो। तातें पावली उधार करि पकवान किये हैं। सो दोय तीन दिन में सूत बेचि के देऊंगी। तब श्रीठाकुरजी कहें, मा ! उधारो करज करि पकवान क्यों कियो ? मोकों तो चुपरी रोटी बहोत भावत हैं। करज माथे चढ़ि जाय तो दियो न जाय। जब वह मांगे तब क्लेश होय सो न करिये। आजु पाछें उधारो मति करियो मोकों रोटी रुचत हैं, तातें रोटी घी सों चुपरि कें धरि राखियो। तब वह बाई वैसेही करती। सूत के पैसा बढ़ते तामें पकवान करती। जो पैसा न होय तो रोटी चुपरि के धरती। वार्ता ॥६०॥

भावप्रकाश- जो श्रीठाकुरजी उधार काढ़िवे कों यातें बरजे, जो ऋण है सो हत्या है। श्रीठाकुरजी के सुमिरन में मन हैं, सो करजवारेन में जाय। और जहाँ तांई करज न चुकावें तहां तांई बाकी सेवा को फल वाके पास नाहीं। जहाँ तें करज लियो ताके पास है। तातें श्रीठाकुरजी वह बाई कों करज करिवे की नाहीं करी। तहां यह संदेह होय, जो-वह बाई कों श्रीठाकुरजी या प्रकार बालक की नांई कृपा करि माँगि कें आरोगते। तब लक्ष्मी तो श्रीठाकुरजी की दासी हैं सो वह बाई कों द्रव्य क्यों नाहीं दिए ? जो-रोटी धरती। बालभोग करिवे को ऐसो संकोच क्यों भयो ? काहेंते, ब्रज में श्रीठाकुरजी पधारें तब लक्ष्मीजी ब्रजमें आय रहीं ! ब्रज को आश्रय किये सो आपु पञ्चाध्यायी में कहे हैं, गोपिकागीत के अध्याय में। ''जयति तेऽधिकं जन्मना ब्रज श्रयत इन्दिरा शश्वदत्रहि।'' सो उह बाई ऐसी निष्कंचन क्यों रही ? यह संदेह होय तहां कहत हैं, लक्ष्मी हैं सो श्रीठाकुरजी की दासी हैं। श्रीठाकुरजी की इच्छा प्रमान कारज करत हैं। सो या बाई कों श्रीठाकुरजी द्रव्य यातें नहाईं दिये जो द्रव्य

होय तो या बाई के मनको निरोध न होय। तब भक्तन की आरती कैसे बढ़े ? द्रव्य बिना चरखा कांते, तामें श्रीठाकुरजी के लिए मन लाग्यो रहे। अब इतनो होय तो मैं फलानी सामग्री करूँ। मेरो लाला रोटी आरोगत हैं। आछो, आछो, कछू जतन करि आरोगाऊँ। या प्रकार मन वह बाई को अपने में लगायवे के लिये बहोत द्रव्य नाहीं दिये। उतनो ही दिये जामें नित्य को निर्वाह होय। धनको मद न होय। तामें लक्ष्मी भगवद् ईच्छा आधीन है। सो कैसे धन होय ? या बाई कों याही प्रकार प्रभु निरोध किये। जहाँ जैसी प्रभु की ईच्छा है तहाँ तैसी लीला करत हैं। और यह सन्देह होय, जो–अर्द्ध रात्रि कों श्रीठाकुरजी उह बाई तें माँगते। तब न्हायवे की अपरस, ताको नित्य कैसो विचार ? और तरकारी वारी पुकारि कें चली जाती तब श्रीठाकुरजी वह बाई के कन्धे पर चढ़ि के झगरा करते, तब अपरसता कहाँ ? सो मंदिर में हू अपरस को विचार कैसे हैं। यह संदेह होय तहाँ कहत हैं, श्रीआचार्यजी के पुष्टिमार्ग में श्रीठाकुरजी मर्यादापुष्टि रीति सों बिराजत हैं। सगरे पुष्टि पुरुषोत्तम के भाव सों सगरी सामग्री आरोगत हैं। सगरी वस्तु वस्त्र आभूषन करूं अङ्गीकार करत हैं। और दरसन देवे में मर्यादा रीति सों बिराजत हैं, बोलत नाहीं। सो भगवद् स्वरूप में दोय प्रकार को स्वरूप है। एक भक्तोद्धारक, एक सर्वोद्धारक, जामें मर्यादा पुष्टि रीति सों सबकों दरसन। भक्तोद्धारक स्वरूप के भीतर वह सबकों दरसन नाहीं। सो जहाँ ताँई वैष्णव कों प्रेम न होय तहाँ तांई मर्यादापुष्टि रीति सों अङ्गीकार, दरसन हैं। भक्तोद्धारक स्वरूप, सर्वोद्धारक स्वरूप में तें बाहर प्रगट होय। सो जहाँ जेसो कार्य होय, बालक होय, तरुन होय, वृद्ध होय, गाय आदि जेसो कार्य करनो होय। ता प्रकार को स्वरूप करि उह भक्त सों बोलें, अनुभव करावें। तथा मर्यादापुष्टिस्वरूप है उनही के मुख द्वारा बोलें, अनुभव जतावें। सो यह क्षत्राणी मन्दिर में सगरी मर्यादा, सेवा, अपरस और काम काज करती। श्रीठाकुरजी पधारें, तथा अर्द्ध रात्रि कों श्रीठाकुरजी के पास आय माँगे, तहां भक्तोद्धारक स्वरूप में अपरस नाहीं, उहाँ केवल प्रेम ही सर्वोपरि धर्म है। पूर्णब्रह्म पुरुषोत्तम आनंद रूप भक्तन के संग लीला करें, हँसे, बोले अनुभव जनावें। तहाँ अपरस की मर्यादा की संभावना नाहीं। तहाँ केवल स्नेह, जो–सर्वोपरि प्रेम है। सोई कारन है। या प्रकार सों भक्तन के घर पुष्टिमार्ग में श्रीठाकुरजी बिराजत हैं। तातें वैष्णव कों भक्तोद्धारक स्वरूप कछू अनुभव जतावत हैं, ता करि जानिकें अपरस न राखें तो अपराध परें। मंदिर में श्रीठाकुरजी की सेवा में पुष्टिमार्ग की मर्यादा सहित सेवा करें। और प्रेम में कछू मर्यादा कों अनुसंधान न रहें, तामें जो–कार्य बने

सो सब श्रीठाकुरजी कों प्रिय हैं। तामें कछू छूई न जाय। जानि कें करें, जो श्रीठाकुरजी प्रेम के भूखे हैं, मर्यादा को कहा काम है ? या प्रकार कल्पित ज्ञान करि मर्यादा छोड़े तो उनकों अपराधी भ्रष्ट जाननो। या प्रकार को भेद जानिये।

सो उह क्षत्राणी ऐसे आचार्यजी की कृपापात्र, जासों बालक की नांई श्रीठाकुरजी अनुभव करावते। लीला में हूं उपनंद गोप की बहू तहाँ हू पुत्र भाव यहाँ हु पुत्र भाव दृढ़ हैं। तातें उह क्षत्राणी बाई की वार्ता कहाँ तांई कहिये। वैष्णव ॥६०॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवकनी, दामोदरदास कायस्थ की माता, वाको नाम वीरबाई सो सेरगढ़ में रहती, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– लीला में यह पुलिंदी हैं। तहाँ ये 'बनदेवी' इनको नाम। सो गिरिराज के संग तें इनकों दृढ़ भक्ति भई हैं। सो श्रीआचार्यजी प्रगटे, श्रीगोवर्द्धनधर प्रगटे, तामें भूमि पर सगरो भगवदीय परिकर प्रगट्यो है।

सो सेरगढ़ में एक कायस्थ द्रव्यपात्र बहोत, सो कासी गयो। तहां कासी में एक कायस्थ के घर वीरबाई प्रगटी हती। सो सेरगढ़ वारे कायस्थ सों सगाई भई। पाछे ब्याह भयो। सो वीरबाई के एक बेटा सेरगढ में भयो। ताको नाम दामोदरदास धर्यो। सो दामोदरदास वर्ष नौ के भये। तब सेरगढ़ में एक नयो हाकिम आयो सो बहोत खोटो आयो। जाके पास द्रव्य देखे ताकों कछू कलंक लगाय द्रव्य सब ले लेय। चोरन सों चोरी करावें। तब वीरबाई के पति ने कही अब कैसे करें ? हाकिम सगरो द्रव्य लेयगो। तब वा स्त्री ने कही, सगरो द्रव्य भेलो करि मोकों सोंपि देहू। मैं कासी अपने मा–बाप के घर जाय रहूँ। जब दूसरो आछो हाकिम आवे तब आऊंगी। जो–यही हाकीम रहे तो पाछे तुम हूँ कासी चले आइयो। तब वीरबाई के पति ने कही, भली कही। तब कायस्थ सगरो द्रव्य भेलो करि दस पांच दिन में मोहौर कराय वीरबाई स्त्री कों सोंपी। दामोदरदास बेटा दोय बेटी सबकों कासी पठाई दियो। सो वीरबाई कासी आय रही। तब महिना चारि पाछें उह हाकिम नें एक ब्राह्मण कों कलंक लगाय सगरो द्रव्य घर लूटि लियो। वाके घर गौर स्वरूप के ठाकुर बड़े और एक लालजी तिनहूँ को गहना, कपरा, वासन हाकिम नें लूटि लियो। तब वह ब्राह्मन की स्त्री रोवन लागी। तब वह ब्राह्मण नें कही तू रोवे मति। देखि, अब कहा काम होत हैं। सो हाकिम बजार में घोरा पर चढ्यो चल्यो जात हतो, तब यह ब्राह्मण ने तरवारि लें वह हाकिम कें मारी, सो घोरा तें गिरियो तब छाति पर चढ़ि कटारी पेट पर मारी, सो मरि गयो। वह हाकिम के मनुष्य ने उह ब्राह्मण कों मारयो। या प्रकार दोऊ मरे। यह बात

राजा सुनि कें दूसरो हाकिम सेरगढ़ पठायो। सो वह भलो मनुष्य आयो, सबकों सुख दियो। वह ब्राह्मण मरयो वाकी स्त्री कों दोय रुपैया को महिना करि दियो। सेरगढ़ में चेन भयो। सो लोग जहाँ तहाँ भाजि गये हते सो सगरे सेरगढ़ आये। तब वह ब्राह्मणी जाको ब्राह्मण मारयो गयो सो वीरबाई के पति सों कह्यो, जो–मोसों अकेलें श्रीठाकुरजी की पूजा नाहीं बनत, मेरे द्रव्य नाहीं है। तब वह कायस्थ नें कही, मेरी स्त्री, बेटा, बेटी कासी हैं। अब गाम में चेन भयो है सो यहाँ बुलावत हों। उनकें आयेतें ठाकुर हम राखेंगे। तब वह ब्राह्मणीने कही बहोत आछो। सो वे ठाकुर सेरगढ़ की नदी है तहाँ उह ब्राह्मण आयो हतो तहाँ ते प्राप्त भये हते। पाछे वह कायस्थ वीरबाई के बुलायवे को चार मनुष्य आछे प्रमाणिक गाँव के तिनकों कासी पठाये। सो मनुष्य आयकें वीरबाई सों कहें, अब सेरगढ़ में दूसरो हाकिम आयो हैं, सो भलौ मनुष्य है। तातें अब तुम सेरगढ़ चलो। तिहारे धनीनें बुलाये हों। तब वीरबाई नें सगरे धन की पेटी ले बेटा दामोदरदास कों, दोऊ बेटी सहित कासी सों चले। सो मजलि पाँच आयकें छोटो सो गाम हतो तहां उतरे। सो चोर पाछें लगे। जब रात्रि पहर पिछली रह गई तब मनुष्यन नींद आई। सो चोर ने पेटी लीनी। सबेरो होतो जानि गाम के बाहिर रेति धूरि में गाड़ि कें उहाँ गाम में चोर आय बैठे। सो सबेरे होत ही वीरबाई ने कही, पेटी गई अब कैसें करूँ ? मेरो तो सगरे घर को द्रव्य वामें हैं। पाछे वा गाम के लोगन सों पूछें, वे कहें, हम कहा जाने ? तब वीरबाई तलाब पर बैठि रुदन करन लागी। सो श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा करत उह तालाब पर पधारे, प्रातःकाल की सन्ध्या कियें। तब बाई रुदन करत ही ताकों देखे। जो–ये दैवी जीव ऐसी दुःखी क्यों हैं ? तब वासों पूछे, ऐसो तोको कहा दुःख परयो है ? तब वीरबाई ने कही, महाराज ! मोकों महादुःख परयो हैं। कुटुम्ब तो बहोत और द्रव्य हूँ बहोत हतो, सो पेटी रात्रि कों चोरी गई। अब मेरो यहाँ कोई नाहीं। किनसों अपनो दुःख कहुं ? पाछे जा प्रकार कासी सों आई सो सब कह्यो। तब श्रीआचार्यजी कों दया आई। कहें, रोवे मति श्रीठाकुरजी सब आछी करेंगे। तब वीरबाई दंडोत करि कह्यो, महाराज ! यह द्रव्य मिलें तो आधो आपु लेऊ, और हमारे सगरे कुटुम्ब आदि आपुकी कृपा तें जीवें। और मैं आपुकी दासी होय जन्म भर यह गुन आपुको न भूलोंगी। तब श्रीआचार्यजी कहें तू दैवी जीव है सो हमारी है। हमकों द्रव्य तेरो नाहीं चहिये। पाछे कृष्णदास मेघनसों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कही, चोरन नें धूरि में पेटी गाड़ी हैं। सो जायकें याकों बताय आऊ। तब कृष्णदास वह वीरबाई के संग जाय बताये। सो वह धूरि डारि पेटी ले श्रीआचार्यजी पास आय आगे धरि दिये। (और कहे) महाराज ! आपु आधो मोकों दीजिये। आधो आपुको हैं। यह आपुको दियो मोकों मिल्यो है, मोकों सेवक कीजिये। तब

श्रीआचार्यजी कहें, अब ही तू मार्ग में हैं। सो हमारे पुष्टिमार्ग को धर्म बनेगो नाहीं। तू कछू समुझति नाहीं। तातें द्रव्य ले सेरगढ़ जा, हम सेरगढ़ पधारेंगे तब तोकों सेवक करेंगे। तू कहेगी सो करेंगे। तब बाई बिनती करिकें कहें, महाराज! आपु तो साक्षात् ईश्वर हों, मैं द्रव्य देती हों सो नाहीं लेत तो सेरगढ़ काहे कों पधारोगे? आपुको दरसन परम दुर्लभ हैं। तातें श्रीठाकुरजी ने मोपर बड़ी कृपा करी, जो-आपु दरसन दिये, तातें मोकों नाम सुनायो, द्रव्य आधो लेऊ। तब श्रीआचार्यजी कहें तेरे गाम आयकें तोकों सेवक करनो हैं। उह ब्राह्मण मारयो गयो ताकी स्त्री पास श्रीठाकुरजी हैं, सो तेरे माथे पधरावने हैं। तातें हम सेरगढ़ निश्चय पधारेंगे। तब तेरो कार्य होयगो। तब वीरबाई ने कही, महाराज! सरीर को निश्चय नाहीं हैं। और आपुके साम्हें मोकों बहोत बोलनो अपराध हैं। तातें मेरे माथे चरन धरि आपु कहो, जो-सेरगढ़ पधारेंगे। सो आपुके चरन धरे तें मेरो मन सुद्ध रहेगो। तब श्रीआचार्यजी वीरबाई की प्रीति देखि बहोत प्रसन्न भये। अपने चरणारविन्द वीरबाई के माथे धरिके वचन दिये जो हम सेरगढ़ पधारिके तेरों अङ्गीकार करेगें। तब वीरबाई दंडवत करिकें बेटा, बेटी कों लेकें सेरगढ़ कों चली। कछुक दिन में सेरगढ़ आई। अपने पतिसों सगरी श्रीआचार्यकी की बात कही। जो या प्रकार कृपा करी हैं। और श्रीआचार्यजी नें एक ब्राह्मणी के यहाँ ठाकुर बतायें, गौर स्वरूप कहें, सो तेरे घर पधरावेंगे, सो वह ब्राह्मणी कौन है? तब वीरबाई के पति नें कही, वह ब्राह्मणी अकेली रही, वाको पति तो मारयो गयो। सो नित्य कहत है, मेरे ठाकुर पधरावो। तब वीरबाई ने पति सों कही, ढील मति करो, उह ठाकुर अपने घर लाय राखो। श्रीआचार्यजी दोय चारि दिन में निश्चय पधारेंगे। ता समय वह ब्राह्मणी ठाकुर देय न देय, सो श्रीठाकुरजी बचन करिकें लीजो। फ़ेरि देयंगे नाहीं। तब बाई के पति उह ब्राह्मणी पास जाय कह्यो, जो-अब हमारी स्त्री, बेटा, बेटी, सब कासी सों आये हैं। तातें श्रीठाकुरजी देने होय तो देऊ, नाहीं तो हम और ठाकुर पधरावेंगे। तब ब्राह्मणी नें कही, मैं तो तुमसों पहले ही कही मोसों पूजा नाहीं होत। तुम अबही ले जाव। तब इन कही, कदाचित् फेरि तुम कबहूँ श्रीठाकुरजी कों माँगो, तो मैं न पधराऊँगो। तब वह ब्राह्मणी ने कही, मैं अब कहा पधराऊँगी? द्रव्य नाहीं, मनुष्य मेरे घर नाहीं। तब इन कही, एक ठाकुर मैं लेहू, एक तुम लेऊ। मेरे घर पधराय आवो। तब वह ब्राह्मणी लालाजी लियो, बड़े गौर स्वरूप कों उह कायस्थ ले आयो। दोनों स्वरूप कों अपुने घर पधरायो। पाछे चारि दिनमें श्रीआचार्यजी सेरगढ़ पधारे। सो नदी के तीर एक बाग में उतरे। तब कृष्णदास सों कही, उह वीरबाई कों खबरि हमारी जताईयो, लाईयो मति। वाको मन प्रसन्न होय तो आवे। तब कृष्णदास गाम में गये, और वाके बेटा दामोदरदास कों देखिके कहे, तू

घर जाय, अपनी माता सों कहियो, जो-नदी के तीर बगीची है, तहाँ श्रीआचार्यजी पधारे हैं। यह कहि कृष्णदास श्रीआचार्यजी पास आय कहें, जो-वीरबाई को बेटा दामोदरदास मिल्यो तासों कहि आयो जो श्रीआचार्यजी पधारे हैं। तब दामोदरदास नें अपनी माता सों जायके कह्यो श्रीआचार्यजी पधारे हैं सो मोसों उनको एक सेवक कहि गयो है, सो मैं तोसों कह्यो। यह सुनत ही वीरबाई दौरि आई। बगीची में आय श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि बिनती करी, जो-महाराज ! घरमें पधारिये। सगरे कुटुम्ब कों सरनि लीजिये। श्रीठाकुरजी आप कहे हते सो घरमें लाय राखे हैं, सो मेरे माथे पधराइये। तब श्रीआचार्यजी कहें, तू दैवी जीव है, तोसों भगवद् सेवा बनेगी। तातें तोकों नाम और ब्रह्मसंबंध दोऊ करावने हैं। और तेरे कुटुम्ब साधारण जीव हैं, तिनकों नाम सुनावेंगे। तेरे संग तें सब को उद्धार होयगो। तातें तू नदी में न्हाय आव। तब वीरबाई नदी में न्हाय आई। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु वाकों नाम सुनाय ब्रह्मसंबंध कराय कहे, अब तू घर जा, तेरे पति कों पठाइयो। तब हम तेरे घर पधारेंगे। तब वीरबाई घर जाय पति सों कही, नदी तीर बगीची में श्रीआचार्यजी पधारे हैं, सो बिनती करिके पधरावो। सेवक सगरे दोऊ, कृतार्थ होऊ। तब वह पति कह्यो, तू हू संग चलि। पाछे स्त्री पुरुष दोऊ आय श्रीआचार्यजी सों बिनती करि घर पधराये। सबकों श्रीआचार्यजी नाम सुनाये। पाछे श्रीठाकुरजी कों पञ्चामृत स्नान कराय पाट बैठाये। वीरबाई के माथे पधराये। बड़े गौर स्वरूप हते तिनको नाम ''श्रीकपूररायजी'' धरे। लालाजी हते तिनको नाम ''श्रीनवनीतप्रियजी'' धरे। और आगे किये, हिंडोरा, पालना सों श्रीनवनीतप्रियजी कों झुलाये। पाछें वीरबाई नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करिके पाँच दिन घर में राखे। पुष्टिमार्ग की सेवा की रीति सब सीखी। पाछे आधो द्रव्य श्रीआचार्यजी को धरि राख्यो हतो सो भेट कियो। पाछे श्रीआचार्यजी पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे।

वार्ता – प्रसंग १ – सो वीरबाई श्रीठाकुरजी की सेवा बहोत प्रीति सों करन लागी। कछुक दिन में श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे। पाछे वीरबाई के गर्भ रह्यो। तब घरी दोय रात्रि पिछली रही तब बेटा भयो, सो लोग सगरे बेटा की बधाई, ज्ञाति व्यवहार में लागे। श्रीठाकुरजी कों चारि घरी दिन चढ़ि गयो। तब वीरबाई बहोत ही दुःख करन लागी, जो-मेरे श्रीठाकुरजी कों अवेर भई सबसों कहें, जो-श्रीठाकुरजी कों

कोऊ जगावो । सो कोऊ जगावे नाहीं । ऐसे करत प्रहर दिन चढ्यो । तब तो वीरबाई मनमें महाताप करिकें रोवन लागी । जो–यह पुत्र पापी कहाँ ते याही समय भयो ? जो मेरे ठाकुर काल्हिके पौढ़े हैं कोई जगावत नाहीं, अब मैं कहा करूँ ? या प्रकार अत्यन्त विरह भयो । तब श्रीठाकुरजी सज्या में ते बोले, जो–तू रुदन काहे कों करत है ? कोऊ नाहीं जगावत, तो तू ही मोकों जगाव । तब वीरबाई ने कही, महाराज ! मैं यह अघोर नर्क में परी हों । कैसे तुमकों छूवों ? तब श्रीठाकुरजी कहें, गोबर लगाय स्नान करि, काछ बांधि कें मोकों तू ही जगाव । मैं और तें सेवा न कराऊंगो । मेरी आज्ञा है, तोकों यामें अपराध नाहीं । तब वीरबाई उठिके गोबर लगाय, आछे नहाय काछ मारिके श्रीठाकुरजी कों जगाये । पाछे मङ्गला करिकें श्रृङ्गार करि, रसोई करि, भोग धरि प्रसाद ले पड़ी रही । या प्रकार सों सगरे वस्त्र पात्र काढ़ि अपरस नई करी । श्रीठाकुरजी कों पञ्चामृत सों न्हवाय सुद्ध होय पुष्टिमारग की रीति सों सेवा करन लागी । तब श्रीठाकुरजी प्रसन्न होय वीरबाई सों कहें । तू मेरी हू आज्ञा मानी जो सूतक में सेवा करी । पाछे मारग की रीति सों अपरस हू काढ़ी । तातें मैं तोपर बहोत प्रसन्न हों । या प्रकार वीरबाई के उपर श्रीठाकुरजी प्रसन्न होय पिंडरू में हू सेवा कराई । परन्तु और सों न कराई । सो वीरबाई ऐसी श्रीआचार्यजी की कृपापात्र भगवदीय हती । इनकी वार्ता कहां ताई कहिये । वार्ता ॥६१॥

भावप्रकाश – यामें यह जताये, जो–बहोत सुद्ध होय, उत्तम होय, तोऊ प्रीति बिना श्रीठाकुरजी सेवा न करावे । और करे तोऊ प्रीति बिना सेवा मानें नाहीं । और कैसेहू, अपवित्र, हीन, नीच, होय ताकों प्रीति होय तो ताहिसों भगवद् सेवा करावे, याही प्रकार सूतक, पिंडरू तथा महिना के महिना अटकाव मेंहू वीरबाई

सेवा किये, परन्तु घरमें कुटुम्ब परिवार बहोत हतो तासों सेवा न कराई। और वाकी वार्ता अनिर्वचनीय हैं। जैसें पुलिन्दी कों कुंकुम चरणारविंद को, ताहि द्वारा सब रस को अनुभव करायें। सोई पति भावसों, इहां हू सगरे रस को अनुभव कराये। सो वार्ता कही न जाय। तातें इतनी हू लोक वेद विरुद्ध वार्ता कही है। सो प्रेम की रीति अटपटी है। भगवदीय यह भेद जानें, तिनहू के सुनन जोग हैं। और कों ऐसी वार्ता पर विश्वास न उपजें। सो वीरबाई सदा श्रीठाकुरजी की लीला रसमें मगन रहती। प्रथम गिरिराजजी परम भगवदीय हरिदासराई तिनको संग हैं। तातें इनको भाव अनिर्वचनीय है। वैष्णव ॥६१॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, दोऊ स्त्री पुरुष, क्षत्री सिंहनंद के वासी, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये लीला में दोऊ विसाखाजी की सखी हैं। पुरुष को नाम 'रंगा' स्त्री को नाम 'हंसा' सखी। सो ये दोऊ श्रीयमुनाजी स्नान कों गई, तहां इनकों श्रीठाकुरजी मिले। सो नाना प्रकार की विहार लीला में मग्न होय गई। पाछें जल विहार करन लागी। तब श्रीस्वामिनीजी और विसाखाजी श्रीयमुनाजी नहायवे कों पधारी। तब श्रीठाकुरजी श्रीयमुनाजी तें निकसि वृक्षन की आड़ में ठाड़े भये। और ये दोऊ सखी चक्रत होय जल में ठाड़ी रहीं। तब श्रीस्वामिनीजी पुकारि के कहें, रङ्गा, हंसा, हमारे पास आवो। सो इनको मन श्रीठाकुरजी में लग्यो, जो–कब फिरि आवें ? तातें ये सुने नाहीं। तब श्रीस्वामिनीजी ने कही, विसाखा ! ये दोऊ तेरी सखी बहोत ढीट हैं। मैं बुलाई सो आई नाहीं। तब विसाखाजी नें पुकार्‍यो, रङ्गा हंसा यहाँ आवो। तऊ न आई। तब विसाखाजी कहें, ऐसो मान गर्व भयो, जो–इतनो बुलायो जुवाब नाहीं दियो। भूमि में गिरो, तब दोऊ गिरीं। सो सिंहनंद में दोय क्षत्री के घर हते, तहाँ दोऊ प्रगटें। समय पाय वरष दसके भये। तब दोऊन को विवाह भयो। तब दोऊन के मन में वैराग्य आयो। सो दोऊ अपने मन में आपुस में बतराये जो विषय आदि सुख तो पशु, पंछी में हू हैं। तातें श्रीठाकुरजी ने मनुष्य देह दियो तो व्रतादिक करि देह इन्द्रिकों दमन करिये। तब दोऊन नें व्रत साध्यो, भूमि पर सोवें। नित्य फलाहार लेय, कबहूँ दूध कबहूँ जलादि, एकादशी निर्जल करें। कार्तिक में एक दिन फलाहार, एक दिन निर्जल। या प्रकार व्रत करि सरीर दोऊन नें सुखाय डार्‍यौ। तब दोऊन के मा बाप खीजन लागे। जो तुम अब ही तें ऐसो कष्ट करत हो, सो काहे के लिये ? अब ही तो तिहारे खायवे पहरिवे के दिन हैं। आछे भोग भोगो, श्रीठाकुरजी चारि पैसा दियो हैं सो संसार के सुख करो। तब दोऊ जनें कहें,

संसार के सुख कुत्ता, गदहा होय सो करें। हम तो व्रत करेंगे। तब वे चुप होय रहे। पाछे एक दिन दोऊ माघ महिना नहात हते, सरस्वती में। ता समें श्रीआचार्यजी महाप्रभु थानेश्वर पधारे। सो सरस्वती पर संध्यावन्दन कों पधारे। तब दोऊ कों जल में ठाड़े देखिकें थानेश्वर के वैष्णव सों पूछें, ये दोऊ स्त्री पुरुष कौन हैं ? ऐसे सीत में जल में ठाड़े हैं, महादुर्बल तब वैष्णव ने कही, महाराज! ये दोऊ क्षत्री के बेटा, बेटी हैं, स्त्री-पुरुष। ये लौकिक संसार को सुख नाहीं जान्यो। व्रत सदा करत हैं, अन्न की वस्तु लेत नाहीं। महा कष्ट करि देह सुखाय डारे हैं। मा बाप काहू को कह्यो मानत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी कहें। इनकों हमारे पास लावो, कोई उपाय करि। तब वैष्णव पार जाय दोऊन सों कहें, तुम पार चलो तो श्रीआचार्यजी बुलावे हैं। तुम कों व्रत को जो फल चहिये सो मिलेगो। तब दोऊ सुनिकें प्रसन्न भये, वैष्णव के संग पार आये। तब श्रीआचार्यजी कों दंडौत करि ठाड़े रहे। तब श्रीआचार्यजी नें कही, तुम ऐसो कष्ट सहि कें व्रत करत हो, सो मनोरथ कहा है ? जो तुम कों फल चहिये सो लेहु। तब दोऊ नें कही, महाराज! फल तो बहोत बड़ो चाहत हैं, और साधन तुच्छ करत हैं। सो फल कैसें मिलेगो ? तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम कहो तो सही। तब दोऊ नें कही, हम कों यह मनोरथ हैं, जो-या जन्म में याही सरीर सों श्रीठाकुरजी हम सों बोले, कृपा करें। सो श्रीठाकुरजी तीर्थ, व्रत किये, साधन सों कैसें मिलेंगे ? तातें हम कहा करे ? हारिकें व्रतादिक करि सरीर छोड़ेंगे। और उपाय कछू जानत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी कहें, इतनो कष्ट व्रत करि सरीर कों देत हौं। सो श्रीठाकुरजी के सेवा सुमिरन में सरीर, मन लगावो, तो याहि जन्म में प्रभु कृपा करें। तब स्त्री-पुरुष दोऊन नें कह्यो, महाराज! श्रीठाकुरजी की सेवा कैसें बनें ? हमनें तो कछू नाहीं पास राख्यो। यह दोय कपरा मेले पहरे हैं। और मा बाप के पास द्रव्य है सो संसार सुख के लिये जो माँगे सो देई। परन्तु परमार्थ के अर्थ श्रीठाकुरजी के नाम पर एक कोड़ी न देइंगे। हम सों द्वेष करत हैं। सो भगवद् सेवा, बिना द्रव्य कहां ते होय ? तब श्रीआचार्यजी कहें, जो-वे द्वेष करें तामें तो तुम कों आछो है। बहिर्मुख सों बोलनो मिट्यो। और सेवा लायक तुम दोय चारि आठ घरी कछू उद्यम करोगे तो वाही में तुमकों निर्वाह जोग मिलेगो, ताहि में निर्वाह करियो। सेवा अर्थ सरीर कों कष्ट होय तब धीरज धरि दुःख सहो तो श्रीठाकुरजी सों सह्यो न जाय। तुमकों अनुभव जतावेंगे। तातें हम थानेश्वर के वैष्णव सों कहि देइंगे, तुमकों उधारो देइगे। व्योपार हू सिद्धि करि देइगें। परन्तु तिहारो मन भगवद् सेवा करन में होय तो उपाय श्रीठाकुरजी सब करेंगे। जो मन न होय तो तिहारी तुम जानो। तब दोऊन ने कही, महाराज! हमारो मन तो बहोत हैं। मा बाप के प्रतिबंध सों डरपत हैं। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम मा बाप के प्रतिबंध सों मति डरपो। हम कहें तेसो करो। तिहारो सगरो मनोरथ पूरण

होयगो। तब दोऊ प्रसन्न होय कहें, महाराज! हम आपकी सरनि हैं। जा प्रकार हमारो भलो होय सो करो। तब श्रीआचार्यजी कहें, स्नान करि आये, अपरस में तो तुम हों, आगे आवो। तब दोऊ आगें आये। तब नाम निवेदन करायो। पाछे श्रीआचार्यजी थानेश्वर के वैष्णव सों कहे। अब इनके लिये श्रीठाकुरजी को स्वरूप ठीक करो। तब एक नामधारी वैष्णव थानेश्वर को हतो, वाने कह्यो, महाराज! मेरे दोय स्वरूप हैं, सो एक लालजी मैं देऊँगो। तब श्रीआचार्यजी कहे यहाँ बेगे लाऊ। तब वह नामधारी वैष्णव स्वरूप ले आयो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु पञ्चामृत सों स्नान कराय स्त्री-पुरुष के माथे पधराये। पाछें सिंहनंद के वैष्णव श्रीआचार्यजी के दरसन कों आये हते तिनसों कहें, ये दोऊ स्त्री-पुरुष हमारे हैं। तातें इन दोऊ, कौई प्रकार सों दुःख न पावें, सो करियो। तब वैष्णव कहें, महाराज! हम प्रान की नांई इनको जो चहिये सो सिद्ध करि देंइगें। ता समय सास बहू दरसन करन कों आई हती। सो कही, मेरे घर में जगह बहोत हैं, सो मैं इनकों देऊँगी। सेवा संबंधी सब सिद्ध करि देऊँगी, सिंघासन, सिज्या आदि। तब श्रीआचार्यजी स्त्री-पुरुष सों कहे। तुम बहू के संग जाव। तुम पर प्रभु बेगें कृपा करेंगे। और जहाँ तुम रहोगे तहाँ सुख पावोगे। जामें पुष्टिमार्ग धर्म सिद्ध होय सो कार्य करियो। तब स्त्री-पुरुष श्रीआचार्यजी कों दण्डोत करि वह बहू के घर आये। तब न्यारी जगह करि तहाँ श्रीठाकुरजी कों पधराये। एक वैष्णव सों रुपैया २२) मांगि लाये उधारे, सो सामग्री लाये। रसोई करि श्रीठाकुरजी कों भोग धरि महाप्रसाद लिये। साधन व्रतादिक सब छोड़ि दिये, विष्णुपंचक व्रत करे। जयन्ती और एकादसी राखे, इनकों विष्णुपंचक कह हैं। जो ये पाँचो व्रत, चार जयन्ती, एकादशी विष्णुसंबंधी हैं। सो वैष्णव कूँ अवस्य करने, और व्रत नाहीं करने। पाछें सेवा सों पहोंचिकें पुरुष बजार में गयो। सो वैष्णव बहोत सन्मान करिकें कहें, तुम दुकान करो तो द्रव्य लेऊ। चाकरी करो तो महिना लेऊ। जामें तिहारो मन प्रसन्न होय सो करो। तब इन कही मेरो मन दलाली करिवे में हैं, तब दलाली करें। सो वैष्णव प्रीति करि रुपैया दोय नित्य इनकों पैदा कराय देई। सो बाइस रुपैया करज हू दे डारे। और भगवद् सेवा करन लागे। तब स्त्री पुरुष दोऊन के मा बाप इनकी निन्दा करन लागे। जो पहलें तो दोऊ बडे त्यागी हते। अब वैष्णव सों भीख माँगिकें निर्वाह करत हैं। पराये घर में जाय रहे। सो हमकों लाज लगावत हैं। ऐसोई करनो हतो तो कोई और गाम में जाय रहते। ठाकुर ले बड़े भक्त भये हैं, लोगन कों ठगिवे कों। यह बात सब सों कहें। सो एक ने यह पुरुष सों कही। तब पुरुष के मन में बुरी लागी। तब स्त्री सों आय कही। जो-तेरे मा बाप, हमारे मा बाप या प्रकार जहाँ तहाँ निंदा करत हैं। तब स्त्री नें कही, जो-तुमारे, मा बाप साँचे हैं। अपने पास कहा हतो, एक कोड़ी न हती। सो सब वैष्णव ने श्रीआचार्यजी के सेवक

जानिकें करि दियो हैं। सो अब अपन सुखी हैं। परन्तु या प्रकार श्रीठाकुरजी सेवा मानेंगे नाहीं। अपुनो धर्म नास भयो। वैष्णव सों पूजाय के धन ले निर्वाह अपुनें किये। सो अपने कों धिक्कार हैं। तातें ऐसे ठिकाने चलो जहां अपुनें कोऊ वैष्णव जाने नाहीं। तहाँ जो कमाय के लावो, सो भोग धरि निर्वाह करेंगे। तब श्रीठाकुरजी प्रसन्न होयगें। तातें अपने मा बाप साँचे निंदा करत हैं। अपुनें निन्दा ही जोग हैं। काहेतें, श्रीठाकुरजी प्रसन्न करिवे के लिये श्रीआचार्यजी की सरनि आये, सेवा पधराये। कछू वैष्णव सों पूजायवे के लिये, अपुनी बडाई के लिये वैष्णव नाहीं भये। तातें अपनो धर्म राख्यो चहिये। होंय तो श्रीठाकुरजी कों ले, या गाम ते और ठौर कछुक दूरि निकसि चले। यह बात स्त्री की सुनिकें पुरुष नें कही, तू धन्य, तू धन्य, जो-ऐसी बात सिक्षा की कही। पाछें सब तयारी करि सास बहू सों कहे, अब हम जात हैं, तिहारी वस्तू सब संभारि लेहु। तब सास ने कही, हमारो कछू अपराध होय तो कहो। तब बहू ने कही अपराध नाहीं। अब इन पर श्रीआचार्यजी की कृपा भई, पूरन भई। तब सास बहू सों सीख ले श्रीठाकुरजी कों पधराय स्त्री पुरुष निकसि चलें। काहू वैष्णव कों, मा बाप कों जताये नाहीं।

वार्ता - प्रसंग १ - सो वे दोऊ कछुक दिन में आगरे आय रहें। सो एक कोठा भाड़े लियो। जगह निपट छोटी। सो एक आले में श्रीठाकुरजी पधराये। आले के आगें लकरी माटी सों मेंरा बांधि बढ़ाये। तापर सज्या रहती। एक ओर रसोई, एक ओर सीधा सामग्री धरें। रात्रि कों स्त्री-पुरुष कोठरी के द्वार पर सोय रहें। द्वार पर मारग हतो, सो सीतकाल, उष्णकाल तो या प्रकार सों बितायो। पाछे वर्षा ऋतु आई। सो रात्रि कों मेह बरसे कोठा के द्वारा दोऊ बैठे भीजें। ऐसें करत अर्द्ध रात्रि भीजते बीती। तब श्रीठाकुरजी भीतर मंदिर में ते बोले, वैष्णव ! तुम क्यों भीजत हो ? बाहर ते भीतर आवो। तब स्त्री-पुरुष ने कही, महाराज ! कोठो निपट छोटो है। हमारी मल मूत्र की देह, हम आपुके पास कैसें सोवें ? मर्यादा रहे नाहीं। तब श्रीठाकुरजी कहें हमतो ऊपर चौबारे में हैं, तुम नीचे आवो। तुम भीजत हो

सो हमकों बहोत दुःख है। तुम भीतर आवो तो हमकों सुख होय। तब दोय स्त्री-पुरुष भीतर आय धरती पर सोये। सो सगरी रात्रि डरपत रहे। जो-छींक, खांसी, वायु सरेगो तो अपराध परेगो। यह भय करत रहे। पाछें सवेरो भयो तब श्रीठाकुरजी सों पहोंचि कें स्त्री-पुरुष मनमें विचार किये, जो-वर्षाऋतु आई। अपुनें भीतर सोवनो नाहीं। बाहर सोवें तो भीजें, श्रीठाकुरजी दुःख पावें। तातें एक छोटोसो छपरा द्वार पर बनावनों। तब एक छपरा द्वार पर बनवाय दोऊ स्त्री-पुरुष बाहिर आय सोये। तब श्रीठाकुरजी नें कही, भीतर क्यों न सोये ? हमारी आज्ञा हती। तब दोऊ जनेन कही, महाराज ! हम लौकिक जीव हैं, सो अनोसर में पास आछो नाहीं आवनो, आपुकी आज्ञा करें, भीजत नाहीं, छपरा नीचे हैं। तब श्रीठाकुरजी सुद्ध भाव देखि अनुभव जनावन लागें। मांगि मांगि के अरोगते। सो स्त्री-पुरुष ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हते। बड़े भगवदीय हते। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥६२॥

भावप्रकाश - इनकी वार्ता में यह सिद्धान्त भयो, जो-श्रीठाकुरजी सों डरपत रहनों। अपराध परे तो बाधक होय। दास को यह धर्म है, जो-स्वामी को भय राखें, प्रीति सों सेवा करे और अपनो धर्म गोप्य राखे, तो श्रीठाकुरजी प्रसन्न होय। सो स्त्री पुरुष की ऐसी प्रीति हती। वैष्णव ॥६२॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, सुतार, खातीघरको काम करतो, सो अड़ेल में रहतो, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं -

भावप्रकाश - यह लीला में श्रीठाकुरजी के अंतरङ्गी 'श्रीदामा' सखा को प्रागट्य है। श्रीस्वामिनीजी, श्रीदामोदरजी जो लीला करें, ताको अनुभव करे। सो श्रीस्वामिनीजी को श्रीदामा भाई लागे। श्रीठाकुरजी को अंतरङ्गी सखा है। तातें

लीला को सहायक हैं। सो श्रीस्वामिनीजी सगरी बात श्रीदामा सों पूछती। सो एक दिन श्रीदामा श्रीठाकुरजी के कांधे पर खेल में चढ्यो, यह बात श्रीस्वामिनीजी सुनिकें अप्रसन्न भई। जदपि श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी कों समुझायो। श्रीसुबोधिनीजी में कहे हैं। श्रीदामा मालाकार माला रूप हैं। तातें श्रीठाकुरजी काँधे पर धरे। यह कहें तऊ श्रीस्वामिनीजी कों आछो न लग्यो। सो शाप दियें, जा भूमि में गिरि। तब श्रीदामा सुतार के घर अड़ेल में जन्मे सो जब सुतार वर्ष तेईस को भयो। तब श्रीआचार्यजी को दरसन करत ही मन आसक्त होय गयो। तब दंडोत करिकें बिनती कियो महाराज! मोकों सरनि लीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुमसों पुष्टिमार्गीय धर्म कैसे निबहेगो ? ज्ञाति में खानपान। तब सुतार ने बिनती करी, महाराज! मोको घर सों कहा काम है ? मैं तो आपुके पास बैठ्यो आपुके दरसन करूँगो। आपु बिना एक क्षण मोसों रह्यो नाहीं जात है। तब श्रीआचार्यजी कहें, जा, श्रीयमुनाजी स्नान करि आऊ। तब वह सुतार नहाय कें श्रीआचार्यजी पास आयो। तब श्रीआचार्यजी वाकों नाम निवेदन करवायो।

वार्ता – प्रसंग १ – सो सुतार श्रीआचार्यजी के स्वरूप पर आसक्त होय गयो। सो श्रीआचार्यजी के पास बैठ्यो दरसन करे, सो उह सुतार के घर सब भूखन मरन लागे। तब वह सुतार के कुटुम्बी, माता, स्त्री, श्रीआचार्यजी के माताजी पास आय इलम्मागारूजी यह सुतार रात्रि दिन श्रीआचार्यजी के पास रहत है, सुतार को काम कछू करत नाहीं। हम खान पान कहाँ तें करें? तातें तुम श्रीआचार्यजी सों कहियो। तब माता इलम्मागारूजी ने श्रीआचार्यजी सों कही, तुम सुतार के पास क्यों बैठत हो ? वाके घरके भूखे मरत हैं। तातें याको घर बिदा करो तो अपने काम कों जाय। तब श्रीआचार्यजी वह सुतार सों कहे, तुम अपने घर जाव काम काज करो। तब सुतार ने कही, महाराज! आपुके दरसन बिना मोसों रह्यो नाहीं जात। तब श्रीआचार्यजी कहें, हमारी माताजी खीजत हैं, तातें तुम घर जाव, कामकाज करो अपनों। हम तेरे पास आवेंगे। तब वह

सुतार दंडोत करि घर में आय काम काज करे। परन्तु मन श्रीआचार्यजी में, जो–कब पधारेंगे? कब मोकों दरसन होयगो?

सो वह सुतार की आरति प्रीति जानि आपु वाके पास पधारें। तब काम काज छोड़ि श्रीआचार्यजी सों वार्ता करन लाग्यो। सो नित्य ऐसें करे। तब वह सुतार के घर के फेरि इलंमागारु माताजी सों आय कहें, जो–श्रीआचार्यजी सुतार पास जाय बैठत हैं। तब वह काम काज छोड़ि के वार्ता करत है। तातें तुम श्रीआचार्यजी सों कहियो। तब इलंमागाजी नें कही, तुम सुतार के घर क्यों जात हो ? या बात में आछो नाहीं। सुतार पास मति बैठो। तब श्रीआचार्यजी कहें, ऐसें ही करेंगे। तउ वाकी प्रीति ऐसी, जो–श्रीआचार्यजी एक बार उह सुतार कों दरसन दे आवते। घरी दोय घरी वार्ता चर्चा करि आवते। ऐसी कृपा करते।

भावप्रकाश – यामें अभिप्राय यह, पहलें वाकों सरनि लियें, पास बैठारि वार्ता करि वाको मन स्वरूप में लगायो। परन्तु विरह बिना रस हृदयारुढ होय नाहीं। तातें वाके कुटुम्ब के मिस करि, वाकों घर पठाय विरह करायें। सो विरह दुःख सह्यो न जाय। तातें आपु पधारते उहाँ बैठते। फेरि वाके कुटुम्ब के मिस एक घरी दोय घरी बैठते। पाछे आपुकों पृथ्वी परिक्रमा पधारनो हैं। वाकों ऐसे ही छोड़ि जाय तो विरह दुःख करि व्याकुल होय। तातें अपुने आगें ही विरह कराय वाकों ऐसो करि दियो, जो–हृदय में श्रीआचार्यजी को दरसन अष्ट–प्रहर होय, या प्रकार वाकों दरसन दिये। जैसे ब्रज में श्रीठाकुरजी प्रगटे, तब ब्रजभक्तन कों दरसन दे प्रेम बढ़ाये। सो ऐसो प्रेम बढ्यो जो पलक की ओट जुग बीते। पाछे विरह बढ़ायवे के लिये गोचारन लीला कियें। तामें सगरो दिन वेनुगीत, जुगलगीत, गायकें निर्वाह करें। सन्ध्या समय की आसा लगाय रहें। पाछें मथुरा पधारिवे के मिस रात्रि दिन को विरह दियें। परन्तु इतनो संतोष जो मथुरा पास हैं, अब आवें। तब द्वारिका पधारिवे के मिस पूर्ण विरह कराय रात्रि दिन सगरे ब्रजभक्तन कों स्वरूपानन्द को अनुभव जनायो। तेसेई कृपा करि उह सुतार कों पूरन विरह कराय हृदय में स्वरूपानन्द को अनुभव कराये।

तब वह सुतार की बाहिर दृष्टि हती सो भीतर की दृष्टि सों घर में मगन रह्यो। पाछें आपु पृथ्वी परिक्रमा कों पधारें। वैष्णव ॥६३॥

सो वह सुतार एसो कृपापात्र भगवदीय हतो। तातें वाकी वार्ता अनिवर्चनीय है। सो प्रकास नाहीं किये। वार्ता ॥६३॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, एक क्षत्री हतो, सो पूर्व में रहतो पटनाके चारि मजलि आगे, ता क्षत्रिकों एक अन्यमार्गीय सों संग हतो, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– लीला में उह क्षत्री है सो कुमारिका के जूथ में हैं। लीला में इनको नाम 'मोहिनी' हैं। और उह अन्य मार्गीय मोहिनी की सखी 'लक्षनि' वाको नाम हैं। सो उह यहाँ पूर्व में एक ब्राह्मण गौड़ के घर जन्म्यो। 'मोहिनी' एक क्षत्री के घर जन्मे। सो दोऊ बरस आठ के भये, सो एक पण्ड्या के घड़ पढ़िवे को जाते। सो दोऊन कों पूर्व लीला में सम्बन्ध हैं, तातें प्रीति यहां बहोत बढ़ी। सो वरष पन्द्रह के दोऊ भये। तब एक समय श्रीआचार्यजी श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन कों पधारें, सो उह गाम में उतरे। तब वह क्षत्री को पिता कह्यो, जो–इनके संग श्रीजगन्नाथरायजी को दरसन करिये। सो पुत्र कों ले श्रीआचार्यजी के संग चल्यो। उह अन्य मार्गीय घर रह्यो। सो कछुक दिन में श्रीआचार्यजी श्रीजगन्नाथरायजी पधारे। तहाँ मायावादी भेले भये हते। तिनसों वाद करि मायावाद खंडन किये। तब वह क्षत्री ने पिता सों कही, श्रीआचार्यजी के सेवक होय तो आछो। तब पिता ने कही, मेरे तो श्रीजगन्नाथरायजी के रथकें नीचे मरनो हैं। पाछे तेरो मन आवे सो करियो। तब पुत्र नें कही, तुम ऐसी हत्या क्यों करो ? श्रीआचार्यजी के सेवक होय श्रीठाकुरजी की सेवा स्मरन करो। तब पिता ने कही मैं वृद्ध भयो। मोसों अब कछू बनें नाहीं। और मैं यही मनोरथ करि आयो हों। तब पुत्र चुप होय रह्यो। सो दिन दस पाछे रथयात्रा आई। तब श्रीजगन्नाथरायजी रथ पर चढ़ि बाहिर पधारे। सो उह पिता रथ के पैया नीचे मरयो। तब उह पुत्र श्रीआचार्यजी के पास आय के पिता की बात कही, महाराज ! रथ के नीचे मेरो पिता मरयो, ताको कहा फल ? तब श्रीआचार्यजी कहैं, मरिवे को कहा फल ? भगवान की प्राप्ति भये बिना कहा फल ? मरती बेर जहाँ मन होय तहाँ जाय। परन्तु याकों सुख की कामना हती, तातें स्वर्ग कों गयो। कछुक दिन भोग करि गिरेगो। परन्तु तू दैवी जीव है। तेरे सम्बन्ध करि वाकी मुक्ति होयगी। तब वह क्षत्री नें श्रीआचार्यजी सों विनती करी, महाराज ! मेरो सेवा को मनोरथ है। तब श्रीआचार्यजी

कहे, अब ही तो तोकों सूतक हैं। सूतक उतरे सेवक करेंगे। पाछे सूतक उतरयो, तब वह क्षत्री आयो। दंडवत करि बिनती करी, महाराज ! मेरो अङ्गीकार करिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, नहाय आऊ। तब वह नहाई आयो। तब श्रीआचार्यजी नें नाम सुनाय ब्रह्मसंबंध करवायो। तब वह क्षत्री एक लालाजी को स्वरूप सुन्दर देखिकें न्योछावरि देकें ले आयो। तब श्रीआचार्यजी पञ्चामृत सो स्नान कराय उह क्षत्री के माथे पधराये। पाछे दोय दिन उह क्षत्री श्रीआचार्यजी के पास रहि मार्ग की रीति सीखि, आज्ञा मांगी। तब श्रीआचार्यजी कहें, जा, घर में सेवा मन लगायकें करियो। तब वह क्षत्री दंडोत करि बिदा होय, घर में आय सेवा भली भांति सों करन लाग्यो। कछुक दिन में श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे। और वह अन्यमार्गीय ब्राह्मण मर्यादामार्ग की रीति सो श्रीठाकुरजी की पूजा करतो। तासों स्नेह बहोत, हतो, सो यह क्षत्री कों तो यह ज्ञान श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सरनि सों भयो। जो यह अन्यमार्गीय ब्राह्मण दैवी है। कोई प्रकार वैष्णव होय तो आछो। तब एक दिन वह सभी उह अन्य मार्गीय ब्राह्मण सो कहे जो-तुम श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक होऊ तो आछो। तब वह ब्राह्मण नें कही, अब तो मैं और मारग को सेवक ह्वे चुक्यो। अब वैष्णव कैसें होऊ ? तब वह क्षत्री वैष्णव बोल्यो नाहीं। मन में दुःख पायो। जो दैवी जीव है, परन्तु वैष्णव न भयो कहा करूँ ? यह चिंता करत घर आयो। श्रीठाकुरजी के उत्थापन कराये। तब श्रीठाकुरजी कहें, चिंता मति करे, वह अन्यमार्गीय सेवक होय कृपापात्र भगवदीय होइगो। तब यह क्षत्री नें कह्यो, महाराज ! उह कौन प्रकार होयगो ? मैं वासों वैष्णव होन की कही, सो वह नाहीं कही। वाको मन तो नाहीं है। तब श्रीठाकुरजी कहें, मेरी इच्छा वाकों अङ्गीकार करन की है। सो एक क्षण में मैं वाको मन फेरि देऊँगो। तातें तू एक काम करियो। कबहूँ वह अन्यमार्गीय तुमसों रसोई करन की कहें, तो तू वाके घर सामग्री करि भोग वाके ठाकुर कों धरिके महाप्रसाद लीजो। तब यह क्षत्री नें कही, उह अन्यमार्गीय कें ठाकुर आगें भोग कैसे धरूँ ? प्रसाद कैसें लेहू ? श्रीआचार्यजी के मार्ग की रीति नाहीं हैं। तब श्रीठाकुरजी कहें मेरी आज्ञा तें करियो, तोकों बाधक नाहीं। और तेरो भोग धरयो सो मैं उहां आयकें आरोगुंगो। तातें तू महाप्रसाद लीजियो। तब वह वैष्णव होयगो।

वार्ता - प्रसंग १ - सो एक दिन सीतकाल के दिन हते, सो क्षत्री वैष्णव एक पहर पाछली रात्रितें उठिकें घरी एक दिन चढ्यो तब राजभोग आरती करि अनोसर करायो। पाछे वह अन्यमार्गीय के घर गयो। तब वह अन्यमार्गीय वैष्णव नें बहोत

आग्रह कियो। जो–आजु पाक सामग्री यहाँ करो।

भावप्रकाश– तब वह वैष्णव मन में बहोत प्रसन्न भयो। जो–अब यह वैष्णव होयगो। श्रीठाकुरजी की आज्ञा विचारि, पाक सामग्री अनसखड़ी तऊ करी। जदपि श्रीठाकुरजी की आज्ञा हती, जो–सखड़ी करते तो बाधक नाहीं। परन्तु इतनी अपने मार्ग की का'नि राखी।

तब वाने अनसखड़ी करि वाके श्रीठाकुरजी आगें भोग धरचो, श्रीआचार्यजी की का'नि कही, श्रीगोवर्द्धनधर सों बिनती करि कह्यो, महाराज! सामग्री हू आरोगो, और या दैवी जीव कों अंगीकार हूं करो। तब श्रीगोवर्द्धनधर तत्काल पधारि सामग्री आरोगिकें (पाछे) पधारें। पाछें वह अन्यमार्गीय वैष्णव ब्राह्मण कों हू महाप्रसाद धरें। वैष्णव क्षत्री हू महाप्रसाद ले अपुने घर आयो। तब तीसरो प्रहर भये तब न्हाय के उत्थापन करायो। और वह अन्यमार्गीय महाप्रसाद ले सोयो। तब वाके ठाकुरजी, नित्य आवाहन विसर्जन करतो सो विभूति, श्रीठाकुरजी द्वारा, वा अन्यमार्गीय ब्राह्मण सों कह्यों। जो–आजु हम भूखे हैं। तब वह अन्यमार्गीय नें कह्यो, भूखे क्यों हो? श्रीआचार्यजी के सेवक क्षत्री ने भोग धरयो, सो तुम क्यों न अरोगे। तब वह विभूति नें कही, उह वैष्णव नें श्रीगोवर्धननाथजी को स्मरण कियो, सो वे आयके अरोगे। हम तो पुरुषोत्तम की विभूति हैं। सो पुरुषोत्तम पधारिकें अरोगें तहां हमारी गति नाहीं। हम तो मंत्र को आवाहन करें, तब वह भगवत प्रतिमा में प्रवेस करि अरोगें। विसर्जन करे तब चलि जाय। यह रीति हमारी हैं। और पुरुषोत्तम मंत्र के आधीन नाहीं है, एक प्रेम के आधीन हैं। तातें वह क्षत्री के ऐसो प्रेम है, जो–पुरुषोत्तम आरोगिवे को पधारत हैं। (जहां) पुरुषोत्तम पधारिकें अरोगत हैं, तहां हमारी न चले। तब वह

अन्यमार्गीय धूप दीप करि नैवेद्य धरि, पाछे वैष्णव क्षत्री पास आयो। आयकें कही, तुमने हमकों पहले श्रीआचार्यजी के सेवक होन कों कही, सो हम न माने, सो बुरी करी। अब हमकों सेवक कराय वैष्णव करो। आजु तुम मेरे घर रसोई करी, सो मेरे घर आजु पुरुषोत्तम पधारिकें आरोगे। तातें तुमारो वैष्णव धर्म सबतें बड़ो है। तब क्षत्री वैष्णव नें कही, श्रीआचार्यजी महाप्रभु कासी तें श्रीजगन्नाथरायजी कों पधारत हैं। सो दिन पाँच सात में यहाँ पधारेंगे। तब सेवक होय वैष्णव हूजियो। मैं तो तुम सों पहले ही कही हती। तब तुमनें मानी नाहीं। अब श्रीठाकुरजी नें तुम पर कृपा करी।

भावप्रकाश – यामें यह जताये जो वैष्णव जाकों अङ्गीकार करनो विचारें ताको श्रीठाकुरजी निश्चय कृपा करें। और जाके यहाँ वैष्णव एक दिन हू आयके कछू अङ्गीकार करें सो श्रीठाकुरजी की बड़ी कृपा जाननी। भगवदीय अंगीकार कियें सो श्रीठाकुरजी नें किये जानने। तातें भगवदीय को संग कृतार्थ सब करें। यह सिद्धान्त प्रगट किये।

पाछें श्रीआचार्यजी पधारे सो वह क्षत्री वैष्णव के घर उतरे। तब वह क्षत्री वैष्णव उह अन्यमार्गीय ब्राह्मण सों कहें। श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारे हैं। तब वह अन्यमार्गीय श्रीआचार्यजी पास आय दंडोत करि विनती कियो, महाराज! मोकों सरनि लीजिये। कृपा करि मेरे घर पधारो। तब श्रीआचार्यजी वाके घर पधारि वह ब्राह्मण कों नाम निवेदन कराये। वाके सगरे कुटुंब कों नाम सुनायें। पाछें वाके श्रीठाकुरजी कों पञ्चामृत स्नान कराय पाट बेठारे। सामग्री करि भोग धरि आपु आरोगें। वा ब्राह्मण कों जूठन धरें। पाछे आपु जगन्नाथरायजी के दरसन कों पुरुषोत्तम क्षेत्र पधारे। सो वह अन्यमार्गीय, वह क्षत्री वैष्णव के संग तें भलो वैष्णव भयो। तातें

क्षत्री वैष्णव श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय भये। इनकी वार्ता कहाँ तांई कहिये। वार्ता ॥६४॥

भावप्रकाश – तातें सत्संग बड़ो पदार्थ है, सत्संग पूर्ण कृपातें मिलें।

वैष्णव ॥६४॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, लघु पुरुषोत्तमदास क्षत्री कवि हते, सो कासी में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– ये लीला में श्रीनंदरायजी के घर के भाट हैं। इनको नाम लीला में उमाशंकर, सो कासी में एक क्षत्री के घर में जन्में। सो आठ वरष के भये। तब ही तें कवित्त–दोहा करते। सो राजा के, धन पात्र के, सेठ कें, ऐसें करते कवित्त। श्रीआचार्यजी कासी पधारे, सो मणिकर्णिका घाट ऊपर संध्यावंदन करत हते। कृष्णदास, सेठ पुरुषोत्तमदास आदि सगरे ठाड़े हे। तहां लघु पुरुषोत्तमदास कवि आये। तब सेठ पुरुषोत्तमदास डरपे, जो–यह धनपात्रन के कवित्त करत हैं, सो मेरो जस कहूँ गावे तो श्रीआचार्यजी के आगें ठीक नाहीं। तब सेठ पुरुषोत्तमदास लघु पुरुषोत्तमदास के पाय आयकें कह्यो, जा–या समय मेरो कवित्त दोहा मति करियो। तब लघु पुरुषोत्तमदास ने कही, फेर तुमसों हमसों मिलाप कहाँ होय ? मैं तो तिहारो कवित्त करन कों यहाँ आयो हों, सो करूँगो। तिहारे मन आवे तो कछू दीजो, मन आवे मति दीजो। पैसा देनो परे ताके लिये वरजत हो, जो–कवित्त मति करे। तब सेठ पुरुषोत्तमदास नें रुपैया पाँच देकें कह्यो, घर आइयो, और कछू देइगें। परन्तु या समय श्रीआचार्यजी हमारे गुरु संध्यावंदन करत हैं। तिनके आगें मेरो जस भूलिकें मति कहियो। तब लघु पुरुषोत्तमदास प्रसन्न होयके कहें, मैं और राजा के कवित्त श्रीआचार्यजी के आगें कहोंगो। तिहारो न कहूँगो। तब पुरुषोत्तमदास सेठ ने कही मेरे कवित्त मति करियो, ओर को तुम जानों। तब लघु पुरुषोत्तमदास कवि श्रीआचार्यजी के पास जाय अनेक राजान के दस पाँच कवित्त कहें। तब श्रीआचार्यजी दैवी जीव जानि लघु पुरुषोत्तमदासकी ओर कृपा – दृष्टि करि कहें, लघु पुरुषोत्तमदास ! तू श्रीनंदरायजी के घर को भाट, चारन होय, श्रीठाकुरजी को जस छोड़ि राजसी लोगन को जस गावत हैं, सो आछो नाहीं। तू कवि है, चतुर है, राजान को एसो जस तू कह्यो सो कछू गुन इन राजान में हैं ? अनेक रोग दुःख सों भरे हैं। मृतकवत् पापी, तिनको जस गाय मिथ्या भाषन किये सो आछो नाहीं। गायवे लायक एक श्रीठाकुरजी को जस है।

यह सुनत ही लघु पुरुषोत्तमदास कुं ज्ञान भयो। तब श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि बिनती करी। महाराज ! सगरो जन्म योंही मिथ्याभाषन करि गमायो। अब मैं आपकी सरनि हों, सो ऐसी कृपा करो जो सदा श्रीठाकुरजी को जस गाऊँ। मोकों श्रीठाकुरजी के जस को ज्ञान नाहीं। तातें राजसी लोगन को जस गायो। तब श्रीआचार्यजी कहें, गङ्गाजी में नहाय ले, हम तोकों समुझावें। तब लघु पुरुषोत्तमदास गंगाजी में स्नान करिकें श्रीआचार्यजी के पास आयो, तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय समर्पण करायो, अपनों चरणामृत दीनों। तब लघु पुरुषोत्तमदास कों श्रीठाकुरजी की लीला को ज्ञान भयो। श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान भयो।

वार्ता – प्रसंग १ – सो वे श्रीगोवर्द्धननाथजी के कवित्त और श्रीआचार्यजी के कवित्त एक सार करते। या प्रकार श्रीआचार्यजी कों साक्षात् पुरुषोत्तम जानन लागे। ता दिन तें राजा आदि धनपात्र के यहाँ जानो, उनके कवित्त कहनो सब, छोड़ि दियो। सो कछुक दिन में श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे। सदा भगवान की लीला में मग्न रहतें। सो या प्रकार श्रीआचार्यजी नें लघु पुरुषोत्तमदास पर कृपा करी। तातें लघु पुरुषोत्तमदास बड़े भगवदीय हे। इनकी वार्ता कहाँ तांई कहिये।

वार्ता ॥६५॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, कविराज भाट, सनोढ़िया ब्राह्मण, मथुरा में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – लीला में कविराज शांडिल्य मुनि, श्रीनन्दरायजी के पुरोहित हैं। सो मथुरा में एक पुरोहित के घर जनमें। सो तीन भाई हते, तामें दोय भाई तो मूर्ख हते। कविराज देवी देवतान के कवित्त राजान के कवित्त पढ़ि निर्वाह करते। तातें सब कोई इनकों कविराज भाट कहतें। सो मथुरा में विश्रान्त घाट पर कवित्त ये कहते।

वार्ता – प्रसंग १ – सो एक दिन वे विश्रांत में भूतेश्वर महादेव के कवित्त करिकें कहत हे, ता समय श्रीआचार्यजी

महाप्रभुन महावन तें मथुरा पधारे । सो विश्रांत घाट पर संध्यावंदन करत हे, ता समय कविराज भाट कों श्रीआचार्यजी के दरसन भये। तब कविराज भाट नें जानी, जो-ये बड़े पंडित से दीसत हैं । तातें इनसों कछू पूछों । तब कविराज भाट श्रीआचार्यजी के पास आय दण्डवत करि एक प्रश्न कियो, महाराज ! देवी बड़ी के महादेव बड़े ? तब श्रीआचार्यजी कहे, शास्त्र रीति सों श्रीठाकुरजी बड़े, और जाके मन में जो निश्चय बड़ो मान्यो ताकों सोई बड़ो । तब कविराज भाट नें कही, महाराज ! श्रीठाकुरजी में और महादेवजी में कहा भेद है ? ईश्वर दोऊ कहावत हैं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, श्रीभागवत में कहे हैं, जो-जब भगवान् मोहिनी रूप धरे, तब महादेव मोहित भये। और महादेव कोई रूप धरे परन्तु श्रीठाकुरजी कों मोहित न करे। तातें भगवान् के आधीन महादेव हैं। महादेव के आधीन भगवान् नाहीं हैं, इतनो तारतम्य है।

या प्रकार बचन श्रीआचार्यजी ने श्रीमुखसों कहे सो सुने। सो कविराज भाट की बुद्धि निर्मल ह्वै गई। तब कविराज दण्डवत करि विनती कियो, महाराज ! मोकों सरनि लीजिये। काहे तें, एक क्षण आपुके पास बैठे तें, बतरायेतें श्रीठाकुरजी में मन लाग्यो, सो आपुको सेवक होय कछुक दिन आपको संग करूँगो तो निश्चय श्रीठाकुरजी मोपर प्रसन्न होंयगे। तातें मोकों सेवक करो। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम कविराज हो, कवित्त करत हो, सो सेवक होय कहा करोगे ? तब कविराज नें कही महाराज ! आपुके संग बिना योंही भटकत हतो, कछू ज्ञान तो हतो नाहीं। तातें अनेक देवतान के गुन, श्रीठाकुरजी के छोड़ि कें, गावत हतो।

अब मोपर आपु कृपा करो, जो–सदा श्रीठाकुरजी के गुन गाऊँ। तब श्रीआचार्यजी कहें, अब तो हम अड़ेल पधारत हैं, तहाँ तीनों भाई सहित अइयो, सो तहाँ सेवक करेंगे। यह कहि श्रीआचार्यजी अड़ेल पधारे।

भावप्रकाश – सो यातें जो याकी पूर्व प्रीति सेवक होयवे की होयगी, जब तो आयकें सेवक होयगो। प्रीति बिना अंगीकार न होय। तातें श्रीआचार्यजी अड़ेल आयवे की कही। सो आपु तो अड़ेल पधारे।

तब कविराज अपने दोऊ भाईन सों कह्यो, अड़ेल चलि श्रीआचार्यजी के सेवक है आवें। तब तीनों भाई अड़ेल चले। सो कछुक दिन में जाय पहुँचे। तब श्रीआचार्यजी कहे, न्हाय आवो। तब तीनों जने नहाय आये। तब श्रीआचार्यजी कविराज भाट कों नाम निवेदन कराये। और दोऊ भाईन कों नाम सुनायो। तब कविराज भाट नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज! हम आगें पूर्व जन्म में कौन हे, सो ऐसे यहाँ श्रीठाकुरजी कों भूलि संसार में भटकें ? तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम श्रीनन्दरायजी के मुख्य पुरोहित हो, भक्ति सूत्र तो तुमही प्रगट किये हो। यह भक्तिमारग दृढ़ तो तिहारे किये सूत्र की साखितें जगत में प्रसिद्ध है। सो तुम सगरे मुनीन में श्रेष्ठ हो। सो एक समय तुमको अहङ्कार भयो, जो–भक्तिमारग कों मैं बहोत जानत हों। तब विश्वामित्र शाप दियो। जो–भूमि पर गिरो, मूर्ख होऊ। तातें तिहारो जन्म भूमि में भयो। अब देह छोड़ि फेरि शांडिल्य मुनि होंऊगे। तब कविराज दंडवत करि विदा होयके फेरि मथुरा आये। सो सरनि आय गोवर्द्धन पर जाय श्रीनाथजी के दरसन करि सन्मुख कवित्त किये। पाछें श्रीआचार्यजी के,

श्रीगोवर्द्धननाथजी के कवित्त बहोत किये। सो लीला रस में मग्न भये। सो कविराज भाट ऐसे भगवदीय भये। श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र हैं। इनके संगतें उन दोऊ भाईन को उद्धार भयो। तातें कविराज की वार्ता कहाँ तांई कहिये। वार्ता ॥६६॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को सेवक, गोपालदास ईंटोडा क्षत्री, सो ये पच्छिम में पंजाब में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – लीला में ये ललिता की सखी हैं। 'नृत्य-कला' इनको नाम है लीला में। सो इनकों एक समय मद भयो। जो संगीत को गान मोकों आवत हैं। ऐसो काहू सखीकों ललिताजी कों हूँ नाहीं आवत हैं। यह मन में आवत ही ललिताजी नें कही। जा मूर्ख भूमि में जन्म। ता अपराध तें पच्छिम में एक क्षत्री के जनमें। पाछे बड़े भये। तब मन में आई, जो–ब्रज की जात्रा और पिता की गया हू करि आवें। यह विचारि पच्छिम तें चले सो ब्रज में आये। सो मथुरा न्हाय कासी कों चले। सो कासी जाय गया में पिता श्राद्ध करि पाछें कासी आये। सो कासी तें मथुरा कों चले। तब मार्ग में श्रीआचार्यजी कों संग भयो। सो एक मजलि में छोटो गाम हतो तहाँ उतरे। सो रात्रि कों डाको तहाँ पर्यो। गोपालदास के हाथ में रञ्च तीर लग्यो। वस्तु भाव सब लूटि गई। पाछे श्रीआचार्यजी सबेरे कहें, गोपालदास कहा खबरि है, तब वाने कही, महाराज! खरची, वासन, वस्तू सगरी गई, ताकी तो चिन्ता नाहीं। आगरे ते हूंडी कर घर सों मँगाय लेऊँगो। परन्तु दोय चारि दिनमें आगे खरची बिना कैसे पहोचोंगो, यह चिन्ता है। और हाथ में रंच लागी हैं सो आछो होय जायगो। तब श्रीआचार्यजी नें कही, प्रारब्ध भोग मिट्यो, अब चिन्ता मति करो। खरची चाहिये सो कृष्णदास सों लीजो। तब गोपालदास ने कही, महाराज! प्रारब्ध भोग कैसो? तब श्रीआचार्यजी कहें, बरस दस याही बात कों भये। तू रात्रि कों एक गाम जात हतो। सो मार्ग में और चोर और ठौर तें चोरी करि जात हते। सो तू उनकों पकरि कें बहोत मार्यो, उन की वस्तू छीनि लीनी ताको पलटो भयो। तेरी वस्तू गई, और चोट तोकों लागी। तोकों सुधि हैं? तब गोपालदास कहें, महाराज! ठीक हैं। या बात कों दस बरष भये। पाछें कृष्णदास सों रुपैया ५) ले चले। तब गोपालदास अपने मन में विचारें, जो–श्रीआचार्यजी साक्षात् ईश्वर हैं। दस बरस की बात मेरे देस की सब बताय दीनी। ताँतें इनको मैं सेवक होऊँ तो कृतार्थता होय। यह विचार करि श्रीआचार्यजी सों बिनती कियें, महाराज! मोकों कृपा करि सरनि लीजिये। और मेरो संसार-दुःख छूटे, ऐसो

अनुग्रह करो। तब श्रीआचार्यजी कहें, आगरे में चलो। तहां तुमकों नाम सुनावेंगे। तब गोपालदास ने विनती करी, महाराज ! मोकों विश्वास नाहीं हैं। एक क्षणमें देह छूटि जाय तो मैं आपुकों कहाँ पाऊँ ? फेरि सरनि कब मिलें ? तब श्रीआचार्यजी कहें, स्नान करि आऊँ। तब गोपालदास न्हाय आयें। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय ब्रह्मसंबंध कराये। तब गोपालदास ने बिनती करी, महाराज ! मैं महामूर्ख हूँ। कछू आपको प्रकार मार्ग को जानत नाहीं। सो मोकों ऐसी कृपा करो, जो–पुष्टिमार्ग को सिद्धान्त हृदयारुढ़ होय। और आपुके स्वरूप को कछू ज्ञान होय। तब श्रीआचार्यजी अपने चरणारविंद को चरणामृत दीनो। और ''सिद्धान्त रहस्य'' ग्रन्थ पढ़ायें। तब गोपालदास के हृदय में पुष्टिमारग के सिद्धान्त को भाव हृदयारुढ भयो। श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान भयो। तब गोपालदास दंडवत करि चोखरा छंद बहोत बरनन कियें। तब श्रीआचार्यजी कहें। गोपालदास तुम पर श्रीठाकुरजी की कृपा भई। तब गोपालदास दंडवत करि कहैं, मैं तो श्रीठाकुरजी को नाम हूँ कबहूँ नाहीं लियो। सो श्रीठाकुरजी मोकों कहा जानें ? यह सब आपु की कृपा हैं। जो मो सारिखे अधमन कों सरनि ले एसो दान दिये। तब श्रीआचार्यजी गोपालदास की दैन्यता देखि प्रसन्न भये। जो या प्रकार वैष्णव कों दैन्यता चहियें। श्रीआचार्यजी के संग गोपालदास आगरे आये। पाछे ब्रज में संग रहें। श्रीगोवर्द्धनधरके दरसन करि श्रीआचार्यजी सों बिदा होय पञ्जाब गये। सो चोखरा गान करि मगन रहते।

वार्ता – प्रसंग १ – और एक समय गोपालदास श्रीआचार्यजी के दरसन कों अड़ेल आये। सो श्रीआचार्यजी को जनम दिन आयो। सो केसर सों नहाय मार्कण्डेय पूजा करन कों बिराजें। ता समय गोपालदास यह चोखरा, छंद बिलावल राग में गाये –

''माधव मासें भरि वैसाके, श्रीवल्लभ हरि जनम लियो।''

छंद – प्रगटिया जिन भक्तिमारग बंध जीव छुडाईयां। संसार ते जे मुक्त कीने शरन जो जन आइयां।। अभयदान निशान मेले चित्त जिन हरिकों दिया। गोपालदास अनन्तलीला प्रगट श्रीवल्लभ भया।।१।। दाता मुक्ता और न दूजा, साँचा त्रिभुवनराय वहां। विरह निवारणा भवजल तारणा देखत उपजे चाव जहां।। छंद – देखत हरिकों चाव उपजे सकल दुःख निवार ही। जाकौ सुमरे जरे पातक कर जोर निगम पुकार ही।। पतितपावन विरद जाको, शील माधौ कर मया। 'गोपालदास' अनंतलीला

प्रगट श्रीवल्लभ भया ॥२॥ ये व्रजबालियाँ गोप गुवालियाँ ये गोकुल के लोग उहाँ। ये बन क्रीड़ा, हरिमुख बीडा हरि सेवा रस भोग वहां ॥छंद॥ रसभोग और संयोग मिलि यों हिये अन्तर रम रह्या। तुव बाल चरित्र अनंतलीला दान दे सब गुन कह्या ॥ तेरी भली मूरति देखि सूरति राधिका अञ्चल गह्या। 'गोपालदास' अनंत लीला प्रगट श्रीवल्लभ भया ॥२॥ पूरन ब्रह्म सनातन माधो कलि केशव अवतार वहां। जिन जैसा देखा तिन तैसा पेखा भक्तन प्रान आधार वहां ॥ छंद – भक्तन प्रान आधार श्रीबल्लभ हिये अन्तरराखिया। रामकृष्ण मुकुन्द माधो सदा जिह्वा भाखिया ॥ गोपीनाथ अनाथ बंधु वेद में करुणामया। 'गोपालदास' अनंतलीला प्रगट श्रीवल्लभ भया ॥४॥

यह चोखरा सुनिकें श्रीआचार्यजी गोपालदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। सो गोपालदास ऐसे भगवदीय श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हैं। तिनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥६७॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, जनार्दनदास चोपड़ा क्षत्री थानेस्वर के वासी, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये जनार्दनदास लीला में कुमारिका के जूथ में हैं। लीला में इनको नाम 'कृष्णावती' हैं। सो थानेस्वर में एक क्षत्री के घर जनमें। सो इनको पिता शस्त्र बांधिकें थानेस्वर के हाकिम पास चाकरी करते। सो वह हाकिम एक दूसरे हाकिम पास लरन कों चढ्यो। ता समय जनार्दनदास को पिता शस्त्र लेके चढ्यो। सो जनार्दनदास को पिता कायर बहोत हतो। सो जब लराई होन लागी, तब जनार्दनदास को पिता डरपिकें भाज्यो। सो घर में आय जनार्दनदास वर्ष सोरह के हते, तिनसों कह्यो, मैं युद्ध में ते भाजि आयो, सो हाकिम आयकें मोकों मारेगो। तब जनार्दनदास नें पिता सों कही। जो तुमनें बुरी करी, क्षत्रीय होय रण सों भाजें। परन्तु अब या देस में रहनों कठिन हैं। तब जनार्दनदास के पिता नें कही मैं पूर्व कासी कों निकसि जात हों! यह कहिंकें जनार्दनदास को पिता निकस्यो। सो पूर्व होय दक्षिण कों निकसि गयो। यहां जनार्दनदास के पिता के भाजें फोज भाजी, सो हाकिम हूँ भाज्यो। पाछें मामला तै करिकें थानेस्वर में आयो। तब सगरे सिपाईन सों पूछ्यो जो–पहिलें कौन भाज्यो ? तब सबन ने कही, जो–जर्नादनदास को पिता भाज्यो। तब उह हाकिम नें कही, जो–वाकों मेरे आगें पकरि लावो। तब प्यादे घर आयें। सो जनार्दनदास कों ले गये। तब हाकिम नें कही। तेरे पिता कों बताव, कहाँ हैं। उह रन

में ते भाज्यो सो मेरी सगरी फोज बिचरि आई। तातें वाकों मारूँगो। पिता कूं न बतावेगो तो तोकूँ मारूँगो। तब जनार्दनदास नें कही, जो–मेरो पिता भाजिकें घर आयो। सो तुम्हारो भय करि पूर्व कासी को नाम लेकें भाजि गयो। और मैं तुम्हारे आगे हों, चाहो सो करो। तब हाकिम नें कही झूंठो हैं। पिता को कहूँ छिपाइ राख्यो हैं। तब जनार्दनदास नें कही मैं छिपायो होय तो या बात को मुचरका लिखों। मैं झूठ नाहीं कहत। तब वह हाकिम नें इनकों बंदीखाने दीनों। सो बंदीखाने में डारत ही संध्या समय हाकिम के घर में आगि लागि। वह हाकिम को बेटा, बहू, सगरो कुटुम्ब जरि मर्‍यो, अब अकेलो रह्यो। तब वह हाकिम के मन में आई, जो–मैं बुरी करी। जो जनार्दनदास कों बंदीखाने में डार्‍यो। याकों बिना दोष मैं दंड दियो, ताको फल पायो। तब हाकिम जनार्दनदास कों बुलायो, कह्यो, मैं तोको बिना दोष दंड दियो। तेरो पिता भाज्यो, तामें तू कहा करें? सो मेरो कुटुम्ब सब नास भयो। अब तू अपनें पिता कों बुलाव। मैं कछु न कहूँगो। होनहार हती सो भई। और तोकुं विश्वास न आवे तो गाम के दस भले मनुष्यन के आगे लिखि देऊ। पाछे गाम के प्रमानिक सेठ बुलाय हाकिम नें लिखि दीनों, जनार्दनदास को पिता घर में आवें। मोसों कछू दावो नाहीं। कछू कहूँ तो पंचन में झूठो। पाछे जनार्दनदास के पिता की चाकरी के पैसा बहोत दिनकें बाकी हते सो जनार्दनदास कों दिये। जनार्दनदास घर आय विचारें, अब पिताकों घर लावनों, कहा उपाय करूँ? पाछे यह विचारे जो–कासी के आसपास होयगो, मैं जायकें लिवाय लाऊँ। नाहीं तो वह कबहूं न आवेंगो। यह विचारि जनार्दनदास थानेस्वर सों चले। सो आगरे आये। पाछे आगरे तें चलें, तब मार्ग में दोय मोहौर परी पाये। सो लेकें मन में प्रसन्न भये। मोकूँ सगुन तो आछो भयो, जो–सुवर्ण पायो। पाछे उहां ते दोय मजलि चले आगें, तब वासुदेवदास छकड़ा मिलें। तिनसों जनार्दनदास पूछें, जो–मेरे पिता कहूँ देखे? तब वासुदेवदास छकड़ा ने कही, जो–मैं तेरो पिता नाहीं देख्यो। परन्तु एक बात तोसों कहूं, जो–तू मानें तो। तू दैवी जीव है, तातें कहत हूं। तब जनार्दनदास नें कही तुम बड़े हो, मेरे पुरोहित हो। मैं तुम्हारो जिजमान, बालक बराबर हों। तुम कहो सो करूँ। तब वासुदेवदास नें कही, तू घरतें निकस्यो है तो श्रीगोकुल मथुरा जैयो। तहाँ श्रीआचार्यजी के दरसन तोकों होयगो। तिनकी तू सरनि जैयों। संसार में बहुत दुःख भोग्यो। अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों सेवक होय तू कृतार्थ होय। और कासी कों काहे कों भटकें? तेरो पिता तो दक्षिण गयो है। सो महीना एक में तहाँ मरेगो। तातें मैं कही सो करि। तब जनार्दनदास ने कही। तुम कैसें जाने जो दक्षिण मेरो पिता गयो

हैं। तहाँ महीना एक में मरेगों ? काल कोई जानत हैं ? तब वासुदेवदास नें कही, जो–मैं श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की कृपातें काल की बात जानत हों। तू मार्ग में दोय मोहौर पायकें प्रसन्न भयो। सो यह मोहौर तोकों बहुत दुःख देंयगी। तातें काहू ब्राह्मण कूं दे डारियो। जैसे मैं मोहौर की बात जानी तैसें तेरे पिता की मृत्यु बताई। अब तेरो मन होय सो करियो। तब जनार्दनदास को दृढ़ विश्वास भयो। जो वासुदेवदास कहें सो साँची बात हैं। तब वासुदेवदास को दंडवत करि कह्यो, जो–मैं श्रीआचार्यजी को सेवक निश्चय होऊँगो।

वार्ता – प्रसंग १ – सो जनार्दनदास मथुरा होय श्रीगोकुल आये। तहां श्रीआचार्यजी को दरसन करि, दण्डवत करी। सो मनमें यह कहें, जो–उह जो दोय मोहौर पाई हैं, सो और ब्राह्मण कहां ढूंढोगों, श्रीआचार्यजी की भेट करि देऊँ। तब दोऊ मोहौर निकारि श्रीआचार्यजी की भेट कियो। तब श्रीआचार्यजी कहें, तू बड़ो मूर्ख है, मार्ग में परी पाई मोहौर हमारी भेट कर्यो। सो हमकों नाहीं चहियें। तब जनार्दनदास फेरि दण्डवत करि विनती कियो, जो–महाराज ! आपु पूर्ण पुरुषोत्तम हो। वासुदेवदास मोकों मार्ग में कह्यो, जो–श्रीआचार्यजी साक्षात् भगवान हैं तिनकी तू सरनि जैयो। और ये मोहौर तेरे काम की नाहीं हैं। दुःख रूप हैं। तातें आप कृपा करिकें सरन लीजिये। और ये मोहौर जाकों देनी होय ताकों दीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, मोहौर तू उठाय ले। मथुरा में चौबे ब्राह्मण बहोत हैं, तिनकों दीजो। और श्रीगोवर्द्धननाथ के दरसन कों संग चलो, तहाँ तुमकूँ सेवक करेंगे। तब जनार्दनदास मोहौर दोऊ ले श्रीआचार्यजी के संग गोवर्द्धन आये। पाछें आन्योर में जब आये तब श्रीआचार्यजी नें कही, जनार्दनदास ! स्नान करिकें श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों चले। तब जनार्दनदास स्नान करिकें श्रीआचार्यजी

के संग श्रीगोवर्द्धननाथझी के दरसन करें। तब श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धनधर के सन्मुख बैठाय नाम निवेदन कराये। पाछे कहे, जो–अब तू भगवद् सेवा करि। तब जनार्दनदास नें कही, जो–आप जा प्रकार बतावो ता प्रकार करूँ। तब श्रीआचार्यजी श्रीनाथजी की पाग जनार्दनदास कों सेवा करिवे कों दिये। सो दिन दस जनार्दनदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के संग आन्योर में रहि, एतनमार्ग की रीति सीख्यो। तब श्रीआचार्यजी ने जनार्दनदास सों कही। जो–अब हम पृथ्वी परिक्रमा कों जायंगे। तू घर जाय भगवद् सेवा मन लगाय कें करियो। तब जनार्दनदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करि श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दण्डवत करि विदा होय थानेश्वर अपुने घर आयो। पाछें पिता के देह छूटे के समाचार दक्षिण तें आये। तब जनार्दनदास मन में कहें, जो–वासुदेवदास बड़े भगवदीय हैं। उनको कह्यो सब साँच है। पाछें मन लगाय भगवद् सेवा करन लागें। सो कछुक दिन में श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे। और सिंहनंदते वासुदेवदास थानेश्वर आवते। तब जनार्दनदास वासुदेवदास कों अपने घर प्रीतिसों राखते। कहतें, मैं तुम्हारी कृपा तें श्रीआचार्यजी की सरन पाई हैं। तातें तुम जब थानेश्वर आवो तब यह घर सब तुम्हारो है, यहाँ उतर्‌यो करियो। सो एक क्षण वैष्णव के संग तें जनार्दनदास भगवदीय भये। तातें सत्संग भगवदीय को करनो। सो जनार्दनदास ऐसे भगवदीय श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हे। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये।

वार्ता ॥६८॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गडू स्वामी सनौढिया ब्राह्मण,
श्रीवृन्दावन में रहते,
तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये लीला में श्रीनंदरायजी के घरकी दासी हैं। 'बंदी' इनको नाम हैं। सो जसोदाजी जब दामोदर लीला में श्रीठाकुरजी कों बाँधन लागी, तब एक दाम बंदी ने दियो, जसोदाजी कों। सो रोहिणीजी सुनि के शाप दियो। जो तू दासी है कें अपनो दाम बाँधिवे को श्री जसोदाजी को क्यों दियो ? ताते भूमि में गिरि, तब बंदी मथुरा में एक सनोढ़िया के घरमें जन्में। सो जब ये आठ वर्ष के भये। तबही तें वैराग्य दिसा हती। सो मथुरा छोड़ि वृन्दावन में अकेले आय रहें। मथुरा तें सीधो सामान दस पांच दिना को लाय वृन्दावन में केशीघाट पर बैठे विचारि करते। जो मोको कब कृपा करेंगे। और ब्रजवासी आदि जो आय कहते, हमको सेवक करो, तिनकों सेवक करते। तिनसों यही कहते, श्रीठाकुरजी को नाम सदा मुखसों कहियो।

वार्ता – प्रसंग १ – सो एक दिन रात्रि कों गडू स्वामी कों विरह बहोत भयो। जो जन्म सगरो बीत्यो। यह मनुष्य देह वृथा गई, तातें जीवनों वृथा है। यह कहि नेत्रन तें अश्रूपात बहें। तब गडू स्वामी कों रञ्च नींद आई। तब श्रीठाकुरजी नें कही, जो–सवेरे श्रीवल्लभाचार्यजी तेरे पास केशीघाट ऊपर स्नान करन कों पधारेंगे तिनकी सरन तू जैयो। तब तोपर कृपा होयगी। तब गडू स्वामी की आँख खुली, सो कहन लागे। जो कब सवेरो होय, कब मैं श्रीआचार्यजी की सरनि जाऊँ। इतने में सवेरो भयो। गिरिराज सों रात्रि कों श्रीआचार्यजी चले सो प्रातःकाल केशीघाट पधारि श्रीयमुनाजी स्नान करि संध्यावंदन करत रहे। तब गडू स्वामी ने पूछी जो ये कोन हैं। तब कृष्णदास मेघन नें कही, जो–श्रीवल्लभाचार्यजी गिरिराज सों पधारे हैं। तब गडू स्वामी नें दंडवत करि श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, जो–महाराज ! मोकों कृपा करिकें सेवक करिये। तब श्रीआचार्यजी

कहें। जो तुम तो स्वामी कहावत हो। तुम हू सेवक करो हो। सो तुम सेवक होंन की क्यों कहत हो ? तब गडू स्वामी नें कही, महाराज ! मोकों भगवद् आज्ञा भई। जो–तू श्रीआचार्यजी को सेवक हूजियो, तब तोपर कृपा होयगी, तातें मोकों सेवक करिये। तब श्रीआचार्यजी गडू स्वामी कों कहे, जा–स्नान करि ले। तब गडू स्वामी स्नान करिके श्रीआचार्यजी के पास आयो। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय निवेदन कराये। पाछे गडू स्वामी ने अपुने जो सेवक किये हते। तिन सबन कों श्रीआचार्यजी के पास नाम सुनाये।

भावप्रकाश – पाछे गडू स्वामी नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज! मेरे माता पिता तो बहिरमुख हैं, सो मथुरा में हैं। तातें उनकों छोड़ि मैं यहाँ आयो हूँ। ब्याह तो मेरो भयो नाहीं। बालपनें तें वैराग दसा में रह्यो। सो अब ऐसी कृपा करो, जो–मेरो मन श्रीठाकुरजी की लीला तें अनत न भटके। तब श्रीआचार्यजी अपुनो चरणामृत दे 'त्रिविध नामावली' रचि, ताको पाठ करायें। तब गडू स्वामी कों श्रीठाकुरजी की लीला को अनुभव होन लाग्यो। सो मानसी सेवा में मगन ह्वे गये।

सो गडू स्वामी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे, तातें इनकी वार्ता अनिर्वचनीय है। मानसी को प्रकार कह्यो न जाय। तातें गडू स्वामी की वार्ता को विस्तार नाहीं किये।

वार्ता ॥६१॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, कन्हैयाशाल क्षत्री, आगरे में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये कन्हैया शाल लीला में ललिताजी की सखी हैं। तहाँ उनको नाम 'कमोदिनी' हैं। सो आगरे में एक 'शाल' क्षत्री के घर जन्में। सो द्रव्य को संकोच पहलें बहोत हतो। सो जा दिना कन्हैया शाल जन्में ताही दिन माता पिता के घर में द्रव्य धरती सों निकस्यो। तब पिता माता नें कही, यह पुत्र बड़ो भाग्यवान है,

जो-जनमत ही लक्ष्मी आई। तातें या बालक को नाम कन्हैया शाल। या प्रकार सों माता पिता कन्हैया शाल सों प्रीति बहोत करी। बड़े भये परन्तु घरके बाहर जान न देय। सो जब तेरह वर्ष के भये। तब पिता की देह छूटी। पाछे कन्हैया शाल ने माता सों कही, अब मोकों बाहर जान दे, मैं बड़ो भयो, मथुरा बड़ो धाम है। सो कबहूँ दरसन नाहीं कियो। तब माता नें कही, जो-बेटा तू मेरे नेत्रन तें कहूँ न्यारो मति जाय। तब कन्हैया शाल चुप ह्वै रहे। पाछे कन्हैया शाल के एक मामा हतो। सो मथुरा चल्यो। तब कन्हैया शाल नें माता सों कही, जो-अब मामा के संग मथुरा मोकों न्हायवे कों जान दे। नाहीं तो मैं अकेलो भाजि जाऊंगो। तब माता डरपि कें अपने भाई सों कह्यो। मेरे बेटा कों बहोत दरसन मति कराईयो, फिराईयो मति, मथुरा में न्हवाय के बेगि लाईयो। तुमकों ब्रज में जात्रा करनी होय, फिरनो होय, तो मेरे बेटा कों मेरे पास घर पहुँचाय फिरियो। तब कन्हैया शाल मथुरा आय विश्रान्ति न्हाये। तब कन्हैया शाल नें मामा सों कही, मोकों सगरे ब्रज में दरसन करावो। तब मामा ने कही। तुम्हारी मातानें तो नाहीं करी है। तब कन्हैया शाल ने कही, जो-मोपर मां को मोह बहोत है। परन्तु मैं फेरि कब आऊँगो ? तातें चलो, ब्रज के दरसन करों, सो बन परिक्रमा कों निकसे। सो पाँच दिन में श्रीगोवर्द्धन पहुँचे। सो गिरिराज कों देखि कन्हैया शाल बावरे ह्वै गये। न बुलाये बोलें, न उठाये उठें। जाकों देखे ताकी ओर हँसें। काऊ मुख में डारि देंई तो खाय। पहिरावे जो वस्त्र पहिरें। या प्रकार सरीर की सुधि भूलि गये। तब मामा कों महा चिन्ता भई। जो या दसा सों घर ले जाय तो याकी माता रोवेगी। तातें गोवर्द्धन में कन्हैया शाल कों लेकें वह मामा रह्यौ। वैरागी, अतीत, वैद्य सब सों कहें, जो-कन्हैया शाल कों कोऊ आछो करे तो वह जो मांगे सो मैं देहुँ। सो बहोतेरी औषधि लोगन नें करी। अनेक जंत्र मंत्र किये। परन्तु कन्हैया शाल आछे न भये।

ऐसे करत एक महिना बीत्यो। तब घरमें माता नें बहोत चिंता करी। जो पुत्र की कछू खबरि हूँ नाहीं आई। मेरो भाई पाँच दिन को नाम ले गयो हो, सो महिना एक भयो। कछू कारन दीसत है। तब एक मनुष्य बुलाय के कह्यो, जो-तू मथुरा जा, ब्रज में मेरो भाई, पुत्र गयो है सो देखि आऊ कहाँ है ? कहा करत हैं ? कैसे हैं ? सब समाचार ले आऊ। उनकों मति जताईयो। मोकों सब समाचार आय कहेगो तो तोकों रुपैया दस देहूँगी। तब वह मनुष्य चल्यो। सो मथुरा में खबरि पाई, जो-गोवर्द्धन में आय दोऊन कों देखि आगरे आयो। सो कन्हैया शाल की माता सों कही, जो-तेरो बेटा तो बावरो ह्वै गयो है। सरीर की सुधि नाहीं है, तेरो भाई जंत्र मंत्र अनेक करत हैं, औषध करत हैं। तब माता कों बहोत दुःख भयो, जो-मैं याहिके लिये पुत्र

कों बाहिर नाहीं निकासती। अब मैं कहा करों ? पाछे वा मनुष्य सों कही, जो–एक डोली भाड़े करि लाओ, तुम मेरे संग चलो, तुमकों दस रुपैया और देऊंगी। मोकों मेरे पुत्र पास पहुंचाय देहु। तब वह डोली भाड़े करि लायो। तब वह माता हजार रुपैया के डोली पर चली। सो गोवर्द्धन आय, पुत्र के पास जाय, पुत्र कों हृदय सों लगाय रुदन कियो। पाछे भाई कों खीझि कें निकारि दियो। जो–तू मेरे पुत्र कों बावरो कियो। पाछे अनेक गुनी उह माता नें बुलाये, परन्तु कन्हैया शाल आछे न भये। तब गोवर्द्धन के सगरे ब्रजवासिन सों पूछ्यो, कोई ऐसो महापुरुष बतावो, जो–मेरे पुत्र कों आछो करें। तिनकी मैं दासी ह्वै कें रहूँ। ता समय सदू पांडे गोवर्द्धन आये हे, आन्योर तें। तिनसों डोकरी नें पूछ्यो। तब सदू पांडे ने कही, हमारे गाम में श्रीआचार्यजी पधारे हैं। सो कितने ब्रजवासिन को परचो दे सरन लिये हैं। गोवर्द्धन पर्वत तें श्रीगोवर्द्धननाथजी प्रगट किये हैं। सो श्रीआचार्यजी साक्षात भगवान हैं। उनके मन में आवे तो यह कितनीक बात है। परन्तु हमारो नाम श्रीआचार्यजी महाप्रभु के आगें मति लीजों। तब वह डोकरी नें कही। तुम मोकों अपने गाम में ले चलो, मैं बिनती करि लेंहुगी। तब सदू पांडे कहें, मेरे संग चलो। मैं अपुनें गाम जात हों। तब माता कन्हैया शाल कों डोली पर बैठारि आन्यौर आई। एक घर ब्रजवासी को ले तामें कन्हैया शाल कों बैठारि द्वार को तारो लगायो। पाछे आयकें श्रीआचार्यजी कों दंडवत करी। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो–हम जान्यो डोकरी जाके लिये तू आई है। तातें अपुनें बेटा कों यहाँ बेगि लाउ, हम आछो करि देंई ' बहोत बात मति करे। तब डोकरी कन्हैया शाल कों ले श्रीआचार्यजी के पास आई। तब श्रीआचार्यजी झारी में ते जल हाथ में ले वेद–मंत्र पढ़ि कन्हैया शाल के ऊपर छिरके। सो कन्हैया शाल सावधान ह्वै गये। तब श्रीआचार्यजी कों दंडवत करि बिनती कीनी, महाराज ! मैं तो बहोत सुखी हतो, ब्रजकी गोवर्द्धन की, लीला में मगन हतो। तहाँ ते मोको बाहिर आप क्यों निकासे ? आप तो अधिक दान देन अर्थ प्रगटे हो। सो यह कहा कियो ? तब श्रीआचार्यजी कहें, उछलित रस, ऊपर को प्रेम एक दिन बहि जाय। तातें तोकों सावधान कियो। भीतर स्थिर प्रेम होय, लीला रस को अनुभव होय, जगत में कोई जानें नाहीं। सो प्रेम को कबहूँ नास न होय। तब कन्हैया शाल ने बिनती करी, महाराज ! कृपा करि स्थिर प्रेम को दान करिये तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कन्हैया शाल कों न्हवाय, श्रीगोवर्द्धननाथजी के सन्मुख बैठाय नाम निवेदन कराये। साक्षात् श्रीठाकुरजी की लीला रस को अनुभव कराय दिये। पाछें कन्हैया शाल की माता को नाम सुनाये। सो श्रीआचार्यजी जितने छोटे ग्रन्थ किये हते सो सब कन्हैया शाल कों पढ़ाये। पाछे कन्हैया शाल सों कहें, अब तुम घर में जाय रस को अनुभव करो। अब

तुमकों संसार, लौकिक, वैदिक बाधा न करेगो। तब कन्हैया शाल की माता नें हजार रुपैया भेट धरि बिनती करी, जो–महाराज ! मोपर बड़ी कृपा करी। आप साक्षात् पुरुषोत्तम हो। तुम बिना मेरे पुत्र कों कौन आछो करे ? तब श्रीआचार्यजी कहे, अब तू पुत्र कों लेके अपुने घर जा। तब कन्हैया शाल की माता नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज ! एक बार आगरे मेरे घर पधारो तो आपकी बहोत भेट हैं। सो अङ्गीकार करि गृह पावन करिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, हम अडेल पधारेंगे तब तुम्हारे घर आवेंगे। अब तुम घर जाऊ। तब कन्हैया शाल और डोकरी दंडवत् करि, श्रीआचार्यजी सों बिदा होय आगरे आये। सो कन्हैया शाल तो लीला में मगन रहें। और डोकरी सगरो काम घर को करें। पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभु आगरे पधारे तब कन्हैया शाल के घर उतरें। सगरे ग्रंथ के भाव, लीला के भाव, पुष्टिमार्ग के सिद्धान्त कन्हैया शाल के हृदय में स्थापन किये। पाँच रात्रि रहे। तब डोकरी नें बहुत भेट कियो, सो लेकें अड़ेल पधारे।

वार्ता – प्रसंग १ – सो श्रीगुसांईजी श्रीअक्काजी सों पूछ्यो, जो–मार्ग की वार्ता तो दामोदरदास द्वारा जानें। परन्तु श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ कहाँ मिलें ? तब श्रीअक्काजी नें कही, आगरे में कन्हैया शाल क्षत्री के पास ग्रन्थ हैं, तहाँ ते लेहु तब श्रीगुसांईजी कन्हैयाशाल क्षत्री के घर पधारें। तब कन्हैया शाल परम प्रीति सों श्रीगुसांईजी कों पधराये। पाछे श्रीगुसांईजी कन्हैया शाल पास श्रीआचार्यजी के सारे ग्रन्थ पढ़े। पाछे श्रीगुसांईजी ग्रन्थन की टीका करि कन्हैया शाल कों कृपा करि पढ़ाये ! पाछे श्रीगुसांईजी आपुनें ग्रन्थ, दान लीला, हुल्लास, ब्रतचर्या आदि रहस्य ग्रन्थ किये हते, सो कन्हैया शाल कों पढ़ाये। और कन्हैया शाल कों श्रीगुसांईजी दंडवत न करन देते। काहेतें, तुम्हारे हृदय में श्रीआचार्यजी विराजत हैं। या प्रकार श्रीआचार्यजी, श्रीगुसांईजी की अत्यंत कृपातें कन्हैया शाल संयोग रस विप्रयोग रस दोऊ लीला के रस में मग्न रहते। पाछें श्रीगुसांईजी अड़ेल पधारे।

भावप्रकाश– पाछे कन्हैया शाल की माता की देह छूटी। तब कन्हैया शाल कहें, यह प्रतिबंध मिट्यो। छिन छिन में खानपान को प्रतिबंध करती। तबतें कन्हैया शाल कों सरीर की सुधि होय तब खान पान करें नाहीं तो वैसे ही बैठे रहें।

वार्ता–प्रसंग २ – पाछें एक समय श्रीगुसांईजी अड़ेल तें आगरे पधारे सो कन्हैया शाल के घर उतरे। तब कन्हैया शाल सों कहें हम द्वारिका पधारेंगे। तब कन्हैया शाल नें कही, मैं हू पाछें ते आय कें आपके दरसन करूंगो। तब श्रीगुसांईजी कहें, तुम कौन भांति आवोगे ? वैष्णव बिना तो और सों बोलत नाहीं, मार्ग दूरि हैं। तब कन्हैया शाल नें कही, मेरे और सों काहे कों बोलनो परेगो ? मैं आपके पाछे आऊंगो। तब श्रीगुसांईजी कहें। तुम्हें कृपा को बल है। जो–चाहो सो करो। पाछे श्रीआचार्यजी के ग्रन्थन की वार्ता कन्हैया शाल पास दोय दिन श्रीगुसांईजी करें। पाछें आप तो द्वारिका पधारे। सो एक दिन कन्हैया शाल के मनमें आई, जो–द्वारिका जैये, श्रीगुसांईजी सों मिलियें। सो निकसि चले, सो मार्ग की ठीक नाहीं। काहू सों बोले नाहीं। सो तीनि दिन चले गये। सो एक बन में जाय निकसें। तहाँ सघन बन, जल नाहीं। तब विचारे, जो–देह छूटेगी। तब श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ का एक रूख के नीचें बेठकें पाठ करन लागें। इतने में एक ग्वारिया आयकें कह्यो, जो–यहाँ तू क्यों बैठ्यो है। यहाँ स्यांप, नाहर को डर है। तब कन्हैया शाल नें कही, मैं श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को सेवक हों। सो स्यांप, नाहर तो मेरे पास कोई आवें नाहीं। तब ग्वारिया नें कही तलाब तेरे पाछें हैं, जल तो पी। तब पीछे देखे तो जल भरयो है। सो जल पीवन लागे। तब दूसरो ग्वारिया महाप्रसाद श्रीनाथजी को सखड़ी, अनसखड़ी ले आय कह्यो, यह महाप्रसाद तू ले। तब

कन्हैयाशाल नें कही, महाप्रसाद कहां को है ? मैं तो घर को लेहूं के श्रीगुसांईजी के यहाँ को लेहुँ। और को महाप्रसाद तो लेत नाहीं। तब ग्वारिया नें कही, यह श्रीनाथजी को महाप्रसाद है। तू कहा श्रीरणछोड़जी के ऊपर हत्या देवें को निकस्यो है ? इतनो हठ करत है ? तब महाप्रसाद देखें, सो श्रीनाथजी को जानि महाप्रसाद कों दंडवत करि, लियो। पाछे तीसरो ग्वारिया आय कह्यो यहाँ आय बैठ्यो कहा करत हैं ? श्रीरणछोड़जी के दरसन कों जा। तब पाछें फिरिकें देखे तो श्रीरणछोड़जी को मंदिर दीसत है। तब कन्हैया शाल नें कही उहाँ श्रीगुसांईजी पधारे होंहि तो जाँऊ। तब ग्वारिया नें कही, मोकों श्रीगुसांईजी नें पठायो है, तोकों संदेसो कहन कों। सो तू बेगि जा। तब कन्हैया शाल श्रीरणछोड़जी के मंदिर में गये, श्रीगुसांईजी पास। तब श्रीगुसांईजी आप कहें, कन्हैया शाल आये। मार्ग में काहू से बोले कें नाहीं ? तब कन्हैया शाल कहें महाराज ! मेरे और सों बोलिवे को कहा काम है। तब श्रीगुसांईजी कहें, तुम तीनि ग्वारियान सों बोले, (ताते) ऐसें क्यों कहत हो ? तब कन्हैया शाल नें कही, महाराज ! मेरी बानी आप बिना और काहू सों निकसें ही नाहीं। तीनों ग्वारियान को स्वरूप, आप बिना मोकों बन में सखड़ी अनसखड़ी महाप्रसाद कौन धरे ? और के हाथ को मैं लेऊँ कैसें ? यह सब आप की कृपा है। तब श्रीगुसांईजी कन्हैया शाल को हाथ पकरि कें श्रीरणछोड़जी के दरसन कराये। सो कन्हैया शाल कों श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन भये। तब कन्हैया शाल सों श्रीगुसांईजी कहें। जो–श्रीरणछोड़जी के दरसन किये।

तब कन्हैया शाल नें कही, आपकी कृपा तें श्रीगोवर्द्धनधर नैनन लागि रहे हैं। सो श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन भये।

भावप्रकाश – यामें यह जताये, जो–कन्हैया शाल कों ब्रजलीला बिना और में मन जाय ही नाहीं।

तब श्रीगुसांईजी कन्हैया शाल कों अपने डेरा पर लाय कहें, अब तुम हमारे संग आगरे चलियो। तब कन्हैया शाल ने कही, महाराज ! आपतो दैवी जीवन कों अंगीकार करन कों पधारे हो, सो आपुकों ढील लागेगी। और मोकों अकेले बहोत सुहात हैं। तातें आपकी कृपा तें आगरे जाय पहोंचोंगो। तब श्रीगुसांईजी कहें, जो–तुमकों श्रीआचार्यजी की कृपा को बल है। जो करोगे सोई तुमकों ठीक है। पाछे कन्हैया शाल श्रीगुसांईजी सों आज्ञा मांगि आगरे को चले। सो भगवदावेस में दोय दिन चले गये। सो आगें झाड़ी सघन आई, तहां मार्ग न पावे। तहां एक रुख के नीचे बैठि गये। तहाँ श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ श्रीगुसांईजी कृत टीका तथा रहस्य ग्रंथ देखन लागे। तब एक ग्वारिया आय कह्यो तू यहां क्यों बैठ्यो है। श्रीयमुनाजी में स्नान करनो होंय, जलपान करनो होय, तो करिकें अपुने घर जा। तब कन्हैया शाल की दृष्टि पोथी पर ही, सो ऊँची दृष्टि करिकें देखे तो श्रीयमुनाजी और आगरो सहेर है। तब श्रीयमुनाजी में स्नान करि, जलपान करि, पाठ पूजन करि घर आये। पाछे श्रीगुसांईजी द्वारिका तें कछुक दिनमें आप आगरे पधारे। तब कन्हैया शाल सों पूछे, तु आगरे कै दिन में और कैसे आये ? तब कन्हैया शाल ने कही, मोकों तो खबरि नाहीं। आपही मोकों द्वारिका ले गये और आपही आगरे पहुँचाये, इतनो मैं जानत हों। तब

श्रीगुसांईजी प्रसन्न होयकें तीन दिन कन्हैयाशाल के घर रहे। भगवद् वार्ता करि बहोत प्रसन्न भये। पाछें श्रीगुसांईजी अड़ेल पधारे। कन्हैया शाल कों लौकिक वैदिक जब सरीर की सुधि होय तब करे। परंतु पाछें कछू सुधि न रहें। लीला रस में मगन रहते। सो कन्हैयाशाल की ऐसी लोक वेद विरुद्ध बात हैं। सो कही न जाय।

भावप्रकाश – काहेतें, कहिये जो लोगन कों श्रीठाकुरजी की लीला के भाव की खबरि नाहीं है, तातें उनको विश्वास न होय। तातें प्रकास नाहीं किये। प्रेम की रीति अटपटी हैं। सो सूरदासजी नें गायो है –

राग सारंग – ब्रज लीला कोऊ पार न पायो।
ब्रह्मा, शेष, महेस, नारायण मति ही भुलायो॥१॥
वेद स्मृति सुनि हरि ही मिलन बहु मारग बतायो।
गोपीजन निज मारग "सुर" न्यारो दिखरायो॥२॥

तातें कन्हैया शाल ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हे। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७०॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, नरहरदास गोडिया ब्राह्मण बंगाला के, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – सो नरहरदास बंगाला में प्रगटे। लीला में ये कुमारिका के जूथ में हैं। तहां इनको नाम 'सुगंधरा' है। सो पूर्व में जब बड़े भये तब नरहरदास की प्रीति श्रीजगन्नाथरायजी में लगी। सो एक समय वर्ष दिन जगन्नाथरायजी में लगे रहे, पाछे घर गये। तब पिताने कही, बेटा! मैं तो अब वृद्ध भयो। तू जिजमान पास जात नाहीं। मेरे मरे पाछें कहांते खायगो? तू बेर बेर श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन कों जात है। कछू जगन्नाथरायजी देत हैं? तब नरहरदास नें कही, जगन्नाथरायजी सगरे जगत कों देत हैं, सो मोहूँ कों देत हैं। आजु पाछें तू मोकों कछू मति दीजो, देखों जगन्नाथरायजी मेरो पालन करत हैं के नाहीं। तब नरहरदास के पिता ने कही, जो–जगन्नाथरायजी सबकों देत हैं तो भेट पूजा क्यों लेत हैं? सब लेवे वारे हैं। देवे

वारो कोई ठाकुर नाहीं है। जब मैं तोकों खरची देत हों, तब तू जाय श्रीजगन्नाथरायजी को दरसन करत है। जो मैं न देऊँगो तो भीख माँगेगो। तब नरहरदास कों बहोत क्रोध चढ्यो। सो पिता सों कही, तू भगवान को निंदक है। तातें आजु पाछें तेरो कछू लेहुंगो नाहीं। और तेरे घर में न रहुंगो। तेरो मुख देखनो उचित नाहीं है। तू ऐसी बात कह्यो, जो–म्लेच्छ हू ऐसी बात न कहें। यह कहि घरसों उठि चले। तब पिता नें बहोत समुझायो, बिनती हू करी, जो–मैं चूक्यो। परन्तु नरहरदास दैवी जीव हैं। सो श्रीठाकुरजी की निन्दा सुनी न गई। सो जगन्नाथरायजी के दरसन आय करे। परन्तु कछू पास नाहीं। तब समुद्र के तीर जाय बैठे। मनमें विचार्यो, जो–अब काहुसों मांगनों नाहीं। माँगि कें निर्वाह करूँगो। तो मेरो पिता कबहूँ आवे, तथा घरही में सुने तो कहेगो, जो–मैं कही सो भई। तातें जो–जगन्नाथरायजी देयंगे तो खाऊँगो। नाहीं तो होनहार होयगी सो सही। पाछे रात्रि भई तब श्रीजगन्नाथरायजी महाप्रसाद लें एक बालक वर्ष सोरह को भेख करि आय कहें, ब्राह्मण ! महाप्रसाद ले। तब नरहरदास ने कही, मैं महाप्रसाद की अवज्ञा कैसें करूँ, दे जाऊ। परन्तु मोकों तो श्रीजगन्नाथरायजी देंहीगे तब ही लेहुंगो। यह मन में निर्द्धार कियो हैं। तब (उन) कहे, श्रीजगन्नाथरायजी देत हैं। और कौन देत हैं ? उनकी इच्छा बिना कौन तोकों यहाँ देन आवेगो ? तब प्रसन्न होय महाप्रसाद लियो। आप तो पधारे। पाछे नरहरदास सोयो। तब श्रीजगन्नाथरायजी ने कही, तू प्रातःकाल श्रीआचार्यजी के पास जाय सेवक होउ। सो तेरो सगरो मनोरथ पूर्ण होयगो। तब नरहरदास ने कही, मैं तो श्रीआचार्यजी कों पहिचानत नाहीं, कहां जाऊँ ? तब जगन्नाथरायजी कहें, श्रीवल्लभाचार्यजी प्रसिद्ध हैं। जासों पूछेगो सोई तोकों बतावेगो। सो मेरो स्वरूप श्रीआचार्यजी कों जानियो। तब प्रातःकाल नरहरदास उठिकें पूछत पूछत जाय श्रीआचार्यजी पास दंडवत् किये। तब श्रीआचार्यजी कहें आऊ, नरहरदास ! तोकों ऐसी ही टेक चहिये। जो–पिता कों तिरस्कार करि आयो। आगें प्रहलादजी हूँ पिता कों कह्यो नाहीं किये। ताते तेरो नाम अब नरहरदास ठीक भयो परन्तु तू पुष्टिमार्गीय दैवी जीव परम उत्तम हैं। तब नरहरदास जानें, जो–ये साक्षात् ईश्वर हैं। मेरे पिता की सगरी बात कहि दीनी। तब नरहरदास नें बिनती करी, जो–महाराज ! मोकों सेवक करिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो–अबही तेरो चित्त द्रव्य में है। तातें भगवद् नाम अब ही तोकों फलेगो नाहीं। तातें तू जायके समुद्र के तीर बैठि, समुद्र की लहरि में तोकों द्रव्य मिलेगो। ता द्रव्य तें जो मनोरथ श्रीजगन्नाथरायजी को विचार्यो है सो पूर्ण करो। पाछे सरनि लेंयगे, तू हमारो है। तातें अब तोकों संसार दुःख बाधा न करेगो। तब नरहरदास ने कही, महाराज ! द्रव्य में मेरो मन बहोत है, सो जस करिवे कों। जो–मन मानयो खरचूँ पिता हूँ सुनिकें लाज पावें। जो जगन्नाथरायजी ऐसे

ठाकुर हैं। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो–जा, समुद्र किनारें तेरो मनोरथ पूरन होयगो। तब नरहरदास जहाँ कोई न हतो। तहाँ जाय समुद्र के किनारे बैठें। लहरि में सोना, रूपा, हीरा, मोती आदि नरहरदास के आगें ढेर भयो। सो पोट बाँधि मन में प्रसन्न होय श्रीआचार्यजी पास आय, दिखाय कह्यो, जो–महाराज ! आपुकी कृपा तें द्रव्य तो बहोत मिलौ। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो–जाऊ, श्रीजगन्नाथरायजी को मनोरथ करो। तब नरहरदास नें कही, महाराज ! मैं द्रव्य ले जाय खरचों तो, मोकों गरीब सब जानत हैं, सो राजा दंड दे तो मैं कहा करूँ ? तब श्रीआचार्यजी कहें, हमारो नाम लीजो, कोई न दंडेगो। तब नरहरदास नें कही, महाराज ! यामें तें कछू आप राखो। तब श्रीआचार्यजी कहें, यह श्रीजगन्नाथरायजी को द्रव्य है, सो श्रीजगन्नाथरायजी को मनोरथ करो। यह हमारे काम न आवे। हमारे तो जो कोई हमारो सेवक होय, खरी मजूरी को द्रव्य होय सो हम अंगीकार करत हैं। तब नरहरदास एक जगा ले, जहाँ सुनार, दरजी, बजाज बुलायें। अनेक बागा, वस्त्र आभूषन, रसोई की सामग्री श्रीजगन्नाथरायजी कों कियो। गाम में कोई भूखो न रहें। पंडान कों दीनों। सो सगरे चक्रत ह्वे गये। जो आगे तो नरहरदास गरीब हतो। अब ऐसो द्रव्य कहां ते ले आयो ? जो पूछे तिनसों नरहरदास कहें, श्रीआचार्यजी ने दियो हैं, मनोरथ करन कों। पाछें राजा सुनिके आयो, सो कह्यो, जो–तें इतनो द्रव्य कहां पायो ? तब नरहरदास नें कही, श्रीआचार्यजी मनोरथ करन कों दिये हैं। पाछे राजा श्रीआचार्यजी के पास आय पूछ्यो। तब श्रीआचार्यजी नें कही जो हम कह्यो हैं। जो श्रीठाकुरजी को मनोरथ करो। सो राजा श्रीआचार्यजी के भेद की बात तो समुझयो नाहीं। यह जान्यो जो आपु दिये होयेंगे। पाछे राजा घर गयो। पाछें पिता ने सुनी, जो–नरहरदास हजारन के मनोरथ करत हैं। तब नरहरदास को पिता नरहरदास के पास आयो। तब नरहरदास पिता की ओर पीठि करि कहे, जो–तू श्रीठाकुरजी को निंदक है, तातें तेरो मुख न देखोंगो। तू देखि, श्रीजगन्नाथरायजी नें कितनों द्रव्य मोकों दियो ? जो जाकों दृढ़ विश्वास ठाकुर पर हैं ताको सब कछू सिद्धि हैं। जाकों श्रीठाकुरजी में विश्वास नाहीं हैं। सो याहू जन्म में दुःखी है, और परलोक में भ्रष्ट होय। परन्तु तू पिता है, श्रीजगन्नाथरायजी की न्योछावरि तू हूँ कछू ले जा। सो हजार रुपैया को माल दे कहें, आजु पाछें मोकों मुख मति दिखावो। तब पिता द्रव्य लेकें घर गयो। पाछें कछुक दिन में द्रव्य हूँ निघट्यो। और मन को मनोरथ हू पूर्ण करि नरहरदास श्रीआचार्यजी के पास आय दंडोत करि, बिनती करी, जो–महाराज ! मोकों कृपा करिकें सरनि लीजिये। अब मेरो मन काहू बात में नाहीं है। आपकी सरनि होन में है। तब श्रीआचार्यजी कहें, जा, स्नान करि आऊ। तब नरहरदास न्हाय कें श्रीआचार्यजी पास आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय निवेदन कराये। तब नरहरदास के हृदय

में पुष्टिमार्ग को ज्ञान भयो। तब श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि बिनती किये, महाराज! मैं बहोत बुरो काम कियो हैं। जो श्रीठाकुरजी को श्रम कराय द्रव्य लें अपुनो जस प्रगट कियो हैं। मैं महादुष्ट, सो मेरो जस कहा, उलटो मन होय, परलोक बिगरें। तातें मोकों धिक्कार हैं। ठाकुर को द्रव्य ले ठाकुर कों कस्यो। तामें बडो स्वार्थ, अज्ञान करिकें मान्यों। अब मैं आपकी सरनि हों मेरो परलोक सुधरें, श्रीठाकुरजी कृपा करें, सो प्रकार मोकों कहो। तब नरहरदास सों श्रीआचार्यजी कहें। तुम श्रीठाकुरजी की सेवा करो। तब नरहरदास नें बिनती करी, महाराज! मोकों श्रीठाकुरजी पधराय दीजें। तब श्रीआचार्यजी कहें। तुम समुद्र के किनारे फेरि जाऊ। तहाँ भगवद् स्वरूप तुमकों मिलेंगे सो ले आवो। तब नरहरदास फेरि वाही ठिकानें समुद्र पास जाय बैठे। सो समुद्र की लहरि में दोऊ जुगल स्वरूप आयें। नरहरदास के आगें लहरि धरि चली गई। तब नरहरदास जुगल स्वरूप कों ले श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पास आये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु जुगल स्वरूप कों पञ्चामृत सों स्नान कराय पाछें श्रीमदनमोहनजी नाम धरि नरहरदास के माथे पधराये। तब नरहरदास नें श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी, महाराज! मेरे घरमें पिता बहिर्मुख हैं, सो मोपें, घर गयो न जाय। और यहाँ मेरो लौकिक में जस भयो। सो यहाँ माँगिकें सेवा करी न जाय सो मेरे जिजमान बङ्गाली कासी में बहोत हैं। तहाँ आप कहो तो जायकें भगवद् सेवा करूँ। तब श्रीआचार्यजी कहें, जहाँ भगवद् सेवा भली भाँति सों बने बाकों वही देस उत्तम हैं। और हम हूँ कों यहाँ बहोत दिन भये हैं। तातें हम दक्षिण होय कासी आवेंगे। तू सूधो कासी कों जा। पाछे श्रीआचार्यजी तो दक्षिण पधारे। और नरहरदास कासी में आय श्रीमदनमोहनजी की सेवा मन लगायकें करन लागें। सो कछुक दिन में श्रीमदनमोहनजी सानुभावता जनावन लागें।

वार्ता-प्रसंग १- सो नरहरदास ने श्रीमदनमोहनजी की सेवा बहोत वर्ष लों भली भांतिसों करी। पाछें सरीर थक्यो वृद्ध भये। सो सेवा ह्वे न सकें। तब श्रीमदनमोहनजी कों पधरायकें श्रीगोकुल आये, श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि श्रीमदनमोहनजी कों श्रीगुसांईजी के घर पधराये। पाछें श्रीगुसांईजी नें गोकुलचन्द्रमाजी के पास बैठाये। सो श्रीगोकुलचंद्रमाजी के पास जुदे सिंघासन पर बैठे हैं। सो नरहरदास पाछें ब्रज में जन्म भरि भावना करि मानसी सेवा सों निर्वाह किये। सो नरहरदास ऐसे

श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हे। इनकी वार्ता कहाँ ताँई कहियें। वार्ता ॥७१॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, नरहर सन्यासी गौड़ ब्राह्मण, आगरे तें गुजरात जाय कें इनको पिता रह्यो, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–नरहर सन्यासी लीला में श्रुतिरूपा हैं, मनसुखा गोप की बेटी, इनको नाम लीला में ''गुलाबी'' और गुलाबी की एक सखी हती। तिनको नाम ''पाँडरि''। सो वेणी कोठारी गुजरात में भये। सो एक समय आगरे में दुष्काल भयो तब नरहर सन्यासी को पिता आगरो छोड़ि गुजरात कुटुम्ब सहित जाय रह्यों। तहां नरहर सन्यासी जन्में। और वर्ष पन्द्रह के भये तब नरहर कों एक सन्यासी को संग भयो। सो नरहर, सन्यासी भये। सो वरष दिन लों तपस्या करी। उष्णकाल में पञ्चाग्नि तापें। वरषायत में जलकी धारा माथे लिये। सो सीतकाल में प्रातःकाल जलमें बैठते। सो नरहर सन्यासी की मानता गुजरात में बहोत भई। सेवक हू बहोत लोगन कों किये। तब वेणी कोठारी हू नरहर सन्यासी को सेवक भयो। सो नरहर सन्यासी स्त्री कूं देखें तब मुख पर कपरा डारि लेय। ऐसी त्याग दसा में रहें। सो मही नदी के किनारे एकान्त में, जहाँ पास गाम नाहीं, तहाँ स्थल बनाय कें रहे। तहाँ तें कोस दोय पर गाम। तहां एक तेली के सन्तान न हती। सो उह तेली की स्त्री नें विचारी, जो–नरहर सन्यासी बड़े महापुरुष हैं। वह कछू औषध देइ तो मेरे पुत्र होय। परन्तु वे काहू को मुख देखत नाहीं। पाछें एक दिन सीरा पूरी करि संध्या समय उह तेलिन आई। तब नरहर सन्यासी के पास आई। तब तेलिन नें अपने मुख पर कपरा डारि नरहर सन्यासी कों पुकार्यो। तब नरहर सन्यासी पास आय पूछें, तू कौन है ? तब इन कही मैं तेलिन हूँ। सो तुम्हारे लिये सीरा पूरी लाई हों। तुम स्त्री को मुख नाहीं देखत तातें मैं अपने मुख पर कपरा डार्यो। तब नरहर सन्यासी ने कही, मैं हूँ द्वै दिन को भूखो हों। परन्तु तेरी प्रीति बड़ी है, जो–दोय कोस तें मेरे लिये ले आई। तब नरहर सन्यासी लियो। तब तेलिन प्रसन्न भई। जो ये लिये तो सही। पाछे दूसरे दिन फेरि संध्या समय सीरा पूरी लाई। तब नरहर सन्यासी ने कही अब तो यहां कोई है नाहीं, तातें तू मुख खोलि। तब उह तेलिन नें मुख खोल्यो। सीरा पूरी दे आई। पाछें नित्य संध्या समय जाय। ऐसे करत दिन दस बारह भये। सो एक दिन सीरा पूरी लेकें नरहर सन्यासी के कोठा भीतर गई इतने में गुजरात को हाकिम नरहर सन्यासी की बड़ाई सुनिकें मिलिवे कों आयो। तब वह तेलिन नरहर सन्यासी के घरमें छिप रही। सो उह हाकिम रात्रि कों नरहर सन्यासी के पास रह्यो। सो सवेरो होत ही वह तेली

नरहर सन्यासी पास आय कह्यो, मेरी बहू कालिह सांझ की तुमकों सीरा पूरी देन आई, सो फिर घर नाहीं आई। रात्रि कों तुम क्यों राखे ? तुम तो स्त्री को मुख नाहीं देखत। तब नरहर सन्यासी ने कही यहां तो नाहीं आई। तब तेली नें कही, तुम्हारे घर में निकसे तो ! पाछे तेली नें नरहर सन्यासी को घर ढूँढ्यो। तब भीतर तें पकरि कें काढी। सो देखिकें हाकिम बहोत कोप्यो। तब नरहर सन्यासी को घर गिराय कह्यो, यहां तें और देस निकसि जा। तब नरहर सन्यासी ब्रज में आये। मनमें कहें स्त्री को संग ऐसोई है, बुरो है। जो संग होतो तो परलोक बिगरतो। प्रभु नें मोकों दंड दिवायो। यह बिचारी ब्रज में फिरें। पाछें बेनी कोठारी ने सुनी, जो-नरहर सन्यासी ब्रज में हैं। तब मनमें बिचारी सो बहोत दिन भये हैं। मेरे गुरु नरहर सन्यासी हैं, सो ब्रज में ह्वे आऊँ। नरहर सन्यासी सों मिलि आऊँ। तब बेनी कोठारी गुजरात तें ब्रज में आये। सो वृन्दावन में नरहर सन्यासी कों मिले। वार्ता करत हते। सो एक दिन वृन्दावन श्रीआचार्यजी पधारे। तब नरहर सन्यासी कों दरसन भये। तब नरहर सन्यासी ने बेनी कोठारी सों कही, देखो ! कैसे तेजस्वी पुरुष आये हैं ? तब बेनी कोठारी ने कही, इनको संग कछुक दिन करिये। तब इनके स्वरूप की ठीक परे। तब नरहर सन्यासी कही, चलो, दोऊ जने इनको संग करिये। या प्रकार दोऊ बतराय श्रीआचार्यजी पास आय दंडोत करि बिनती किये, जो-महाराज ! हमारो मन आपको संग चारि रात्रि करवे को है। जो आप प्रसन्न होय आज्ञा देऊ तो हम संग रहें। तब श्रीआचार्यजी कहें, हम द्वारिका कों जाइवे को विचार किये हैं, तुम्हारो मन होय तो तुमहूँ चलो। तब नरहर सन्यासी और बेनी कोठारी हू संग चले। तब मार्ग में नरहर सन्यासी नें श्रीआचार्यजी सों प्रश्न कियो, जो-हमारे मनमें एक संदेह है। जो-महाराज ! सन्यास धर्म बड़ो कै वैष्णव धर्म बड़ो ? तब श्रीआचार्यजी कहें, इनको प्रकार सब न्यारो है। सन्यास धर्म कलियुग में सिद्ध होनो कठिन है। सन्यास लिये पाछे जहाँ तक जीवे तहाँ तांई नारायण बिना कहूँ चित्त जाय, तब सगरे जन्म को सन्यास धर्म नास होय। और भक्तिमार्ग में, दुःसंगतें भ्रष्ट हू होय जाय, परन्तु भक्ति-बीज जाय नाहीं। कबहू सत्संग पाय फेरि बढ़ें। सो श्रीभागवत में कहे हैं। जडभरत कों मृग के संग तें तीन जन्म को अन्तराय भयो। पाछें कृतार्थ भयो। चित्रकेतु पार्वती के शाप करि वृत्रासुर भयो, असुर जोनि में, तोहू भक्ति बढी। इतनो तारतम्य है। और या कलियुग में भगवत नाम ही तें चाण्डाल पर्यंत पवित्र होय. उद्धार होय। सो तुमही मनमें विचारो। तें तपस्या हू करी, सन्यास के धर्म हू साध्यो। परन्तु कछु सिद्धि भई ? तब नरहर सन्यासी दंडवत करि बिनती करी, महाराज ! अब जा प्रकार उद्धार होंय सो करो। मैं सगरे धर्म में दुःख ही पायो। परन्तु मन निर्मल न भयो। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम सन्यासी हो, जगत में पूज्य हो। सेवक हूँ करत हों। सो सेवक होयकें तो दास होनों परै। सो तुम स्वामी पद में हो, दास भाव कैसे होयगो ?

तातें स्वामी पद कों छोडो तब सरनि होऊ। तब वैष्णव धर्म बढ़े। तब नरहर सन्यासी नें बिनती करी, महाराज ! मैं अब स्वामी पद छोड्यो। अब तो मैं आपको दास हों। जो आज्ञा करो सोई मैं करों। तब श्रीआचार्यजी कहें। यह डाढी मुंडाय कें भगवा वस्त्र पलटि ऊजरे वस्त्र पहिर के आवो, तो सेवक होऊ। तब नरहर सन्यासी जटा डाढ़ी मुंडाय नये ऊजरे वस्त्र पहिर कें आये। तब श्रीआचार्यजी कहें, आजु व्रत करो। सगरी इन्द्री सुद्ध होय। काल्हि तुमकों नाम सुनावेंगे। तब नरहर सन्यासी व्रत किये। पाछें दूसरे दिन श्रीआचार्यजी नाम सुनाय निवेदन करायें।

वार्ता-प्रसंग १ - सो नरहर सन्यासीने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों विनती करी महाराज ! वेनी कोठारी कों नाम सुनाइये। तब वेनी कोठारी कों न्हवाय के नाम निवेदन कराये। तब नरहर सन्यासीने श्रीआचार्यजी सों कही, महाराज ! मोकों ब्रत कराये, वेनी कोठारी कों ब्रत नाहीं कराये, ताको कारन कहा? तब श्रीआचार्यजी कहें, तुम स्वामी पद में हते, और अनेक कर्म धर्म किये। सो तुम्हारो मन अनेक ठिकाने फैलि गयो। और यह गृहस्थाश्रम को दुःख जाने, और धर्म कर्म नाहीं जानें। तातें याकों व्रत नाहीं कराये।

भावप्रकाश-यामें यह जताये, जो-अन्य मारग में परिकें बहोत शास्त्र पढ़ें, बहोत जोग साधन करें। वाकों भक्ति बेगि न होय। और सूधे निष्कपट कों भक्ति बेगि सत्संग तें होय।

तब नरहर सन्यासी बड़ो भगवदीय कृपापात्र भयो। और वेनी कोठारी हू बड़े भगवदीय भये। सदा मानसी में मग्न रहें। पाछे द्वारिका होय श्रीआचार्यजी तो पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे। वेनी कोठारी द्वारिका में नरहरदास पास कछुक दिन रहि, पाछे गुजरात अपने घर आये। नरहर सन्यासी सदा फिर्‌यो करते।

वार्ता - प्रसंग २ - सो एक समय नरहर सन्यासी बद्रिकाश्रम फिरते फिरते आये। तहां श्रीआचार्यजी महाप्रभु

पधारे। सो नरहर सन्यासी कों दरसन भये। तब नरहर सन्यासी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों विनती कियो, महाराज ! मैं पहिलें सन्यास ग्रहण कियो हतो। पाछें आपकी कृपातें भक्तिमारग में आयो। सो सन्यास को प्रकार है, सो तो मैं जानत हों और भक्तिमारग को कहा प्रकार हे सो मैं जानत नाहीं। सो मोकों कृपा करि कहिये। तब श्रीआचार्यजी कहें। तोसों भक्तिमारग के सन्यास को प्रकार कहत हों।

तब श्रीआचार्यजी 'सन्यास निर्णय' ग्रंथ करि नरहर सन्यासी कों पढ़ाय भाव कहि सुनाये। तब नरहर सन्यासी के हृदय में पुष्टिमारग को सिद्धान्त स्थित भयो। तब श्रीठाकुरजी की लीला को अनुभव भयो सो मग्न होय गये। पाछें श्रीआचार्यजी आगें पधारे। नरहर संयासी स्वरूपानंद में मग्न होय फिरिवो करते। सो नरहर सन्यासी ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हे। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७२॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, सदू पांडे, सदू पांडे की बहू भवानी, और सदू पांडे की बेटी नरो, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–सो ये श्रीगिरिराज के नीचे आन्योर में रहते। लीला में सदू पांडे वृषभानजी के भाई 'चन्द्रभान' गोप, नरो और भवानी 'रामदे' 'श्यामदे' जसोदाजी की ननद हैं, तिनको प्रागट्य हैं।

वार्ता – प्रसंग १ – श्रीआचार्यजी महाप्रभु जब पृथ्वी परिक्रमा करत दक्षिण झारखंड में पधारे। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी झारखंड में श्रीआचार्यजी कों दरसन देकें कहैं, जो–तुम मेरी सेवा जगत में प्रगट करो तो दैवी जीव बेगि सरनि आवें। हम ब्रज में गोवर्द्धन पर्वत पर तीनि दमन सों प्रगटे हैं। देव दमन सों मैं

हों। मेरे आसपास दोंद दमन हैं।

भावप्रकाश–ताको भाव कहत हैं। नागदमन तो श्रीठाकुरजी के वाम भाग हैं। और इन्द्र दमन सो दक्षिण भाग हैं। सो वाम भाग नागदमन श्रीयमुनाजी के स्वरूप तें। काहे तें, काल सर्प की दमन कर्ता। यमदंड, कालदंड श्रीयमुना पान तें न होय। और श्रीठाकुरजी की प्रिया हैं नित्यसिद्धा। तातें वाम भाग बिराजि सेवा करत हैं। और दक्षिण दिस इन्द्रदमन हैं। सो गिरिराजजी स्वरूप करि सेवा में तत्पर हैं। काहे तें, हरिदासराय हैं। भक्तन के सिरोमनि हैं। सो इन्द्र कोप के समय प्रभु की इच्छा जानि आपुहि छत्राकार होय सगरे ब्रज की रक्षा कियें। और इन्द्र कों दंड दिये और जस प्रभु कों प्रगट किये। सो यातें, भगवदी अपुनों जस प्रगट नाहीं करत हैं। तातें श्रीठाकुरजी को जस प्रगट कियो। और मध्य में देवदमन, सो यातें जितने औतार हैं श्री जगन्नाथदेव, नारायणदेव आदि, तिनकें मान मर्दन कर्ता श्रीगोवर्द्धनधर हैं। तातें श्रीभागवत में कहें–''एते चांशकला पुंसः कृष्णस्तुभगवानस्वयं'' तातें देवदमन मेरो नाम हैं। सो मोकों प्रगट करो।

तब श्रीआचार्यजी दक्षिण के झारखंड सों पृथ्वी परिक्रमा छोड़ि ब्रज पधारे। सो श्रीगोवर्द्धन आये। ता समय पांच सेवक संग श्रीआचार्यजी के हैं। दामोदरदास हरसानी, कृष्णदास मेघन, बड़े रामदास, माधवदास और नारायणदास। सो संध्या समय श्रीआचार्यजी सदू पांडे के द्वार चोंतरा पर तहां बिराजे। तब सदू आय दंडोत करि कहें, स्वामी कछू खाऊगे ? तब कृष्णदास मेघन ने कही, ये श्रीआचार्यजी काहू के घर को लेत नाहीं। आप सेवक करत हैं, सो सेवक होय, जो देत हैं, तिनको लेत हैं। या प्रकार वार्ता करत हते। इतने में पर्वत पर तें श्रीगोवर्द्धनधर बोले। सदू पांडे की बेटी सों कहें, नरो! मेरे नेग को दूध लाऊ। तब नरो ने कही, अहो, वारी जाऊँ लाल! ल्याई, मेरे पाहुँनें आये हैं। तिनकों समाधान करि लेऊँ तो दूध लाऊं। तब श्रीगोवर्द्धनधर कहें। पाहुनें आये तो भले आये परन्तु मोकों अवार होति हैं। तब नरो दूध को कटोरा भरि पर्वत पर जाय

श्रीगोवर्द्धनधर कों प्यायो, कछू बच्यो सो लेकें नरो नीचे आई। तब श्रीआचार्यजी कहैं, तू कहाँ गई हती। तब नरो ने कही, पर्वत को देवता देवदमन हैं तिनकों दूध प्याइ आई। तब श्रीआचार्यजी कहें, या कटोरा में दूध बच्यो होय सों हमकों देऊ। तब नरो ने दियो। सो श्रीआचार्यजी पान किये। तब सदू पांडे नरो भवानी के मन में यह आई, जो ये काहू के घर को लेत नाहीं। देवदमन को आरोग्यो लियें। तातें इनकी, देवदमन की, बड़ी प्रीति जानि परत हैं। तब सदू पांडे ने पूछी, महाराज ! यहाँ आप पधारे हो, ब्रज के तीर्थ करिवे कों, के कछू और मनोरथ हैं ? तब श्रीआचार्यजी कहें, हमकों दक्षिण में झारखंड में देवदमन नें कही, जो–मोकों प्रगट करो। मैं श्रीगोवर्द्धन पर हों। इन्द्रदमन, नागदमन, मध्य में देवदमन हों। ताके लिये हम यहाँ पधारे। सो देवदमन तुम्हारे ऊपर बड़ी कृपा करत हैं। तब सदू पांडे, नरो, भवानी विनती करी, महाराज ! तुम जीते, हम हारे, हमकों सेवक करो।

भावप्रकाश – याको अर्थ यह, जो–हमारे ब्रज में गोवर्द्धन में आवे सो दहीं, दूध, रोटी, सीधो सामग्री जो मांगे सो हम देंहि। और आप तो सेवक बिना काहू को लेत नाहीं। तातें हम हारे। आप सेवक करो। हम ब्रजवासी जगत के पूज्य, आप हमारे पूज्य।

तब श्रीआचार्यजी कहें, काल्हि सवेरे तुमकों नाम सुनावेंगे। पाछें प्रातःकाल भयो तब सदू पांडे, नरो, भवानी तीन्योन कों न्हवाय कें बैठारे। पाछे नाम सुनाय निवेदन कराये। पाछें श्रीआचार्यजी ने कही, तुम देवदमन की सेवा करो। तब सदू पांडे ने कही, महाराज ! हम ब्रजवासी गँवार है। आचार बिचार जानत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभू कहें। तुम्हारो प्रेम

देवदमन में है सोई सबके ऊपर हैं। तुम निष्कपट सुद्ध भक्त हो। तातें जैसो तुमतें बनें सो करियो। पाछे सदू पांडे ने सीधो, सामग्री, दूध, दहीं, घृत, खाँड सब दियो। तब श्रीआचार्यजी रसोई करि भोग धरि भोजन किये। पाछें सदू पांडे के चोंतरा पर वैष्णवन सहित आय विराजें। तब सदू पांडे को भाई मानिकचंद, सो सदू पांडे सों न्यारो रहतो। सो रात्रि परी तब आयो।

भावप्रकाश– सो 'मधुमङ्गल' सखा को प्रागट्य मानिकचंद को है।

पाछे सदू पांडे रात्रि कों सब ब्रजवासीन सों कहें, जो–मेरे घर बड़े महापुरुष पधारे हैं। सो सवेरे देवदमन को प्रागट्य करेंगे। तातें तुम सगरे दरसन कों आइयो। तब बड़े बड़े वृद्ध ब्रजवासी प्रमाणिक सब आये। मानिकचंद, सदू पांडे आदि। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, जो–श्रीगोवर्द्धन पर्वत पर देवदमन कौन प्रकार प्रगट भये हैं ? सो कहो। तब सदू पांडे ने कही, महाराज ! हमारे एक ग्वाल हतो। सो गाम की सगरी गाय चरायवे कों जातो। सो एक ब्राह्मण की बडी गाय हती, सो दूध बहोत देती। सो वह ब्राह्मण दुहिवे कों बैठ्यो, सो गाय कछू दूध न दियो। पाछें फेरि सवेरे दुहन बैठ्यो, तब हू दूध न दियो। ऐसे दोय दिन दूध न दियो, तब तीसरे दिन वह ग्वारिया पर ब्राह्मण खीज्यो। जो–मेरी गाय बहोत दूध देती। सो तू गाय मेरी दुहि लेत हैं। या प्रकार ग्वाल कों बहोत डरपायो। तब वह ग्वाल नें कही, मैं तो तेरी गाय दुहत नाहीं। आजु तेरी गाय की ठीक पारूंगो। पाछे वह ग्वारिया, गाय सगरी बन में ले गयो। उह गाय कों नजारे में राखी। तब उह गाय पर्वत ऊपर चढ़ी। तब ग्वारिय पीछे छिपि कें गयो। सो उह गाय जाय गोवर्द्धन पर्वत पर एव

सिला में छेद हतो, तहां आपही तें सगरो दूध श्रव दियो। तब ग्वारिया देखिकें फिरि बैठि रह्यो। पाछे घरी चारि दिन पिछलो रह्यो। तब फेरि वह गाय पर्वत पर चढ़ि उह छेद में दूध श्रव दियो। सो ग्वारिया, सब गाय घर लायकें उह ब्राह्मण सों कही। तेरी गाय, गोवर्द्धन पर्वत हैं तापर एक छेद में, सगरो दूध श्रवत हैं। तें मोकों झूठेई चोरी लगाई। तेरे विश्वास न होय तो सवेरे मेरे संग चलियो। तब वह ब्राह्मण नें कही। मैं सवेरे चलूंगो। तब सवेरे दूध दुहन बैठ्यो। सो गाय दूध सब ऊपर चढाय गई, रञ्च हू न दियो। तब वह ब्राह्मण ग्वारिया के संग गयो। सो गाय पर्वत पर जाय, दूध छेद में करि दियो। पाछें साँझ, याहि प्रकार गाय दूध करि, घर आई। तब उह ब्राह्मण (ने) रात्रि कों ब्रजवासी भेले करि यह बात गाय को कही। तब एक वृद्ध ब्रजवासी ने कही। के तो छेद के नीचें कछू द्रव्य है, के कोई श्रीठाकुरजी को स्वरूप है। ये दोय वस्तु होय तहाँ गाय श्रवे। पाछें दस पांच ब्रजवासी मिलि, छेद के नीचे देखिवे को विचार कियो। सो प्रातःकाल भयो तब दस पन्द्रह वृद्ध ब्रजवासी मिलि उह गाय कें पीछें गये। सो गाय उह छेद में दूध करि पर्वत तें नीचे उतरी। तब हमनें जो सिला में छेद हतो सो सिला खोदि कें उठाई। तब नीचे बरस सात को बालक निकस्यो। तब मैं पूछ्यो जो- तू कौनहैं ? तब उन कही, मैं पर्वत को देवता हों। देवदमन मेरो नाम है। सो मोकों दूध दहीं बहोत प्रिय हैं। तेरी बेटी नरो हैं, ताके हाथ पठाय दीजो, सांज सवारे। और अब सिला ऊपर मति धरो। तब उह समय सगरे ब्रजवासी अपने अपने घर आये। सवेरे दूध, दहीं, माखन देवदमन कों अरोंगाय

आवते। सांज कों दूध अरोगावतें। और भूख लागत हैं, तब, आप ही देवदमन आय मांगि ले जात हैं। या प्रकार ब्रजवासी सबन कों देवदमन नें बहोत सुख दियो हैं। ब्रजवासी जो मानता करत हैं, सो देवदमन पूरन करत है। अब आपकी जैसी इच्छा होय, सो मनोरथ करो। हम तो जा प्रकार देवदमन प्रगटें सो सब प्रकार कह्यो। तब मानिकचंद, सदू पांडे के भाई ने कही, मोकों देवदमन जब प्रगटे तब जतायो, जो–मैं गिरिराज ऊपर प्रगट्यो हों, सो मोकों माखन नित्य दीजों। सो मैं माखन नित्य सवेरे देवदमन कों अरोगाय आवत हों। तब श्रीआचार्यजी कहें, काल्हि सवेरे पर्वत चलि दरसन करेंगे। पाछे प्रातःकाल श्रीआचार्यजी महाप्रभु स्नान करि वैष्णव सहित पर्वत पर जायवें को विचार किये। तब सदू पांडे कों बुलाये। तब सदू पांडे मानिकचंद दोऊ आए। तब मानिकचंद ने कही, महाराज! मोकों सरनि लीजिए। तब श्रीआचार्यजी मानिकचंद कों न्हवाय नाम निवेदन कराये। पाछे सदू पांडे, मानिकचंद, आपुनें संग कें वैष्णव ले, पर्वत ऊपर पधारे। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी उठिकें श्रीआचार्यजी के साम्हें आये। तब श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धनधर कों गोद में ले दोऊ कपोल परसि कहें, बाबा! अब तुम्हारी कहा इच्छा है। तब श्रीगोवर्द्धनधर कहें, मेरी सेवा प्रगट करो। तब गोवर्द्धन पर्वत पर छोटो सो मंदिर करि अपछरा कुंड पर रामदास चोहान रजपूत गुफा में रहते तिनकों सेवक करि श्रीनाथजी की सेवा करन कों कही। पाग परदनी को सिंगार करि ऊपर चन्द्रका मेंनसो जोरि मुकुट सारिखो करि धराये। गुञ्जा की माला पहिराये। और

दूध, दहीं, माखन सदू पांडे लाये सो भोग धरे। पाछें सदू पांडे कों कही, तुम सामग्री वस्तु चहिये सो रामदास कों दीजो। तब जमुनावतामें कुंभनदासजी गोरवा रहत हते, सो आय सेवक भये। तब कुंभनदास कों कीर्तन गायवे की सेवा दीनी। तब तहाँ ब्रजवासी गिरिराज के आसपास के बहोत श्रीआचार्यजी के सेवक भये। या प्रकार कछुक दिन सेवा भई। पाछे मंदिर समरायवे की आज्ञा पूरनमल्ल कों करी। जब मंदिर सँवर्‍यो, तब रामदास चोहान रजपूत की देह छूटी। तब श्रीआचार्यजी सदू पांडे सों कहें, तुम सेवा करो। तब सदू पांडे ने कही, महाराज ! हम ब्रजवासी कछू सेवा पूजा की रीति जानत नाहीं। और अनेक घर के काम खेती, सो हमसों न बनेगी। सामग्री वस्तु जो चहियेगी सो पहोंचावेंगे। तब श्रीआचार्यजी सदू पांडे सों कहें, और कोऊ विचारो। तब सदू पांडे नें कही, राधाकुण्ड कृष्णकुण्ड पर बंगाली हैं, कहो तो बुलाऊं। तब श्रीआचार्यजी कहें बुलावो। तब बङ्गाली बुलाय रुद्रकुण्ड पर झोंपरी बङ्गालीन कों बनाय दिये। और कृष्णदास शूद्र कों सेवक करि अधिकारी किये हैं। जो बङ्गालीन कों चहिये सो मथुरा आगरे तें लाय दीजो। पाछें कृष्णदास ने बङ्गालीन कों काढि वैष्णव राखें। सो कृष्णदास की वार्ता में कहेंगे। या प्रकार सदू पांडे, नरो, भवानी, मानिकचंद आदि सेवक करि श्रीगोवर्द्धननाथजी कों बाहिर पधराय सेवा करायें।

वार्ता – प्रसंग २ – एक समय श्रीगोवर्द्धनधर कहें, मोकों गाय बहोत प्रिय हैं। तब श्रीआचार्यजी सदू पांडे कों बुलाय वेद–कर्म करिवे की पवित्री हती, सो दे कहें, याके दाम करि श्रीगोवर्द्धननाथजी कों गाय लाय देहु ! तब सदू पांडे नें कही,

महाराज ! हमारे घर गाय भेंसि हैं सो सब श्रीगोवर्द्धननाथजी की हैं। तब श्रीआचार्यजी कहें, हम कहें तैसें करो। या सोनों बेचि गाय हमारी ओर की श्रीनाथजी की भेट करति हैं। और तुम ब्रजवासी सगरे मिलिकें एक एक दोय दोय गाय न्यारी भेंट करो। तब सदू पांडे उह पवित्रि बेचि दोय गाय लाये। सो श्रीआचार्यजी नें श्रीनाथजी को भेंट करी। और सदू पांडे ब्रजवासी आदि काहू नें एक गाय भेट करी, काहू नें दोय गाय भेट करी। काहू नें चारि गाय भेंट करी। सो हजारन गाय भेट भई। तब गायन के रहिवे के लिये गोपालपुर गाम मंदिर पास बसायें। 'गोपाल' नाम श्रीठाकुरजी को धरे। ता दिन तें श्रीनाथजी के गाय बहोत बढ़ी। सो गाय श्रीठाकुरजी कों बहोत प्रिय हैं। सो छीतस्वामी गाये हैं–

राग गौरी

आगें गाय, पाछें गाय, इत गाय उत गाय,
गोविंदा कों गायन में बसिवोई भावें।
गायन के संग धावें, गायन में सचुपावें,
गायन की खुररेनु अङ्ग सों लगावें ॥१॥
गायन सों ब्रज छायो, बैकुण्ठ हू बिसरायो,
गायन के हेतु, गिरि कर लें उठावें।
'छीतस्वामी' गिरिधारि, विट्ठलेस वपु धारि,
ग्वालिया को भेष किये, गायन में आवें ॥२॥

या प्रकार सदू पांडे आदि ब्रजवासी सबन कों श्रीगोवर्द्धननाथजी सुख दिये।

वार्ता – प्रसंग ३– और एक दिन सदू पांडे के घर श्रीगोवर्द्धननाथजी सोने की कटोरी ले कें मंदिर तें आये। सो नरो सों कहें, यामें मोकों दूध करि दे। तब नरो नें कही, यह कटोरी तो छोटी है, यामें कहा दूध समायगो ? तब श्रीनाथजी

कहें, तू यामें करि–करि दे मैं पान करूं। सो नरो दूध कटोरी में करति जाय और श्री गोवर्द्धनधर पान करत जाय या प्रकार दूध पीके कटोरी नरोके उहांई डारिके रात्रि कों पाछे आय मंदिर में पौढि रहे। पाछें सवेरे भये घर की टहल, दूध तातो करि, दहीं बिलोय, पाछें दूध, दहीं, माखन नित्य के नेग को ले, सोने की कटोरी ले, मंदिरमें आय कह्यो। रात्रि कों देवदमन कटोरी सोने की ले के आयो, सो दूध पी कें कटोरी मेरे घर डारि आयो। आखरि लरिका तो सही। सो यह सोने की कटोरी लेहु। तब सगरे भीतरिया सेवक चक्रत ह्वै रहें। जो–नरो पर ऐसी कृपा है। सो या प्रकार सदू पांडे के घर एक वार नित्य पधारतें।

वार्ता – प्रसंग ४ – सो सदू पांडे के परोस में सदू पांडे को छोटो भाई मानिकचंद ब्रजवासी रहत हतो। ताके घर गाय भैंसि बहोत। सो मानिकचंद की मा, सदू पांडेकी मा, ये वृद्ध बहौत हती। सो डोकरी मानिकचंद के घर रहें। सो जब सबेरे दहीं को बिलोवनो होय चुकें तब माखन रोटी दहीं उह डोकरी के आगें सगरे घरके लोग धरि दे। सगरे बालकन कों कलेऊ बांटिवें को उह डोकरी को नेम हतो। सो सगरे बालक आन्योर के भेले होय द्वार पर बैठि रहें। जब वह डोकरी पुकारै, अरे सगरे लरिका ! अपनो अपनो कलेऊ ले जाउ। तब सगरे बालक पास आवें। तामें श्रीगोवर्द्धनधर हू बरष सात के बालक ह्वै के आवें। सो वह डोकरी एक बालक को हाथ पकरि नाम पूछि हाथ पर रोटी माखन दहीं धरे। या प्रकार सब कों देई। पाछें जब श्रीनाथजी को हाथ पकरें तब पूछे तेरो कहा नाम है ? तब श्रीनाथजी कहें,

मेरो नाम देवदमन ! तब डोकरी कहै, पर्वत को देवता देवदमन ? तब कहें, हां, हां वारि जाऊँ, नित्य कलेऊ याहि समय लै जैयो। तब श्रीनाथजी पधारें। या प्रकार सदू पांडे आदि ब्रजवासिन पर श्रीगोवर्द्धनधर कृपा करते। बालक की नांई मांगि कें लेते। सो सदू पांडे, मानिकचंद, नरो, भवानी, सदू पांडे मानिकचंद की माता डोकरी, ये बड़े श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय है। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७३॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गोपालदास, जटाधारी गौड़ ब्राह्मण प्रयाग के तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ये गोपालदास लीला में ललिताजी की सखी हैं। 'रसभद्रा' लीला में इनको नाम है। सो प्रयाग में एक गौड़ ब्राह्मण के घर प्रगटे। सो बरष छै के भये। तब कासी में नागा वैरागी बहोत आये। सो कासी में कछु दिन रहि प्रयाग में मकर-स्नान कों सब आये। सो गोपालदास पिता के संग मकर-स्नान कों गये। सो भीड़ में पिता सों बिछुटि गये। तब रोवन लागे। तब एक नागा नें कही, मैं तोकों तेरे पिता पास ले चलूंगो। यों कहि अपुने डेरा जाय तहाँ ते अपुनी वस्तुभाव ले गोपालदास कों ले भाज्यो। सो दक्षिण में जाय अपुनो चेला करि कें राख्यो। पाछें गोपालदास उह नागाकी जमाति में रहे। सो बरष तीसके भये। तब उह नागा मरयो तब गोपालदास के मनमें यह आई, जो-तीर्थ करिये। तब, सौ पचास नागा बैरागी को संग करि द्वारिका गयो। पाछे द्वारिका तें वही संग मथुरा कों चल्यो। सो मथुरा आयो। तामें गोपालदास हू आयो। सो ता समय विश्रान्ति पर श्रीआचार्यजी संध्या वंदन करत हे। सो गोपालदास कों श्रीआचार्यजी के दरसन भये। सो श्रीआचार्यजी के पास ठाड़े है रहें। तब कृष्णदास मेघन नें कही। तू यहां क्यों ठाड़ो होय रह्यो है। तेरो संग नागा वैरागी को तो गयो। तब गोपालदास नें कही मेरो संग बहोत जन्म तें बिछुरयो है। सो अब श्रीआचार्यजी मोपर कृपा करें। सो फेरि मोकों भगवदीय, भगवान को संग मिले। तब श्रीआचार्यजी संध्या वंदन करि कहें, गोपालदास ! आयो ? नब गोपालदास दंडवत करि कह्यो, महाराज ! आपकी कृपा भई तो आयो। परन्तु महाराज मैं बहोत

भटक्यो। अनेक मार्ग में दुःसंग में सगरे पापाचरन करि महा दुष्ट मैं है गयो। सो आपकी कृपातें या संसार समुद्र तरूँगो। और तो मेरो बल कछू नाहीं हैं। तातें कृपा करि मोकों अपनी सरन राखो। तब श्रीआचार्यजी कहें, जटा माथे की मुड़ाय के न्हाय आवो, तब तुमकूं नाम सुनावेंगे। तब गोपालदास जटा मुंडाय कूंप में न्हाय पाछें श्रीयमुनाजी में न्हाय श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी नाम सुनाय निवेदन कराये। तब गोपालदास नें बिनती करी, महाराज! अब मोकों कहा आज्ञा हैं? जो सेवा बतावो सो करूँ। तब श्रीआचार्यजी कहें, हमारे संग गोवर्द्धन चलो। तहाँ श्रीगोवर्द्धनधर के बाग की सेवा करो। पाछें श्रीआचार्यजी मथुरा तें श्रीगोवर्द्धन पधारे। तब तहाँ श्रीनाथजी के मंदिर में पधारे। तब गोपालदास कूँ श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कराये। पाछें श्रीनाथजी के बाग की सेवा दीने। सो सेवा ऐसी करें, एक एक फूल फल सब नजरि में राखे, सगरे वृक्षन की चौकसी राखें। बाग में कहूँ कूड़ा घास न रहें। सगरे वृक्ष जल सों हरे राखें। यह भाव विचारे जो, यहाँ श्रीठाकुरजी खेलन को पधारत हैं। तातें उत्तम जगह रहें तो आछो। या प्रकार कछुक दिन सेवा करी, सो एक वैष्णव को लरिका अपुने श्रीठाकुरजी के लिये नित्य दस पाँच फूल चुराय ले जाय। सो गोपालदास बहोतेरो जतन कियो जो-कोन फूल ले जात हैं। परन्तु जानि न परि। तब एक दिन गोपालदास उह बाग में छिप रहें। सो उह वैष्णव को लरिका वर्ष ग्यारह को, सो चारों ओर गोपालदास कों देख्यो। जान्यो, जो-अब ये नाहीं हैं। तब पाँच फूल तोरयो। तब गोपालदास दौरिकें आयो, सो उह लरिका कों पकरि के मारयो। तब यह लरिका छुड़ाय के भाज्यो, सो गोपालदास क्रोध करिकें उह लरिका के पाछें दौरे। तब वह लरिका छुडायकें भाज्यो, सो श्रीनाथजी के मंदिर में छिप्यो। तहाँ भोग के किवाड़ खुले हते। तहाँ आइ वह लरिका दरसन में छिप्यो। सो गोपालदास रीस के मारे चले आये। सो क्रोध में मंदिर को ज्ञान न रह्यो। उह बालक कों एक धोल मारी। तब सबन नें छुड़ाय दियो। सो श्रीनाथजी कों बहोत बुरी लागी, जो-गोपालदास मेरी हू कानि न करी? मंदिर में मारयो। पाछें भूलि हू गये। और उह बालक कों यातें इतनो दंड भयो, जो-श्रीनाथजी के फूल, घरके ठाकुर कों धरनो नाहीं। यह सिक्षा किये। पाछें पानघर की सेवा में कोई न हतो। तब श्रीआचार्यजी गोपालदास जटाधारी कों पानघरकी सेवा दीनी। सो पान की सेवा भली भाँति सों करन लागे। सो आषाढ के दिन गरमी ऊमस बहोत परे, तब गोपालदास पान छाब पर बिछाय ऊपर आलो कपरा ढाँकि सगरि रात्रि पङ्खा करें। सो श्रीआचार्यजी को यह नियम हतो, जो-रात्रि में दोय तीन बेर उठि सगरे सेवकन कों देखि जाय। जो

कोई सेवक लौकिक वार्ता, काहू की निन्दा न करन पावे। सो अर्द्ध रात्रि समय एक दिवस श्रीआचार्यजी पधारे। सो दूरितें देखे तो कोई सेवक कीर्तन गावत है। कोई सेवक धोल गावत है, कोई सेवक पञ्चाध्यायी को पाठ करत है। कोई भगवद् वार्ता करत है सो देखिकें प्रसन्न भये। जो कोई लौकिक बात काहू की निन्दा नाहीं करत है। पाछें गोपालदास कों आय देखें तो नींद को झोका आयो है, परन्तु पानन कों पङ्खा करत हैं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु गोपालदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। जो यह सबतें श्रेष्ठ है। जो नींद हू आवत में भगवद् सेवा करत हैं।

वार्ता – प्रसंग १ – सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, जो–गोपालदास सवेरे तुम न्हाइ कें श्रीनाथजी के मंदिर भीतर जाई श्रीनाथजी के निकट जाई, पङ्खा श्रीनाथजी कों करियो।

भावप्रकाश–काहे तें, पहलें खिचेमा पङ्खा हतो नाहीं।

तब गोपालदास सवेरे न्हाइ कें श्रीनाथजी के मंदिर में श्रीनाथजी के निकट जाई पङ्खा श्रीनाथजी कों करन लागें। सो प्रेम में मगन ह्वै गये सो अनोसर में हू श्रीआचार्यजी की आज्ञा तें पङ्खा करते। श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, जो–गोपालदास! अनोसर में आंखि मीचि के पङ्खा करियो। नेत्र मति खोलियो। सो रात्रि में हूँ आंखि मीचि के पङ्खा करते। सो ऐसे भगवदीय गोपालदास भये। जो सरीर को अध्यास लंघी आदि रात्रि कों बाधा न होती। पाछे रात्रि कों एक दिन श्रीनाथजी कहें, जो–गोपालदास! नेत्र खोलि, मेरे दरसन करि। तब गोपालदास कहें, महाराज! मोकों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की आज्ञा नाहीं है। जातें नेत्र न खोलूंगो, तब श्रीनाथजी गोपालदास के मुख में महाप्रसाद हू खवाय देते, परन्तु गोपालदास नेत्र न खोलते। ऐसे आज्ञा श्रीआचार्यजी की पालन करते, जो–श्रीनाथजी के कहेतें हू न खोलते। श्रीस्वामिनीजी पधारते, श्रीगोवर्द्धनधर सों वार्ता

करती, सो सब सुनते। या प्रकार की कृपा गोपालदास पर हती।

वार्ता – प्रसंग २ – पाछें एक दिन श्रीनाथजी के मन में यह आई, जो–यह वही गोपालदास है, जो–मेरे आगें वैष्णव को लरिका आय छिप्यो हतो। ताकों इन धोल मारी। यह अपराध याको है, सो याहू कों दण्ड दे शुद्ध करनों। तातें याकों विरह दुःख कराय अङ्गीकार करूँ। यह विचारि कें गोपालदास कों मन श्रीनाथजी फेरे। सो गोपालदास के मन में यह आई जो एक पृथ्वी परिक्रमा करि आऊँ।

भावप्रकाश – काहे तें, श्रीगुसांईजी लिखे हैं ''बुद्धि प्रेरक कृष्णस्य पादपद्म प्रसीदतु।'' जब जैसी बुद्धि जीव कों भगवान् प्रेरें तब तैसो कार्य उह जीव करें।

सो गोपालदास श्रीआचार्यजी के पास आय विनती किये, जो महाराज ! आप आज्ञा देहु, जो–पृथ्वी परिक्रमा करिवे को मन है। तब श्रीआचार्यजी कहें, अवश्य करो। तब गोपालदास श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि उठि चले। सो सगरे वैष्णव चकित है रहें। जो–ऐसी कृपा जिन पर, जो–श्रीनाथजी वार्ता करें, महाप्रसाद अपने श्रीहस्त सों खवावें, तिनकी ऐसी बुद्धि क्यों भई ! यह सब वैष्णवन के मनमें संदेह भयो। तब एक वैष्णव नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, जो–महाराज ! गोपालदास ऐसे भगवदीय के मनमें यह ऐसी क्यों आई, जो–सेवा छोड़ करिके पृथ्वी परिक्रमा करन कों चले ? तब श्रीआचार्यजी कहें, जो– इनको एक महद् अपराध है। एक वैष्णव को बेटा श्रीनाथजी के बाग के फूल चुरावतो ताको ये गोपालदास श्रीनाथजी के मंदिर में मारे। ता अपराध को दंड प्रभु दिये हैं। सो यह आगें जाय न सकेगो। विरह ताप सों देह छोडि लीला में प्राप्त होइगो।

गोपालदास के परलोक में बाधक नाहीं।

भावप्रकाश–यामें यह जताये, –पाप पुण्य को भोग इहाँ करि चुके तब भगवद प्राप्ति होई।

तब सब वैष्णवन को संदेह निवृत्त भयो। पाछें गोपालदास जब मजलि द्वै गये। तब श्रीनाथजी के स्वरूपानंद की सुधि आई। तब विरह तें व्याकुल होई गिरे। हाय, हाय, मो बराबर दुष्ट कौन? यह श्रीनाथजी की सेवा स्वरूपानंद को अनुभव, वैष्णव को संग, सो सब छोडि कें मैं पृथ्वी परिक्रमा कों चल्यो? धिक्कार मोकों, धिक्कार मेरी बुद्धि कों, जो–यह मनमें आई। या प्रकार कहत विरहते मूर्छा आई। सो श्रीगोवर्द्धनधर के स्वरूप को ध्यान धरि देह छोडि लीला में प्राप्त भये।

भावप्रकाश–या वार्ता में यह जताये, जो–अपराध काहू को न करनो। अपराध है सो उत्तम भगवद् धर्म में आई बाधा करे। तब धर्म छूटि जाई। तातें अपराध तें सदा भय राखनो। और श्रीआचार्यजी की आज्ञा को दृढ़ विश्वास राखनों। जो श्रीठाकुरजी हूँ कहें, नेत्र खोलि, परन्तु श्रीआचार्यजी की आज्ञा नाहीं, तातें न खोले। तब श्रीनाथजी प्रसन्न भये। और यह पुष्टिमार्ग में सगरे अपराध दूरि करिवे कों एक श्रीठाकुरजी को विरह मुख्य कारन है। विरह करि प्रभु की प्राप्ति होई, यह सिद्धान्त जताये। वैष्णव ॥७४॥

सो गोपालदास ऐसे श्रीआचार्यजी के टेक के कृपापात्र भगवदीय हैं। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७४॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, कृष्णदास और कृष्णदास की स्त्री, गुजराती ब्राह्मण, सो गुजरात में वाड चोइला गाम, सो वाड में रहतें, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–ये लीला में श्रुतिरूपान में हैं। मदन गोप की दोऊ बेटी। सो श्रीचन्द्रावलीजी कों श्रीठाकुरजी संकेत में मिलें सो बात, ये मदनगोप की बेटी दोऊ

'नंदा' 'शुभदा' इनको नाम, सो नंदा, शुभदा नें कीरतिजी सों सब कही। जो श्रीचंद्रावलीजी और श्रीकृष्ण संकेत में एकान्त बात करत हते। तब कीरति खीझि कहें, ऐसी बात काहू की करिये नाहीं। सो बात सुनिके चन्द्रावलीजी नें शाप दियो, जो-भूमि पर तुम प्रगटो। तब नंदा तो कृष्णदास भये। और शुभदा सो इनकी स्त्री भई। 'बाड' में कृष्णदास भये। 'चोइला' में एक ब्राह्मण के घर स्त्री प्रगटी। सो बड़े भये। तब कृष्णदास को ब्याह भयो। सो बालपने सों इनकी दोऊन की यह रीति जो वैरागी, साधु, संत आवे सो इनके घर सों खाली न जाई। सो एक दिन कृष्णदास की स्त्री माटी लेंन गाम की दस पांच स्त्रीन के सङ्ग गई। सो माटी खोदत में ऊपरते बडो टीवो टूटि परयो सो सब स्त्री दबी। तहाँ श्रीआचार्यजी आय निकसे। सो टीवो टूटत देखे। तब सब वैष्णव सों कहें, बेगे माटी टारो, यहाँ स्त्री दबी हैं। ता समें गुजरात के वैष्णव सङ्ग बहोत हते। सो हाथों हाथ सगरी माटी टारि, सगरी स्त्रीन कों निकासें। तामें द्वै चार तो अधमरी भई। तब श्रीआचार्यजी वेद मन्त्र पढिकें सब स्त्रीन पर जल छिरके। तब सब सावधान भई। इतने (में) गाम के लोग आये। सो अपनें अपनें घर की स्त्रीन कों ले गये। तब कृष्णदास की स्त्री श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि बिनती करी, जो-महाराज ! आप कौन हो ? जो-हम सगरीन को दबीन कों, मरीन कों जिवाये। ऐसी आप दया करी। सो भगवान बिना या समय और कौन सहाय करें ! तब श्रीआचार्यजी कहें तू दैवी जीव हैं, भगवदीय है। सो भगवदीय के पाछें सगरी स्त्रीन के प्रान बचे। तब कृष्णदास की स्त्री नें बिनती करी, जो-महाराज ! आप कृपा करिकें मेरे घर पधारिये। मेरी सत्ता अङ्गीकार करिये। तब कृष्णदास मेघन नें कही, ये श्रीआचार्यजी महाप्रभु अपुनें सेवक को लेत हैं। और काहू को कछू लेत नाहीं। या प्रकार वार्ता करत हे इतने में गाम में कृष्णदास नें सुनी, जो-स्त्री माटी में दबी, सो, दौरे आये। तब स्त्रीनें कही, श्रीआचार्यजी महाप्रभु ये साक्षात् ईश्वर हैं। सो हम सगरी स्त्रीन कों निकारि कें जल छांटिकें जिवाये। परन्तु ये अपुनें सेवक को लेत हैं। और काहू को कछू लेत नाहीं। तब कृष्णदास श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि बिनती किये, जो-महाराज ! हमारे घर पधारि हमकों, स्त्री कों सेवक करियें। तब श्रीआचार्यजी कृष्णदास के घर पधारि कृष्णदास कों स्त्री सहित न्हवाई नाम निवेदन कराये। पाछे तें उन दोउन ने बिनती करी, जो-महाराज ! हमकों सेवा पधराय दीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, तुमकों वैष्णव सेवा दीनी है, सो आये गये वैष्णव की सेवा करियो और श्रीनवनीतप्रियजी के वस्त्र की सेवा दीनी। तीन रात्रि श्रीआचार्यजी कृष्णदास के घर रहि मार्ग की सब रीति बताये। पाछें आपु द्वारिका पधारे। कृष्णदास स्त्री सहित सेवा करे। आये गये वैष्णव को समाधान करे। पाछें श्रीआचार्यजी श्रीद्वारिका तें पाछे पधारे। तब एक रात्रि कृष्णदास के घर रहि अडेल कूं पधारे।

वार्ता – प्रसंग १ – सो एक समे दस पंद्रह वैष्णव भेले होई अड़ेल श्रीआचार्यजी के दरसन कों चले। सो कृष्णदास के घर आइ उतरे। ता दिन कृष्णदास के घर कछू सीधो सामग्री न हती। और कृष्णदास घर न हते। तब स्त्री नें सगरे वैष्णवन कों दंडौत करि घर में उतारि दिये। पाछें विचार कियो, जो–घर में तो कछू है नाहीं। और आप घर नाहीं। वैष्णव भूखे होइंगे, तातें अब मैं कहा उपाय करूँ ? सो वह गाम में एक बनिया हतो, सो या स्त्री कों सुन्दर देखिके वह बनिया कबहूँ कबहूँ या स्त्री सों टेक करे। जो–तू मेरे घर एक रात्रि आवे तो तू चाहे सो ले जा, तब वा स्त्री नें विचारी, जो–वा बनिया के पास जाऊँ। सो वा बनिया की हाट पर आई वासों कही, जो–एक रात्रि आऊंगी, सीधो सामग्री चहिये। तब वह बनिया प्रसन्न होइ के जो इन माँग्यो सो दियो। तब वह स्त्री सामग्री घर लाई। स्नान करि, रसोई करि, श्रीठाकुरजी कों भोग धरि, सब वैष्णवन कों महाप्रसाद लिवायो। बच्यो सो गायन कूँ खवाय दियो। आप वामें ते कछू न लियो। पाछें सीधो सामग्री लेके सांज कूँ कृष्णदास घर आये। सो वैष्णवन कों देखिकें प्रसन्न होइके सबसों मिलें। पाछें पूछे कब के आये ? तब वैष्णवन ने कही, जो मध्याह्न के समें आये। तब कृष्णदास नें स्त्री सों कही, वैष्णवन भूखे होंगे, सीधा ले रसोई बेगि करि। तब स्त्री नें कही, सो तो महाप्रसाद ले चुके, चिंता मति करो। तब कृष्णदास कहें, वैष्णव कहाँ तें लिये होंगे, घरमें तो कछू हतो नाहीं। तब स्त्री नें जा प्रकार करयो सो कह्यो। तब स्त्री को दंडौत करि कहे, तू धन्य है, जो–मेरो धर्म राख्यो। पाछें फेरि रात्रि कों रसोई करि भोग धरि वैष्णवन कों लिवाइ स्त्री पुरुष

महाप्रसाद लिये। रात्रि कों वैष्णवन सों मिलि कीर्तन वार्ता किये। पाछे सवेरे वैष्णव चलन लागे तब बिनती करि कहें, मेरे घरते भूखे मति जाउ। पाछें स्त्री सहित कृष्णदास बेगि रसोई करि, भोग धरि महाप्रसाद लिवाई, वैष्णवन कों प्रीति सहित विदा करि थोरीसि दूरि लों कृष्णदास पहुचावन गये। पाछें जब घर आये तब स्त्री सहित महाप्रसाद लिये। पाछें संध्या भई, तब कृष्णदास स्त्री सों कहें, तू वा बनिया सों काल्हि कोल करि आई है। सो वह बनिया तेरो मारग देखत होइगो। वाकी सामग्री ते आपुनो मनोरथ सिद्ध भयो, आपुनो धर्म रह्यो, तातें वाको मनोरथ हू सिद्ध कर्‍यो चहिये। तू न्हाई के सिंगार करि ले। तब स्त्री उवटना लगाइ न्हाइ कें काजर बेंदी सिंदूर लगाइ पावन में महावर दियो। इतनें चलन लागी। सो वर्षा के दिन हते, सो मेह बरसन लाग्यो। अँधेरी होई आई। तब कृष्णदास नें कही, मार्ग में कीच भई है सो तेरे पांव कीच सों भरेंगे। और पावन की महावरि छूटि जाइ तो आछो नाहीं। उह बनिया को मन बिगरेगो। तातें तू मेरे कांधे पर चढ़ि ले। मैं वाकी हाट पर तोकों उतारि आऊँ। तब स्त्री कों काँधे पर चढ़ाइ लेके वाकी हाट पर पहोंचाई, आप कृष्णदास घर आये। तब स्त्री नें बनिया कों पुकार्‍यो, जो-किवाड़ खोलि। तब वह बनिया मनमें प्रसन्न होइ पानी को लोटा संग लिये आयो। कह्यो, कीच के पांव धोइ ले। तब या स्त्री नें कही, मेरे पांव सूखे, आछे, कोरे हैं। तब बनिया नें कही, मारग में कीच बहोत है। तेरे पांव कोरे कैसें रहे ? तब स्त्री नें कही मेरे पांव कोरे हैं, तेरे या बात पूछिवे को कहा काम है ? तेरो काम है सो तू करि। तब बनिया नें कही, तू यह बात सांच बताइ दे, तेरे

पांव ऐसे मेह में कोरे क्यों रहे ! तब स्त्री नें कही, मेरो पति अपने कांधे पर बैठाइ मोकों तेरी हाट पर उतारि गयो है। तब बनिया नें कही, यह बात तू सब सांची कही ? तेरो पति मेरे इहां क्यों लायो ? और तू कबहूँ मोसों बोलत नाहीं। सो आप अपुनें मुख कही, मैं एक रात्रि आऊँगी। ऐसे कहि सीधो सामग्री लियों। कछू द्रव्यादि नाहीं मांग्यो। सो यह सब कारन मोसों कहि। तब स्त्री नें कही मेरे घर वैष्णव, मेरे गुरु भाई दस पांच आये सो घर में कछू हतो नाहीं। सो मैं विचारी, जो–यह देह कहा काम आवेगी। वैष्णव तो भूखे हैं सो भली नाहीं। तातें उनके लिये सीधो मैं ले गई। सो मेरो पति तेरे ऊपर प्रसन्न होई तेरी हाट पर उतारि गयो है। ताते तू अपने मन में डरपै मति। यह सुनि बनिया अपने जन्म कों धिक्कार करन लाग्यो। और कह्यो, तुम स्त्री पुरुष धन्य हो। पाछें दंडोत करि कह्यो, तू मेरी धरम की बहनि है, मेरो अपराध क्षमा करो। पाछें एक नई साड़ी पहराई कृष्णदास के घर लिवाइ चल्यो। तहां जाई कृष्णदास कों दंडोत कही, जो–मैं महापापी हों मेरो अपराध क्षमा करो। धन्य, तुम्हारो सांचो धरम हैं। और अब मोकों कृपा करिके सरन लेहु। यह मेरी धरम की बहनि है। और तुम मेरे बहनोई हो, मेरे पूज्य हो। परन्तु अब तुम मोकों अपनी सरनि लेकें यह संसार दुःख तें छुटावो। तब कृष्णदास कहें, हमतो काहू कों सेवक करत नाहीं। हमहू श्रीआचार्यजी के सेवक हैं। तु हू श्रीआचार्यजी के सेवक होई कृतार्थ होउ। अब कछुक दिन में श्रीआचार्यजी द्वारिका कों पधारेंगे, तब इहां पधारेंगे। तब तुम सेवक होइयो। तब वह बनिया अपुने घर आयो। पाछें नित्य सवेरे कृष्णदास कों दंडौत

करि जाई। सो कछुक दिन में श्रीआचार्यजी उह गाम में पधारे। तब कृष्णदास के घर उतरे। तब कृष्णदास नें सर्वप्रकार वा बनिया को श्रीआचार्यजी आगें कह्यो। बनिया कों आर्ति सेवक होन की बहोत है। तब श्रीआचार्यजी कृष्णदास सों कहें, उह बनिया कों बुलाओ। तब कृष्णदास बनिया सों जाइ कहे, जो-श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारे हैं। तब वह बनिया कृष्णदास के संग आय श्रीआचार्यजी कों दण्डोत करि बिनती कियो, जो-महाराज ! मैं महा अधम हों, मो पर कृपा करिये। तब श्रीआचार्यजी उह बनिया कों न्हवाय नाम सुनाय ब्रह्मसंबंध कराइ 'ज्ञानचन्द' नाम धरयो। पाछें आप उह बनिया सों कहें, जो-कृष्णदास के सङ्ग तें तोकों ज्ञान भयो है। तातें तू कृष्णदास को सङ्ग करियो। ताकरि तोकों भगवद् प्राप्ति होइगी। पाछें कृष्णदास के घर श्रीआचार्यजी रसोई पाक करि भोग धरि भोजन करि पोढे। पाछे प्रातःकाल पधारे। तब कृष्णदास थोरीसी दूरि पहोंचावन कों गयो। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो-कृष्णदास ! तू धन्य है, जो-हम वैष्णव सेवा की तोसों कही हती तैसे ही वैष्णव की सेवा तेंने तन मन धन सों करी। ताते तुम समान और कोई नाहीं। यह कहि आप पधारे, और कृष्णदास घर आये। ऐसे भगवदीय कृष्णदास स्त्री सहित श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हते। जिनके संगतें बनिया भलो वैष्णव भयो। तातें कृष्णदास स्त्री पुरुष की वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७५॥

भावप्रकाश-सो उह बनिया लीला में गोप है। 'पेंली' याको नाम है, मूल में दैवी जीव है। सो कृष्णदास के संग तें नाम निवेदन भयो। पाछें भलो कृपापात्र भयो। यह कृष्णदास की वार्ता अनिर्वचनीय हैं। जा वैष्णव कों दृढ़ धर्म होइ सो यह वार्ता कों कहें सुनें। और कच्ची दसा वारे वैष्णव ऐसो सुनिकें क्रिया करिवे को मन हू

करे तो भ्रष्ट होई। काहेतें कृष्णदास स्त्री पुरुष तो श्रीआचार्यजी के अंगीकृत हैं। हृदय में इनके श्रीआचार्यजी बिराजत हैं। तातें अग्निरूप हैं। इन पर कोई लौकिक दृष्टि करे तो भस्म होई जाई। यह तो बनिया कों कृपा करन के लिये याहि प्रकार किये। और वैष्णव सेवा अत्यन्त दुर्लभ दिखाई। ठाकुरजी को, गुरु को दास होई सेवा करे। परन्तु वैष्णव को दास वैष्णव की सेवा होनी बहोत कठिन है। यह सिद्धान्त दिखाये।

वैष्णव ॥७५॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, संतदास चोपड़ा क्षत्री, आगरे में सेऊ के बजार पास घर हतो तहां रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – ये लीला में चन्द्रावली की सखी हैं। 'चन्द्रिका' इनको नाम है। सो एक दिन चन्द्रावलीजी के संग श्रीयमुनाजी न्हान कूं दोऊ जनी गई। सो न्हाई चुकी तब चन्द्रावलीजी कहें, श्रीठाकुरजी अज हू लों श्रीयमुनाजी के तीर नाहीं पधारे। सो तू जाइकें ठीक तो पारि आउ, जसोदाजी के घर। तब चन्द्रिका चली, सो नन्दरायजी के द्वार पर श्रीस्वामिनीजी मिली। तब श्रीस्वामिनीजी ने पूछी, जो चन्द्रिका तू कहां चली ? और चन्द्रावलीजी कहां हैं ? तब चन्द्रिका नें कही मैं नाहीं जानत कहां हैं, तब स्वामिनीजी नें कही, तुम झुंठ क्यों बोलत हो। श्रीठाकुरजी कूँ लेन आई होउगी। तुमहूँ या बात में बहोत चतुर हो। तब चन्द्रिका नें कही, या बात में तो तुम चतुर हो, के चन्द्रावलीजी हैं। मैं तो कछू जानत नाहीं। मैं तो श्रीयमुनाजी न्हाइ आई हों। अब अपने घर जाति हों। या चतुराई में कहा है। ब्रज के लोग सब चर्चा करत हैं। या प्रकार अभिमान पूर्वक कहें। तब श्रीस्वामिनीजी कहें, ऐसो मद भयो तो भूमि पर प्रगटो। मद जाई तब यहां आइयो। तब चन्द्रिका सखी आगरे में एक चोपड़ा क्षत्री बड़ो धनाढ्य हतो ताके घर प्रगटे। सो उह संतदास के पिता कों कोऊ संतति न हुती। तातें वैरागी, संतजन कों पुत्र निमित्त सीधो सामान देई। और सब सों बिनती करे, मेरे संतति नाहीं हैं तुम्हारी कृपा तें होई। तब एक बैरागी नें कही, पुत्र तो महादेव प्रसन्न होइ तब देई। तब उह क्षत्रीय महादेव की पूजा ब्रत ऐसो कियो सो सरीर सगरो सूकि गयो। तब स्वप्न में महादेव ने कही तुम कूं कहा चहिये सो कहो। तब उह क्षत्री नें कही आछो हरि भक्त बेटा मेरे होई, तब महादेव ने कही, मेरे दिये बेटा जितनें हैं, सो भगवान सों बहिर्मुख हैं। और तू हरिभक्त पुत्र मांग्यो सो मैं कहां ते देऊँ ? हरि भक्तन को संग तो मैं ही सदा चाहत हों। परन्तु याको जुवाब मैं काल्हि देऊँगो। तब महादेव भगवान पास जाइकें पूछे, महाराज ! एक क्षत्री कूँ मैं वर देन गयो, सो उह हरि भक्त पुत्र मांग्यो। सो वाके भाग्य में कछू पुत्र है के नाहीं। तब

भगवान कहें, वासों जाय कहियो जो तेरे घर हरिभक्त पुत्र होइगो। सो सगरे कुटुम्ब को उद्धार करेगो। ऐसो भगवदीय लीला सम्बन्धी जीव मेरे बराबर को प्रगटेगो। तब महादेव उह क्षत्री सों दूसरे दिन स्वप्न में कहें, जो–तेरे बड़े भाग्य हैं, तेरे घर पुत्र ऐसो हरिभक्त होइगो जो तेरो सगरो कुल पवित्र करेगो। पाछें महादेव घर गये। उह क्षत्री स्वप्न देखि प्रसन्न भयो। परन्तु मन में यों आई जो कछू नाहीं भयो, जो–स्वप्न की बात है, जब सांची होई तब जानिये। पाछें वाकी स्त्री कों गर्भ रह्यो। समय पाय पुत्र भयो, और द्रव्य हू बढ्यो। सो पुत्र बड़ो भयो। तब पिताने संतदास वाको नाम धरयो। पाछे संतदास को विवाह भयो। पाछें संतदास को पिता मरयो। तब सूतक के दिन बीते नाहीं। तब ज्ञाति के क्षत्री सों संतदास कहें। मेरे दिन बीतत नाहीं। सो कहूँ कथा वार्ता होत होई तो सुनों। तब वा क्षत्री नें कहीं, इहां श्रीआचार्यजी कन्हैयाशाल क्षत्री के घर पधारें है। तिनकी कथा तुम सुनो तो मगन है जाउ। तब संतदास कहें, तुम जब जाउ तब मोकों ले जैयो। पीछे तीसरे प्रहर उह क्षत्री के संग संतदास आये। तब श्रीआचार्यजी कों दंडोत करि, बैठिकें कथा सुनी। सो हृदय में यह ज्ञान उपज्यो, जो–श्रीआचार्यजी पूर्ण पुरुषोत्तम हैं। पाछे संतदास नें श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, जो–महाराज! कृपा करि मोकों सरनि लीजिये। तब श्रीआचार्यजी कहें, अभी तो तुमकों सूतक है, सूतक पाछे तुमकूँ सेवक करेंगे। तब दंडोत करि संतदास घर आये। पाछे सूतक लों नित्य कथा सुनिवे आवते। श्रीआचार्यजी को दरसन करि आवते, तब खानपान करते। सो जब शुद्ध भये, तब न्हायकें श्रीआचार्यजी पास आई दंडोत करि बिनती करी, जो–महाराज! कृपा करि मेरे घर पधारिये, मेरे कुटुम्ब कों, मोकों पावन करिये। तब श्रीआचार्यजी संतदास के घर पधारि संतदास कों न्हवाई नाम निवेदन कराये। तब संतदास ने बिनती करी, जो– महाराज! स्त्री कों सरनि लीजे। तब श्रीआचार्यजी कहें स्त्री कों नाम सुनावेंगे, दैवी तो है नाहीं। परन्तु तेरे संगतें कृतार्थ होयगी। पाछे स्त्री कों नाम सुनाये। तब संतदास नें बिनती करी, जो–महाराज! अब मोकों भगवद् सेवा पधराय दीजिये। तब श्रीआचार्यजी श्रीनवनीतप्रियजी के प्रसादी वस्त्र सेवा कों पधराय दिये। पाछें खासा करि संतदास के घर पाक सामग्री करि, भोग धरि, भोजन करि, संतदास स्त्री पुरुष कों जूठन की पातरि आप प्रभु धरें। सो महाप्रसाद स्त्री पुरुष लिये। पाछें श्रीआचार्यजी एकान्त में अकेले बैठे हते, तहां संतदास जाई दंडोत करि बिनती किये, जो–महाराज! मोपर ऐसी कृपा करिये जो या देह सों श्रीठाकुरजी अनुभव जनावें। और संसार को दुःख सुख बाधा न करें। आपुको स्वरूप हृदयारूढ़ होई। पुष्टिमार्गीय फल को अनुभव होई। तब श्रीआचार्यजी संतदास कों 'पुरुषोत्तमसहस्रनाम' पढ़ाये। और आपुनें ग्रन्थ किये हते सो पोथी संतदास कों देकें कहें, तुमकों यह ग्रन्थ द्वारा सब मनोरथ

पूर्ण होइगो। और, कछू दिन में तेरो सगरो द्रव्य नास होइगो। जो द्रव्य श्री ठाकुरजी में लगावेगो सो रहेगो। परन्तु श्री ठाकुरजी को वैभव बढ़ाये (पाछे) जब द्रव्य, न होई तब वामे तें खान पान करे सो बहिर्मुख होई। सो तू विवेक धैर्याश्रय राखि धीरज धारियो, तू दैवी है। सो तोसों धर्म निबहेगो। और सों कठिन हैं। मैं तेरे ऊपर प्रसन्न हों, तातें तोकों लौकिक बाधा न करेगो। या प्रकार संतदास पर कृपा करि आप ब्रज में पधारे। तब संतदास ने सोने रूपे के वासन आभूषन अनेक श्रीठाकुरजी के बनवायकें कितनें घर में राखें, कितनें श्रीनाथजी के यहाँ पठाये। कितनें श्रीगुसांईजी के यहाँ पठाये।

वार्ता – प्रसंग १–सो संतदास बहोत सम्पन्न हुते। लक्ष रुपैया को व्योपार हतो, सो व्योपार में द्रव्य सब खोये। कछू चोरन नें लियो, कछू राजा दण्ड लियो। पाछें निष्किञ्चन भये। परन्तु मनमें आनंद भयो, जो–श्रीआचार्यजी कहे सो भयो। पाछें चोबीस टका की पूंजी रही, ताकों ले कौड़ी बजार में बेचन लागे। सौ कौड़िन की ढेरी पैसा पैसा की न्यारी न्यारी करिकें धरते। आप काहू तें बोलते नाहीं। लोग पैसा धरिकें कोड़ी की ढेरी ले जाते। सो अढाई पैसा नित्य कमाते। आप बैठे पोथी देखते। और आधे पैसा की चबेनी, उष्णकाल में दारि भिजोई धरते, सीतकाल में भूंजे चना धरते, एक टका में राजभोग धरते, सो महाप्रसाद लेते। आधे पैसा की चबेनी रात्रिकों, इनके घर वैष्णव मंडली होती सो कीर्तन, वार्ता, भये उपरान्त बांटते। या प्रकार निर्वाह करते। ऐसे करत गौड़ देस के नारायनदास श्रीगुसांईजी के सेवक नें सुनी, जो–संतदास कों द्रव्य को संकोच बहोत है। तब नारायनदास ने संतदास कों एक पत्र लिख्यो। तामें सौ मोहौर की हुंडी पठाई। ता पत्र ऊपर टका कासद कूँ लिख्यो। सो उह पत्र आगरे आयो। सो संतदास बाचिकें अढ़ाई

पैसा कमात हते तामें टका कासद कों दियो, और आप रसोई की नागा किये। हुंडी निकसी सो श्रीगुसांईजी कूँ श्रीगोकुल पठाये। और नारायनदास कूँ पत्र लिख्यो तामें यह लिख्यो, जो–या तुम्हारी प्रभुता में एक दिन राजभोग को नागा भयो, कबहूँ ऐसी कृपा मति कीजो। और हुंडी तुम्हारी श्रीगुसांईजीकों पठाई है। सो हुंडी श्रीगोकुल चांपाभाई, संकरभाई, भंडारी पास आई। तब चांपाभाई संकरभाई श्रीगुसांईजी कों बांचि सुनाये। कहें, महाराज ! नारायनदास गौड देस के ने संतदास कों हुंडी पठाई हुती, सो संतदास नें आपकों पठाई हैं। तब श्रीगुसांईजी श्रीमुख तें कहें, जो–संतदास बड़े भगवदीय श्रीआचार्यजी के कृपापात्र सेवक हैं। सो वैष्णव को द्रव्य कैसें राखें। तातें इहां पठाये।

भावप्रकाश–यह वार्ता में संदेह है, जो–चोबीस टका की पूंजी में अढ़ाई पैसा कमाते। तामे ते टका कासद कों दिये। और लिखे जो राजभोग को नागा पर्यो। सो पूँजी मे ते एक टका को क्यों न राजभोग धरें। इनकों तो भगवदाश्रय हैं। चोबीस टका पूँजी को आश्रय नाहीं हैं, जो–काल्हि कैसे कमाईगें ? सहज में जाको मन भगवान में लागें। सो श्रीठाकुरजी कों नागा पूँजी राखिकें न करें, तो संतदास चोबीस टका की पूँजी राखिकें राजभोग में नागा क्यों किये ? एक यह सन्देह, और आगरे सहर में स्त्री सहित रहें सो अढ़ाई पैसा में निर्वाह कौन प्रकार करें ? घर में अनेक खर्च, लकड़ी, तेल, घी, नोंन, सागादि। उत्सव, पवित्रा, श्रीआचार्यजी को जन्म दिन, यह सन्देह। तहाँ यह भाव जाननो, जब संतदास को सगरो द्रव्य गयो, तब श्रीठाकुरजी की सेवा में मंडान श्रीठाकुरजी के द्रव्य सों राखें। और श्रीठाकुरजी के द्रव्य में ते चोबीस टका पूँजी करि कोड़ी बेचते। सो श्रीठाकुरजी की पूँजी में तें तो कासिद कों दियो न जाई। सो कमाई को टका दिये। तब इनकी मजूरी को राजभोग न भयो। सो महाप्रसाद हू न लियो। टका के चून को न्यारो भोग धरते। सो राजभोग जानते, महाप्रसाद लेते। और नित्य को नेग बहोत श्रीठाकुरजी के द्रव्य सों होतो। तातें अपुनी सेवा सिद्ध राजभोग की न भई। कासिद कों दिये। सो नारायनदास कों

लिखे, जो–तुम्हारी प्रभुता तें एक दिन राजभोग को नागा पर्‍यो जो–मेरी सत्ता को भोग न धर्‍यो। या प्रकार संतदास विवेकधैर्याश्रय को रूप दिखाये। विवेक यह, जो–श्रीगुसांईजी कों हुंडी पठाई, अपुनी सेवा न भई, राजभोग को नागा जानें। धैर्य यह, जो–श्रीठाकुरजी के द्रव्य को खानपान न किये। आश्रय यह, जो–मनमें आनन्द पाये। दुःख क्लेश न पाये।

या प्रकार संतदास श्रीआचार्यजी के ग्रन्थ के अनुसार सेवा किये। और रस में मगन रहते। तातें इन संतदास की वार्ता कहां तांई कहिये।

वार्ता – प्रसंग २ – और संतदासजी के घर वैष्णव मंडली होई। सो चौक में सगरे वैष्णव बैठें। तब महादेवजी छिपि कें घर के द्वार के पास नित्य भगवद् वार्ता सुनिवे कूँ आवें, सो कोई जानें नाहीं। सो आगरे में एक सेठ श्रीगुसांईजी को सेवक हतो। सो राजसी बहोत हतो। वानें सुनी, जो–संतदास के घर रात्रि कों वैष्णव मंडली भेली होई हैं। तहां भगवद् वार्ता होत है। सो बहोत सुख होत हैं। तब वा सेठ नें कही, महाप्रसाद हू कछू बांटत हैं? तब एक वैष्णव नें कही, चना चबेनी बांटत हैं। तब वा सेठ ने कही, मैं अपने घर वैष्णव मंडली भेली करि ठोर लाडू बांटूगो। पाछें वा सेठ ने लाडू ठोर करि सांझ कों सगरे वैष्णवन सों कहवाये। जो–सेठ के घर वैष्णव मंडली भेली होत हैं। तहां ठोर लाडू बांटत हैं। पाछें रसिकजन कथा वार्ता के लोभी तो सब संतदास के घर आवें। और खान पान के लोभी सेठ की खुसामद करिवेवारे सेठ के घर द्वै चारि आवें। या प्रकार दस पन्द्रह दिन बीते। तब सेठ ने कही, मैं ठोर लाडू बांटत हूँ तो हू सगरे वैष्णव मेरे घर नाहीं आवत। संतदास के उहां चना की चबेनी बटत है तहां सगरे जात हैं। तब एक नें कही, संतदास के

उहां भगवद् वार्ता कीर्तन को सुख बहोत परत हैं। तातें सब वैष्णव तहां जात हैं। तब सेठ ने कही, अपुनें एक दिन संतदास के उहां चलिकें देखें, कैसो रस आवत है। ताहि प्रकार अपनें घर करेंगे। सो द्वै चार अपने संग के वैष्णव लें सेठ संतदास के घर आयो। सो भगवद् वार्ता भई सो सेठ कछु समुझ्यो नाहीं। पाछे नींद आइ गई, पाछे कीर्तन वार्ता ह्वै चुकी। तब चना बँटे। सो सेठ कों हू जगाई के चना दिये। सो सेठ नें हाथ में लिये, परन्तु लाज पाई, मुख में न डारयो। हाथ में लिये उठ्यो सो जोड़ा पहिरिवे लाग्यो। तहां डारि दिये। तब महादेवजी चना बीनन लागे। सो वैष्णवन कही, यह कौन हैं ? सो चोर चोर कहि पकरे। तब संतदास आय वैष्णवन सों कहें, ऐसे मति कहो, भगवद् वार्ता में चोर काहे कों आवेंगे ? तब महादेव सों संतदास पूछें, जो–तुम कौन हो सांच कहो। तब कहें, तुम भगवदीय हो तातें कहत हों। इन सबन कों जान देहू। तब सगरे वैष्णव गये, तब कह्यो, मैं महादेव हों, सो छिपिकें भगवद् वार्ता कीर्तन सुनत हों। सो आज वा राजसी सेठ नें महाप्रसाद धरती पर डारि दियो सो मैं बीनिकें खायो। महाप्रसाद कहूँ पांव नीचे आवे तो महा अनर्थ होई। तब संतदास नें कह्यो, तुम द्वार के पास क्यों बैठत हो ? भीतर आयो करो। तब महादेव नें कही, तुम पुष्टिमार्गीय भक्तन के बीच में मर्यादामार्गीय को अधिकार नाहीं हैं। और तुम रस में मगन होई श्रीठाकुरजी की अनेक लीला की वार्ता करत हो। सो सुनिवे को हमारो अधिकार नाहीं हैं। तातें जितनो मेरो अधिकार है तितनो सुनत हों। तासों इतनी दूरि बैठिवो मोकों

ठीक है। तब संतदासजी सों विदा होई महादेवजी अंतरधान भये। तब किवाड़ लगाय संतदासजी घर में आये। ता दिन तें संतदास नें यह रीति करी। जब अपुने मंडली के सब वैष्णव आई चुके तब द्वार के किवाड़ लगाई कें भगवद् वार्ता करें। जो-कोई लौकिक जीव आवे तो आछो नाहीं। सो संतदास ऐसे भगवदीय हे।

वार्ता - प्रसंग ३ - और जब श्रीगुसांईजी को जन्म दिन आवतो, तब सन्तदास वर्ष के वर्ष श्रीगुसांईजी के दरसन कों श्रीगोकुल आवते। श्रीगुसांईजी सन्तदास कों श्रीआचार्यजी के कृपापात्र सेवक जानि, बहोत कृपा करते। पाछें कितनेक दिन में सन्तदास को सरीर थक्यो, वृद्ध भये। तब श्रीगोकुलजी तें चांपाभाई, सङ्कुरभाई बुलाये, श्रीगुसांईजी कों बिनती पत्र लिखिकें। तब श्रीगुसांईजी चांपाभाई भंडारी सों कहे, जो-तुम आगरे जाउ, सन्तदास वैष्णव के घर। अब वे देह छोड़ेंगे, सो चरणामृत महाप्रसाद ले जाऊं। तब चांपाभाई श्रीगुसांईजी को चरणामृत ले महाप्रसाद ले आगरे सन्तदास पास आये। तब सन्तदास प्रीति पूर्वक चांपाभाई भंडारी कों भेटे। तब चांपाभाई सन्तदास कों चरणामृत महाप्रसाद दिये। सो लेकें सन्तदास नें चांपाभाई सों कही, जो घर में बासन पात्र जो कछू है सो सब श्रीगुसांईजी को है। पाछें श्रीठाकुरजी और श्रीठाकुरजी को जो द्रव्य हतो, घर को खतपत्र, सब चांपाभाई को दे कहे, जो-चाहो तो कोईक दिन स्त्रीजन कों घर में रहन देउ। चाहो अबही बेचिकें दाम लेउ। या प्रकार सब चांपाभाई कों सोंपे। सो चांपाभाई घर के खतपत्र और सगरे वासन द्रव्यलेकें श्रीगोकुल

आय सब समाचार श्रीगुसांईजी सों कहे। तब श्रीगुसांईजी कहें, सन्तदास श्रीआचार्यजी के सेवक हैं। इनको विवेक, धैर्य, आश्रय इन्हीं सों बने। पाछें सन्तदास की देह बहोत असक्त भई। सो भूमि-सयन किये। तब आगरे के सब वैष्णव आइ जुरें। सो सन्तदास सों कहें, जो-तुम कहो तो तुमकों रेनुका तीर्थ ले चलें। और कहो तो, मथुरा बड़ो छेत्र है तहां ले चलें। तब सन्तदास कहें, रेनुका, मथुरा, मोकों कहा कृतार्थ करेगी ? जन्म भरि श्रीआचार्यजी को आश्रय कियो। अब या समय तीर्थ को आश्रय मैं कहा करूं ? और करूँ तो महा बाधक है। तब सब वैष्णवन ने कही, जो-तुम कहो तो, श्रीगोकुल ले जाई तुमकों। तब सन्तदास कहें, अब हों श्रीगोकुल जाइ कहा राख उड़ाऊँ ? श्रीगोकुल की सेवा तो मोसों कछू बनी नाहीं आई। तातें अब तुम सब कोऊ भगवद् नाम लेउ। तब सब वैष्णव भगवद् नाम लेन लागें। सो कोई तो पञ्चाध्यायी को पाठ करन लागें, कोई कीर्तन गावन लागें। पाछें जब देह छोड़िवे को समें भयो। तब सन्तदास वैष्णवन सों कहें, अब तुम सब चुप होइकें मेरी बात सुनों। तब सब वैष्णव चुप ह्वै गये। तब सन्तदास कहे, जो-एक समें श्रीगुसांईजी को जन्म दिन हतो। ता दिन मैं श्रीगोकुल गयो। सो श्रीगुसांईजी केसरि स्नान करि केसरि धोती पहरि केसरी उपरना झटकिकें ओढ़त हते। तब मैं जाय दंडोत कियो। तब श्रीगुसांईजी कहें, सन्तदास अब आये ? तब मैं कही, हां महाराज! अबही आयो। तब मोकों पाछे आयो जानि जल मंगाई प्रभु चरणोदक दिये। या ध्यान वा समें को करि देह छोड़ि लीला में प्राप्त भये।

भावप्रकाश – सो संतदास ऐसे टेक के कृपापात्र भगवदीय हे, कोई तीर्थ को आश्रय न किये। एक श्रीआचार्यजी को दृढ़ आश्रय राखे। श्रीगोकुल आइवे की नाहीं कहे, जो–अब कहा राख उड़ाऊँ। सो यह भाव, जो–लीला–स्थल में लौकिक देह कहा डारूँ ? अलौकिक देह सूँ जो सेवा बनें श्रीगोकुल की, श्रीठाकुरजी की सोई आछी है। और देह की कहां हे ? भगवद् आश्रय सर्वोपरी पदार्थ हैं। देह कहूँ परी, यह जताये। वैष्णव ॥७६॥

पाछें वैष्णवन नें सन्तदास की देह को संस्कार कियो। पाछें सन्तदास की यह सब बात एक वैष्णव नें श्रीगोकुल आयकें श्रीगुसांईजीके आगें कही। तब श्रीगुसांईजी कों रोमाञ्च ह्वे आये। कहे, सन्तदास बड़े भगवदीय हे, ऐसो आश्रय वैष्णव कों करनों, जैसे सन्तदास नें कियो। या प्रकार सन्तदास की बहोत सराहना किये। सो सन्तदास ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हते। इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७६॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, सुन्दरदास, माधोदास, गङ्गापुत्र ब्राह्मण हते, सो श्रीजगन्नाथरायजी सों कोस दस उरे एक गाम में रहतें, ता गाम को नाम पीपरी है, तहां रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – लीला में सुन्दरदास, माधोदास, दोऊ कुमारिका के जूथ में राधा सहचरी की सखी हैं। तहाँ सुन्दरदास को नाम 'शीला', माधोदास को नाम 'लीला'। ये दोऊ पूर्व में पीपरी गाम में, (तहां) सुन्दरदास तो गङ्गापुत्र ब्राह्मण के घर जन्में। और माधोदास सारस्वत ब्राह्मण के घर जन्में। सो माधोदास को पिता, एक महजति में पीर हतो। ताहि को आश्रय करे। म्लेच्छ जैसें करें, ताही प्रकार सों माला बतासा नित्य चढ़ावें। वाकें पुत्र न हतो, सो पीर की मानता करी। तब पुत्र भयो। (तब) या सारस्वत ब्राह्मण को पीर में दृढ़ विश्वास भयो। सो उह पीर उह सारस्वत सों बोलतो, बातें करतो। सो बात वह सारस्वत ब्राह्मण हिन्दू ह्वै कें प्रगट करे तो निन्दा होई। तातें बेटा को नाम माधोदास धर्यो। कृष्णचैतन्य गौड देस में भये। तिनको सेवक माधोदास कों करायो। परन्तु मनमें दृढ़ता माधोदास के पिता की और माधोदास की पीर में, ऊपर तें एक ठाकुर ले राखे। सो लोगन के दिखाइवे कों पूजें।

जब ठाकुर आगें भोग धरे, तब पीर को नाम लेकें बुलावें, सो पीर खाई जाई। और वाही गाम में सुन्दरदास गङ्गापुत्र ब्राह्मण रहे। सो इनकी रीत यह, जो-कोई सन्त महन्त महापुरुष आवें, तिनकी टहल सगरो दिन करें। पाँव दाबें, पानी, सीधा सब ल्याइ देई। द्वै कोस लों पहुँचावे। या प्रकार सों रहें। सो एक समय श्रीआचार्यजी श्रीजगन्नाथरायजी कों पधारें। सो पीपरी गाम के पास तलाब पर उतरे। सो सुन्दरदास आय कृष्णदास कों दंडौत करि कहे, मैं आपके चरन दाबूं, पानी ले आऊँ। सीधा सामग्री जो कछू कहो सो ले आऊँ। मैं या गाम में रहत हों। सो जो कोउ सन्त महन्त महापुरुष आवत हैं तिनकी मैं टहल करत हों। मैं गङ्गापुत्र ब्राह्मण गृहस्थ हों। तातें जो कछू टहल आप मोसों कहो सो मैं करूँ। तब कृष्णदास कहे, जो-तू हमारी वस्तु, भाव सों न्यारो रहियो, जो-तू कछू छूवेगो सो छूइ जायगो। तातें तू अपने काम जा, हमारे कछू काम नाहीं हैं। देखि, काहू सों छुइयो मति। तब सुन्दरदास नें कह्यो, मेरो कहा अपराध है ? जो कछू टहल नाहीं बतावत। मैं तो जो वैष्णव आवत हैं तिन सबन की टहल करत हों। और तुम कहे कछू छूवे मति। ताको कारन कहा ? मैं तो ब्राह्मण हों तब कृष्णदास ने कही, जो-तू ब्राह्मण है तो अपने घरको है। यहाँ तो श्रीआचार्यजी के सेवक होई ताही सो टहल करावत हैं। ताही कों सब छुवायत हैं। और की छूई वस्तु कछू काम न आवे। तब सुन्दरदास नेक दूरि ठाड़े रहे। सो वैष्णवन ने रंच रंच सब जगह खोदि के, जल ल्याई, छिरकि के आसन बिछायो। ता ऊपर श्रीआचार्यजी महाप्रभु बिराजे। सो श्रीआचार्यजी को स्वरूप देखि के सुन्दरदास मोहित होइ गये। पाछे कृष्णदास गाम में जाय, सीधो सामग्री ले आये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु न्हाइ रसोई करि श्रीठाकुरजी कों भोग धरि, आप भोजन करे। पाछे सुन्दरदास कों दैवी जीव जानि महाप्रसाद दिये। सो महाप्रसाद लेत ही सुन्दरदास की बुद्धि निर्मल ह्वै गई। तब सुन्दरदास ने श्रीआचार्यजी सों बिनती करी, महाराज ! आप साक्षात् ईश्वर हो। सो मेरो कहा अपराध है, जो-मोसों कछू टहल न कराई। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे, जो-हमारे संग वैष्णव हैं सो सब हमारी रीति मर्यादा जानत हैं। तुमकों अबही हमारी रीति मर्यादा की खबरि नाहीं हैं। तातें तुमपै टहल कराये नाहीं। तब सुन्दरदास कहें, महाराज ! मोकों सरन ले, जा प्रकार मोसों बतावो ता प्रकार कछू टहल मैं आपकी करूँ। तब मेरे मनमें सुख होय। तातें मोकों चरन तो छूवाओ ? तब श्रीआचार्यजी सुन्दरदास की दैन्यता देखि सुन्दरदास कों नाम सुनाय चरन छूवाये। पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभु पौढ़े। तब सुन्दरदास सगरी रात्रि परम प्रीति सों चरन सेवा कियो करे। श्रीआचार्यजी महाप्रभु दोय चार बार रात्रि कों कहैं, जो-सुन्दरदास अब तुम सोई रहो। तब सुन्दरदास ने बिनती करी, जो-महाराज ! सोवनो तो नित्य है, परन्तु यह सेवा आपकी मोकों कब मिलेगी ?

पाछे प्रातःकाल भयो तब सुन्दरदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दंडवत् करि विनती किये, जो महाराज ! आप कृपा करिके मेरे घर पधारिये। और मेरी स्त्री कों अंगीकार करिये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु सुन्दरदास के घर पधारि, आप स्नानकरि रसोइ करि पाछे सुन्दरदास सों कहें, जो-सुन्दरदास स्त्री सहित न्हाई के आउ। तब श्रीआचार्यजी सुन्दरदास कों ब्रह्मसंबंध कराय स्त्री कों नाम सुनाय निवेदन कराये। पाछे सुन्दरदास के घर लालाजी ठाकुर हते। तिनकों पञ्चामृत सों न्हवाय आप भोग धरें। पाछे आप भोजन करि सुन्दरदास कों स्त्री सहित जूठन महाप्रसाद दिये। पाछे दोई दिन सुन्दरदास के घर रहि पुष्टिमार्ग की सब रीति बताय, आपतो श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन को पधारे। सुन्दरदास सेवा करन लागे।

वार्ता - प्रसंग १ - सो सुन्दरदास को माधोदास सूं स्नेह बहोत हतो। सो सुन्दरदास नें मनमें विचारी, जो-यह माधोदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को सेवक होइ तो कृतार्थ होई। याको सब अन्याश्रय छूटे। तब सुन्दरदास नें माधोदास आगे श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की बहोत बड़ाई करी। और माधोदास सों कह्यो, जो-तुम श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक होउ तो याही जन्म में कृतार्थ होउ। श्रीआचार्यजी महाप्रभु साक्षात् भगवान् हैं। तब माधोदास नें कह्यो, जो-मेरे तो जो कछू हैं सो कृष्णचैतन्य हैं। तब सुन्दरदास चुप करि रहै। परन्तु दोई जने में स्नेह बहोत।

भावप्रकाश - काहेते, लीला को सम्बन्ध दृढ़ है, तातें इहां दृढ़ स्नेह भयो। और सुन्दरदास ने माधोदास को कल्यान याही जन्म में बिचारयो। सो श्रीठाकुरजी अङ्गीकार करेंगे। भगवदीय जो विचारे सोई होय।

पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीजगन्नाथरायजी के दरसन करि कछुक दिन तहां रहिके पाछे पुरुषोत्तमपुरी सों पधारे। तब सुन्दरदास के घर उतरि स्नान करि पाक सामग्री करे। पाछे श्रीठाकुरजी कों भोग धरे। ता समें माधोदास, सुन्दरदास के घर

आई सुन्दरदास के पास बैठे । इतने में समय भयो तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु भोग सराये । सो माधोदास ने महाप्रसाद को थार भर्‍यो देख्यो । पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप भोजन करि पोढ़े तब माधोदास ने सुन्दरदास सों कही, जो–तेरे गुरु श्रीआचार्यजी के हाथ श्रीठाकुरजी अरोगत है नाहीं । मैं महाप्रसाद को भर्‍यो थार देख्यो । और मेरे घर मैं, जो श्रीठाकुरजी कों धरत हूँ, तामें ते एक ग्रास हू रहत नाहीं । ठाकुर मेरे सब खाय जात है । तब सुन्दरदास ने कही,कछू नाहीं रहत है, तो तुम कहा खात हो ? तब माधोदास ने कही, हौं अपने घर लायक न्यारो धरि राखत हों । ठाकुर कों अधिक होई तितनों धरत हों। तामें ते कछु खावत नाहीं । तब सुन्दरदास ने कही, या बात को उत्तर तुम पिछले पहर अइयो तब तुमसों कहूँगो । तब माधोदास घर गये । और सुन्दरदास स्त्री सहित महाप्रसाद लिये । पाछे श्रीआचार्यजी पोढिके उठे । तब सुन्दरदास श्रीआचार्यजी महाप्रभु सों कहै, जो–महाराज ! एक माधोदास सारस्वत ब्राह्मण है, सो कहत है, मैं ठाकुर के आगें धरत हूँ सो सब मेरे ठाकुर खाई जात हैं । वाकी थार में कछू रहत नाहीं । तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहैं, वह मूर्ख है । वाके घर भूत खाय जात है । श्रीठाकुरजी को हस्त लगे सो वस्तु कबहू घटे नाहीं । सो वह माधोदास दैवी है, और तुम्हारे मन में वाको उद्धार करन को आयो है, तातें अब वाकों सरनि लेके वैष्णव अवस्य करनो है । तब सुन्दरदास प्रसन्न भये । पाछे माधोदास आये । तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु माधोदास कों निकट बुलाई के कहै, माधोदास ! तेरे घर श्रीठाकुरजी सगरी सामग्री खाई जात हैं ?

तब माधोदास ने कही, हां, हां, कछू रहत नाहीं, थार में ते सब खाई जात है। ऐसे मेरे ठाकुर हैं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे, जो–काल्हि जब तू भोग धरे तब हमकों पहले खबरि करियो, हमहू देखें। तब माधोदास ने कही काल्हि सवेरे तुमकों खबरि करूँगो। पाछे माधोदास घर गये। सबेरे उठि रसोई करि, आय, श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कह्यो, महाराज ! पधारिये तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु तहां मंदिर के द्वार पर जाय रहें। तब माधोदास थार में सगरी सामग्री धरि श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दिखाय कह्यो, जो–अब मैं भोग धरत हूँ। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे जो–धरो। सो वह माधोदास ठाकुर के आगे धरि कें पीर को सुमिरन कियो। सो वह पीर भूत हतो सो आयो, तब मंदिर के पास आवत ही श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को देखि अग्नि तें जरन लाग्यो। और श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कह्यो ,जो–आजु मैं भूखो मर्‍यो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु भूत सों कहे, जो–आज तांई तू खायो, सो तो खायो। आज पीछे तू कबहू मति अइयो, फेरि इहां आवेगो तो भस्म ह्वै जायगो। तातें बेगि जा। तब वह पीर रोवत भाजि गयो। पाछे समय भयो तब माधोदास भोग सरावन कों मंदिर में गयो। सो तहां जाई देखे तो थार में सगरी सामग्री ज्यों की त्यों भरी है। तब माधोदास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कह्यो, जो–आज तुम इहां आये। सो मेरे ठाकुर आरोगे नाहीं, भूखे रहे। तब श्री आचार्यजी महाप्रभु माधोदास सूँ कछू कहे नाहीं। आप चुपचाप सुन्दरदास के घर पधारे। तहां रसोई करि श्रीठाकुरजी कों भोग धरि महाप्रसाद ले

आप पोढ़ें। पाछे सगरे वैष्णव, सुन्दरदास, महाप्रसाद लियो। पाछे रात्रि भई तब माधोदास सोये। ऐसेमें अर्द्ध रात्रि गई तब श्रीठाकुरजी के अनुचर आय माधोदास कों खाटतें ओंधो डारि के मारन लागे। तब माधोदास हाहा खाय के कहै, जो–तुम मोकों काहे कों मारत हो ? तब अनुचरन ने कही, श्रीआचार्यजी तो भगवत्स्वरूप है। तिनसों तू कह्यो, जो–तुम्हारे आए मेरे ठाकुर भूखे रहै। ताते तोकों मारत हैं। तेरे घर जो भूत खाई जात है, जा पीर को तू आश्रय कियो है, नित्य बुलावत है। सो आज श्रीआचार्यजी बैठे हते, ताते वह प्रेत अग्नि सों जरन लाग्यो सो भाजि गयो। तेरे ठाकुर तो इतने दिन में आज ही अरोगे हैं। तब माधोदास ने कही, मैं श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को स्वरूप जान्यो नाहीं, ताते कह्यो। अब सवारे अपराध क्षमा कराय सेवक होऊँगो। अब तुम मोकों मति मारो। तब श्रीठाकुरजी के अनुचर कहे, जो–सवारे अपराध क्षमा न करावेगो तो, (और) सेवक उनको न होईगो तो, काल्ह रात्रि कों हम तोकों मारि डारि चूर्ण करेंगे। यह कहिके श्रीठाकुरजी के अनुचर गये। पाछे सवारो भयो तब माधोदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन पास आई दंडवत बिनती कियो। जो महाराज ! मैं आपको अपराध बहोतसो कियो, मैं अज्ञानी जीव हूँ, आपको स्वरूप कहा जानूँ ? आप तो साक्षात् भगवान हो। अब मेरो अपराध क्षमा करो। मेरो पिता मर्यो, सो मोसों कह्यो, जो–तू या पीर को माने जैयो। सो उपर दिखायवे कूँ ठाकुर राखो हतो। तातें आप अब कृपा करि मेरे घर पधारो, मोकों सरन लेहू। जा प्रकार आप बतावो ता प्रकार मैं

भगवद् सेवा करूँ। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु माधोदास की दैन्यता देखिके माधोदास के उपर प्रसन्न होई, माधोदास के घर कृपा करि, फेरि पधारे। तहां स्नान कराई नाम सुनाई ब्रह्मसंबंध कराये। पाछे श्रीठाकुरजी कों पञ्चामृत स्नान कराई, पाट बैठाय, माधोदास के माथे पधराये। पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप रसोई करि श्रीठाकुरजी कों भोग धरिकें आप भोजन किये। पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने माधोदास सूँ कह्यो, जो–माधोदास! या गाम में जितने वैष्णव होई तिन सबन कों महाप्रसाद लेंन कों बुलाई ल्याऊ। तब माधोदास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कह्यो, जो–महाराज! महाप्रसाद तो थोरो है। और या गाम में वैष्णव तो बहोत हैं। सो सबकों कैसे पहोंचेगो? तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, जो–तू मूर्ख है, महाप्रसाद कबहू निघट्यो है? जा सब वैष्णव कों बुलाई लाव। तब माधोदास वैष्णवन सों कहै, जो–श्रीआचार्यजी महाप्रभु बेगे बुलावत हैं, सो चलो। सो सुनत ही सगरे वैष्णव सब काम काज छोड़िके दौरे आये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु सबन के आगे महाप्रसाद की पातरि धरि के सबन कों महाप्रसाद लिवाय दियो। और महाप्रसाद को थार भर्‍यो को भर्‍यो ही रह्यो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने माधोदास सूँ कह्यो, जो–माधोदास! देखि वैष्णव कों दृढ़ विश्वास चहिये। महाप्रसाद कबहूँ न घटे। या प्रकार कौ महात्म्य श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने माधोदास कों वा समय वा ठौर दिखायो।

भावप्रकाश–क्यों, जो–इन कों अब ही दृढ़ विश्वास नांही है, नये वैष्णव हैं। कछू महात्म्य देखें तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को दृढ़ आश्रय होय। आश्रय

बिना भगवद्-प्राप्ति फल सिद्धि न होई। ताते महात्म्य दिखायो।

तब माधोदास कों विश्वास दृढ़ भयो। पाछें श्रीआचार्यजी वहां रहि, माधोदास कों सगरी रीति भांति पुष्टिमार्ग की बताय, आप कासी पधारे।

भावप्रकाश–यह वार्ता में यह सिद्धान्त भयो, जो–भगवदीय के संग तें कैसोउ दुष्ट होई परन्तु वाको उद्धार होई। और माधोदास ठाकुर के आगे भोग धरे सो भूत खाई, यह बात संभव नाहीं। काहे तें, जहाँ श्रीठाकुरजी को नाम होई, तहाँ भूत आदि को प्रवेस न होई। तो श्रीठाकुरजी के आगे भोग धरे सो भूत कैसे खाय ? तातें ऊपर कहि आय, जो–माधोदास कों पिता के संग तें प्रेत को आश्रय (सिद्ध) भयो हतो। तातें भूत खाई जातो। यातें यह जताये, जो–खोटे मनुष्य को संग किये दुःख होई, सत्संग किये कृतार्थ होई। वैष्णव ॥७७॥

सो सुन्दरदास के संग ते माधोदास बड़े भगवदीय भये। श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावते। तातें सुन्दरदास श्री आचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। सो इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७७॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, मावजी पटेल और इनकी स्त्री बिरजो, ये उज्जैन में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश–और मावजी पटेल और बिरजो, जा प्रकार श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक भये, सों सब पद्मारावल सहित गोपालदास की वार्ता में ऊपर कहि आये हैं। तातें इहां नाहीं कहे। लीला में ये श्रीचन्द्रवलीजी की सखी हैं। इन मावजी पटेल को नाम 'रूपा' है। और 'हरखा' बिरजो को नाम है। सो उज्जैन में जन्में। सो मावजी पटेल के पास द्रव्य बहोत हतो। सो एक बार बिरजो श्रीगोकुल आई, तब श्रीगुसांईजी सों बिनती करी, जो–महाराज ! मोकों भगवद् सेवा पधराइ दीजें। मैं श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों बिनती करी हती, तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, जो–तुम्हारो मनोरथ श्रीगुसांईजी पूर्ण करेंगे। तातें आप अब मोपे कृपा करिये। तब श्रीगुसांईजी श्रीनवनीतप्रियजी के खेलवे के ठाकुर में ते एक लालजी बिरजो के माथे पधराय दिये ? तब बिरजो ने श्रीगुसांईजी सों बिनती करी, जो–महाराज !

श्रीठाकुरजी बेगि कृपा करि अनुभव जतावें, सो उपाय आप कृपा करिके कहिये। तब श्रीगुसांईजी कहें, जैसो भाव हमारे ऊपर राखत हो तेसो भाव पुष्टिमार्गीय वैष्णवन में राखियो। तुम्हारो सगरो मनोरथ श्रीठाकुरजी पूर्ण करेंगे। तब बिरजो श्रीगुसांईजी सों बिदा होई श्रीठाकुरजी कूँ घर में पधराय के बड़ो उत्सव कियो। गाम गाम के वैष्णव बुलाई महाप्रसाद, खरची आदि वस्त्र सों सबको समाधान कियो। उज्जैन में पद्मारावल के बेटा कृष्णभट्ट के संग तें अलौकिक बुद्धि भई। श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावन लागे।

वार्ता – प्रसंग १ – और बिरजो वर्ष दिन में दोय बार ब्रज में श्रीगोकुल, श्रीगुसांईजी के दरसन कों, (तथा) श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों आवती। सो एक गाड़ा गुड़ को, एक घी को, भरि के संग ले आवती। सो पन्द्रह दिन श्रीनाथजीद्वार में रहती। और पन्द्रह दिन श्रीगोकुल में रहती। तब श्रीगोवर्द्धनधर के सामग्री करावती। महाप्रसाद आवतो सो ढांकि राखती। सो ग्वाल गाय चराय के आवते तब सगरो महाप्रसाद लिवाय गायन के खिड़क में आवती, ग्वालन कों, गायन कों महाप्रसाद लिवावती। गेहूंन की थूली करि गायन कों खवावती। सगरे सेवकन कों पहरावनी करती। सबन कों सेवगी देती। श्रीनाथजी कों नित्य गये मनोरथ, आभूषण, वस्त्र करती। सो सगरे सेवक प्रसन्न रहते। और श्रीगोकुल में श्रीगुसांईजी की भेंट पधरावनी, सगरे बालक बहू बेटीन कों पहिरावनी नित्य नये मनोरथ करती।

वार्ता – प्रसंग २ – और एक समय उत्सव के दिन वैष्णव महाप्रसाद लेत हते। बिरजो अनसखड़ी परोसती हती। तब बिरजो के मन में यह मनोरथ भयो, जो–सगरे वैष्णव की मण्डली बैठी होई, और मैं सखड़ी महाप्रसाद परोसों। पाछें बिरजो नें कृष्णभट्ट सों कही, मेरे मन में यह मनोरथ भयो है, जो–सगरे गाम गाम के वैष्णव बुलाई सखड़ी महाप्रसाद मैं अपने हाथ सों

सगरे वैष्णवन कों परोसों । तब कृष्णभट्ट कहें, यह मनोरथ श्रीगुसांईजी आज्ञा करें तो भक्ति भाव सों सिद्ध होई । सो सगरे वैष्णव के समाज सहित श्रीगुसांईजी पास श्रीगोकुल जैये । तब आप कहें सो होय । परन्तु यह मनोरथ द्रव्य साध्य है । तब बिरजो आइ मावजी पटेल सों कही, जो–मेरो यह मनोरथ है, सो तुम पूरण करो । सगरे वैष्णवन कों महाप्रसाद लिवाऊं, अपने हाथ सों । सो मैं कृष्णभट्ट सों पूछी । तब कृष्णभट्ट कहें, द्रव्य साध्य है । वैष्णवन कों श्रीगोकुल ले जैये । तब मावजी पटेल नें कही, मो पास लक्ष मोहौर हैं । जो–इतने में काम होई तो सुखेन कृष्णभट्ट सों पूछिके मनोरथ करो । तब बिरजो कृष्णभट्ट पास आइ कही, लक्ष मोहौर हैं, इतने में मनोरथ पूरण होई तो। तब कृष्णभट्ट नें कह्यो, अवश्य, तुम्हारो मनोरथ प्रभु पूरण करेंगे। तब बिरजो आइ मावजी पटेल सों कही, कृष्णभट्ट नें कही है, इतने में मनोरथ पूरण होइगो । तब मावजी द्रव्य भेलो करि लक्ष मोहौर बिरजो कों दियो । तब बिरजो लक्ष मोहौर कृष्णभट्ट के आगे धरि बिनती करी, अब तुम्हारे हाथ है, मेरो मनोरथ पूरण करो । तब कृष्णभट्ट गाम गाम के वैष्णवन कों पत्र लिखि के असवार गाड़ी, खरची पठाई । प्रीतिपूर्वक सगरे वैष्णव गुजरात, हालार के भेले करि सबन कों न्यारो न्यारो डेरा, खर्ची दिये । पाछें उज्जैन तें सगरे वैष्णव सहित कृष्णभट्ट, बिरजो श्रीगोकुल कों चले । सो श्रीनाथजीद्वार आयके समाज सहित श्रीनाथजी के दरसन करे । श्रीनाथजी कों सामग्री, वागा, वस्त्र, आभूषण को मनोरथ करि श्रीगोकुल आये । श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन करि, श्रीगुसांईजी के दरसन किये । तब श्रीगुसांईजी सों कृष्णभट्ट

नें बिनती करी, जो–महाराज ! बिरजो को यह मनोरथ भयो है। जो–सगरे वैष्णवन कों सखड़ी महाप्रसाद हों अपने हाथ सों परोसों। ताके लिये सगरे वैष्णवन के समाज सहित आपके पास आये हैं। सो आप आज्ञा देहु तब यह मनोरथ पूरण होय। तब श्रीगुसांईजी मनमें विचारे, जो–बिरजो के बड़े भाग्य है, जो ऐसो मनोरथ उठ्यो। परन्तु अब हम आज्ञा देंइ तो या समय तो बाधा नहीं। यह मनोरथ जगत में प्रसिद्ध होवे। परन्तु श्रीआचार्यजी नें वेद–मर्यादा राखी है, जो–हमतें लोग सगरे यह कहेंगे, जो–श्रीगुसांईजी वेद–मर्यादा के पालन हारे, सगरे ब्राह्मणन कों पटेल के हाथ सों सखड़ी महाप्रसाद लिवाये। या प्रकार दोष बुद्धि करि अनेक जीव को बिगार होई। और वैष्णव को मनोरथ पूरण न करिये तो पुष्टि–भक्ति को विरोध होय। तातें भक्तन के मनोरथ कों तो, आवश्य पूरण करयो चहिये। पाछें यह विचारयो, जो–जामें मर्यादा रहे, भक्तन को मनोरथ पूरण होई, सगरे वैष्णव प्रसन्न होई, सो करनो। तब श्रीगुसांईजी नें कही, जो–यह मनोरथ तो श्रीजगन्नाथरायजी पुरुषोत्तमपुरी में सिद्ध होई। तामें पूरव के वैष्णव हू सगरे आवेंगे। तब कृष्णभट्ट नें बिरजो सों कही, जो–यह मनोरथ श्रीजगन्नाथजी चलिये, तहां पुरुषोत्तमपुरी में सिद्ध होइगो। तहां पूरो मनोरथ है, सो सिद्ध होइगो। तब बिरजो नें कही, बहोत आछो, पुरुषोत्तमपुरी चलिये। श्रीगुसांईजी हू कृपा करि पधारे तो बहोत सुख होय। तब कृष्णभट्ट ने श्रीगुसांईजी सों विनती करी, जो–महाराज ! आपहू कृपा करिके पुरुषोत्तमपुरी पधारो तो बहोत सुख होई। तब श्रीगुसांईजी कहे, हमहूँ पधारेंगे, वैष्णव प्रसन्न होई सो करनों। पाछें श्रीनन्द, पच्छिम के, वैष्णव

बुलाये। मथुरा के वैष्णव संग ले श्रीगुसांईजी सहित आगरे आये। आगरे के वैष्णव संग ले समाज सहित कासी आय कासी के वैष्णव सगरे संग लिये। या प्रकार गाम गाम के वैष्णव संग लिये। सो जाही गाम में उतरे तहां नित्य नई सामग्री के मनोरथ गाम गाम के वैष्णव के डेरा न्यारे न्यारे ठाड़े होई। तहां न्यारे न्यारे कीरतन-वार्ता, श्रीगुसांईजी कों नित्य नये मनोरथ। ब्यौपारी अपुने गाड़ी सीधा सामानके लिये संग चले। सो सगरे वैष्णव के हृदय में आनंद। नित्य श्रीगुसांईजी को दरसन। नित्य नये उत्सव। जैसे श्रीकृष्ण की असवारी द्वारिका में निकसे, या प्रकार को। वैष्णव बूढ़े आदि कों असवारी, भांति भांति की। जा गाम में उतरे ता गाम के लोग अनेक सुखी भये, द्रव्यादिक सों। या प्रकार गाम गाम के वैष्णव संग ले श्रीपुरुषोत्तमपुरी आये। श्रीजगन्नाथजी के दरसन किये। नाना प्रकार की सखड़ी अनसखड़ी सामग्री कराई। पाछें बिरजो ने श्रीगुसांईजी कों अपने हाथ सों सखड़ी, अनसखड़ी को थार साजि के भोजन करायो। पाछें सगरे वैष्णवन कों बिरजो परोसि के प्रेम में मगन ह्वै गई। आनन्द के आंसू नेत्रन में भरे। देह सगरी में पुलकावली भई। मन में कही, धन्य श्रीगुसांईजी हैं, और कृष्णभट्ट सरीखे भगवदीय हैं। जो-मोकों या सुख को अनुभव कराये। पाछें कुछुक दिन पुरुषोत्तमपुरी में रहिके नित्य नये मनोरथ नाना प्रकार की सामग्री के, जा वैष्णव कों जो रुचे सो लिवाए। पाछें पुरुषोत्तमपुरी सों सब समाज सहित चले, सो वाही प्रकार प्रति दिन नित्य नई। ऐसे करत श्रीगोकुल आये। कछुक दिन गोकुल

श्रीनाथजीद्वार रहि नाना प्रकार के मनोरथ किये। पाछें द्रव्य बच्यो सो बिरजो ने श्रीगुसांईजी की भेट कियो। तब श्रीगुसांईजी बिरजो के ऊपर बहोत प्रसन्न भये, जो–अलौकिक, वैष्णव को मनोरथ कियो। पाछें बिरजो श्रीगुसांईजी सों विदा होई के समाज सहित उज्जैन आई। सगरे वैष्णव कों प्रीतिपूर्वक महाप्रसाद लिवाइ, खरची न हती तिनकों खरची, वस्त्र पात्र दे, सबन कों प्रसन्न करि बिदा किये। सो बिरजो कृष्णभट्ट के संग तें भली वैष्णव भई। सगरे वैष्णव और श्रीगुसांईजी उनसों प्रसन्न रहते। श्रीठाकुरजी सानुभावता जनावते। सो मावजी पटेल और बिरजो ऐसे श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हते। तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये। वार्ता ॥७८॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, गोपालदास क्षत्री, पश्चिम में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश – ये गोपालदास लीला में श्रीनन्दरायजी के मुख्य खवास हैं। तहाँ 'जसवन्त' इनको नाम है। सो जसवंत, नंदरायजी कों वरुन पकरि ले गयो ता दिन श्रीनन्दरायजी कों घाट पर बैठारि आप अपने घर अपने कार्य कों गयो। पाछे श्रीनन्दरायजी अकेले हते। सो वरुन ने पकरे। सो श्रीठाकुरजी सुनि के वरुनलोकतें श्रीनन्दरायजी कों ले आये। तब श्रीबलदेवजी श्रीनंदरायजी के खवास जसवन्त सों कहे, जो–श्रीनन्दरायजी कों वरुण ले गयो तब तू कहां रह्यो ? तब जसवन्त ने कही, मैं अपने घर कछू काम आयो हतो। तब श्रीबलदेवजी शाप दिये। जो–जाऊ, भूमि पर परो। इतनो श्रम श्रीनन्दरायजी कों करायो। खवास होई रात्रि कों संग न रह्यो। सो पश्चिम में गोपालदास नरोडा में एक क्षत्री के घर प्रगटे। सो सात वर्ष के भये तब विद्या बहोत पढ़े। और द्रव्य बहोत हतो। और राजसी स्वभाव बहोत हतो। दस पाँच आदमी आगे पाछे चलते। सो काहू कों बदते नाहीं। जो कोई भले मनुष्य होई तिनकूं एक दोय दोष लगावते। पाछे पश्चिम में एक दूसरो गाम हतो। तहाँ गोपालदास को विवाह भयो। सो ब्याह करि स्त्री कों ले गोपालदास आवत हते। सो मार्ग में एक बड़ो

पंडित मिल्यो, तासों वाद करन लागे। सो तीन दिन मार्ग में डेरा करि रहै। परन्तु उह पंडित सों जीते नाहीं। पाछे लराई भई। तब गोपालदास को पिता छुड़ावन गयो। सो पंडित के मनुष्यन ने तीर मार्‍यो। सो गोपालदास को पिता मर्‍यो, तब गोपालदास हथियार ले दोरे। सो पंडित अपने मनुष्यन सहित भाजि गयो। गोपालदास बहोत ढूँढे, परन्तु कहूँ पाये नाहीं। तब पिता की देह को संस्कार करि घर आये। पाछे गोपालदास द्वारिका श्रीरणछोड़जी के दरसन कों गये। तहाँ श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारे हते। तब गोपालदास ने सुनी, जो–श्रीआचार्यजी बड़े पंडित हैं, मायामत खंडन किये हैं। तब गोपालदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों वाद करन कों आये। सो ततकाल चरचा में हारे। तब गोपालदास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कह्यो, जो–वैष्णव धर्म में कहा है ? ठाकुरजी तो सब के घट में बिराजत हैं। सगरो जगत कृष्णरूप आपहू कहें। तब वैष्णव कुत्ता आदि सों छुई क्यों जात हैं ? सब भगवद् रूप भयो तहाँ छुई कैसे जाई ? तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें। हमारो तो वेद मार्ग है। सो वेद शास्त्र यह कहत हैं, जो–जगत भगवद् रूप और इतने हीनतें छुई जाई। इतने उत्तम। दया सबके उपर करनो। यह कहे सो वेद रीति, वैष्णव कहत हैं। और तू निर्गुण व्यापक कहत हैं, संसार सब ब्रह्म रूप है। सो तू सब में दोष बुद्धि करि जाकी ताकी निन्दा क्यों करत है ? कपरा क्यों पहरे हैं ? ब्रह्म कों तो कछू करनो नाहीं। साक्षीवत् ह्वे रहे। अब तू सोच। या प्रकार सुनि के गोपालदास कों ज्ञान भयो। तब गोपालदास ने कही, अब मैं आपकी सरन हों। जन्म सगरो कुटिलता करत मोकों बीत्यो। अब मोकों सरन लेके कृतार्थ करो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु गोपालदास कों न्हवाय के नाम सुनाई ब्रह्मसंबंध कराये। तब गोपालदास ने कही, कृपा करि आप मेरे घर पधारिये। तब गोपालदास के घर नरोड़ा में श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारे। तब गोपालदास को बेटा वर्ष चार को हतो। ताकों नाम सुनाय गोपालदास की स्त्री कों नाम सुनाये। तब गोपालदास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों बिनती करी, जो–महाराज ! अब हमकों कहा आज्ञा है ? तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु गोपालदास सों कहें, तुमतें भगवद् सेवा तो बनेगी नाहीं। काहे तें, स्त्री पुत्र दैवी नाहीं हैं। तुम दैवी हो, सो तुमकों विरह बहोत है। विरह वारे कों हृदय में अनुभव बहोत होई। बाहर की क्रिया न बने। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु गद्य–श्लोक और पंचाक्षर–मंत्र लिखिके गोपालदास कों दिये। और कहे, इनकों भोग धरि खान–पान करियो। और हमारी आज्ञा है, जो जीव आवे तिनको तुम नाम सुनैयो। जन्म तें स्वामी पद में

रहै। तातें स्वामी पद तुम कों दिये हैं। जो वादी आवे तिन सों वाद करियो। तुमसों कोई न जीतेगो। यह गोपालदास सों कहि श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप अडेल पधारे। सो गोपालदास नाम सुनावते। बड़े टेक के वैष्णव भये। वादी सों वाद करे, जो मुख सों बात निकसे सोई करि दिखावे, श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के बल सों इनको यश पश्चिम में फेल्यो।

वार्ता – प्रसंग १ – पाछें एक समय श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीद्वारिकाजी पधारे, तब मार्ग में नरोड़ा गाम आयो। तब तहां श्रीआचार्यजी महाप्रभु गोपालदास के घर पधारे। सो गोपालदास तो घर न हते। गोपालदास को बेटा वर्ष चौदह को हतो। सो गोपालदास के बेटा सों श्रीआचार्यजी महाप्रभु पूछे, जो–गोपालदास कहां गये हैं ? तब गोपालदास के बेटा ने कही, जो–महाराज ! श्रीठाकुरजी की सेवा कों गये हैं। यह वचन सुनि श्रीआचार्यजी महाप्रभु गोपालदास के बेटा पर बहोत अप्रसन्न भये। कहे, जो–गोपालदास को बेटा ऐसो अनुचित क्यों बोल्यो? अब इहा रहनो उचित नाहीं। पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभु मनमें विचारे, जो–गोपालदास कूँ आवन दीजे, देखिये, गोपालदास की बुद्धि कैसी है ? उह कैसो बोलत है ? इतने में गोपालदास आय श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दण्डवत् कियो। तब श्रीआचार्यजी कहें, जो–गोपालदास ! तू कहाँ गयो हतो ? तब गोपालदास ने कही, महाराज ! पेट लाग्यो है। सो कछू व्यावृत्ति कों गयो हतो। यह बचन सुनि गोपालदास ऊपर श्रीआचार्यजी महाप्रभु बहोत प्रसन्न भये। कहे, वैष्णव कों ऐसो बोलनो उचित है। ऐसे बोलनो नाहीं, जो–व्यावृत्ति लौकिक कों जाई, तहाँ श्रीठाकुरजी की सेवा को नाम लेई।

भावप्रकाश– पुष्टिमार्गी की यह रीति है, जो–सेवा में जाई तऊ लौकिक

को नाम लेई। भगवद् धर्म प्रकास न करें, सो भगवदीय। आछे जीव न होई सो लौकिक में हू अपनी बड़ाई अर्थ सबके आगे भगवद् सेवा को नाम लेई।

पाछे गोपालदास नें बिनती करी, जो-महाराज! दोई चारि दिन कृपा करिकें रहिये या प्रकार राखिवे कों बहोत करें। परन्तु श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहैं, जो-हमकों श्रीद्वारिका बेगि जानो है। सो कहिके आप पधारे, तहां रहे नाहीं।

भावप्रकाश-सो यातें, गोपालदास तो भगवदीय है। परन्तु गोपालदास की स्त्री, पुत्र की बुद्धि ठिकाने नाहीं है। तातें आप पधारे। जो इहाँ रहे आनन्द न होईगो।

वार्ता - प्रसंग २ - सो गोपालदास कों श्रीनाथजी के दरसन को विरह बहोत। सो श्रीनाथजीद्वार आय श्रीनाथजी के दरसन किये। पाछे गोपालदास कों ज्वर आयो। सो दोय लंघन किये। पाछे रात्रि कों एक दिन गोपालदास कों तृषा बहोत लागी। सो पानी पास न हतो। एक आपनो सेवक संग लाये हते, सो वाकों पुकारें, सो वह सोई गयो हतो। और गोपालदास को कण्ठ सूखि गयो, सो वचन न निकसे। तब मन में व्याकुल भये। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी अपनी जलपान की झारी लैके गोपालदास पास आय, गोपालदास कों जलपान कराय, झारी तहाँ ही धरि गये।

भावप्रकाश - सो यातें, जो-गोपालदास को जस प्रगट करिबे के लिये झारी धरि आये। जो सब कोऊ जाने, जो-गोपालदास बडे भगवदीय हैं। जिनकों श्रीनाथजी जल पिवाये, यह जस होई। काहे तें, जैसे श्रीठाकुरजी को जस गाय के जीव कृतार्थ होई, तैसे भगवदीय को जस गाय के जीव कृतार्थ होई। और गोपालदास राजसी हते। सो सब कोई इनकी उपर की क्रिया देखिके केवल, वैष्णव निन्दा करें तो महा अपराध वाकों लगे। तातें गोवर्द्धनधर झारी धरि आये तब गोपालदास कों, सगरे, भगवदीय जाने। सो निन्दा कोई न करें, यातें झारी धरे। तामें यह (हू) जताये,

यद्यपि राजसी हैं, तोऊ श्रीआचार्यजी को सेवक मोकों बहोत प्रिय हैं। यह श्रीनाथजी सबकों जनायवे के लिये झारी तहाँ धरि आये। काहेतें गोवर्द्धनधर को हृदय अति कोमल है। सो अपने भक्तन कों दु:ख सहि न सकें।

पाछे प्रात:काल भयो तब सगरे भीतरिया स्नान करि श्रीगोवर्द्धननाथजी के मन्दिर में आइ, देखें तो झारी नाहीं। सो सगरे चिन्ता करन लागे। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने बड़े रामदासजी सों कह्यो। जो–गोपालदास रात्रि कों बहोत प्यासे भये। तहाँ मैं उनकों जलपान कराइ झारी धरि आयो हूँ। तब रामदासजी आय गोपालदास सों कहें, जो–गोपालदास ! तुम रात्रि कों जल कहाँ तें पियो। तब गोपालदास कहें, मोकों तो ज्वर चढ्यो, और तृषा बहोत लगी। कण्ठ सूख्यो, सो व्याकुल भयो हतो। तातें मोकों कछू खबरि नाहीं जो–किन जलपान करायो। तब रामदासजी ने गोपालदास सों कह्यो, जो–तुमकों श्रीगोवर्द्धनधर जलपान कराई झारी इहां ही धरि गये, सो हम झारी लेन आये हैं। तातें तिहारे बड़े भाग्य हैं। तब गोपालदास कहैं प्रभुन कों इतनो श्रम करनो पड्यो ? अपने मनुष्य पर खीजे, तू पानी मेरे पास क्यों न राख्यो ? और तू सोई गयो ? मोकों प्यास बहोत लागी, सो श्रीठाकुरजी कों श्रम करनो पड्यो। सो बुरी भई। पाछें रामदासजी गोपालदास को समाधान करि झारी ले मन्दिर में आये। पाछे गोपालदास आछे भये। श्रीनाथजी को दरसन करि अपने घर आये। परन्तु श्रीगोवर्द्धनधर को विरह अष्ट प्रहर इनकों रहे।

वार्ता – प्रसंग ३ – और एक दिन विरह बहोत भयो। सो विरह को चोखरा करिके गाये।

''केकी सिखंडी स्याम घन कंठ मनोहर हार।
धन्य ते दिन देखिशुं नैनन नन्दकुमार॥''

वार्ता – प्रसंग ४ – और एक समय श्रीगुसांईजी श्रीद्वारिका कों श्रीरणछोड़जी के दरसन कों पधारे। तब मार्ग में नरोड़ा गाम में आये। सो गाम के बाहर डेरा करि उतरे। सो उत्थापन के समय गोपालदास श्रीगुसांईजी के दरसन कों चले। तब दोय जने गोपालदास के संग चले। सो श्रीगुसांईजी के दरसन तहाँ जाई किये। तब दोऊ जने गोपालदास सों कहें, हमकों श्रीगुसांईजी पास नाम दिवावो। तब गोपालदास ने कही, हमहूँ नाम देत हैं। सो हम घर चलेंगे तब तुम हमारे घर आईयो, हम तुमकों नाम सुनावेंगे। या प्रकार दोऊ जने तीन बार गोपालदास सों कहै, जो–हमारो मनोरथ यह है, जो–हमकों श्रीगुसांईजी नाम सुनावें। सो तीनों बार गोपालदास ने कही, हमारे घर आइयो, हम तुमकों नाम सुनावेंगे। यह बात सब श्रीगुसांईजी उन दोऊ जनेन सों पूछे, जो–तुम गोपालदास सों कहा कहत हो ? तब उनने कही, जो–महाराज ! हमारो मनोरथ यह है, जो–हमकों कृपा करिके आप नाम सुनावो। तब श्रीगुसांईजी दोऊन कों नाम सुनाय कृतार्थ किये। पाछें श्रीगुसांईजी ने गोपालदास सों कही, जो–तुमकों तो श्रीआचार्यजी महाप्रभु अङ्गीकार किये हैं, सो तो दृढ़ है। प्रभु तुमकों कबहू न छोड़ेंगे। परन्तु जितने सेवक तुम नाम सुनाय के किये हो, सो सब हमारे न होइंगे। पुष्टिमार्ग तें बहिर्मुख होइंगे। सो यह बात सगरे वैष्णव सुनिके श्रीगुसांईजी के सेवक होई कृतार्थ भये। और जो कोई रहि गये सो पुष्टिमार्ग तें भ्रष्ट भये। तिनकों श्रीगुसांईजी 'गंगोज'

कहते । सो गोपालदास सदा विरह दसा में मगन रहते । तातें इनकी वार्ता कहां तांई कहिये । वार्ता ॥७९॥

भावप्रकाश- जैसे श्रीगङ्गाजी की धारा सों जल छूटि न्यारो जल रहै । सो सगरे मनुष्यन कों पाप रूप है । ताके छूवे तें दोष लागे, तद्‌वत् भये । यामें यह जताये, जो-गोपालदास कों स्वामी पद आयेतें जीवन को बिगार भयो । तातें दैन्यता बड़ो पदार्थ है । सब फल कों सिद्ध करे । और अहङ्कार महाबाधक है यह दिखाये । तातें गोपालदास तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे । जिनकों श्रीगोवर्द्धनधर अनुभव जनावते । जल पान अपनी झारी तें पिवाये । वैष्णव ॥७९॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, बादरायनदास, पुष्करना ब्राह्मण स्त्री पुरुष, सो मोरवी में रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं-

भावप्रकाश-सो ये लीला में श्रीललिताजी की सखी हैं । इनको नाम 'श्रुतिरूपा' है । और इनकी स्त्री को नाम 'गङ्गा' है ।

वार्ता - प्रसंग १ - सो मोरवी में एक पुष्करना ब्राह्मण के घर जन्में । तब माता पिता नें इनको नाम बादा धरयो । पाछें जब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक भये, तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु इनको नाम बादरायनदास धरे । सो बादा बरस तेरह के भये । तब इनको गाम ही में ब्याह भयो । सो मोरवी में रहते । और एक वाछवभट्ट (वत्सा भट्ट) गुजराती ब्राह्मण हते, सो गुजरात में रहते । श्रीभागवत की कथा कहि निर्वाह करते । सो वाछव भट्ट श्रीद्वारिका श्रीरणछोड़जी के दरसन कों चले । तब मारग में मोरवी गाम आयो, तहाँ गये । तब बादरायनदास ने वाछव भट्ट कों राखे, अपने घरमें । सो वाछवभट्ट के सेवक होई नाम पायो । पाछें घरमें भट्ट पास श्रीभागवत बादरायनदास ने सम्पूर्ण सुन्यो । पाछें वाछवभट्ट तो श्रीद्वारिका कों गये । पाछें कछुक दिन में

श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीद्वारिका कों पधारे। सो मोरवी गाम के बाहर एक बगीची में उतरे। तब मोरवी के सगरे वैष्णव श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के दरसन कूँ आये। तामें बादा हू आये। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु वा समय श्रीसुबोधिनीजी की कथा कहे। सो 'भँवर गीत' को प्रसंग ऐसो कहे, जो–बादा कों मूर्छा आइ गई। सो एक पहर में सावधान भये। तब बादा मनमें कहे, जो वाछवभट्ट पास गये, श्रीभागवत सुन्यो, परन्तु ऐसो आनन्द नाहीं आयो। तब बादा ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दंडवत् करि बिनती करी, जो–महाराज ! आप कृपा करि मोकों सेवक करिये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, जो–तू वाछव भट्ट को सेवक तो होई चुक्यो है। अब सेवक क्यों होत हैं ? हम तो तुमकों फेरि सेवक न करेंगे। तब बादा श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों बिनती करि, अपने घर आई, स्त्री सों कह्यो, जो–श्रीवल्लभाचार्यजी पधारे हैं, सो तो साक्षात् भगवान ही हैं। भँवर गीत को प्रसङ्ग कथा ऐसी कहे सो मोकों मूर्छा आई। पाछें मैं सेवक होन की बिनती करी, सो आपने नाहीं करी। जो तू तो वाछव भट्ट को सेवक है, अब सेवक तोकों न करेंगे। सो अब कैसे करिये ? जो–श्रीआचार्यजी महाप्रभु सेवक करें तों कृतार्थ याही जन्म में होई। तब स्त्री ने कही, तुमकों बिनती करतें आई नाहीं। मोकों ले चलो, तो मै बिनती करूँ। तब बादा ने कही चलो। सो बादा और बादा की स्त्री श्रीआचार्यजी महाप्रभुन पास आये। तब बादा की स्त्री ने दंडवत् करिके कह्यो, जो–महाराज ! मेरो पति सेवक होनकी बिनती आपुसों कियो। सो आप नाहीं किये। सो आप तो, पतित, अधम हम सरीखे संसार

में पड़े हैं, तिनके उद्धार करनार्थ पधारे हो। सो सरन लीजे। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहें, जो हम तो यातें यों नाहीं करी, जो–वाछव भट्ट के सेवक ह्वै चुके हो। फेरि क्यों सेवक होत हो? तब स्त्री ने कही, जो–महाराज! वाछव भट्ट के सेवक भये तातें हमारो तो कछू अर्थ सर्यो नाहीं। ऐसे ब्राह्मण जीविका के लिये ठोर ठोर श्रीभागवत की कथा कहेत डोलत हैं। सो हमारो उद्धार कहा करेंगे ? तातें आप सरन ले हमारो उद्धार करो। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी कहें, जो–आज तो सांझ भई है, सवेरे तुमकों सेवक करेंगे। अब तो तुम घर जाव। तब स्त्री पुरुष दोऊ जने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दंडवत् करि घर आये। पाछें प्रातःकाल दोऊ जने आइ, श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों दंडवत् करि बिनती किये, जो–महाराज ! कृपा करि हमारे घर पधारि रसोई करिये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु बादा के घर पधारि, स्त्री पुरुष दोऊ जनकों न्हवाय के नाम सुनाये, ब्रह्मसम्बन्ध कराये। पाछें आप रसोई पाक सामग्री करि भोग धरि भोजन किये। बादा को नाम बादरायनदास धरि, श्रीनवनीतप्रियजी के प्रसादी वस्त्र भगवद् सेवा दे, दोय दिन बादरायनदास के घर रहे, पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी श्रीद्वारिका कों पांउ धारे। तब स्त्री पुरुष दोऊ जने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सङ्ग द्वारिका कों गये। सो श्रीद्वारिकाजी में श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी एक वरस १ महीना तांई रहे। तब बादरायनदास और बादरायनदास की स्त्री सगरी सेवा किये। जल ल्यावनो, रसोई की परचारगी, धोवती उपरेना श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के नित्य धोवते। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी प्रसन्न होई बादरायनदास सों कहे,

तुम जाइ स्त्री सहित घर में भगवद् सेवा करो। पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभुजी आप पृथ्वी परिक्रमा कों पधारे। और बादरायनदास स्त्री पुरुष दोऊ जने मोरवी में अपने घर आय वस्त्र सेवा प्रीतिपूर्वक करन लागे। तब श्रीनवनीतप्रियजी सानुभावता जनावन लागे। सो बादरायनदास स्त्री पुरुष दोऊ जने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे। तातें इनकी वार्ता कहाँ तांई कहिये ?

वार्ता ॥८०॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, सूरदासजी सारस्वत ब्राह्मण, दिल्ली के पास सीहीं गाम है तहां रहते, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश – सो ये सूरदासजी लीला में श्रीठाकुरजी के अष्टसखा हैं, सो तिन में ये 'कृष्णसखा' को प्राकट्य हैं। तहाँ यह सन्देह होय जो–निकुञ्ज लीला में तो सखीजन कों अनुभव है, जो सखा तहाँ नाहीं है। सो सूरदासजी ने रहस्यलीला, बिना अनुभव कैसे गाई ? तहाँ कहत हैं, जो श्रीभागवत में कहे हैं, जो–जब श्रीठाकुरजी आप बन में गौचारन लीला में सखान के सङ्ग पधारत हैं, सो सगरी गोपीजन लीला को अनुभव करत हैं। सो घर में सगरी लीला बन की गान करत हैं। ता पाछें जब श्रीठाकुरजी सन्ध्या समय बन तें घरकूँ आवत हैं, ता पाछें रात्रि कों गोपीजन सों निकुञ्ज में लीला करत हैं। सो तब अन्तरङ्गी सखान कों बिरह होत है, तब वे निकुञ्जलीला को गान करत हैं, अनुभव करत हैं।

सो काहेंते। कुञ्ज में सखीजन हैं सो तिनके दोय स्वरूप हैं सो कहत हैं– पुंभाव के सखा और स्त्री भाव की सखी। सो दिन में सखा द्वारा अनुभव और रात्रि कों सखी द्वारा अनुभव है। सो काहेतें ? जो वेद की ऋचा हैं सो गोपी हैं। और वेद के जो मन्त्र हैं सो सखा हैं। परन्तु गोपीजन देखिवे मात्र स्त्री हैं, सो इनके पति हैं, परन्तु ये स्त्री नाहीं हैं। सो ऐसे – (जैसे) भुज्यो अन्न होय सो धरती में बीज नाहीं ऊगे। तेसे ही इनकों लौकिक विषय नाहीं है। सो यहाँ तो रसरूपलीला सदा सर्वदा एक रस हैं। सो तेसे ही अन्तरङ्गी सखा श्रीठाकुरजी के अङ्गरूप हैं। सो सखी रूप, सखा रूप, दोय रूप सों रात्रदिन लीलारस करत हैं। सो तासों सूरदास 'कृष्णसखा' को प्राकट्य हैं

और कृष्णसखा को दूसरो स्वरूप सखी है, सो लीला कुञ्ज में हैं तिनको नाम "चंपकलता" है। सो तासों सूरदास कों सगरी लीलाको अनुभव श्रीआचार्यजी महाप्रभु की कृपातें होयगो। सो प्रकार कहत हैं।

तहाँ यह सन्देह होय जो लीला सम्बन्धी है सो पहले तें अनुभव क्यों नाहीं भयो। सो इनकों मोह क्यों भयो ? तहाँ कहत हैं, जो-श्रीठाकुरजी भूमि के ऊपर प्रगट होय कैं लौकिक की नांई लीला करत हैं, जो जस प्रकट करनार्थ। सो लीला गाइ जगत में लौकिक जीव कृतार्थ होत हैं। तैसेई श्रीठाकुरजी के भक्त हू जगत में लौकिक लीला करि अलौकिक दिखावत हैं। जैसे श्रीरुकिमिनीजी साक्षात् श्रीलक्ष्मीजीको स्वरूप हैं, परन्तु जब जन्मी तब देवी पूजिकैं वर मांग्यो फेरि श्रीठाकुरजी के पास ब्राह्मण ब्याह के लिये पठायो। सो यह जगत में लीला प्रगट करनार्थ। जैसे कालिन्दीजी सूर्य द्वारा प्रगट होय कैं श्रीयमुनाजी में मन्दिर करि तपस्या करि, अर्जुन सों कही, जो मैं श्रीठाकुरजी कों वरूँगी। तब श्रीठाकुरजी आपु विवाह कियो। सो ये लीलामात्र, (क्यों जो) ये सदा श्रीठाकुरजी की प्रिया हैं। सो ब्रज में श्रीस्वामिनीजी और श्रीठाकुरजी आपु ये दोउ एक रूप हैं, परन्तु ब्रजलीला प्रगट करिवे के लिये श्रीठाकुरजी श्रीनन्दरायजी के घर प्रगटे और स्वामिनीजी श्रीवृषभानजी के घर प्रगट होय कैं अनेक उपाय मिलिवे कों रात्रदिन किये। सो यह लीला (केवल) जगत में प्रगट करिवे के लिये (ही)। (नौंतरु) ये तो सदा एक रस लीला करत हैं। सो तैसेई सूरदास श्रीआचार्यजी के सेवक होय कें भगवल्लीला गाये। सो यामें स्वामी को जस बढ़े। सो जिनके सेवक सूरदास ऐसे भगवदीय, तिनके स्वामी श्रीआचार्यजी आपु तिन की सरन जैये। सो या प्रकार जगत में लीला करि जस प्रगट किये, सो आगे लौकिक जीव कों गान करि भगवत्प्राप्ति होय।

सो सूरदासजी जगत पर अब ही प्रगटे, परन्तु लीलाको ज्ञान नाहीं है। सो सूरदासजी दिल्ली पास चारि कोस उरे में एक सीहीं गाम है, जहाँ राजा परीक्षित के बेटा जन्मेजय ने सर्प-यज्ञ कियो है। सो ता गाम में एक सारस्वत ब्राह्मण के यहां प्रगटे। सो सूरदासजीके जन्मत ही सों नेत्र नाहीं हैं। और नेत्रन को आकार गढेला कछू नाहीं; ऊपर भोंह मात्र है। सो या भाँति सों सूरदासजी को स्वरूप है। सो तीन बेटा या सारस्यत ब्राह्मण के आगे के हते, और घर में बहोत निष्किञ्चन हतो। वा सारस्वत ब्राह्मण के घर चौथे सूरदासजी प्रगटे। सो तब इनके नेत्र न देखे, आकार (हू) नाहीं। सो या प्रकार देख के या ब्राह्मण ने अपने मन में बहोत सोच कियो। और दुःख पायो। जो देखो - एक तो विधाता ने हमकों निष्किंञ्चन कियो, और दूसरे घर में ऐसे पुत्र जन्म्यों। जो अब याकी कौन तो टहल करेगो ? और कौन या की लाठी

पकरेगो ? सो या प्रकार ब्राह्मण ने अपने मन में बहोत दुःख पायो। सो काहेतें जो–जन्मे पाछे नेत्र जांय तिनकों आँधरा कहिये, सूर न कहिये। और ये तो सूर हैं, सो माता–पिता घर के सब कोई इनसों प्रीति करें नाहीं। जानें, जो नेत्र बिना को पुत्र कहा ? तासों इनसों कोई बोलतो नाहीं।

सो ऐसे करत सूरदासजी बरस छह के भये। तब पिता कों वा गाम के एक द्रव्यपात्र क्षत्री जजमान ने दोय मोहौर दान में दीनी। तब यह ब्राह्मण उन मोहौरन कों ले के अपने घर आयो, और अपने मन में बहोत प्रसन्न भयो, और स्त्री तथा घर में देह सम्बन्धी बेटा बेटी हते सो तिन सबन सों कही जो–भगवान ने दोय मोहौर दीनी हैं सो काल्हि इनकों बटाय सीधो सामान लाऊँगो। तातें अपने घर में दोय चार महीना को काम चलेगो। सो या प्रकार सबन कों वे दोय मोहौर दिखाई। ता पाछें रात्रि कों एक कपडा में बाँधि के ताक में धरि के सोयो। तब रात्रि कों दोय मोहौरन कों मूसा ले गये। सो घर की छाँतिन में भिल्ले में धरि दीनी। तब सवारे उठि के देखे तो मोहौर नाहीं है।

सो तब तो सूरदास के माता पिता छाती कूटन लागे, और रोवन लागे, और अपने मन में अति कलेश करन लगे। सो वा दिन खान–पान नाहीं कियो। सो या भाँति सों घनो विलाप करन लागे। सो देखिके सूरदासजी मातापिता सों बोले, जो–तुम एसो दुःख विलाप क्यों करत हो ? जो–भगवान को भजन सुमिरन करो तासों सब भलो होय। सो या भाँति सूरदास उनसों बोले। तब माता पिता ने सूरदास सों कही जो–तू एसी घड़ी को सूर जनम्यो है, सो हमकों वाही दिन सों दुःख ही में जनम बीतत है। जो हमकों काहू दिन सुख नाहीं भयो, और हमकों भर पेट अन्नहू नाहीं मिलत है। जो श्रीभगवान ने हमकों दोय मोहौर दीनी हती सोहू योंही गई। तब सूरदासजी बोले, जो–तुम मोकों घरमें न राखो तो मैं अबही तिहारी मोहौर बताय देउ। परि पाछे मोकों घर में राखियो मति, और तुम मेरे पीछे मति परियो। तब यह सुनि के मातापिता ने सूरदास सों कह्यो जो–और हमकों कहा चहियत है जो–तू हमकों मोहौर बताय देउ, और हमारी मोहौर पावे फेरि तेरे मन में आवे तहाँ तू जइयो। हम तोकों बरजेगे नाहीं। तब सूरदास बोले जो–छांति में भिल्लो है सो भिल्ले के मोहोडे पर धरी हैं। तब यह ब्राह्मण खोदि के मोहोर पायो।

तब सूरदासजी घरतें चलन लागे। सो मातापिता कों मोह उत्पन्न भयो। जो देखो या सूरदास को सगुन बहोत आछो भयो। याके कहे प्रमान मोकों तुरत ही मोहौर मिली हैं। सो यह विचारी के मातापिता ने सूरदासजी सों कह्यो–जो सूरदास! अब तुम घरतें क्यों जात हो ? अब तो यह मोहौर पाय गई हैं, तातें जहाँ तांई यह मोहौरन को अनाज रहै तहाँ तांई तुमहू खावो, पाछें जहाँ जानो होय तहाँ तुम जैयो।

तब सूरदास बोले जो–मोको अब तुम घर में मति राखो, जो मोकों घर में राखोगे तो तिहारी मोहौर फेरि जायगी, और तुम दुःख पावोगे। यह सुनि के मातापिता कछु बोले नाहीं, और सूरदासजी तो हाथ में एक लाठि लेकें घर सों निकले। सो सीहीं ते चले, सो चार कोस ऊपर एक गाम हतो। तहाँ एक तलाब गाम बाहिर हतो। सो वहाँ एक पीपर के वृक्ष नीचे सूरदासजी आय बैठे, और वा तलाब को जल पियो। तहाँ दोय चार घडी दिन पाछिलो रह्यो हतो, तब ता गाम को ब्राह्मण जमींदार तहाँ आयके सूरदासजी कौं पहिचानके कहन लाग्यो जो–मेरी १० गाय तीन दिनतें मिलत नाहीं, कोई बतावे तो दो गाय वाकों देऊँ। तब सूरदासजी ने कही जो–मोकों तेरी गाय कहा करनी हैं? परन्तु तू पूछत है तब कहत हूँ जो–यहाँ सों कोस ऊपर एक गाम है। सो वा गाम के जमींदार के मनुष्य रात्रि कों आयके तेरी १० गाय ले गये हैं। वा जमींदार के घर के भीतर एक दूसरो घर है, सो तहाँ जमींदार के घोडा बँधे हैं, सो उन घोड़ान के पास तेरी गाय बँधी हैं। तब वे जमींदार दस आदमी संग ले जाइ देखे तो गाय सब बँधी हैं, सो ले आय के सूरदासजी सों कह्यो, जो–सूरदास! तिहारे कहे प्रमान मेरी दस गाय मिल गई हैं सो ये दोय तुम राखो।

तब सूरदासजी ने कही, जो–मैं अपनों ही घर छोडि के श्रीठाकुरजी को आश्रय करिकें बैठो हूँ, सो मैं तेरी गाय काहे कों लेऊँ? तब वह जमींदार सूरदास कों बालक जानि कें सिक्षा की बात करन लाग्यो, जो अरे! तू फलाने सारस्वत को बेटा है, और नेत्र तेरे हैं नाहीं, और कोऊ मनुष्य हू तेरे पास नाहीं है, सो तू अपने घर कों छोडि के रुठि के यहाँ क्यों बैठ्यो है? नेत्र हैं नाहीं, कैसे दिन कटेंगे? तब सूरदास ने कह्यो जो–मैं तेरे ऊपर तो घर छोड्यो नाहीं। मैं तो नारायण के ऊपर घर छोड्यो है, सो वे सगरे जगत को पालन करत हैं सो मेरो हू करेंगे। और जो होनहार होयगी सो होयगी। तब जमींदार ने कही, मैं हू ब्राह्मण हौं, दारि रोटी मेरे घर भई हैं, कहे तो लाऊँ। तब सूरदास ने कही, जो–मैं तो गैलकी चली रोटी नाहीं खात। तब वह जमींदार अपुने घर जाइ पूरी कराय और दूध ले जाइ, सूरदास कों जल भरि दे के कह्यो, जो–सूरदास! तुम कोई बात को दुःख मति पाइयो। जो जहां तांई भगवान मोकों खायवे कों देयगो, तहां तांई यहाँ मैं तुमकों लाऊँगो। और सबेरे या तलाब पर तथा गाम में जहाँ कहोगे तहाँ छापरा डार देऊँगो। पाछें सबेरो भयो। तब यह जमींदार ने आय के कह्यो जो–तिहारो मन कहाँ रहेवो को है? तब सूरदास ने कही, जो–अब तो याही तलाब पर पीपरा नीचे कछुक दिन रहवे को मन है। तब वा जमींदार ने वहाँ एक झोंपडी छवाय दीनी और टहल करिवेकुं एक चाकर राखि दियो। ता पाछें वा जमींदार ने दसपाँच जने के आगे बात करी, जो–फलाने को बेटा सूरदास बडो ज्ञानी है। हमारी गाय खोय गई हती सो बताय दीनी। सो वह सगुन में आछो जाने है।

सो मैं वाकों तलाब के ऊपर पीपर के नीचे झोंपरी छवाय, वाकें पास एक चाकर राखि दियो है। और नित्य पूरी, दहीं दूध, पठावत हूँ। सो तासों काहू कों सगुन पूछनो होय तो वाकूँ जाय के पूछि आइयो।

यह सुनि के सब लोग गाम के आवन लागे। सो जो कोइ पूछे तिनकों सगुन बतावे सो होई। तब सूरदास की बड़ी पूजा चली, भीर लगी रहै। खानपान भली भांति सों आवन लाग्यो। सो तब कछुक दिन में सूरदास कों रहिवे के लिये एक बडो घर तलाब पर बनाय दियो, और वह झोंपरी हू दूरि कीनी। और वस्त्र, द्रव्य, बहोत वैभव भेलो भयो। सो सूरदास स्वामी कहवाये, बहोत मनुष्य इनके सेवक भये। जाके कंठी बाँधनी होय सो सूरदासको सेवक होय। सो सूरदास विरह के पद सेवक कों सुनावते। सो सब गायवे के बाजे को सरञ्जाम सब भेलो होय गयो।

या प्रकार सूरदास तलाब पे पीपर के वृक्ष नीचे बरस अठारे के भये। सो एक दिन रात्रि कों सोयत हते, ता समय सूरदास कों वैराग्य आयो तब सूरदासजी अपने मन में विचारे जो–देखो, मैं श्रीभगवान के मिलन अर्थ बैराग्य करि के घरसों निकस्यो हतो, सो यहाँ माया ने ग्रसि लियो। मोकूं अपनो जस काहे कों बढावनों हतो ? जो मैं श्रीप्रभु को जस बढ़ावतो तो आछो। और यामें मेरो बिगार भयो, तासों अब कब सवारो होय और मैं यहाँ सों कूंच करूँ।

सो ऐसे करत सवारो भयो। तब एक सेवक कों पठाय मातापिता कों बुलाय सब घर उनकों सोंपि दियो। पाछें सूरदास एक वस्त्र पहिर के लाठी ले के उहाँ ते कूँच किये। सो तब जो सेवक माया के जञ्जाल में हते, सो संसार में लपटे और उहांई रहे। और कितनेक सेवक जो संसार सों रहित हते, सो सूरदास के सङ्ग ही चले। सो सूरदास मनमें विचारे जो–ब्रज है सो श्रीभगवान को धाम है, सो उहाँ चलिये। तब सूरदास उहां तें चले, सो मथुराजी में आये। तहां विश्रान्त घाट पै रहिके सूरदास ने विचार कियो, जो–मैं मथुराजी में रहूँगो तो यहाँ हू मेरो माहात्म्य बढ़ेगो और यह श्रीकृष्ण की पुरी है, सो यहाँ मोकों अपनो महात्म्य प्रगट करनो नाहीं। और संसार में अनेक लोग सुख दुःख पावें हैं सो सब पूछिवे आवेंगे। और यहाँ मथुरिया चौबे हैं सो यहां माहात्म्य बढ़ेगो तो ये दुख पावेंगे। तासों यहाँ रहनो ठीक नाहीं।

सो यह विचारि के सूरदास मथुरा के और आगेरे के बीचों बीच गऊघाट है तहाँ आयके श्रीयमुनाजी के तीर स्थल बनाय कें रहें।

सूरदास को कंठ बहोत सुन्दर हतो। सो गान विद्या में चतुर, और सगुन बतायवे में चतुर। सो उहां हू बहोत लोग सूरदासजी के पास आवते। उहां हूँ सेवक बहोत भये। सो सूरदास जगत में प्रसिद्ध भये।

वार्ता – प्रसंग १ – सो गऊघाट ऊपर सूरदास रहते, तब कितनेक दिन पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभु आपु अड़ेल तें ब्रज कूँ पधारत हते। सो कछुक दिनमें श्रीआचार्यजी आप गऊघाट पधारे। ता समय श्रीआचार्यजी के सङ्ग सेवकन को बहोत समाज हतो। सो सब वैष्णव सहित श्रीआचार्यजी आपु श्रीयमुनाजी में स्नान किये। ता पाछें सन्ध्यावंदन करि पाक करन कों पधारे। और सेवक हू सब अपनी अपनी रसोइ करन लगे। ता समय एक सेवक सूरदास को तहाँ आयो। सो वाने जायके सूरदास कों खबरि करी, जो–सूरदासजी ! आज यहां श्रीवल्लभाचार्यजी पधारे हैं। जो जिनने कासी में तथा दक्षिण में मायावाद खंडन कियो है, और भक्तिमार्ग स्थापन कियो है। तब यह सुनि के सूरदास ने अपने सेवक सों कह्यो, जो–जब श्रीवल्लभाचार्यजी भोजन करिकें निश्चिन्तता सों गादी तकियान के ऊपर बिराजें ता समय तू हमकों खबरि करियो। जो–मैं श्रीवल्लभाचार्यजी के दरसन कों चलूंगौ। तब वह सेवक दूरि आय के बैठि रह्यो। सो जब श्रीआचार्यजी आपु भोजन करिके गादी तकियान पै बिराजे, और सेवक हू सब आसपास आय बैठे, तब वा सेवक ने जाय के खबरि करी। तब सूरदास वाही समय अपने सङ्ग सगरे सेवकन कों लेकें श्रीआचार्यजी के दरसन कों आये। सो तब आयके श्रीआचार्यजी कों साष्टांग दंडवत करी। तब श्रीआचार्यजी श्रीमुख सों कहे, जो–सूर ! कछू भगवत् जस वर्णन करो। तब सूरदास ने श्रीआचार्यजी कों दंडवत् करि कह्यो, जो–महाराज ! जो आज्ञा। ता पाछें सूरदास ने यह पद श्रीआचार्यजी आगे गायो। सो पद :–

राग धनाश्री – हों हरि सब पतितन कौ नायक। को करि सके बराबरि मेरी

इते मानकौ लायक ॥१॥ जो तुम अजामिल सों कीनी सो पाती लिख पाऊँ । होय विश्वास भलो जिय अपने और पतित बुलाऊँ ॥२॥ सिमिट जहां तहाँ तें सब कोऊ आइ जूरे इकठोर । अबके इतने और मिलाऊँ बेर दूसरी और ॥३॥ होडा होडी मन हुलास करि करे पाप भरि पेट । सबकों ले पायन तरि पारों यही हमारी भेट । ऐसी कितिक बनाऊँ प्रानपति सुमिरन व्है भयो आड़ो । अबकी बेर निबेर लउ प्रभु 'सूर' पतित को टाँडो ।

फेरि दूसरो पद गायो, सो पद :-

राग धनाश्री - प्रभु हों सब पतितनकौ टीको । और पतित सब द्योस चारि कै हों तो जन्मत ही कौ ।। बधिक - अजामिल गनिका तारी और पूतना ही कों। मोहि छांडि तुम और उधारे मिटे सूल क्यों जी कौ ।। कोऊ न समरथ सुद्ध करन कों खेंचि कहत हों लीको । मरियत लाज 'सूर' पतितन में कहत सबै मोहि नीकौ ।

सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु सूरदास सों कहे, जो-सूर ह्वै कैं ऐसो घिघियात काहे कों है ? सो तासों कछु भगवल्लीला वर्णन करि ।

भावप्रकाश - ताको आसय यह है, जो-जीव श्रीभगवान सों बिछुर्‍यो, सो तब पतित तो भयो । सो ताको बहोत कहा कहनो ? तासों भगवल्लीला गावो, जासों शुद्ध होय ।

तब सूरदास ने श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी, जो-महाराज ! मैं कछू भगवल्लीला समुझत नाहीं हूँ । तब श्रीआचार्यजी श्रीमुख तें कहे, जो-सूर ! श्रीयमुनाजी में स्नान करि आवो, जो हम तुमकों समुझाय देंगे । तब सूरदास प्रसन्न होय कें श्रीयमुनाजी में स्नान करिके अपरस ही में श्रीआचार्यजी पास आये । तब श्रीआचार्यजी ने कृपा करि कें सूरदास कों नाम सुनायो, ता पाछें समर्पन करवायो । पाछे आप दसमस्कंध की अनुक्रमणिका करी हती सो सूरदास कों सुनाये ।

भावप्रकाश - अष्टाक्षर मंत्र सुनायो तासों सूरदास के सगरे जनम के दोष

मिटाये, और सात भक्ति भई। पाछें ब्रह्मसंबंध करवायो, तासों सात भक्ति और नवधा भक्ति की सिद्धि भई। सो रही प्रेमलक्षणा, सो दसमस्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनाये। तब संपूरन पुरुषोत्तम की लीला सूरदास के हृदय में स्थापन भई, सो प्रेमलक्षणा भक्ति सिद्ध भई।

सो सगरी श्रीसुबोधिनीजी को ज्ञान श्रीआचार्यजी ने सूरदास के हृदय में स्थापन कियो। तब भगवल्लीला जस वर्णन करिवे को सामर्थ्य भयो। तब अनुक्रमणिका तें सगरी लीला हृदय में स्फुरी। सो कैसे जानिये ? जो श्रीआचार्यजी आप दसमस्कन्ध की सुबोधिनीजी में मङ्गलाचरण की प्रथम कारिका किये हैं, सो कारिका कहत हैं। श्लोकः–

'नमामि हृदये शेषे लीलाक्षीराब्धि – शायिनं।
लक्ष्मीसहस्र – लीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिम्॥'

सो या मंगलाचरण के अनुसार सूरदास ने श्रीआचार्यजी के आगे यह पद करिके गायो। सो पद :–

राग बिलावल – चकईरी चलि चरन सरोवर जहां नहीं प्रेम वियोग। जहां भ्रमनिसा होति नहीं कबहू सो सायर सुख योग। सनकसे हंस मीनसे गुनिगन नख रवि–प्रभा प्रकास। प्रफुल्लित कमल निमिष नहीं ससि डर गुञ्जत निगम सुवास॥ जिहिं सर सुभग मुक्ति मुक्ताफल सुकृत विमल जल पीजे। सो सर छांडि कुबुद्धि विहङ्गम यहाँ रहि कहा कीजे॥ जहाँ श्रीसहस्र सहित नित क्रीडत सोभित 'सूरजदास'। अब न सुहाय विषयरस छिल्लर वा समुद्र की आस॥

सो यह पद दसमस्कन्ध की कारिका के अनुसार किये हैं।

श्लोक – ''लक्ष्मीसहस्रलीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिम्।''

जैसे श्लोक में कह्यो है, तैसेही सूरदास ने या पद में कही, जो–

''जहाँ श्रीसहस्र सहित नित क्रीडत सोभित सूरजदास।''

सो यामें कहे। तामें जानि परी, जो–सूरदास कों सगरी लीला श्रीसुबोधिनीजी की स्फुरी। सो सुनिके श्रीआचार्यजी बहोत प्रसन्न भये। और जाने, जो– अब लीला को अभ्यास भयो। सो तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुख तें सूरदास सों आज्ञा किये, जो–सूर ! कछू नन्दालय की लीला गावो। तब सूरदास नें नन्द महोत्सव को कीर्तन वर्णन करिके गायो। पद :–

देवगंधार – ब्रज भयो महरिके पूत जब यह बात सुनी। सुनि आनन्दे सब लोग गोकुल गनित गुनी॥ ब्रज पूरव पूरे पून्य रूपी कुल सुथिर थुनी। ग्रह लग्न नक्षत्र बलि सोधि कीनी वेदधुनी॥१॥ सुनि धाई सबे ब्रजनारि सहज सिङ्गार किये। तन पहरे नौतन चीर काजर नैन दिये। कसि कंचुकि तिलक लिलाट सोभित हार हिये। कर कङ्कन कञ्चन थार मङ्गल साज लिये॥२॥ वे अपने अपने मेल निकसी भांति भली। मानो लाल मुनिनकी पांति पिंजरन चूर चली॥ वे गावे मङ्गल गीत मिलि दश पाँच अली। मानों भोर भयो रवि देखि फूली कनककली॥३॥ उर अञ्चल उडत न जान्यो सारी सुरंग सुही। मुख मांड्यो रोरीरंग सेंदुर माँग छुही। श्रम श्रवनन तरल तरोना बेनी सिथिल गुहीं। सिर बरखत कुसुम सुदेस मानो मेघ फुहीं॥४॥ पिय पहेलें पहोंची जाय अति आनन्द भरी। लई भीतर भवन बुलाय सब सिसु पांय परी॥ एक वदन उघारि निहारति देति असीस खरी। चिरजीयो यसोदानन्द पूरन काम करी॥५॥ धनि धनि दिवस धनि राति धनि यह पहर घरी। धनि धनि महरिजु की कुखि मांग – सुहाग भरी॥ जिन जायो एसो पूत सब सुख फलन फरी। थिर थाप्यो सब परिवार मनकी सूल हरी॥६॥ सुनी ग्वालन गाय बहोरि बालक बोलि लये। गुहि गुञ्जा घसि बन – धातु अंग अंग चित्र ठये॥ सिर दधि माखन के माट गावत गीत नये। डफ झांझ मृदंग बजावत सब नन्द भवन गये॥७॥ एक नाचत करत कोलाहल छिरकत हरद दहीं। मानों बरखत भादों मास नदी घृत दूध बही॥ जाको जहीं जहीं चित्त जाय कौतुक तहीं तहीं। रस आनन्द मगन गुवाल काहू बदत नहीं॥८॥ एकु धाइ नन्दजू पे जाइ पुनि पुनि पांय परे। एक आपु आपु हि मांझ हँसि हँसि अङ्क भरे॥ एक अंबर सबहि उतारि देत निशङ्क खरे॥ एक दधि रोचन और दूध सबन के सीस धरे॥९॥ तब नन्द न्हाय भये ठाडे अरु कुश हाथ धरे। घसि चंदन चारु मँगाय विप्रन तिलक करे॥ नान्दी मुख पितर पुजाय अन्तर सोच हरे। वर गुरुजन द्विजन पहराय सबन के पांय परे॥१०॥ गन गैया गिनी न जाय तरुन सु बच्छ बढीं। नित चरे जमुना के काछ दूने दूध चढी॥ खुर रूपे तांबे पीठ सोने सींग मढीं। ते दीनी द्विजन अनेक हरखि अशीष पढी॥११॥ सब अपने मित्र सुबन्धु हँसि

हँसि बोलि लिये। मथि मृगमद मलयकपूर माथे तिलक किये ॥ उर मनिमाल पहराय वसन विचित्र दिये। मानों बरखत मास अषाढ दादुर मोर जिये ॥१२॥ बर बन्दी मागध सूत आंगन भवन भरे। ते बोले लेले नाम हित कोउ ना बिसरे ॥ जिन जो जाच्यो सो दीनो रस नन्दराय ढरे। अति दान मान परधान पूरन काम करे ॥१३॥ तब रोहिनी अम्बर मँगाइ सारी सुरंग घनी। ते दीनी वधून बुलाय जेसी जाय बनी। वे अति आनन्दित बहोरि निज ग्रह गोपधनी। मिलि निकसी देति असीस रुचि अपनी अपनी ॥१४॥ तब घरघर भेरि मृदंग पटह निसान बजे। वर बांधी बंदनमाल अरु ध्वज कलस सजे ॥ तब ता दिन तें वे लोग सुखसंपति ना तजे। सुनि 'सुर' सबनकी यह गति जो हरि चरन भजे।

सो यह बड़ी बधाई गाई। सो श्रीनंदरायजी के घरको वर्णन किये, तहां तांई तो श्रीआचार्यजी आप सुने। ता पाछें गोपीजन के घर को वर्णन करन लागे तब श्रीआचार्यजी आपु श्रीमुख तें सूरदास सों कहे जो –

'सुन सूर सबन की यह गति जो हरि–चरन भजे।'

सो या भोग की तुक आपु कहि कें सूरदास कों चुप करि दिये।

भावप्रकाश – सो यातें जो–व्रजभक्तन कों आनन्द है सो भगवदीयन के हृदय में अनुभव योग्य है। सो बाहिर प्रकास होय तासों सूरदास को थांभि दिये। और सूरदासजी के हृदय में यह भी आयो हतो, जो – मैंने सेवक किये हैं तिनकी कहा गति होयगी ? तब श्रीआचार्यजी ने कही :– 'सुन सूर ! सबन की यह गति जिन हरिचरन भजे।'

तब श्रीआचार्यजी आप प्रसन्न होय के कहे, जो–मानों सूर नंदालय की लीला में निकट ही ठाड़े हैं। सो ऐसौ कीर्तन गायो। ता पाछें श्रीआचार्यजी ने सूरदास कूँ 'पुरुषोत्तम सहस्रनाम' सुनायो। तब सगरे श्रीभागवत की लीला सूरदास के हृदय में स्फुरी। सो सूरदास ने प्रथम स्कन्ध श्रीभागवत सों द्वादस स्कन्ध पर्यंत कीर्तन वर्णन किये। तामें अनेक दानलीला, मानलीला

आदि वर्णन किये हैं। ता पाछें गऊघाट ऊपर श्रीआचार्यजी आप तीन दिन रहे। सो तब सूरदासने जितने सेवक किये हते, सो सबकों श्रीआचार्यजी के सेवक कराये। ता पाछें श्रीआचार्यजी आप ब्रज में पधारे। तब सूरदास हू श्रीआचार्यजी के सङ्ग ब्रज में आये। सो प्रथम श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप गोकुल पधारे। तब श्रीआचार्यजी ने श्रीमुख सों कह्यो जो– सूर ! श्रीगोकुल को दरसन करो। तब सूरदासजी ने श्रीगोकुल कों साष्टांग दंडवत किये। सो दंडवत करत ही श्रीगोकुल की लीला सूरदास के हृदय में स्फुरी। तब सूरदासजी अपने मन में विचारे, जो– श्रीगोकुल की लीला में बरनन कैसें करौं ? सो काहे तें, जो– श्रीआचार्यजी को मन श्रीनवनीतप्रियजी के स्वरूप के ऊपर आसक्त है, सो श्रीनवनीतप्रियजी को कीर्तन श्रीगोकुल की बाललीला को वरनन, ऐसो पद सूरदासजी ने गायो। सो पद –

राग बिलावल – सोभित कर नवनीत लिए ॥ घुटुरुवन चलत रेनु तनु मंडित मुख दधि लेप किए ॥१॥ चारु कपोल लोल लोचन छबि गोरोचन कौ तिलक दिए। लट लटकनि मानो मत्त मधुपगन मादक मधुहिं पिए ॥२॥ कठुला कण्ठ वज्र केहरि – नख राजत हैं सखि रुचिर हिए। धन्य 'सूर' एको पल यह सुख कहा भयो सतकल्प जिए ॥३॥

सो यह पद सुनिके श्रीआचार्यजी आप सूरदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। सो ता पाछें सूरदास ने और हू पद बाललीला के श्रीआचार्यजी कों सुनाये। ता पाछें श्रीआचार्यजी विचारयो– जो श्रीगोवर्द्धननाथजी को मंदिर तो समरायो, और सेवा हू को मंडान भयो। तातें सूरदास कूँ श्रीनाथजी के पास राखिये। तब समे समे के सगरे कीरतन को मंडान और भयो चाहिये। सो आगे वैष्णवजन सूरदास के पद गाय के कृतार्थ बहोत होंयगे। तब यह विचारिके सूरदास कूँ सङ्ग लेके श्रीआचार्यजी आप

श्रीगोवर्द्धन पधारे, सो ऊपर पधारके श्रीनाथजी के दरसन किये। तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुख सों सूरदास सों कहे, 'जो – सूर! श्रीगोवर्द्धनाथजी के दरसन करो और कीर्तन गावो।' तब सूरदासजी ने श्रीगोवर्द्धनाथजी के दरसन किये। ता पाछें सूरदासजी ने प्रथम विज्ञप्ति को पद दैन्यता सहित गायो। सो पद –

राग धनाश्री – अब हौं नाच्यो बहुत गोपाल। काम क्रोध कौ पहरि चोलना कण्ठ विषय की माल ॥१॥ महा मोह के नूपुर बाजे निन्दा सब्द रसाल। भरम भरयो मन भयो पखावज उपर हंस–गति चाल ॥२॥ तृष्णा नाद करत घट भीतर नाना विधि के ताल। माया कौ कटि फेंटा बांध्यो लोभ तिलक दियो भाल ॥३॥ कोटिक कला काछि दिखराई जल थल सुधि नाहिं काल। 'सूरदास' की सबै अविद्या दूरि करहु नन्दलाल ॥४॥

सो यह पद सूरदासजी ने श्रीनाथजी कों सुनायो। सो सुनि के श्रीआचार्यजी आप सूरदास सों कहे, जो–सूरदास! अब तो तिहारे मन में कछू अविद्या रही नाहीं, जो – तिहारी अविद्या तो प्रथम ही श्रीनाथजी ने दूरि कीनी है। तासों अब तुम भगवल्लीला गावो जामें माहात्म्य पूर्वक स्नेह होय।

भावप्रकाश – परन्तु भगवदीय जितने हैं सो तितनेन की यही बोली है जो अपने को हीन कहत हैं। सो यह भगवदीयन को लक्षण है। और जो कोई अपने को आछो कहैं और आपुनी बड़ाई करे, सो भगवान तें सदा बहिर्मुख है।

तब श्रीआचार्यजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे सूरदासजी ने माहात्म्य स्नेह युक्त कीर्तन किये। सो पद –

राग गौरी – कौन सुकृत इन ब्रजबासिन कौ वदत बिरञ्चि सिव सेष। श्रीहरि जिनके हेत प्रगटे मानुष–वेस ॥ध्रुवा॥ ज्योति रूप जग – धाम जगतगुरु जगत–पिता जगदीस। जोग जग्य जप तप व्रत दुर्लभ सो गृह गोकुल–ईस ॥१॥ जाके उदर लोक त्रय, जल थल पञ्च तत्व चोखान। बालक है झूलत ब्रज पलना जसुमति भवन – निधान ॥२॥ इकइक रोम कूप विराट सम आनन्द कोटि ब्रह्मांड। लिए उछंग ताहि

मात यसोदा अपने भरि भुज-दंड ॥३॥ रवि-ससि कोटि कला सम लोचन त्रिविध तिमिर भजि जात। अञ्जन देत हेत सुत के चक्षु लेकर काजर मात ॥४॥ क्षिति मिति त्रिपद करी करुनामय बलि छलि दियो है पतार। देहरी उलंघि सकत नहीं सो प्रभु खेलत नन्द के द्वार ॥५॥अनुदिन स्रवत सुधारस पञ्चम चिन्तामनि सी धेनु। सो त्यजि जसुमति कौ पय पीवत भक्तन कों सुख देनु ॥६॥ वेद वेदान्त उपनिषद् षटरस अरपे भुगते नाहिं। सो हरि ग्वाल - बाल मंडल में हँसि हँसि जूठनि खाहिं ॥७॥ कमलानायक वैकुण्ठ दायक सुख दुख जिनके हाथ। कांध कमरिया हाथ लकुटिया नग्न पद, बिहरत बन बच्छ साथ ॥८॥ करन हरन प्रभुदाता भुक्ता विश्वम्भर जग जानि। ताहि लगाइ माखन की चोरी बाँध्यौ नन्दजू की रानि ॥९॥ बकी बकासुर सकट तृणावर्त अघ धेनुक वृषभास। कंस केसी कों यह गति दीनी राखे चरन निवास ॥१०॥ भक्त बछल हरि पतित उद्धारन रहे सकल भरिपूर। मारग रोकि पर्‍यो हरि-द्वारे पतित सिरोमनि 'सूर' ॥११॥

सो यह पद सुनिकें श्रीआचार्यजी आप बहोत प्रसन्न भये।

भावप्रकाश - क्यों जो - जैसो श्रीआचार्यजी आपु पुष्टिमार्ग प्रगट किये, ताही अनुसार सूरदासजी ने यह कीर्तन गायो। सो श्रीआचार्यजी के मारग को कहा स्वरूप है ? जो माहात्म्य ज्ञान पूर्वक दृढ़ स्नेह सो सर्वोपरि है, सो ठाकुरजी कों बहोत प्रिय हैं। परन्तु जीव माहात्म्य राखे। सो काहेतें ? जो - माहात्म्य बिना अपराध को भय मिट जाय। तासों प्रथम दसा में माहात्म्य युक्त स्नेह आवश्यक चहिये। और ब्रजभक्तन को स्नेह है सो सर्वोपरि है। तासों भक्तन के स्नेह के आगे श्रीठाकुरजी को माहात्म्य रहत नाहीं। सो ठाकुरजी स्नेह के बस होय भक्तन के पाछें पाछें डोलत हैं। सो जहां तांई एसो स्नेह नाहीं होय तहाँ ताँई माहात्म्य राखनो। सो जब स्नेह को नाम ले के माहात्म्य छोड़े और श्रीठाकुरजी के आगे बैठे, बात करे और पीठि देय तो भ्रष्ट होय जाय। तासों माहात्म्य बिचारे और अपराध सों डरपे, तो, कृपा होय। और जब (सर्वोपरि) स्नेह होयगो तब आपही तें स्नेह एसो पदार्थ है, जो - माहात्म्य कूं छूड़ाय देयगो। सो दसम स्कन्ध में वरनन है, जो - श्रीभगवानने बारबार माहात्म्य ब्रजभक्तन कों और श्रीयसोदाजी कों दिखायो। सो पूतना वध करि, सकट तृनावर्त करि, यमलार्जुन करि, बकासुर, धेनुक, कालीदमन करिकें लीला में माहात्म्य दिखायो। परन्तु ब्रजभक्तन को स्नेह परम अद्‌भुत अनिर्वचनीय है। तासों माहात्म्य तथा ईश्वरभाव न भयो। सो एसो स्नेह प्रभु कृपा करि दान करें ताकों आपही तें माहात्म्य छुटि जायगो। और जाको स्नेह पति, पुत्र, स्त्री, कुटुम्ब में तथा द्रव्य में है, और अपने देह सुख में है सो भगवान को माहात्म्य छोडि लौकिक रीति करे तो श्रीभगवान को अपराधी होय। तासों वेद मर्यादा सहित श्रीठाकुरजी के

भय सहित सेवा करे, और सावधान रहे। सो यह श्रीआचार्यजी महाप्रभु के मारग की रीति है। तासों माहात्म्य पूर्वक स्नेह करिये। और माहात्म्य पूर्वक स्नेह यह, जो-समय समय ऋतु अनुसार सेवा में सावधान रहै, ताको नाम माहात्म्य पूर्वक स्नेह कहिये।

पाछें श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो-सूर! तुमकों पुष्टिमारग को सिद्धान्त फलित भयो है, तासों तुम श्रीगोवर्द्धनधर के यहां समय समय के कीर्तन करो। ता समय सेन भोग करि चुक्यो हतो, सो तब मान के कीर्तन सूरदास ने गाये। सो पद :-

राग बिहागरो - बोलति काहे न नागरि बैनां। तोहि मिलनकों बहुत करत हैं गिरिधरलाल कमल-दल नैनां ॥१॥ जब तें दृष्टि परी मोहन की बिसरयो गृह-सुख सेनां। रटत 'सूर' राधे राधे कहि कहूँ बनमाल कहूँ उपरेनां ॥२॥

राग बिहागरो - सुखद सेज में पोढे रसिकवर रसमय अङ्ग संग जाय रेन जागे हैं। सिथिल बसन भूषन अलक छबि सोहे मुख मुखसों लपट उर लागे हैं ॥१॥ झुकझुक आवें नयन आलस झलक रह्यो लटपटी बात कहत अति अनुरागे हैं। 'सूरदास' नन्दसुवन तुम्हारो यस जानो प्रानप्रिया सुख ही में रस पागे हैं ॥२॥

राग बिहागरो - पोढे लाल राधिका उर लाय। नवकुसुम अरु नवल सिज्या नव चतुर दोऊ राय ॥१॥ गान करत सहचरी द्वारें सरस राग जमाय। 'सूर' प्रभु गिरिधरन संग सुख रह्यो उर लपटाय ॥२॥

सो पाछें या प्रकार सों कीर्तन सूरदासजी नें नित्य प्रातःकाल के जगायवे तें लेके सेन पर्यंत के हजारन किये।

वार्ता - प्रसंग २ - और एक समय सूरदासजी पांच सात वैष्णवन के सङ्ग मारग में चले जात हते। सो तहां दस पांच जने चोपड खेलत हते। सो चोपड के खेल में एसे लीन भये हते सो मारग में गैल में काहू आवते जाते मनुष्य की कछू खबरि नाहीं। सो या प्रकार उनकों मगन देखिकें सूरदासजी ने अपने सङ्ग के वैष्णवन के आगे एक पद गायो। और उन वैष्णवन सों सूरदासजी ने कह्यो, जो-देखो, यह प्राणी मनुष्यजन्म वृथा खोवत है। जो-श्रीभगवान ने मनुष्य-देह अपने भजन करिवे के लिये दीनी

है । सो या देह सों यह प्राणी वृथा हाड कूटत है । सो यामें लौकिक में तो निन्दा है, जो–यह जुवारी है । और अलौकिक में भगवान सों बहिर्मुखता है । तासों भगवानने तो एसी जिनको मनुष्य–देह दीनी है, तिनकों एसी चोपड खेलिनी चहिये । सो ता समय सूरदासजी ने यह पद करि के सङ्ग के वैष्णव हते, तिनकों सुनायो । सो पद :–

राग केदारो – मन ! तू समझ सोच विचार । भक्ति बिना भगवान दुर्लभ कहत निगम पुकार ।। साधु संगति डार पासा फेरि रसना सार । दाव अबके पर्यो पूरो, उतरि पेली पार ।। छांडि सत्रह सुन अठारे, पंच ही कों मार । दूरि तें तजि तीन काने चमक चोंक बिचार ।। काम क्रोध मद लोभ भूल्यो ठग्यो ठगिनी नारि । 'सूर' हरि के पद भजनि बिन चल्यो दाउं कार झार ।।

सो सुनिके उन वैष्णवनने सूरदास सों कह्यो, जो–सूरदासजी ! या पद में समुझ नाहीं परी है । तासों हमकों अर्थ करिके समुझावो, सो तब समझ्यो जाय । तब सूरदासजी उन वैष्णव सों कहे । जो–

तीन वस्तु चोपड़ में चाहियें, समुझ सोच और विचार । सो ये तीन्यो वस्तु भगवान के भजन में हू चहिये (क्यों ?) जो–जैसे पहले समुझै तब चोपड़ खेलेगो, सो तैसे ही भगवान कों जानेगो तो भजन करेगो । और चोपड में सोच होय, जो–एसो फाँसा परे तो मैं जीतूँ । सो तैसे ही या जीव कों काल को सोच होय, तब यह जीव प्रभु की सरन जाय । और (तीसरी वस्तु जो) विचार, सो यह जो–बिचार के गोट कों, फाँसा के दावकूँ चले, जो–यहां नाहीं मारी जायगी इत्यादि । सो तैसेही विचार वैष्णव कों होय, जो–यह कार्य मैं करत हूँ सो आछो है, के बुरो है ? तब यह जीव बुरो काम छोड़िके भगवत धरम की चाल में चले । और चोपड में फांसा के दाव परें तब दोऊ ओर के मनुष्य पुकारत हैं । सो तेसे ही जगत में निगम जो वेद पुराण सो पुकारि के कहत हैं, जो–भक्ति बिना भगवान दुर्लभ हैं, सो तासों कोटि साधन करो । और चोपड़ में दूसरो सङ्ग मिले तब चोपड़ खेली जाय, सो तैसे ही भगवान की भक्ति में भगवदीय वैष्णव की सङ्गति होय तब भक्ति बढे। और चोपड़ खेलिवे वारे के मन में (जैसे) अपने दाव को सुमिरन रहत है, जो–यह दाव परे तो मैं जीतूँ, सो तैसे ही

रसना सों यह जीव भगवद् वार्ता में मन लगा के सब रस को सार रूप (एसो भगवन्नाम) कह्यो करे। और (जैसे) चोपड़ में सुन्दर पूरो दाव परे तब गोट पार जाय, और तब उतरि के घर में आवे, और मरिवे को भय मिटे। सो तैसे ही मनुष्य देह संसार सों पार उतरिवेकों पूरो दाव बड़ी पुन्याई सों मिले है, सो तो देह सों भगवदाश्रय करि संसारतें पार उतरि जाया 'राखि सत्रे सुनि अठारे' चोपड़ में सत्रे अठारे बड़े दाव है। सो तैसे ही जगत में सब पुराण हैं, सो तिनही को राखि, सुनि अठारे जो–श्रीभागवत सुनन कों (और) पुराण हू कों धरि राख। और पाँचों जो इन्द्रियः पंचपर्वा अविद्या है, सो इनकूं मार। सो काहे तें ? जो शास्त्र के वचन है जो –

पतंग – मातंग – कुरंग – भृंग–मीना हताः षड्भिरेव पङ्च।
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते षङ्चभिरेव पङ्च ॥१॥

१ पतङ्ग – नेत्र विषय तें दीपक में परे। २ हाथी – स्पर्श विषय करि मरे। ३ कुरङ्ग – श्रवन विषय तें मरे। ४ भृंग – गंध नासिका विषय तें मरे, ५. मीन – जिभ्या विषय तें मरे। सो एक एक विषय तें मरि परै, तो मनुष्य तो पाँचन को सेवन करत है, सो निश्चय काल इनको भक्षण करे। तासों नाद पाँचो मारि। सो जैसे चोपड़ में गोट मारत हैं। और चोपड़ में सब तें छोटो दाव तीनि काने हैं, सो कोऊ नाहीं चाहत है। तैसे ही तू तीन–तामस, राजस, सात्विक यह माया के गुण हैं, सो सगरो संसार सोइ चोक है, सो यामें चतुराई सों डार। चतुराई यह, जो–इनकों डारे पाछे इनकी ओर देखे मति। सो जैसे चोपड में सब की सुध बुध भूलि जात हैं, सो सब ठग्यो गयो। सो तेसे काम क्रोधादि जंजाल है, और स्त्री रूप भगवद् माया है। सो यह सगरे जगत कों ठगेगी। सो जैसे चोपड़ खेलि के हारिकें सब दोऊ हाथ झारि के उठें, सो तैसे ही श्रीठाकुरजी के पदकमल के भजन बिना दोऊ हाथ झारिके या मनुष्य ने देह खोई। जो कछु भलो परोपकार संग नाहीं कियो। सो या प्रकार वैष्णव सुनि के सूरदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये।

वार्ता – प्रसंग ३ – और सूरदास कों जब श्रीआचार्यजी देखते तब कहते, जो–आवो सूरसागर ! सो ताको आसय यह है, जो–समुद्र में सगरो पदार्थ होत है। तैसे ही सूरदास ने सहस्रावधि पद किये हैं। तामें ज्ञान वैराग्य के, न्यारे न्यारे भक्ति भेद के, अनेक भगवद् अवतार, सो तिन सबन की लीला को वरनन कियो है। पाछें उनके पद जहां तहां लोग सीखि के गावन लागे। सो तब (एक समय) तानसेन ने एक पद सूरदास को

सीखि के अकबर बादशाह के आगे गायो। सो पद :-

राग नट - यह सब जानो भक्त के लच्छन। कोऊ निन्दो कोऊ बन्दो कोऊ मारि लेहु धन गच्छन ॥१॥ कोऊक आनि लगावत चन्दन डारि धूरि कोऊ देत है भच्छन। कोऊ कहे मूरख महा अधर्मी कोऊ कहे यह बड़ो विलच्छन ॥२॥ भली बुरी मनमें नहीं आवे कृष्ण चरन रति टरे न एक छिन। 'सूर' सुख दुःख जिनकों नहिं ब्यापे तिनको गिरिधर मिले ततछिन ॥३॥

यह सुनि देसाधिपति अकबर ने कह्यो, जो-ऐसे लक्षन वारे भक्तन सों मिलाप होय तो कहा कहिये ? सो तानसेन ने कही, जो-जिननें यह कीर्तन कियो है सो ब्रज में रहत हैं। और सूरदासजी उनको नाम है। यह सुन देसाधिपति के मन में आई, जोकोई उपाय करिके सूरदास सों मिलिये। पाछें देसाधिपति दिल्ली तें आगरा आयो। तब अपने हलकारान सों कह्यो, जो-ब्रज में सूरदासजी श्रीनाथजी के पद गावत हैं, सो तिनकी ठीक पारिके मोकों श्रीमथुराजी में खबरि दीजियों, और (जो) यह बात सूरदास जानें नाहीं। तब उन हलकारान ने श्रीनाथजीद्वार आयके खबरि काढ़ी। तब सुनी, जो-सूरदासजी तो मथुरा गये हैं। सो तब वे हलकारा श्रीमथुरा में आयके सूरदास कों नजरि में राखे, जो-या समय यहाँ बैठे हैं। तब उन हलकारान ने देसाधिपति कों खबरी करी, जो अजी साहब ! सूरदासजी तो मथुराजी में हैं। तब सूरदास कूँ अकबर बादशाह ने दस पांच मनुष्य बुलायवे कों पठाये। सो सूरदासजी देसाधिपति के पास आये। तब देसाधिपति ने उनको बहोत आदर सन्मान कियो। पाछें सूरदासजी सों देसाधिपति ने कह्यो, जो-सूरदासजी ! तुमने विष्णुपद बहोत किये हैं, सो तुम मोकों कछु सुनावो। तब सूरदास नें अकबर बादशाह आगे यह पद गायो। सो पद :-

राग बिलावल – मनरे ! तू करि माधौं सौं प्रीति । काम क्रोध मद लोभ मोह तू छांडि सकल विपरीति । भौरा भोगी बन भ्रमेरे मोद न माने माप । सब कुसुमन कौं नीरस करे रे कमल बँधावे आप ॥१॥ सुनि परमित प्रिय–प्रेमकी रे चातक–चितवे वारि । धन आसा सब दुःख सहेरे अनत न जाचे द्वारि ॥२॥ देखहू करनी कमलकी रे कीनो रविसों हेत । प्रान तजे प्रेम ना तजै रे सूक्यो सर ही समेत ॥३॥ दीपक पीर न जान ही रे पावक परे पतङ्ग । तन तो तिहिं ज्वाला जरयो रे चित न भयो रस भंग ॥४॥ मीन वियोग न सहित सकेरे, नीर न पूछे बात । देखि जू तू ताकी गति रे रति न घटे तन जात ॥५॥ परन परेवा प्रेमकी रे चित ले चढत अकास । तहां चढ़ि ताहि जू देखि ही रे भू पर लेत उसास ॥६॥ सुमिर सनेह कुरंग को रे श्रवननि राच्यो राग । धरि न सक्यो पग पिछमनो रे सर सन्मुख उर लाग ॥७॥ देखि करनी जड नारिकी रे जरत प्रेत के संग । चिता न चित फीको भयो रे राची पियके संग ॥८॥ लोक वेद बरजे सबे रे नेनन देखे त्रास । चोर न जिय चोरी तजे रे सब तन सहत विनास ॥९॥ सब रस कौ रस प्रेम है रे विषई खेले सार । तन–मन–धन जोबन खस्यो रे तोऊ न माने हार॥१०॥ तें रतन पायो भलो रे जान्यो साधन साध । प्रेमकथा अनुदिन सुनी रें तोउ न उपनी लाज ॥११॥ सदा संगाती आपुनो रे जियके जीवन प्रान । सो विसरयो तू सहज ही रे हरि ईश्वर भगवान ॥१२॥ वेद पुरान सुमरे सबे रे सुर तरु सेवत जाहि। महा मोह अज्ञान में रे क्यों न सम्हारे ताहि ॥१३॥ खग मृग मीन पतंग लों रे मैं सोधे सब ठौर । जलथल जीव जिते किते रे कहों कहाँ लगि और ॥१४॥ प्रभु पूरन पावन सखा रे प्राननहू के नाथ । परम दयाल कृपाल कृपानिधि जीवन जाके हाथ ॥१५॥ गर्भवास अति त्रास में रे जहाँ न एको अंग । सुनि सठ तेरे प्रानपति रे तहाँ हु न छाँडयो संग॥१६॥ दिन रात पोषत रहे रे जैसे चोली पान । वा दुःख तें तोहि काढि के रे गहे दीनो पयपान॥१७॥ जिहिं जड तें चेतन कियो रे रचि गुन तत्व निधान । चरन चिकुर कर नख दिये रे नैन नासिका कान ॥१८॥ असन बसन बहु बिधि दिए रे औसर औसर आन । माता–पिता भैया मिले रे नइ रुचि नइ पहचान ॥१९॥ सज्जन कुटुम्ब परिकर बढ्यो रे सुतदारा धन धाम । महा मोह विषयी भयो रे चित्त आकर्ष्यो काम ॥२०॥ खानपान परिधान में रे जोबन गयो सब बीत । ज्यों विट परतिय संग बस्यो रे भोर भये भयभीत ॥२१॥ जैसे सुख ही धन बढ्यो रे तैसे तन हि अनंग । धूम बढ्यो लोचन खस्यो रे सखा न सूझ्यो संग ॥२२॥ जब जान्यो सब जग मूओ रे बाढ्यो अयस अपार । बीच न काहू तब कियो रे जमदूतन दीनी मार ॥२३॥ को जाने के वार मूओरे ऐसो कुमति कुमीच । हरिसों हेत बिसारिकै सुख चाहत है नीच ॥२४॥ जो पै जिय लज्जा नहीं रे कहा कहों सौ बार । ऐको अंग ते न हरि भज्यो रे सुनि सठ 'सूर' गँमार ॥२५॥

भावप्रकाश – सो यह पद कैसो है, जो–या पद को सुमिरन रहै तब भगवत् अनुग्रह होय, और मनकूं बोध होय। और संसार सों वैराग्य होय, और श्रीभगवान के चरणारविंद में मन लगे। तब दुःसंग सों भय होय, सत्संग में मन लगे। सो देहादिक में ते स्नेह घटे, और लौकिक आसक्ति छूटे। जो भगवान को प्रेम है, सो अलौकिक है। सो ताके ऊपर प्रीति बढे।

यह सुनि देसाधिपति बहोत प्रसन्न भयो। पाछे देसाधिपति के मनमें यह आई, जो–सूरदासजी की परीक्षा देखूँ। सो भगवान् को आश्रय होयगो, तो ये मेरो जस गावेगो नाहीं। सो यह विचार के देसाधिपति नें सूरदास सों कही, जो–श्रीभगवान ने मोकों राज्य दियो है, सो सगरे गुनीजन मेरो जस गावत हैं, सो तिनकों मैं अनेक द्रव्यादिक देत हौं। तासों तुमहू गुनी हो, सो तुमहू मेरो कछू जस गावो। सो तिहारे मन में जो इच्छा होय सो मांगि लेहू। सो यह देसाधिपति ने कह्यो। तब सूरदास ने यह पद गायो :–

राग केदारो – नाहिन रह्यो मन में ठौर। नन्दनन्दन अछत कैसे आनिए उर और ॥१॥ चलत चितवत दिवस जागत सुपन सोवत राति। हृदय तें वह मदन मूरति छिन न इत उत जाति ॥२॥ कहत कथा अनेक उधो लाख लोभ दिखाय। कहा करों चित्त प्रेम पूरन घट न सिन्धु समाय ॥३॥ स्याम गात सरोज आनन ललित गति मृदु हास। 'सूर' ऐसे दरस कों ये मरत लोचन प्यास ॥४॥

सो यह पद सुनिके देसाधिपति ने अपने मनमें विचार्‍यो जो–ये मेरो जस काहे कों गावेंगे ? जो इनकों कछू लेवे को लालच होय तो ये मेरो जस गावें। ये तो परमेश्वर के जन हैं, सो ये तो ईश्वर को जस गावेंगे। सो सूरदासजी या कीर्तन में पिछले चरन में कहे हैं जो –

'सूर ! ऐसे दरस कों ये मरत लोचन प्यास'

सो देसाधिपति ने सूरदास सों कह्यो, जो–सूरदास ! तुम्हारे तो नेत्र हैं नाहीं, सो प्यासे कैसे मरत हैं ? सो यह तुम कहा कहे?

तब सूरदासजी ने कही, जो–या बात की तुमकों कहा खबरि है? जो ये लोचन तो सबके हैं, परन्तु भगवान के दरसन की प्यास काहू कों है ? जो श्रीभगवान के दरसन के जे प्यासे नेत्र हैं, सो तो सदा भगवान के पास ही रहत हैं। सो स्वरूपानंद को रसपान छिन छिन में करत हैं, और सदा प्यासे मरत हैं। यह सुनि अकबर बादशाह ने कही, जो–इनके नेत्र तो परमेश्वर के पास हैं, सो परमेश्वर कों देखत हैं, और कों देखत नाहीं। तब बादशाह ने सूरदास के समाधान की ईच्छा कीनी। दोय चारि गाम तथा द्रव्य बहोत देन लाग्यो, सो सूरदास ने कछू नाहीं लियो। तब अकबर बादशाह सूरदासजी सों कहे, जो–बाबा साहिब ! कछू तो मोकों आज्ञा करिये। तब सूरदासजी ने कही, जो–आज पाछें हमकों कबहू फेरि मति बुलाइयो और मोसों कबहू मिलियो मति।

भावप्रकाश– सो अकबर बादशाह विवेकी हतो। सो काहेतें ? जो ये योगभ्रष्ट तें म्लेच्छ भयो है। सो पहले जन्म में ये बालमुकुन्द ब्रह्मचारी हतो। सो एक दिन ये बिना छाने दूध पान कियो, तामें एक गाय को रोम पेट में गयो। सो ता अपराध तें यह म्लेच्छ भयो है।

सो सूरदास कों दंडवत करि के बिदा किये।

वार्ता – प्रसंग ४ – ता पाछें सूरदास श्रीनाथजीद्वार आये। पाछे देसाधिपति ने आगरे में आयके सूरदास के पदन की तलास कीनी। जो कोऊ सूरदासजी के पद लावे तिनकूँ रुपैया और मोहौर देय। सो वे पद फारसी में लिखाय के बांचे। सो मोहौर के लालच सों पंडित कवीश्वर हू सूरदास के पद बनाय के लाये। तब अकबर पातसाह ने उनसों कह्यो, जो–यह पद सूरदासजी को नाहीं। सो ये पैसा के लिये पद की चोरी करत हैं। तब पंडित

कवीश्वरन ने कही, जो–तुम कैसे जाने जो वह सूरदास को पद नाहीं ? जो यह तो सूरदास को ही पद है। तब पातसाह ने अपने पास सों सूरदास को पद अपने कागद के ऊपर लिखायो। और वे पंडित कवीश्वर सूरदासको भोग (छाप) को बनाय के लाये सो दोऊ कागद जल में धरिके कह्यो, जो–ईश्वर सांचे होय तो या बात को न्याव करि दीजो। सो यह कहि जल में डारि दिये, सो उन पंडित जोतसीन को पद बनायो हतो सो कागद जल में भीजि गयो, और सूरदास को पद हतो सो कागद जल में नाहीं भीज्यो।

भावप्रकाश – सो यह भांति सों, जो–जिन भगवदीयन कों भगवान मिले हैं, उनके पद जो गायगो सो संसार सों तरेगो। और चतुराई करि लौकिक मनुष्य के काव्य के कीर्तन कवित्त जो गावेगो, सो या प्रकार सों संसार में डूबेगो।

तब सगरे पंडित कवीश्वर लज्ञा पायके नीचो माथो करके अपने घरकों गये। सो वे सूरदासजी श्रीआचार्यजी के ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ५ – सो इन सूरदासजी ने श्रीनाथजी के कीर्तन की सेवा बहोत दिन तांई करी। सो बीच बीच में जब कुम्भनदासजी, परमानन्ददासजी के कीर्तन के ओसरा आवते, तब सूरदासजी श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन कूँ आवते। सो एक दिन सूरदासजी श्रीगोकुल आये हते, सो बाललीला के पद बहोत गाये। सो सुनिकें श्रीगुसांईजी आप बहोत प्रसन्न भये। तब श्रीगुसांईजी आप एक पलना को कीर्तन करिकें संस्कृत में सूरदास कों सिखायो। सो ता समय श्रीनवनीतप्रियजी पालने में बिराजे, तब सूरदास ने श्रीगुसांईजी कृत यह पलना गायो। सो पद :–

राग रामकली। प्रेङ्ख पर्यङ्क शयनं। चिर विरह-तापहरमतिरुचिरमीक्षणं प्रकटय्य प्रेमायनं ॥ध्रु.॥ तनुतर द्विजपंक्तिमतिललितानि हसितानि तव वीक्ष्य गायकीनाम्। यदवधि परमेतदाशयासमभवञ्जीवितं तावकीनाम्॥१॥ तोकता वपुषि तव राजते दृशि तु मदमानिनीमानहरणम्। अग्रिमे वयसिकिमुभावि कामेऽपि निजगोपिका भावकरणम् ॥२॥ ब्रजयुवति हृद्यकनकाचलानारोढुमुत्सुकं तव चरण-युगलम्। तत्तुमुहुन्नमनकाभ्यासमिव नाथ ! सपदि कुरुते मृदुल मृदुलम् ॥३॥ अधिगोरोचनातिलकमलकोद्ग्रथित विविधमणिमुक्ताफलविरचितम्। भूषणं राजते मुग्धताऽमृतभरस्यंदि वदनेन्दुरसितम् ॥४॥ भ्रूतटे मातृरचिताऽञ्जनबिंदुरतिशयितशोभया दृग्दोषऽमपनयन्। स्मर धनुषि मधु पिवन्नलिराज इव राजते प्रणयिसुखमुपनयन् ॥५॥ वचनरचनोदारहाससहज-स्मितामृत-चयैरार्त्ति भारमपनयनं । पालय सदाऽस्मानस्मदीय श्रीविट्ठले निजदास्य-मुपनयन् ॥६॥

सो यह पद सूरदास ने श्रीनवनीतप्रियजी के आगे गायो। पाछे या पद के अनुसार सूरदासजी बहोत पद करिके गाये। सो पद :-

राग रामकली - प्रेङ्ख पर्यङ्क गिरिधरन सोहे। प्रेम आनन्दभरी गोपिका कर धरि देति झोटा तहां काम को है ॥१॥ मदनमोहन हसत दन्त कान्ति हि लसत बजत नूपुर मधुर रुणनकारी। भाल मसि बिन्दु केसर तिलक तहाँ लसे नैन अञ्जन मनसि बान मारी ॥२॥ अलक राजत मुख ही भुज पसारत सुख ही हरत गोपाङ्गना मान तिहिं समैं तहाँ। देत सुखसिंधु सब गोपिका मननकुं 'सूर' शोभा निरखि वारत तन मन जहां ॥३॥

सो यह पलना को कीर्तन सूरदासजी ने गायो। पाछे बाललीला के पद बहोत गाये। सो पद :-

राग बिलावल - देखि सखी एक अद्‌भुत रूप। एक अंबुज मधि देखियत बीस दधिसुत जूप ॥१॥ एक अवली दोय जलचर उभय अर्क अनूप। पञ्च वारिज ढिंग हि देखियत कहो कहा स्वरूप ॥२॥ सिसुगति मे भई सोभा करो कोऊ बिचार। 'सूर' श्रीगोपाल की छबि राखिए उर धार ॥३॥

सोभा आजु भली बनि आई। जलसुत उपर हंस बिराजत ता पर ईंद्र-बधू दरसाई ॥१॥ दधिसूत लियो दियो दधि सुतकों यह छबि देखि नन्द मुसिक्याई।

नीरज सुत वाहन कौ भच्छन 'सूरस्याम' ले कीर चुगाई ॥२॥

इत्यादिक पद सूरदासजीने श्रीनवनीतप्रियजी के आगे गाये। तब श्रीगुसांईजी और श्रीगिरधरजी आदि सब बालक कहन लागे जो–हम जा प्रकार श्रीनवनीतप्रियजी को सिङ्गार करत हैं, सो ताही प्रकार के कीर्तन सूरदासजी गावत हैं। तातें इन सूरदास के ऊपर बहोत ही कृपा है।

वार्ता – प्रसंग ६ – ता पाछें श्रीगुसांईजी आप तो श्रीनाथजीद्वार पधारे। सो सूरदासजीने हू श्रीनाथजीद्वार जाइवेको विचार कियो। तब श्रीगिरिधरजी आदि सब बालकनने कह्यो, जो–सूरदासजी! दोय दिन श्रीनवनीतप्रियजी कों और हू कीर्तन सुनावो, पाछे तुम जइयो। तब सूरदासजी श्रीगोकुल में रहे। सो तब श्रीगिरिधरजी सों श्रीगोविन्दरायजी, श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी ये तीनों भाई कहें, जो–ये सूरदासजी, जेसो सिंगार श्रीनवनीतप्रियजी को होत है, तेसेही वस्त्र आभूषण वरणन करत हैं। सो एक दिन अद्भुत अनोखो सिङ्गार करो, और सूरदासजी कों जनावो मति, सो देखें ये कीर्तन कैसो करत हैं? तब गिरिधरजी ने कह्यो जो–ये सूरदासजी भगवदीय है, सो इनके हृदय में स्वरूपानंद को अनुभव है। तासों जेसो तुम सिङ्गार करोगे, सो तेसो ही पद सूरदासजी वरणन करिके गावेंगे। तासों भगवदीय की परीक्षा नाहीं करनी। तब उन तीनों बालकनने श्रीगिरिधरजी सों कही, जो–हमारो मन है, सो यामें कछू बाधा नाहीं है। तब श्रीगिरिधरजी कहे, जो–सवारे श्रीनवनीतप्रियजी को सिंगार करेंगे सो अद्भुत सिंगार

करेंगे । ता पाछें सवारे श्रीगिरिधरजी तीनों बालकन सहित श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में पधारे और सेवा में न्हाये । पाछें श्रीनवनीतप्रियजी कों जगाये, ता पाछें भोग धर्यो । फेरि न्हवाय के सिंगार धरावन लागे । सो आषाढ़ के दिन हते तातें गरमी बहोत । सो श्रीनवनीतप्रियजी कों कछु वस्त्र नाहीं धराए । सो मोतीन की दो लर मस्तक पर, मोती के बाजू पहोंची, कटि-किंकनी नुपूर, हार सब मोतिनके, तिलक, नकवेसर, करनफूल और कछु नाहीं । सो सूरदासजी जगमोहन में बेठे हते, सो इनके हृदयमें अनुभव भयो । तब सूरदासजी अपने मन में विचारे जो-आजु तो श्रीनवनीतप्रियजी को अद्‌भुत सिंगार कियो है । ऐसो सिंगार तो मैंने कबहू देख्यो नाहीं, और सुन्योहू नाहीं, जो केवल मोती धराए हैं, और वस्त्र तो कछु धराए हैं नाहीं । तासों आज मौकों कीर्तन हू अद्‌भुत गायो चहिये । सो जब सिंगार के दरसन खुले, तब श्रीगिरिधरजी ने सूरदासजी कों बुलाये और कह्यो, जो-सूरदासजी ! दरसन करो, और कीर्तन गाओ । तब सूरदासजी ने बिलावल में यह कीर्तन करिके श्रीनवनीतप्रियजी कों सुनायो । सो पद :-

राग बिलावल - देखे री हरि नंगमनंगा । जलसुत भूषन अंग बिराजत बसन हीन छबि उठि तरंगा ॥१॥ अंग अंग प्रति अमित माधुरी निरखि लज्जित रति कोटि अनंगा । किलकत दधिसुत मुख लेपन करि 'सूर' हसत ब्रज युवतिन संगा ॥२॥

सो सुनिके श्रीगिरिधरजी आदि सगरे बालक अपने मनमें बहोत प्रसन्न भये । और सूरदास सों कहन लागे, जो सूरदासजी! यह तुम कहा गाये ? तब सूरदासजीने बिनती कीनी, जो-महाराज ! जेसो आपने अद्‌भुत सिंङ्गार कियो, तेसो ही मैंने

अद्‌भुत कीर्तन गायो है। तब सगरे बालक यह सुनिके सूरदासजी के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। सो ए सूरदासजी श्रीआचार्यजी महाप्रभु के एसे परम कृपापात्र भगवदीय हे, सो इनकों श्रीठाकुरजी नित्य हृदय में अनुभव करावते। ता पाछें श्रीगिरिधरजी आप सूरदासजी कों सङ्ग लेके श्रीनाथजीद्वार आये। तब श्रीगिरिधरजी ने सब समाचार श्रीगुसांईजी सों कहे, जो–या प्रकार अद्‌भुत सिंगार श्रीनवनीतप्रियजी को सगरे बालकन के मनोरथ सों कियो। सो सूरदासजी ने एसो ही कीर्तन कियो। सो इनके हृदय में अनुभव है। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगिरिधरजीसों कहे, जो–सूरदासजीकी कहा बात है ? जो–ये पुष्टिमार्ग के जहाज है। सो भगवल्लीला को अनुभव इनकों अष्ट प्रहर हैं। सो सूरदासजी श्रीआचार्यजीके एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता–प्रसंग ७ – और सूरदासजी के पास एक ब्रजवा‍
को लरिका हतो, सो सब कामकाज सूरदासजी को करतो
ताको नाम गोपाल हतो। सो एक दिन सूरदासजी महाप्रस
लेन कों बैठे, तब वा गोपालसों सूरदासजी कहे, जो–मोकूँ
लोटी में जल भरि दीजों। तब गोपाल ब्रजवासी ने कह्यो, जो
तुम महाप्रसाद लेन कों बेठो जो मैं जल भरि देऊंगो। सो
कहिके गोपाल तो गोबर लेवेकों गयो। सो तहाँ दोय चारि वैष्ण
हते सो तिनसों बात करन लाग्यो, तब सूरदास कों जल दे
भूलि गयो। और सूरदासजी तो महाप्रसाद लेन बैठे, सो गरे
कौर अटक्यो। तब बांये हाथ सों लोटा इत उत देखन लागे,
पायो नाहीं। तब गरे में कौर अटक्यो सो बोल्यो न जाय।
सूरदास ब्याकुल भये। सो इतने में श्रीनाथजी सूरदासजी

पास आयके अपनी झारी धरि आए। तब सूरदासजी ने झारी में ते जल पियो। तब गोपाल ब्रजवासी कों सुधि आई, जो- सूरदासजी कों मैं जल नाहीं भरि आयो हूँ। सो दोरयो आयो। इतने में सूरदास महाप्रसाद ले कें आये। तब गोपाल ब्रजवासीने आयके सूरदास सों कह्यो, जो-सूरदासजी ! तुम महाप्रसाद ले उठे, सो तुमने जल कहां ते पियो ? जो-मैं तो गोबर लेन गयो हतो, सो वैष्णव के सङ्ग बात करत में भूलि गयो। तासों अब मैं दोरयो आयो हूं। तब सूरदासने ब्रजवासी सों कह्यो, जो-तेंनें गोपाल नाम काहे कों धरायो ? जो गोपाल तो एक श्रीनाथजी हैं। तासों आज मेरी रक्षा करी। नाँतर गरे में ऐसो कोर अटक्यो हतो सो जल बिना बोल निकसे नाही। तब मैं व्याकुल भयो, तब हाथ में जल की झारी आई सो मैं जल पान कियो। तासों मैंने जान्यो जो तेने धरयो होयगो। और अब तू कहत है, जो मैं नाहीं हतो। सो तातें मंदिरवारो गोपाल होयगो। जो देखि तो झारी कैसी है। तब गोपाल ब्रजवासी जहां सूरदासजी महाप्रसाद लिये हते तहां आयके देखे तो सोने की झारी है। सो उठाय के गोपाल सूरदासजी के पास आय कह्यो, जो-ये झारी तो मंदिर की है। सो तब सूरदास ने वा गोपाल ब्रजवासी सों कह्यो, जो- तैने बहोत बुरो काम कियो, जो ठाकुरजी कों इतनो श्रम करवायो। जो मेरे लिये झारी लेंके श्रीठाकुरजी कों आनो परयो। सो या प्रकार सूरदासजी ने गोपालदास सों कह्यो, जो-ये झारी तू जतन सों राखियो। और जब श्रीगुसांईजी आपु पोंढि के उठे तब उनकों सोंपि आइयो। तब गोपालदास ने झारी लेके श्रीगुसांईजी के पास आय, दंडवत् करि आगे राखी। तब श्रीगुसांईजी आपु

कहे, ये झारी तेरे पास कैसे आई ? जो-ये झारी तो श्रीगोवर्द्धनधारी की है। तब गोपालदास ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो-महाराज ! यह अपराध मोसों पर्‍यो है। पाछें सब बात कही। तब यह बात सुनिके श्रीगुसांईजी आप तत्काल स्नान करिकें झारी कों मँगवाय, दूसरो वस्त्र लपेटिकें मंदिर में बेगि ही झारी लेके पधारे। पाछे श्रीगोवर्द्धनधर कूँ जलपान कराइ के कहे, जो आज-तो सूरदास की बड़ी रक्षा कीनी। सो तुम बिन कौन वैष्णवकी रक्षा करे ? तब श्रीनाथजी ने कही, जो-सूरदास के गरे में कौर अटक्यो सो व्याकुल भये, तासों झारी धरि आयो।

भावप्रकाश – सो काहेतें ? सो सूरदास व्याकुल भये, सो मैं ही व्याकुल भयो। जो भगवदीय है सो मेरो स्वरूप है।

ता पाछें उत्थापन के किंवाड़ खोले। सो सूरदासजी आइ के उत्थापन के दरसन किये। सो उत्थापन समे को भोग श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी कों धरि सूरदास के पास आईके कहे, जो-आज गोपाल ने तिहारे ऊपर बड़ी कृपा करी है। तब सूरदासजी ने कह्यो, जो-महाराज ! यह सब आपकी कृपा है। नाहिं तो श्रीनाथजी मो सरीखे पतितन कों कहा जानें ? जो सब श्रीआचार्यजी की का'नि तें अंगीकार करत हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु कहें, जो-तुम बड़े भगवदीय हो। जो भगवदीय बिना ऐसी दैन्यता कहां मिले ? सो सूरदासजी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ८ – श्रीनाथजी के मंदिर के नीचे गोपालपुर गाम है। सो तहां एक बनिया रहतो। सो ऐसो गृहकार्य में और

लोभ में आसक्त हतो, जो–कबहुँ श्रीनाथजी को दरसन नाहीं कियो। और श्रीगुसांईजी की सरन हू नाहीं आयो। सो गोपालपुर में परवत के नीचे वाकी दुकान हती। सो वह बनिया गोपालपुर में दुकान खोलतो सो पहले जो कोई वैष्णव श्रीनाथजी के दरसन करि के परवत के ऊपर सों आवतो ताकों बुलाय के पहेले पूछतो, जो–आज श्रीनाथजीकौ कहा सिंगार है ? सो वैष्णव याकों बतावतो । सो ताही प्रकार बनिया सब वैष्णवन के आगे श्रीनाथजी के दरसन की बड़ाई करतो, जो–देखो, आज श्रीनाथजी को कैसो सिंगार भयो है। कैसो अलौकिक दरसन भयो है। या भांति सों सबतें कहतो, आप दरसन कों कबहू नाहीं आवतो, और वैष्णव कों दिखाइवे के लिये माला पहरि लेतो, और आछो तिलक, आछो छापा लगावतो। और वैष्णव आगे प्रेम की वार्ता करतो। सो वे वैष्णव प्रसन्न होय के वाकों वैष्णव जानिके सीधो सामग्री लेते। सो या प्रकार पाखंड करि विश्वास दे देके सब वैष्णवन कों ठगे। सो द्रव्य बहोत भेलो कियो, परन्तु कोडी एक खरचे नाहीं। सो ऐसे करत साठ बरस को भयो। तब एक दिन सूरदासजी सों वा बनिया ने कही, जो–सूरदासजी ! आज तुम देखो, कैसो सुन्दर सिंगार भयो है। और तुम तो कोई दिन मेरी हाट सों सीधो सामान लेत नाहीं हो, और तुम तो कोई दिन मेरी हाट ऊपर तुम आवत नाहीं हो। सो तुम ऐसे वैष्णव गुनी हो सो मेरो अपराध कहा, जो मेरी हाट तें सोदा लेत नाहीं? और यह हाट तिहारी है। मैं तो तुम वैष्णवन को दास हूँ तासों मो पर कृपा करो। या भांति बनिया के बचन सुनि सूरदास अपने

मनमें विचारी जो देखो, बनिया कैसो सुन्दर बोलत है, जो ऊपर सों लोभ सों कपट करत हैं, तासों अब याकों कपट छुड़ावनो। और बनियाने कोई दिन श्रीनाथजी के दरसन किये नाहीं सो याकों दरसन हू करावनो और याकों वैष्णव हू कराय देनो। तब यह विचारि के सूरदास ने वा बनिया सों कही, जो–तें जनम भर में कोई दिन दरसन नाहीं कियो है, सो मैं तोकों जानत हों। और तू वैष्णव है नाहीं, सो तासों मैं तेरी हाट पर नाहीं आवत हों। तू सांची कहि दे, जो–तेंने जनम भर में कोई दिन श्रीनाथजी के दरसन किये हैं। तब यह वचन सुनिके बनिया अपने मन में बहोत खिस्यानो होय गयो, और वह बनिया सूरदास सों बोल्यो, जो–सूरदासजी ! तुम यह बात और काहू के आगे मति कहियो। जो–मैं यासों दरसन कों नाहिं आवत हों, जो हाट छोड़ि दरसन कों जाऊं तो यहां वैष्णव सोदा कों फिरि जाय, जो और की हाट सों लेन लागें, तब मैं खाऊं कहां ते ? और कोऊ मेरे पास ऐसो मनुष्य नाहिं है, जो–जा समय दरसन के किंवाड़ खुलें ता समय मोकों आय के खबर करे, जातें मैं बेगि ही दौरिके दरसन करि आऊँ। तब वा बनिया तें सूरदास ने कही, जो–मैं जा समय आईकें खबरि करूँ, सो ता समय–तू चलेगो ? तब बनिया ने कही, जो–तुम आइके खबरि करियो, जो–मैं चलूंगो। जो मेरे मन में दरसन की बहोत है। तब सूरदासजी कहे, जो मैं उत्थापन के समय आऊंगो। सो यह कहिके सूरदासजी तो गये। पाछे जब उत्थापन को समय भयो तब शङ्खनाद भये, तब सूरदासजी ने आइके वा बनिया सों कही, जो–अब शङ्खनाद भये हैं तासों

दरसन को समय है, सो अब चलो। तब वा बनिया ने सूरदासजी सों कह्यो, जो–या समय गाँव के लोग सौदा लेन आवत हैं, सो भोग के किंवाड़ खुलें ता समय तुम मोकों खबरि करियो। तब सूरदासजी ने पर्वत ऊपर आइके श्रीनाथजी के दरसन किये, और कीर्तन किये। ता पाछे श्रीनाथजी के भोग के दरसन को समय भयो, तब सूरदासजी परवत सों नीचे उतरि के वा बनिया सों कहे, जो–दरसन को समय है, तासों अब तो दरसन कों चलि ! तब वा बनिया ने सूरदास सों कह्यो, जो–सूरदासजी ! अब तो बनतें गाय आइवे को समय भयो है, तासों मंदिर में चलूं तो गाय आइके मेरो सगरो अनाज खाय जाँय। तासों अब तुम सेन आरती समय जताइयो सो तहाँ तांई गाय सब अपने अपने घर जाँयगी। तब सूरदासजी फेरि भोग के समय जाके दरसन किये ता पाछें सन्ध्या के दरसन किये। पाछें सेन आरती के दरसन को समय भयो तब सूरदासजी ने आइके बनिया कों खबरि कीनी, जो–चलि अब सेन आरती के दरसन को समय है। तब वा बनिया ने सूरदास सों कही, जो–सूरदासजी ! आज तुमकों बहोत श्रम भयो है। परन्तु अब दीया बारिवे को समय है, सो काहेतें, जो–अब या समय लक्ष्मी आवत है, तासों दीया न होय तो लक्ष्मी पाछी फिरि जाय। और कोई मेरी हाटतें अन्न चुराय लेय तो मैं कहा करूँ ? तासों अब मैं सवारे प्रातःकाल दरसन करि ता पाछें हाट खोलूँगो। तासों मोकों मंगला के समय आइके खबरि करियो। आज मैंने तुमसों बहोत फेरा खवाये। तब सूरदासजी मंदिर में आइके श्रीनाथजी के दरसन किये। ता

पाछें सेन समय कीर्तन गाये। पाछें प्रातःकाल भयो, तब न्हाय के सूरदासजी ने आइके वा बनिया सों कही, जो–मंगला को समय है, सो अब तो चलि ! तब वा बनिया ने कही, जो–सूरदासजी ! अब ही तो हाट बुहारि के मांडनी है। तासों बोहनी के समय कोई गाहक फिरि जाय तो सगरो दिन खाली जाय। तासों हाट लगाय के सिंगार के दरसन कों चलूँगो। तासों सिंगार के समय कहियो। तब सूरदासजी ने मङ्गला आरती के दरसन किये। पाछें सूरदासजी सिंङ्गार के समय फेरि आये। तब वा बनिया ने कही, जो अब ही मैं आछी काहू की बोहनी कीनी नाहीं है, और गाय डोलत हैं। तासों अब राजभोग के दरसन अवश्य करूँगो। सो देखो तुम काल्हि तें मेरे लिये बहोत फिरत हो, जो–तुम बड़े भगवदीय हो। सो सूरदासजी फेरि श्रीनाथजी के दरसन कों परवत पर आये। तब श्रीनाथजी के सिंगार के दरसन किये कीर्तन किये। ता पाछें राजभोग आरती को समय भयो, तब सूरदासजी ने वा बनिया सो कह्यो, जो–अब चलोगे ? तब वा बनियाने कह्यो, जो–या समय में कैसे चलें ? जो अब वैष्णव राजभोग के दरसन करि के नीचे आवेंगे। सो सब या समय सीधा सामग्री लेत हैं। जो मैं बूढो, कब आऊँ परवत सों उतरि कें, कैसे बेगि आयो जाय ? और याही बखत बिक्री को समय है। जो याही समय कछू मिले सो मिले। तासों उत्थापन के समय दरसन करूँगो। या प्रकार सूरदासजी वा बनिया के साथ तीन दिन तांई रहे। परन्तु वह बनिया ऐसो लोभी सो दरसन कों नाहीं गयो। ता पाछे चौथे दिन न्हाय के सूरदासजी प्रातःकाल मङ्गला के दरसन

कों चले। तब सूरदासजी अपने मन में बिचारे, जो–देखो, या बनिया कों तीन दिन भये, परन्तु दरसन कों नाहीं गयो। तासों आज जो यह न चले तो याकों भय दिखावनो, और दरसन करावनो। यह विचारिके सूरदासजी वा बनिया की पास आय के कह्यो, जो–तीन दिन बीति चुके मोकों फिरते, परि तू दरसन कों नाहीं चल्यो। जो आज तो चलि। तब वा बनियानें कह्यो, जो–कछू बोहनी करि सिंगार के दरसन करूँगो। तब सूरदासजी वह बनिया सों कही, जो–अब तो मैं तेरी बात सगरे वैष्णवन में प्रगट करूँगो। जो यह बनिया झूंठो बहोत है, सो कबहू याने श्रीनाथजी को दरसन नाहीं कियो। और यह वैष्णव हू नाहीं है। अब तेरे पास कोई सोदा लैन आवेगो तो मैं तेरे दोहा, चौपाई, पद, कुटिलता के करिके वैष्णव कों सुनाऊंगो। सो या भांति कहिके भैरव राग में एक पद गायो :–

राग भैरव – आज काम काल्हि काम परसों काम करना। पहेले दिन बोहोत काम विमुख भए चरना ॥१॥ जागत काम सोवत काम काम ही में पचि मरना। छांडि काम सुमरि स्याम 'सूर' पकरि सरना ॥२॥

सो यह पद सूरदासजी नें वा बनिया कों वाही समय करिके सुनायो। सो तब तो वा बनिया अपने मन में डरप्यो। पाछे सूरदासजी के पांवन परि वा बनिया ने बिनती कीनी, जो–तुम मेरे दोहा कवित्त कछू बरनन मति करो, और मेरी बात कोई सों प्रगट मति करो। जो मैं अबही तिहारे संग चलूँगो। पाछें वह बनिया सूरदासजी के संग आयो। तब मङ्गला के किंवाड़ खुले, तब सूरदासजी नें श्रीनाथजी सों कह्यो, जो–महाराज ! यह बनिया दैवी जीव है, सो तासों अब याके मन कों आकर्षन करिके

याको उद्धार करो। सो काहेतें ? जो यह तिहारी ध्वजा के नीचे रहत है। तब श्रीनाथजी कहें, जो – मेरे पास रहत है, सो कहा मोकों जानत है ? तुम सब भगवदीयन की कृपा होय सो तबही मोकों पावे।

भावप्रकाश – सो काहेते ? जो गंगा यमुना में अनेक जीव हैं सो कहा कृतार्थ हैं ? जो माखी मच्छर चेंटी आदि श्रीप्रभु के बहोत जीव हैं, सो कहा कृतार्थ हैं? जो भगवदीयन को संग होय तब ही कृतार्थ होय। सो तब ही श्रीप्रभून कों पावे। भगवदीयन के संग सों दासभाव होय तब ही कृपा होय।

पाछें श्रीनाथजी ने वा बनिया कों ऐसो दरसन दियो, सो वाको मन हरि लीनो। सो जब मङ्गला के दरसन होय चुके तब वा बनियाने सूरदासजी के चरन पकरि के बिनती कीनी, जो- महाराज ! मेरो जनम सगरो वृथा गयो, द्रव्य जोरवे में। मेरे पास द्रव्य बहोत हैं, सो अब तुम चाहो तहां या द्रव्य कों खरच करो। और मोकों श्रीगुसांईजी को सेवक कराय के वैष्णव करो। तब सूरदासजी ने या बनिया सों कह्यो, जो-तू न्हाय के काहू कों छूइयो मति, यहां आय बैठियो। सो इतने में श्रीगुसांईजी आप सिङ्गार करि चुके, तब सूरदासजी नें श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो-महाराज ! या बनिया कों सरन लीजिये। तब श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख सों सूरदासजी सों कहे, जो- सूरदासजी ! तुमने भलो साठि बरस को बूढ़ो बेल नाथ्यो। तुम बिना या बनिया को सगरो जनम योंही जातो। पाछे श्रीगुसांईजी आप वा बनिया कों बुलाय कें श्रीनाथजी के सन्निधान बैठाय के नाम – ब्रह्मसंबंध करवायो। सो वा बनिया की बुद्धि निरमल होय गई। सो तब सगरे दरसन नित्य नेम सों करन लाग्यो। और

वा बनिया नें श्रीगुसांईजी कों बह्योत भेट करी। और श्रीनाथजी के वागा वस्त्र सामग्री कराय आभूषण कराये, और अङ्गीकार कराये। ता पाछे एक दिन वा बनिया ने सूरदासजी सों कही, जो–सूरदासजी ! तिहारी कृपातें मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन पायो, और वैष्णव भयो। तासों अब ऐसी कृपा करो, जो–याही जनम में मेरो अङ्गीकार प्रभु करें, और मोकों संसार को दुःख सुख बाधा न करे। तब सूरदासजी ने एक पद करिके वा बनिया कों सिखायो।

राग बिलावल – कृष्ण सुमिर तन पावन कीजे। जोंलों जग सुपना सों जीजे॥१॥ अवधि उसास गिने सब तेरे। सो बीतत भय आवत नेरे ॥२॥ जो यह सपनो नाहिं बिचारे। कबहू न जनम विषय लगि हारे ॥३॥ गहे विवेक बीज ले बोवे। कबहू न जठर अग्नि में सोवे ॥४॥ बार बार तोकों समुझावे। जो छिन जाय सो बोहोरि नहीं आवे ॥५॥ ठगिनी विषय ठगोरी लाई। घटिका घटत छिन ही छिन जाई ॥६॥ गिनत ही गिनत अवधि नियरानी। छांडि चल्यो निधि भई बिरानी ॥७॥ होत कहा अब के पछताने। तरूवर–पत्र न मिले पुराने ॥८॥ पवन उडे सो बहुरि न आवे। कर्ता और अनेक बनाये ॥९॥ जल थल पसु पंछी सुकर क्रमि। मानुष तन पायो सब जुग भ्रमि ॥१०॥ सो तन खोवे रति वित्त मनि। काच गह्यो बिसरी चिन्तामनि ॥११॥ कबहू नीके नाथ न गायो। एक मन दसहू दिस धायो ॥१२॥ मन हि मन माया अवगाहत। नायक भयो तिहिं पुर चाहत ॥१३॥ स्वर्ग रसातल भुव रजधानी। तोऊ तृपत भयो न अभिमानी ॥१४॥ ऐसे ही करत अवधि सब बीती। गह्यो न ज्ञान रह्यो यह रीति ॥१५॥ कबहू सज्जन मिलि करत बडाई। कबहूक ललना ललित लजाई॥१६॥ कबहूक हय हाथी रथ आसन। कबहूक पलका सुखद सुवासन ॥१७॥ कबहूक चँवर छत्र सिर ढारे। कबहू सुभट पसुन चढि मारे ॥१८॥ कबहू तोरन छत्र बनावे। कबहू मद गज जूथ लरावे ॥१९॥ जोबत द्वार दूती सब ठाढी। त्यों त्यों तृष्णा सतगुनी बाढी।॥२०॥ दिव्य बसन फलफूल सुबासी। नव जोबन अबला सुखरासी॥२१॥ द्वार कपाट सहस एक लागे। सुभट पहरुवा चहुँ दिस जागे ॥२२॥ रमनी रमत न रजनी जानी। माया मद पियो अभिमानी ॥२३॥ सुत वित वनिता हेत लगायो। तब चेत्यो जब काल चेतायो ॥२४॥ झूंठो नाटक सङ्ग न साथी। नोबत द्वार

हय गज हाथी ।।२५।। भूप छिनक न भयो भिखारी । क्यों हृदै सूल न सहे बिकारी।।२६।। भयो अनाथ सनाथ न बांध्यो । तिर्यक सूर–सर सन्मुख साध्यो ।।२७।। मनुष्य देह धरि कर्म कमायो । ते तिरछे दुःख द्वारे पायो ।।२८।। जिहिं तन काज जीव बध कीने । रसना–रस अमि षट–रस लीने ।।२९।। सो तन छुटत प्रेत करि डारयो । प्रेत प्रेत कहि नगर निकारयो ।।३०।। हिंसा करि पालन करी जाकी । विष्टा करम भस्म भई ताकी।।३१।। भोग अष्ट अरू बीस भयानक । हरिपद बिमुख विषयरस पावक ।।३२।। जागि जागि रे यहाँ को तेरो । माया सुपन कहत सब मेरो ।।३३।। कृष्ण बिना तोहि कौन छुडावे । सो करुणामय बिरद बुलावे ।।३४।। आन देव कौ नहीं भरोसो । बात खटरस लाख परोसो ।।३५।। जीवन गयो तृषित की नांई । मृग–तृष्णा कबहू न अघाई।।३६।। ऐसे आन देव सुखदायक । हरि बिनु कौन छुडावन लायक।।३७।। धर्मराज कहि सुनि कृतहारी । तू विषयन – रति सूरति बिसारी ।।३८।। गर्भ अगिन रक्षा जिहिं कीनी । सङ्कट मेटि अभयता दीनी ।।३९।। हस्त चरन लोचन नासा मुख। रुधिर बूंदते लह्यो ऐसो सुख ।।४०।। सो सुख तू सपने नहीं जान्यो प्राननाथ कहि निकट न आन्यो ।।४१।। कित ये सूल सहे अपराधी । निगम सिख एको नहीं साधी।।४२।। कोटिन बार मनुष्य तन पायो । हरि–पथ छांड अपथ कों धायो ।।४३।। समय गए असमय पछितैये । मानुष जन्म बहुरि नहीं पैये ।।४४।। सूझत स्वामी पीठ दे आगे । पुनि पुरुषारथ काहे लागे ।।४५।। पारस पाइ जलधि में बोरे । पुनि गुन सुनत कपार हि फोरे ।।४६।। चिंतामणि कोडी लगि दीनी । सुनि परमित करुणा अति कीनी ।।४७।। पाइ कल्पतरु मूल खनावे । सो तरु पुनि कैसें सो पावे।।४८।। मधु भाजन पूरन विधि दीनो । सो तू छांडि हलाहल कीनो ।।४९।। कामधेनु तजि अज हि बिसाहे । गज–बल छांडि स्याल–बल चाहे ।।५०।। यह नर–देह स्याम बिनु खोई । कपि कोतिक लों बांधि बिगोई ।।५१।। काहे न करम कियो तू ऐसो । सुक सन सनक सनंदन जैसो।।५२।। सुर नर मुनि असुर पुनि देवक । हरिपद भजि सब तेरे सेवक।।५३।। परदक्षणा दे सीस नँवावे । मनसिज तोड़ न परसन पावे ।।५४।। जाकों भजत ऐसो सुख पैये । सुनि सठ सो कैसे बिसरैये ।।५५।। अगनित पतित नाम – निस्तारी । जनम करम संताप निवारी ।।५६।। निरभय होइ भक्ति निधि पाई । कबहू काल ब्याल नहीं खाई ।।५७।। सर्वसु जीवन कृष्ण नाम पद । भवजल व्याधि उपाधि परम गद ।।५८।। श्रीभागवत परम हितकारी । द्वारे रटत हरि 'सूर' भिखारी।।५९।। परम पतित सरनाई लीजे । पदरज दान अभयता दीजे ।।६०।।

तब वा बनिया कों दृढ़ भक्ति भई । लौकिक की वासना सब

दूरि भई। सो ज्ञान वैराग्य सर्वोपरि भक्ति भई। सो श्रीनाथजी के चरण कमल में दृढ़ आसक्ति और स्वरूपानंद को अनुभव भयो। तब रस में मगन होय गयो। सो या प्रकार सूरदासजी के संगतें ऐसो लोभी बनिया हू कृतार्थ भयो। सो वे सूरदासजी ऐसे भगवदीय हते।

भावप्रकाश – सो काहे तें ? जो मूल में दैवी जीव है। सो श्रीललिताजी की सखी है। सो लीला में याको नाम 'विरजा' है। सो सूरदास को संग पायके लीला को अनुभव भयो। तातें भगवदीयन को संग सर्वोपरि है।

वार्ता – प्रसंग ९ – और एक समय श्रीगोकुल तें परमानंद आदि सब वैष्णव दस पंद्रह सूरदासजी सों मिलवे कों और श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों आये। सो सेन आरती के दरसन करि सूरदासजी के पास आये। तब सूरदासजी ने सगरे वैष्णवन को बहोत आदर सन्मान कियो, और ताही समय कीर्तन गाये।

राग कान्हरो – हरिजन संग छिनक जो होई। कोटि स्वर्गसुख कोटि मुक्तिसुख ता सम लहे न कोई ॥१॥ पूरे भाग्य पुन्य सञ्चित फल कृष्ण कृपा व्है जाके। 'सूरदास' हरिजन पदमहिमा कहेत भागवत ताके ॥२॥

राग कान्हरो – प्रभु जन पर प्रसन्न जब होई। तब वैष्णवजन दर्शन पावे पाप रहे नहीं कोई ॥१॥ हरि – लीला आवेस होइ मन सकल बासना नासे। 'सूर' यह निश्चै बिचार करि हरिस्वरूप जब भासे ॥२॥

राग कान्हरो – हरि के जनकी अति ठकुराई। महाराज ऋषिराज देवमुनि देखत रहे लजाई ॥१॥ दृढ़ विश्वास कियो सिंहासन ता पर बैठे भूप। हरि–जस बिमल छत्र सिर सोभित राजत परम अनूप ॥२॥ दृढ़ विश्वास राज ताहिको ताकौ लोग बड़ो उच्छाह। काम क्रोध मद मोह लोभ मिलि भये चोर तें साह ॥३॥ हरि पद पङ्कज पियो प्रेमरस ताहि के रंग राते। मंत्री ज्ञान औसर नही पावत कहत बात सङ्काते ॥४॥ अर्थ काम दोऊ रहे दुरि दुरि धर्म मोक्ष सिर नावे। विनय विवेक विचित्र पौरिया समय न कबहू पावे ॥५॥ अष्ट महासिद्धि द्वारे ठाढ़ी कर जोरे उर लीने। छड़िदार वैराग्य विनोदी झिरकी बाहिर कीने ॥६॥ माया काल कछू नहीं व्यापे जो रस–रीति यह जाने।

'सूरदास' नर तन पाए गुरु प्रसाद पहिचाने ॥७॥

राग हमीर – जा दिन संत पाहुने आवत। तीरथ कोटि स्नान करन फल दरसन ही तें पावत ॥१॥ प्रफुल्लित वदन रहत निसदिन प्रति चरनकमल चित्त लावत। मनक्रमबचन और नहिं जानत सुमिरत और सुमिरावत ॥२॥ मिथ्यावाद उपाधि रहित व्है बिमल बिमल जस गावत। 'सूरदास' प्रीति करि उनसों जो हरि सूरत करावत ॥३॥

सो या प्रकार सूरदासजी ने अनेक पद वैष्णवन कों सुनाये। तब सब वैष्णव बहोत प्रसन्न भये। पाछें सूरदासजी ने उन वैष्णवन सों कह्यो, जो–कछू मो पर कृपा करिके आज्ञा करिये। तब सब वैष्णवन ने सूरदासजी सों कह्यो, जो–ज्ञान, योग, परमतत्व और श्रीठाकुरजी को प्रेम, स्नेह को स्वरूप सुनाओ। तब सूरदासजी ने यह कीर्तन सुनायो। सो पद :-

राग बिहागरो – जोग सों कोऊ नहीं हरि पाए। निज आज्ञा तप कियो बिधाता कब रसरास खिलाए॥१॥ जोग जुगति सङ्कर आराधत परमतत्व चित्त लाए। भुज धरि ग्रीव कबहि नन्दनन्दन हिल मिल कल सुर गाए ॥२॥ बगदावल महारिषि कबहु तृन छाया न कराए। बरखत बरखत दुखी जानि नन्दनन्दन कब गिरिवर कर छाए॥३॥ अति तपपुञ्ज विप्र दुर्वासा दुर्वा तृन नित खाए। चक्र सुदर्शन तपत महामुनि कब मुख अनल समाए ॥४॥ बहुत तप कियो मार्कंडे मुनि आय सिन्धु भरमाये। सत कल्प बीतत भये तब हरि वरुन फांस मुकराये ॥५॥ भक्त बिरह कातर करुनामय वेद निरंतर गावे। को हे जोग सुनत यहाँ उधो 'सूर' स्याम मन भावे ॥६॥

सो या भांति अनेक कीर्तन करि वैष्णवन कों समुझाये। तब सगरे वैष्णव प्रसन्न होयकें कहे, जो सूरदासजी के ऊपर बड़ी भगवत् कृपा है। ता पाछे सवारे भये सगरे वैष्णव ने श्रीनाथजी के दरसन किये। ता पाछे सूरदासजी सों विदा होय के गोकुल आये। सो ये सूरदासजी श्रीआचार्यजी के एसे परम कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग १० – सो या प्रकार सूरदासजीने बहोत

दिन तांई भगवद् सेवा कीनी। ता पाछे जानें, जो–भगवद् इच्छा मोकों बुलायवे की है।

भावप्रकाश – सो काहेते ? जो प्रभुन की यह रीति है, जो जब वैकुण्ठ सों भूमि पर प्रकट होयवे की इच्छा करत हैं, तब वैकुण्ठवासी जो भक्त हैं, सो उनकों पहले भूमि पर प्रकट करत हैं। ता पाछें आपु श्रीभगवान प्रकट होय भक्तन के संग लीला करत हैं। पाछें अपुने भक्तन कों या जगत सों तिरोधान कराय ता पाछें वैकुंठ में लीला करत हैं। सो जैसे नन्द, जसोदा, गोपीजन, सखा, वसुदेव, देवकी, यादव, सब प्रकट पहले ही किये। ता पाछे आप प्रकट होयकें लीला भूमि पर करिकै पाछे जादवनकूं मूसल द्वारा अन्तर्धान करि लौकिक लीला किये। सो श्रीनन्दरायजी, श्रीजसोदाजी, गोपीजन कों अन्तर्धान लौकिक लीला नाहीं दिखाये। सो तैसेही श्रीआचार्यजी, श्रीगुसांईजी श्री पूर्णपुरुषोत्तम को प्राकट्य है। सो लीलासंबंधी वैष्णव प्रकट किये। अब श्रीआचार्यजी आप अन्तर्धान लीला किये। और श्रीगुसांईजी कों करनो है। सो पहले भगवदीयन कूं नित्य लीला में स्थापन करके आप पधारेंगे। सो भगवदीय कों (अपनी) लौकिक अन्तर्धानलीला दिखावत नाहीं। सो जैसे चाचा हरिवंसजी सों कहे, जो–तुम गुजरात जावो। सो या प्रकार गुजरात पठाय के अन्तर्धान लीला किये। सूरदासजी कूं नित्य लीला में बुलायवेकी इच्छा श्रीगोवर्द्धनधर की है।

सो तब सूरदासजी मन में विचारे, जो–मैं तो अपने मन में सवा लाख कीर्तन प्रकट करिवे को संकल्प कियो है, सो तामेतें लाख कीर्तन तो प्रकट भये हैं। सो भगवद् इच्छा तें पचीस हजार कीर्तन और प्रकट करने। ता पाछे यह देह छोड़िके अंतर्धान होय जानो। सो या प्रकार सूरदासजी अपने मनमें विचार करत हते। वाही समय श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु प्रकट होयके दरसन दे के कह्यो, जो–सूरदासजी ! तुमने जो सवा लाख कीर्तन को मन में मनोरथ कियो है, सो तो पूरन हो चुक्यो है, जो–पचीस हजार कीर्तन मैंने पूरन करि दिये हैं। तासों तुम अपने कीर्तनन के चोपडा देखो। तब सूरदासजी ने एक वैष्णव सों कह्यो जो–तुम मेरे कीर्तनके चोपडा देखो। सो तब वह वैष्णव देखे तो

सूरदासजी के कीर्तन के बीच बीच में 'सूरश्याम' को भोग (छाप) है। सो एसे कीर्तन सगरी लीला में हैं। सो पचीस हजार हैं। सो बात वा वैष्णव ने सूरदास सों कही जो-काल्हि तक तो 'सूरश्याम' के कीर्तन हते नाहीं, और आज सगरी लीला की बीच में हैं। तब सूरदासजी श्रीनाथजी को दंडवत करिके कहे, जो-अब मेरो मनोरथ आपकी कृपा तें पूरन भयो। तासों अब आपु आज्ञा देउ सो करों। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो-अब तुम मेरी लीला में आयके लीलारस को अनुभव करो। सो यह आज्ञा करिके श्रीनाथजी अंतर्धान भये। तब सूरदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिके मन में बहोत प्रसन्न भये। परन्तु पास दोय वैष्णव साधारन हते, सो जाने नाहीं, जो-श्रीठाकुरजी आपु सूरदासजीके पास पधारे, और कहा आज्ञा दीनी। सो काहेतें, जो-श्रीठाकुरजीके स्वरूप को अनुभव भगवदीय बिना और काहू कों नाहीं।

वार्ता - प्रसंग ११ - सो तब सूरदासजी अपने मनमें बिचार करिके परासोली आये। सो तहां अखंड रासलीला ब्रह्मरात्र करि भगवानने रासपंचाध्याई की सगरी लीला उहां करी है। सो जहां उडुराज चन्द्रमा प्रकट्यो है। सो तहां चन्द्रसरोवर है एसे अलौकिक स्थल में आये।

भावप्रकाश - जो ये अष्टसखा हैं। सो श्रीगिरिराजमें आठ द्वार हैं। सो तहां के ये अधिकारी हैं। तासों आठों सखा अपने अपने द्वार पर श्रीगिरिराज में ही देह छोडी है। और अलौकिक देह धरिके सदा सर्वदा लीला में बिराजमान हैं। (१) सो गोविंदकुंड ऊपर एक द्वार है। ताके सन्मुख परासोली चन्द्रसरोवर है, तहां सूरदासजी सेवा में मुखिया हैं। (२) अप्सराकुंड ऊपर एक द्वार है, तहाँ सेवा में छीतस्वामी मुखिया हैं। (३) सुरभीकुंड ऊपर द्वार है, तहां परमानन्ददास सेवामें मुखिया हैं।

(४) और गोविन्दस्वामीकी कदमखंडी पास एक द्वार है, तहाँ गोविन्दस्वामी मुखिया हैं। (५) और रूद्रकुंड के पास एक द्वार है तहाँ चतुर्भुजदास सेवामें मुखिया हैं। (६) बिलछू सन्मुख एक बारी है, सो ता मारग होयके रासलीला कों पधारत हैं, सो तहाँ की सेवा के कृष्णदास अधिकारी मुखिया हैं। (७) और मानसी गङ्गा के पास एक द्वार है सो तहाँकी सेवा में नन्ददास मुखिया हैं। (८) और आन्योर के सन्मुख एक द्वार है, सो तहाँ जमुनावतो एक गाम है, सो ता द्वार के मुखिया कुम्भनदास हैं। या प्रकार श्रीगिरिराज में नित्य निकुञ्ज–लीला है। सो ता निकुञ्जलीला के आठ द्वार हैं। तहांके आठ सखा, सखी रूप हैं, सो सेवा में सदा तत्पर हैं। तासों सूरदास को ठिकानो परासोली है।

सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की ध्वजा कों साष्टाङ्ग दंडवत् करि के ध्वजा के सन्मुख मुख करिके सूरदासजी सोये, परन्तु मन में यह आई, जो–श्रीआचार्यजी और श्रीगुसांईजी आपु मेरे ऊपर बड़ी कृपा करी है। श्रीगोवर्द्धनाथजी की लीला को याही देह सों अनुभव कराये। परन्तु या समय एक वार श्रीगुसांईजी आपु मेरे ऊपर कृपा करिके दरसन देय, तो मेरे बड़े भाग्य हैं। श्रीगुसांईजी को नाम कृपासिंधु हैं, सो भक्तन के मनोरथ पूरनकर्ता हैं, सो पूरन करेंगे। सो या प्रकार सूरदासजी श्रीगुसांईजीके स्वरूप को चिंतवन करत हते, और यहां श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी को सिंगार करत हते। सो वा दिन श्रीगुसांईजी ने सूरदास कों जगमोहन में बैठे कीर्तन करत न देखे। सो ता समय श्रीगुसांईजी आपु सेवकन सों पूछे, जो–सूरदासजी कहां है ? तब एक वैष्णव नें बिनती कीनी जो–महाराज ! सूरदासजी तो आज मङ्गला आरती के दरसन करिके परासोलीमें सगरे सेवकन सों भगवत्–स्मरण करिके गये हैं। तब श्रीगुसांईजी आप जाने जो भगवद् इच्छा सूरदासजी कों बुलायवे की भई हैं, तासों आज सूरदासजी परासोली कों गये हैं। सो तब श्रीगुसांईजी

आप श्रीमुख सों सगरे वैष्णवन सों यह आज्ञा किये जो– 'पुष्टिमारग को जहाज' जात है सो जाकों कछू लेनो होय सो लेऊ, और उहां जायके सूरदासजी कों देखो। सो या भांति सों जो राजभोग आरती उपरान्त रहत हैं तो मैं हू आवत हों। सो तब सगरे वैष्णव सूरदासजी के पास आये।

भावप्रकाश – सो यहाँ 'जहाज' कहिवे को आसय यह है, जो–जैसे कोई जहाज में काहू व्यौपारी ने व्यौपार अर्थ अनेक वस्तु जहाज में भरी है, सो तैसे ही सूरदासजी के हृदय में अलौकिक वस्तु नाना प्रकार की भरी हैं।

ता समय सूरदासजीने श्रीगुसांईजी के और श्रीगोवर्द्धननाथजी के स्वरूप में मन लगाईके बोलिवो छोड़ दियो। सो तब श्रीगुसांईजी ने पंद्रह ब्रजवासी दोराये। जो घड़ी २ के हमसों सूरदासजी के समाचार आय कहियो। तब वे ब्रजवासी आयके श्रीगुसांईजी सों कहे, जो–महाराज! अब तो सूरदासजी काहू सों बोलत नाहीं हैं। सो एसे करत २ राजभोग आरती को समय भयो। तब राजभोग आरती श्रीगोवर्द्धननाथजी की करिके, श्रीगुसांईजी आपु परासोली में जहां सूरदासजी हते तहां पधारे। तब श्रीगुसांईजी के सङ्ग रामदास, कुम्भनदास, गोविन्दस्वामी, चतुर्भुजदास, आदि सगरे वैष्णव सूरदासजी के पास आये। तब देखे तो सूरदासजी अचेत होय रहे हैं, कछू देह को अनुसन्धान नाहीं है। सो श्रीगुसांईजी आप सूरदासजी को हाथ पकरिके कहे जो–सूरदासजी! कैसे हो? तब सूरदासजी तत्काल उठिके दंडवत करिके कहे जो–बाबा! आये? जो मैं आपकी बाट ही देखत हतो। या समय आपने बडी कृपा करिके दरसन दियो। जो महाराज! मैं आप के स्वरूप को ही चिंतन करत हतो। ताही

समय सूरदासजीने यह कीर्तन सारंग राग में गायो। सो पद :-

राग सारंग – देखो देखो हरि जू कौ एक सुभाव। अति गम्भीर उदार उदधि प्रभु ज्ञानि-सिरोमनि राय ॥१॥ राई जितनी सेवा कौ फल मानत मेरु समान। समझ दास अपराध सिंधु सम बूंद न एकौ मान ॥२॥ बदन प्रसन्न कमल पद सन्मुख देखत हो हरि जैसे। बिमुख भए कृपा या मुखकी जब देखो तब तैसे ॥३॥ भक्त विरह कातर करुनामय डोलत पाछे लागे। 'सूरदास' ऐसे प्रभुकों क्यों दीजे पीठ अभागे ॥४॥

यह पद सूरदासने श्रीगुसांईजी के आगे गायो। तब श्रीगुसांईजी आपु अपने श्रीमुख सों कहे, जो-या प्रकार श्रीठाकुरजी आपु अपने भगवदीयन कों दीनता को दान करत हैं, सो ताको पूरन कृपा जानिये। सो दैन्यतारस के पात्र यही है। सो ता समय सगरे वैष्णव श्रीगुसांईजी के पास ठाड़े हते। उनमें ते चतुर्भुजदास ने कह्यो, जो-सूरदासजी परम भगवदीय हैं। और सूरदासजीने श्रीठाकुरजी के लक्षावधि पद किये हैं। परन्तु सूरदासजी नें श्रीआचार्यजी महाप्रभुनको जस बरनन नाहीं कियो। यह सुनिके सूरदासजी कहे जो-मैं तो सगरो जस श्रीआचार्यजी को ही बरनन कियो है, जो मैं कछु न्यारो देखतो तो न्यारो करतो। परि तैंने मोसों पूछी है, सो मैं तेरे पास कहत हों, सो या कीर्तन के अनुसार सगरे कीर्तन जानियो। सो पद :-

राग बिहागरो - भरोसो दृढ़ इन चरनन केरौ। श्रीवल्लभ नख चन्द्र छटा बिनु सब जगमांझ अँधेरो ॥१॥ साधन और नाहीं या कलिमें जासों होत निवेरो ॥ 'सूर' कहा कहे द्विविध आंधरो बिना मोल को चेरो ॥२॥

भावप्रकाश - सो या कीर्तन में सूरदासजी ने अपने हृदय को भाव खोल दियो। जो भरोसो, सो जीव कों विश्वास, दृढ़ चरण के सरन को। सो मोकों (सूरदासकों) दृढ़ता श्रीआचार्यजी के चरन की है। सो श्रीआचार्यजी के नख जो दसों चरणारविंद

के अलौकिक मणिरूप नख को प्रकास, सो ता बिना सगरे त्रिलोकीमें अँधारो दीखे है। सो तब भरोसो दृढ़ जानिये। सो या कलि में श्रीआचार्यजी के चरण के आश्रय बिना और उपाय फल सिद्धि को नाहीं है। तासों मैं न्यारो कहा वर्णन करों ? जो श्रीगोवर्द्धनधर में और श्रीआचार्यजीके स्वरूप में भिन्न, जो द्विविध तामें तो मैं अंध हों। सो जैसे श्रीकृष्ण और स्वामिनीजी में न्यारो स्वरूप जाने सो अज्ञानी। सो तैसें श्रीगोवर्द्धनधर और श्रीआचार्यजी हैं। सो तिनको मैं बिना मोल को चेरो हों। सो बिना मोल कहा ? जो केवल भाव करि के। जैसें रासपंचाध्याई में ब्रजभक्त गोपिकागीत में कहे हैं, जो-'अशुल्क दासिका' सो बिना मोल की दासी, अलौकिक, जाको मोल नाहीं। सो काहे ते जो भक्ति करिके प्रभुन सों (अर्थ) चाहै, सो सगरे, मोल के दास कहिये। उनकी भक्ति श्रेष्ठ नाहीं। तासों निष्काम भक्ति सर्वोपरि है। सो ताकों अमोलिक दास कहिये। ता भाव के प्रभु बस होय। सो जैसें पंचाध्याई में श्रीभगवान कहे हैं, जो-तिहारो भजन ऐसे है, जो मौसों, पलटो दियो न जाय। जो मैं सदा तिहारो रिनियाँ रहूँगो। सो यह अमोलिक दासके लक्षन है। सो यह पद गायो। सो यह पद कैसो है ? जो या कीर्तन के भावतें (पाठतें) सवा लाख कीर्तन सूरदासजी ने किये हैं, सो सब को पाठ होय।

तब चतुर्भुजदास प्रसन्न भये। पाछें सगरे वैष्णव और श्रीगुसांईजी आपु कहें, जो-सूरदास के हृदय को महा अलौकिक भाव है, तासों श्रीआचार्यजी आपु सूरदासजी कों 'सागर' कहते। जैसे समुद्र अगाध है, तैसे सूरदासजी को हृदय अगाध है। सो तब चतुर्भुजदास कहे, जो-सूरदासजी ! तुम बिना अलौकिक भाव कौन दिखावे ? जो अब थोरे में श्रीआचार्यजी को यह पुष्टिभक्तिमारग है, ताको स्वरूप सुनावो। सो कौन प्रकार सों पुष्टिमारग के रस को अनुभव करिये। तब वा समय सूरदासजीने यह पद गायो। सो पद :-

राग सारंग - भजि सखी भाव-भाविक देव। कोटि साधन करो कोऊ तोऊ न माने सेव ॥१॥ धुम्रकेतु कुमार मांग्यो कौन मारग रीति। पुरुषतें त्रिय भाव उपन्यो सबै उलटी रीत ॥२॥ बसन भूषन पलटि पहेरे भाव सों संजोई। उलट मुद्रा दई अङ्कन बरन सूधे होई ॥३॥ वेद विधिको नेम नाहीं जहां प्रीतिकी पहिचानि। ब्रजबधू बस किये मोहन 'सूर' चतुर सुजान ॥४॥

सो पद सूरदासजी ने सगरे वैष्णवन कों सुनायो।

भावप्रकाश – सो या पद में यह जताये, जो–गोपीजन के भाव सों जो प्रभु कों भजे। सो तिनके भाविक जो–श्रीगोवर्द्धनधर, सो तिन कों गोपिन के भाव करि सखी भाव सों भजिये। कुंजलीला में सखीजन कों अधिकार है। तासों (यहां) सखी कहे। और कोटि साधन वेद के करो। परन्तु एक हू सेवा नाहीं मानत हैं। ताको दृष्टान्त जो–सोलह हजार अग्निकुमारिका ऋचा हैं। 'धूम्रकेतु' ऐसी जो अग्नि ताके पुत्र जो सोलह हजार ऋषि, सो वे रामचन्द्रजीके स्वरूप ऊपर मोहित होंई दंडकारण्य में कहे, जो–हमसो बिहार करो। तब उनसों श्रीरामचन्द्रजी यह आज्ञा किये, जो–ब्रज में तुम स्त्री होइ प्रकटोगी तब तिहारो मनोरथ पूरन होयगो। तासों स्त्री कों वेद कर्म में अधिकार नाहीं है। और श्रीपूर्णपुरुषोत्तम की लीला में मुख्य स्त्रीभाव को अधिकार है। यह भक्तिमारग की वेद सों उलटी रीति है। जैसे रास पंचाध्याई में ब्रजभक्त उलटे आभूषण वस्त्र धारन करे, सो लोक में उनसों 'बावरो' कहें, सो स्नेह में सर्वोपरि कहिये। जैसे जाप में उलटे अक्षर होय सो सरीरमें सूधे आछे अक्षर होंय, तैसे या जगत में अज्ञानी (और) प्रभु की लीलामें चतुर होय सो प्रपंच भूले, सो ताकों प्रेम कहिये। मुख्य भक्तिरस में वेदविधि को नेम नाहीं है। तासों ऐसो जो प्रेम होय सो श्रीठाकुरजी कों वस करे, जैसे गोपीजन ने श्रीठाकुरजी बस किये। सो श्रीठाकुरजी कैसें हैं, जो सब ही कों मोहि डारें। और सूर है, सो काहूसों जीते जाय नाहीं। और वे चतुर सिरोमणि हैं, सो काहू के बस होय नाहीं तोऊ, प्रेम के बस हैं। सबकूँ भूलि जाय। यह पुष्टिमारग की भक्ति और पुष्टिमारग को स्वरूप है। सो या भांति सों सूरदासजी कहे।

सो तब चतुर्भुजदास आदि सगरे वैष्णव सूरदासजीकों धन्य धन्य कहे, जो–इनके ऊपर बड़ी भगवत् कृपा है, तब सूरदासजी चुप होय रहे। तब श्रीगुसांईजी आप सूरदासजीसों पूछयो, जो–सूरदासजी! अब या समय चित्त की वृत्ति कहाँ है? तब वाही समय सूरदासजी ने एक पद गायो। सो पद :–

राग सारंग – बलि बलि हौं कुँवरि राधिका नन्दसुवन जासों रति मानी। वे अतिचतुर तुम चतुर – सिरोमनी प्रीति करी कैसे रहे छानी ॥१॥ वे जो धरत तन कनक पीत पट सो तो सब तेरी गति ठानी। तें पुनि स्याम सहज यह सोभा अंबर मिस

अपने उर आनी ॥२॥ पुलकित अङ्ग अब ही व्है आयो निरखि सुभग निज देह सयानी। 'सूर' सुजान सखी के बूझे प्रेम प्रकास भयो विहँसानी ॥३॥

पाछें दूसरो यह पद गायो :-

राग बिहागरो – खञ्जन नैन रूप रस माते। अतिसै चारू चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते। चलि-चलि जात निकट श्रवननके उलट फिरत ताटङ्क फंदाते। 'सूरदास' अञ्जन गुन अटके नाँतर अब उडि जाते ॥

सो यह पद सूरदासजीने गायो। पाछें सूरदासजी जुगल स्वरूप को ध्यान करिके यह लौकिक सरीर छोड़ि लीला में जाय प्राप्त भये। ता पाछे श्रीगुसांईजी आप तो गोपालपुर पधारे। तब सगरे वैष्णवन ने मिलिके सूरदासजीकी देहको अग्निसंस्कार कियो। ता पाछें सगरे वैष्णव श्रीगुसांईजी के पास आये।

भावप्रकाश – सो इन सूरदासजी के चारि नाम हैं। श्रीआचार्यजी आप तो 'सूर' कहते। जैसे सूर होय सो रण में सों पाछो पांव नाहिं देय, जो-सबसों आगे चले। तैसेई सूरदासजी की भक्ति दिन दिन चढती दसा भई। तासों श्रीआचार्यजी आप 'सूर' कहते। और श्रीगुसांईजी आप 'सूरदास' कहते। सो दासभाव में कबहू घटे नाहीं। ज्यों ज्यों अनुभव अधिक भयो, त्यों त्यों सूरदासजी कों दीनता अधिक भई। सो सूरदासजी कों कबहूँ अहङ्कार मदनाहीं भयो। सो 'सूरदासजी' इनको नाम कहे। और तीसरो, इनको नाम 'सूरजदास' है। जो श्रीस्वामिनीजी के ७ हजार पद सूरदासजी ने किये हैं, तामें अलौकिक भाव वर्णन किये हैं। तासों श्रीस्वामिनीजी कहते जो ये 'सूरज' हैं। जैसे सूरज सों जगत में प्रकास होय, सो या प्रकार स्वरूपको प्रकास कियो, सो जब श्रीस्वामिनीजी ने 'सूरजदास' नाम धर्यो, तब सूरदासजी ने बहोत कीर्तनन में 'सूरज' भोग धरे। और श्रीगोवर्द्धननाथजीने पचीस हजार कीर्तन आपु सूरदासजी कों करि दिये। तामें 'सूरश्याम' नाम धरे। सो या प्रकार सूरदासजी के चारि नाम प्रकट भये। सो सूरदासजी के कीर्तन में ये चारों 'भोग' कहे हैं।

या प्रकार सूरदासजी मानसी सेवा में सदा मगन रहते।

तातें इनके माथे श्रीआचार्यजी ने भगवत् सेवा नाहीं पधराये। सो काहेतें ? जो सूरदासजी कों मानसी सेवा में फल रूप अनुभव है। सो ये सदा लीलारस में मगन रहत हैं। सो सूरदासजी की वार्ता में यह सर्वोपरि सिद्धान्त है, जो–दैन्यता समान और पदारथ कोई नाहीं है, और परोपकार समान दूसरो धर्म नाहीं है। जो वा बनिया के लिये सूरदासजी ने इतनो श्रम कियो। परि वाकों अङ्गीकार करवाय वाको उद्धार करि दियो। तासों श्रीआचार्यजी, श्रीगुसांईजी आपु और सगरे वैष्णव जीव मात्र सूरदासजी के ऊपर बहुत प्रसन्न रहते। सो जो कोऊ सूरदासजी सों आयके पूछतो, तिनकों प्रीति सों मारग को सिद्धांत बतावते, और उनको मन प्रभुन में लगाय देते। तासों सूरदासजी सरीखे भगवदीय कोटिन में दुर्लभ हैं। सो वे सूरदासजी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र हते। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं सो कहां तांई कहिए। वार्ता ॥८१॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक परमानंद स्वामी, कनौजिया ब्राह्मण कनौज में रहते, जिनके पद गाइयत हैं अष्टछाप में, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं–

भावप्रकाश – सो ये परमानंददासजी लीला में अष्टसखान में 'तोक' सखा को प्राकट्य हैं। सो तोक सखा को दूसरो स्वरूप निकुंज में सखीरूप है। ता स्वरूप को नाम 'चंद्रभागा' है। सो सुरभीकुंड के पास श्रीगिरिराज के एक द्वार है ताके मुखिया हैं। सो ये कनौज में कनौजिया ब्राह्मण के यहाँ जन्मे। जा दिन परमानंदासजी जन्मे, वा दिन उनके पिता कों एक सेठ ने बहोत द्रव्य दान दियो। तब या ब्राह्मण ने बहोत प्रसन्न होय के कह्यो, जो श्रीठाकुरजी ने मोकों पुत्र दियो और धन हू, बहोत दियो। तोसों यह पुत्र बडो भाग्यवान है, जाके जनमत ही मोकों परम आनंद भयो है। सो मैं या पुत्र को नाम 'परमानंददास' ही धरूंगो। पाछें जब नाम करन लागे तब वा ब्राह्मण ने कही, जो–नाम तो मैं पहले ही पुत्र को 'परमानंद' बिचारि चुक्यो हों। तब सब

ब्राह्मण बोले, जो–तुमने बिचारयो है सोई नाम जन्मपत्रिका में आयो है। तब तो वह ब्राह्मण बहोत ही प्रसन्न भयो। पाछे वा ब्राह्मण ने जातकर्म करि दान बहुत कियो। ऐसे करत परमानंददास बड़े भये। तब पिताने बडो उत्सव कियो। और इनको यज्ञोपवीत कियो। सो ये परमानंददास बड़े कृपापात्र भगवदीय हैं, लीलामध्यपाती श्रीठाकुरजी के अत्यंत (अंतरंग) सखा हैं। सो जब श्रीआचार्यजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी की आज्ञा तें दैवी जीवन के उद्धारार्थ भूतल पर प्रकट भये, तेसेही श्रीठाकुरजी सहित सगरो परिकर प्रकट भयो। सो दैवी जीव अनेक देशांतर में प्रकट भये। सो गोपालदासजी 'वल्लभाख्यान' में गाये हैं, जो–'अनेक जीवने कृपा करवा देशांतर प्रवेश'। सो कनौज में परमानंददासजी बहोत ही प्रसन्न बालपने तें रहते। पाछें ये बड़े योग्य भये, और कवीश्वर हू भये। ये अनेक पद बनाय के गावते। सो 'स्वामी' कहावते और सेवक हू करते। सो परमानंददास के साथ समाज बहोत, अनेक गुनीजन संग रहते। एक समय कनौज में अकाल परयो सो हाकिम की बुद्धि बिगरी। सो गाम में सों दंड लियो। और परमानंददास के पिता को सब द्रव्य लूटि लियो। तब मातापिता बहोत दुःख पाय के परमानंददास सों कहे, जो–हम तेरो ब्याह हू न करन पाये, और सब द्रव्य योंही गयो, तासों अब तू कमायवे को उपाय करि। सो काहे तें? जो–तू गुनी है और तेरे द्रव्य बहोत आवत है सो तू वा द्रव्य कों इकठोरे करे तो हम तेरो ब्याह करें। तब परमानंददास ने मातापिता सों कह्यो, जो–मेरे तो ब्याह करनो नाहीं है, और तुमने इतनो द्रव्य भेलो करिके कहा पुरुषार्थ कियो? सगरो द्रव्य यों ही गयो। तासों द्रव्य आये को फल यही है, जो–वैष्णव ब्राह्मण कों खवावनों। तासों मैं तो द्रव्य को संग्रह कबहू नाहीं करूंगो और तुम खायवे लायक मोसों नित्य अन्न लेहू, और बैठे–२ श्रीठाकुरजी को नाम लियो करो। जो–अब निर्धन भये हो तासों अब तो धनको मोह छोड़ो। तब पिता नें परमानंददास सों कह्यो, जो–तू तो वैरागी भयो। तेरी संगति वेरागीन की है, तासों तेरी ऐसी बुद्धि भई। और हम तो गृहस्थी हैं। तासों हमारे धन जोरे बिना कैसे चले? जो–कुटुंब में ज्ञाति में खरचें तब हमारी बडाई होय। पाछे पिता धन के लिये पूरब कों गयो। तहां जीविका न मिली तब दक्षिन कों गयो और तहाँ द्रव्य मिल्यो सो तहां रह्यो। और परमानंददासने अपने घर कीर्तन को समाज कियो। सो गाम गाम में प्रसिद्ध भये। और परमानंददास गान–विद्या में परम चतुर हते।

वार्ता – प्रसंग १ – सो एक समय परमानंददास कनौज तें मकरस्नान कों प्रयाग में आये, सो तहां रहे। और कीर्तन को

समाज नित्य करैं, सो बहोत लोग इनके कीर्तन सुनिवे कों आवते। सो पार अड़ेल में श्रीआचार्यजी बिराजत हते। अड़ेल तें लोग कछू कार्यार्थ गाम में आवते। सो परमानंददास के कीर्तन सुनिके अड़ेल में जायके श्रीआचार्यजी सों कहते, जो-एक परमानंददास कनौज तें आयो है, सो कीर्तन बहोत आछो गावत है। तब श्रीआचार्यजी कहे, जो - परमानंददास दैवी जीव है, जो-इनको गुन होय सो उचित ही है। सो श्रीआचार्यजी को सेवक एक 'कपूर क्षत्री' जलघरिया हतो, वाकी राग ऊपर बहोत आसक्ति हती। सो यह बात सुनि के वाके मन में आई, जो-मैं श्रीआचार्यजी न जानें ऐसे परमानंदस्वामी को गान सुनूं। काहे तें जो-श्रीआचार्यजी आपु सुनेंगे तो खीजेंगे, जो-तू सेवा छोड़िके क्यों गयो ? तासों प्रयाग न जाय सके। परंतु वा जलघरिया 'क्षत्री कपूर' को मन परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिवे कों बहोत हतो।

भावप्रकाश - सो काहेतें ? जो-इनको पूर्व को संबंध है। जो - लीला में यह क्षत्री परमानंददास की सखी है, सो ये चंद्रभागा की सखी 'सोनजुही' याको नाम है। सो यह क्षत्री सुदामापुरी में एक क्षत्री के घर प्रकटे, इनको पिता महाविषयी हतो। सो जहां तहां परस्त्री को संग करतो। और द्रव्य बहोत हतो, सो सब विषय में खोयो। ता पाछें गाम के राजाने सगरो घर लूटि लियो। सो या क्षत्री के मातापिता पुत्र सहित बंदीखाने में दिये। तब याको पिता एक सिपाही कों कछू देकें रात्रि कों स्त्रीपुरुष और या पुत्र कों ले भाग्यो। सो ये दिन दोय तीन तांई भाजे, सो तहां एक वन में जाय निकसे। तहां नाहरने याके मातापिता कों मारयो और यह पुत्र वरस चौदह को बच्यो। सो वन में बेठ्यो रुदन करे, सो भूख्यो प्यासो चल्यो न जाय। सो भागिजोग तें पृथ्वीपरिक्रमा करत श्रीआचार्यजी गहवरवन (सघन वन) में आये। तब या क्षत्रीसों पूछी, जो-तू कौन है ? जो अकेलो वनमें रूदन करत है। तब इनने दंडवत् करिके अपनो सब वृतांत कह्यो। तब श्रीआचार्यजी आपु कृष्णदासमेघन सों कहे, जो कछु महाप्रसाद होय तो याकों ख्वायके बेगि जलपान करावो, जो-याके प्राण बचें। तब कृष्णदासमेघन के पास प्रसाद हतो, सो या क्षत्रीकों न्हवायके खवायके जल पिवायो।

तब या क्षत्री को मन ठिकाने आयो। तब या क्षत्रीनें श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी जो–महाराज ! मोकों आप पास राखो। जो मैं जनम भरि आप को गुलाम रहूंगो। अब मेरे मातापिता भगवान आपु हो। तब श्रीआचार्यजी आपु श्रीमुख सों कहे, जो– तू चिंता मति करे, और तू हमारे संग ही रहियो। तब यह क्षत्री श्रीआचार्यजी के संग ही रह्यो। ता पाछें दूसरे दिन श्रीआचार्यजी आपु वा क्षत्री कों नाम ब्रह्मसंबंध करवायो, और जल लायवे की सेवा याकों दिये। पाछे कछुक दिन में श्रीआचार्यजी आपु अडेल पधारे तब, वह क्षत्री श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन करिके अपने मन में बहोत प्रसन्न भयो। और कह्यो, जो–मैं अनाथ हतो, सो श्रीआचार्यजी आपु मोकों कृपा करिके सरन लेके संग लाये, सो मोकों साक्षात् श्रीयशोदोत्संगलालित श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन भये। तब वा क्षत्री कपूर जलघरिया को मन श्रीनवनीतप्रियजी के स्वरूप में लगि गयो। सो तब या क्षत्री ने अपने मन में बिचारी, जो–अब मोकों श्रीनवनीतप्रियजी की सेवा कछू मिले, तब मैं सदा सेवा करूं और दरसन करूं। सो श्रीआचार्यजी आप साक्षात् पुरुषोत्तम हैं, सो या क्षत्री के मन की जानि याकों पास बुलाय के कह्यो, जो–तेरे मन नें सेवा की आई, सो तेरे बड़े भाग्य हैं। तासों अब तू श्रीनवनीतप्रियजी के जलघरा की सेवा कियो करि। तब वा क्षत्रीने प्रसन्न होयकें श्रीआचार्यजी कों दंडवत् करिकें बिनती कीनी, जो–महाराज ! मेरे हू मन में ऐसें हती, सो आपु तो परम कृपालु हो, तासों मेरो सर्व मनोरथ पूरन कियो। ता पाछें अति प्रीति सों वह क्षत्री वैष्णव प्रसन्न होयके खारो तथा मीठो जल भरन लाग्यो। सो कछुक दिन में श्रीनवनीतप्रियजी आपु सानुभावता जतावन लागे। परंतु सेवा में अवकास नाहीं, जो–ये परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिवे कों जाय।

सो एक दिन एकादशी को दिन हतो। ता दिन प्रयाग सों एक वैष्णव श्रीआचार्यजी के दरसन कों अड़ेल में आयो। तब वा क्षत्री जलघरियाने वा वैष्णव सों परमानंदस्वामी के समाचार पूछे। तब वा वैष्णवनें कह्यो, जो–नित्य तो चारि घड़ी तथा पहर को समाज होत है रात्रि के समे, और आज तो एकादशी है, जो–सगरी रात्रि परमानंदस्वामी के यहां जागरन होयगो। सो ये बचन सुनिके वह क्षत्री वैष्णव अपने मन में बहोत प्रसन्न भयो, और विचार कियो, जो–आजु परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिवे को दाव लग्यो है। तासो जब श्रीआचार्यजी आपु रात्रि को पोढेंगे

तब मैं रात्रि कों प्रयाग में जायके परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनूंगो। ता पाछें रात्रि भई। तब वह क्षत्री कपूर जलघरिया अपनी सेवा सों पहोंचिके श्रीआचार्यजी के श्रीमुख तें कथा सुनिके रात्रि प्रहर डेढ़ गई, ताही समय अड़ेल सों प्रयाग कों चल्यो। तब अपने मन में बिचार्‍यो, जो–या समय घाट ऊपर तो नाव मिलनी नाहीं है, तासों पैरिके जाऊं। सो वे पेरिवे में बड़े निपुन हते। पाछे घाट ऊपर आय परदनी एक छोटीसी पहरिके, धोती उपरना माथे सों बांधे। सो उष्णकाल गरमी के दिन हते सो पैरिके परमानंद स्वामी कीर्तन करत हते तहां आये। सो इनको पहलें परमानंदस्वामी सों मिलाप तो कबहू भयो न हतो, तासों दूरि बैठि गये। उहां श्रीआचार्यजी के सेवक प्रयाग के वैष्णव बैठे हते सो इनको जानत हते। सो तहां अपने पास ही इन क्षत्री कपूर कों बैठारि लिये। सो वे जहां परमानंदस्वामी बैठे हते तिनके पास जाय बैठे। तब और गुनीन के पद गाये पाछें परमानंदस्वामी ने गाइवै को आरंभ कियो। सो परमानंदस्वामी विरह के पद गावते।

भावप्रकाश – सो काहेतें ? जो–ऊपर इनको स्वरूप कहि आये हैं, जो–ये परमानंददास लीला में सों बिछुरे हैं, सो अब ही श्रीआचार्यजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन भये नाहीं हैं। सो जब श्रीआचार्यजी श्रीनाथजी को दरसन करावेंगे तब परमानंददास कों लीला को ज्ञान होयगो। श्रीआचार्यजी के मारग को यह सिद्धांत है, जो–भगवदीय को संग होय तब श्रीठाकुरजी कृपा करें। ताके लिये श्रीआचार्यजी परमानंदस्वामी के ऊपर कृपा करन के अर्थ अपने कृपापात्र भगवदीय क्षत्री कपूर जलघरिया कों पठाये। सो क्षत्री कपूर जलधरिया कैसे हते, जो–जिनकों श्रीठाकुरजी एक क्षण हू नाहीं छोड़त हैं, जो–सदा इनके संग ही रहत हैं। तासों सूरदासजी गाये हैं – 'जो भक्तविरहकातर करुणामय डोलत पाछे लागे' और ऊपर जगन्नाथजोसी की वार्ता में कहि आये हैं, जो–जब वा रजपूत ने तरवार

काढ़ी तब श्रीठाकुरजी आपु पाछे तें आयके तरवार सहित हाथ ऊपर ही थांमि दियो, सो हाथ चलन न दियो। तासों श्रीभागवत में सब ठौर वरनन है, जो-भगवदीय वैष्णव के संग ही श्रीठाकुरजी डोलत हैं। सो परमानंददास कों अब ही वियोग है। तासो विरह के कीर्तन नित्य गावते।

राग बिहागरो - ब्रज के बिरही लोग बिचारे। बिनु गोपाल ठगे से ठाढे अतिदुर्बल तनु हारे ॥१॥ मात जसोदा पंथ निहारति निरखत सांझ सवारे। जो कोऊ कान्ह कान्ह कहि टेरत अखियन बहत पनारे ॥२॥ यह मथुरा काजर की रेखा जो निकसे सो कारे। 'परमानंद' स्वामी बिनु ऐसे जैसे चंद बिनु तारे ॥३॥

राग बिहागरो - गोकुल सब गोपाल ऊपासी। जो गाहक साधन के उधो वे सब बरस ईस-पुरि कासी ॥१॥ जदपि हरि हम तजि अनाथ करी अब छांडत क्यों रति की गांसी। अपनी सीतलता तऊ न छांडत यद्यपि विधु भयो राहु ग्रासी ॥२॥ किहिं अपराध जोग लिखि पठ्यो प्रेम भजन तें करत उदासी। 'परमानंद' ऐसी को बिरहनि मांगे मुक्ति छांडि गुनरासी ॥३॥

राग कान्हरो - कौंन रसिक है इन बातन कौ। नंदनंदन बिनु कासों कहिए सुनिरी सखी मेरे दुःख या तन कौ ॥१॥ कहां वह जमुना पुलिन मनोहर कहां वह खटपट जल-जातन कौ ॥२॥ कहां वह सेज पौढिवो ब कौ फूल बिछौना मृदु पातन कौ। कहां वह दरस परस 'परमानंद' कमलनैन कोमल गातन कौ ॥३॥

राग सोरठ - माई को मिलिवे नंदकिसोरै। एक बार को नैन दिखावे मेरे मन के चोरै ॥१॥ जागत जाम गिनत नहीं खूटत क्यों पाउंगी भोरें। सुनिरी सखी अब कैसे जीजे सुनि तमचर खग रोरै ॥२॥ जो पै सत्य प्रीति अंतरगति जिनि काहुऽव निहोरै। 'परमानंद' प्रभु आन मिलेंगे सखी सीस जिनि फोरै ॥३॥

इत्यादि बहोत कीर्तन परमानंददासनें गाये सगरी रात्रि। ता पाछें चार घड़ी रात्रि रही तब कीर्तन राखे। सो जो कोई जागरन में आये हते वे सब अपने अपने घर कों गये। पाछे यह जलघरिया क्षत्री कपूर परमानंदस्वामी सों भगवत्स्मरन करिके उठिके तहांते चल्यो। परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिके अपने मनमें बहोत प्रसन्न होयके कह्यो, जो-जैसो परमानंदस्वामी को गुन सुनत हते सो तैसेई हैं। सो या प्रकार परमानंदस्वामी की

सराहना करत करत वह क्षत्री कपूर, यमुनाजी के तट पर आइके वाही प्रकार सों पैरिकें पार आय, धोती उपरना परदनी सहित न्हाय के अपरसही में आये। ताही समय श्रीआचार्यजी आपु पोंढिके उठे हते। सो श्रीआचार्यजी के दरसन करि, दंडवत् करि अपने जलघरा की सेवा में तत्पर भये।

भावप्रकाश – सो या प्रकार के क्षत्री कपूर परमानंदस्वामी के ऊपर कृपा करिवे के अर्थ परमानंदस्वामी के पास गये। नाहीं तो इनकों श्रीठाकुरजी आप सानुभाव हते, सो ऐसे भगवदीय काहेकों काहूके घर जाय ? परंतु परमानंदस्वामी के ऊपर कृपा होनहार है, तासों श्रीनवीतप्रियजी वा क्षत्री कपूर जलघरिया को मन प्रेरिकें याके संग आपुही पधारि, याही की गोद में बैठिके परमानंदस्वामी के कीर्तन सुने।

सो या प्रकार वह क्षत्री जलघरिया परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनि जब प्रयाग सों अड़ेल कों चले, सो तब परमानंदस्वामी सगरी रात्रि के श्रमित हते, सो येहू सोये।

भावप्रकाश – सो तहां यह संदेह होय, जो–परमानंदस्वामी सगरी रात्रि जागरन करिके चारि घडी पिछली रात्रि रही तब सोये। सो सोये तें जागरन को फल जात रहत है। सो परमानंदस्वामी तो सुज्ञान है, और चतुर हैं तासों वे क्यों सोये ? तहां कहत हैं, जो–परमानंदस्वामी लीला संबंधी पुष्टिजीव हैं। सो एक श्रीठाकुरजी कों चाहत हैं और जागर के फल कों चाहत नाहीं हैं। सो ये परमानंदस्वामी एकादसी के जागरन को मिस मात्र लेकें भगवन्नाम अधिक लियो जाय ताके लिये जागरन करन हते। सो इनकों विधि रीति सों कछू जागरन करिबै के फल को कारन नाहीं है। तासों परमानंददास चारि घड़ी रात्रि पिछली रही तब सोये। सो यातें जो जागरन को फल जायगो, परंतु भगवन्नाम लियो, सो गुन तो कोई काल में जायगो नाहीं। तासों भगवन्नाम लेयवे के अर्थ चारि घड़ी रात्रि पाछिली कों सोये। सो काहेतें ? जो–सोवे नाहीं तो द्वादसी के दिन आलस सरीर में रहे। फेरि द्वादसी की रात्रि कों डेढ़ पहर रात्रि तांई कीर्तन करने हैं। तासों जागरन को आश्रय छोड़िकें भगवन्नाम को आश्रय करिके सोये।

सो नींद आवत ही परमानंदस्वामी कों स्वप्न आयो। सो

स्वप्न में देखे तो श्रीआचार्यजी के सेवक क्षत्री जागरन में बैठे हैं। और इनकी गोद में श्रीनवनीतप्रियजी बैठे देखे । और श्रीनवनीतप्रियजी स्वप्न में मुसिक्याय के परमानंदस्वामी कों आज्ञा किये, जो–आज मैंने तेरे कीर्तन सुने हैं। सो श्रीआचार्यजी के कृपापात्र सेवक कपूर क्षत्री जलघरिया तेरे यहां रात्रि कों जागरन मे आये। तासों इनके साथ मैं हू आयो। सो इतने दिन में आजु तेरे कीर्तन सुन्यो हों।

भावप्रकाश – सो यह कहे, तहां यह संदेह होय, जो–श्रीठाकुरजी तो सदा सुनत हैं, और सब ठौर व्यापक हैं। सो कहें, जो–'आज मैं सुन्यो' ताको कारन कहा ? तहां कहत हैं, जो–इतने दिन सों अंगीकार में ढील हती, सो अंतर्यामी साक्षि रूप सों सुने। तासों अब अंगीकार करनो है और कृपा करनी है, सो बेगि कृपा करन को लक्षन बताये। तासों कहे, जो–आजु हौं तेरे कीर्तन सुन्यो हों। सो आज मैं तोपर पूरन कृपा करी। तासों अब बेगि मोकों पावोगे। सो यह आसय जाननौ।

तब परमानंदस्वामी की नींद खुली। सो नेत्रन में श्रीनवनीतप्रियजी को स्वरूप कोटिकंदर्पलावण्य, ऐसो स्वप्न में दरसन भयो । तासों नेत्रन में हृदय में ज्ञान भयो । तब परमानंदस्वामी के मन में बड़ी चटपटी लगी, और आर्ति भई, जो–अब मैं कब श्रीनवनीतप्रियजी को दरसन करों ? ता पाछें परमानंदस्वामी ने अपने मन में विचार कियो, जो–मैं इतने दिन तें जागरन कियो और कीर्तन हू गाये, परंतु मोकों ऐसो दरसन कबहू न भयो। जो आज भयो है। सो श्रीआचार्यजी को सेवक जलघरिया क्षत्री कपूर आयो, तासों उनकी गोद में भयो। सो क्षत्री कपूर बिना श्रीनवनीतप्रियजी को दरसन न होयगो, तासों उनके पास चलिये, और उनसों मिलिये तब अपनो कार्य सिद्ध होय। सो यह बिचार मनमें करिके परमानंदस्वामी तत्काल उठि

के अड़ेल कों चले। इतने में प्रातःकाल भयो। सो श्रीयमुनाजी के तीर पे आये, सो प्रथम ही नाव पार चली, तामें बैठिके परमानंदस्वामी पार आये। ता समय श्रीआचार्यजी श्रीयमुनाजी में स्नान करिके प्रातःकाल की संध्या करत हते। परमानंदस्वामी कों श्रीआचार्यजी के दरसन अद्‌भुत अलौकिक साक्षात् श्रीकृष्ण के स्वरूप सों भये। सो जैसो श्रीगुसांईजी श्रीवल्लभाष्टक में वर्णन किये हैं, जो-'वस्तुतः कृष्ण एव' ऐसो दरसन करिके परमानदस्वामी चकित होय रहे। सो कछु बोल न निकस्यो। तब परमानंदस्वामी नें अपने मन में बिचार कियो, जो-श्रीआचार्यजी के सेवक कपूर क्षत्री की गोद में बैठिके श्रीनवनीतप्रियजी मेरे कीर्तन क्यों न सुनें? जिनके माथे श्रीआचार्यजी आपु ऐसे धनी बिराजत हैं। तासों मैं हू इनको सेवक होऊंगो। परि मेरो सामर्थ्य नाहीं है, जो-मैं इनकों सेवक होंन की बिनती करों। तासों वह क्षत्री फेर मिले तो उनसों सगरी बात कहिके सेवक होंन की बिनती करों। यह बिचार परमानंदस्वामी अपने मनमें करत हते, इतने में श्रीआचार्यजी आपु श्रीमुखतें परमानंदस्वामी सों आज्ञा किये, जो-परमानंददास ! कछु भगवल्लीला गावो। तब परमानंददासजी ने श्रीआचार्यजी को साष्टांग दंडवत करिके ये पद गाये -

राग सारंग - कौन बेर भई चलेरी गोपालैं। हों ननसार गई ही न्योंते बार-बार बूझति ब्रजबालैं ॥१॥ तेरे तन को रूप कहां गयो भामिनि और मुखकमल सुकाइ रह्यो। सब सौभाग्य गयो हरि के संग हृदौ सकोमल बिरह दह्यो ॥२॥ को बोलै को नैन उघारे को उत्तर देहि बिकल मन। सो सरवसु अक्रुर चुरायो 'परमानंदस्वामी' जीवन धन ॥३॥

राग सारंग - सिय की साधि जिय ही रही री। बहुरि गोपाल देखन नहीं

पाए बिलपति कुंज अहीरी ॥१॥ इक दिन सो जु सखी यह मारगु बेचन जाति दही री। प्रीति के लिए दान मिस मोहन मेरी बांह गही री ॥२॥ बिनु देखे छिन जात कलप भरि विरहा अनल दहीरी। 'परमानंदस्वामी' बिनु दरसन नैननि नदी बहीरी ॥३॥

राग सारंग - यह बात कमल दल नैन की। बार-बार सुधि आवत सजनी वह दुरी देनी सेन की ॥१॥ वह लीला वह रास सरद कौ गौरज रंजित आवनी। अरू वह उंची टेर मनोहर मिस करि मोहि बुलावनी ॥२॥ वे बातें सालति उर अंतर को पर पीर हिं पावे। 'परमानंद' कह्यो न परे कछु हियो सुरूंध्यो आवे ॥३॥

राग सारंग - सुधि करत कमलदल नैन की। भरि भरि लेति नीर अति आतुर रति वृन्दावन चैन की ॥१॥ दे-दे गाढे आलिंगन मिलती कुंजलता द्रुम ऐन की। वे बातें कैसे कै बिसरति बांह उसीसे सेन की ॥२॥ बसि निकुंज रास खिलाए व्यथा गँवाई मेन की। 'परमानंद प्रभु' सो क्यों जीवहि जो पोखी मृदु बेन की ॥३॥

या भांति सों परमानंददास ने विरह के पद श्रीआचार्यजी के आगे गाये। सो सुनिके श्रीआचार्यजी श्रीमुख सों कहे, जो परमानंददास ! कछु बाललीला के पद गावो। तब परमानंददास ने हाथ जोरिके श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी, जो-महाराज ! मैं बाललीला में कछू समुझत नाहीं हों। तब श्रीआचार्यजी आपु श्रीमुख सों परमानंददास सों आज्ञा किये, जो-तुम श्रीयमुनाजी में स्नान करि आवो, जो-हम तुमकों समुझाय देयगें। पाछें परमानंददास ने श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी, जो-महाराज! आपुको सेवक क्षत्री कपूर कहाँ है ? सो तब श्रीआचार्यजी आप कहे, जो-कछु सेवा टहल में होयगो। तब परमानंददास श्रीयमुनाजी में स्नान करन कों चले, और श्रीआचार्यजी तो सेवा को समय हतो सो वेगि ही उहां ते मंदिर में पधारे। और श्रीनवनीतप्रियजी कों जगाये। इतने ही में वह क्षत्री जलघरिया श्रीयमुनाजल भरिवे कों गागर लेके श्रीयमुनाजी के पार आयो। सो उनकों देखि के परमानंदस्वामी परम आनंद सों दोऊ हाथ

जोरिके भगवत् स्मरन करिके कह्यो, जो रात्रि कों तुम कृपा करिकें जागरन में पधारे हते, सो श्रीनवनीतप्रियजी तिहारी गोदि में बैठिके मेरे कीर्तन सुने। सो मैं सोयो तब श्रीनवनीतप्रियजी ने दरसन दियो, और कृपा करिके आज्ञा किये, जो–आज मैं तेरे कीर्तन सुन्यो हूँ। तासों तुमने मेरे ऊपर बड़ी कृपा करी। सो अब तिहारे दरसन कों आयो हों। तासों अब आप जा प्रकार श्रीआचार्यजी आपु मोकों सरन लेइ और श्रीठाकुरजी कृपा करिके मोकों नित्य दरसन देइ, सो प्रकार कृपा करिके बतावो। और मोको श्रीआचार्यजी आपु कृपा करिके श्रीकृष्ण के स्वरूप को दरसन दियो है, सो यह तिहारे सत्संग को प्रताप हैं। तब यह बात सुनिके क्षत्री कपूर ने उनसों कह्यो, जो–तिहारी ऊपर श्रीआचार्यजी की कृपा भई है। तासों तुमकों ऐसो दरसन भयो हैं। और तुमसों आपने आज्ञा करी है, सरन लेवे के लिये, सो जासों तुम बेगि ही न्हाय के अपरस ही में श्रीआचार्यजी के पास चलो। सो तुमकों प्रभु कृपा करिके सरन लेंयगे, तब तिहारो सब मनोरथ सिद्ध होयगो। और रात्रि कों मैं जागरन में तिहारे पास गयो, सो बात तुम श्रीआचार्यजी के आगें मत करियो। नाहिं तो आपु मेरे ऊपर खीजेंगे, जो–तू सेवा छोड़िके क्यों गयो हतो ? यह वचन परमानंदस्वामी सों कहिके वा क्षत्री वैष्णव ने तो श्रीयमुनाजी जलकी गागर भरी और परमानंददास स्नान करिके अपरसही में श्रीआचार्यजी पास उन जलघरिया क्षत्री के पाछे आये। ता समय श्रीआचार्यजी श्रीनवनीतप्रियजी को सिंगार करिके श्रीगोपीवल्लभ भोग धरिकें बिराजे हते। ता समय परमानंददास न्हाय के आये। तब श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास सों कहे, जो– परमानंददास बेठो। तब

परमानंददास श्रीआचार्यजी कों साष्टांग दंडवत करिके बेठे। पाछें श्रीआचार्यजी आपु भीतर पधारि भोग सराय के परमानंददास कों बुलायके श्रीनवनीतप्रियजी की सन्निधान कृपा करिके नाम सुनायो। ता पाछे ब्रह्मसंबंध करवायो। पाछे श्रीभागवत दशमस्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनाये।

भावप्रकाश – सो ताको हेतु यह है, जो – प्रथम परमानंददास सों श्रीआचार्यजीने कह्यो, जो–कछू भगवद्लीला वर्णन करो। तब परमानंददास ने बिरह के पद गाये। पाछें श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास कों कहे, जो–बाललीला गावो। सो ताको हेतु यह है, जो–बाललीला श्रीनंदरायजी के घर की लीला है, सो संयोग रस है। सो एक बार संयोग होय ता पाछे विरह फलरूप होय। सो काहेतें ? जो–रास पंचाध्यायी में ब्रजभक्तन कों बुलाय के लीला किये। ता पाछें अंतर्धान में विरह फलरूप भयो। तासों भगवान कहे – 'यथाऽधनो लब्धधने विनष्टे तच्चिन्तया' जैसे धन पायके धन जाय, तब धन को चिंतन बहोत होय। सो पहले श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो–बाललीला गावो। क्यों ? जो–अनुभव करिके विरह को ज्ञान बेगि फले। परि परमानंददासने विनती कीनी, जो–महाराज ! मैं कछू समझत नाहीं हों। ताको आसय यह है, जो–संयोग रस अब ही है नाहीं। जो मूल लीला में हतो सो विस्मृत भयो है। परि लीला में तें बिछुरे हैं, और दैवी जीव हैं, तासों विरह जनम ही तें गाये। सो अब नाम समर्पण कराय के अज्ञान प्रतिबंध दूरि किये, ता पाछें श्रीभागवत दशमस्कंध की अनुक्रमणिका सुनाये। सो तब साक्षात् श्रीनवनीतप्रियजी के स्वरूप को अनुभव भयो और दशम की सगरी लीला स्फुरी। परमानंददास कों दशम की अनुक्रमणिका सुनाये ताको कारन यह है, जो–सर्वोत्तम ग्रन्थ श्रीगुसांईजी प्रकट किये हैं। तामें श्रीआचार्यजी कों नाम कहे हैं, जो–'श्रीभागवत–पीयूषसमुद्र–मथन क्षमः'। सो श्रीभागवतको श्रीगुसांईजी अमृत को समुद्र करिके वर्णन किये, सो श्रीआचार्यजी आपु अनुक्रमणिका द्वारा श्रीभागवत रूपी समुद्र परमानंददास के हृदय में स्थापन कियो। तैसे ही प्रथम सूरदास के हृदय में अनुक्रमणिका द्वारा श्रीभागवत रूपी समुद्र स्थापन कियो हतो। तासों वैष्णव तो अनेक श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हे, परन्तु सूरदास और परमानंददास ये दोऊ 'सागर' भये। इन दोउन के कीर्तन की संख्या नाहीं, सो दोऊ सागर कहवाये। सो श्रीआचार्यजीने आज्ञा करी, जो बाललीला गावो। अब संयोग रस को अनुभव भयो।

तब परमानंददासजी ने श्रीआचार्यजी के आगे बाललीला के पद गाये। सो पद :-

राग आसावरी – माईरी ! कमल नैन स्यामसुन्दर झूलत हैं पलना। बाललीला गावति सब गोकुल की ललना ॥१॥ लालके अरुन तरुन चरनकमल नख-मनि ससि-ज्योती। कुञ्जित कच भँवराकृति लर लटकै गज-मोती ॥२॥ लाल अंगुठा गहि कमल पानि मेलत मुख मांही। अपनो प्रतिबिंब देखि पुनि पुनि मुसिकाहीं॥३॥ रानी जसुमति के पुन्य पुंज निरखि निरखि लालैं। 'परमानंदस्वामी' गोपाल सुत सनेह पालैं॥४॥

राग बिलावल – जसोदा ! तेरे भाग्यकी कहीय न जाइ। जो मूरति ब्रह्मादिक दुर्लभ सो प्रगटे हैं आई ॥१॥ सिय नारद सनकादि महामुनि मिलिवे करत उपाई। ते नन्दलाल धूरिधूसर वपु रहत कण्ठ लपटाई ॥२॥ रतन जटित पौढाय पालने वदन देखि मुसिकाई। झूलो मेरे लाल जाऊँ बलिहारी 'परमानंद' बलि जाऊ ॥३॥

राग बिलावत – मनिमै आंगन नन्द के खेलत दोऊ भैया। गौर स्याम जोरी बनी बल कुंवर कन्हैया ॥१॥ नूपुरु कङ्कन किंकना रुनझुन बाजे। मोहि रही ब्रज सुन्दरि मनसिज सुनि लाजे ॥२॥ सङ्ग जसुमति रोहिणी हितकारिनी मैया। चुटकी दे दे नचावही सुत जानि नन्हैया ॥३॥ नीलपीत पट ओढनी देखत मोहि भावे। बाल विनोद प्रमोद सों 'परमानंद' गावे ॥४॥

राग कान्हरो – प्यारे हरि कौ जस गावति गोपांगना। मनिमय आंगन नन्दराय के बाल विनोद करत हैं रिंगना ॥१॥ गिरि गिरि उठत घुटुरुवन टेकत जानुपानि मेरो छगन कौ मगना। धूसर धूरि उठाय गोद ले मात यसोदा के प्रेम को भजना ॥२॥ त्रिपद पहुमि नापी तब न आलस भयो अब जो कठिन भयो दहेरी उल्लंघना। 'परमानंद प्रभु' भक्तवत्सल हरि रुचिर हार वरकंठ सोहे बघना ॥३॥

सो एसे पद परमानंददास ने बाललीला के बहोत ही गाये। सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बहोत ही प्रसन्न भये। ता पाछें परमानंददास अड़ेल में श्रीआचार्यजी के पास रहे। तब श्रीआचार्यजी परमानंददास सों कहे, जो-अब समय समय के पद नित्य श्रीनवनीतप्रियजी कों सुनाया करो।, सो यह सेवा

तुमकों दीनी। तब परमानंददास नित्य नये पद करिके समय समय के श्रीनवनीतप्रियजी कों सुनावते। और जब श्रीनवनीतप्रियजी कों अनोसर होय, तब परमानंददास श्रीआचार्यजीके आगे अनेक ब्रजलीला के कीर्तन करते। और श्रीआचार्यजी आपु श्रीसुबोधिनीजी की कथा कहते। सो जा समय (जा) प्रसंग की कथा श्रीआचार्यजी के श्रीमुख तें सुनते ताही प्रसंग के कीर्तन कथा भये पाछे परमानंददास श्रीआचार्यजी कों सुनावते।

वार्ता – प्रसंग २ – एक दिन परमानंददासनें श्रीठाकुरजी के चरणारविंद को माहात्म्य कथामें श्रीआचार्यजी के श्रीमुखतें सुन्यो। सो ता समय परमानंददासने श्रीठाकुरजी के चरणारविंद को माहात्म्य सहित कीर्तन श्रीआचार्यजी के आगे गायो। सो पद :–

राग कान्हरो :– चरनकमल वंदों जगदीस जे गोधन के सङ्ग धाए। जे पद कमल धूरि लपटाने कर गहि गोपिन उर लाए ॥१॥ जे पद कमल युधिष्ठिर पूजित राजसूयमें चलि आए। जे पदकमल पितामह भीषम भारत में देखन पाए ॥२॥ जे पदकमल संभु चतुरानन हृदै कमल अंतर राखे। जे पद कमल रमा–उर भूषन वेद भागवत मुनि साखे ॥३॥ जे पद कमल लोकत्रय पावन बलिराजा के पीठ धरें। सो पद कमल 'दास परमानंद' गावत प्रेम पीयूष भरे ॥४॥

ता पाछें श्रीआचार्यजी के आगे प्रार्थना को पद गायो। सो पद :–

राग कान्हरो :– यह मांगो गोपीजनवल्लभ। मानुस जनम और हरि की सेवा ब्रज बसिवो दीजे मोही सुलभ ॥१॥ श्रीवल्लभकुल कौ हों चेरो वैष्णवजन कौं दास कहाऊँ। श्रीयमुनाजल नित प्रति न्हाऊँ मन क्रम बचन कृष्ण गुन गाऊँ ॥२॥ श्रीमद्भागवत श्रवन सुनों नित्य इन तजि चित्त कहूँ अनत न लाऊँ। परमानंददास यह मांगत नित निरखो कबहू अघाऊँ ॥३॥

सो यह पद परमानंददासने गायो। सो सुनिके श्रीआचार्यजी

महाप्रभु आपु जानें, जो–या पद में ब्रज के दरसन की प्रार्थना कीनी है। तासों परमानंददास कों ब्रज के दरसन अवश्य करवावने। तब श्रीआचार्यजी आपु ब्रजमें पधारिवे को उद्यम किये। सो तब दामोदरदास हरसानी, कृष्णदास मेघन, परमानंददास, और यादवेन्द्रदास आदि सब वैष्णवन कों संग लेके श्रीआचार्यजी आप अड़ेल तें ब्रज कों पधारे। सो ब्रज कों आवत मारग में परमानंददास को गाम कनौज आयो। तब परमानंददास ने श्रीआचार्यजी सों बिनती करि अपने घर पधराये। पाछें परमानंददास अपने भाग्य मानिके परम प्रीतिसों अपने घर पधरायकें सब सामग्री बजारतें लाये। और जो वैष्णव हते सो तिनसों बहोत बिनती दैन्यता करिके सबन कों सीधो सामान देके रसोई करवाई। पाछें श्रीआचार्यजी आपु सखड़ी अनसखड़ी पाक सामग्री सिद्ध करिके श्रीठाकुरजी कों भोग धरि भोग सराय आपु भोजन किये। ता पाछे परमानंददास आदि सब वैष्णवन कों महाप्रसाद देकें आपु गादी तकीयानके ऊपर बिराजे। पाछे परमानंददास महाप्रसाद ले श्रीआचार्यजी के पास आय दंडवत करिके बैठे। तब आपु आज्ञा किये जो–परमानंददास ! कछू भगवद् जस गावो। तब परमानंददास अपने मनमें बिचारे, जो–या समय श्रीआचार्यजी को मन तो ब्रजलीला में श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास है। तासों विरह को पद गाऊँ, जामें एक क्षण कल्प समान जाय। सो पद :–

राग सोरठ – हरि तेरी लीला की सुधि आवे। कमलनैन मनमोहन मूरति मन मन चित्र बनावे ॥१॥ एकवार जाहि मिलत मया करि सो कैसे बिसरावे। मुख मुसक्यान बंक अवलोकन चाल मनोहर भावे। कबहु निविड तिमिर आलिंगत कबहुक पिकसुर गावे। कबहुक संभ्रम क्वासि क्वासि कहि संगहि उठि धावे ॥ कबहुक नैन

मूंदि अन्तर गति मणिमाला पहरावे। 'परमानंद–प्रभु' स्याम ध्यान करि ऐसे विरह गँवावे ॥४॥

यह पद परमानंददास ने गायो। सो यामें यह कहें, जो– 'हरि तेरी लीला की सुधि आवे।' सो ताहि समय श्रीआचार्यजी आपु लीला में मग्न होय गये।

भावप्रकाश– सो तहां श्रीगुसांईजी श्रीआचार्यजी को स्वरूप 'श्रीवल्लभाष्टक' में वरनन कियो है, जो – 'श्रीमद् वृन्दावनेंदुः प्रकटित रसिकानन्द–सन्दोहरूप–स्फूर्जद्रासादिलीलामृत०। ऐसे रस सों भरे हैं। और 'सर्वोत्तम' में श्रीगुसांईजी श्रीआचार्यजी को नाम कहे – रासलीलैक तात्पर्याय नमः। सो श्रीआचार्यजी को कार्य कहियात हैं, जो–जो ग्रन्थ किये सो तामें रासलीला ही तात्पर्य है। और कछु काहू बात में आपु को तात्पर्य नाहीं है। सो तासों रासलीला मे मगन होय गये।

सो ऊपर सरीर को देह को–अनुसंधान हू रह्यो नाहीं। सो तीन दिनलों श्रीआचार्यजी कों मूर्छा रही। सो नेत्र मूंदि के गादी तकियान पें बिराजे हते, और दामोदरदास हरसानी आदि वैष्णव (जो) श्रीमहाप्रभुजी के स्वरूप कों जानत हते सो जाने। सो कोई वैष्णव बोले नाहीं, बैठे बैठे चुप होय के श्रीआचार्यजी को दरसन कियो करें।

भावप्रकाश – सो काहेतें ? जो –श्रीआचार्यजी आप पूरन पुरुषोत्तम हैं सो इनकों सरीरधर्म बाधक नाहीं। जो–मनुष्य देह धारन कियो है तासों मनुष्य – क्रिया जगत में दिखावत हैं, परि इनकों देह को धर्म बाधक नाहीं है। तासों सब सेवक तीन दिनलों बैठे रहे।

सो पाछें चौथे दिन सावधान होयकें श्रीआचार्यजी ने नेत्र खोले, तब सब वैष्णव प्रसन्न भये।

भावप्रकाश– सो तहाँ यह पूर्वपक्ष होय, जो–रासादिक लीला में मगन तीन दिन तांई क्यो रहे ? सो तहाँ कहत हैं, जो–रासादिक लीला में तीन ही ठौर मुख्य हैं। जो–श्रीगिरिराज, श्रीवृन्दावन और श्रीयमुनाजी। १ श्रीगिरिराज स्वरूप होय सगरी लीला की सामग्री सिद्ध करत हैं। २ श्रीवृन्दावन की लीला रसात्मक

कुञ्जविहार में। ३ और श्रीयमुनाजी सब रास को मूल। या प्रकार जल स्थल की लीला हैं! सो एक दिन श्रीगिरिराज संबंधी लीला को अनुभव किये, जो-कंदरा में नाना प्रकार के विलास, चतुर्भुजदासजी गाये हैं-'श्रीगोवर्द्धनगिरि सघन कंदरा।' आदि दूसरे दिन वृन्दावन लीला, और तीसरे दिन श्रीयमुनाजीकी पुलिन (में) रास जलविहारादि। या प्रकार तीन दिनलों तीनों रसको अनुभव किये। ता पाछें भूमि पर भक्तिमारग प्रकट करिकें अनेक जीवन कों सरन लेकें लीलारस को अनुभव करवावनो है, सो चौथे दिन श्रीआचार्यजी आपु नेत्र खोलि के सावधान भये।

तब परमानंददासजी अपने मनमें डरपे, जो-ऐसे पद फेरि कबहूँ नाहीं गाऊंगो।

भावप्रकाश - सो परमानंददासजी यासों डरपे, जो-श्रीआचार्यजी आपु रसको अनुभव करिके कदाचित् लीलारस में मगन होइ जांय। सो भूमि पर पधारिवे को मन न करें तो यह दैवीजीवन कौ उद्धार कौन भाँति सों होयगो ? तासों परमानंददास ने अपुने मन में विचार कियो, जो-अब मैं फेरि विरह को पद श्रीआचार्यजी आगे नाहीं गाऊंगो। सो काहेतें ? जो-श्रीआचार्यजी आपु बिरहात्मक स्वरूप हैं। सर्वोत्तममें श्रीगुसांईजी आपु श्रीआचार्यजी को नाम कहे हैं - 'जो-विरहानुभवैकार्थ सर्वत्यागोपदेशकः' सो विरहरसके अनुभवके अर्थ सर्व लौकिक में त्याग किये, सो उपदेश करत हैं। यामें विरह को स्वरूप जताये। विरह दसा में लौकिक वैदिक की कछू सुधि न रहे सो तब विरह भयो जानिये।

ता पाछें परमानंददास ने सूधे पद गाये। सो पद -

राग रामकली - माईरी! हों आनन्द मंगल गाऊँ। गोकुल की चिंतामणि माधौ जो मांगो सो पाऊँ ॥१॥ जब तें कमल नैन ब्रज आए सकल संपदा बाढी। नंदराय के द्वारे देखो अष्ट महासिद्धि ठाढी ॥२॥ फूले फले सदा वृन्दावन कामधेनु दुहि लीजे। मांग्यो मेह ईंद्र बरसावे कृष्ण कृपा तें जीजे ॥३॥ कहत जसोदा सखियन आगे हरि उत्कर्ष जनावे। 'परमानंद' कौ ठाकुर मुरली मनोहर भावे ॥४॥

ता पाछें श्रीआचार्यजी आपु भोजन करिके पोढ़े, तब सब वैष्णव महाप्रसाद लियो। ता पाछे परमानंददास महाप्रसाद ले के श्रीआचार्यजी आगे पद गाये -

राग गोरी -बिमल जस वृन्दावन के चंद कौ। काह प्रकास सोम सूरज कौ जो मेरे गोविंद कौ ॥१॥ कहति जसोदा औरन आगे वैभव आनन्द-कन्द कौ। खेलत

फिरत गोप–बालक संग ठाकुर 'परमानंद' कौ ॥२॥

ता पाछें परमानंददासने यह पद गायो। सो पद –

राग सारंग – चलि सखी नदंगाम जाइ बसिए। खरिक– खेलत ब्रजचंद जु सों हसिए ॥१॥ बसि बठेन सबै सुख माई, एक कठिन दुख दूर कन्हाई ॥२॥ माखन चोरत दुरि दुरि देखों, सजनी जनम सुफल कर लेखों ॥३॥ जलचर लोचन छिनु छिनु प्यासा। कठिन प्रीति परमानंददासा ॥४॥

यह पद सुनिके श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो–अब ब्रज कों चलिये। पाछें परमानंददास ने जो सेवक किये हते, तिन सबन कों श्रीआचार्यजी के पास लाय बिनती कीनी, जो–महाराज ! इन जीवन कों अङ्गीकार करिये। तब श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास सों कहे, जो–इनकों तुम नाम सुनाय के सेवक किये हैं, तातें अब हम पास तुम इनकों सेवक क्यों करावत हो ? तब परमानंददास कहे, जो– महाराज ! यह तो पहली दसा में स्वामीपनो हतो, तासों सेवक किये हते। और अब तो मैं आप को दास हों। 'स्वामीपद' तो जो स्वामी हैं तिनही कों सोहत है। दास होय स्वामीपद चाहे सो मूरख है। तासों मैं अज्ञान दसा में सेवक किये, जो अब आप इनकों सरन लेके उद्धार करिये। तब सबन कों श्रीआचार्यजी ने नाम सुनाय सेवक किये। ता पाछे सब वैष्णवन कों संग ले कन्नौज सों ब्रज में पधारे। सो कछुक दिन में श्रीगोकुल पधारे। सो गोविंदघाट ऊपर स्नान करिके छोंकर के नीचे श्रीआचार्यजी आपु अपनी बैठकमें आय बिराजे। सो एक भीतर बैठक श्रीद्वारिकानाथजी के मंदिर के पास है, तहां रात्रि कों श्रीआचार्यजी के विश्राम करिवे की ठोर है। सो आपु जब श्रीगोकुल पधारते, तब आपु उहां उतरते। सो यह भीतर

की बैठक है। सो श्रीआचार्यजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों पालने झुलाय दधिकादो जन्माष्टमी को उत्सव किये हैं। सो ऊपर गज्ञनधावन की वार्ता में वरनन करि आये हैं। सो श्रीआचार्यजी आपु स्नान करि छोंकर के नीचे अपनी बैठक में बिराजे हते। तब सब वैष्णव परमानंददास सहित स्नान करि प्रभुनके (श्रीआचार्यजी के) पास बैठे हते। पाछें श्रीआचार्यजीने श्रीयमुनाष्टक को पाठ परमानंददासकों सिखाये तब परमानंददास के हृदय में श्रीयमुनाजी को स्वरूप स्फुरचो। सो श्रीयमुनाजी को जस वरनन कियो। सो पद–

राग रामकली – श्रीयमुनाजी! यह प्रसाद हों पाऊँ। तिहारे निकट रहों निसबासर राम कृष्ण गुन गाऊँ ॥१॥ मज्ञन करों बिमल जल पावन चिंता कलह बहाऊँ। तिहारी कृपा तें भानु की तनया हरि पद प्रीति बढाऊँ ॥२॥ बिनती करों यही वर मांगों अधम संग बिसराऊँ। 'परमानंद' चारि फलदाता मदनगोपाल लडाऊँ ॥३॥

राग रामकली – श्रीयमुनाजी दीन जानि मोहि दीजे। नंद को लाल सदा बर मांगो गोपिन की दासी मोहि कीजे ॥१॥ तुम हो परम उदार कृपानिधि चरन सरन सुखकारी। तिहारे बस सदा लाडिलीवर वर्तत निर्तत गिरिवरधारी ॥२॥ ब्रजनारी सब खेलति हरिसंग अद्‌भुतरास बिलासी। तिहारे पुलिन मधि कुंज द्रुम कमल पुहूप सुखरासी ॥३॥ श्रमजल भरि न्हात ब्रजसुन्दरि जलक्रीडा सुखकारी। मनहु तारा मध्य चन्द विराजत भरि भरि छिरकत नारी ॥४॥ रानी जू के पांइ परों नित्य गृह–कारज सब कीजे। 'परमानंददास' दासी व्है चरन कमल सुख दीजे ॥५॥

राग रामकली – कालिंदी कलि – कल्मष हरनी। रवि तनया जम–अनुजा स्यामा महासुन्दरी गोविंद घरनी ॥१॥ जै जमुने श्रीकृष्णवल्लभा पतितन कों पावन भव तरनी। सरनागत कों देति अभयपद जननी तजत जैसे सुत की करनी ॥२॥ सीतल मन्द सुगंध सुधानिधि धारा धरि वपु उतरी धरनी। 'परमानंद प्रभु' परम पावनी जुग जुग साखि निगम नित बरनी ॥३॥

ऐसे पद परमानंददासनें श्रीआचार्यजी के आगे श्रीयमुनाजी के तटपैं गाये। तब श्रीआचार्यजी आपु प्रसन्न होय के

परमानंददास कों श्रीगोकुल की बाललीला के दरसन करवाये। सो बाललीला विशिष्ट परमानंददास कों ऐसे दरसन भये, जो- ब्रजभक्त श्रीयमुनाजल भरत हैं, और श्रीठाकुरजी आप ब्रजभक्तन सों नाना प्रकारकें ख्याल लीला करि सुख देत हैं। सो परमानंददास लीला के दरसन करि ऐसे पद श्रीआचार्यजी के आगे गाये। सो पद -

राग बिलावल - श्रीयमुनाजल घट भरि ले चली श्रीचन्द्रावलि नारि। मारग में खेलत मिले श्रीघनस्याम मुरारि ॥१॥ नैनन सों नैना मिले मन रह्यो हैं लुभ्याई। मोहन मूरति मन बसी पग धरयो न जाई ॥२॥ मन की प्रीति प्रगट भई यह पहेली भेट। 'परमानंद' ऐसें मिली जैसें गुड में चेंट ॥३॥

राग सारंग - लाल नेक टेको मेरी बहियां। औघट घाट भरयो नहीं लाई रपटत हौं कालिंदी पहियां ॥१॥ सुन्दरस्याम कमल दल लोचन देखि स्वरूप ग्वालिनि अरुझानी। उपजी प्रीति काम अंतरगति तब नागर नागरी पहचानी ॥२॥ हँसि ब्रजनाथ गह्यो कर पल्लव जैसे गगरी गिरन न पावे। 'परमानंद' ग्वालि सयानी कमल नैन परसोई भावे ॥३॥

ता पाछें परमानंददासने श्रीगोकुल की बाललीला के पद बहोत किये। सो जामें श्रीगोकुल को स्वरूप जान्यो परे। सो पद-

राग कान्हरो - गावति गोपी मधु मृदुबानी। जाके भवन बसत त्रिभुवनपति राजा नन्द जसोदा रानी ॥१॥ गावत वेद भारती गावति नारदादि मुनि ज्ञानी ॥२॥ गावत चतुरानन जग नायक गावत सेस सहस्र मुखरास। मन क्रम बचन प्रीति पद अंबुज अब गावत 'परमानंददास' ॥३॥

राग कान्हरो - रानी जसुमति गृह आवति गोपीजन। वासर ताप निवारन कारन बारंबार कमल मुख निरखन ॥१॥ चाहत पकरि देहरी उल्लंघन किलकि किलकि हुलसत मन हि मन। राई लौंन उतारि दुहूँकर वार फेरि डारति तन मन धन॥२॥ लेति उठाय चांपति हियो भरि प्रेम विवस लागे दृग ढरकन। चली ले पलना पोढावन कों अरकसाय पोढे सुन्दरघन ॥३॥ देति असीस सकल गोपीजन चिरजीयो जोंलों गङ्ग यमुन। 'परमानंददास' कौ ठाकुर भक्तवच्छल भक्तन मनरंजन ॥४॥

राग हमीर - गिरिधर सब ही अङ्ग कौ बांकौ। बांकी चाल चलत गोकुल में छेल छबीलो कहां कौ ॥१॥ बांकी भोंह चरन गति बांकी बांकौ हृदयो है ताकौ।

'परमानंददास' कौ ठाकुर कियो खौर ब्रज सांकौ ॥२॥

या भांति परमानंददासने बहोत कीर्तन किये। सो श्रीगोकुल के दरसन करिके परमानंददास कों श्रीगोकुल पै बहोत आसक्ति भई। तब श्रीआचार्यजी के आगे ऐसे प्रार्थनाके पद गाए, जो-मोकों श्रीगोकुल में आपके चरणारविंद के पास राखो, जासों नित्य श्रीठाकुरजी के दरसन करों, और सगरी लीला को अनुभव होय।

राग सारंग - यह मांगों जसोदानन्दन। चरनकमल मेरो मन मधुकर यह छबि नैनन पाऊँ दरसन ॥१॥ चरनकमल की सेवा दीजे दोऊ तन राजत बिज्रुलता घन। नंदनंदन वृषभाननन्दिनी मेरे सर्वसु प्रानजीवन घन ॥२॥ ब्रज बसिवो जमुनाजल अचिवौ श्रीवल्लभ कौ दास यहे पन। महाप्रसाद पाऊँ हरिगुन गाऊँ 'परमानन्ददास' दासी जन ॥३॥

राग कान्हरो - यह मौंगों संकर्ष न बीर। चरनकमल अनुराग निरन्तर भावत हैं भक्तन की भीर ॥१॥ संग देहो तो हरिभक्तन कौ बास वृन्दाबन जमुना तीर। श्रवण देहु तो कृष्णकथारस ध्यान देउ तो स्याम सरीर। मनकामना सकल परिपूरन मज्जन बिमल कालिंदी नीर। 'परमानंददास' कौ ठाकुर गोकुल नायक सब विधि धीर॥

सो ऐसे कीर्तन परमानंददासने प्रार्थना के गाये सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये।

वार्ता - प्रसंग ३ - पाछें श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास सहित सब वैष्णव समाज लेके श्रीगोकुल तें श्रीगोवर्द्धन पधारे। सो उत्थापन के समय श्रीआचार्यजी आपु श्रीगिरिराज पधारे। तहां स्नान करि श्रीआचार्यजी श्रीगिरिराज ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर पधारे। तब परमानंददास न्हाय के श्रीगिरिराज कों साष्टांग दंडवत करिके पर्वत के ऊपर मंदिर में आय, उत्थापनके दरसन किये। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन

करत ही परमानंददास आसक्त होय रहे। तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुखतें परमानंददास सों कहे, जो–परमानंददास! कछू भगवल्लीला के कीर्तन श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुनावो। तब परमानंददास अपने मनमें विचार किए, जो–मैं कहा गाँऊ? क्यों जो रसना तो एक है, और श्रीगोवर्द्धननाथजी को स्वरूप तो अपार है, और इनकी लीला हू अपार है। जो वस्तु स्मरन करों सो ताही में बुद्धि विक्षिप्त होय जात है। परन्तु श्रीआचार्यजी की आज्ञा है, तासों कछू गावनो तो सही। सो ऐसो पद गाऊँ जामें प्रथम तो अवतार लीला, पाछें कुञ्ज–लीला, पाछें चरणारविंद की वंदना, पाछें स्वरूप को वर्णन, ता पाछें माहात्म्य सहित श्रीठाकुरजी की लीला होय। सो ऐसो पद गायो। सो पद–

राग बिलावल – मोहन नन्दराइ कुमार। प्रकट ब्रह्म निकुंज – नायक भक्त हित अवतार॥१॥ प्रथम चरन – सरोज वन्दों स्यामघन गोपाल। मकर कुण्डल गंड मंडित चारु नैन बिसाल॥२॥ बलराम सहित विनोद लीला सेस सङ्कर हेत। 'दास परमानंद प्रभु' हरि निगम बोलत नेति॥३॥

सो यह प्रार्थना को पद गायके पाछें आसक्ति के पद गाए।

राग आसावरी – माई मेरो माधौं सों मन मान्यो। अपनो मन और वा ढोटा कौ एक–मेक करि सान्यो॥१॥ लोक वेद की कानि तजी मैं न्योति आपुने आन्यो। एक गोविंदचन्द के कारन बैर सबन सों ठान्यो॥२॥ अब क्यों भिन्न होहि मेरी सजनी दूध मिल्यौ ज्यों पान्यौ। 'परमानंद' मिले हैं गिरिधर है पहलो पहचान्यौ॥३॥

राग गोरी – मैं अपुनो मन हरि सों जोरयो। हरि सों जोरि सबन सों तोरयो॥१॥ आगे पाछे कौ सोच मिटयो अब बाट माँझ मटुका ले फोरयो। कहनो होइ सो कहो सखीरी कहा भयो काहू मुख मोरयो॥२॥ नवल लाल गिरिधर पिया संग प्रेम रंग में यह तन बोरयो। 'परमानंदप्रभु' लोक हँसन दै विधि–निषेध कौ नांतौ तोरयो॥३॥

राग कान्हरो – तिहारी बात मोहि भावति, लाल। बार–बार जसोमति

के भवन में यह सुनन हों आवाते जाति ॥१॥ पार परोसी अनख करत हैं और कछुक लगावति लाल। ताकी साखि बिधाता जाने जिहिं लालच उठि धावति लाल ॥२॥ दधिकौ मथन अरु गृह कौ कारज तिहारे प्रेम बिसरावति लाल। 'परमानंद प्रभु' कुंवर भांमतों तुम देखे सचु पावति लाल ॥३॥

ता पाछें श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेनआरती किये। ता समय परमानंददास ने यह पद गायो। सो पद –

राग केदारो – पौढ़े रंगमहल गोविंद। राधिका संग सरद – रजनी उदित पूरनचंद ॥१॥ विविध बिचित्र चित्र चित्रत कोक कोटिक फंद। निरखि निरखि बिलास बिलसत दंपति रसकंद ॥२॥ मलयचंदन अंग लेपन परस्पर आनंद। कुसुम बिंजना ब्यार ढोरे सजनी 'परमानंद' ॥३॥

सो एसे पद परमानंददासजीने बहोत गाये। सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बहोत प्रसन्न भये। ता पाछें श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों पोढ़ायके अनोसर करि पर्वत नीचे पधारे। तब श्रीआचार्यजीने रामदास भीतरिया सों कह्यो, जो– परमानंददास कों प्रसादी दूध पठाय दीजो। तब रामदासने वह प्रसादी दूध पठायो सो परमानंददास प्रसादी – दूध लेंन लागे, सो तातो लाग्यो। तब सीरो करिके लियो। पाछें परमानंददास श्रीआचार्यजी पास आय दंडवत करिके बैठे। तब श्रीआचार्यजी आप परमानंददास सों पूछे, जो–परमानंददास! महाप्रसादी दूध लियो सो कैसो हतो ? तब परमानंददास नें श्रीआचार्यजी सों कह्यो, जो–महाराज! दूध तो तातो हो। तब श्रीआचार्यजीने सब भीतरियान सों बुलाय के पूछ्यो, जो–दूध तातो क्यों भोग धरत हो ? सो आछो सुहातो होय तब भोग धरनो। तब सगरे भीतरियानने कही, जो – महाराज ! अब ते सुहातो सीरो करिके भोग धरेंगे।

भावप्रकाश – सो परमानंददास कों श्रीआचार्यजी आपु प्रसादी दूध यासो दिवायो, जो–श्रीठाकुरजी कों दूध बहोत प्रिय है। तासों सेवक कों दूध निकुंज–

लीला संबंधी रसके दान करन कों, और सामग्री बिगरी सुधरी वैष्णवन द्वारा श्रीठाकुरजी कहत हैं। जो–सामग्री वैष्णव सराहें तब जानिये, जो–श्रीठाकुरजी भली भांति सों अनुभव किये। सो या भावतें दूध दिये।

ता पाछें परमानंददास कों दूध अधरामृत पिये तें सगरी रात्रि लीलारस को अनुभव भयो। तब रात्रि की लीला में मगन होय के ये पद गाये। सो पद–

राग कान्हरो – आनंदसिंधु बढ्यो हरितन में। श्रीराधा पूरन ससि मुख निरखत उमगि चल्यो ब्रज वृन्दाबन में ॥१॥ इत रोक्यो यमुना उत गोपी कछु इक फैल परचो त्रिभुवन में। ना परस्यो कर्मठ अरू ज्ञानी अटकि रह्यो रसिकन के मन में॥२॥ मंद मंद अवगाहत बुद्धिबल भक्त हेत लीला छिन छिन में। कछु एक लह्यो नंदसुवन कृपातें सो देखियत 'परमानंद' जन में॥३॥

राग कान्हरो – पिय मुख देखत ही रहिये। नैनन को सुख कहत न आवे जा कारन दुःख सब हि सहिए॥१॥ सुनो गोपाललाल पाँइ लागों भली पोच ले बहिए। हों आसक्त भई या रूप हि बड़े भागि तें लहिए॥२॥ तुम बहुनायक चतुरसिरोमनि मेरी बाँह दृढ़ गहिए। 'परमानंदस्वामी' मनमोहन तुमहिं पें निरबहिए॥३॥

राग गौरी – कौ रस गोपिन लीनो घूंट। मदन गोपाल निकट कर पाए प्रेम काम की लूंट॥१॥ निरखि रूप नंदनंदन कौ लोकलाज गई छूटि। 'परमानंद' वेद सागर की मर्यादा गई तूटि॥२॥

राग गौरी – यातें माई भवन छांडि बन जैये। आंखि–रस कानरस बात–रस सब रस नंदनंदन पें पैये॥१॥ कर पल्लव गहि कंठ बाहु धरि संग मिले गुन गैये। रास बिलास विनोद अनुपम माधौ के मन भैये॥२॥ यह सुख सखी कहत नाहिं आवे देखत दुःख बिसरैये। 'परमानंदस्वामी' को संगम भाग्य बड़े तें पैये॥३॥

राग हमीर – अमृत निचोय कियो इकठौर। तेरो बदन सुधारि सुधानिधि तब तें बिधना रचि न और॥१॥ सुनि राधे उपमा कहा दीजे स्याम मनोहर भए हैं चकोर। सादर पान करत तुव आनन तृषित काम बस नंद किसोर॥२॥ कौन कौन अंग करोंरी निरूपन नवगुन सील रूप की रासि। 'परमानंद प्रभु' को चित्त चोरचो लोचन बँधे प्रेम की प्यास॥३॥

राग बिहागरो – यह तन नवल कुंवर परवारों। नव निकुंज में गौरस्याम तन वारंवार निहारों॥१॥ इतनी टहल कृपा करि दीजे संग मिलि जीव उधारों। 'परमानंदस्वामी' के मिले बिनु और काज सब बारों॥२॥

सो या भांति परमानंददासने सगरी रात्रि लीलाको अनुभव कियो, सो बहुत कीर्तन गाये । ता पाछें प्रातःकाल भयो तब श्रीआचार्यजी आपु स्नान करिके पर्वत ऊपर पधारे, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों जगाये । तब परमानंददासने यह पद गायो। सो पद –

राग रामकली – जागो गोपाललाल देखों मुख तेरो। पाछें गृहकाज करों नित्य नेम मेरो ॥१॥ बिगसत निसा अरुन दिसा उदित भयो भान। गुंजत अली पंकज बन जागिए भगवान॥२॥ द्वारे ठाढ़े बंदीजन करत हैं उच्चार। बंस प्रसंस गावत है हरि – लीला अवतार ॥३॥ 'परमानंदस्वामी' गोपाल जगत मंगल रूप । वेद पुरान पढत ज्ञान महिमा अनूप ॥४॥

राग रामकली – लाल को मुख देखन हों आई। काल्हि मुख देखि गई दधि बेचन जात ही गयो है बिकाई ॥१॥ दिनतें दूनो लाभ भयो घर काजर बछिया जाई। आई हों धाय थंभाय साथकीन मोहन देहु जगाई॥२॥ सुनि त्रिय बचन वे हँसि बैठे नागरि निकट बुलाई। 'परमानंद' सयानि ग्वालिन सेन संकेत बताई॥३॥

राग रामकली – ग्वालिन पिछवारे व्है बोल सुनायो। कमलनैन प्यारो करत कलेऊ कोर न मुख लों आयो॥१॥ अरी मैया एक बन ब्याई गैया बछरा उहाँई बसायो। मुरली न लीनी लकुटिया न लीनी अरबराय कोऊ सखा न बुलायो॥२॥ चकृत भई नंद जू की रानी सत्य आइ कैधों सुपनो पायो। फूले अंगन माय रसिकवर त्रिभुवनराय सिर – छत्र जु छायो॥३॥ बैठे जाइ निकुंज सदन में विविध भाँति कियो मन भायो। 'परमानंद' सयानी ग्वालिन उलटि अंक गिरिधर पिय पायो॥४॥

सो या प्रकार के पद परमानंददासने बहोत गाये। ता पाछें श्रीआचार्यजी ने परमानंददास कों श्रीगोवर्द्धननाथजी के कीर्तन की सेवा दीनी। सो नित्य नये पद करिके परमानंददास श्रीनाथजी कों सुनावते।

वार्ता – प्रसंग ४ – एक दिन एक राजा अपनी रानी कों संग लेके व्रज में यात्रा करिवे आयो। वह राजा श्रीआचार्यजी को सेवक हतो। सो श्रीगोवर्धननाथजी के दरसन करिके डेरान में

आइके वा राजानें अपनी रानी सों कह्यो, जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी को दरसन बहुत सुंदर है, सो तू गिरिराज पर जायके श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करि आव। तब रानीनें राजासों कह्यो, जो–जैसे हमारी रीति है, तैसे परदान में दरसन होय तो मैं करूँ। तब राजानें रानी सों कही, जो ये ब्रज के ठाकुर हैं सो श्रीठाकुरजी के दरसन में परदा को कहा काम है ? सो ये ठाकुर ब्रज के हैं सो काहू को परदा राखत नाहीं। या प्रकार राजा ने रानी कों बहोत समझाई, पर रानी ने राजा को कह्यो मान्यो नाहीं। तब राजा ने श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी, जो–महाराज! मैंने रानी को बहोत समुझायो, परन्तु वह मानत नाहीं, जो वह परदा में दरसन कियो चाहत है। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो–वाको परदा में ही ले आव, जो सबतें पहले दरसन करवाय देंगे। तब रानी परदान में आई और श्रीनाथजी के दरसन करन लागी। तब श्रीनाथजी (भक्तोद्धारक स्वरूप सों) सिंहासन सों उठिके सिंहपौरि के किंवाड़ खोलि दिये सो भीड़ वा रानी के ऊपर परी। सो वाके देह के सब वस्त्र निकसि गये। तब रानी बहोत लज्जित भई। सो जब राजा सों रानी ने डेरान में आयके सब समाचार कहे। तब राजा ने रानी सों कही, जो–मैं तोसों पहले ही कह्यो हतो, जो–ये श्रीनाथजी व्रज के ठाकुर हैं, सो इनने काहू को परदा राख्यो नाहीं है। ता समय परमानंददास यह पद गावत हते, सो वाकी एक तुक कही हती। सो पद –

'कौन यह खेलिवे की बानि।
मदन गोपाललाल काहू की राखत नांहिन कानि.॥'

सो यह सुनिके श्रीआचार्यजी परमानंददास कों बरजे, जो–ऐसे न कहिये, यासों ऐसे कहो, जो – 'भली यह खेलिवे की बानी।'

भावप्रकाश – सो काहेतें ? जो–अब ही परमानंददास कों दास पदवी दिये हैं। सो दासभाव सों रहे, और बोले, तो प्रभु आगे कृपा करें। जब सख्य भाव दृढ़ होय, तब बराबरी सों वार्ता होय। तासो बिना अधिकार अधिक भाव नाहीं है। जो– करे तो नीचे गिरे। सो जब श्रीठाकुरजी सरल भाव को दान करे तब ही बने। दूसरो आसय, श्रीआचार्यजी आपु आपनो स्नेह श्रीगोवर्द्धननाथजी में राखे सो सर्वोपरि दिखाये, जो–स्नेही सों ऐसे न बोले। जो – कार्य सनेही प्रीति सों न करे सो तासों हू कहिये, जो भलो कार्य किये। ऐसी सनेह की रीति है। तासों श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास कों बरजे – 'कौन यह खेलिवे की बानि.।' या भाँति सों कबहू न कहिये। कहिये, बरजिये लायक तो ब्रजभक्त हैं, सो तासों चाहै तैसें बोलें। तासों तुम ऐसे कहो जो– 'भली खेलिवे की बानि।'

तब परमानंददास ने ऐसे ही पद गायो। सो पद –

राग सारंग – भली यह खेलिवे की बानि। मदनगुपाललाल काहू की राखत नाहीन कानि ॥१॥ अपने हाथ ले देत बनचरन हि दूध भात घृत सानि। सो बरजों तो आंख दिखावे पर घर कूदन–दानि ॥२॥ सुनरि जसोदा सुत के करतब यह ले माट मथानि। फोड़ि ढोरि दधि डारि अजिर में कौन सहे नित हानि ॥३॥ ठाढी हँसति नंदजूकी रानि मूंदि कमल मुख पानि। 'परमानंददास' इह जाने बालि बूझि घों आनि ॥४॥

सो यह पद सुनिकें श्रीआचार्यजी आपु बहोत प्रसन्न भये।

भावप्रकाश – या प्रकार सहस्रावधि कीर्तन परमानंददास ने किये। तासों परमानंददास के पदन में बाल लीला भाव, (और) रहस्य हू झलकत है। सो जा लीला को अनुभव परमानंददास कों भयौ, ताही लीला के पद परमानंददास गाये। परन्तु श्रीआचार्यजी आपु परमानंददास कों बाललीला रस को दान हृदय में कियो है, तासों बाललीला गूढ़ पदन में हू झलकत है।

वार्ता – प्रसंग ५ – और एक दिन सगरे भगवदीय सूरदासजी, कुम्भनदासजी तथा रामदास आदि सब वैष्णव मिलिके जहां परमानंददास रहत हते तहां इनके घर आये। सो सब भगवदीय कों अपने घर आये देखिके परमानंददास अपने मन में बहोत प्रसन्न भये, जो–आज मेरो बड़ो भाग्य है। सो सब भगवदीय मेरे ऊपर कृपा करिके पधारे, ये भगवदीय कैसे हैं,

जो–साक्षात् श्रीगोवर्द्धननाथजी को स्वरूप ही हैं, तासों आज मो ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी ने बड़ी कृपा करी है।

भावप्रकाश – सो काहेतें ? जो–अनेक रूप होयके श्रीठाकुरजी मेरे घर पधारे हैं। सो भगवदीय के हृदय में श्रीठाकुरजी आपु बिराजत हैं, तासं मेरे बड़े भाग्य हैं। अब मैं कृतकृत्य होय गयो, जो सब भगवदीय कृपा किये हैं। सो प्रथम तो इन भगवदीयन की न्योछावरि करी चहिये। सो ऐसी कहा वस्तु है ? जासों सब भगवदीयन की न्योछावरि होय ?

पाछें परमानंददास ने भगवदीय वैष्णवन सों मिलिकें ऊँचे आसन बैठारि के यह पद गायो। सो पद –

राग बिहागरो – आए मेरे नन्दनन्दन के प्यारे। माला तिलक मनोहर बानो त्रिभुवन के उजियारे ॥१॥ प्रेम सहित उर बसत निरन्तर नेक हू टरत न टारे। हृदै कमल के मध्य बिराजत श्रीब्रजराज दुलारे ॥२॥ कहा जानों कौन पुन्य उदय भयो मेरे घर जु पधारे, ''परमानंद'' करत न्योछावरि वारि वारि बहो वारे ॥३॥

ता पाछें दूसरो पद गायो। सो पद –

राग बिहागरो – हरिजन सङ्ग छिनक जो होई। करें कृपा गिरिधरन जीव पर पातक रहे न कोई ॥१॥ सकल कुतर्क वासना नासे हरि सुमरे सुमरावे। जड़ व्हे चतुर मंद बुद्धि निरमल मनमोहन मन भावे ॥२॥ माया काल कछू नहीं व्यापे जो हरिजन कों जाने। 'परमानंद' यही मन निश्चय हरिजन गुन हि बखाने ॥३॥

सो एसे पद परमानंददास ने गाये। सो सुनिके सब भगवदीय परमानंददास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। तब परमानंददास ने सब वैष्णव सों बिनती कीनी, जो–आजु कृपा करिके मेरे घर पधारे सो कछू आज्ञा करिये। तब रामदासजी ने पूछी, जो–परमानंददास ! ब्रज में सगरो प्रेम ब्रजभक्तन को है, सो श्रीनंदरायजी, गोपीजन, ग्वाल, सखानको। तामें सब तें श्रेष्ठ प्रेम किनको है।

भावप्रकाश – सो काहेतें ? जो–तिहारी बाललीला में लगन बहुत है। और तुम कृपापात्र भगवदीय हो, तासों यह संदेह है सो दूरि करो। सो या प्रकार रामदासजी ने परमानंददास सों यों पूछी, जो–श्रीआचार्यजी के अभिप्राय में तो

गोपीजन को प्रेम बहोत है। और परमानंददास ने नंदालय की लीला और माललीला बहोत वर्णन किये हैं, तासों श्रीआचार्यजी के हृदय के अभिप्राय की खबरि परी के नाहीं ? तासों परमानंददासकी परीक्षा लेनी।

ता समय परमानंददास ने यह पद गायो। सो पद –

राग नायकी – गोपी प्रेमकी ध्वजा। जिन गोपाल कियो बस अपने उर धरि स्याम भुजा ॥१॥ सुक मुनि व्यास प्रसंसा कीनी उद्धव संत सराही। भूरि भागि गोकुल की वनिता अति पूनित जगमांहीं ॥२॥ कहा भयो जु विप्रकुल जन्म्यो जो हरि सेवा नाहीं। सोई पूनित दास 'परमानंद' जो हरि सन्मुख जाहीं ॥३॥

राग कान्हरो–ब्रजजन सम घर पर कोउ नाहीं। जिन सब तन मन हरि अर्पन करि मोहन धरो उर मांहीं ॥१॥ सदा सङ्ग डोलत मन मोहन गोपी धरि उर ध्यान। गोपी गोपी रटत निरन्तर भूलि गये सब ज्ञान ॥२॥ जा गोपी की पदरज उद्धव ब्रह्मादिक सब जाचें। ता गोपी गृह माखन काजें सब दिन गिरिधर नाचे ॥३॥ गोपीजन मैं कौन बताऊँ हरि हू पार न पावे। तो हों मन्द बुद्धि कहा जानों 'परमानंद' गुन गावें ॥४॥

सो यह पद परमानंददास ने गाये। तब सगरे वैष्णव कहे, जो – परमानंददास ! तुम धन्य हो या प्रकार सगरे वैष्णव प्रसन्न होयके परमानंददास की सराहना करत बिदा होय अपने घर आये। ता पाछे परमानंददास ने बहोत दिन तांई श्रीगोवर्द्धननाथजी के कीर्तन की सेवा कीनी।

वार्ता – प्रसंग ६ – ता पाछें एक दिन परमानंददास श्रीगुसांईजी के और श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन कों गोपालपुर तें श्रीगोकुल आये, सो दरसन करिके रात्रि तहां रहे। पाछे प्रातःकाल श्रीगुसांईजी स्नान करिके श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में पधारे। तब परमानंददास कों बुलाये। तब परमानंददास आगे आय दंडवत किये। सों तब श्रीगुसांईजी आपु परमानंददास सों कहे, जो–श्रीठाकुरजी कों सगरी लीला ब्रज की बहोत प्रिय है। सो नित्य लीला ब्रज की श्रीठाकुरजी कों सुनावे, सो तो कोई

काल में हू पार पावे नाहीं। काहेतें ? जो–एक लीला को पार न पैये, तो सगरी लीला कौन गावे। परन्तु मैं एक कीर्तन करि देत हों, तामें सगरी ब्रज की लीला को अनुभव है। सो तुम या समय नित्य गाईयो। तब परमानंददास कहे, जो–महाराज ! वह पद कृपा करिके बताइये। सो श्रीगुसांईजी तो मारग के चलायवे वारे हैं सो भाषा के पद करे नाहीं। तासों संस्कृत में कीर्तन गायो। सो पद–

राग रागकली – मंगल मंगलं ब्रजभुवि मंगलम्। मङ्गलमिल श्रीनंदयसोदा नामसुकीर्तनमेतद्रुचिरोत्संगसुलालितपालितरूपम्॥१॥ श्रीश्रीकृष्ण इति श्रुतिसारं नाम स्वार्तजनाशयतापापहमिति मंगलरावम्। ब्रजसुन्दरीवयस्यसुरभिवृन्द मृगीगणनिरूपमभावा मंगलसीधुचया ॥२॥ मंगलभीषत्स्मितयुतमीक्षण–भाषणमुन्नतनासापुटगतमुक्ताफल चलनम्॥ कोमलचलदंगुलिदल संगत वेणुनिनाद विमोटितवृन्दावनभुविजाताः ॥३॥ मंगलमखिलं गोपी शितु रतिमंथरगति बिभ्रम मोहितरासस्थितगानम्। त्वं जय सततं श्रीगोवर्द्धनधर पालय निजदासान्॥४॥

सो यह पद श्रीगुसांईजी आपु गायके परमानंददास कों गवाए। सो परमानंददास 'मंगल मंगल' गाये। तब मङ्गल रूप परमानंददास ने और हू पद गाए। सो पद –

राग भैरव – मंगल माधौ नाम उच्चार। मंगल बदन कमलकर मंगल मंगलजन की सदा सम्हार॥१॥ खेलत मंगल पूजत मंगल गावत मंगल गीत उदार। मंगल श्रवन कथारस मंगल मंगल तन वसुदेव कुमार॥२॥ गोकुल मंगल मधुवन मंगल मंगल रुचि वृन्दावनचंद। मंगल करन गोवर्द्धनधारी मंगल भेख जसोदानंद॥३॥ मंगलधेनु रेनु भुवमंगल मंगल मधुर बजावत वेनु। मंगल गोपवधू परिरंभन मंगल कालिंदी पय फेनु॥४॥ मंगल चरनकमलदल मंगल मंगल कीरति जगत निवास। अनुदिन मंगल ध्यान धरत मुनि मंगल मति 'परमानंददास' ॥५॥

सो यह पद परमानंददास ने गायो, ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु मंगल–भोग सराय के मंगला–आरती किये। ता समय परमानंददास ने यह पद गायो। सो पद –

राग भैरव – मंगल आरती करि मन मोर। भरम निसा बीती भयो भोर॥१॥ मंगल बाजत झालर ताल। मंगल रूप उठे नंदलाल॥२॥ मंगल बाजत बीन मृदंग। मंगल बांसुरी सरस उपंग॥३॥ मंगल धूपदीप करि जोर। मंगल गावत सब मिलि कोर॥४॥ मंगल उदयो मंगल रास। मंगल मति 'परमानंददास' ॥५॥

सो या प्रकार श्रीगुसांईजी कृत 'मंगल मंगल०' के अनुसार परमानंददास ने बहोत कीर्तन किये, और श्रीगुसांईजी कृत मंगल मंगलं० पद नित्य गावते।

भावप्रकाश – यामें सगरी ब्रजलीला है, सो ठाकुरजीकों नित्य सुनावत हैं। और मंगल मंगलं के पाठतें ब्रजलीलाको सब पाठ होय। सो तहां मंगला को पद परमानंददास ने कियो सो तामें कहे – 'मंगल तन वसुदेवकुमार०'। सो तहां यह संदेह होय, जो–परमानंददास तो नंदनंदन के उपासक हैं। सो वसुदेवकुमार ब्रजलीलामें कहे, ताको कारन कहा ? तहां कहत हैं, जो–वेणुगीत और युगलगीत में 'देवकीसुत' गोपिकान ने कहे, सो कुमारिका के भावतें। सो काहेतें ? जो–कुमारिका श्रीयशोदाजी कों माता कहते, तासों श्रीठाकुरजी में पतिभाव है। याही सों वसुदेव-सुत कहि पतिभाव दृढ़ करत हैं। जो–यशोदा सुत कहें, तो भाइ बहन को भाव होय।

पाछे परमानंददास श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन कों श्रीगोकुलतें श्रीगिरिराज आये। सो तहां मंगला आरती पहलै 'मंगल मंगलं०' पद परमानंददासने गायो। सो श्रीगोवर्द्धनधर के यहां 'मंगल मंगल०' की रीत भई। सो वे परमानंददास ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ७ – और जब जन्माष्टमी आवती तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों पञ्चामृत स्नान करवायके सिंगार करि श्रीगिरिराज पर्वत ऊपर पधारिके श्रीगोवर्द्धननाथजीके सिंगार करते। ता पाछे राजभोग सों पहोंचिके फेरि श्रीगिरिराज तें श्रीगोकुल आवते। सो तहां श्रीनवनीतप्रियजी कों मध्यरात्रि कों जन्मकी रीति करिके पलना

झुलाय श्रीनाथजीके यहां नंदमहोत्सव करते। सो जब जन्माष्टमी आई, तब श्रीगुसांईजी आपु परमानंददासजीकों संग लेय के श्रीगरिराज सों श्रीगोकुल पधारे। सो जन्माष्टमी के दिन श्रीगुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों अभ्यंग कराये। ता समय परमानंददासने यह बधाई गाई। बधाई –

राग धनाश्री – मिलि मंगल गावहु माई, सबे मिलि०। आजु लाल कौ जन्म दिवस है बाजत रंग बधाई॥१॥ आंगन लीपो चोक पुरावो विप्र पढ़न लागे वेद। करहु सिंगार स्यामसुन्दर को चोवा चन्दन मेद॥२॥ आनंद भरी बाबा नन्दजू की रानी फूली अंग न समाई।'परमानंददास कौ ठाकुर' बहुत न्योछावरि पाई॥३॥

ता पाछे श्रीगुसांईजीने श्रीनवनीतप्रियजी के सिंगार करिके तिलक कियो। ता समय परमानंददासने यह पद गायो। सो पद–

राग सारंग – आज बधाई को दिन नीकौ। नंदघरनी जसुमति जायो है लाल भाँवतो जी कौ॥१॥ पंच सब्द बाजे बाजत है घर–घर तें आयो टीको। मंगल कलस लिये ब्रजसुन्दरि ग्वाल बनावत छीकौ॥२॥ देति असीस सकल गोपीजन जीवो कोटि बरीसो। 'परमानंददास कौ ठाकुर' गोप भेख जगदीसो॥३॥

राग सारंग – घर घर ग्वाल देत हैं हेरी। बाजत तालमृदंग बासुरी ढोल दमामा भेरी॥१॥ लूटत झपटत खात मिठाई कही न सकत कोऊ फेरी। उनमद ग्वाल बदत नहीं काहू ब्रजवनिता सब घेरी॥२॥ ध्वजा पताका तोरनमाला सबे सिंगारी सेरी। जै जै कृष्ण कहत 'परमानंद' प्रगट्यो कंस कौ बैरी॥३॥

या प्रकार परमानंददासने बहोत पद गाये। ता पाछै अर्द्धरात्रि के समय श्रीगुसांईजी आपु जन्म करायके श्रीनवनीतप्रियजीकों पालने में पधराये, श्रीनंदरायजी श्रीयसोदाजी, गोपी ग्वाल को भेख धराये। ता समय परमानंददासने यह पद गायो। सो पद –

राग धनाश्री – जसोदा रानी सोवन फूले फूली। तुम्हारे पुत्र भयो

कुलमंडन वासुदेव समतूली ॥१॥ देति असीस बिरधी जे ग्वालिनि गाम – गाम तें आई। ले ले भेट सबै मिलि निकसी मंगल चार बधाई ॥२॥ ऐसे दसक होइ जो और तो सब कोऊ सचुपावे। बाढौ बंस नंद बाबा कौ 'परमानंद' जिय भावे ॥३॥

भावप्रकाश – सो या पद में परमानंददासजी यह कहे, जो–'ऐसे दसक होय जो औरे तो सब कोऊ सचु पावे'। सो भगवदीयनके वचन सत्य करिवेके लिये श्रीगुसांईजी के बालक सातों और श्रीगुसांईजी तथा श्रीआचार्यजी तथा श्रीगोवर्द्धननाथजी सो ये दस स्वरूप प्रकट होयके सबकों सुख दिये हैं। सो 'सब' माने सगरे दैवी पुष्टिमार्गीय। सो या प्रकार सों भाव सहित परमानंददासजीने कीर्तन गाये।

पाछें श्रीनंदरायजी और गोपी ग्वाल, वैष्णवनके जूथ, अपने लालजी सब (कों) लेके दधिकांदो किये। तब परमानंददास को चित्त आनंद में विक्षिप्त होय गयो। वा समय परमानंददास नाचन लागे और यह पद गायो। सो वा प्रेम में परमानंददास रागको हू क्रम भूलि गये। सो रात्रि को तो समय और सारंग में गाये। सो पद –

राग सारंग – आज नंदराय के आनंद भयो। नाचत गोपी करति कोलाहल मंगल चार ठयो ॥१॥ राती पीयरी चोली पहेरे नौतम झूमक सारी। चोवा चंदन अंग लगाए सेंदुर मांग सँवारी ॥२॥ माखन दूध दह्यो भरि भाजन सकल ग्वाल ले आए। बाजत बेनु पखान महुवरि गावत गीत सुहाये ॥३॥ हरद दूब अक्षत दधि कुमकुम आंगन बाढ़ी कीच। हसत परस्पर प्रेम मुदित मन लागि लागि भुज बीच ॥४॥ चहूँ वेद ध्वनि करत महामुनि पंच सब्द ढम ढोल। 'परमानंद' बढ्यो गोकुल में आनंद हृदै कलोल ॥५॥

यह पद गाये पाछे परमानंददास प्रेम में मूर्छा खाय भूमिमें गिरि पड़े। तब श्रीगुसांईजी आपु अपने श्रीहस्तकमलसों परमानंददास कों उठायके अंजुलि में जल लेके वेदमंत्र पढ़िके आपु परमानंददास के ऊपर छिरके। सो तब उच्छलित प्रेम जो विकल करतो, सो हृदय में स्थिर भयो। सो परमानंददास सगरी लीला को अनुभव किये, और गान किये। या प्रकार परमानंददास

के ऊपर श्रीगुसांईजीनें कृपा करी। ता पाछें यह पलना को पद परमानंददासने गायो –

राग बिलावल–हालरो हुलरावति माता। बलि बलि जाय घोष सुख दाता ॥१॥
अति लोहित कर चरन सरोजे। जे ब्रह्मादिक मनसा खोजे ॥२॥
जसुमति अपनो पुन्य बिचारे । बारबार मुख कमल निहारे ॥३॥
अखिल भुवनपति गरूडागामी। नंदसुवन 'परमानंदस्वामी' ॥४॥

भावप्रकाश – सो या भांति सों 'अखिल भुवनपति गरूडागामी' ऐसे परमानंदजीने कह्यो। सो अखिल भुवन – पति यातें, जो–श्रीभगवान गरुड पैं बिराजमान सो (तो) सब जगत्के पति हैं। और नंदसुवन ठाकुर, सो परमानंददासने कही, जो–ये मेरे स्वामी हैं।

सो यह कीर्तन सुनिके श्रीगुसांईजी आपु परमानंददास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। ता पाछे परमानंददासने यह पद कान्हरो राग में करिके गायो। सो प्रेम में राग को क्रम नाहीं, लीला को क्रम। सो जेसी लीला करी, सो स्फुरी। सो तैसे परमानंददास गाये। सो पद –

राग कान्हरो – रानीजु तिहारो घर सुबस बसो। सुनहु जसोदा तिहारे ढोटा को न्हात हु जिनि बार खसो ॥१॥ कोऊ करत वेद मंगल धुनि कोऊ गावो कोऊ हंसो। निरखि निरखि मुख कमल नयन कौ आनंद प्रेम हिये हुलसो ॥२॥ देति असीस सकल गोपीजन कोऊ अति आनंद लसौ। 'परमानंद' नंद घर आनंद पुत्रजन्म भयो जगत जसो ॥३॥

सो यह असीसको पद परमानंददासने गायो। तब श्रीगुसांईजी आपु अपने पुत्र श्रीगिरिधरजीकों श्रीनवनीतप्रियजी के पास राखिके दधिकादों किये। ता पाछें परमानंददास कों संग लेके श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये। सो दधिकादों देखिके परमानंददास लीलारस में मगन होय गये। ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों राजभोग धरिके

बाहिर आये। तब श्रीगुसांईजी आपु परमानंददास की अलौकिक दसा देखके कहे, जो जैसे कुंभनदास को किसोर लीला में निरोध भयो, सो तैसे बाललीला में परमानंददास को निरोध भयो है। पाछें परमानंददास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि, पर्वततें नीचे उतरे। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की ध्वजा कों दंडवत करि, सुरभी कुंड ऊपरि आयके अपने ठिकाने कुटी आय बोलिवो छोड़ि दियो। सो नंदमहोत्सवके रसमें मगन होयके परमानंददास अपनी देह छोड़िवे को विचार करिके सुरभी कुंड ऊपर आयके सोये। और यहां श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी की राजभोग आरती करिके अनोसर करवाये। पाछें श्रीगुसांईजी आपु सेवकनसों पूछै, जो-आज राजभोग आरती के समय परमानंददास कों नाहीं देखे, सो कहां गये ? तब एक वैष्णवने श्रीगुसांईजी सों आय बिनती कीनी, जो-महाराज ! परमानंददास तो आजु विकल से दीसत हैं, और काहू सों बोलत नाहीं, और सुरभीकुंड पें जायके सोये हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु वा वैष्णव कों संग ले सुरभी कुंड ऊपर पधारिके परमानंददास के पास आये। परमानंददास के माथे पर श्रीहस्त फेरिके श्रीगुसांईजी आपु परमानंददास सों कहें, जो-परमानंददास ! हम तुम्हारे मन की जानत हैं। जो अब तिहारो दरसन दुर्लभ भयो। तब परमानंददास ने उठि के श्रीगुसांईजी कों साष्टांग दंडवत् किये। ता समय यह पद परमानंददास ने गायो। सो पद -

राग सारंग - प्रीति तो नंदनंदन सों कीजे। संपति बिपति परे प्रतिपाले कृपा करें तो जीजे ॥१॥ परम उदार चतुर चिंतामनि सेवा सुमिरन माने। चरन कमल की छाया राखे अंतरगति की जानें ॥२॥ वेद पुरान भागवत भाखे कियो भक्तन मन भायो। 'परमानंद' इंद्र कौ वैभव विप्र सुदामा पायो ॥३॥

सो यह पद परमानंददास ने श्रीगुसांईजी कों सुनायो।

भावप्रकाश – सो परमानंदजी ने या पद में श्रीगुसांईजी सों प्रार्थना कीनी, जो–प्रीत हू तुमसों करनी सो सदा कृपा एकरस करो। सो परम कृपालु, अपने हस्तकमल की छाया तें जन कों राखत हैं। या समय हू मोकों दरसन दे मेरे मस्तक ऊपर श्रीहस्तकमल धरे। सो मेरे अंतःकरण में, जो–मेरो मनोरथ हतो सो पूरन कियो। सो वेद पुरान सब ही कहत हैं, जो सदा भक्तन को भायो करि आनंद दिये हैं। जैसे एक समें इन्द्र की पदवी लायक जीव कोई न देखे तब भगवान ही इन्द्र होय के इन्द्र को कार्य चलाये। सो प्रसाद वैष्णव सुदामा भक्त कों दिये। तामें सुदामा को वैभव पाये हू मोह न भयो। सो तेसें आपु जो–ब्रज में लीला करते हैं सो परमानंदरूप सों कृपा करिके मोकों दान दिये। सो आपके गुन मैं कहां तांई कहौं। ऐसी प्रार्थना परमानंददासजी श्रीगुसांईजी सों किये।

यह पद सुनिके श्रीगुसांईजी आपु बहुत प्रसन्न भये। ता समय एक वैष्णव ने परमानंददास सों कह्यो, जो–मोकों कछू साधन बतावो सो मैं करों। तातें श्रीठाकुरजी आपु मेरे ऊपर प्रसन्न होय के कृपा करें। तब परमानंददास वा वैष्णव सों प्रसन्न होंय के कहे, जो–तुम मन लगाय के सुनो। जो सुगम उपाय है सो मैं कहूँ। या बात कों मन लगाय के सुनोगे तो फल–सिद्धि होयगी। सो या प्रकार प्रीत सों समाधान करि के परमानंददासने एक पद वा वैष्णव कों सुनायो। सो पद –

राग भैरव – प्रात समै उठि करिए श्रीलक्ष्मन सुत गान। प्रगट भए श्रीवल्लभ प्रभु देत भक्ति दान ॥१॥ श्रीविट्ठलेस महाप्रभु रूप ही सुहान। श्रीगिरिधर श्रीगिरिधर उदय भयो भान ॥२॥ श्रीगोविंद आनंदकंद कहा बरनों गुनगान। श्रीबालकृष्ण बालकेलि रूप ही सुहान ॥३॥ श्रीगोकुलनाथ प्रगट कियो मारग बखान। श्रीरघुनाथलाल देख मन्मथ ही लजान ॥४॥ श्रीयदुनाथ महाप्रभु पूरन भगवान। श्रीघनश्याम पूरन काम पोथी में ध्यान ॥५॥ पांडुरंग बिट्ठलेस करत वेद गान। 'परमानंद' निरखि लीला थके सुर विमान ॥६॥

सो या प्रकार यह कीर्तन परमानंददास ने गायो। यह सुनि के श्रीगुसांईजी और सगरे वैष्णव प्रसन्न भये। ता पाछें श्रीगुसांईजी

आपु परमानंददास सों पूछे, जो–परमानंददास ! अब तिहारो मन कहां है ? तब परमानंददासने यह कीर्तन सारंग राग में गायो। सो पद –

राग सारंग – राधे बैठी तिलक संवारति । मृगनैनी कुसुमाकर धरि नंदसुवनकौ रूप बिचारति ॥१॥ दरपन हाथ सिंगार बनावति बासर सम जुग ढारति। अंतर प्रीति स्यामसुंदरसों हरि संग केलि सम्हारति ॥२॥ बासर गत रजनी ब्रज आवत मिलत गोवर्द्धनधारी। 'परमानंदस्वामी' के संगम मुदित भई ब्रजनारी ॥३॥

सो या प्रकार जुगल स्वरूप की लीला में मन लगाय के परमानंददास देह छोड़ि के श्रीगोवर्द्धननाथजी की लीला में जायके प्राप्त भये। पाछें श्रीगुसांईजी गोपालपुर में आयके स्नान करिके पर्वतके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी कों उत्थापन कराये। पाछें सेन पर्यंत सेवा सों पहोंचिके अनोसर करवाय पर्वत तें उतरि अपनी बैठक में आय बिराजे। तब सब वैष्णवननें परमानंददास की देह को अग्निसंस्कार कियो और पाछें गोपालपुर में आय के श्रीगुसांईजी के आगे बहोत बड़ाई करन लागे। सो ता समय श्रीगुसांईजी आपु उन वैष्णवन के आगे यह वचन श्रीमुख सों कहे, जो–ये पुष्टिमारग में दोइ 'सागर' भये। एक तो सूरदास और दूसरे परमानंददास। सो तिनको हृदय अगाधरस, भगवल्लीला रूप जहां रत्न भरे हैं। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखसों परमानंददास की सराहना किये। सो वे परमानंददासजी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते। जिनके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं। सो अनिवर्चनीय है, सो कहां तांई कहिये।

वार्ता ॥८२॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, कुंभनदासजी गोरवा क्षत्री, जमुनावते रहते, जिनके अष्टछाप में पद गाइयत हैं, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश– ये कुंभनदासजी लीला में श्रीठाकुरजी के 'अर्जुन' सखा अंतरंग तिनको प्राकट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो अर्जुन सखा हैं और रात्रि की लीला में विसाखा सखी हैं, सो श्री स्वामिनीजी की। सो तिनको (विसाखाजी को) दूसरो स्वरूप कृष्णदास मेघन, सदा पृथ्वी परिक्रमा में श्रीआचार्यजी के संग रहते, और कुंभनदासजी सदा श्रीगोवर्द्धननाथजी के संग रहते। सो या भावतें कुंभनदासजी सखाभाव में अर्जुन सखारूप, और सखी भाव में विसाखारूप हैं। सो गिरिराज में आठ द्वार हैं। तामें एक द्वार आन्योर पास है। सो तहांकी सेवा के ये मुखिया हैं। और गाम को नाम 'जमुनावता' यासों कहत हैं, जो–श्रीयमुनाजी के प्रवाह, सारस्वत कल्प में दोय हते। एक तो जमुनावता होय कें आगरे के पास जात हतो, और एक चीरघाट होय श्रीगोकुल होयकें। आगें दोऊ धारा एक मिलि सारस्वत कल्प में बहती। और ता समय आगरा आदि गाम नाहीं हतो। दोऊ धारा एक मिलिके आगे को गई हती। सो चीरघाट तें धारा होयके गिरिराज आवती, तासों पंचाध्याई को रास 'परासोली' में चंद्रसरोवर ऊपर किये। सो ब्रजभक्त, अंतरध्यान के समय चंद्रसरोवर सों द्रुमलतान सों पूछत चली सो गोविन्दकुंड के पास होयके अप्सराकुंड ऊपर आयके श्रीठाकुरजी के चरणारविंद के दरसन भये, तासों अप्सराकुंड ऊपर चरनचिह्न हैं। तहां ते आगे चलिके राधा सहचरी की बेनी गुही, सो सिंदूर, काजर सगरो सिंगार कियो तासों वहां सिंदूरी, कजली और बाजनी सिला है। ता पाछें जब रुद्रकुंड ऊपर आयके राधा सहचरी कों मान भयो। सो श्रीठाकुरजी सों कह्यो, जो – मोसों तो चल्यो नाहीं जात है। तब श्रीठाकुरजी कांधे चढ़न (की कहिके ता) के मिष वृक्ष तरे ही अंतर्ध्यान भये। तब राधा सहचरी रुदन कियो, जो – 'हा नाथ रमणप्रेष्ठ क्वासि २ महाभुज ! दास्यास्ते कृपणया मे सखे दर्शय सन्निधिम्'। तासों वा कुंड को नाम 'रुद्रकुंड' है। सो अब तांई लोग वासों रुद्रकुंड कहत हैं। पाछें तहां सब गोपी आय मिली। पाछें आगे चलिके 'जान' 'अजान' वृक्ष सों पूछते पूछते जमुनावता श्रीजमुनाजीकी पुलिन में गोपिका गीत ('जयति तेऽधिकं') गायके सब भक्तनने रुदन कियो। तब श्रीठाकुरजी आपु प्रकट होयके फेरि 'परासोली' चंद्रसरोवर पें रास किये, सो श्रम भयो। तब श्रीयमुनाजी के जल में जलविहार किये। सो या प्रकार सारस्वत कल्पकी पंचाध्याई को रास श्रीगिरिराज के पास है। और व्रजभक्त ढूंढत–ढूंढत श्रीठाकुरजी के मिलनार्थ दूरि गई। सो अंधियारो देखिके उहां ते फिरे। 'तमः प्रविष्टमालक्ष्य ततो निववृतुर्हरे :'। इति।

सो यह अंधियारो श्यामढाक के आगे 'सामई' गाम हैं। सो तहां स्यामवन है,

सो महासघन। तातें वहां पंचाध्याई के अनुसार सगरे स्थल दरसन देत हैं। और कालीदह घाटतें हू श्रीवृंदावन कहत हैं। तहां हू बंसीवट है। तहां अनेक श्वेतवाराहकल्प में पंचाध्याई को रास उहां ही किये हैं। और सारस्वत कल्प में शरद्ऋतु किए, सो 'परासोली' श्रीगिरिराज ऊपर किये। पाछें वसंत चैत्र वैसाख को रास केसीघाट पास बंसीबट नीचे किये। सो या प्रकार रास दोऊ ठिकाने। परंतु मुख्य पंचाध्याई सारस्वतकल्प को रास गिरिराज को। या प्रकार लीला के भेद हैं। तासों 'जमनावता' में एक धारा श्रीयमुनाजी की सारस्वतकल्प में बहती, तासों वा गाम को नाम 'जमुनावता' है। सों नंदगाम बरसाने के मध्य संकेत पास धारा होयके श्रीयमुनावता आई। तासों संकेत के पास श्रीयमुनाजी के पधारिवे को चिह्न है। सो या प्रकार यातें कह्यो, जो–अबके जीव को विश्वास दृढ़ होत नाहीं है। सो सब चिह्नकों देखे, सुने तब विश्वास होय। और जब फल सिद्ध होय, तब भाव बढे, तासों खोलिके कहे।

वार्ता – प्रसंग १ – सो जमुनावता में कुंभनदास रहते। सो परासोली चंद्र सरोवर के ऊपर कुंभनदास के बाप दादान के खेत हते। तहां कुंभनदास खेती करते। सो परासोली में कुंभनदास खेत अर्थ बहोत रहत हते। उन कुंभनदास कों बालपने तें गृहासक्ति नाहीं, और झूठ बोलते नाहीं, और पापादिक कर्म नाहीं करते! सूधे ब्रजवासी की रीति सो रहते। जो जब कुंभनदास बड़े भये। तब 'जेत' (गांव) के पास बहुलावन है तहां कुंभनदास को ब्याह भयो, सो स्त्री साधारन आई, लीला संबंधी तो नाहीं। परंतु कुंभनदासजी सरीखे वैष्णव भगवदीयन को संग निष्फल जाय नहीं, सो उद्धार होयगो। परंतु अब ही श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगिरिराज ऊपर प्रगटे नाहीं। जब श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अपने पास बुलावेंगे, तब श्रीआचार्यजी आपु सरन लेयगें, और तब ये भगवदीय प्रसिद्ध होयगें। सो एक समय श्रीआचार्यजी आपु पृथ्वी परिक्रमा करत दक्षिन में झारखंड में पधारे। सो तब

श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीआचार्यजी सों कहे, जो–हम श्रीगोवर्द्धन में प्रकटे हैं, सो आपु यहां आयके हमकों बाहिर पधरायके हमारी सेवा जगत में प्रगट करि प्रकास करो। तब श्रीआचार्यजी आपु पृथ्वी परिक्रमा उहां झारखंड में राखिके सूधे ब्रज कों पधारे! तब दामोदरदास हरसानी, कृष्णदास मेघन, माधव भट्ट, नारायनदास और रामदास सिकंदर–पुरवारे ये पांच सेवक श्रीआचार्यजी के संग हते। सो तब श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धन पर्वत के नीचे आन्योर में सदूपांडे के द्वारपे एक चोतरा हतो तापे आय बिराजे। पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी के प्राकट्य को प्रकार श्रीआचार्यजी सदूपांडे, और उनके भाई माणिकचंद पांडे, नरो भवानी, ये सब सेवक भये हते तिनसों पूछ्यो। सो सब प्रकार ऊपर सदूपांडे की वार्ता में कहि आये हैं। पाछें रामदास चौहान पूछरी पास गुफा में रहते सो सेवक भये, तिनकों श्रीआचार्यजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा सोंपी। सो रामदास ब्रजवासी आदि औरहू सेवक भये। सो कुंभनदास 'जमुनावता' गाम में रहते। तहां ये समाचार सुने जो एक बड़े महापुरुष आन्योर में आये हैं। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीठाकुरजी श्रीगोवर्द्धन पर्वत में सों प्रकट करे हैं, और सदूपांडे आदि ब्रजवासी बहोत लोग सेवक भये हैं। तब कुंभनदास सुनिके अपनी स्त्री सों कहे, जो– आन्योर में चलिके श्रीआचार्यजी के सेवक हूजिये, सो इनकी कृपातें श्रीठाकुरजी कृपा करेंगे। सो तब स्त्रीने कही, जो–मैं चलूंगी, जो मेरे कोई संतति बेटा नहीं है, सो वे महापुरुष देंय तो होय। सो या प्रकार बिचार करिके दोऊ जनें श्रीआचार्यजी के

पास आयके दंडवत करी। सो तब श्रीआचार्यजी आपु पूछे, जो–कुंभनदास! आये? सो तब कुंभनदास दंडवत करि बिनती करी, जो–महाराज! बहोत दिनतें भटकत हतो; सो अब आपु मो ऊपर कृपा करो। सो कुंभनदास तो दैवीजीव हैं, सो श्रीआचार्यजी के दरसन करत ही श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान होय गयो। तब श्रीआचार्यजी आपु कुंभनदास सों कहे, जो–तुम स्त्री पुरुष दोउ जने न्हाय आवो। तब दोऊ जने संकर्षणकुंड में न्हायके श्रीआचार्यजी के पास आये। तब श्रीआचार्यजी आपु कुंभनदास और उनकी स्त्री कों नाम सुनाये। तब वा स्त्री ने श्रीआचार्यजी सों बिनती करजो–जो महाराज! आपु बड़े हैं, मेरे बेटा नाहीं है, तासों आपु कृपा करिके देऊ। तब श्रीआचार्यजी आपु कृपा करिके प्रसन्न होयके कहे, जो तेरे सात बेटा होयगें, तू चिंता मति करे। सो तब वह स्त्री अपने मन में बहोत प्रसन्न भई। तब कुंभनदास अपनी स्त्री सों कही, जो–यह कहा तेनें श्रीआचार्यजी के पास मांग्यो। जो श्रीठाकुरजी मांगती तो श्रीठाकुरजी देते। तब वा स्त्रीने कही, जो–मोकों चहियत हतो सो मैंने मांग्यो, और जो तुमकों चाहिये सो तुम मांगि लेहु। तब कुंभनदास चुप होय रहे। ता पाछें श्रीआचार्यजी आपु श्रीगोवर्द्धनधर को छोटो सो मंदिर बनवायके ता मंदिर में श्रीगोवर्द्धनधर कों पधरायके रामदास चौहान कों सेवा की आज्ञा दीनी। सो रामदास, सदू पांडे आदि ब्रजवासी सब सीधो सामिग्री ले आवते। सो दूध दही माखन श्रीगोवर्द्धननाथजी कों भोग धरिके ता महाप्रसाद सों रामदास निर्वाह करते। और ब्रजवासी,

जो सेवक कुंभनदास आदि भक्त, तिनकों श्रीआचार्यजी ने आज्ञा दीनी, जो–ये श्रीगोवर्द्धननाथजी हमारो सर्वस्व हैं, तासों इनकी सेवा में तुम तत्पर रहियो, और श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये बिना महाप्रसाद मति लीजियो। और श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा सावधानी सों करियो। सो कुंभनदास कीर्तन बहुत सुन्दर गावते। कंठहू इनको बहोत सुन्दर हतो। तासों कुंभनदास सों श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो–तुम समय समय के कीर्तन नित्य श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुनाइयो। सो प्रातःकाल श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों जगायके कुंभनदास कों कहे, जो–कछु भगवल्लीला वरणन करो। तब कुंभनदास श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिके पहले यह पद गायो। सो पद–

राग बिलावल – सांझ के साँचे बोल तिहारे। रजनी अनत जगे नंदनंदन आये निपट सवारे ॥१॥ आतुर भए नीलपट ओढे पीयरे बसन बिसारे। 'कुंभनदास प्रभु' गोवर्द्धनधर भले बचन प्रतिपारे ॥२॥

सो यह कीर्तन कुंभनदास के मुखतें सुनिके श्रीआचार्यजी आपु कहें, जो–कुंभनदास ! निकुंज–लीला संबंधी रस को अनुभव भयो ? तब कुंभनदास ने दंडवत कीनी और कह्यो, जो–महाराज ! आपु की कृपातें। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो–तिहारे बडे भाग्य हैं। जो–प्रथम प्रभु तुमकों प्रमेय बलको अनुभव बताये, तासों तुम सदा हरिरस में मगन रहोगे। तब कुंभनदास ने बिनती कीनी जो–महाराज ! मोकों तो सर्वोपरि याही रस को अनुभव कृपा करिके दीजिये। सो कुंभनदास सगरे कीर्तन युगल स्वरूप संबंधी किये। सो बधाई, पलना, बाललीला

गाई नाहीं। सो ऐसे कृपापात्र भगवदीय भये। या प्रकार कुंभनदासजी आदि वैष्णव ऊपर कृपा करि श्रीआचार्यजी दक्षिन के झारखंड में पृथ्वी-परिक्रमा छोड़िके पधारे हते, सो फेरि जीवन की ऊपर कृपा करन के अर्थ परिक्रमा करन पधारे !

वार्ता - प्रसंग २ - और यहाँ कुंभनदासजी नित्य सवारे 'जमुनावता' तें श्रीगिरिराज ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों आवते सो समय समय के कीर्तन करते। श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कुंभनदास सों सानुभावता जनावते सो संग खेलन लागे। और खेल की वार्ता करते। पाछें कछुक दिनमें एक म्लेच्छ को उपद्रव भयो, सो सगरे गाम कों लूटत मारत पश्चिमतें आयो। ताके डेरा श्रीगिरिराजतें पांच कोस आगे भये। तब सदूपांडे, माणिकचंद पांडे, रामदासजी, कुंभनदासजी ये चारि वैष्णवन नें अपने मन में विचार कियो, जो-यह म्लेच्छ बुरो आयो है, जो-भगवद्धर्म को द्वेषी है। तासों कहा विचार करनो ? सों ये चारों वैष्णव श्रीनाथजी के अंतरंग हते, सो इन सों श्रीगोवर्द्धननाथजी वार्ता करते। तासों इन चारयो वैष्णवन नें मंदिर में जायके श्रीनाथजी सों पूछी, जो-महाराज ! अब कैसी करें ? जो धर्म को द्वेषी म्लेच्छ लूटत आवत है। तासों आपु कृपा करिके आज्ञा करो सो करें। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी यह आज्ञा किये, जो-हमकों तुम टोंड के घने में पधराय के ले चलो। हमारो मन वहां पधारिवे को है। तब चारयों वैष्णव नें बिनती कीनी, जो-महाराज ! या समय असवारी कहा चहिये ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो-सदूपांडे के घर भैंसा है, सोई ले आवो, तापे चढ़िके चलूंगो। पाछें सदूपांडे वा भैंसा कों ले आये।

तब श्रीगोवर्द्धनाथजी वा भैंसा पे चढ़िके पधारे।

भावप्रकाश– सो वह भैंसा दैवी जीव हतो। सो यह लीला में श्रीवृषभानजी के घर की मालिन है। सो नित्य फूलन की माला श्रीवृषभानजी के घर करिके ले आवती। सो लीला में 'वृन्दा' याको नाम है। एक दिन श्रीस्वामिनीजी बगीची में पधारी। ता समय वृन्दा के पास एक बेटी हती, सो ताकों खवावती हती। सो याने उठिके न तो दंडवत कीनी और न समाधान कियो। तब हू श्रीस्वामिनीजी ने यासों कछु कह्यो नाहीं। ता पाछें श्रीस्वामिनीजी ने वृंदा सों कही, जो–तू श्रीनंदरायजी के घर जायके श्रीठाकुरजी सों समस्या सों हमारो यहां पधारिवो कहियो। तब श्रीस्वामिनीजी के वचन सुनिके वृंदा ने कही, जो–अबही मेरे माला करिके श्रीवृषभानजी कों पठावनी है, तासों मैं तो जात नाहीं। यह वचन सुनिके श्रीस्वामिनीजी ने यासों कही, जो–मैं यहां आई तब तेने उठिके सन्मान हू न कियो, और एक कार्य कह्यो सोऊ तोसों नाहीं बन्यो। तासों तू या बगीची में रहिवे योग्य नाहीं है। और तू यहां सों गिरिके भैंसा को जन्म लेहु। सो यह शाप श्रीस्वामिनीजी नें वा मालिनी कों दियो। तब तो यह मालिन श्रीस्वामिनीजी के चरणारविंद में जाय परी, और बहोत ही बिनती स्तुति करन लागी। और कही, जो – अब ऐसी कृपा करो, जो–फेरि मैं यहां आऊं। तब श्रीस्वामिनीजी ने यासों कही, जो – जब तेरे ऊपर चढ़िके श्रीठाकुरजी बन में पधारेंगे, तब तेरो अंगीकार होयगो। सो भैंसा को देह छोडिकें सखी–देह धरिके फेरि या बाग की मालिन होयगी। सो या प्रकार वह मालिन सदूपांडे के घर में भैंसा भई।

सो वाही भैंसा के ऊपर श्रीनाथजी आपु चढ़िके 'टोंड के घने' में पधारे, सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कों एक ओर तो रामदासजी पकड़े चले, और एक ओरतें सदूपांडे पकड़े रहे। और कुंभनदास और मानिकचंद पांडे बीच में थांभे जाय। सो मारग में कांटा बहोत लागे, वस्त्र सब फाटि गये, बहोत दुःख पायो। मारग आछो न हतो। सो वा 'टोंड के घना' में बीच में एक निकुंज है। तहां नदी (?) है, सो कुंभनदास और मानिकचंद पांडे ये दोउ जने श्रीनाथजी के आगे मारग बतावें, लता कांटा टारत जांय। सो या प्रकार 'टोंड के घने' में भीतर एक चौंतरा है

तहाँ छोटो सो सरोवर है, और एक गोल चौक मंडलाकार है। तहाँ रामदासजी और कुंभनदासजी श्रीनाथजी सों पूछे, जो-आपु कहाँ बिराजोगे ? तब श्रीनाथजी आपु आज्ञा किये, जो याही चौतंरा पे बिराजेंगे। सो तब श्रीनाथजी के नीचे भैंसा के ऊपर गादी डारे हते सो वही गादी चौंतरा ऊपर डारि बिछाई, तापें श्रीनाथजी कों पधराये। पाछें श्रीनाथजी रामदासजी सों आज्ञा किये, जो-तुम कछू भोग धरिके न्यारे ठाड़े होउ। तब रामदासजी तथा कुंभनदासजी मन में बिचारे, जो-कोई ब्रजभक्तन के मनोरथ पूरन करिवे के लिये यहां लीला करी है। पाछें रामदासजी थोड़ी सामग्री भोग धरे। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहें, जो-सब सामग्री धरि देउ। सो रामदासजी उतावली में दोय सेर चून को सीरा कर लाये हते, सो सगरो भोग धरे। पाछें रामदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी तें कहे, जो-सगरी सामग्री भोग धरी, परि यहाँ रहनो होय तब कहा करेंगे ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो-यहां रहनो नाहीं है। जो इतनो ही काम हतो। पाछें कुंभनदास सहित सदूपांडे माणिकचंद पांडे, और रामदासजी ये चारों जन एक वृक्ष की ओट में जाय बैठे। सो तब निकुञ्ज के भीतर श्रीस्वामिनीजी अपने हाथ सों मनोरथ की सामग्री करी हती सो ले के श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास पधारी। पाछें मिलिके भोजन करनो विचार कियो। सो सामग्री करत रञ्चक श्रीस्वामिनीजी को श्रम भयो। तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु श्रीमुखतें कुंभनदास सों आज्ञा किये, जो-कुंभनदास ! तू कछू या समय कीर्तन गावे तो मन प्रसन्न होय। और मैं सामग्री अरोगत हौं, तासों तू कीर्तन

गाउ। सो कुंभनदास अपने मन में विचारे, जो–प्रभुन को मन कछू हास्य प्रसङ्ग सुनिवे को है। और कुंभनदास आदि चारयों वैष्णव भूखे हते और कांटाहू लगे हते, सो ता समय कुंभनदासने एक पद गायो। सो पद –

राग सारंग – भावत है तोहि टोंड कौ घनो। कांटा लागे गोखरू भागे फट्यो जात यह तनो ॥१॥ सिंहै कहा लोंकरी कौ डर यह कहा बानिक बन्यो। 'कुंभनदास' तुम गोवर्द्धनधर वह कौन रांड ढेढ़नी कौ जन्यो ॥२॥

सो यह कीर्तन सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी और श्रीस्वामिनीजी बहोत प्रसन्न भये। और सब वैष्णव हू प्रसन्न भये। ता पाछें माला के समय कुंभनदास ने यह पद गायो। सो पद –

राग मालकोस – बोलत स्याम मनोहर बैठे कमल खंड और कदम की छैयां। कुसुमित द्रुम अलि पीक गूंजत कोकिला कल गावत तहियां ॥१॥ सुनत दूतिका के बचन माधुरी भयो हुलास तन मन मह्यां। कुंभनदास प्रभु ब्रज जुवति मिलन चली रसिक कुंवर गिरिधर पहियां ॥२॥

यह पद कुंभनदास ने गायो, सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु बहोत प्रसन्न भये। तब श्रीस्वामिनीजी नें श्रीगोवर्द्धनधर सों पूछी, जो–तुम कौन प्रकार पधारे ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कही, जो–सदूपांडे के घर भैंसा हतो सो वा उपर चढ़िके पधारे हैं। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी के वचन सुनिके श्रीस्वामिनीजी आपु वा भैंसा की ओर देखिके कृपा करिके कहे, जो–यह तो मेरे बाग की मालिन है, सो मेरी अवज्ञा तें भैंसा भई परन्तु आज याने भली सेवा करी, तासों अब याको अपराध निवृत्त भयो। सो या प्रकार कहि, नाना प्रकार की केलि टोंड के घनेमें करिके श्रीस्वामिनीजी तो बरसाने में पधारे।

भावप्रकाश- सो तहां कांटा बहोत हते, सो श्रीस्वामिनीजी ऊहां कैसे पधारे ? यह शंका होय तहां कहत हैं। जो – ये ब्रज के वृक्ष परम स्वरूपात्मक हैं, सो जहां जैसी इच्छा होय सो तहाँ तैसी कुंजलता फल फूल होय जात हैं। सो कबहू सकल कांटा तो यह लौकिक लोगन कों दीसत हैं। सो तहाँ कुंज में सब ब्रजभक्त सहित श्रीठाकुरजी आप लीला करत हैं। सो तहां गोपन कों और मर्यादा वारेन कों यह कांटान की आड़ होत है, (नौंतर) सघन बन होत है। सो ब्रज के भक्त सदा सेवा में तत्पर रहत हैं, सो तासों संदेह नाहीं है। और श्रीगोवर्द्धननाथजी भैंसा ऊपर चढ़िके टोंड के घना में पधारे। सो ता समय चार वैष्णव संग हते। सो मारग में ब्रजवासी लोग बहोत मिलते, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों देखे नाहीं, जाने जो–भैंसा लिये चारि जन जात हैं। सो कांटा न होय तो सगरे ब्रजवासी तहाँ आवे। या प्रकार केवल ब्रजभक्तन कों सुख देनार्थ श्रीठाकुरजी की लीला रस है। सो लौकिक में डरिके छिपि के पधारनो ; सो यह रस है। ईश्वरता को भाव नाहीं बिचारनो है। ईश्वरता में कहे तो भजनो कहा ? डर, जहाँ माधुर्य रस में है सो प्रेम सों; ईश्वरता में डर नाहीं है। या प्रकार रसिक जन नेत्रन सों जो देखत हैं सो तिनकों आनंद उपजत है, सो ज्ञान नेत्रन– अलौकिक नेत्रन–सों लीलारस को अनुभव होत है।

सो जब श्रीस्वामिनीजी बरसाने पधारे, तब चारयों भगवदीयन कों श्रीगोवर्द्धननाथजी ने अपने पास बुलाये।

भावप्रकाश – सो तहाँ यह संदेह होय जो–यह भगवदीय तो अंतरंग हैं। सो जब लीला को अनुभव है तो फेरि श्रीगोवर्द्धननाथजी इन कों न्यारे ओट में क्यों बिदा किये ? तहाँ कहत हैं, जो–ये भगवदीय यद्यपि सखी रूप सों लीला को दरसन करत हैं, तोऊ श्रीस्वामिनजी कों अपने हस्त सों हास्य विनोद करत आरोगावनो है, सो पास सखी होय तो लज्जा, सङ्कोच रहे। सो ताही सों निकुंज में जब दोउ स्वरूप लीला करत हैं, तब सखी सब जालरंध्र व्हेके लतान की ओट लीला को सुख अवलोकन करत हैं। सो तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी ने भगवदीयन कों नेक ओट में बैठाये हते, सो बुलाये।

सो जब चारयों वैष्णव आये, तब श्रीगोवर्द्धननाथजी सदूपांडे सों कह्यो, जो–अब देखो उपद्रव मिट्यो ? तब सदूपांडे टोंड के घने सों बाहिर आये,सो इतने में श्रीगोवर्द्धन सों समाचार

आये, जो-वह म्लेच्छ की फौज आई हती सो पाछी गई हैं। तब सदूपांडेने आयके श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो, जो-वह फौज तो म्लेच्छकी भाजि गई। तब श्रीगोवर्द्धनधर कहे, जो-अब तुम मोकों गिरिराज ऊपर मंदिर में पधरावो। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कों भैंसा ऊपर बैठायें। पाछें चारयों वैष्णवन ने श्रीनाथजी कों श्रीगिरिराज पर्वत ऊपर मंदिर में पधराये। तब भैंसा पर्वत सों उतरिके देह छोड़िके फेरि लीला में प्राप्त भयो। पाछे सगरे ब्रजवासी श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन करिके बहोत हरषित भये, और कहन लागे, जो - धन्य है, देवदमन ! जो इनके प्रतापसों, ऐसो उपद्रव भयो हतो सो एक क्षणमें मिटि गयो, सो कछू जान्यो हू न पर्यो। तब कुंभनदास ने श्रीनाथजी के आगे यह पद गायो। सो पद -

राग श्रीराग - जयति जयति हरिदासवर्यधरने। वारि वृष्टि निवारि, घोख आरति टारि देवपति मान भंग करने ॥१॥ जयति पट पीत दामिनी रुचिर वर मृदुल अंग सावल जलद वरने। कर अधर बेनु धरि गान कल-रव सब्द सहज ब्रज युवती जन चित्त हरने ॥२॥ जयति वृन्दा विपिन भूमि डोलनि अखिल लोक-वंदनि अंबुरुह चरने। तरनि-तनया-तीर विहार नंदगोप-कुमार 'दासकुंभन' नमित तुव शरने ॥३॥

राग श्रीराग - कृष्ण तरनी तनया तीर रासमंडल रच्यो अधर कर मधुर सुर बेनु बाजे। जुवती जन जूथ संग निर्तत अनेक रंग निरखि अभिमान तजि काम लाजे ॥१॥ श्यामतन पीत कौशेय सुभ पद-नख-चन्द्रिका सकल भुव तिमिर भाजे। ललित अवतंस भ्रुव भु धनुस लोचन चपल चितवनि मनों मदनबान साजे ॥२॥ मुखर मंजीर कटि किंकनी कुनीत रव वचन गंभीर मनु मेघ गाजे। 'दास कुंभन' नाथ हरिदासवर्यधरन नखसिख स्वरूप अद्भुत बिराजे ॥३॥

सो ऐसे कीर्तन कुंभनदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी कों बहोत सुनाये। सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये। सो कुंभनदास के पद जगत में प्रसिद्ध भये।

वार्ता – प्रसंग ३ – सो कुंभनदासने बहोत पद बनाये, सो जहां तहां लोग गावन लागे। ता पाछें एक कलावत ने एक पद कुंभनदासजी को सीख्यो, सो देसाधिपति के आगे गायो। सो सीकरी फतेहपुर में देसाधिपति के डेरा हते सो तहां यह पद गायो। सो पद –

राग धनाश्री – देखरी आवनी मदन गोपाल की। सक्रवाहन– गति निरख लाजत गजगति अनूप लटक चालकी ॥१॥ स्याम तन कटि बसन मन हरन सुन्दरता उर श्रीमाल की। भोंह धनुस सजि मनहु मदन सर चितवनी लोचन विसाल की ॥२॥ रेनुमण्डित कुंतल–अलक सोभा केसर कौ तिलक भाल की (य) 'दास कुंभन' चारु रास मोहे जगत गोवर्द्धनधर कुंवर रसाल की ॥३॥

सो यह कीर्तन सुनिके देसाधिपति को मन वा पद में गडि गयो, सो माथो धुन्यो और कह्यो, जो–ऐसे ऐसे महापुरुष भूमि पर होय गये, सो जिनकों ऐसे दरसन परमेश्वर के होते। तब वा कलावत ने देसाधिपति सों कही, जो–साहिब ! वे महापुरुष पद करिवे वारे यहां वही हैं। सो तब यह देसाधिपति वा कलावतके ऊपर बहोत प्रसन्न होयके पूछ्यो, जो–वे महापुरुष कहां हैं ? तब कलावत ने कही, जो–श्रीगोवर्द्धन के पास 'जमुनावतो' गाम है, सो तहां वे महापुरुष रहत हैं, और कुंभनदासजी उनको नाम है। तब देसाधिपतिने कही जो–उनकों यहां ही बुलावो, जो–हम उन सों मिलेंगे। पाछें देसाधिपतिने अपने मनुष्य और सब तरहकी असवारी कुंभनदास कों लेवे कों पठाई। सो जमुनावता गाममें भेजी। तब वे मनुष्य असवारी लिवाये, जमुनावता गाम में आये। ता समय कुंभनदासजी तो जमुनावता में हते नाहीं, परासोली चंद्रसरोवरि में अपने खेत ऊपर बैठे

हते। सो तब उन मनुष्यन ने जमुनावता में आय के पूछी। पाछें खबरि पायके गाम में तें एक मनुष्य कों संग लेके वे लोग कुंभनदासजीके पास आये। तब देसाधिपतिके मनुष्यनने आयके कुंभनदाससों कह्यो, जो–तुमकों देसाधिपतिने बुलाये हैं। तब कुंभनदास ने कही, जो–हम तो गरीब ब्रजवासी हैं, सो काहूके चाकर नाहीं हैं। तासों हमारो देसाधिपति सों कहा काम है ? जो मैं चलूँ। तब देसाधिपतिके मनुष्य ने कह्यो, जो–बाबा साहिब ! हम तो कछु समुझत नाहीं हैं। सो हमकों तो देसाधिपति को हुकम है, जो–तुम कुंभनदासजी कों ले आवो, सो ये घोड़ा पालकी तिहारी असवारी के लिये आये हैं। सो तिनके ऊपर तुम असवार होयके चलिये। हम आये हैं जो देसाधिपति ने भेजे हैं, सो हम तुमकों लेके जांयगे। और जो हम न ले जांय तो देसाधिपति को हुकम टरें, तो देसाधिपति हमकों मरवाय डारे। तासों आपु चलिये, और उनसों मिलिके चले आईये। तब कुंभनदास अपने मनमें बिचार कियो, जो–यह आपदा जो आई है, तासों अब गये बिना चले नाहीं। तासों आपदा होय सोऊ भुगतनो। सो कुंभनदास कों देसाधिपति ने असवारी पठाई हती, सो तिनके संग मनुष्य आये हते सो उनने कह्यो, जो – बाबा साहिब ! घोड़ा तथा पालकी पर चढ़िके बेगि चलिये। तब कुंभनदास ने उन मनुष्यन सों कह्यो, जो–मैं तो कबहू असवारी में बैठ्यो नाहीं। हम सों तुम कछू बोलो मति, जो–हम जोड़ा पहरि के पाँयन चलेंगे। तब उन मनुष्यन ने बहोत बिनती कीनी, परि कुंभनदास तो असवारी में बैठे नाहीं, सो जोड़ा पहरिके

पाँयन चले। सो फतेपुर सीकरी में देसाधिपति के डेरान के पास गये। तब देसाधिपति कों खबरि करवाई, जो – कुंभनदास महापुरुष आये हैं। तब देसाधिपति ने कुंभनदास कों भीतर बुलवाये, तब भीतर गये। पाछें देसाधिपति ने कही, जो – बाबा साहिब आगे ! आवो। तब कुंभनदासजी तनिया पहरे, फटी मेली पाग, पिछोरा, टूटे जोड़ा सहित देसाधिपति के आगे जाय ठाड़े भये। तब देसाधिपति ने कही जो बाबा साहिब ! बैठो। सो तहां जड़ाउ रावटी ही, तामें मोतिन की झालरी लागि रही है, और सुगंध की लपट आवत है। परंतु कुंभनदासजी के मन में महादुःख, जो–जीवते मानो नरक में बैठ्यो हूँ। (और बिचारे जो) यासों तो मेरे ब्रज के रुख आछे हैं। जहाँ साक्षात् श्रीगोवर्द्धनधर खेलत हैं। सो या प्रकार कुंभनदासजी अपने मन में विचार करत हते, इतने में देसाधिपति बोल्यो, जो–बाबा साहिब ! तुमने विष्णुपद बहोत किये हैं। तासों तिहारे मुखतें मैं कछू विष्णुपद सुनूँगो, तासों आप कोई विष्णु–पद गावो। तब देसाधिपति के बचन सुनिके एक तो कुंभनदास मन में कुढ़ि रहे हते और दूसरे देसाधिपति ने गायवे की कही। तब कुंभनदास के मन में बहोत बुरी लगी। तब कुंभनदास अपने मनमें बिचार कियो, जो–गाये बिना छुटकारो होयगो नाहीं। और म्लेच्छ के आगे तो श्रीठाकुरजी की लीला के पद गाये जाय नाहीं। सो तासों मैं कहा गाऊँ ? जो मेरी बानी के सुनिवेवारे तो श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं और या म्लेच्छ ने मोकों बलाइके श्रीगोवर्द्धननाथजी सों बिछोयो करायो है। तासों याकों कछू

ऐसो सुनाऊँ जो–यह बुरो माने तो आछो । और बुरो मानि के मेरो कहा करेगो ? तब कुंभनदास के मनमें यह बात आई – 'जाकों मनमोहन अंगीकार करें, एको केस खसै नहीं सिरतें जो जग बैर परे ।' सो यह विचारिके एक नयोपद करिके कुंभनदास ने देसाधिपति के आगे गायो । सो पद –

राग सारंग – भक्तन कों कहा सिकरी काम । आवत जात पन्हैया टूटी बिसर गयो हरि नाम ॥१॥ जाको मुख देखे दुःखे उपजे ताकों करनों पर्‍यो प्रनाम । 'कुंभनदास' लाल गिरिधर बिनु यह सब झूँठो धाम ॥२॥

सो यह पद कुंभनदासने गायो सो सुनिके देसाधिपति अपने मन में बहोत कुढ़्यो । सो पाछें उनने अपने मन में बिचारी, जो–इनकों कछु लेवे को लालच होय तो ये मेरी खुसामद करें । जो–इनकों तो अपने ईश्वर सों काम हैं । यह बिचारिके अकबर पात्साह ने कुंभनदास सों कह्यो, जो–बाबा साहिब ! मोकों कछु आज्ञा फरमावो सो मैं करूँ । तब कुंभनदास ने कही, जो–आज पाछें मोकों कबहूँ बुलाइयो मति । तब देसाधिपतिने कुंभनदास कों विदा किये । सो तब कुंभनदास उहां ते चले, सो मारग में आवत कुंभनदास के मन में श्रीगोवर्द्धननाथजी को बिरह कलेश (भयो) जो–अब मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी को मुख कब दैखौं ? सो ऐसें बिचार करत मारग में आवत कुंभनदास ने विरह को पद गायो । सो पद –

राग धनाश्री – कब हौं देखि हों इन नैननु ! सुंदर स्याम मनोहर मूरति अंग अंग सुख दैननु ॥१॥ वृन्दावन बिहार दिन दिन प्रति गोप – वृन्द संग लेननु । हँसि हँसि हरखि पतौवनि पीवनु बाँटि बाँटि पय फेननु ॥२॥ 'कुंभनदास' केते दिन बिते किए रेन सुख सैननु । अब गिरिधर बिनु निसि अरु बासर मन न परत कछु चैननु ॥३॥

सो ऐसे पद मारग में गावत कुंभनदास श्रीगिरिराज

ऊपर आय श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये। सो दोय प्रहर बीते, सो कुंभनदास कों मानों दोय जुग बीते। ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी को श्रीमुख देखत ही सगरो दुःख बिसरि गयो। ता समय कुंभनदास ने एक पद गायो। सो पद –

राग धनाश्री – नैन भरि देख्यो नंदकुमार। ता दिन तें सब भूलि गई हौं बिसरयो पति – परिवार॥१॥ बिनु देखे हौं बिबस भई री अंग–अंग सब हारि। तातें सुधि है सावरी मूरति लोचन भरि भरि वारि॥२॥ रूपरासी परिमित नहीं मानों कैसे मिले कन्हाई। 'कुंभनदास प्रभु' गोवर्द्धनधर मिली बहुरि उर लाई॥३॥

राग धनाश्री – हिलगन कठिन है या मन की। जाके लिये देखि मेरी सजनी लाज गई सब तन की॥१॥ धरम जाउ और लोग हसौ सब, अरु आवो कुल–गारी। सो क्यों रहे ताहि बिनु देखे जो जाकौ हितकारी॥२॥ रस–लुब्ध एक निमिष नहीं छांडत ज्यों अधीन मृग गाने। 'कुंभनदास' यह सनेह मरम कौ श्रीगोवर्द्धनधर जाने॥३॥

सो ऐसे पद कुंभनदास ने बहोत ही गाये। सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कहे, जो–कुंभनदास! तू धन्य है। जो – मेरे बिना एक छिन तोकों कल नाहीं है। तासों मोहू कों तो बिना कछू सुहात नाहीं है। सो या प्रकार कुंभनदासजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी की परस्पर प्रीति हती।

वार्ता – प्रसंग ४ – और एक समय मानसिंह देसदेस में दिग्विजय करिके जीतिके आगरे में देसाधिपति के पास आयो। तब देसाधिपति सों सीख मांगि के अपने देस कों चल्यो। तब राजा मानसिंह अपने मन सों बिचारयो, जो – बहोत दिन में आयो हूँ, सो श्रीमथुराजी में न्हायके अपने देस जाऊं तो आछो है। सो राजा मानसिंह यह बिचारिके श्रीमथुराजी में आयो। तहां विश्रांत घाट ऊपर न्हायो। तब चोबेनने मिलिके कह्यो, जो –

श्रीकेसोरायजी श्रीठाकुरजी के दरसन कों चलो। सो गरमी ज्येष्ठ मास के दिन और मथुरिया चोबेनने राजा कों आवत जानिके श्रीकेसोरायजी कों जरीकी ओढ़नी, वागा, पिछवाई, चंदोवा सब जरी के किये। सोने के आभूषण पहिराये। सो दरसन करिके राजा मानसिंह ने अपने मन में कह्यो, जो – इनने मेरे दिखायवे के लिये श्रीठाकुरजी कों इतनी जरी लपेटी है। पाछें भेट धरिके चले। पाछें उनने कही, जो–वृंदावन में श्रीठाकुरजी के मंदिर हैं, सो तहां दरसन कों चलेंगे। पाछें राजा मानसिंह श्रीवृंदावन में आयो। सो श्रीवृंदावन के संत महंतनने सुनिके मनमें बिचारी, जो–यहां राजा मानसिंह दरसन कों आवेगो। यह जानि के अपने श्रीठाकुरजी के लिये भारी भारी जरी के चीरा, वागा, पटका, सूथन, जरी को आढ़नी भारी भारी उढ़ाई, और सोने के आभूषण पहराये। पाछें राजा मानसिंह आयके दोय चार ठिकाने बड़े – बड़े मंदिर में दरसन करि भेट किये। गरमी बहोत लगी सो डेरान पें आयो और कह्यो, जो–ये मोकों दिखायवे के लिये कियो है। ता पाछें राजा मानसिंह वृंदावन सों चल्यो, सो तीसरे प्रहर श्रीगोवर्द्धन में आयो। तब काहूने कही, जो–श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसनकों चलोगे ? तब राजा मानसिंहने कह्यो, जो– श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन तो अवश्य करने हैं। सो तब गोपालपुर में आयके दरसन को समय पूछ्यो, तब काहूने कही, जो–उत्थापन के दरसन होय चुके हैं। और भोग के दरसन की तैयारी है। तब यह सुनिके राजा मानसिंह पर्वत की ऊपर चढ़्यो, सो महा गरमी पड़ै। सो उघारे पांव राजा गरमी में व्याकुल होय ऊपर गयो। सो तब ही भोग के किंवाड़ खुले हते। सो

श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करत ही राजा मानसिंह के नेत्र सीरे होय गये। सो ऊन दिनन में श्रीगोवर्द्धननाथ जी की सेवा बड़े वैभव सों होत ही। सो ऊष्णकाल के दिन हते, तातें गुलाब के जल सों छिरकाव भयो हतो, और अरगजा की लपट आवत है, और सुंगध आवत है, और दोहरो पङ्खा होत है। सुपेद पाग परदनी को सिंगार, श्रीकण्ठ में मोतीन की माला, और मोतीनके करनफूल और मोतीनके सूक्ष्म आभूषन। सो सुगंध सहित सीरी व्यारि लागी। सो राजा मानसिंह को रोम-रोम सीतल भयो। सेवा रीति देखि के राजा मानसिंहने कह्यो, जो-सेवा तो यहां है। जो श्रीठाकुरजी सुख सों बिराजे हैं। सो साक्षात् श्रीकृष्ण प्रगट भये सुने हते श्रीभागवत में। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी यही हैं। तासों आजु मेरे बड़े भाग्य हैं। जो मैंने ऐसो दरसन पायो है। ता समय श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे कुंभनदासजी पद गावत हते। सो जैसे श्रीगोवर्द्धनधर कोटि कन्दर्प लावण्य स्वरूप मन हरन, और तैसे रसरूप कुंभनदासजीने पद गाये। सो पद -

राग नट - रूप देखि नैनां पलक लगे नहीं। गोवर्द्धनधर के अंग अंग प्रति निरखि नैन मन रहत तहीं॥१॥ कहा री कहों कछु कहत न आवे चित्त चोरयो वे मांग दहीं। 'कुंभनदास' प्रभु के मिलिवेकी सुंदर बात सखियन सों जु कही॥२॥

राग नट - पूतरी पोरिया इनके भए री माई। को रोके या मग आवत खंजन छोरि दए पलक न कपाट दिये री माई॥१॥ ठाढे रहत प्रेम के बाढ़े निसबासर सब सुख चितए री माई। 'कुंभनदास' लाल गिरिधरन मन के भाजन फोरि ढँढोरि लिये री माई॥२॥

राग श्रीराग - आवत गिरिधर मन जू हरयो हो। हों अपने घर सचु सों बैठी निरखि वदन अचरा बिसरयो हो॥१॥ रूप निधान रसिक नंदनंदन निरखि नैन धीरज न धरयो हो 'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धनधर अंग अंग प्रेम पीयूष भरयो हो॥२॥

सो एसे पद कुंभनदासजीने गाये। ता पाछें भोग को समय

होय चुक्यो तब टेरा आयो। पाछें राजा मानसिंह दंडवत करिके अपने डेरान में आयो। ता पाछें सेन आरती के समे कुंभनदासजी ने यह पद गायो। सो पद –

राग केदारो – लाल के बदन पर आरती वारों ॥ चारु चितवनि करों साज नीकी युक्ति बाती अगनित घृत कपूर सो बारों ॥१॥ संख धुनि भेरि – मृदंग झालर झाँझ ताल घंटा बाजे बहुत विस्तारों। गाऊं सामल सुजस रसना सुखस्वाद रस परम हरख तन चमर कर डारों ॥२॥ कोटि उद्योत रविकांति अंग अंग छबि सकल भूलोक को तिमिर टारों ॥ 'दासकुंभन' पिय लाल गिरिधरन को रूप देखि नयनन भरि भरि निहारों ॥३॥

सो या प्रकार सनेह के कीर्तन गाय अपनी सेवा सों पहोंचि के कुंभनदासजी अपने घर जमुनावता में आये। सो ऊहां राजा मानसिंह अपने डेरान में जाय के अपने मनुष्य के आगे श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा सिंगार की वार्ता कहन लाग्यो। और कह्यो जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे विष्णु पद गावत हते, सो कौन हतो ? जो एसे पद गाये जो–मनमें पेंठि गये हैं। ऐसे पद आज तांई मैंने कबहू सुने नाहीं। तब एक ब्रजवासी ने कह्यो, जो–ए गोरवा हैं और कुंभनदासजी इनको नाम हैं। जो– अपनी खेती में अन्न होय सो ताही सों निर्वाह करत हैं। जो– तुमने सुने ही होयगें, जो–आगे देसाधिपति ने बुलाये हते, परंतु कुंभनदासजी कछू लिये नाहीं। जो ये महापुरुष हैं। सो तब राजा मानसिंह ने कह्यो, जो– आज तो रात्रि भई हैं यातें काल सवारे हमहू इनसों मिलेंगे। सो तब प्रातःकाल राजा मानसिंह उठिके श्रीगिरिराज की परिक्रमा करत परासोली में आयो। सो परासोली में चंद्रसरोवर हैं। तहां कुंभनदासजी न्हाय के खेत ऊपर बैठे हते। सो इतने ही में श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कुंभनदास

के पास पधारे। सो श्रीमुख देखत ही कुंभनदासजी श्रीनाथजी सों कहे, जो–बाबा ! आगे आवो। तब श्रीनाथजी आपु कुंभनदासजी की गोद में बैठिके कहे, जो–कुंभनदास ! मैं तोसों एक बात कहन आयो हूँ। सो या प्रकार कहत हते, इतने में राजा मानसिंह कुंभनदास के पास आयो। सो ताही समय श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु भाजि के डरि के एक वृक्ष की ओट में जाय के ठाढ़े भये। सो ताही समय कुंभनदासजी की दृष्टि तो एक श्रीगोवर्द्धननाथजी के संग गई। सो जहाँ श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाढ़े हते सो ताही ओर कों देख्यो करें। तब राजा मानसिंह कुंभनदास कों प्रणाम करिके पास बेठ्यो, परंतु कुंभनदासजी तो राजा मानसिंह की ओर दृष्टि हू नाहीं किये। सो कुंभनदासजी की एक भतीजी हती। सो जमुनावते सों बेझरिको चूंन कठोटी में करि, लेके कुंभनदास कों रसोई करिवे के लिये लावत हती। सो या भतीजी सों एक ब्रजवासी ने कह्यो, जो–तू बेगि जा। जो–कुंभनदासजी पास राजा गयो है सो वह कछू देवे तो तू लीजियो। क्यों, जो–कुंभनदासजी तो छूवेंगे हू नाहीं। तब यह भतीजी बेगि ही कुंभनदासजी के पास आई। तब कुंभनदासजी की दृष्टि एक वृक्ष के ओर देखिके कहे, जो–बाबा ! राजा बैठ्यो है। सो कछू इनको समाधान करो। तब कुंभनदासजी कहे, जो–मैं कहा करूँ जो बैठ्यो है तो। जो–कछू बात कहत हते सोऊ भाजि गये। सो अब बात कहेंगे के, नाहीं कहेंगे ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु सेन ही में कुंभनदासजी सों कहे, जो–मैं तिहारे ऊपर बहोत प्रसन्न हूँ। जो–मैं बात कहूँगो तू चिंता

मति करे। तब कुंभनदासजीको चित्त ठिकाने आयो। सो कुंभनदासजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी की वार्ता राजा आदि काहू ने जानी नाहीं। पाछें कुंभनदासजी ने भतीजी सों कह्यो, जो-बेटी! आसन और आरसी लावे, तो मैं तिलक करि लेऊं। तब भतीजी ने कह्यो, जो-बाबा! आसन (घासको) पडिया (भेंसकी पाडी) खाय के आरसी कठोटी को जल पी गई। तब कुंभनदासजी ने कह्यो, जो-आरसी करि ले आऊ तो आछो। यह बात सुनिके राजा मानसिंह ने अपने मन में कह्यो, जो-आसन खाय के आरसी पडिया पी गई! सो कहा? सो इतने ही में भतीजी एक पूरा घास को और एक कठोटी में पानी भरि के ले आई। सो पूरा को आसन बिछाय दियो सो ता पूरा पर कुंभनदासजी बैठि के कठोटी में पानी में मुख देखि के तिलक करन लागे। तब राजा मानसिंह ने अपने मन में जान्यो, जो-कुंभनदासजी के द्रव्य को बहोत संकोच हैं, जो आसन आरसी तिलक करवे की नाहीं है। सो कुंभनदासजी त्यागी सुनत हते सो देखे। तब राजा मानसिंह ने आरसी सोने की जड़ाऊ घर में जडी ऐसी मनुष्य सों मँगाई। और पाछे वह आरसी कुंभनदासजी के आगे धरिके कह्यो, जो-बाबा साहिब! यामें मुख देखिके तिलक करिये। तब कुंभनदासजी कहे, जो-अरे भैया! मैं याकों धरूंगो कहां? हमारे तो यह छानि के घर हैं। सो यह आरसी हमारे घर में होय तो याके पीछे कोई हमारो जीव लेय, तासों हमारे नाहीं चहियत है। तब राजा मानसिंह ने मन में बिचारी जो-ये आरसी लेके कहा करेंगे? जो-कहा याकों बेचन जांयगे? यह तो इनके काम की नाहीं है।

तासों कछू एसो द्रव्य देऊं जो जनमादि भरिके खायो करें। तब हजार मोहौर की थेली कुंभनदासजी के आगे धरी। तब कुंभनदासजी ने कही, जो-यह हमारे काम की नाहीं है। हमारे तो खेती होत है, तों जो धान उपजत हैं सो हम खात हैं। और कछू हमको चहियत नाहीं। तब राजा मानसिंह ने कह्यो, जो-तिहारो गाम जमुनावता है, सो ताको मैं तुमकों लिख्यो करि देऊं। तब कुंभनदासजी ने राजा मानसिंह सों कह्यो, जो-मैं ब्राह्मण तो नाहीं, जो-तेरो उदक लेऊं। और जो तेरे देनो होय तो और काहू ब्राह्मण कों दीजियो, मोकों तिहारो कछु नाहीं चहियत है। तब राजा मानसिंह ने कह्यो, जो-तुम मोकों अपनो मोदी बतावो, सो ताके पास सों सीधो सामान लियो करो। तब कुंभनदासजीने कही, जो-जैसे हम हैं सो तैसे ही हमारो मोदी है। तब राजा मानसिंह ने कह्यो, जो-बतावो तो सही, जो-मैं वाको देऊंगो। तब कुंभनदासजी ने एक करील को वृक्ष दिखायो, और एक बेर को वृक्ष दिखायके कह्यो, जो-उष्णकाल में तो मोदी करील है, सो फूल और टेंटी देत है। और सीतकाल को मोदी बेरको झाड़ है। सो बेर बहोत देत हैं। सो ऐसे काम चल्यो जात है। तब राजा मानसिंहने कही, जो-धन्य है। जिनके वृक्ष मोदी हैं, जो मैंने आज तांई बड़े बड़े त्यागी वैरागी देखे, परंतु ये गृहस्थ, सो ऐसे त्यागी हैं। सो ऐसे धरती पर नाहीं हैं। सो तब राजा मानसिंह कुंभनदासजी कों प्रणाम करिके कह्यो जो-बाबा साहिब ! मोसों कछू तो आज्ञा करो। तब कुंभनदासजी कहे, जो-हम कहेंगे सो करोगे ? तब राजा मानसिंहने कही, जो-

तुम आज्ञा करो सोई मैं अपनो परम भाग्य मानिके करूंगो। तब कुंभनदासजी ने कही, जो-आज पाछें तुम हमारे पास कबहू मति आइयो, और हम सों कछु कहियो मति। तब राजा मानसिंह ने दंडवत करिके कही, जो-तुम धन्य हो, माया के भक्त तो मैं सगरी पृथ्वी में फिरचो, सो बहोत देखे, परंतु श्रीठाकुरजीके सांचे भक्त तो एक तुम ही देखे। सो यह कहिके राजा मानसिंह चल्यो गयो। तब भतीजी ने पास आयके कुंभनदासजी सों कही, जो-घरमें तो कछू हतो नाहीं, सो राजा देत हतो सो क्यों न लियो ? तब कुंभनदासजी कहे, जो-बैठि रांड ! श्रीगोवर्द्धननाथजी सुनेंगे तो खीजेंगे, जो-कुंभनदास की भतीजी बड़ी लोभिन है। तब भतीजी ने कह्यो, जो-मैंने तो हँसिके कह्यो हतो, जो-मोकों तो कछू नाहीं चहियत है। तब कुंभनदासजी कह्यो, जो-बेटी ! काहू सों लेवेकी वार्ता हांसी में हू कबहू न कहिये। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आयके कुंभनदासजी की गोद में बैठिके कहे, जो-तू एक छिन में ऐसो क्यों होय गयो ? तेरे मन में कहा है ? सो तू मोसों कहे ? तब कुंभनदासजी यह पद गायो। सो पद-

राग सारंग-परम भाँवते जियके मोहन नैनन तें मति टरो। जो लों जीऊं तो लों देखो बार बार पाइ लागों चित्त अनत न धरों॥१॥ तब सुख चिंतत तोहि लों ले ले अंग भरों। रसिकन मांझ रसिक - नंदनंदन तुम पिय मेरे सकल दु:ख हरो॥२॥ आवहु सदा रहो घर मेरे स्याम मनोहर संग किन करो ? 'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धनधर तुम बिनु अंजन कासों करों॥३॥

सो यह कीर्तन कुंभनदासजी को सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी गरे सों लपटिके कहे, जो-कुंभनदास ! मैं तोसों एक बात कहन कों आयो हूँ। तब कुंभनदासजीने कही, जो-कहिये ! आपु वा

समय बात कहत हते सो ता समय तो राजा अभागिया आय गयो, सो आपु भाजि गये। सो तब सों मेरो मन वा बातमें लागि रह्यो है, सो यह बात आपु कृपा करिके कहिये। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कुंभनदाससों कहे, जो–कुंभनदास ! आज सखानमें होड परी है, जो–भोजन सबके घर न्यारो न्यारो देखिये। तामें सुन्दर कौनके घरको है ? सो तूमहू कछु मनोरथ करोगे ? सो मैं यह बात तोसों कहिवे आयो हूँ। तब कुंभनदासजी पूछे, जो–आपकी रुचि काहे पे है ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो–ज्वार की महेरी, दही, दूध, बेझरि की रोटी और टेंटी को साग संधानो। तब कुंभनदासजी कहे, जो–यह तो घर में सिद्ध है। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो–बेगि मंगावो। सो तब कुंभनदासजी भतीजी सों कहे, जो घरतें बेझरि को चून, टेंटी को साग संधानो, दही दूध बेगि ले आउ। तब भतीजी ने कही, जो–बेझरि को चून, टेंटी को साग, संधानो, दही इतनो तो में ले आई हूं और दूध जमायवेके तांई तातो होत है, तब कुंभनदासजी कहे, जो–आज दूध जमावे मति। दूध की हांडी और ज्वार घर तें दरिके ले आव, सो तहां तांई मैं रसोई करत हौं। सो न्हाय के तो कुंभनदासजी बैठे ही हते। तासों बेझरि की रोटी नोंन डारिके ठीकरा पे किये। इतने में भतीजी जमुनावता गाम में जायके ज्वारि दरिके दूधकी हांडी ले आई। तब कुंभनदासजी हांडीमें पानी डारिके ज्वारकी सामग्री सिद्ध किये। इतने में घरतें सखान की छाक आई, सो कुंभनदास की सामग्री श्रीगोवर्द्धननाथजी पास राखे। पाछें घर के सखान कों चखाय आपु आरोगे।

भावप्रकाश – कुंभनदासजी की सामग्री विसाखाजीने दूध में मिश्री डारि श्रीस्वामिनीजी कों आरोगाय अति मधुर कर दीनी। सो काहेतें ? जो–विसाखाजी को प्रागट्य कुंभनदासजी हैं।

और जब श्रीठाकुरजी कों कुंभनदासजी की सामग्री बहोत स्वाद लगी, ता समय कुंभनदासजी ने कीर्तन गाये। सो पद–

राग सारंग–ब्रज में बड़ो मेवा यह टेंटी। जाकौ होत है साग संधानो और बेजर की रोटौ ॥१॥ ले ले डलिया बीनन निकसी बड़े गोप की बेटी। 'कुंभनदास' लाल गिरिधर सों व्है गई भेटा भेटी ॥२॥

राग सारंग– घर घर तें आई है छाक। खाटे मीठे और सलोने विविध भांति के पाक ॥१॥ मंडल रचना करी जमुना तट सघन लता की छांहि। गोपी–ग्वाल सकल मिलि जेंमत मुख हि सराहत जाहि ॥२॥ बांटत बल मोहन दोउ भैया कर दोना अति सोहे। चाखत आपुन सखन मुखन दे के गोपीजन मन मोहे ॥३॥ टेंटी, साग, संधानो रोटी, गोरस, सरस महेरी। 'कुंभनदास' गिरिधर रस–लंपट नाचत देदे फेरी ॥४॥

सो यह कुंभनदासजी अति आनंद पायके गाये। और अपने मन में कहे, जो– श्रीगोवर्द्धननाथजी ने भली एक बात कही, जो – यामें या लीला को अनुभव भयो। या प्रकार श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदासजी की ऊपर कृपा करते। वा दिन कुंभनदासजी रस में मग्न होय गये। सो सांझ कों सरीर की सुधि आंई। तब परासोली तें दौरे, जो आज मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन नाहीं पायो। विरह मन में उठि आयो सो भोग सरत हतो ता समय कुंभनदासजी मंदिर में आये। मन में यह, जो–कब दरसन पाऊं। इतने में सेन के किंवाड़ खुले। तब कुंभनदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करि नेत्र इकटक लगाय के यह कीर्तन गाये। सो पद –

राग बिहाग–लोचन मिलि गए जब चारयो। हों व्है रही ठगी सी ठाढी उर

अचरा न सँवारयो ॥१॥ अपने सुभाई नंद जू के आइ सुन्दर स्याम निहार्यो। इक टक लगी चरन गति थाकी क्यों हू टरत नहीं टारयों ॥२॥ उपजी प्रीति मदन मोहन सों गृह कौ काज बिसरयो। 'कुंभनदास' गिरिधर रस लोभी भलो आरज पंथ पारयो ॥३॥

राग बिहागरो–नंदनंदन की बलि जैये। सांवल मृदुल कलेवर की छबि देखि देखि सुख पैये ॥१॥ सकल लोकपति ठाकुर रसना रसिक विमल जस गैये। 'कुंभनदास प्रभु' गिरिधर कों तन मन सर्वस्व दैये ॥२॥

राग केदारो – छिनु छिनु बानिक और ही और। जब देखों तब नौतन सखीरी दृष्टि न रहे इकठौर ॥१॥ कहा कहों परमित नहीं पावत बोहोत करों चित दौर। 'कुंभनदास प्रभु' सौभग सींवा गिरिधर रसिकराय सिर मोर ॥२॥

सो या प्रकार रस के कीर्तन कुंभनदासने बहोत गाये। सो वे कुंभनदासजी ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता–प्रसंग ५– और एक समय वृंदावन के संत महंत कुंभनदासजी सों मिलिवे कों श्रीगिरिराज पे आये। सो यासों आये, जो–जाने जो इनसों श्रीठाकुरजी साक्षात् बोलत हैं। और कुंभनदासजी श्रीस्वामिनीजी की बधाई गाये हैं, तासों इनसों मिलिके पूछें, जो–श्रीस्वामिनीजी को वर्णन हमहू किये हैं। और देखें, जो–कुंभनदासजी कैसो वर्णन करत हैं ? सो यह बिचारिके हरिवंश, हरिदास प्रभृति महंत, स्वामी आय कुंभनदासजी सों मिलिके पूछे, जो–कुंभनदासजी तुमने जुगल स्वरूप के कीर्तन किये हैं, सो हमने तिहारे कीर्तन बहोत सुने, परि कोई श्रीस्वामिनीजी को कीर्तन नाहीं सुन्यो, तासों आपु कृपा करिके कोई पद श्रीस्वामिनीजी को सुनावो। तब कुंभनदासजी ने श्रीस्वामिनीजी को एक पद करिके उनकों सुनायो। सो पद–

राग रामकली – कुँवरि राधिके तुव सकल सौभाग्य सींवा या बदन पर कोटि सत चंद वारि डारों। खंजन कुरंग सत कोटि नैनन उपर वारने करत जियमें बिचारों॥१॥ कदली सत कोटि जंघन ऊपर सिंघ सत कोटि कटि पर न्योछावर करि उतारों। मत्त गज कोटि सत चाल पर कुंभ सत कोटि इन कुचन पर वारि डारों॥२॥ कीर सत कोटि नासिका ऊपर कुंद सत कोटि दसनन ऊपर काहे न वारों ? पक्व किंदूर बंधूक सत कोटि अधरन ऊपर वारि रुचि गर्व टारों॥३॥ नाग सत कोटि बेनी ऊपर कपोत सत कोटि ग्रीवा दूरि सारों। कमल सत कोटि कर–जुगल पर वारने नाहिन कोऊ उपमा जु धारों॥४॥ 'दासकुंभन' स्वामिनी सुनख–सिख अद्‌भुत सुठान कहां लों संभारों। लाल गिरिधर कहत मोहि तोहि लों सुख जो लोंये रूप छिनु छिनु निहारों॥५॥

यह पद कुंभनदासजी ने गायो सो सुनिके श्रीवृंदावन के संत महंत बहोत प्रसन्न भये। और कहे, जो–हमने श्रीस्वामिनीजी के पद बहोत किये हैं, तामें चंद्रमा आदि की उपमा बहोत दीनी हैं। परि कुंभनदास ! तुमने तो शतकोटि चंद्रमा वारि डारें हैं। तासों कुंभनदासजी कों श्रीस्वामिनीजी आगे जगत में कोऊ उपमा देवे योग्य नाहीं दीसत, सो या प्रकार अद्‌भुत स्वरूपको वरणन किये हैं। पाछें कुंभनदासजी सों बिदा होयके सिगरे वृंदावन में आये। सो ये कुंभनदासजी किशोर भावना, लीला रसमें मग्न रहते। सो ऐसे कृपापात्र भगवदीय हे।

वार्ता – प्रसंग ६– और एक समय श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी सों बिदा मांगिके श्रीद्वारिकाजी पधारिवे को विचार किये, सो परदेस में दैवी जीवन के उद्धारार्थ। सो श्रीगोकुलतें श्रीनाथजीद्वार आयके श्रीगोवर्द्धननाथजी के सेवा सिंगार किये। ता पाछें अनोसर करायके आपु भोजन करि के अपनी बैठक में गादी तकियान के ऊपर बिराजे हते, सो हां सिगरे वैष्णव आयके पास बैठे हते। सो बात चलत में

कुंभनदासजी की बात चली। तब काहू वैष्णवनें श्रीगुसांईजी के आगे यह बात कही, जो–महाराज ! कुंभनदासजी के घर आजकल द्रव्य को बहोत संकोच है, सो काहेतें ? जो घरमें परिवार बहोत है, जो–सात बेटा हैं, और सातों बेटान की बहू हैं। और आपु स्त्रीपुरुष और एक भतीजी। सो ताहू में आये गये वैष्णवन को समाधान करत हैं, और आमदनी तो थोरीसी है। जो परासोली में खेती है, तामें निर्वाह टेंटी फूलन सों करत हैं। यह बात सुनिके श्रीगुसांईजी ने अपने मनमें राखी। ता पाछें (जब) कुंभनदासजी श्रीगुसांईजी के दरसन कूं आये, तब दंडवत करिके ठाड़े होय रहे। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो–कुंभनदासजी ! बैठो। तब कुंभनदासजी बैठे। पाछें श्रीगुसांईजी सिगरे वैष्णवनकों बिदा करिके कुंभनदास सों कहे, जो–कुंभनदासजी ! हम श्रीद्वारिकाके मिस परदेसकों जात हैं, तहां अनेक वैष्णवन सों मिलाप होयगो। सो वैष्णवननें बहोत बिनती पत्र लिखे हैं, तासों अवश्य जानो है। सो तुम हमारे संग चलो। सो भगवदीयन कों विरहको क्लेश बाधा न करे, और भगवदीयन को काल आछें व्यतीत होय। सो तिहारे संग तें कछू जान्यो परे। और हमने सुन्यो है, जो–तिहारे घर द्रव्यको संकोच है, सोऊ कार्य सिद्ध होयगो। तासों तुमकों सर्वथा चल्यो चहिये। तब कुंभनदासजीने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो–महाराज ! आपु के साम्हे हमसों बहोत बोल्यो नाहीं जात है, जो–आपु आज्ञा करो सोई हमकों करनो। इतने में उत्थापन को समय भयो। तब श्रीगुसांईजी स्नान करिके, श्रीगोवर्द्धननाथजी कों उत्थापन करायकें, सेन पर्यंतकी सेवा सों पहोंचिके आपु बैठक में पधारे।

तब श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदास सों कहे, जो-अब तुम घर जाऊ, जो-सवारे घर सों विदा होयके आइयो, राजभोग आरती पाछें परदेस कों चलेंगे। पाछें कुंभनदासजी श्रीगुसांईजीकों दंडवत् करिके अपुने घर जमुनावतामें आये। ता पाछें सवारे घरतें श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजी आपु स्नान करिके परवत ऊपर पधारिके श्रीनाथजी कों जगाये। पाछें सेवा सिंगार करि राजभोग धरि समयानुसार भोग सरायके, राजभोग आरती करि श्रीगोवर्द्धननाथजी सों बिदा होय परवत सों नीचे पधारे। सो अप्सराकुंड ऊपर डेरा अगाऊ भये हते। तब कुंभनदास सों कहें, जो-अब हम अप्सराकुंड ऊपर डेरान में जायकें सोवेंगे। सो तब सब वैष्णव तथा कुंभनदासजी अप्सराकुंड ऊपर आये। तब कुंभनदासजी अपने मनमें विचार करन लागे, जो-हे मन ! अब कहा करिये ? 'कहिये कहा कहिवे की होय ? प्राणनाथ बिछुरन की बेदन जानत नाहिं कोय॥१॥ या प्रकार विचार करत श्रीगोवर्द्धननाथजी को बिरह हृदय में बढ़ि गयो। तब श्रीगुसांईजी आपु डेरान के भीतर जागे। सो जब उत्थापन को समय भयो, तब कुंभनदासजी कों श्रीनाथजी के दरसन की सुधि आई, नेत्रन में सों आंसुनकी धारा चली, सो सगरे सरीर में पुलकावली होंन लागी। पाछें कुंभनदासजी डेरान के पास ही एक वृक्ष तरें ठाड़े-ठाड़े धीरें-धीरे गावन लागे। सो पद -

राग सारंग - किते दिन व्है जु गए बिनु देखे। तरून किसोर रसिक नंदनंदन कछुक उठत मुख रेखे ॥१॥ वह सोभा वह कांति बदन की कोटिक चंद बिसेखे। वह चितवनि वह हास्य मनोहर वह नटवर वपु भेखे ॥२॥ स्यामसुंदर संग मिलि खेलन की आवत जिय अपेखें। कुंभनदास लाल गिरिधर बिनु जीवन जन्म अलेखे ॥३॥

यह कीर्तन कुंभनदासजीने अत्यन्त विरह क्लेश सों गायो। सो श्रीगुसांईजी आपु डेरान के भीतर बेठिके कुंभनदासजी को सगरो कीर्तन सुने। सो कुंभनदासजी को क्लेश श्रीगुसांईजी आपु सहि नाहीं सके। सो आपु डेरानतें बाहिर पधारिके कुंभनदासजी की यह दसा देखे, जो-नेत्रन सों जल बह्यो जात है, महाविरह करिके दुःखी होय रहे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखतें कुंभनदास सों कहे, जो-कुंभनदास ! तुम मंदिर में जायके श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करो, जो-तिहारो विदेश होय चुक्यो।

भावप्रकाश - सो काहेतें ? जो जैसी तिहारी दसा यहां है, सो तैसी दसा उहां श्रीगोवर्द्धननाथजी की होयगी। सो कैसे जानिये ? जो जैसे 'गज्जनधावन' कों श्रीअक्काजी ने पान लेवे कों पठायो सो गज्जन कों तो श्रीनवनीतप्रियजी के विरह को एक क्षन सह्यो न जातो, सो पान लेवे कों द्वार सों बाहिर जात ही विरह ज्वर चढ्यो। सो द्वार पास ही दुकान में परि रह्यो, मूर्छा खाइके। और यहां मंदिर में श्रीआचार्यजी श्रीनवनीतप्रियजी कों राजभोग धरे। तब श्रीनवनीतप्रियजी ने महाप्रभुन सों कही, जो-मेरो गज्जन आवेगो तब मैं आरोगूंगो। तब श्रीआचार्यजी सबन सों पूछे, जो-गज्जन कहां गयो हौ ? तब अक्काजी कहे, जो-पान न हते तासों गज्जन कों पान लेवे पठायो है। तब श्रीआचार्यजी कहे, जो-तुम जानत नाहीं, जो-गज्जन बिना श्रीनवनीतप्रियजी एक छिन नाहीं रहत हैं ? तासों गज्जन कों पान लेन कों क्यों पठायो ? ता पाछें गज्जन कों बुलायेवे कों ब्रजवासी पठायो, सो गज्जन कों बुलाय के ले आयो। तब गज्जन ने श्रीनवनीतप्रियजी के पास आय के कह्यो, जो - बाबा ? आरोगो। तब श्रीनवनीप्रियजी आरोगे। सो गज्जन बिना आपु विरह करिकें बैठि रहे। सो यह श्रीआचार्यजी के मार्ग की मर्यादा है। जो जैसो सेवक को एक चित्त सों स्वामी के ऊपर (अनन्य) भाव होय, तैसेही स्वामी को भाव दास विषे (विशेष) सेवक के ऊपर होय। सो श्रीभगवान अर्जुन प्रति कहे हैं, जो -

'ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।'

तासों श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदासजी सों कहे, जो-जैसो तुम यहाँ श्रीगोवर्द्धननाथजी के लिये विरह दुःख करत हो, तैसे उहाँ श्रीगोवर्द्धननाथजी तिहारे

लिये विरह दुःख करत हैं। तासों तुम बेगि जायकें श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करो, तिहारो विदेश होय चुक्यो।

या प्रकार श्रीगुसांईजी ने कुंभनदास कों आज्ञा दीनी। तब कुंभनदास को रोम रोम सीतल होय गयो। तब मनमें प्रसन्न होय श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि बेगि अप्सराकुंडतें दोरि के श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में आये। ता समय उत्थापन के दरसन को समय हतो, सो किंवाड खुले। तब कुंभनदांसजी ने यह पद गायो। सो पद –

राग नट – जोपें चोंप मिलन की होंई। तो क्यों रह्यो परे सुनि सजनी लाख करे किन कोई ॥१॥ जोपे विरह परस्पर व्यापे तो कछु जीय बने। लोक लाज कुल की मर्यादा ऐको चित्त न गिने ॥२॥ 'कुंभनदास' जिहिं तन लागी और कछु न सुहाय। गिरिधरलाल तोय बिनु देखे छिन छिन कल्प विहाय ॥३॥

यह पद सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी प्रसन्न होय के कुंभनदास सों कहे, जो–कुंभनदास ! मैं तेरे मनकी बात जानत हूँ। जो–तू मेरे बिना रहि नाहीं सकत है। तैसें मैं हू तो बिना रहि नाहीं सकत हों। तासों अब तू सदा मेरे पास ही रहेगो। तब कुंभनदासजी ने बहोत प्रसन्न होयके साष्टांग दंडवत कीनी, और हाथ जोरिके कुंभनदासजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों बिनती कीनी जो – महाराज ! मोकों यही चहियत हतो, और यही अभिलाषा हती, जो–तुमसों बिछोयो न होय। सो कुंभनदासजी ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ७ – और एक समय श्रीगुसांईजी के पास कुंभनदास बैठे हते और सगरे वैष्णव हू बैठे हते। सो श्रीगुसांईजी आपु हँसिके कुंभनदासजी सों पूछे, जो–कुंभनदास ! तिहारे बेटा कितने हैं ? तब कुंभनदास ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो–

महाराज ! बेटा तो मेरे डेढ़ हैं। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो–हमने तो सात बेटा सुने हैं, और तुम डेढ़ बेटा कहे, ताको कारन कहा ? तब कुंभनदासजी ने कह्यो, जो – महाराज ! यों तो सात बेटा हैं, तामें पांच तो लौकिकासक्त हैं, जो–वे बेटा काहे के हैं ? और पूरो एक बेटा तो चतुर्भुजदास है। और आधो बेटा कृष्णदास है। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की गायन की सेवा करत है।

भावप्रकाश – सो तहां संदेह होय–गायन की सेवा तो सर्वोपरि है। और गायन की सेवा किये तें बहोत वैष्णव श्रीठाकुरजी को पाये है; और कुंभनदासजी कृष्णदास कों आधो बेटा क्यों कहे ? तहां कहत हैं, जो–श्रीआचार्यजी आपु यह पुष्टिमार्ग प्रगट किये हैं। सो पुष्टिमार्ग ब्रजजन को भावरूप मार्ग है। सो भगवदीय गाये हैं, जो–'सेवा रीति प्रीति ब्रजजन की जनहित जग प्रगटाई।' सो ब्रजभक्तन की कहा रीति है ? जो–श्रीठाकुरजी के सन्निधान में तो सेवा करे, सो स्वरूपानंद को अनुभव करि सयोग रस में मग्न रहैं। और श्रीठाकुरजी गोचारन अर्थ ब्रज में पधारें तब ब्रजभक्त विरह रस को अनुभव करि गान करें। सो या प्रकार संयोग रस और विप्रयोग रस को अनुभव जाकों होय सो पूरो वैष्णव होय। और 'जामें' एक न होय सो आधो वैष्णव है। सो कृष्णदास तो गायन की सेवा करत है। और श्रीगोवर्द्धननाथजी को दरसन हू होत है। परंतु ब्रजभक्तन की रहस्य लीला को अनुभव नाहीं है। तासों ये आधो है। और चतुर्भुजदास संयोग और विप्रयोग दोऊ रस के अनुभवयुक्त सेवा करत हैं, सो लीलासंबंधी कीर्तन हू गान करत हैं। तासों कुंभनदासजी चतुर्भुजदास कों पूरो बेटा कहे।

यह कुंभनदासजी के बचन सुनिके श्रीगुसांईजी आपु प्रसन्न होयके कहे, जो–कुंभनदास ! तुम सांची बात कही, जो–भगवदीय है सोई बेटा है। और बहोत भये तो कौन काम के ? सो चतुर्भुजदासजी की वार्ता तो श्रीगुसांईजी के सेवकन में लिखी है, और अब कृष्णदास की वार्ता कहत हैं–

वार्ता – प्रसंग ८ – सो ये कृष्णदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के गायन की सेवा करते, सो गायन के ग्वाल हते। सो श्रीगुसांईजी

आपु कृष्णदास कों गायन की सेवा दीनी हती। सो सगरे खिरक की सेवा करि कें आछें झारि बुहारिके ता पाछें गायन के संग बन में जाते, सो सगरे दिन गाय चरावते। सो संध्या समय गायन कों घेरि के ले आवते। एक दिन कृष्णदास गाय चराय के घर आवत हते सो पूंछरी के पास आये। सो सगरी गाय तो खिरक में गई, और एक गाय बहुत बडी हती, ताको एन बहोत भारी हतो। सो दूध हू बहोत देती, और थन हू बडे हते। सो वह गाय हरुवे-हरुवे चलती। वा गायके पाछें कृष्णदास आवत हते सो पूंछरी के पास श्रीगिरिराज की कंदरा में ते एक नाहर निकस्यो। सो वह सगरी गाय तो भाजिके खिरक में आई। और वह गाय धीरे चलती, सो वा गाय के ऊपर नाहर दोर्‍यो। तब कृष्णदास ने नाहर सों ललकारि के कह्यो, जो - अरे अधर्मी ! यह श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाय है, और तू भूख्यो होय तो मेरे ऊपर आव। सो नाहर की यह रीति है, जो-ललकारे सो ताही पे आवे। तब नाहर निकट आयो। सो जब कृष्णदास ने वा गाय कों हांकी, सो वह डरपि के भाजी सो खिरक में आई, और कृष्णदास कों नाहर ने मार्‍यो। और सब गाय भाजिके खिरक में आई हती सो गायन कों गोपीनाथ आदि ग्वाल दुहन लागे। सो गोपीनाथ ग्वाल बड़े कृपापात्र भगवदीय हते। सो देखे तो श्रीगोवर्द्धननाथजी वा बड़ी गाय कों दुहत हैं। और कृष्णदास वा गाय को बछरा पकरें ठाड़े हैं, सो कुंभनदासजी हू ठाड़े हते। सो गाय बछरा कों चाटत है। सो कुंभनदासजी कों खिरक में ऐसो दरसन भयो। ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी वा बड़ी गाय कों दुहिके

आपु तो मंदिर में पधारें। तब गुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सेन भोग धरे। सो कुंभनदास हू खिरक में ते मंदिर चले, सो दंडोती सिलाके पास आये। इतने में सब समाचार आये, जो-कृष्णदास ग्वाल कों नाहर ने मार्‍यो। तब कृष्णदास की बात काहूने कुंभनदास सों कही जो-तिहारे बेटा कृष्णदास कों नाहर ने मार्‍यो है। यह बात सुनिके कुंभनदासजी मूर्छा खाइके गिर पड़े। सो ऐसे गिरे जो कछू देहानुसंधान न रह्यो। सो कुंभनदास कों ब्रजवासी वैष्णव बहोतेरो बुलावें सो कुंभनदासजी बोले नाहीं। तब ये समाचार काहूने श्रीगुसांईजी सों जायके कहे, जो-महाराज! कुंभनदास को बेटा कृष्णदास ग्वाल नाहर ने मार्‍यो है, और कृष्णदास ने गाय बचाई। नाहर के आड़े परि देह छोड़ी, सो कृष्णदास पूंछरी की ओर परे हैं। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो-ऐसे मति कहो। क्यों ? जो-गाय कृष्णदास कों कबहू छोडि आवे नाहीं।

भावप्रकाश - सो काहेते, जो-अंत समय गाय संकल्प करत है, सो ताकों गाय उत्तम लोक में ले जात है। और कृष्णदास ने तो श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाय बचाई है, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाय कृष्णदास कों कबहू न छोड़ेगी।

तब श्रीगुसांईजी आपु पूछे, जो - कुंभनदासजी कहां है ? तब काहू वैष्णव ने विनती कीनी, जो-महाराज ! कुंभनदास कों तो पुत्र को सोक बहोत व्याप्यो है, सो दंडोती सिला के पास मूर्छा खायके गिर परे हैं। सो कितनेक लोग पुकारत हैं, परि कुंभनदासजी काहू सों बोलत नाहीं। जो अचेत परे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी की सेवा सों पहोंचि के अनोसर कराय परवत तें नीचे पधारि दंडोती सिला के पास कुंभनदासजी परे हते तहां पधारे। ता समय वैष्णव ने सब समाचार कहे। सो

श्रीगुसांईजी आपु देखें तो कुंभनदासजी के पास सब लोग ठाड़े हैं। ता समय लोगन नें कही, जो – महाराज ! कुंभनदासजी बड़े भगवदीय हैं, परंतु पुत्र को सोक महा बुरो होत है, सो या पीड़ा सों कोई बच्यो नाहीं है। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–इनकों पुत्रको सोक नाहीं है; जो–इनकों और दुःख है। सो तुम कहा जानो ? इनकों यह दुःख है जो–सूतक में श्रीनाथजी के दरसन कैसें होयंगे ? सो या दुःख सों गिरे हैं। सो अब तुम्हारो संदेह दूर होयगो। तब श्रीगुसांईजी आपु भगवदीयन को स्वरूप प्रकट करिवे के लिये कुंभनदास कों पुकारि के कहे, जो–कुंभनदास ! सवारे श्रीनाथजी के दरसन कों आइयो, जो–तुमकों श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करवावेंगे। तब श्रीगुसांईजी के यह बचन सुनिके कुंभनदासजी ने तत्काल उठि के श्रीगुसांईजी कों साष्टांग दंडवत कीनी, और विनती कीनी। जो–महाराज ! आपु बिना मेरे अंतःकरन की कौन जाने ? तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–हम जानत हैं, तुमकों संसार संबंधी दुःख लगे नाहीं। जो कोई वैष्णव तिहारो एक क्षण संग करे तो वाकों लौकिक दुःख न लागे। तो तुमकों कहा ? तासों जावो, जो–कृष्णदास के सरीर को संस्कार करो। पाछें सवारे दरसन कों आइयो। तब कुंभनदासजी श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके जायके कृष्णदास के सरीर को क्रियाकर्म किये। और श्रीगुसांईजी आप बैठक में जायके बिराजे, तब सगरे वैष्णव बैठक में आयके बैठे। सो इतने में गोपीनाथदास ग्वाल (नें) आयके कह्यो, जो महाराज ! कृष्णदास कों तो पूछरी पास नाहर ने मार्यो, और

मैं खिरक में गोदोहन करत हतो, सो ता समय श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु वा बड़ी गाय कों दुहत हते और कृष्णदास वा गाय को बछरा थामें हते। सो गाय बछरा कों चाटत हती। सो ऐसो दरसन खिरक में मोकों भयो। तब श्रीगुसांईजी श्रीमुख सों कहे, जो-यामें आश्चर्य कहा ? ये कृष्णदास ऐसे भगवदीय हैं, जो-आपु नाहर के आड़े परे और श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाय को बचाई। सो कृष्णदास के ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु प्रसन्न होय के अपनी लीला में कृष्णदास कों प्राप्त किये। सो तुम भगवदीय हो, तासों तुमकों दरसन भयो। और कों तो लीला के दरसन दुर्लभ हैं। यह बात सुनिके सगरे वैष्णव ब्रजवासी बहोत प्रसन्न भये जो-सेवा पदार्थ ऐसो है। ता पाछें प्रातःकाल कुंभनदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों आये। तब श्रीगुसांईजीने सेवकन सों आज्ञा कीनी, जो-सब तें पहले कुंभनदासजी कों दरसन करवा देउ, ता पाछें और सगरे लोग दरसन करेंगे। पाछें श्रीगुसांईजी ने सबतें पहले कुंभनदासजी कों दरसन करवाय दियो। सो या प्रकार कुंभनदास के ऊपर श्रीगुसांईजी आपु अनुग्रह किये।

भावप्रकाश – सो काहेतें ? जो सूतकी कों भगवत् – मंदिर में कौन आयवे देतो ? सो कुंभनदास कों सूतकमें दरसन कराये। सो यह रीति वा दिन तें राखी। जो सूतक जाकों होय सोहू दरसन पावे। सो या प्रकार कुंभनदासजी की कृपातें सूतकीन कों दरसन होंन लागे। सो यह रीति श्रीगुसांईजी आपु यासों किये, जो-वैष्णव के हृदय में स्नेह है, सो आगे कोई जानेगो नाहीं। तासों आगे के वैष्णव कों दरसन की छुट्टी रहे। तब वैष्णव हू सुख पावें, और श्रीगोवर्द्धननाथजी हू सुख पावें। तासों आगे दरसन की छुट्टी राखे।

सो कुंभनदासजी भोग पर्यंत दरसन करि पाछे परासोली

में जायके विरह के पद गावते। सो पद–

राग बिहागरो – तिहारे मिलन बिनु दुखित गोपाल। अति आतुर कुलबधू ब्रज–सुंदरि प्यारे–विरह बेहाल ॥१॥ सीतल चंद तपत दहत किरननि कमलपत्र जल–जनु ब्याल। चंदन कुसुम सुहाय न बाढी है तन ज्वाल। 'कुंभनदास' नव तन स्याम तुम बिनु कनकलता सूकी मानों ग्रीष्म काल ॥२॥

राग बिहागरो – अब दिनरात पहारसे भए। तब तें निघटत नाहिन जब ते हरि मधुपुरी गए ॥१॥ यह जानियत बिधाता जुग सम कीने जाम नए। जागत जात बिहात न क्यों हू ऐसे मीत ठए ॥२॥ ब्रजबासी सब परम दीन अति व्याकुल सोच लए। ज्यों बिनु प्रान दुखित जलरुह गन दारुन ह्रदे हए ॥३॥ 'कुंभनदास' बिछुरि नंदनंदन बहु संताप दए। अब गिरिधर बिनु रहत निरंतर लोचन नीर छए ॥४॥

राग केदारो – औरनकों समीप बिछुरनो आयो मेरे ही हिसा। सब कोऊ सोवे अपुने सुख आली मोकों चाहत जाय चहुँ दिसा ॥१॥ ना जानों या बिधाता की गति मेरे आंक लिखे ऐसे कौन रिसा। 'कुंभनदास' प्रभु गिरिधर कहते निसदिन ही रटे ज्यों चातक घन त्रिसा ॥२॥

सो या प्रकार विरह के पद गायके कुंभनदासजीनें सूतक के दिन व्यतीत किये ता पाछे शुद्ध होयके कुंभनदासजी अपनी सेवा में आये, सो जैसे नित्य नेम सों सेवा करते ताही प्रकार सों करन लागे। सो या प्रकार को स्नेह कुंभनदासजी को श्रीगोवर्द्धननाथजी में हतो।

वार्ता – प्रसंग ९ – और एक दिन श्रीगोकुलनाथजी और श्रीबालकृष्णजी ये दोऊ भाई मिलिके श्रीगुसांईजी सों कहे, जो – कुंभनदास कबहू श्रीगोकुल नाहीं गये हैं। सो ये कोई प्रकार श्रीगोकुल तांई जाय तब श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन कुंभनदासजी करें। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–कुंभनदासजी तो श्रीगोवर्द्धननाथजी की रहस्य लीला में मगन हैं, सो इनसों श्रीगोवर्द्धननाथजी हिलै हैं। तब श्रीगोकुलनाथजी कहे, जो–

इनकों ले जायवे को उपाय तो करिये। पाछे न आवें तो भगवद् इच्छा। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–उपाय करो, परंतु कुंभनदासजी श्रीयमुनाजी पार कबहू न उतरेंगे। पाछे कछुक दिन में श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल पधारे हते, और श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी श्रीनाथजीद्वार में हते। सो वैशाख सुदि ११ के दिन श्रीगोकुलनाथजी श्रीबालकृष्णजी सों कहे, जो–श्रीगोकुल में श्रीगुसांईजी हैं और आपुन दोऊ जने यहां हैं। तासों कुंभनदासजी कों श्रीगोकुल ले चलिये। तब श्रीबालकृष्णजी ने कह्यो, जो–कैसे ले चलोगे ? जो कुंभनदासजी तो असवारी पर बैठत नाहीं हैं। सो तब श्रीगोकुलनाथजी ने कह्यो, जो – कुंभनदासजी असवारी पें तो बैठेंगे नाहीं, और दिन में श्रीगोवर्द्धननाथजीके दरसन छोड़िके कहूँ जांयगे नाहीं। तासों रात्रि उजियारी है, सो हमहू पाँवन सों चलेंगे। सो या प्रकार सों चले चलेंगे सो देखें कहा कौतुक होत है ? सो कुंभनदासजी सरीखे भगवदीय को संग तो या मिष तें होयगो, सो यही बड़ो लाभ होयगो। पाछें दोनों भाई श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेन आरती तांई सेवा सों पहोंचिके श्रीनाथजी कों पोंढाय अनोसर करवाय बाहिर आये। और कुंभनदासजी को हाथ पकरिके भगवद् वार्ता लीला को भाव कहन लागे। सो कुंभनदासजी लीलारस में मगन होय गये, सो कछु सुधि न रही जो हम कहां हैं ? तब श्रीगोकुलनाथजी भगवद् वार्ता करत कुंभनदासजी को हाथ पकरिके अन्योर की ओर परवत सों उतरिकें श्रीगोकुल कों चले। सो रहस्य वार्ता में मगन हैं। और

श्रीबालकृष्णजी दोय चारि वैष्णव संग चुपचाप होयके कुंभनदासजी की और श्रीगोकुलनाथजी की वार्ता सुनत श्रीगोकुल कों चले। तब मारग में श्रीगोकुलनाथजी वार्ता करिके कुंभनदासजी सों पूछे। जो श्रीस्वामिनीजी को सिंगार कबहू श्रीगोवर्द्धनधर हू करत हैं ? तब कुंभनदासजी प्रेम में मगन होय के कहे, जो-हां,हां, करत हैं। जो एक दिन आश्विन महिना में श्रीनाथजी और श्रीस्वामिनीजी ललितादिक सखी संग रात्रि कों बन में फूल बीने। ता पाछें समाज सहित रासमंडल के पास सिंगार को चौंतरा हैं सो ता ऊपर आपु बिराजे। तब विसाखाजी सिंगार करन लागी। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो-आजु सिंगार मैं करूंगो। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीस्वामिनीजी के पास ठाड़े भये। 'सो मुखादिक के दरसन बिना रह्यो न जाय दोउन सों। तब विसाखाजी परम चतुर दोउन के हृदय को अभिप्राय जानि श्रीस्वामिनीजी के आगे एक दर्पन धरयो। तब वा दर्पन में दोउन के श्रीमुख सन्मुख भये, सो अवलोकन लागे। सो श्रीठाकुरजी बड़े लंबे बार श्याम सचिकन श्रीहस्त में कांकसी सों सम्हारि, एक एक बार में झीने मोती परम चतुराई सों पिरोय के श्रीस्वामिनीजी के मुखचंद्र - शोभा दरपन में देखिके प्रसन्न होय गये, सो हात सों केस छूटि गये। तब सगरे मोती बार में सों निकसि सिंगार को चौंतरा है रतन खचित, तहां फेलि गये। तब बड़ो हास्य भयो। जो इतनी बारलों सिंगार किये सो एक छिन में बड़ो होय गयो। सो यह सखीन ने कही। तब श्रीठाकुरजी ने विसाखाजी सों कह्यो, जो-तुम बेनी पकरे रहो, मैं पिरोऊँ। तब

विसाखाजी ने बेनी पकरी। सो तब फेरि बेनी मोतीन सों सिंगार करि मोतीन सों मांग सँवारी। पाछें फूलन के आभूषण सखीजन ने बनायके श्रीठाकुरजी कों दिये। सो श्रीठाकुरजी पहरावत जाँय और छिन छिन में मुखचंद की शाभा देखिके रोम रोम आनंद पावें। सो या प्रकार सब सिंगार श्रीगोवर्द्धननाथजी करिके काजर बेंदी, तिलक और चरण में महावर किये। पाछें श्रीस्वामिनीजी श्रीगोवर्द्धनधर को सिंगार किये। ता पाछें रासविलास आदि अनेक लीला करी। सो या प्रकार वार्ता करत करत श्रीगोकुल साम्हे श्रीयमुनाजी के तीरलों कुंभनदासजी आये। पाछे पार श्रीगोकुल तें नाव पर चढ़िके श्रीगुसांईजी आपु या पार आये। सवारो हू भयो। सो कुंभनदासजी कों सरीर की सुधि नाहीं, लीला रस में मगन हते। तब कुंभनदासजी सावधान होयके देखे तो सवारो भयो है। सो इतने में श्रीगुसांईजी को देखिके श्री गोकुलनाथजी सों हाथहू छूटि गयो। सो कुंभनदासजी महा उतावल सों भाजे, जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी के यहां कीर्तन कौन करेगो ? जो–हाय हाय मेरी सेवा गई सो या प्रकार मनमें कहत दौरे, सो अति बैगि दौरे। तब श्रीगोकुलनाथजी और श्रीबालकृष्णजी और सब वैष्णव कुंभनदासजी कों पकरिवे कों पीछे ते दौरे। सो कुंभनदास तो भाजे दौरेई गये। इन कोई कों पाये नाहीं। पाछे श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो–अब कहा कुंभनदास कों पावोगे ? जो इनकों यहाँ काहेंकों ले आये हो ? जो ये श्रीजमुना के पार कबहू न उतरेंगे। सो हमने तुमसों पहले ही कह्यो हतो। तब श्रीगोकुलनाथजी

श्रीगुसांईजी सों कहे, जो – पार न उतरे तो कहा भयो। परन्तु सगरी रात्रि भगवद्वार्ता के भाव में महा अलौकिक सिद्धि मिले तें भई। सो वह बड़ो लाभ भयो है, जो–भगवदीयन को सत्संग एक क्षन हू दुर्लभ हैं। यह सुनिके श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो – यह तो तुम ठीक कहे, परन्तु अब या समय तो कुंभनदास कों दोरनो पर्‍यो। और जहां तांई कुंभनदास श्रीगिरिराज ऊपर न जांयगे, तहां तांई श्रीगोवर्द्धननाथजी जागेंगे नाहीं। जो कुंभनदास जगायवे के कीर्तन गावेंगे तब जागेंगे। सो ऐसे, भक्त के आधीन श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं। तासों तुमकों भगवद्वार्ता सुननी होय तो परासोली में जमुनावता में जायके कुंभनदास सों पूछियो। सो तहां कुंभनदासजी तुमसों कहेंगे। ता पाछे श्रीगोकुलनाथजी, श्रीबालकृष्णजी, सब वैष्णव सहित श्रीगोकुल पधारे। श्रीगुसांईजी को घोड़ा जीन सहित पार बंध्यो हतो, सो ता पर आप श्रीगुसांईजी बेगि ही असवार होयके घोड़ा दोराय के चले। और कुंभनदासजी तो दोरे जात हते, सो तहां आयके श्रीगुसांईजी कुंभनदासजी सों कहे, जो–तुमने कबहू यह मारग देख्यो नाहीं, सो तुम भूलि जाओगे। तासों घोड़ा के पीछे पीछे दौरे आवो। तब कुंभनदासजी श्रीगुसांईजी के पीछे दौरे चले जौंय। सो यहां रामदास भीतरिया आदि जो न्हाय कें पर्वत ऊपर आवें सो (ये) छुय जांय। सो ऐसें करत चार घड़ी दिन चढ्यौ। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगिरिराज पधारिके घोड़ा पर तें उतरिके तत्काल स्नान करि पर्वत ऊपर मंदिर में पधारे। तब देखे तो सगरे भीतरिया रामदास सहित न्हाय के मंदिर में आये

हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु पूछे, जो – रामदास ! आज इतनी अवार क्यों भई है ? तब रामदास ने बिनती कीनी, जो–महाराज ! आज न जानिये कहा भयो है ? जो चारि बेर न्हाये और चार्‍यों बेर सगरे भीतरिया छुवाने। सो अब पांचवी वार न्हाय के आये हैं, सो कारन जान्यो न पर्‍यो । तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–यह कुंभनदासजी के लिये श्रीगोवर्द्धननाथजी कौतुक किये हैं । ता पाछें श्रीगुसांईजी आप शंखनाद करवाय के श्रीगोवर्द्धननाथजी कों जगाये। ता समय कुंभनदासजी ने जगायवे के पद गाये । सो श्रीगोवर्द्धननाथजी उठे । तब कुंभनदासज़ी ने अपने मन में बहोत हरष मान्यो। जो मेरी कीर्तन की सेवा मिली। ता पाछे राजभोग पर्यंत श्रीगुसांईजी सेवा सों पहोंचे। सवारे नृसिंह चतुर्दशी हती। सो केसरी पिछोड़ा, कुलह सिद्ध कियो। ता पाछें सेन पर्यंत सेवा सों पहोंचे। सो या प्रकार कुंभनदासजी कबहू श्रीगोकुल कों न गये। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की लीला रस में मग्न रहते। सो वे कुंभनदासजी ऐसे परम कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग १० – और एक समय परासोली में कुंभनदासजी खेत ऊपर बैठे हते, और श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदास के आगे खेत में खेलत हते। इतने में उत्थापन को समय भयो तब कुंभनदासजी उठिके श्रीगिरिराज चलिवे कों कियो। तब श्रीनाथजी ने कुंभनदासजी सों कही, जो–तू कहां जात है ? सो तब इन (नें) कही, जो–उत्थापन को समय भयो है, सो गिरिराज ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों जात हों। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो–मैं तो तिहारे पास खेलत

हों, तासों तू उहां क्यों जात है ? तब कुंभनदासजी ने कही, जो–महाराज ! यहाँ तुम खेलत हो और दरसन देत हो सो तो अपनी ओर तें कृपा करिके, और अबही तुम भाजि जाव तो मेरी तुमसों कछू चले नाहीं। और मंदिर में तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पधराये हो सो उहां सों कहूं जावो नाहीं, और उहां सबकों दरसन देत हो। और मंदिर में दरसन की आसक्ति जो मोकों है, सो तासों तुम घर बैठेहू मोकों कृपा करि दरसन देत हो। या समय तुम कृपा करि दरसन दे अनुभव जतावत हो, सो मंदिर की सेवा दरसन के प्रताप सों। तासों उहां गये बिना न चले। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी हँसिके कहे, जो–कुंभनदास ! तेरो भाव महा अलौकिक है तासों मैं तोकों एक छिन नाहीं छोड़त हों। ता पाछें श्रीनाथजी और कुंभनदासजी परासोली सों संग चले। सो गोविंदकुंड ऊपर आये तब शंखनाद भये। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी मंदिर में आये, और कुंभनदासजी आन्योर तांई संग आये। सो तहां तें पर्वत ऊपर आप चढि मंदिर में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किये। सो कुंभनदासजी ऐसे भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ११ – और एक दिन माली दोय से आम बड़े–बड़े महा सुन्दर टोकरा में लेके परासोली चंद्रसरोवर है तहां आयो, पाछें टोकरा उतारि के कुंड के पास सगरे आम भूमि में धरि कें कपड़ा तें पोंछि–पोंछि मेल छुड़ावन लाग्यो। ता समय कुंभनदासजी राजभोग आरती के दरसन करिके श्रीगिरिराज तें चले सो चंद्रसरोवर ऊपर जल पीवन कों आये। सो आम बहुत सुन्दर श्रीगोवर्द्धननाथजी के लायक देखिके कुंभनदास वा माली सों, जो आम तू कहां ले जायगो ? तब वा मालीने कह्यो, जो–

मथुरा ले जाऊंगो, वहां इनके दस रुपैया लेऊंगो। सो कुंभनदास के पास तो कछू पैसा हू न हते। सो कहा करें ? तब मन में श्रीगोवर्द्धननाथजी को स्मरण करिकें कहे, जो–महाराज ! यह सामग्री परम सुन्दर है, और आपु लायक है, (क्यों?) जो उत्तम वस्तु के भोक्ता आपु ही हो। तासों ये आम आरोगो। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी सगरे आम आयके आरोगे। सो वा माली कों खबरि नाहीं। सो यह माली टोकरा में आम भरि के मथुरा गयो। सो साझ होय गई। सो एक रजपुत माट गाम में तें मथुरा कछू कार्यार्थ आयो हतो, सो वाने आम देखिके कह्यो, जो – कहा लेयगो ? तब माली ने कही, जो – दस रुपैया तें घाट न लेऊंगो। तब वह रजपूत दस रुपैया देके आम सगरे लेके श्रीयमुनाजी के तट पर आयो। सो वा रजपूत के संग एक सनोढ़िया ब्राह्मण हतो सो वाकों सो आम दिये। सो दोऊ जनेन ने पचास – पचास आम घरके लिये धरिके पचास – पचास आम दोउनने श्रीयमुनाजी के किनारे बैठिके चूसे। ता पाछें श्रीमथुरा में एक हाट ऊपर दोऊ जने सोये। सो दोउन कों स्वप्न में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन भये। सो ये जागे तब वा रजपूत ने कही, जो – ब्राह्मण देव ! तुमने कछू देख्यो। तब वा ब्राह्मणने कह्यो, जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाकुर को दरसन भयो है। तब वा रजपूतने वा ब्राह्मण सों पूछी, जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कहां बिराजत हैं ? तब वा ब्राह्मण ने कही, जो–यहां ते सात कोस ऊपर श्रीगोवर्द्धन पर्वत है, तहां बिराजत हैं। तब वा रजपूत ने ब्राह्मण सों कही, जो–तू महा मूरख है, जो–ऐसे स्वरूप को

साक्षात दरसन करि पाछें और ठोर क्यों भटकत है ? सो मैंने स्वरूप के दरसन स्वप्न में पाये। सो मोसों रह्यो नाहीं जात है। जो–सवारे तू सगरे आम ले और मैं तोकों रुपैया पांच देऊंगो, जो –मोकों श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कराय दे। तब वा ब्राह्मण ने कही, जो – आछो। ता पाछें सवेरो भयो। तब वा रजपूत ने पचास आम वा ब्राह्मण कों दीने। तब वह ब्राह्मण मथुराजी में अपने घर आयके अपने पास के हू आम सौ देके वा रजपूत के पास आयके दोउ जने चले। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेन आरती के दरसन दोउ जनेन ने किये। सो श्रीनाथजीने वा रजपूत को मन हर लीनो। ता पाछे दरसन होय चुके। तब रजपूत ने अपने हथियार, कपड़ा पांच रुपैया वा ब्राह्मण कों दिये और दस रुपया और हते सो पास राखे। तब वह ब्राह्मणने कही, जो–मैं घर जाऊंगो। सो वह ब्राह्मण तो मथुरा अपने घर आयो। पाछे वह रजपूत एक धोवती पहरे दंडोती सिला के पास ठाड़ो होय रह्यो। सो इतने ही में श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर करायके श्रीगुसांईजी आपु पर्वत तें नीचे पधारे। तब रजपूत नें दंडवत करिके कही, जो–महाराज ! मैं बहोत दिनन तें भटकत हतो, सो मेरो अंगीकार करि मोकों अपने चरण पास राखिये। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो–तुम पर कुंभनदासजी की कृपा भई है, तासों तिहारी यह दसा है। जो तेरे बड़े भाग्य हैं। सो तब श्रीगुसांईजी आपु अपनी बेठकमें पधारि वा रजपूत कों नाम सुनायो। तब वा रजपूत ने दस रुपया श्रीगुसांईजी की भेट किये। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो – तू अपने पास रहन दे।

क्यों जो तेरे पास खरची नाहीं हैं, ''तेंने'' सब वा ब्राह्मण कों दीनीं। तब वा रजपूतने दंडवत् करिके बिनती कीनी, जो–महाराज ! अब मेरे रुपयान सों कहा काम है ? मैं तो अब आपुकी सरन हूँ, जो – टहल बतावोगे सो मैं करूंगो। पाछे वा रजपूतने बिनती कीनी, जो–महाराज ! पूर्व जन्म को मैं कौन हूँ ? और कौन पुन्य तें मोकों आप को दरसन भयो है। तब श्रीगुसांईजी आपु कृपा करि वासों कहे, जो – तुम पहले ब्रजमें गोप हते। सो तुम शस्त्र बाँधिके श्रीनंदरायजीकी गायनके संग जाते, सो एक दिन तुमने सर्प मार्‍यो, सो अपराध तें तुमने संसार में बहोत जन्म पाये। पाछे ये आम कुंभनदासजीने देखे सो मन करिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों समर्पन किये। सो वा माली के सगरे आम कुंभनदासजीने श्रीनाथजी कों अंगीकार करवाये। ता पाछे वा माली के पासतें दस रुपया देके तुमने आम लिये, सो पचास तुमने राखे। तुमने वे महाप्रसादी आम लिये, और तुम दैवी जीव हते, सो तिहारो मन फेरिके श्रीनाथजी ने स्वप्न में दरसन दियो। और वह ब्राह्मण दैवी जीव न हतो, सो वाकों स्वप्न में श्रीनाथजीने दरसन दियो, परंतु तो हू वाकों ज्ञान न भयो। सो लीला में तेरो नाम 'नेना' हतो। अब तुम श्रीनाथजी की गायन के संग शस्त्र बांधिके जायो करो। और श्रीनाथजी की रसोई में महाप्रसाद लेऊ। जो – शस्त्र कपड़ा हम तुमकों देंयगे। और आज तुम व्रत करो, जो – काल्हि तुमकों समर्पन करवावेंगे। तब वा रजपूतने दंडवत कीनी। ता पाछे दूसरे दिन श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी को सिंगार करि वा रजपूत

कों न्हवायके श्रीनाथजी के साम्हे ब्रह्मसंबंध करवाये। तब वा रजपूतकी बुद्धि निर्मल होय गई। ता पाछे वा रजपूत कों जूठनि की पातरि धरी। पाछे शस्त्र देके श्रीगुसांईजी आपु वाकों प्रसादी कपड़ा दिये, सो लेकें घोड़ा ऊपर चढ़िके गायन के संग गयो। सो वाको मन श्रीगोवर्द्धननाथजी के स्वरूप में लग्यो, सो कछुक दिन में श्रीनाथजी गायन में वा रजपूत कों दरसन देन लगे। ता पाछे वह रजपूत बड़ो कृपापात्र भगवदीय भयो।

भावप्रकाश – सो यामें यह जताये, जो – कुंभनदासजी मानसी सेवामें भोग धरे, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी आरोगे। सो महाप्रसादी आम लियेतें वा रजपूत के ऊपर भगवद् अनुग्रह भयो। तासों जो भगवदीय अपने हाथसों भोग धरत हैं, सो तो सर्वथा ही श्रीठाकुरजी प्रीति सों आरोगत हैं। सो महाप्रसाद अलौकिक होय तामें कहा कहनो ?

ता पाछे वा रजपूत के दोय बैटा हते, सो वा रजपूतके पास आये। तब वा रजपूतने अपने दोय बेटानसों कह्यो, जो–बेटा ! आपुन तो सिपाई हैं। सो कहुँ लराई में वृथा प्रान जाते, तासों मो पर प्रभु कृपा करी है, तासों अब तुम यह जानियो, जो – मेरो पिता मरि गयो। तासों अब तुम जायके अपनो घर सम्हारो, हमारी बाट मति देखियो। हम तो नाहीं आवेंगे। पाछे वा रजपूतके दोउ बेटा अपने घर आये, और सब समाचार कहे, जो–हमारो पिता वैरागी भयो है। तासों अब हमारे कहा काम है ? पाछें सब घरके मोह छाँडि के बैठि रहे।

भावप्रकाश – या प्रकार महाप्रसाद तथा भगवदीयन को दरसन (जो) दैवी जीव होंय तिनकों फलित होय। सो यह सिद्धांत जताये।

सो वे कुंभनदासजी ऐसे भगवदीय हे, जो–सहजमें आँबान द्वारा रजपूत ऊपर कृपा किये । तासों भगवदीय, जो–कृत्य करत हैं सो अलौकिक जानिये । क्यों ? जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी भगवदीय के बस हैं । और कुंभनदासजी की स्त्री और पांचों बेटा नाम मात्र पाये । सो कुंभनदासजी के संग तें उद्धार भयो । और कुंभनदास की भतीजी, (जो) भाई की बेटी हती, सो ब्याह होत ही विधवा भई । सो लौकिक संबंध यासों न भयो ।

भावप्रकाश – क्यों ? जो–मूलमें दैवी जीव है । सो श्रीविसाखाजी की सखी है । सो लीला में याको नाम 'सरोवरि' है । याके माता – पिता मरि गये यासों ये कुंभनदास के घर में रहती । लीला में विसाखाजी की सखी है । सो यहां (हू) कुंभनदासजी (जैसे) भगवदीय को संग । तातें भतीजी कों हू श्रीगोवर्द्धननाथजी दरसन देते, और सानुभाव जनावते ।

वार्ता – प्रसंग १२ – और एक समय श्रीगुसांईजी को जन्म दिवस आयो । तब श्रीगोवर्द्धननाथजी अपने मन में बिचारे, जो–मेरो जन्म दिवस श्रीगुसांईजी सब वैष्णवन सहित जगत में प्रगट किये । तासों मैं हू अब श्रीगुसांईजी को जनम दिवस प्रगट करूँ । सो यह विचारि के जब पूस वदी ८ कूं रामदासजी श्रीनाथजी को सिंगार करत हते, ता समय कुंभनदासजी सिंगार के कीर्तन करत हते । और श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल में हते । तब श्रीगोवर्द्धननाथजी रामदासजी सों कहे, जो – मेरे जनम दिवस कों श्रीगुसांईजी आपु बड़ो उत्साह करत हैं, तासों मोकों श्रीगुसांईजी को जनम – दिवस माननो है । सो तुम सगरे मिलिके श्रीगुसांईजी के जनम–दिन को मंडान करो, जो – मोकों सामग्री आरोगावो । सो काल्हि जनम–दिन है । तब रामदास ने बिनती

कीनी, जो–महाराज ! कहा सामग्री करें ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो – जलेबी रसरूप करो । तब रामदास, कुंभनदासजी ने कह्यो, जो – बहोत आछो । पाछें रामदासजी सेवा सों पहोंचि के सगरे सेवकन कों भेले करिके कह्यो, जो – सवारे श्रीगुसांईजीको जनम – दिवस है, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सामग्री करनी । तब सदू पांडे ने कही, जो – घी, चून चहिये इतनो मेरे घरसों लीजियो । पाछें कुंभनदासजी तत्काल घर आये । तब घरतो कछु हतो नाहीं, सो दोय पाडा और दोय पडिया एक ब्रजवासी के पास बेचिके पांच रुपैया लायके कुंभनदासजी ने रामदासजी कों दिये । और सब सेवकन ने एक रुपैया, कोई न दोय रुपैया ऐसे दिये, सो ताकी खाँड मँगाये । और घी मेंदा सदू पांडे लाये । सो सगरी रात्रि जलेबी किये । ता पाछें प्रातःकाल भयो । तब रामदासजी अभ्यंग कराय के केसरी पाग, केसरी वस्त्र, वागा कुलह, श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल सों अपने श्रीहस्त सों सिद्ध करिके पठाये हते सो धराये । पाछें भोग धरे । तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदासजी सों कहे, जो–तुम श्रीगुसांईजी की बधाई गावो । तब कुंभनदासजी बधाई गाये । सो पद –

राग देवगंधार – आज बधाई श्रीवल्लभद्वार । प्रगट भए पूरन पुरुषोत्तम पुष्टि करन विस्तार ।।१।। भागि उदै सब दैवी जीवनके निःसाधन जन किये उद्धार । 'कुंभनदास' गिरिधरन जुगल वपु निगम अगम सब साधन सार ।।२।।

राग सारंग – प्रगट भए श्रीवल्लभ आय । सेवा रस विस्तार करनकों गूढ ज्ञान सब प्रगट दिखाय ।।१।। निजजन सकल किये पावन घर बंदनबार बंधाय । 'कुंभनदास' गिरिधर गुन महिमा बंदीजन चारन गुन गाय ।।२।।

सो या भांति सों कुंभनदासजी ने बहोत बधाई गाई, सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी बहोत प्रसन्न भये। और यहाँ श्रीगुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों अभ्यंग कराय, केसरी वागा कुलह धराय राजभोग धरिके श्रीनाथजीद्वार पधारे। तब रामदास कहे, जो राजभोग आये हैं। तब श्रीगुंसाईजी आपु स्नान करिके परवत के ऊपर मंदिर में पधारे। तब समय भये भोग सरायवे जायके देखे तो जलेबी के अनेक टोकरा धरे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु रामदासजी सों पूछे, जो – आज कहा उत्सव है, जो – यह सामग्री इतनी अरोगाये हो ? तब रामदासजी ने कही, जो – आज आपु को जनमदिन श्रीगोवर्द्धनधर माने हैं, और सब सेवकन सों सामग्री कराई हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु भोग सराय आरती किये। ता पाछें अनोसर कराय के आपु अपनी बैठक में पधारे और बिराजे। तहाँ रामदासजी सों बुलाय के श्रीगुसांईजी आपु पूछे, जो – सामग्री बहोत है, और सेवक (मंदिर के) तो थोरे हैं और निष्किंचन हैं, सो सामग्री कौन प्रकार सों भई है ? तब रामदासजी कहे, जो – महाराज ! घी मेंदा तो सदू पांडे दिये, और पांच रुपैया कुंभनदासजी दिये हैं। और ये वैष्णव कोई एक, कोई दोय। जो जासों बन्ि आयो सो दियो। सो ऐसे रुपैया २१) भये। ताकी खांड आई। सो श्रीप्रभुजी ने अंगीकार कीनी। इतने में कुंभनदासजी ने आयके श्रीगुसांईजी कों दंडवत कीनी। तब कुंभनदासजी सों श्रीगुसांईजी पूछे, जो – कुंभनदास ! तुम पांच रुपैया कहाँ सों लाये ? जो तिहारे घरकी बात तो हम सब जानत हैं। तब कुंभनदासजी कहे, जो – महाराज ! मेरो घर कहाँ है ? मेरो घर तो आपके चरणारविंद

में है, जो – यह तो आपको है। दोय पाडा और दोय पडिया अधिक हती सो बेचि दीनी हैं। अपनो सरीर, प्रान, घर, स्त्री, पुत्र बेचिके आपके अर्थ लागे, तब वैष्णव धर्म सिद्ध होय। जो – महाराज ! हम संसारी गृहस्थ हैं, सो हमसों वैष्णव धर्म कहा बने? यह तो आपकी कृपा, दीन जानके करत हो। सो यह कुंभनदासजी के वचन सुनिके श्रीगुसांईजी को हृदो भरि आयो। तब आपु कहे, जो – श्रीआचार्यजी आप जाकों कृपा करिके ऐसी दैन्यता देय सो पावे। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा इनके बस रहें। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी–आपु कुंभनदासजी की बहोत सराहना करे। सो वे कुंभनदासजी ऐसे कृपापात्र हते।

वार्ता – प्रसंग १३ – और एक समय कुंभनदासजी ने श्रीआचार्यजी सों पुष्टिमारग को सिद्धान्त पूछ्यो। तब श्रीआचार्यजी आपु कृपा करिके चौरासी अपराध, राजसी, तामसी, सात्विकी भक्तन के लक्षण और प्रातःकालतें सेन पर्यंत की सेवा को प्रकार कहे, बाललीला किशोरलीला को भाव कहे। पाछें कहे, जो जा पर श्रीगोवर्द्धननाथजी की कृपा होयगी सो या काल में पूछेंगे और करेंगे। जो तुम सरीखे भगवदीय पूछेंगे और करेंगे। आगे काल महाकठिन आवेगो, और न कोई पूछेगो और न कोई कहेगो। सो या प्रकार सों श्रीआचार्यजी आपु कुंभनदासजी सों कहे।

भावप्रकाश – सो काहेतें ? जो सिंघिनी को दूध सोने के पात्र बिना रहे नाहीं। तैसे ही भगवद्लीला को भाव और भगवद्धर्म भगवदीय बिना और के हृदय में रहे नाहीं।

वार्ता – प्रसंग १४ – और एक दिन कुंभनदासजी ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो–महाराज ! मेरे घर में स्त्री है और सात में तें पांच बेटा हैं, और सात बेटान की बहू हैं। परंतु भगवद्‌भाव काहू कों दृढ़ नाहीं है। और एक भतीजी है सो ताकों भगवद्‌भाव दृढ़, ताकों कारन कहा ? तब श्रीगुसांईजी आपु सगरे वैष्णव कों सुनाय के कुंभनदासजी सों कहे, जो–कुंभनदास ! तुम मन लगायके सुनियो, जो–सावधान होउ। मैं एक पुरान को इतिहास कहत हों। तब सगरे वैष्णव सावधान भये। पाछें श्रीगुसांईजी कहे, जो – एक ब्राह्मण हतो, ताके एक कन्या हती। सो जब वह कन्या ब्याह लायक भई तब ब्राह्मण ने एक और ब्राह्मण कों बुलायके कह्यों, जो–मेरी कन्या को वर ठीक करिके आछो ठिकानो देखिके सगाई करि आवो। तब वह ब्राह्मण तो सगाई करिवे कों गयो। ता पाछें दूसरो ब्राह्मण आयो, सो वाहू सों ऐसे ही कह्यो। तब दूसरो ब्राह्मण हू सगाई करिवे कों गयो। पाछें तीसरो ब्राह्मण आयो, सो वाहू सों ऐसे ही कह्यो। सो तीसरो हू ब्राह्मण सगाई करिवे गयो। पाछें चोथो ब्राह्मण आयो, सो वाहू सों ऐसे ही कह्यो। सो तब चारों ब्राह्मण चार दिसान में भगवद्–इच्छातें गये। सो दोय दोय तीन २ कोस ऊपर एक गाम हतो, तहां न्यारे २ गाँवन में चारों ब्राह्मण ने सगाई करी। सो एक महीना पीछे सगाई ठेराई। पाछें वरन कों तिलक करिके चारों ब्राह्मण या ब्राह्मण की आगे आयके कह्यो, जो – सगाई करि तिलक करि आये हैं। सो एक महीना पीछे प्रातःकाल की लगन है। या प्रकार चारों ब्राह्मनन ने कही। तब बेटी के पिता कह्यो, जो–यह तुमने कहा कियो। जो–बेटी तो

मेरी एक है। सो तुम चारों जने चार बर करि आये सो कैसे बनेगी ? तब उन चारों ब्राह्मनन ने कही, जो – तेनें कह्यो तब हमने सगाई करी है। जो–महीना पीछे बेटी को ब्याह न करेगो तो हम तेरे ऊपर जीव देंयगे। जो–हम तिलक करि सगाई करी, सो कबहू छूटे नाहीं। तब वा ब्राह्मण नें कह्यो, जो –भलो, महीना है सो ता बखत की दीखेगी, जो कहा होनहार है ? तब चारों ब्राह्मण ने कही, जो–जब एक दिन ब्याह को रहेगो, सो तब हम ब्याह करावन आवेंगे। सो यह कहिके चारों ब्राह्मण अपने घर कों गये। पाछें या बेटी के पिता कों महा चिंता भई। जो – अब मैं कहाँ निकसि जाऊँ ? जो–प्रान छूटे तोऊ कन्या की खराबी है। तासों अब मैं कहा करूँ ? सो मारे चिंता के खानपान सब छूटि गयो, सो ऐसे चारि दिन भूखे गये। ता पाछें पाँचमें दिन नदी ऊपर यह ब्राह्मण संध्यावंदन करत हतो सो एक भगवदीय फिरत फिरत आय निकस्यो, सो नदी में न्हायो। इतने ही में यह ब्राह्मण महादु:ख सों पुकारिके रोयो। सो भगवद्भक्त को हृदय कोमल, सो वा ब्राह्मण को दु:ख सहि नाँही सके। तब उन भगवद्भक्त ने वा ब्राह्मण सों पूछी, जो – ब्राह्मण ! तुमकों ऐसो कहा दु:ख है ? जो तेने पुकारिके रुदन कियो है। तब वा ब्राह्मण ने अपनी सब बात कही। यह सुनिके वा भगवद्भक्त ने कही, जो – मैं तो एक ठिकाने रहत नाँही हों, परंतु तेरे लिये या नदी पे बैठ्यो हूँ। जो मोकों प्रगट मति करियो। और जा दिन को ब्याह होय तासों एक दिन पहलें मोकों आयके कहियो, जो श्रीठाकुरजी भली करेंगे। और अब तुम घर जायके खानपान करो। तब वा

ब्राह्मण ने कह्यो, जो–भलो। पाछें जब ब्याह को एक दिन रह्यो, सो प्रातःकाल को समय हतो। तब वह ब्राह्मण वा भगवद्भक्त के पास आयो और बिनती कीनी, जो–प्रातःकाल को ब्याह है, तातें अब कछू उपाय बतावो। तब ता वैष्णव ने कही, जो – संध्यो कों आइयो। पाछे सांझकों ब्राह्मण वा भगवद्भक्त की पास गयो। तब वा भक्त ने कही, जो –तिहारे आगे जो पशु पक्षी आवें सो तिनकों तुम पकरि लीजो। तब वह ब्राह्मण नदी के ऊपर बैठ्यो। सो बिलाइ आई सो पकरी। ता पाछे एक कुतिया आई सो पकरि। पाछे एक गदही आई, सो पकरी। सो तब वा भक्त ने कही, जो – इन तीन्योंन कों एक कोठा में मूंदि देऊ। सो कोठा में मूंदि दिये। तब वा भक्त ने कही, जो – तेरी बेटी सोय जाय तब वाहू कों यामें मूंदि दीजियो। ता पाछें बेटी सोई, तब वा बेटी कों खाट सहित कोठा में मूंदि के ताला लगाय के कहे, जो – ब्याह की तैयारी करो। सो तब प्रहर रात्रि गये चारों वर आये। पाछें सगाई करिवे वारे चारों ब्राह्मण ने समाधान करिके उनकों बैठाये। इतने में ब्याह को समय भयो तब ब्राह्मण ने भगवद्भक्त सों कही, जो – अब ब्याह को समय भयो है। तब भक्त ने कह्यो, जो –कोठरी खोलिके चारों बरन कों चारों कन्या देऊ, और ब्याह करि देउ। पाछें वह ब्राह्मण तालो खोलिके देखे तो चारों कन्या एक रूप, एक बय, बरोबरी, पहिचानि न परे सो चारों कन्या चारों वरन कों ब्याह, बिदा करि दीनी। पाछें चारों ब्राह्मण कों दक्षिणा दे बिदा किये। पाछें भगवद्भक्त ने कही, जो–हम चलेंगे। तब ब्राह्मण ने पाँयन परि के कह्यो, जो तुमने मोकों

जीवदान दियो है सो यह घर बेटी जानियोतिहारो है। तातें आपकों जो चहिये सो लेउ। तब भक्तने कही जो–हमकों कछु चहियत नाहीं है। तेरो दुःख श्रीठाकुरजी ने दूरि कियो है, सो यही बड़ी बात भई है। तब वा ब्राह्मण ने पूछी, जो – चारों कन्या एक सरखी भई है, सो मोकों खबरि कैसे परे, जो –मेरी बेटी कौनसे वर कों ब्याही है ? सो वा बेटी कों बुलावनी होय तो कैसे खबरि परेगी ? तब भक्त ने कही, जो – तेरे चारों जमाई हैं सो उन ही सों बेटीन के लक्षन पूछि लीजियो। तब तोकों खबरि परेगी। जो मनुष्य के लक्षन होय सोई तेरी बेटी जानियो। सो यह कहिके भगवद्‌भक्त तो चले गये। सो तब ब्राह्मण ने कछुक दिन पीछे चारों जमाईन कों घर बुलाये, और चारों जमाईन कों रसोई करवाई। सो एक जने कों भोजन कों बैठायो। तब भोजन करत में वासों पूछी, जो–मेरी बेटी अनुकूल है के नाहीं ? वामें कैसे लक्षन हैं ? तब उनने कही, जो –सब गुन हैं परि कुतिया की नांइ भूसत है। जो जीभ ठिकाने नाहीं, और आचार क्रिया नाहीं है, सो तासों प्रिय नाहीं है। ता पाछे दूसरे जमाई कों बुलायो। वासों पूछी जो – कहो, मेरी बेटी के लक्षन कैसे हैं ? तब वाने कही जो – तिहारी बेटी में आछे लक्षन हैं परंतु चटोरी है, जो ठाकुर के लिये जो वस्तु आवे सोई वह चोरिके खाय जाय। बिलाई की दसा है, जो–पांच घरको खाये बिना चैन नाहीं परे। ता पाछे तीसरे जमाई कों बुलाइके पूछी, जो–मेरी बेटी के लक्षन कैसे हैं ? तब वाने कही, जो –तिहारी बेटी में सब लक्षन आछे हैं, परंतु घर में आवें जाय, तब गदही की नांई भूसे, सदा मलीन रहे

और जाकों ताकों तथा मोहूकों गदही की नांई दोउ पावन सों लात मारे है। पाछें चौथे जमाई को बुलायके पूछी, जो–मेरी बेटी के लक्षन कहो ? तब उनने कही, जो – तिहारी बेटी की कहा बात है ? जो मानो लक्ष्मी है कोऊ देवता है। जो सब कों प्रिय वचन, मीठो बोलनो, उत्तम क्रिया, आचार बिचार, पति, गुरु, ठाकुर और वैष्णवमें प्रीति। सो तब ब्राह्मणनें जानी, जो–यही मेरी बैटी है। ता पाछें वाही बेटी जमाई कों बुलावतो। सो तासों कुंभनदासजी ! जा मनुष्यमें वैष्णव के लक्षन हैं सोई मनुष्य है। और कहा भयो जो मनुष्य देह भई ? जो रावण, कुंभकरण खोटी क्रियातें राक्षस कहाये। यासों जाकी जैसी क्रिया, सो वाको तैसो ही रूप जाननो। जो भतीजी बड़ी भगवदीय है। तासों तिहारे संगतें कृतार्थ होयगी। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदासजी आदि सब वैष्णवकों समुझाये। सो ये कुंभनदासजी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग १५ – पाछें कुंभनदासजी की देह बहोत असक्त भई। सो तहां आन्योर की पास संकर्षणकुंड ऊपर कुंभनदासजी आयके बैठि रहे। तब चतुर्भुजदास ने कही, जो–गोदिमें करिके तुमकों जमुनावता गाममें ले चलें ? तब कुंभनदासजी कहे, जो – अब तो दोय चार घड़ी में देह छूटेगी। तासों अब तो मैं इहांई रहूँगो। तब चतुर्भुजदासजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के राजभोग आर्ति के दरसन किये। तब श्रीगुसांईजी आपु चतुर्भुजदास सों पूछे, जो –कुंभनदास कैसे हैं ? और कहाँ हैं ? तब चतुर्भुजदास ने कही, जो–संकर्षण कुंड

ऊपर बैठे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदासजी के पास पधारे। पाछें श्रीगुसांईजी आपु पधारिके कुंभनदासजी सों कहे, जो – कुंभनदास ! या समय कौन लीला में मन है ? सो कहो। ता समय कुंभनदासजी सों उठ्यो तो गयो नाहीं, सो माथो नँवाय मनसों दंडवत करि यह कीर्तन गाये। सो पद –

राग सारंग – बिसरी गयो लाल करत गो–दोहन। निरखि अनूप चंद मुख इकटक रह्यो है सांवरो मोहन ॥१॥ नव नागरी विचित्र चतुर गुन अंग अंग रूप सुठोहन। 'कुंभनदास' लाल गिरिधर मन हर्यो कटिली भोंहन ॥२॥

राग सारंग – लाल तेरी चितवनि चित ही चुरावति। नंदगाम वृषभानपुरा बीच मारग चलन न पावति ॥१॥ हों भरि हों डरि हो नहिं काहू ललिता दृगन चलावति। 'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धनधर धर्यो सो क्यों न बतावत ॥२॥

सो ये पद कुंभनदासजी ने गाये। तब श्रीगुसांईजी आपु पूछे, जो – कुंभनदास! यह लीला तुम सुनाये परि अंतःकरणको मन जहां है सो बतावो। तब कुंभनदासजी ने श्रीगुसांईजी के आगे यह पद गाये। सो पद –

राग बिहागरो – तोय मिलनकों बोहोत करत है मोहनलाल गोवर्द्धनधारी। उत्तर मोहि देऊ किन भामिनि कहा कहों हों बात तिहारी ॥१॥ देखी तू जो झरोखन के मग तन सोहत झूमक सारी। तन मन बसीरी लाल गिरिधर के एक चित तें टरत न टारी। कहिरी सखी हों किहिं मग आऊँ तू बताइ दे ठौर सुचारी। 'कुंभनदास' प्रभु बैठे तहां देखियत हें जहां उंची चित्रसारी ॥३॥

राग बिहागरो – रसिकनी रसमें रहति गढ़ी। कनक बेलि वृषभान नंदिनी स्याम तमाल चढ़ी ॥१॥ विहरत श्रीगिरिधरलाल संग कौन पाठ पढ़ी। 'कुंभनदास' प्रभु श्रीगोवर्द्धनधर रति रस केलि बढ़ी ॥२॥

यह पद गायके कुंभनदासजी देह छोड़ि निकुंज लीला में जायके प्राप्त भये। पाछें श्रीगुसांईजी आपु गोपालपुर पधारे। सो चतुर्भुजदासजी आदि सब बेटानने कुंभनदासजीको संस्कार कियो। सो कुंभनदासजी लीला में आन्योर के पास गाम है, तहां

द्वार पर प्राप्त भये। पाछें श्रीगुसांईजी उत्थापन तें सेन पर्यंत की सेवा सों पहोंचे। परंतु काहू वैष्णवनसों बोले नाहीं, उदास रहे। तब रामदासजी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो – महाराज ! एसे क्यों हो ? तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख सों कहे, जो–एसे भगवदीय अंतर्धान भये। अब भूमि में भक्तन को तिरोधान भयो। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी अपने श्रीमुखसों कुंभनदासजी की सराहना किये। सो वे कुंभनदासजी श्रीआचार्यजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते, जिनके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी तथा श्रीगुसांईजी सदा प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं। इनकी वार्ता अनिर्वचनीय है, सो कहां तांई कहिए।

वार्ता ॥८३॥

★ ★ ★

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक, कृष्णदास अधिकारी, सो ये अष्टछाप में हैं, जिनके पद गाइयत हैं, तिनकी वार्ता कौ भाव कहत हैं –

भावप्रकाश – सो ये कृष्णदासजी लीला में ऋषभसखा श्रीठाकुरजी के अंतरंग, तिनको यह प्रागट्य हैं। सो दिनकी लीला में तो 'ऋषभ' सखा हैं, और रात्रि की लीला में श्रीललिताजी अंतरंग सखी हैं। सो ललिता हू चारि रूप, आपु तो मध्या, और श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीस्वामिनीजी की लीला निकुंज संबंधी अनुभव करें। और श्रीललिताजी को दूसरो स्वरूप ऋषभ सखा होयके बन में संग जाय, दिवस की लीला रस को अनुभव करें। और तीसरो स्वरूप दामोदरदास हरसानी होयके श्रीआचार्यजी के संग सदा रहते। तिनसों श्रीआचार्यजी आपु दमला कहते। सो तो दामोदरदासजी की वार्ता में भाव विस्तार करिके कह्यो है। और ललिताजी को चोथो स्वरूप कृष्णदास। सो गोवर्द्धनधर के पास रहिके अधिकार किये। सो श्रीगिरिराज के आठ द्वार हैं तामें 'बिलछू' बरसाने सन्मुख द्वार एक बारी है। सो ता मारग होय के श्रीगोवर्द्धननाथजी रास करन कों पधारते। सो ता द्वार के मुखिया हैं। सो ये कृष्णदास गुजरात में एक 'चिलोतरा' गांव है। तहां एक कुनबी के घर जन्मे। सो वह कुनबी वा गाम को मुखी हतो। सो वा गाम में हाकिमी करतो। जा समय

कृष्णदास या कुनबी पटेल के घर जन्मे, सो ता समय या कुनबी ने अनेक पंडित ब्राह्मण गाम गाम में तें बुलायके भेले करि उनसों पूछ्यो, जो – मेरे यह बेटा भयो है, सो याके सगरे लक्षन कहो। और या बेटा की आरबल कहो, सो मैं वाकों जनम भरि में जीवे तहां तांई खरची देऊं। तब सगरे ब्राह्मणन ने या कुनबी सों कह्यो, जो – हम कों चाहे तू कछू देय, चाहे मति देय। जो यह तेरो बेटा तो श्रीभगवानको भक्त होयगो। जो कृष्णदास याको नाम होयगो और यह तिहारे घर में न रहेगो। यह सुनि के यह पटेल कुनबी बहोत उदास भयो। और दान पुन्य बहोत कियो और कृष्णदास नाम धर्यो। पाछें कृष्णदास पांच बरस के भये तब ही तें भगवद्वार्ता कथा में जान लागे। सो मातापिता न जान देंय तो रोवें, खानपान नांही करें। तब मातापिता ने कही जो – याकों जान देऊ। जो यह अबहीतें वैरागीनसों प्रीति करत है, सो यह वैरागी होयगो। जो मोसों ब्राह्मणन नें आगे कह्यो हतो। तासों या बेटामें प्रीति करि मोह मति लगावो। सो यह सबकों दुःख देयगो। पाछे कृष्णदास जहां तहां कथा सुनते। ऐसे करत कृष्णदास बरस बारह तेरह के भये। तब एक बनजारा एक दिन गाम के बाहिर आयके उतर्यो, सो किनारो माल सब 'चिलोतरा' गाम में बेचिके रुपैया चौदह हजार कियो। सो रात्रि कों चोर (ने) कृष्णदास के पिता के भेद में, बनजारा के सब चौदह हजार रुपया लूटे। सो चौदह हजार में ते तेरह हजार रुपैया कृष्णदास के पिता ने राखे। सो यह बात कृष्णदास ने जानी। तब कृष्णदास ने अपने पिता सों कह्यो, जो – तुमने बुरो काम कियो है। क्यों ? जो–तुमने रुपैया पराये बनजारा के लुटाय के लिये। सो तुम वाको दे डारोगे तब तिहारो कल्याण होयगो। तब पिता ने कृष्णदास कों मार्यो, और कह्यो, जो–तू काहू के आगे मति कहियो। जो – हम गाम के हाकिम हैं, सो हाकिम को यही काम है। तब कृष्णदास नें कह्यो, जो – अब तुम खराब होउगे। सो यह कहिके चुप होय रहे। तब सवारो भयो, तब वह बनजारा चोंतरा ऊपर रोवत आयो, सो – आयके कृष्णदास के पिता सों कह्यो, जो – हमकों चोरन नें लूट्यो है। तब कृष्णदास के पिता ने कह्यो, जो – तू गाम में क्यों न रह्यो ? जो अब हमसों कहा कहत है ? सो ऐसे कहिके वा हाकिम नें अपने मनुष्यन सों कही, जो – या बनजारा कों गाम तें बाहिर काढि देउ, जो सवारे ही रोवत आयो है। तब मनुष्यन नें काढि दियो। सगरी पूंजी गई, सो यह महाविलाप करे। सो कृष्णदास दूरितें दौरिके वाके पास आये। तब कृष्णदास कों दया आइ गई। तब कृष्णदास मनमें बिचारे, जो – पिता को बुरो होय तो सुखेन होउ, परन्तु या बनजारा परदेसी को भलो करनो। पाछें कृष्णदास वा बनजारा के पास आयके कहे, जो – तू एकांत में चलिके बैठ, जो मैं तोसों एक बात कहूँ। पाछे एकांत में बनजारा कों ले जायके कृष्णदास ने कह्यो, जो–तेरो माल रुपैया सब गयो, मेरे पिता यहाँ को हाकिम है, सो

ताने चोरी कराई है। सो हजार रुपैया चोरन कों देके सगरो माल मेरे पिताने राख्यो है। तासों या गाम में तेरी न चलेगी। तासों तू जायके राजनगर (अहमदाबाद) राजा के यहाँ फरियाद करियो। सो मोकूं तू साक्षी में बुलाय लीजियो। परन्तु मेरे पिता के प्रान हू न जाय, और चोरन के हू प्रान न जाय, और तेरो भलो होय जाय, सो ऐसो तू करियो। सो या भाँति राजा पास मोकों बुलाइयो मैं सब बताय देउंगो। तासों तेरो माल रुपैया सब या भाँति सों मिलेंगे। पाछें वा बनजारा राजनगर में आइके राजा के पास सब बात कही। और कह्यो, जो – पिताने तो चोरी कराई और बेटानें बतायो। परन्तु कोई के प्राण न जाय। और मेरी वस्तु मिले, ऐसो उपाय करो। तब राजा ने कह्यो, धन्य वह बेटा, जो – पिता की चोरी बताई। सो वाकूं तो मैं राखूँगो। सो यह कहिके पचास मनुष्य और सिपाई बुलाय के कह्यो, जो – तुम 'चिलोतरा' में जायके उहां के हाकिम कों बेटा सहित पकरि लावो। सो या भाँति सों जावो, जो – कोई जानें नाहीं। सो ये पचास मनुष्य आये, सो लगे रहे। सो एक दिन संध्या समय वह हाकिम घर के द्वार पर ठाड़ो हतो और वाको बेटाहू ठाड़ो हतो। सो राजा के मनुष्य वा हाकिम कों पकरि के राजनगर में लाये। तब राजा नें यासों पूछी, जो – तू हाकिम होय परदेसी कों लूटत है ? जो या बनजारे को माल रुपैया देउ। तब वा हाकिम ने कही, जो – तुमसों कोई ने झूठेही लगाई होयगी। मैं तो या बात में जानत ही नाहीं हूँ। तब वा राजा ने कह्यो, जो – तेरो बेटा सोंह खायके कहे सो सांचो। तब पिताने कही, जो–बेटा कहि देय तो सांच है। तो राजा ने कृष्णदास सों पूछी, जो–तू सांच बोलियो। तब कृष्णदास ने वा राजा सों कह्यो, जो – जीव है, तासों चूक्यो तो सही। जो हजार रुपैया चोरन कों दिये और तेरह हजार रुपैया मेरे पिताने राखे हैं। तासों मैंने वाही समय पिता कों समुझायो, परन्तु मान्यो नाहीं, सो ताको फल पायो। परन्तु यासों माल रुपैया ले लेहु और यासों कछु कहो मति। तब कृष्णदास के पिता सों राजाने कही, जो–आजहू चेत, नाँतर तेरे प्राण जायंगे। तब कृष्णदास को पिता बोल्यो, जो – काम तो बुरो भयो है। परन्तु या बनजारा कों मेरे संग करि देउ। सो याकों सब रुपैया घरतें दै देउंगो। तब राजा ने दोइसे मनुष्य संग करिके बनजारा कों और कृष्णदास के पिता कों घर पठायो। और कृष्णदास सों वा राजा ने कह्यो, जो–तुम मेरे पास रहो, जो तुम सतवादी हो। तब कृष्णदास कहे, जो–मोकों राखिके तुम कहा करोगे ? मैं सांच कहूँगो, सबकों बुरो लगूंगो। जो आजु को समय तो ऐसो है, तासों मैं तो वैरागी होउंगो। जो मैं पिता के काम को नाहीं रह्यो। सो या प्रकार वा राजा ने कृष्णदास के राखिवे को बहोत जतन कियो। परि कृष्णदास रहे नाहीं, पाछे पिता के संग घर आये। तब पिताने चोरन कों बुलाय के सब पुत्र के समाचार कहे, जो – या पुत्रने हमारी खराबी करी है, तासों हजार रुपैया लावो। नाँतर तिहारे और हमारे

प्राण जांयगे। तब उन चोरनने हजार रुपैया लाय दिये। सो तेरह हजार घर में सों लेके वा बनजारा कों चौदह हजार रुपैया दिये, और माल लूटि को देके वा बनजारा कों बिदा कियो। ता पाछे वा राजा ने दूसरो हाकिम 'चिलोतरा' गाम में पठायो। तब कृष्णदास के पिता ने कह्यो, जो – पुत्र! तेरो ऐसो बुरो कर्म भयो सो हाकिमी हू गई, और आयो करयो द्रव्यहू गयो। तब कृष्णदास ने पिता सों कही, जो – पिता! तैनें ऐसो बुरो कर्म कियो हतो जो –येहू लोक जातो और परलोक हू बिगरतो, जो जीव तो बच्यो। सो हाकिमी छूटी सो आछो भयो। जो हाकिमी होती तो और पाप कमावते। तब पिता ने कह्यो, जो–तू वा जनम को फकीर है। तासों तैने हमकों हू फकीर कियो है। अब तेरे मन में कहा है ? तब कृष्णदास ने कही जो – अब तुम मोकों घर में राखोगे तो फकीर होउगे, याते मोकों विदा ही करो। तब पिता ने कही, जो – तू कछू खरचि ले घर में ते कहूँ दूरि चल्यो जा। न तोकों देखेंगे न दुःख होयगो। तब कृष्णदास पिता कूं नमस्कार करि के उठि चले। पाछे मन में विचारे, जो – ब्रज होय सगरे तीरथ करनो। तब कछुक दिनमें कृष्णदास श्रीमथुराजी में आयके विश्रांत घाट न्हाय के ब्रज में निकसे, तब फिरते फिरते श्रीगोवर्द्धन आये। सो तहां सुनी, जो देवदमन को मंदिर बन्यो है, जो–अब दोय चारि दिन में बिराजेंगे तो ब्रजवासीन को बड़ो आनंद होयगो। देवदमन जब तें बाहिर प्रकटे, जो श्रीगिरिराज गोवर्द्धन में ते, तब तें सबन कों सुख दियो है। और सबन के मनोरथ पूरन करत हैं। तब यह सुनिके कृष्णदासजी अपने मनमें विचारे, जो – मैं हूँ देवदमन को दरसन करूँ। सो तब आयके कृष्णदास ने देवदमन के दरसन किये। सो श्रीआचार्यजी आपु राजभोग आरती किये। सो दरसन करत ही कृष्णदास को मन श्रीगोवर्द्धनधर ने हरि लियो। सो कृष्णदास की ओर श्रीगोवर्द्धनधर देखि रहे। पाछे श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कहे, जो – यह कृष्णदास आयो है। सो बहोत दिन को बिछुरयो है, सो मैं याकों देखत हों। तब कृष्णदास के पास आयके श्रीआचार्यजी कहे, जो – कृष्णदास! तू आयो! तब कृष्णदास ने दंडवत करिके बिनति कीनी, जो–महाराज! आपु की कृपा तें आयो हूँ। तासों अब मोकों सरन राखो। तब श्रीआचार्यजी कहे, जो जाऊ, बेगि न्हाय आवो जो तेरे साम्हें श्रीगोवर्द्धननाथजी देखि रहे हैं। तासों बेगि आय जावो। तब कृष्णदास दौरिके रुद्रकुंड में न्हाय आये। पाछें कृष्णदास श्रीआचार्यजी के पास मंदिर में आये। तब श्रीआचार्यजी आपु कृष्णदास कों श्रीगोवर्द्धननाथजीकें सन्निधान बैठायके नाम समर्पन कराये। सो कृष्णदास दैवीजीय हैं, सो तत्काल सगरी लीला को अनुभव भयो। सो ताही समय कृष्णदास ने यह कीर्तन गायो। सो पद –

राग सारंग – वल्लभ पतित– उद्धारन जानो। सरनि लेत लीला दरसावत

ता पर ढरत गोवर्द्धनरानो ॥१॥ साधन वृथा करत दिन खोवत श्रीवल्लभ कौ रूप न जाने। जाकी कृपा कटाक्ष सफल फल 'कृष्णदास' तीनों जनम न माने ॥२॥

सो यह पद कृष्णदास ने गायो, सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बहोत प्रसन्न भये। ता पाछे श्रीआचार्यजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर कराये। ता पाछे मंदिर सिद्ध भयो। सो तब सुन्दर अक्षयतृतीया को दिन देखिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों नये मंदिर में पाट बैठाये। तब पूरनमल के सब मनोरथ सिद्ध किये। तब श्रीआचार्यजी आपु सदू पांडे कों बुलायके कहे, जो – मंदिर तो बड़ो भयो, जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी बिराजे। परंतु अब इनकी सेवा कों मनुष्य ठीक कर्‍यो चाहिये, तातें तुम सेवा करो। तब सदू पांडे ने बिनती कीनी, जो – महाराज ! हम तो ब्रजवासी हैं, जो – आचार विचार सेवा की रीति कछू समुझत नाहीं हैं। और घर के अनेक काम हैं, तासों आपु आज्ञा देउ तो राधाकुंड ऊपर बंगाली रहत हैं, सो अष्ट प्रहर भजन करत हैं। तासों उनकों राखे तो बुलाय लाऊँ। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो – बुलाय लावो। सो सदू पांडे बंगाली बीस – पचीस बुलाय लाये। तब उनकों रुद्रकुंड ऊपर झोंपरी बनवाय दीनी, और श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा दीनी। और कृष्णदास कों भेटिया किये। जो तुम परदेस तें भेट लायके बंगालीन कों दीजो। सो या भांति सों सेवा करोगे। या प्रकार सब बंगालीन कों रीति भांति बतायके सेवा सोंपी। और कृष्णदास परदेस तें भेट ले आवते सो बंगालीन कों देते। सो रामदास चोहान रजपूत जब नयो मंदिर बन्यो, तब देह छोड़िके लीला में जायके प्राप्त भये। तब सगरी सेवा बंगाली करते।

वार्ता – प्रसंग १ – पाछें एक समय कृष्णदास श्रीद्वारिकाजी की ओर भेट लेन कों गये। सो श्रीद्वारिका श्रीरनछोडजी के दरसन करि के वैष्णवन सों भेट लेके आवत हते। सो एक वैष्णव कृष्णदास के संग हतो। सो मारग में मीराबाईको गाम आयो, सो कृष्णदासजी मीराबाई के घर गये। तहां संत, महंत अनेक स्वामी और मारग के बैठे हते। सो काहूकों आये दस दिन, काहु कों आये बीस दिन भये हते, परंतु काहूकी बिदा न भई हती। और भेट के लिये बैठे हते। और कृष्णदास तो आवत ही कह्यो, जो–मैं तो चलूंगो। तब मीराबाई ने कह्यो, जो – कछुक दिन कृपा करिके रहो। तब कृष्णदास ने कही, जो–हमारे तो जहां

हमारे वैष्णव श्रीआचार्यजी के सेवक होंयगे सो तहां रहेंगे और अन्यमार्गीय के पास हम नाहीं रहत हैं। तब मीराबाई ११ मोहौर श्रीनाथजी की भेट देन लागी सो कृष्णदास नाहीं लिये। और कृष्णदासने मीराबाई सों कह्यो, जो–तू श्रीआचार्यजी की सेवक नाहीं है, सो हम तेरी मोहौर हाथ तें न छुवेंगे। सो ऐसे कहिके उठि चले। तब संग के वैष्णवने कृष्णदास सों कही, जो–तुमने श्रीगोवर्द्धननाथजी की भेट क्यों फेरि दीनी? तब कृष्णदास ने वा वैष्णव सों कही, जो–भेट की कहा है? जो बहोतेरी भेट वैष्णवन सों लेंयगे। श्रीगोवर्द्धननाथजी के यहां कोई बात को टोटा नाहीं है। परंतु सगरे मारग के स्वामी महंत इतने इकठोरे कहां मिलते? तासों सबकी नाक नीची तो करी, जानेंगे जो हम भेट के लिये इतने दिन सों बैठे हैं और श्रीआचार्यजी को एक सेवक शूद्र इतनी मोहौर भेट न लीनी। सो जिनके सेवक ऐसे टेकी हैं, तिनके गुरुकी कहा बात होयगी? सो ये सब या भांति सों जानेंगे। और आपुन अन्यमार्गीय की भेट काहे कों लेय?

भावप्रकाश– तातें शिक्षापत्र में कह्यो है – 'तदीयानां महद्दुःखं विजातीयेन संगमः' तदीय जो भगवदीय है, तिनकों और दुःख कछु नाहीं है। सो जेसो अन्यमारगीय विजातीय के संग को दुःख होय। तासों श्रीठाकुरजी तो निवाहें। जो विजातीय सों बोलनो नाहीं तब ही सुख है। और जो वार्ता करे तो रस को तिरोधान रसाभास निश्चय होय। तासों कृष्णदासजी मीराबाईके घर गये इतनो कहनो पर्‍यो। तासों मुख्य सिद्धांत यह जतायो, जो– स्वमार्गीय बिना काहू तें मिलनो नाहीं। और कदाचित् मिलनो परे तो अपने धर्म कों गोप्य राखे।

सो श्रीगुसांईजी आपु चतुःश्लोकी में कहे हैं –

''विजातीयजनाकीर्णे निजधर्मस्य गोपनं।

देशे विधाय सततं स्थेयमित्येव मे मतिः'' ॥१॥

सो ऐसे देश में जाय जहां कोई वैष्णव नाहीं होय, तहां अपने धर्म कों प्रकट न करें, तो अपने धर्म रहे। सो काहेतें ? जो – लौकिक हू में पनारो है। सो तासों, न्हायो होइ सो बचिके चले। तासों उत्तम जनकों सब प्रकारसों बचनो परे। जैसे उत्तम सामग्री है ताकों अनेक जतनसों बचावे, तब श्रीठाकुरजी के भोग जोग रहे। तैसे ही वैष्णव धर्म है। तासों या धर्म की रक्षा राखे तो रहै। यह सिद्धांत प्रगट कियो।

सो वे कृष्णदास एसे टेकी परम कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग २ – और श्रीगोवर्द्धननाथजी को सिंगार बंगाली करते। सो श्रीआचार्यजीने श्रीगोवर्द्धननाथजी कों मीना के सब आभरन समराय दिये हते। और मोरपक्ष को मुकुट, काछिनी, बागा सब बनवाय दिये हते। बंगाली श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा करते। जो भेट श्रीगोवर्द्धननाथजी के आवती सो बंगाली जोरिके सब अपने गुरुन के यहां पठावन लागे। सो जब श्रीआचार्यजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में कृष्णदास कों अधिकारी किये, तब कृष्णदास मथुरा आगरे तें सामग्री लाय देते।

भावप्रकाश – और एक अवधूतदास श्रीआचार्यजी के सेवक हते सो ब्रज में फिरयो करते, सो वे बड़े कृपापात्र भगवदीय हते, सो अडींग के वासी हते। सो अवधूतदासजी कुमारिका के जूथ में है। सो रासपंचाध्याई में जब श्रीठाकुरजी प्रगट भये, तब ये भक्त सगरे, स्वरूप को दरसन करिके नेत्र मूंदिके योगी की नांई मगन होय गये। सो ये भक्तको प्रागट्य अवधूतदासजी को है। सो लीला में इनको नाम 'केतिनी' है। सो अडींग में एक सनोढ़िया ब्राह्मण के घर जन्मे। जब ब्रज में अकाल परयो, तब मा बाप बनिया कों बेटा देके आपु तो पूरब कों गये। पाछें अवधूतदास बरस पंद्रहके भये। तब वह बनियाको घर छोड़िके मथुरा में आयके श्रीआचार्यजी के दरसन करि विनती कीनी। जो–महाराज ! मोकों सरन लीजिये। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो–हमारे संग श्रीगोवर्द्धन कों चलो, जो – श्रीनाथजी के सान्निध्य सरन लेयंगे। तब अवधूतदास श्रीआचार्यजी के संग श्रीगिरिराज आये। पाछें श्रीआचार्यजी आपु अवधूतदास तें कहे, जो – तुम गोविंदकुंड में न्हाय लेहु। तब अवधूतदास

गोविंदकुंड में न्हाय आये। पाछें श्रीआचार्यजी आपु गोविंदकुंड में स्नान करिके मंदिर में पधारे। ता समय श्रीगोवर्द्धनधर कों राजभोग आयो हतो। तब समय भये भोग सराय अवधूतदास कों बुलायकें श्रीगोवर्द्धनधर के सान्निध्य बैठाय नाम निवेदन करवायो। तब अवधूतदासने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी, जो – महाराज ! मेरे मन में तो यह है जो – मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी कों हृदय में धरिके ब्रज में फिरों। तब श्रीआचार्यजी आपु हाथ में जल लेके अवधूतदास के ऊपर छिरके। तब अवधूतदासजी की अलौकिक देह होय गई। सो भूख प्यास कछू देहाध्यास बाधा नाहीं करे, सो मानसी सेवा में मगन होय गये। पाछें श्रीआचार्यजी ने राजभोग आरती कीनी। सो वे श्रीगोवर्द्धनधर को स्वरूप अपने हृदय में नख तें सिख पर्यंत धरिके ब्रज में सदा फिरते। सो स्वरूपानंद में सदा मगन रहते।

सो ऐसे करत बहुत दिन बीते। तब एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने अवधूतदास कों जताई, जो – तुम कृष्णदास अधिकारी सों कहो, जो – इन बंगालीन कों निकासो। जो–मोकों अपनो वैभव बढ़ावनो है। और ये बंगाली मोकों भोग धरत हैं। सो इनकी चुटिया में एक देवी को स्वरूप है सो मेरे पास बैठावत हैं। तासों इन बगालीन कों बेगि काढ़ो। तब अवधूतदास ने यह बात अपने मन में राखी। सो एक दिन कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन सों मथुरा कों जात हते, सो मारग में अवधूतदास नें कृष्णदास सों पूछी, जो–तु कहां जात हो ? तब कृष्णदास ने अवधूतदास सों कह्यो, जो – मथुरा जात हों, जो – कछू सामग्री चहियत है। तब अवधूतदास ने पूछी, जो–श्रीनाथजी की सेवा कौन करत है ? तब कृष्णदास ने कही जो – बंगाली सेवा करत हैं। तब अवधूतदास नें कृष्णदास सों कह्यो, जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी की इच्छा बंगालीन कों काढ़िवे की है। सो तुम बंगालीन कों काढ़ो। जो–बंगालीन की चुटिया में एक देवी को स्वरूप है। सो जब बंगाली श्रीनाथजी कों भोग धरत हैं, तब चुटिया में ते निकासि

के देवी कों पास बैठावत हैं। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुहात नाहीं है। तासों बंगालीन कों बेगि काढ़ो। जो – मोसों आपुन आज्ञा करी है। तब मैं तुमसों कह्यो है। तब कृष्णदास ने कह्यो, जो–बंगाली श्रीआचार्यजीने राखे हैं। तातें श्रीगुसांईजी आज्ञा करें, तब काढ़े जांय। तब अवधूतदास कहें, जो – तुम अड़ेल में जायके श्रीगुसांईजी की आज्ञा ले आवो। तासों जैसे बने तैसे इन बंगालीन कों काढ़ो। तब कृष्णदास मथुरा जात हते सो अडींग तें फिरि के श्रीगोवर्द्धन आये। सो आयके सगरे बंगालीन सों कही, जो–मैं अड़ेल में श्रीगुसांईजी के पास जात हों, सो कछू काम है। पाछें सगरे सेवक, पोरिया, ब्रजवासिन सों कहे, जो – तुम सावधान रहियो। मैं श्रीगुसांईजी के पास अड़ेल जात हों। ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी सों बिदा होयके कृष्णदास अड़ेल कों चले। सो दिन पन्द्रह में कृष्णदास अड़ेल में श्रीगुसांईजी के पास आये। तब श्रीगुसांईजी कों दंडवत किये। पाछें श्रीगुसांईजी पूछे, जो – कृष्णदास ! तुम श्रीनाथजी की सेवा छोड़िके क्यों आये ? तब कृष्णदास ने कही, जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अपनो वैभव बढ़ावनो है, और बंगालीन की चुटिया में एक देवी है, सो राजभोग के समें बैठावत हैं। और जो–भेट आवत है सो सब वृन्दावन में अपने गुरुन कों पठाय देत हैं। सो अबही तें काहू को मानत नाहीं हैं। सो आगे बहोत दिन तांई बंगाली रहेंगे तो झगड़ो बढ़ेगो। तासों बंगालीन कों आपु काढ़िवे की आज्ञा दीजिये, सो मैं जायके काढूंगो। तब श्रीगुसांईजी आपु कृष्णदास सों कहे, जो–श्रीगोपीनाथजी पहेलो परदेस पूरवको कियो हतो,

सो एक लक्ष रुपैया पूरव सों भेट आई हती। सो गोपीनाथजी प्रथम अड़ेल में आयके कहे। जो –यह पहले परदेस की भेट श्रीगोवर्द्धननाथजी की है। सो यह कहिके लक्ष रुपया लेके श्रीगोपीनाथजी श्रीजीद्वार पधारे, सो तहां रूपे सोने के थार, कटोरा श्रीनाथजी कों कराये। ता पाछें सेवा सिंगार करि श्रीगोपीनाथजी अड़ेल में आये। तब बंगाली सब मिलिकें सगरे थार कटोरा द्रव्य वृंदावन में अपने गुरुन के यहां पठाय दिये। सो सब समाचार हमारे पास आये परि हम कहा करें ? जो बंगालीन कों श्रीआचार्यजीने राखे हैं। सो तासों बंगाली कैसे निकसेंगे। तब कृष्णदास नें कह्यो, जो–महाराज ! श्रीगोवर्द्धननाथजी की इच्छा ऐसी है, जो–बंगालीन कों निकासिवे की। तासों आपु या बात में बोलो मति। तासों मैं जैसे बनेगी वैसे बंगालीन कों काढूंगो। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो – अवश्य, बंगालीन कों निकास्यो चहिये। जो बहुत दिन रहेंगे तब झगरो करेंगे। तब कृष्णदास ने कही, जो – महाराज ! मोकों दोय पत्र लिखि दीजिये। सो एक तो राजा टोडरमल के नाम को, और एक राजा बीरबल के नाम को। तब श्रीगुसांईजी आपु दोय पत्र लिखि दिये। जो कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन में है सो ये तुमसों कहे, सो करि दीजो। जो हमकों बंगाली काढ़ने हैं, और सेवक राखने हैं। और कृष्णदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के अधिकारी हैं, तासों ये करें सो हमकों प्रमाण है। सो यह लिखिके कृष्णदास कों दोऊ पत्र दिये। तब कृष्णदास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके चले, सो कछुक दिन में आगरे में आये। तब राजा टोडरमल कों और बीरबल कों दोऊ पत्र श्रीगुसांईजी के हस्ताक्षर के दिखाये, तब उन कह्यो,

जो–तुम कहो सो हम करें। तब कृष्णदास नें कही, जो – अब तो मैं श्रीनाथजीद्वार बंगालीन कों काढ़िवे कों जात हूँ। जो कदाचित् बंगालीन के गुरु श्रीवृंदावन में हैं सो देसाधिपति के आगे पुकारें तब उनकी ठीक राखियो। तब उन दोऊ जनेन ने कही, जो – तुम जाउ। तुमकों श्रीगुसांईजी की आज्ञा होय सो करो। जो हम ठीक राखेंगे। पाछें कृष्णदास आगरे तें चले सो मथुरा आये। पाछें मथुरा तें श्रीगोवर्द्धन आये। तहाँ मारग में अवधूतदास मिले। तब अवधूतदास ने कही, जो–कृष्णदास! ढील क्यों करि राखी है? जो श्रीनाथजी कों अपुनो वैभव बढ़ावनो है। तासों बंगालीन कों बेगि काढ़ो। जो श्रीगोर्द्धनधर की इच्छा है। तब कृष्णदास ने कही, जो – मैं श्रीगुसांईजी की आज्ञा ले आयो हूँ। और अब जातही बंगालीन कों काढ़त हूँ। सो यह कहिके कृष्णदास चले, सो श्रीनाथजीद्वार आये। सो रुद्रकुंड ऊपर आय बंगालीन की झोंपरी में आँच लगवाय दीनी। तब सोर भयो। सो सगरे बंगाली – श्रीनाथजी की सेवा छोड़ि के परवत तें नीचे उतरि के अपनी अपनी झोंपरी में आये, सो अग्नि को बुझावन लागे। तब कृष्णदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में सब ठौर अपने मनुष्य ब्रजवासी दोयसे राखे (हते) सो बैठारि दिये। और कह्यो, जो – कोई बंगाली पर्वत ऊपर चढ़ें ताकों तुम चढ़न मत दीजो। और ब्राह्मण सेवक भीतरियान सों कहे, जो–तुम श्रीनाथजी की सेवा में सावधान रहियो। तब यह कहिके कृष्णदास परवत तें नीचे हाथ में लकुटी लेके ठाड़े भये। पाछें बंगाली अग्नि बुझाय के सगरे आये, सो पर्वत ऊपर मंदिर में

चढ़न लागे। तब कृष्णदास ने उन बंगालीन सों कह्यो, जो – अब तिहारो काम सेवा में नाहीं है। जो हमने और चाकर राखे हैं, सो सेवा करन कों गये हैं। तब बंगालीन ने लरिवे की तैयारी करी, और कह्यो, जो–हमारे ठाकुर हैं, जो हमकों श्रीआचार्यजी महाप्रभुननें राखे हैं। सो तब लराई भई। पाछें कृष्णदास ने बंगालीन कों भजाय दिये। तब सगरे बंगाली भाजे। तब मथुराजी में आय के रूपसनातन सों सगरी बात कही, जो – कृष्णदास जाति को शूद्र, सो सगरेन की झोंपरी जराय दीनी। और सबनकों मारि के सेवा में ते बाहिर काढ़ि दिये हैं। सो या प्रकार बात करत हते, इतने में कृष्णदास हू रथ पर चढ़िके पचास ब्रजवासी हथियारबंध संग ले श्रीमथुराजी में आये, सो पहले रूपसनातन के पास आये। तब रूपसनातन ने कृष्णदास सों खीजि के कह्यो, जो – क्योंरे ! शूद्र ! तैने इन ब्राह्मणन कों क्यों मार्यो है ? जो–यह बात देसाधिपति सुनेगो, तब तू कहा जुवाब देयगो ? तब कृष्णदास ने कह्यो, जो– हूँ तो शूद्र हौं। परि मैं ब्राह्मणन कों सेवक तो नाहीं करत हों। तुमहू तो अग्निहोत्री ब्राह्मण नाहीं हो। तुमहू तो कायस्थ हो, कायस्थ होयके इन ब्राह्मणन कों दंडवत कराय सेवक करत हो, सो तुमहू जवाब देत में बहोत दुःख पावोगे। जो – तुमसों जुवाब न बनेगो। और मैं तो जुवाब दे लेउंगो, जो – तिहारो मन होय तो चलो। देखो तो सही, जो – तुमसों जुवाब होत है ? जो कैसे करत हों ? सो यह कृष्णदास के वचन सुनिके रूपसनातन ने कही, जो – तुम जानो और ये जाने। जो हमतो कछू जानत नाहीं हैं। सो या प्रकार रूपसनातन सगरे बंगालीन के गुरु हते सो तिनने यह बात कही। तब सगरे

बंगाली निरास होय के मथुरा के हाकिम के पास जायके यह बात कही। जो कृष्णदास ने हमकों श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में ते काढ़ि दिये हैं। तासों तुम कोई प्रकार सों हमकों रखाय देउ। यह बात करत हते, इतने ही में कृष्णदास हाकिम के पास आये। सो कृष्णदास को तेज देखत ही वह हाकिम उठि के कृष्णदास कों पूछि, पास बैठाय के कही, जो - तुम बड़े हो, और श्रीगोवर्द्धननाथजी के अधिकारी हो। तासों तुम इन बंगालीन को गुन्हा माफ करो। अब भई सो तो भई। परि अब इनकों फेरि राखो, जो - सेवा करें। तब कृष्णदास ने कही, जो - अब तो हम इनकों नाहीं राखेंगे, अब ये हमारे चाकर नाहीं। ये चाकर होय लरिवे कों तैयार भये। इनकी झोंपरी जरि गई, तो हम इनकी झोंपरी और बनवाय देते। परन्तु ये सगरे श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा छांड़ि पर्वत तें नीचे क्यों उतरि आये ? तासों अब इनको सेवा में काम नाहीं है। और आपु कहत हो, जो - इनकों राखो। सो अब हम या बात को पत्र श्रीगुसांईजी को लिखेंगे। सो वे कहेंगे, तैसो करेंगे। तब वा हाकिम ने कही, जो - आछी बात है, जो तुम श्रीगुसांईजी कों लिखो, तब कृष्णदास श्रीनाथजीद्वार आये। ता पाछें वे बंगाली वृंदावन में रहे। सो ता पाछें फेरि एक दिन सगरे बंगाली भेले होय देसाधिपति के पास आगरे में आयके कृष्णदास की चुगली करी। तब देसाधिपति अकबर पात्साह ने कही, जो - कृष्णदास कौन है ? जो - इन ब्राह्मणन कों पूजा में ते काढ़े, सो उनकों बुलावो। तब राजा टोडरमल ने और बीरबल ने अकबर पात्साह सों कह्यो,

जो – श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाकुर श्रीविट्ठलनाथजी श्रीगुसांईजी के हैं। सो पहले ये बंगाली सेवा में राखे हते सो इनकों खरची देते। जो – अब इनकों काढ़ी दिये हैं। तब देसाधिपति ने कही, जो – बंगाली झूठि चुगली करत हैं। जो चाकर को कहा है ? तासों कृष्णदास कों बुलाय के कहो, जो – उनको मन होय तो राखे। तब देसाधिपति के मनुष्य कृष्णदास कों लेवे कों श्रीगिरिराज आये। सो कृष्णदास ने तो पहले ही सुनी हती, सो रथ ऊपर चढ़िके दस बीस आदमी लेके देसाधिपति के मनुष्यन के संग आगरे में आये। तब कृष्णदास राजा टोडरमल और बीरबल सों मिले। तब राजा टोडरमल और बीरबल ने कह्यो, जो – बंगालीन ने चुगली करी हती, सो हमने कहि दीनी है। और फेरि हू आज कहि देंयगे, जो – आजु को दिन तुम यहां रहो। तब कृष्णदास उहां रहे। तब राजा टोडरमल और बीरबल दरबार के समय देसाधिपति के पास आय अकबर सों कहे, जो – कृष्णदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के अधिकारी आये हैं, और उनको मन बंगालीन कों राखिवे को नाहीं है। जो – और चाकर राखे हैं, और ये तो काढ़े हैं। तब देसाधिपति ने कही, जो – आछो, उनको मन होय सो ताकों चाकर राखें। यामें झूठो झगरो कहा है ? तासों बंगालीन कों काढ़ि देउ। तब राजा टोडरमल और बीरबल ने आयके बंगालीन सों कही, जो – देसाधिपति को हुकम तुमकों काढ़ि देवे को भयो है, तासों तुम चुप होयके चले जाउ। जो – झगरो करोगे तो दुःख पावोगे। तासों हमने तुमकों समुझाय दियो है। तब सगरे बङ्गाली निरास होयके चले आये।

सो वृन्दावन में रहे। और कृष्णदास राजा टोडरमल और बीरबल सों बिदा होयके चले आये, सो गिरिराज ऊपर आये। ता पाछें दोय कासिद बुलाय के श्रीगुसांईजी कों बिनती पत्र लिख्यो, तामें यह लिख्यो, जो – बङ्गालीन कों आपु को आज्ञा तें काढ़े, ताको देसाधिपति सों जुवाब होय चुक्यो है, जो – अब झगरो मिटि गयो है। और बङ्गाली झूठे राजद्वार तें परि चुके हैं। तासों अब आपु कृपा करिके पधारिये। सो दोय जोड़ी कासिद की श्रीगुसांईजी के पास गई। तब श्रीगुसांईजी आपु पत्र बांचि अड़ेल तें बेगि ही पधारे, सो श्रीनाथजीद्वार आयके कृष्णदास कों बुलाय श्रीगोवर्द्धननाथजी के सन्मुख अधिकारी को दुसालो उढ़ायो। और श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखतें कहे, जो – कृष्णदास! तुमने बड़ी सेवा करी है, जो – यह काम तुमही तें बने जो बङ्गालीन कों काढ़े। तासों अब सगरो अधिकार श्रीगोवर्द्धननाथजी को तुमही करो। हमहू चूकें तो कहियो, जो – कोई बात को संकोच मति राखियो। जो सगरे सेवक टहलुवान के ऊपर तिहारो हुकुम, और की कहा है ? जो – ऐसी सेवा तुम ही करी, जो – तुम श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कहोगे सोई करेंगे। तुम श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हो, सो तिहारी आज्ञा में (जो) चलेंगे तिन सबन को भलो होयगो। तासों अब तुम श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा भली भांति सों करियो। सो सावधान रहियो। पाछें कृष्णदास श्रीगुसांईजी (और) श्रीगोवर्द्धननाथजी कों साष्टांग दंडवत करिके अधिकार की सगरी सेवा करन लागे। ता दिनतें श्रीनाथजी के अधिकार की गादि बिछवे लगी। श्रीगुंसाईजी की आज्ञा तें

कृष्णदास गादी ऊपर बैठते। ता पाछें बङ्गालीन ने सुनी, जो – श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धन पधारे हैं, और सिंगार करत हैं। सो सगरे बङ्गाली मिलके श्रीगुसांईजी के पास आये। पाछे बिनती करिके कहे, जो – हमकों श्रीआचार्यजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में राखे हते, सो कृष्णदास नें काढ़े हैं, तासों आपु फेरि हमकों सेवा में राखो। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो – तुम सगरे श्रीनाथजी की सेवा छोड़िके परवत तें नीचे उतरि आये, सो दोष तिहारो है। और अब श्रीगोवर्द्धननाथजी की इच्छा तुमकों राखिवे की नाहीं है, तासों अब तुमकों राखे न जाय। पाछें सगरे बङ्गाली बहोत बिनती करन लागे, जो – तुम हमसों सेवा मति करावो, परन्तु अब हम खाँय कहा ? जो–श्रीनाथजी की सेवा पीछे हमारो खानपान को सब सुख हतो, तासों हमकों कछू और सेवा टहल बतावो। तथा कोई और श्रीठाकुरजी बतावो, जासों हमारो निर्वाह चल्यो जाय। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोपीनाथजी के सेव्य श्रीमदनमोहनजी कों देके कहे, जो–इनकी सेवा तुम करो। सो तब बङ्गाली श्रीमदनमोहनजी कों लेके श्रीवृन्दावन में आयके सेवा करन लागे।

भावप्रकाश– सो काहेतें ? जो–बलदेवजी मर्यादारूप। सो तिन के सेव्य ठाकुर हू मर्यादारूप। सो बंगालीन कों मर्यादा की पूजा है, तासों दिये। और श्रीगुसांईजी ने झगरो हू मिटाय दियो।

ता पाछें श्रीगुसांईजी ने सांचोरा गुजराती ब्राह्मण भीतरिया सेवा में राखे। सो मुखिया भीतरिया रामदास कों किये।

भावप्रकाश– सो रामदास ब्राह्मण सांचोरा गुजरात में रहते। ये लीला में श्रीचन्द्रावलीजी की सखी हैं। सो लीला में इनको नाम 'मनोरमा' है। सो सात्विक भाव। श्रीचन्द्रावलीजी की आज्ञाकारी। जैसे श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी की लीला

में ललिता मध्याजी परम चतुर। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के कृपापात्र ललितारूप कृष्णदास सब ठोर हुकम करें, तैसे मनोरमा रूपसों रामदास मुखिया भीतरिया श्रीगुसांईजी के आगे सब टहल करें। सो (मनोरमा) रामदास गुजरात में एक सांचोरा ब्राह्मण के यहाँ जनमे। सो बरस बीस के भये। तब माता पिताने देह छोड़ि। ता पाछें रामदासजी श्रीरणछोड़जी के दरसन कों गये। सो श्रीआचार्यजी के दरसन भये, ता समय श्रीआचार्यजी कथा कहत हते। सो कथा श्रीआचार्यजी के श्रीमुख सों सुनिके रामदास कों ज्ञान भयो, जो – श्रीआचार्यजी आपु साक्षात् ईश्वर हैं, इनकी सरन रहिये तो कृतारथ होय। सो यह मनमें निश्चय कियो। ता पाछे श्रीआचार्यजी आपु कथा कहि चुके। तब रामदास ने दंडवत करिके बिनती कीनी, जो–महाराज! मोकों सरन लीजे। तब श्रीआचार्यजी आपु कहें, जो जाओ न्हाय आवो। तब रामदास न्हाय आये। तब श्रीआचार्यजी ने रामदास कों नाम निवेदन करवायो। ता पाछें रामदास सों कहे, जो – अब तुम भगवत् सेवा करो। तब रामदास ने कही, जो – मेरे पिता के ठाकुर मेरे पास हैं, सो आपु आज्ञा दउ तैसे मैं सेवा करूं। तब श्रीआचार्यजी आपु रामदासके श्रीठाकुरजी कों पंचामृत स्नान कराय दिये। ता पाछे रामदास कछुक दिन श्रीआचार्यजी के पास रहे, सो सेवा की रीति भांति सीखे। ता पाछे रामदास ने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी, जो–महाराज! शास्त्र तो मैं कछु पढ्यो नाहीं हो, परन्तु आपके ग्रन्थ पढ़िवे की इच्छा अभिलाषा है। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें रामदास कों अपने ग्रन्थ पढ़ाये तब रामदासजी के हृदय में ब्रज की लीला स्फुरी, सो रामदास ने यह कीर्तन श्रीआचार्यजी के आगे गायो। सो पद –

राग गौरी – चलि सखी चलि अहो ब्रज पेंठ लगी है जहां बिकात हरि – रस प्रेम। सूठ सोंघो प्रानन के पलटे उलट धरो जिय नेम ॥१॥ और भांति पाइवौ अति दुर्लभ कोटिक खर्चो हेम। 'रामदास प्रभु' रत्न अमोलिक सखी पैयत है एम ॥२॥

या प्रकार के रसरूप पद रामदास ने बहोत गाये, सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बहोत प्रसन्न भये। तब रामदास श्रीआचार्यजी सों बिदा होयके दंडवत करि गुजरात में अपने घर आयके बहोत दिन तांई सेवा कीनी। ता पाछें एक दिन एक वैष्णव रामदास के घर आयो। तब रामदास ने प्रीतिसों वैष्णव कों अपने घर में राख्यो। पाछें रामदास ने कही, जो – वैष्णव को संग दुर्लभ है। सो तुमने बड़ी कृपा करी, जो–तुम मेरे घर पधारे। सो तब वैष्णव ने कही, जो–संग करिवे लायक तो पद्मनाभदासजी हैं, जो – एक क्षण हू संग होय तो भगवत् कृपा होय। सो सुनत ही

रामदासजी के मन में यह आई, जो – पद्मनाभदास को संग करूं। ता पाछे चारि दिन रहिके वह वैष्णव तो गयो। तब रामदासजी श्रीठाकुरजी कों पधराय के पद्मनाभदास के घर कनौज में आये। सो पद्मनाभदास प्रीति सों रामदास कों महिना एक राखे, सो भगवद्वार्ता में मगन होय गये। तब रामदासजी ने कही, जो – जैसी तिहारी बड़ाई सुनी हती, तैसेही तिहारे संग तें सुख पायो। सो अब मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन करि आऊं। तासों मेरे ठाकुर कों तुम राखो। तब पद्मनाभदासजी ने रामदास के ठाकुर, श्रीमथुरेशजी की सय्याजी के पास बैठारे। और इहां श्रीगुसांईजी आपु प्रसन्न होयके रामदास कों मुखिया किये, सो जनम भरि श्रीनाथजी की सेवा रामदास ने मन लगाय के कीनी। सो या प्रकार रामदासजी रहे। ता पाछें (जब) पद्मनाभदासजी की देह छूटी तब श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास श्रीठाकुरजी कों बैठारे। सो सदा श्रीनाथजी के पास रहे।

ता पाछें श्रीगुसांईजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा को विस्तार बढ़ायो। सो राजसेवा करन लागे, जो – भोग सामग्री को नेग कियो, सेवक बहोत राखे, सो दरजी, सुनार, खाती सगरेन को नेग करि दियो। और भंडारी (अधिकारी) राखे सो भंडारी कों गादी तकिया। या प्रकार श्रीगोवर्द्धननाथजी की ईश्वरता बढाये। और सगरे सेवकन की ऊपर कृष्णदास अधिकारी कों मुखिया किये, सो जो काम होय सो पूछनो। सो श्रीगुसांईजी तो सेवा सिंगार करि जांय, और काहूसों कछु कहें नाहीं। कोई बात कोई सेवक श्रीगुसांईजी सों पूछे तब श्रीगुसांईजी आप कहें, जो–कृष्णदास अधिकारी के पास जावो। जो हम जांने नाहीं। सो या प्रकार मर्यादा राखी। या भांति सों कृष्णदास को वैभव भारी और हुकम भारी। सो जहां चलें तहां रथ, घोड़ा, बैल, ऊंट, गाड़ी, सौ पचास मनुष्य संग। सो कृष्णदास अधिकारी सब देसन में प्रसिद्ध भये। सो कृष्णदास नित्य नये पद करिके श्रीगोवर्द्धनधर कों सुनावते। ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ३ – और एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कृष्णदास कों आज्ञा दीनी, जो – स्यामकुम्हार कों मृदंग समेत संग लेके परासोली सेन आरती पीछे जैयो तहां रासलीला करेंगे। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिके कृष्णदास परवत तें नीचे आये। ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी स्यामकुम्हार सों कहे, जो – तुमकों जहां कृष्णदास कहें, तहां मृदंग लेके जैयो। सो या प्रकार स्यामकुम्हार कों श्रीनाथजी आपु आज्ञा किये।

भावप्रकाश – सो या प्रकार स्यामकुम्हार कों श्रीनाथजी आपु आज्ञा किये सो यातें, जो – लीला में स्यामकुम्हार विसाखाजी की सखी है। तहां लीला में इनको नाम 'रसतरंगिनी' है। सो इनकी मृदंग की सेवा है। सो एक समय रसतरंगिनी सेन किये हते, सो विसाखाजी को मन गान करिवे को भयो। तब रसतरंगिनी कों जगाय के कहे, जो–तू मृदंग बजाव, सो तब मृदंग बजायो। तब विसाखाजी गान करन लागी। सो अलसातें रसतरंगिनी चूकि जाय। तब विसाखाजी क्रोध करके कहे, जो–आज कैसें बजावत है ? तब रसतरंगिनी ने कह्यो, जो–मोकों नींद आवत है। और तिहारो मन तो गान करिवे को है, सो कैसे बने ? तब विसाखाजी मृदंग आपुही लीये और क्रोध करिके विसाखाजी ने रसतरंगिनी सों कह्यो, जो – तू मेरी सखी नाहीं है। सो जाय के तू भूमि में जनम लेउ। अहंकार करिके बोली सो ताकों यही दंड है। तब ये महावन में एक कुम्हार के घर जन्मे। सो स्यामकुम्हार नाम पर्यो। सो सगरे समाज में चतुर हते। श्रीगुसांईजी आपु इनकों बुलाय के श्रीनवनीतप्रियजी के पास राखे। तब इन स्यामकुम्हार कों नाम निवेदन करवायो। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी को वैभव बढ्यो तब कृष्णदास के मन में आई जो मृदंगी चहिये। तब श्रीगोवर्द्धनधर कहे, जो–गोकुल में स्यामकुम्हार है, सो मृदंग आछी बजावत है। ताकों श्रीगुसांईजी कों कहिके यहां राखो। तब कृष्णदास ने श्रीगुसांईजीसों कह्यो, जो – स्यामकुम्हार कों श्रीगोवर्द्धनधर की सेवा में राखो। जो–यह इच्छा प्रभुन की है। तब श्रीगुसांईजी आपु स्यामकुम्हार कों श्रीगोकुल तें बुलायके श्रीनाथजी की सेवा में राखे। सो ता दिन तें स्यामकुम्हार श्रीनाथजी के आगे मृदंग बजावतो। या प्रकार स्यामकुम्हार श्रीगिरिराज रह्यो।

तब कृष्णदास ने स्यामकुम्हार कों बुलायके कह्यो, जो–

श्रीगोवर्द्धननाथजी की इच्छा आजु परासोली में रास करिवे की है, सो मृदंग ले आवो, सेन आरती पाछे चलेंगे। तब स्यामकुम्हारने कह्यो, जो – मोहू कों आज्ञा दीनी है, तासों मृदंग लेके तिहारे पास आयो हूँ। सो जब सेन आरती श्रीगोवर्द्धननाथजीकी होय चुकी, तब कृष्णदास स्यामकुम्हार कों लेके परासोली में चंद्रसरोवर है, तहां आये। तहां देखे तो श्रीगोवर्द्धनधर और श्रीस्वामिनीजी सगरी सखीन सहित बिराजे हैं। तब श्रीगोवर्द्धनधरने स्यामकुम्हार सों कही, जो–तू तो मृदंग बजाव, और कृष्णदास सों कह्यो, जो–तू कीर्तन गाव। सो चैत्र सुद १५ पून्यो के दिन रात्रि प्रहर डेढ़ गई, उजियारी फैल गई सो अलौकिक रात्रि भई। तब स्यामकुम्हारने मृदंग बजायो। सो वसंत ऋतु के सुंदर फूल लतानसों फूलि रहे। सो श्रीगोवर्द्धनधर श्रीस्वामिनीजी सहित नृत्य करन लागे। ता समय कृष्णदासने यह पद गायो। सो पद –

राग केदारो – श्रीवृषभाननंदनी नाचत लाल गिरिधरन संग, लाग डाट उरप तिरप रास रंग राच्यौ। झप ताल मिल्यो राग केदारो सप्त सुरन अवघट–अवघट सुघरतान गान रंग राच्यो ॥१॥ पाई सुख सुरति सिद्धि भरत काम विविध रिद्धि अभिनव वदन सम सुहाग हुलास रंग राच्यो। बनिता सत–जूथप पिय निरखि थक्यो सघन चंद बलिहारी 'कृष्णदास' सुघर रंग राख्यो ॥२॥

सो यह पद सुनिके श्रीगोवर्द्धनधर प्रसन्न होयके अपने श्रीकंठ की प्रसादी कुंद कुसुमन की माला दीनी। सो कृष्णदास अपने परम भाग्य माने सो रोमरोम में आनंद भरि गयो। सो तब रस में मगन होयके यह पद गायो सो पद –

राग मालव – (१) अलग लागन उरप तिरप गति नटवत् ब्रजललना रासें। उघटत सब्द ततथेइ ततथेइ मृगनयनी इषद हासे ॥२॥ भाल चंद लजावत गावत बांधत मदन भ्रोंह पासे। चलत उरज कटि किंकिनी कुंडल श्रमजल–कन सोभित

आसे ॥२॥ नूपुर कुनित क्वणित कटिमेखला कटितट काछे नील सुवासे। अवघट तानमान बंधाने मोहित विश्व चरन न्यासे ॥३॥ मोहनलाल गोवर्द्धनधारी रिझवत छेल सुघर लासे। अपने कंठ की श्रमजल दलमिल माला देति 'कृष्णदासे' ॥४॥

(२) ततथेई रासमंडल में बने नाचत पियके संग प्रीतमप्यारी। गावत सरस सुजात मिलवत चपल कुटिल भ्रोंह अनियारी ॥१॥ मालव राग अलापति भामिनी लेति उरप नागर नारी। प्यारी के संग वेनु बजावत सुघरराय श्रीगोवर्द्धनधारी ॥२॥ 'कृष्णदास' प्रभु सौभग सींवा सब युवतिन में सुकुमारी। जोरी अद्भुत प्रगटित भूतल केलिकलारस मनुहारी ॥३॥

(३) चंद गोविंद गोपी तारा गन बने रास में बनवारी। मुख प्रताप रंजित वृंदावन नवल युवतिजन सुखकारी ॥१॥ कमलनयन कमनीय मनोहर मनहरनी गोकुलनारी। हस्तकमल पर गलित कुसुमदल नृत्यमान् प्रीतम प्यारी ॥२॥ रसमयरास – रसिकनि भामिनी अतिरसाल बने बिहारी। 'कृष्णदास' प्रभु रसिक शिरोमनि रसिकराय गिरिवरधारी ॥

(४) सिखवति हरिकों मुरली बजावत। सप्त रंध्र पर धरत अंगुली दल कंध बाहू धरि मधुरे गावत ॥१॥ सरसभेद गति राग कान्हरो गति बिलासवर नयन नचावत। 'कृष्णदास' बलि बलि वैभवकी गिरिधर पिय प्यारी मन भावत ॥२॥

सो या प्रकार बहोत कीर्तन कृष्णदासजी गाये। तब स्यामकुम्हार मृदंग बहोत सुंदर बजायो। सो श्रीगोवर्द्धनधर, श्रीस्वामिनीजी सगरे ब्रजभक्तन सहित पास अद्भुत नृत्य किये। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की कानि'तें कृष्णदास पर श्रीगोवर्द्धनधर एसी कृपा करते। ता पाछें श्रीगोवर्द्धनधर श्री स्वामिनीजी सहित सगरे ब्रजभक्त अंतर्धान भये। तब कृष्णदास और स्यामकुम्हार मृदंग लेके गोपालपुर आये, सो कृष्णदास ने समे–समे के कीर्तन किये।

वार्ता –प्रसंग ४– और एक दिन सूरदासजीनें कृष्णदाससों कही, जो–कृष्णदास ! तुमने जितने कीर्तन किये तामें मेरी छाया आवत है। तब कृष्णदासने कही, जो–अबके ऐसो पद करूं सो

तामें तिहारी छाया न आवे। पाछें कृष्णदास एकांत में बेठिके विचार किये एकाग्र मन करिके, जो–सूरदास जो वस्तु न गाये होय सो गावनो, यह विचार किये। सो जा लीला को विचार कियो ताही लीला के पद सूरदासजी (नें) गाये हैं। सो दान, मान, और गायन को वर्णन सब लीला के पद सूरदासजीने गाये हते। सो कृष्णदासजी विचार करत हारे। मनमें महाचिंता भई। सो कृष्णदासजी कों प्रहर एक गयो, सो हारिके उठि बैठे। जो कागज लेखनी द्वारा कलम धरिके महाप्रसाद लेन गये। तब श्रीगोवर्द्धनधर आयके पद पूरो करि गये। सो पद –

राग गोरी – आवत बन कान्ह गोप– बालक संग नेचुकी खुर–रेनु छुरित अलकावली। भ्रोंह मन्मथ – चाप वक्रलोचन बान सीस सोभित मत्त मयूर–चंद्रावली॥१॥ उदित उडुराजा सुंदर सिरोमनि बदन निरखि फूली नवल जुवति कुमुदावली। अरुन सकुचित अधरबिंब फल हसत कछू प्रगट होत कुंद दसनावली॥२॥ श्रवन कुंडल भाल तिलक बेसरि नाक, कंठ कौस्तुभमनि सुभ त्रिवलावली। रत्न हाटक खचित, उरसि पदिकनि पांति, बीच राजति सुभ्र झलक मुक्तावली॥३॥ वलय कंकन बाजूबंद आजानुभुज मुद्रिका कर–दल बिराजति नखावली॥ कुनित कर मुरलिका मोहित अखिल विश्व गोपिका जन–मनसि ग्रथित प्रेमावली॥४॥ कटि छुद्र घंटिका जटित हीरामनि नाभि अंबुज वलित भ्रंग रोमावली। धाइ कबहुक चलत भक्त हित जानि पिय गंड मंडित रुचिर श्रमजल – कणावली॥५॥ पीत कौशेय परिधान सुंदर अंग चलत नूपुर गी सब्दावली। हृदय 'कृष्णदास' गिरिधरनलाल की चरन–नख–चंद्रिका हरति तिमिरावली॥६॥

यह पद लिखिके आपु तो पधारे। सो 'नेचुकी' गायन को वर्णन सूरदासजीने नाहीं कियो हतो। जो 'नेचुकी' गाय, वासों कहिये, जो – पहले ब्यांत होय, ताको स्नेह बछरा ऊपर बहोत होय। सो ऐसी नेचुकी गाय काहू सखा ग्वाल सों घिरत नाहीं हैं, सो बारंबार अपने बछरा के तांई घर कों ही भाजत है। जो ऐसी

नेचुकी के जूथ में श्रीठाकुरजी आपु पधारे हैं। तब नेचुकी गायकी खुर रेनु मुख पर अलकन पर लगी हैं। सो यह श्रीठाकुरजी आपु एक तुक करि कागज के ऊपर लिखिके पधारे। ता पाछें कृष्णदास महाप्रसाद आनंद सों लेके आये सो कीर्तन पूरन किये। सो पद–

राग गौरी – आवत बने०।

सो या प्रकार कीर्तन पूरो करिके कृष्णदासजी प्रसन्न होयके सूरदासजी के पास आये, हसत – हसत। तब सूरदासजी ने पूछी, जो आज बहोत प्रसन्न हसत आवत हो, सो कहा नौतन पद किये ? तब कृष्णदास नें कह्यो, जो–आजु ऐसो पद कियो है, तामें तिहारे पदन की छाया नाहीं है। जो वस्तु तुमने गाई नहीं है। तब सूरदासजी कहे, जो– तुम मोकों बांचिके सुनावो तो सुनों। तब कृष्णदास (ने) पहली ही तुक कही, जो – ताही कों सुनिके कृष्णदास सों सूरदासजी बोले, जो – कृष्णदास ! मेरे तिहारे वाद है। कछू तिहारे बापसों विवाद नाहीं है। सो यामें तिहारो कहा है ? जो मैंने नेचुकी नाहीं गाई सो प्रभु कहि दिये। और तो श्रीअंग के वरनन के मेरे हजारन पद हैं, सोई तुमने गायके पूरन किये हैं। यह सूरदासजी के बचन सुनिके कृष्णदास चुप होय रहे।

भावप्रकाश – सो तहां यह संदेह होय, जो–कृष्णदासजी तो ललिताजी को स्वरूप हैं, और श्रीगोवर्द्धननाथजी कृष्णदास की पक्ष किये, सो पद बनाये। तोहू सूरदासजी सों न जीते। ताको कारन कहा है ? तहां कहत हैं, जो–कृष्णदास ललितारूप हैं। सो तैसेही सूरदासजी चंपकलतारूप हैं। परंतु अपनो अधिकार – भेद है। सो लीलाहू में श्रीललिताजी की सेवा श्रेष्ठ है। तैसेही यहां 'सेवा की भांत तें' कृष्णदास श्रेष्ठ। सो सगरे सेवकन की सेवा में चोकसी, सगरी वस्तु समारनी, सेवा को मंडान विस्तार करनो। यामें कृष्णदास परम चतुर। जैसे सुनार सों दरजी की सेवा न होय और दरजी सों सुनार के आभूषन को काम न होय। सो सब अपनी अपनी सेवा में चतुर हैं। और श्रीस्वामिनीजी की सखी दोऊ प्रिय हैं। तासों

श्रीगोवर्द्धननाथजी की प्रीति तो दोउन के ऊपर है। परन्तु कृष्णदास के मन में रंचक अहंकार आयो, जो–मैं हू कीर्तन बहोत किये हैं।

सो वे कृष्णदास श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ५ – और एक समय श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में सामग्री चहियत हती, सो तब कृष्णदास गाड़ा लिवाय आपु रथपर असवार होयके श्रीगोवर्द्धन सों, आगरे आये। सो जब आगरे के बजार में गये, तहां एक वेस्या अपनी छोरीकों नृत्य सिखावत हती। सो वह छोरी परम सुंदर बरस बारह की हती, कंठहू परम सुंदर हतो। सो गाननृत्य में चतुर बहोत हती। सो वह वेस्या ख्याल टप्पा गावत हती। सो वह छोरी को गान कृष्णदास के कानपें पर्‍यो हतो सो कृष्णदास के मनमें बैठि गयो, सो प्रसन्न होय गये। तब कृष्णदास ने तहां अपनो रथ ठाड़ो कियो। सो भीड़ सरकायके वा छोरी को रूप देखे, सो तहां गान सुनिके मोहित होय गये।

भावप्रकाश – तहां यह संदेह होय, जो – कृष्णदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के कृपापात्र सेवक वेस्या के गान पर मोहित क्यों भये ? जो–ये तो श्रीठाकुरजी के ऊपर मोहित हैं। सो उनकों अप्सरा देवांगना तुच्छ दीसत हैं। और श्रीआचार्यजी आपु जलभेद ग्रंथ में कहे हैं, जो –

'वेश्यादिसहिता मत्ता गायका गर्तसंज्ञिताः।
जलार्थमेव गर्तास्तु नीचा गानोपजीविनः॥

वेस्यादि सहित गायक भाट, डोम, नीच को गान सूकर के गड़ेला के जलवत् है। सो वामें न्हाय, पीवे, सो जैसें नीच को गानरस पीवे। या प्रकार के दोष श्रीआचार्यजी कहे हैं। सो कृष्णदास परमज्ञानवान मर्यादा के रक्षक। सो ये वेस्या के गानपें रीझे ? सो इनकी देखादेखी करे सो बहिर्मुख होय। ये तो सब कों सिक्षा देवे कों उद्धार करन कों प्रगटे हैं, तासों ये कृष्णदास वेस्या के ऊपर क्यों रीझे ?

यह संदेह होय तहां कहत हैं, जो–यहां कारन और है। जो–यह वेस्या की छोरी लीलासंबंधी दैवी जीव ललिताजी की सखी हैं, सो लीला में इनको नाम 'बहुभाषिनी' है। सो एक दिन ललिताजी श्रीठाकुरजी के लिये सामग्री करत हती, तब ललिताजी ने बहुभाषिनी सों कही, जो–तू मिश्री पीसिके ले आउ। सो बहुभाषिनी मिश्री को डबरा भरिके ले चली। सो दूसरी सखी सों बात करते छांटा उड्यो सो मिश्री में पर्यो। सो बहुभाषिनी कों खबरि नाहीं। पाछे मिश्री को डबरा लेके ललिताजी के पास आई, तब ललिताजी परम चतुर हती, सो जानि गई। पाछें बहुभाषिनी सों कही, जो– यह सामिग्री छुइ गई, जो–तेरे मुख तें छांटा पर्यो है। सो भगवद् इच्छा होनहार। तब बहुभाषिनी ने कही, जो–तुम झूठ कहत हों, छीटा तो नाहीं पर्यो। और श्रीठाकुरजी सखामंडली में सबकी जूठनि हू लेत हैं। सो तब ललिताजी ने कह्यो, जो – प्रभुन की लीला तू कहा जाने ? प्रभु प्रसन्न होय चाहे सो करें सोई छाजे। जो– अपने मन तें कछू हीन क्रिया करे सोई भ्रष्ट। तासों तू हीन ठिकाने जनमेगी। तब बहुभाषिनी ने कही, जो–तुमहू शूद्र के घर जनम लेके मेरो उद्धार करो। जो–तुमकों छोड़िके मैं कहां जाऊँ ? सो या प्रकार परस्पर शाप भयो। तब कृष्णदास शूद्र के घर जन्मे, और बहुभाषिनी को जनम वेस्या के घर मात्र भयो, सो लौकिक पुरुष को मुंह नाही देख्यो। सो कृष्णदास कों श्रीगोवर्द्धनधर प्रेरिके आगरे में वा वेस्या के अंगीकार के लिये पठाये। तासों कृष्णदास के हृदय में वेस्या को गान प्रिय लग्यो।

सो ठाड़े होयके गान नृत्य सुनिके मनमें विचारे, जो–यह सामग्री तो अति उत्तम है, और दैवी जीव है, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के लायक है। तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु वाकों अंगीकार करें तो आछो है। सो यह कृष्णदासजी अपने मन में विचार करिके दस रुपैया वा वेस्याकों देके कहे, जो– हमारे डेरान पर रात्रिकों आइयो। यह कहिके कृष्णदासजी जहां हवेली में हमेस उतरते ताही हवेलीमें उतरे, और सामग्री जो लेनी हती सो गाड़ा लदाय दिये। ता पाछें रात्रि प्रहर एक गई, तब वह वेस्या समाज सहित आई, सो तब नृत्य गान कियो। सो कृष्णदास बहोत प्रसन्न भये। तब वा वेस्या कों रुपैया १००) सौ दिये। और वा वेस्या सों कहे, जो–तेरो रूप, गान, नृत्य सब

आछे हैं। तासों सवारे हम श्रीगोवर्द्धन जायगें, और हमारो सेठ तो उहां हैं, जो–तेरो मन होय तो तू चलियो। तब वा वेस्या ने कही, जो–हमकों तो यही चहिये। पाछें वह वेस्या अपने मनमें बहोत प्रसन्न भई, जो–ये इतने रुपैया दिये तो सेठ न जाने कहा देयगो ? सो तब वेस्या ने घर आयके अपनी गाड़ी सिद्ध कराई, सो गायवे को साज सब आछे बनाय गाड़ी उपर धरि राख्यो। तब सवारे भये कृष्णदास के पास आई। पाछें कृष्णदास वा वेस्या कों लिवाय के ले चले, सो मथुरा आय रहे। तब दूसरे दिन मथुरा तें चले सो मध्याह्न समय गोपालपुर में आये। पाछें वा वेस्या कों न्हवाय के नवीन वस्त्र पहेरवेकों दियो, सो वाने पहरचो। तब कृष्णदास अपने मन में विचारे, जो–यह ख्याल टप्पा गायगी सो श्रीगोवर्द्धनधर सुनेंगे। तासों मैं याकों एक पद सिखाऊं। तब कृष्णदास ने वा वेस्या कों एक पद सिखायो। और कह्यो, जो–ये पद तू पूरवी राग में गाइयो। सो पद –

राग पूर्वी – मेरो मन गिरिधर छबि पर अटक्यो। ललित त्रिभगी अंगन ऊपर चलि गयो तहां ही ठठक्यो ॥१॥ सजल स्यामघन नील बरन है फिरि चित्त अनत न भटक्यो। 'कृष्णदास' कियो प्रान न्योछावरि यह तन जग सिर पटक्यो ॥२॥

यह पद कृष्णदासने वा वेस्या कों सिखायो। ता पाछें उत्थापन के दरसन होय चुके, तब भोग के दरसन के समय वा वेस्या कों समाज सहित कृष्णदास परवत के ऊपर ले गये।

भावप्रकाश – सो भोग के समय यातें ले गये, जो–उत्थापन के समय निकुंज में जागिके (श्रीठाकुरजी) उठत हैं। तातें उत्थापन भोग बेगि आयो चहिये। और भोग के दरसन – ब्रज के मारग में पधारत हैं, सो अनेक भक्तन कों अंगीकार हैं। तासों याहू को अंगीकार करनो है। तासों भोग के समय कृष्णदास वेस्या कों परवत उपर ले गये।

पाछें भोगके किवाड़ खुले । तब वह वेस्या ने पहले नृत्य कियो, ता पाछें गान करन लागी । सो कृष्णदास ने पद करिके सिखायो हतो सो गायो । सो गावत २ जब छेली तुक आई, जो– 'कृष्णदास कियो प्रान न्योछावरि यह तन जग सिर पटक्यो' या पद को गान करत ही वा वेस्या की देह छूटि गई, सो दिव्य देह होय लीला में प्राप्त भई सों तब सगरे समाजी तथा वा वेस्याकी माता रोवन लागी । जो हम यासों कमाय खाते, अब हम कहा करेंगे ? तब कृष्णदासने उनकों नीचे ले जायके कह्यो, जो–अब तो भई सो भई, जो याकी इतनी आरबल हती । सो या बात को कोऊ कहा करे? अब तुम कहो सो तुमकों देऊँ । तब उन कही, जो–हजार रुपैया देउ जो–कछुक दिन खांय । पाछें जो होनहार होयगी सो सही । तब कृष्णदास नें हजार रुपैया देके उन सबन कों बिदा किये । सो या प्रकार वा वेस्या की छोरी कों श्रीगोवर्द्धननाथजी कृष्णदास की कानि तें आपु अंगीकार किये ।

भावप्रकाश – तहां यह संदेह होय, जो–श्रीआचार्यजी के संबंध बिना लीला की प्राप्ति कैसे भई ? तहां कहत हैं, जो–कृष्णदास के हृदय में श्रीआचार्यजी बिराजत हैं । सो कृष्णदास ने पद वेस्या की छोरी कों सिखायो, सो देखिवे मात्र है । या पद द्वारा श्रीआचार्यजी को संबंध कराये । तासों यह पहिली तुक में कहे, जो– 'मेरो मन गिरिधर–छबि पर अटक्यो' सो सगरो धरम, मन लगायवे की रीति करी है । जीव अपनी सत्ता मानि स्त्री, पुत्र, देह में मन लगायो (है) तासों समर्पन करावत हैं । तहां कोऊ कहे, जो–जीव सब दे चुक्यो, जो–अपनी सत्ता छोड़िके प्रभुन की सत्ता सब है । तासों मोकों तो एक श्रीकृष्ण ही गति हैं । तासों या पद में कहे, जो–मेरो मन श्रीगोवर्द्धनधर की छबि पर अटक्यो सो सब छोडिके । या प्रकार कृष्णदास द्वारा श्रीआचार्यजी आपु संबंध कराये, यह जाननो । तोहू संदेह होय, जो–गुरु बिना लीला में कैसे प्राप्ति भई ? सो अलीखान कों प्रभु दरसन दिये । पाछे अलीखान कों और अलीखान की बेटी कों सेवक होयवे की कही, सो सेवक कराये । यहां नाहीं कराये, यह संदेह होय । सो काहेते ? जो–ब्रह्मसंबंध में श्रीगोवर्द्धनधर की हू यही आज्ञा है,

जो–जाकों तुम ब्रह्मसंबंध करवावोगे, ताकूं मैं अंगीकार करूंगो । तासों इनकों श्रीआचार्यजी महाप्रभु, श्रीगुसांईजी द्वारा ब्रह्मसंबंध न भयो और लीला की प्राप्ति कैसे भई ? उद्धार होय परंतु लीला की प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ । सो ब्रह्मसंबंध को दान करिवे के लिये श्रीआचार्यजी के कुल को विस्तार भयो । सो काहे तें ? जो–सेवकन कों श्रीआचार्यजी आपु नाम सुनायवे की आज्ञा दीनी, परि ब्रह्मसंबंध की नाहीं । तासों ब्रह्मसंबंध को दान वल्लभकुल ही तें होय । सो और तें फलित नाहीं है । यह संदेह होय, तहां कहत हैं जो–वेस्या की छोरी देह तजिके लीला में गई । तहां लीला में ललिता, श्रीस्वामिनीजी सदा बिराजत हैं । सो कृष्णदासजी लीला में ललिता रूप होय जगत तें काढिके लीला में पठाये, सो लीला में श्रीललिताजी ने श्रीस्वामिनीजी द्वारा ब्रह्मसंबंध कराय अपनी सेवा मं राखे । सो काहेतें ? जो–ललिताजी की सखी है । या प्रकार ब्रह्मसंबंघ भयो । सो जैसे मथुरा में नागर की बेटी कों लीला में ब्रह्मसंबंध श्रीगुसांईजी कराये, यह भाव जाननो ।

सो वे कृष्णदास ऐसे भगवदीय हते । जो वेस्या कों अंगीकार करायो ।

वार्ता – प्रसंग ६ – और एक समय सगरे वैष्णव मिलिके कुंभनदासजी के पास आये । सो उनकों प्रीति सों बैठारिके पूछे, जो–आजु बड़ी कृपा करी, जो–कछु आज्ञा करिये । तब वैष्णवन ने कही, जो–तुमसों कछु मारग की रीति सुनिवे कों आये हैं । तब कुंभनदासजी कह्यो, जो–मारग की रीति में तो कृष्णदास अधिकारी निपुण हैं, सो उनसों पूछो । तब उन वैष्णवन ने कही, जो–हमारी सामर्थ्य नाहीं है, जो–कृष्णदास सों पूछि सकें । तब कुंभनदासजी ने कह्यो, जो–तुम मेरे संग चलो, जो–तिहारी ओर तें हम पूछेंगे । तब सगरे वैष्णव कुंभनदासजी के संग गये ।

भावप्रकाश – सो कुंभनदासजी यातें नाहीं कहे, जो–कुंभनदासजी को मन रहस्य लीला में मगन है । सो कहा जानिये जो प्रेम में कहा वस्तु निकसि पड़े ? और कीर्तन में गूढ रीति सों लीला वरनन करत हैं । तासों जाको जैसो अधिकार है, ताकों तैसो कीर्तन में भासत है । और वैष्णवन सों कहनो परे सो

खोलिके समुझावनो परे। तासों कुंभनदासजी कृष्णदास के पास सगरे वैष्णवन कों संग लेके आये।

सो तब सब वैष्णवन कों देखिके कृष्णदास बहोत प्रसन्न भये, और सबन कों आदर करिके बैठारे। ता समय कृष्णदासनें यह कीर्तन गायो। सो पद –

राग सारंग – गिरिधर जब अपुनो करि जाने। ताकौ मन भक्तन की सेवा भक्त चरनरज सदा लुभाने ॥१॥ भक्तन में मति भक्तन में गति हरिजन हरि एक करि माने। 'कृष्णदास' मन बच क्रम करि हरिजन संगे हरि उर आने ॥२॥

यह पद कृष्णदासने कह्यो। पाछें कृष्णदासने पूछी, जो–आज मो पर सगरे भगवदीय कृपा करे, सो–मेरे पास पधारे। तासों अब जो प्रसन्न होयके आज्ञा करो सो मैं करूं। तब कुंभनदासजीने कह्यो, जो–सगरे वैष्णवन को मन पुष्टिमारग की रीति सुनिवे को है। सो कहा कहिये ? कहा सुमिरन करिये ? जासों ऐसे पुष्टिमारगको अनुभव होय, सो कृपा करिके सुनावो। तब कृष्णदासने कह्यो, जो–कुंभनदासजी ! तुम सगरे प्रकार करिके योग्य हो, जो–श्रीआचार्यजी के कृपापात्र भगवदीय हो, सो उचित है। तुम बड़े हो, जो–तिहारे आगे मैं कहा कहूँ ? तुमसों कछू छानी नाहीं है। तब कुंभनदासजी कृष्णदाससों कहे, जो–तुम कहो, हमारी आज्ञा है। जो सगरे सेवकन में तुम मुख्य हो। सेवकन को कार्य तिहारे हाथ है, जो–यह पुष्टिमारग के अधिकारी तुम हो, तातें तुम कहो। तब कृष्णदासने पहले अष्टाक्षर को भाव कीर्तन में कह्यो, सो पद –

राग सारंग – कृष्ण श्रीकृष्णः शरणं मम उच्चरे। रेन दिन नित्य प्रति सदा पल छिन घडी करत विध्वंस जन अखिल अघ परिहरे ॥१॥ होत हरिरूप ब्रजभूप भावे सदा अगम भवसिंधुकों बिना साधन तरे। रहत निसदिवस आनंद उरमें भरे

पुष्टि लीला सकल सार उर में धरे ॥२॥ रमा अज सिव सेष सनकादि सुक सारदा व्यास नारद रटे पल मुख ना टरे। लाल गिरिधरनकी महिमा अतुल जगमगे सरन 'कृष्णदास' निगम नेति नेति करे ॥३॥

सो यह अष्टाक्षर को भाव कहिके अब पंचाक्षर को भाव कीर्तन में गाये। सो पद –

राग सारंग – कृष्ण ये कृष्ण मन मांह गति जानिए। देह ईंद्रिय प्रान दारागारादि वित्त आत्मा सकल श्रीकृष्ण की मानिए ॥१॥ कृष्ण मम स्वामी हों दास मन वच क्रम, कर्ता येही सदा जिय आनिए। 'कृष्णदासनिनाथ' हरिदासवर्यधर चरनरज वल्लभाधीश मन सानिए ॥२॥

सो ये दोय कीर्तन कृष्णदासने गाय सुनाये। तब सगरे वैष्णव प्रसन्न होयके कहे, जो–कृष्णदास ! तुम धन्य हो, जो–दोय कीर्तन में संदेह दूरि कियो। और मारग को सब सिद्धांत बतायो। ता पाछें कृष्णदाससों बिदा होयके सगरे वैष्णव अपने घर कों गये। सो वे कृष्णदास श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ७ – और कृष्णदास को गंगाबाई क्षत्रानीसों बहोत स्नेह हतो।

भावप्रकाश – सो काहेतें ? जो–लीला में गंगाबाई श्रुतिरूपा के जूथ में तामसी भक्त हैं। सो मथुरा के एक क्षत्री के घर जन्मी। पाछे बरस ११ की भई। तब गंगाबाई को मथुरा में एक क्षत्री के बेटा सों ब्याह भयो। पाछे गंगाबाई क्षत्राणी के जो बेटा होय सो मरि जाय, सो नौ बेटा भये। ता पाछे एक बेटी भई। सो बेटी को बिवाह गंगाबाई क्षत्राणी ने कियो। सो गंगाबाई की बेटी के गहनाबहोत हतो सो वह बेटी मरी। सो बेटी को गहनो लाख रुपया को दाबि राख्यो, सो कछू मथुरा के हाकिम कों देके गहनो सब राख्यो। ता पाछे बरस ५५ की भई तब झगडा के लिये श्रीनाथजीद्वार आयके रही। सो कृष्णदास सों मिलिके श्रीआचार्यजी सों सेवक होयवे की कही। तब कृष्णदासने श्रीआचार्यजी सों बिनती कीनी, जो–महाराज ! गंगाबाई क्षत्राणी कों सरन लीजिये। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे, जो–जीव तो दैवी है, परंतु अभी मन

श्रीठाकुरजी में नाहीं है। तब कृष्णदास ने बिनती कीनी, जो–महाराज ! आपकी कृपा तें श्रीगोवर्द्धननाथजी कृपा करेगें। पाछे श्रीआचार्यजी आपु कृष्णदास के आग्रह सों गंगाबाई कों नामनिवेदन करवायो। सो कृष्णदास पहले श्रीगोवर्द्धननाथजी के भेटिया होय के परदेस कों जाते, तब गंगाबाई क्षत्राणी मथुरा कों आवती। पाछे कृष्णदास श्रीनाथजीद्वार आवते तब गंगाबाई क्षत्राणी हू मथुरा सों सगरी वस्तु ले श्रीजीद्वार आवती। सो कृष्णदास गंगाबाई को मन भगवद्धर्म में लगायवे के तांई दोऊ समे को महाप्रसाद श्रीनाथजी को वाके घर पठावते। क्यों ? जो–गंगाबाई की खानपान में प्रीति बहोत हती। सो कृष्णदास बहोत सुंदर सामग्री श्रीनाथजी कों आरोगावते, और गंगाबाई कों भगवद्धर्म समुझावते। पाछे कृष्णदास गंगाबाई कों श्रीनाथजी के सगरे दरसन ही करावते। सो कृष्णदास के संग तें गंगाबाई क्षत्राणी को मन अलौकिक भयो।

सो एक दिन श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों राजभोग समर्पत हते, सो सामग्री के ऊपर गंगाबाई की दृष्टि परी। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु राजभोग आरोगे नाहीं। ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु भोग सरायो। पाछें राजभोग आरती करि अनोसर करि आपु परवत तें नीचे पधारे। सो सेवक भीतरिया महाप्रसाद लिये। और श्रीगुसांईजी आपहू महाप्रसाद लेके पोंढ़े। ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी आय रामदास भीतरिया क्रों लात मारिके जगाये। तब रामदासजी जागे। सो देखे तो श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं। सो रामदासजी दंडवत् करिके हाथ जोड़िके ठाड़े भये। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु रामदास सों कहे, जो–मैं तो भूख्यो हूँ। पाछें रामदासजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों बिनती कीनी, जो–महाराज ! श्रीगुसांईजी ने राजभोग समर्प्यो हतो, और तुम भूखे क्यों रहे ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कही, जो–राजभोग में तो सामग्री ऊपर गंगाबाई की दृष्टी परी, तासों मैं नाहीं आरोग्यो हूँ। तब रामदासजी भीतरिया

श्रीगुसांईजी के पास जाय चरणारविंद दाबिके जगाये, और बिनती कीनी, जो–महाराज ! श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु भूखे हैं। सो राजभोग में गङ्गाबाई की दृष्टि परी है, तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु राजभोग नाहीं आरोगे हैं। सो यह सुनत ही श्रीगुसांईजी आपु तत्काल उठिके स्नान करिके श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में पधारे। पाछें रामदासजी न्हाय के आये, इतने में सब भीतरिया हू स्नान करिके आये। तब श्रीगुसांईजी आपु सीतकाल देखिके भीतरियान सों कहे, जो–बड़ी और भात करो। सो बेगि सिद्ध होय जायगो, तातें तैयार करो। तब भीतरिया ने बड़ी और भात कियो। सो श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कों भोग धरे। ता पाछें राजभोग की सगरी सामग्री सिद्ध भई, और सेनभोग की हू सगरी सामग्री सिद्ध भई। सो राजभोग, सेनभोग दोऊ भोग सङ्ग ही श्रीगुसांईजी ने धरे। पाछें समय भये भोग सरायो। ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी कों पोढ़ायके अनोसर करवाय के बाहिर पधारे। सो एक डबरा में बड़ी भात श्रीगुसांईजी अपुने श्रीहस्त में लेके परवत तें नीचे पधारे। पाछें सगरे सेवकन कों बड़ीभात अपने हाथ सों रंच-रंच दियो, और रंचक श्रीगुसांईजी आपु आरोगे। बड़ी भात महाप्रसाद बहुत स्वाद भयो, सो श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख सों बहोत सरहायो। पाछें रामदास आदि सब सेवकनने श्रीगुसांईजी सों कह्यो, महाराज ! यह सामग्री तो सीतकाल में कितनीक बार करी है, परंतु आजु बहोत स्वाद भयो। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु भूखे हते सो प्रीति सों आरोगे, तासों स्वाद अद्‌भुत भयो। ता समय कृष्णदास पास ठाड़े हते। सो कृष्णदास ने कही, जो–

महाराज ! आपुही करनहारे और आपुही आरोगनहारे, सो स्वाद क्यों न होय ? तब श्रीगुसांईजी आपु वा समय श्रीमुखसों कहे, जो–ये तिहारे ही किये भोग भोगत हैं ।

भावप्रकाश – तहां यह संदेह होय, जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी आरोगे नाहीं। सो श्रीगुसांईजी आपु भोग सराये, आचमन मुख वस्त्र करायो। पाछें श्रीगोवर्द्धनधर कों बीरी आरोगाये । सो भूखे श्रीगुसांईजी ने न जानें ? और बीरी आरोगत श्रीगोवर्द्धनधर श्रीगुसांईजी सों न कहे, जो–मैं राजभोग नाहीं आरोग्यो ? ताको कारन कहा ? जो–रामदास भीतरिया सों क्यों कहे ? सो यह संदेह होय तहां कहत हैं, जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी वा दिना श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी के यहां श्रीगिरधरजी ने बडीभात करायो हतो, श्रीसोभाबेटीजी किये । सो तब श्रीगिरिधरजी और श्रीसोभाबेटीजी के मन में आई, जो–श्रीगोवर्द्धनधर आपु पधारे और नौतन सामग्री आरोगें । तासों उहां वह दूसरो स्वरूप (भक्तोद्धारक) श्रीगिरिराजतें पधारिके श्रीगोवर्द्धनधर बड़ीभात आरोगे। और श्रीगिरिधरजी, श्रीसोभाबेटीजी को तो मनोरथ, सो भक्तन कों अनुभव करावत हैं। सो स्वरूप तो आरोगि पाछें श्रीगिरिराज पर्वत के ऊपर पधारे। सो उहां (गिरिराज) सगरे सेवक महाप्रसाद ले चुके। और श्रीगुसांईजी आपु पोंढ़े। ता समय मंदिर में श्रीस्वामिनीजी ने पूछी, जो–कहो, कहां होय आये हो ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो–बड़ीभात श्रीगोकुल में श्रीगिरिधरजी श्रीसोभाबेटीजी को मनोरथ (हतो) सो आरोग के आयो हूँ । यह सुनिके श्रीस्वामिनीजी हू बड़ीभात आरोगवे को मनोरथ कियो, जो–बड़ीभात आरोगें तो आछो सो यहाँ (तो) (राजभोग) होय चुके। तब श्रीस्वामिनीजी ने श्रीनाथजी सों कह्यो, जो–जायके रामदास सों कहो, जो –सामग्री पें गंगाबाई क्षत्राणी की दृष्टि परी है। सो काहेतें ? जो–लीलासृष्टि के बचन हू सिद्ध करने हैं। सो श्रीगुसांईजी कों छै महिना को बिप्रयोग है। सो यातें, जो–लीला में एक समय श्रीठाकुरजी ललिताजी सों कहे, जो–मैं तेरी निकुंज में पधारूँगो । यह बात श्रीचंद्रावली ने सुनी । सो श्रीचंद्रावलीजी ने श्रीठाकुरजी कों विविध चतुराई करि सेवा द्वारा ललिताजी के यहाँ छै मास तक पधारवे सों बरजे। सो ललिताजी विरह करि महा कृष होय गईं। पाछें यह बात श्रीस्वामिनीजी ने जानी, सो श्रीस्वामिनीजी ललिताजी कों संग लेके श्रीठाकुरजी के पास वाही समय आईं। और श्रीठाकुरजी सों कह्यो, जो–तुम (नें) छै महिना लों मेरी सखी कों विरह दियो, अब तुम छै महिना लों ललितासखी के बसमें रहोगे। और जाने मेरी सखी कों दुःख दियो हैं, सो छै महिना लों दुःख पावो, और वाकों तिहारो दरसन हू न होय। सो यह बात सुनिके श्रीठाकुरजीआप चुप होय रहे।

यह बात एक सखी ने श्रीचंद्रावलीजी सों कही। सो सुनिके श्रीचंद्रावलीजी कहे, जो श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी तो बड़े हैं। तासों इनसों तो कछू कही जाय नाहीं। परंतु ललिता सखी होय ऐसो खोटो कियो, जो–श्रीस्वामिनीजी की सखी, सो मेरी सखी बराबरि है। सो इन (नें) मोकों शाप दिवायो, जो–छै महिना लों मोकों प्रभुन को दरसन हू नाहीं ? सो ललिता ने श्रीस्वामिनी–द्रोह कियो। सो काहेतें ? जो–श्रीठाकुरजी तें श्रीस्वामिनीजी प्रगटी हैं। और स्वामिनीजी के मुखचंद्रतें श्रीचंद्रावली प्रगटी। श्री चंद्रावलीजीतें सगरी स्वामिनी सखी प्रगटी हैं। तासों श्रीठाकुरजी के दक्षिण भाग श्रीचंद्रावलीजी बिराजत हैं। यातें, जो–सगरी सखीन के स्वामिनीरूप, श्रीचंद्रावलीजी (सो सब में) श्रेष्ठ हैं। तासों श्रीचंद्रावलीजी ने कही, जो ललिता ने स्वामिनी–द्रोह कियो है। तासों ललिता की अकाल मृत्यु होऊ, और प्रेतयोनिकूँ पावो। सो श्रीठाकुरजी हू, श्रीस्वामिनीहू रक्षा न करि सके। और काहूतें प्रेतयोनि निवृत न होय। जो–मोकों शाप दिवायो ताको यह फल भोगो। यह बात काहू सखी ने ललिता सों कही। सो सुनत ही ललिता महा कंपायमान होयके तत्काल दोरिके श्रीस्वामिनीजी के चरनन में आयके गिरि परी ! पाछे अपनी सब बात ललिता ने कही। तब श्रीस्वामिनीजी ने श्रीठाकुरजी कों बुलाय के कह्यो, जो – ललिताजी अपने हाथ सों गई तासों अब कछू उपाय करो। पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी कों संग ले ललितादि समाज सहित श्रीचंद्रावलीजी के यहाँ पधारे। सो श्रीचन्द्रावलीजी तत्काल उठिके श्रीठाकुरजी कों श्रीस्वामिनीजी कों नमस्कार करिके ऊँचे आसन पधराये। पाछे परम प्रीति सों दोउ स्वरूपन की पूजा करिके सुन्दर सामग्री आरोगाये ता पाछे बीरी आरोगाय श्रीचंद्रावलीजी हाथ जोरी के ठाड़ी भई। सो तब दोऊ स्वरूप ने प्रसन्न होयके श्रीचंद्रावलीजी को हाथ पकरी के पास बैठारी। ता पाछे श्रीस्वामिनीजी कहे, जो–सुनो श्रीचंद्रावलीजी ! तिहारी प्रीति तो महा अलौकिक है, और हमारे तिहारे में कछू भेद नाहीं है। और यह ललिता अपनी सखी है, सो यह तिहारी है। तासों अब याको शाप भयो है, सो ताको छुटकारो करो। तब श्रीचन्द्रावलीजी कहे, जो–ललिता अपनी है। तासों यह जो कछू भयो है सो यह जगत पर लीला करन अर्थ भयो है। सो यह ललिता प्रेत होयगी ताको मैं ही उद्धार करूँगी। जो– यह मेरो निश्चय बचन है। तब ललिता श्रीचन्द्रावलीजी के चरनन में गिरिके कह्यो, जो –मैं तिहारो अपराध कियो सो पायो है। तब श्रीस्वामिनीजी ने कही, जो – यह सगरो परिकर, कलियुग में श्रीगिरिराज ऊपर लीला करनी है, तहां सब प्रगट होयगो। सो श्रीस्वामिनीजी के यह बचन सुनिके श्रीठाकुरजी श्रीचन्द्रावलीजी ललिता आदि सब प्रसन्न भये। सो लीलासृष्टि में अलौकिक स्नेह है,

और अलौकिक शाप है, और अलौकिक ही ईर्षा है, जो–मायाकृत तहां नाहीं है। सो उहां ही करिके है। सो भूमि पर जस प्रगट के अर्थ ईर्षा शाप को मिष मात्र। भूमि के जीव लीलागान करि प्रभुन कों पावें, सो यही अलौकिक करनो। सो लौकिक ईर्षा शाप जाने ताको बुरो होय, और अपराधी होय सो लीला सृष्टि में सब अलौकिक क्रिया है। यह जाननो। या प्रकार श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी की इच्छा तें श्रीगोवर्द्धन गिरिराज में प्रगट भये, और श्रीस्वामिनी रूप श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोवर्द्धनधर कों प्रगट किये। सो लीला में श्रीस्वामिनीजी तें चन्द्रावलीजी को प्रागट्य। ताही भांति सों यहां श्रीआचार्यजी सों श्रीगुसांईजी को प्रागट्य, और ललिता सो कृष्णदास अधिकारी भये। और श्रीगोवर्द्धनधर के अनेक स्वरूप हैं, परंतु दोय रूप सदा रहत हैं। सो एक तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने उहां पधराये सो तहां बिराजमान हैं, और एक स्वरूप (भक्तोद्धारक) सों सगरे भक्तन कों सुख देत हैं। जो– कुंभनदास, गोविंदस्वामी के सङ्ग खेलते। सो जहां तहां भगवदीय हैं, तिनकों अनुभव करावत हैं। तातें जा समय श्रीगुसांईजी आपु भोग समर्पते हते और गङ्गाबाई क्षत्राणी की दृष्टि परी, ता समय श्रीगुसांईजी राजभोग धरे हैं सो आरोगे (क्यों) जो– श्रीगोवर्द्धनधर आरोगे नाहीं, तो असमर्पित खाय के सगरे सेवक भ्रष्ट होय जाय ? तातें श्रीआचार्यजी के मंदिर में पधराये सो स्वरूप ने आरोग्यो। यातें श्रीस्वामिनीजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो, जो–श्रीगुसांईजी कों छै महिना को वियोग होय, तासों गङ्गाबाई को नाम लीजियो। सो कृष्णदास की और गङ्गाबाई की प्रीति है सो गङ्गाबाई सों श्रीगुसांईजी कहेंगे। और कृष्णदास कों बोली मारेंगे। तब कृष्णदास कों बुरी लगेंगी। सो काहेंते ? जो–यह कार्य करनो, जो–कृष्णदास के मन में बुरी लागे, तब श्रीगुसांईजी कों वियोग होय। तासों तुम जाय के कहो, जो– मैं भूख्यो हूँ। तब श्रीनाथजी ने रामदास सों जाय कही। परि रामदास यह भेद जाने नाहीं। सो रामदास ने श्रीगुसांईजी सों जाय कह्यो, तब श्रीगुसांईजी मन में जाने जो– सामग्री ऊपर गङ्गाबाई की दृष्टि परी। अब हम सों और कृष्णदास सों लीला में बात भई हती सो पूरन करिवे की श्रीनाथजी की इच्छा है सो निश्चय होयगो, यह जानि परत है। सो तासों अब जो सेवा बने, सो प्रीति सों करनी। क्यों ? जो–सेवा अब दुर्लभ है। यह बिचारि के तत्काल न्हाय बड़ी भात यहाँ नाहीं भयो हतो और श्रीगोकुल तें आरोगि के आये, तासों गिरिराज के ठाकुर कों हू धरनो, सो बेगि सिद्ध करि धरे। ता पाछे सेनभोग की संग राजभोग धरे। ता पाछे सेन आरती करि अनोसर कराय के मन में बिचारे, जो–अब श्रीगोवर्द्धननाथजी को दरसन महाप्रसाद सब ही दुर्लभ भयो। सो बड़ी भात को डबरा उठाय मृतिका के पात्र ही में ठलाय के परवत तें उतरि रंचकरंचक सबन कों दिये, सो आपही लिये, बहोत सराहे तब कृष्णदास ने भगवद् इच्छातें बोली मारी (व्यंग) जो– आपही करन हारे,

और आप ही आरोगन हारे। सो क्यों न स्वाद होय ? सो यामें यह जताये जो–हमसों न पूछे, जो– तुम ही जाय सामग्री किये, और तुमही जायके आरोगाये। ऐसो सौभाग्य तिहारो ही है। यह बोली कृष्णदास मारे। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–यहि तिहारो ही कियो भोग भोगत हैं। सो यह कहिके दोऊ बात जताये, जो–गङ्गाबाई क्षत्राणी सों प्रीति करि वाकों बैठारि राखे, सो वाकी राजभोग की सामग्री पे दृष्टि परी। सो यह तिहारो कार्य है। नाहीं तो गङ्गाबाई ऊहां कैसे जाय ? और तुमने लीला में श्रीस्वामिनीजी सों शाप दिवायो, सोहू तिहारो कार्य है। सो तिहारे ही भोग भोगत हैं। यामें यह जताये, जो–हमकों खबरि परि गई, जो–अब तिहारो भाग्य खुल्यो, सो तुम करो सो भोगोगे। जो– मन में तो आय चुकी है। अब ऊपर तें करनो है, सो करोगे।

सो यह बात सुनिके कृष्णदास के मन में बहोत बुरी लगी। तब कृष्णदास मनमें विचारे, जो–श्रीगुसांईजी के दरसन बंद करने। सो या बात को कौन प्रकार सों उपाय करनो। तब श्रीगोपीनाथजी श्रीगुसांईजी के बड़े भाई तिनके पुत्र श्रीपुरुषोत्तमजी हते। सो तिनसों कृष्णदास मिलिके कहे, जो–तुम श्रीआचार्यजी के बड़े पुत्र श्रीगोपीनाथजी हैं, तिनके पुत्र हो। सो तुम क्यों चुप बैठि रहे हो ? जो श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा सिंगार सब करो। जो–श्रीगुसांईजी ने अपनो सब हुकम करि राख्यो है। टीकेत तो तुम हो। तब श्रीपुरुषोत्तमजी ने कही, जो–हमारी सामर्थ्य नाहीं है, जो– श्रीगुसांईजी सों बिगारें। तब कृष्णदास नें कह्यो, जो–हमारे संग न्हाय के चलो, जो–परवत के ऊपर मंदिर में जायके श्रीनाथजी को सेवा सिंगार करो, जो–हम सब करि लेंइगे। पाछें श्रीपुरुषोत्तमजी उत्थापन तें दोय घड़ी पहले न्हाये, सो कृष्णदास के संग परवत ऊपर जायके मंदिर में बैठि रहे। और कृष्णदास दंडोती सिला पै जायके बैठि रहे। तिने में श्रीगुसांईजी आपु स्नान करिकें दंडोति सिला के

पास आये। तब कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी सों कही, जो – श्रीपुरुषोत्तमजी न्हाय के मंदिर में पधारे हैं। टीकेत तो वै हैं, तासों जब वे आप कों बुलावेंगे, तब आपु परवत ऊपर आइयो। तासों अब आपु परवत ऊपर मति चढ़ो, जो–श्रीगोवर्द्धनधर के दरसन न होंयगे तब श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी की ध्वजा कों दंडवत करि लीला की बात सुमरन करिके परासोली कूं पधारे, तहाँ रहे। सो तहां विप्रयोग को अनुभव करन लागे।

भावप्रकाश – सो श्रीगोकुल हू श्रीनवनीतप्रियजी के यहां याते नहिं पधारे, जो–श्रीस्वामिनीजी के बचन हैं। जो–हमहूँ कों और श्रीठाकुरजी कों हू विप्रयोग होयगो। तासों श्रीगोकुल जायेंगे तो कहा जानिये कैसी होय ? तासों अब छै महिना लों मिलाप श्रीठाकुरजी सों दुर्लभ हैं, तासों परासोली में बैठि रहैं।

और श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में परासोली की ओर एक बारी हती, सो जा पर श्रीगोवर्द्धननाथजी आयके श्रीगुसांईजी कों दरसन देते। सो श्रीगुसांईजी आपु सगरे दिन परासोली तें बारी कों देखते। सो कृष्णदास मंदिर में ते नीचे जाँय तब श्रीगोवर्द्धननाथजी बारी पर आय बैठते। सो कृष्णदास एक दिन आन्योर में आये, तब बारी पर श्रीगोवर्द्धननाथजी कों बैठे देखे। तब कृष्णदास प्रातःकाल मंदिर में आयके बारी चिनवाय के श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो, जो–मैं तो श्रीगुसांईजी के दरसन की मने कियो हूँ, सो तुम बारी पर क्यों बैठे ? और अब उनकी ओर मति जैयो। सो कृष्णदास परासोली की ओर श्रीनाथजी कों खेलिवे कों हू न जान देते। सो श्रीगोवर्द्धनधरकों श्रीगुसांईजी बैठि बैठिके विज्ञप्ति करते। सो रामदास मुखिया भीतरिया जब श्रीगुसांईजी के पास राजभोग आरती सों पहोंचि के जाते, सो

आपु कों श्रीनाथजी को चरणोदक देते। तब श्रीगुसांईजी आपु फूल की माला करि राखते, सो माला के भीतर विज्ञप्ति को श्लोक लिखि देते । सो रामदासजी ले जाते । सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों माला पहिरावते, तब माला में ते विज्ञप्ति को कागज निकासिके श्रीनाथजी बांचते। पाछें वाको प्रतिउत्तर श्रीनाथजी बीड़ा के पान की ऊपर अपनी पीक सों सींकते लिखि देते। सो रामदास कों देते। सो रामदास दूसरे दिन राजभोग सों पहोंचिके जाते, तब श्रीनाथजी को लिख्यो पत्र श्रीगुसांईजी कों देते। सो श्रीगुसांईजी आपु बांचिके पाछें जल में घोरि के पान करते। यातें श्रीनाथजी के किये श्लोक जगत में प्रकट न भये। श्रीगुसांईजी आपु विज्ञप्ति किये सो श्रीनाथजी आपु बांचिके रामदासजी कों देते, तासों विज्ञप्ति प्रकटी है। सो एक दिन श्रीगुसांईजीकों बहोत विरह भयो, सो यह लिखे। श्लोक –

त्वद्दर्शन विहीनस्य त्वदीयस्य तु जीवितम्।

व्यर्थमेव यथा नाथ ! दुर्भगाया नवं वयः॥

सो यह श्लोक लिखिके पठाये, जो–तिहारे भक्त हैं सो तिहारे बिना जीवत हैं सो वृथा ही जीवत हैं। सो दुर्भगावत्। सो यह श्रीगोवर्द्धननाथजी बांचिके यह लिखे, जो–मेघको लक्षण यह है, जो–समय होय वर्षा, को तब आयके वर्षे। सो सगरो जगत जानत है। सो ऐसे अबही कृष्णदास को समय होय चुकेगो तब मिलाप होयगो। सो यह तुमहू जानत हो, और हमहू जानत हैं। तासों धीरज धरि समय होन देउ, जो–इतनो विरह क्यों करत हो ? सो यह पत्र रामदासजी लेके आये। तब श्रीगुसांईजी

आपु बांचिके यह लिखे जो –

'अंबुदस्य स्वभावोऽयं समये वारि मुञ्चति ।
तथापि चातकः खिन्नो रटत्येव न संशयः ॥'

सो मेघ को यह स्वभाव है, जो–समय होयगो, तब ही बरसेगो (मिलाप होयगो) परंतु चातकने मेघ सों प्रीति करी है। सो ऐसे भक्त हैं सो तो तिनकों (मेघरूप श्रीकृष्ण कों) रटत है, सो चेन नाहीं है। सो (आपु) चाहो तब समय होय। तुम बिना धीरज हमकों नाहीं है। सो भक्तन को यही धर्म है, जो–चातक की नांई सदा तिहारी चाह करिवो करें। सो यह लिखि पठाये। या प्रकार रामदासजी नित्य आवते, सो श्रीगुसांईजी के पास सब सेवक आवते, सो कृष्णदासजी जानते। परंतु सेवकन सों कछू चलती नाहीं। रामदासजी कों बरजे हू सही, जो–तुम श्रीगुसांईजी के पास पत्र ले जात हो, और पत्र ले आवत हो, सो यह बात ठीक नाहीं है। तब रामदासजी कहे, जो–हम तो नित्य श्रीगुसांईजी के दरसन कों जांयगे, चाहे हमकों सेवामें राखो चाहे मति राखो। तब कृष्णदास चुप होय रहे। सो काहेतें ? जो ऐसे सेवक फेरि कहाँ मिले ? तासों कृष्णदास कछू बोले नाहीं। सो पौष सुदी ६ तें आषाढ़ सुदी ५ तांई श्रीगुसांईजी ने विप्रयोग कियो। पाछें आषाढ़ सुदी ५ आई, ता दिन राजा बीरबल श्रीगोकुल आयो। सो श्रीगुसांईजी तो परासोली हते, और श्री गिरिधरजी घर हते। तब बीरबल श्रीगिरिधरजी के पास आयके दंडवत करिके पूछे, जो–श्रीगुसांईजी कहाँ है ? हमकों दरसन किये बहोत दिन भये। हमने उनके दरसन पाये नाहीं। तब श्रीगिरिधरजी बीरबल सों कहे, जो–श्रीगुसांईजी तो परासोली में बैठि रहे हैं, जो–कृष्णदास अधिकारीने श्रीगुसांईजी के दरसन बंद किये हैं। सो श्रीगुसांईजी छै महिना तें बड़ो खेद करत हैं।

तब बीरबल ने कह्यो, जो–अबही मैं जायके कृष्णदास कों निकासत हों। सो यह कहिके बीरबल श्रीमथुराजी आयो। सो मथुरा की फौजदारी बीरबल की हती, सो मथुरातें पांचसे मनुष्य बीरबल ने पठाये और बीरबलने उनसों कह्यो, जो–श्रीगोवर्द्धन में जायके कृष्णदास कों पकरि लावो। तब मनुष्य गये, सो सांझ के समय श्रीगोवर्द्धन में आये। पाछें कृष्णदास कों पकरिके वे मनुष्य मथुरा ले आये। तब बीरबलने अर्द्धरात्रि ही कों मनुष्य श्रीगोकुल पठायके कह्यो, जो–कृष्णदास को पकरिके बंदीखाने में दिये हैं, जो–तुम श्रीगुसांईजी कों लेके श्रीगोवर्द्धननाथजीके मंदिर में जावो। तब ये समाचार मनुष्यननें श्रीगिरधरजी सों कहे। सो रात्रिही कों श्रीगिरधरजी घोड़ा ऊपर असवार होयके परासोली कूं पधारे, सो प्रातःकाल ही आषाढ़ सुदी ६ आई। सो श्रीगिरधरजी जायके श्रीगुसांईजी कों नमस्कार करिके कही, जो–आपु श्रीगोवर्द्धनधर के मंदिर में पधारो, और सेवा सिंगार करो। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगिरधरजी सों कहे, जो–कृष्णदास की आज्ञा होय तो चलें। तब श्रीगुसांईजी सों श्रीगिरधरजीने कही, जो–कृष्णदास कूँ तो मथुरा में बंदीखाने में दियो है। यह सुनिके श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–हाय हाय! श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के कृपापात्र सेवक भगवदीय कृष्णदास कों इतनो दुःख, और इतनो कष्ट। सो श्रीगुसांईजीने श्रीगिरधरजी सों कही, जो–तुमने बीरबल सों कह्यो होयगो। तब श्रीगिरधरजी ने कही, जो–हम तो सहज ही बीरबल सों कह्यो हतो, जो–श्रीगुसांईजी के दरसन कृष्णदास ने बंद किये हैं, इतनो कह्यो हतो। और तो कछू नाहीं कह्यो। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–कृष्णदास आवेगो, तब ही भोजन करूंगो। सो इतनो सुनत ही श्रीगिरिधरजी

तत्काल घोड़ा ऊपर असवार होयकें श्रीमथुराजी आये। तब बीरबल तें जायके श्रीगिरिधरजी ने कह्यो, जो–काकाजी तो भोजन तब करेंगे जब कृष्णदास वहाँ जायेंगे। तासों कृष्णदास कों छोड़ि देउ। तब बीरबलने कृष्णदासकों बंदीखाने में तें बुलायके कह्यो, जो–देखि, श्रीगुसांईजी की कृपा, जो–तेरे बिना भोजन नाहीं करत हैं और तैनें उनसों ऐसी करी। तासों अब तोकूं छोड़त हूँ, और आजु पाछें जो–तू श्रीगुसांईजी सों बिगारेगो, तब मैं तोकों फेरि कबहू नाही छोडूंगो। सो या प्रकार बीरबल ने कहिके कृष्णदास कों श्रीगिरधरजी के हवाले करि दिये। तब श्रीगिरिधरजी कृष्णदास कों लेके परासोली में पधारे। तब श्रीगुसांईजी आपु कृष्णदास कों देखिके श्रीगोवर्द्धननाथजी को अधिकारी जानिके उठि ठाड़े भये। तब कृष्णदास दीन होयके श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि चरन परस करिके यह पद गायो। सो पद–

राग सारंग – ताही कों सिर नाँइए जो श्रीवल्लभसुत पदरज रति होइ। कीजे कहा आन ऊँचे पद तिनसों कहा सगाइ मोइ॥१॥ जाके मनमें उग्र भरम है श्रीविट्ठल श्रीगिरिधर दोइ। ताकौ संग विषम विष हू ते भूले चतुर करो जिनि कोइ॥२॥ सारासार विचार मतो करि श्रुति – वच गोधन लियो निचोइ। तहां नवनीत प्रगट पुरुषोत्तम सहजई गोरस लियो है बिलोइ॥३॥ उग्र प्रताप देखि अपने चक्षु अस्मसार ज्यों भिदे न तोय। 'कृष्णदास' सुर तें असुर भए असुर तें सुर भए चरनन छोय॥४॥

यह पद सुनिके श्रीगुसांईजी आपु बहोत प्रसन्न भये। तब कृष्णदासने बिनती कीनी, जो–महाराज! मेरो अपराध क्षमा करिये, और अब आप श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में पधारिये। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–तिहारी आज्ञा भई है, सो अब चलेंगे। तब कृष्णदास कों संग लेके श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में पधारे। और श्रीगोवर्द्धनधर कों दंडोत करी। पाछें सिंगार को समय हतो और आषाढ़ सुदी ६

को दिन हतो सो कसूँमल कुलह पिछोड़ा धराये। तब राजभोग सों पहोंचे। पाछें उत्थापन तें सेन पर्यंत की सेवा सों पहोंचि के सेन आरती करि श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी के सन्मुख कृष्णदास कों दुसाला उढ़ाये। और कहे, जो–श्रीगोवर्द्धनधर को अधिकार करो। तुम धन्य हो। तब वा समय कृष्णदास ने यह पद गायो। सो पद –

राग कान्हरो – परम कृपाल श्रीवल्लभनंदन करत कृपा निज हाथ दे माथै। जे जन सरनि आए अनुसर ही गहि सोंपत श्रीगोवर्द्धननाथै ॥१॥ परम उदार चतुर चिंतामनि राखत भवधारा तें साथै। भजि 'कृष्णदास' काज सब सरही जो जानें श्रीविट्ठलनाथै ॥२॥

सो यह पद कृष्णदास ने गायो, और बिनती कीनी, जो–महाराज ! मेरो अपराध क्षमा करिये। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखसों कहे, जो–तिहारो अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे। ता पाछें श्रीगुसांईजी अनोसर कराय के सबन को समाधान कियो, तब सगरे वैष्णव सेवक प्रसन्न भये। पाछें जैसें नित्य सेवा सिंगार आप श्रीगोवर्द्धनधर को करते, वैसे ही करन लागे। और कृष्णदास श्रीगुसांईजी की आज्ञा तें अधिकार की सेवा करन लागे। सो वे कृष्णदास ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते।

वार्ता – प्रसंग ९ – और एक समय श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल में हते, सो कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन तें श्रीगोकुल आये। तब श्रीगुसांईजी उठि के श्रीगोवर्द्धननाथजी को अधिकारी जानि कृष्णदास को बहोत प्रसन्नता पूर्वक समाधान कियो, और अपने पास बैठाये। पाछे श्रीगोवर्द्धनधर के कुशल समाचार पूछे और कृष्णदास कों अपने श्रीहस्तसों श्रीनवनीतप्रियजी को महाप्रसाद धरे। ता पाछें सेन भोग को महाप्रसाद लिवाय के रात्रि कों सुंदर सेज पर सेन करायो। सो जब प्रातःकाल भयो तब कृष्णदास

चलन लागे। ता समय कृष्णदास ने श्रीगुसांईजीसों बिनती कीनी, जो–महाराज ! मेरो मन वृन्दावन देखिवे को बहोत है । तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो –आछो जावो, परन्तु दुःख पावोगे। तब कृष्णदास श्रीयमुनाजी पार गये, जो–श्रीगुसांईजी ने मने किये तोऊ मन न मान्यो, श्रीवृन्दावन कों चले। सो मध्याह्न समय वृन्दावन आये। तब वृन्दावन के संत महंत कृष्णदास सों मिलन आये, सो कृष्णदास कों वा समय ज्वर चढ़्यो, सो प्यास लागी। तब कंठ सूखन लाग्यो। सो कृष्णदास नें कही, जो – प्यास बहोत लगी है, सो कण्ठ सूखत जात है। तब संत महंतन ने कही, जो–बेगि जल लावे। सो कृष्णदास अकेले ही रथ पर बैठिके गये हते। सो कृष्णदास नें कही, जो–श्रीगोकुल को वल्लभी वैष्णव होय सो वासों कहो, जो–वह जल लावे तो मैं पीऊं। तब सगरे संत महंतन ने कृष्णदास सों तर्क करिके कह्यो, जो–यहां कोई वैष्णव नाहीं हैं, जो–श्रीगोकुल को भंगी यहां ब्याहो है, सो यहां आयो है, सो वाकों तुम कहो तो बुलावें। तब कृष्णदास ने कही, जो–वह गोकुल को भंगी सब तें श्रेष्ठ हैं। सो वासों कहियो, जो–कुम्हार के घर तें कोरो बासन लेके श्रीयमुनाजी में न्हाय के जल भरि लावे। सो तब उनने जायके वा भंगी सों कह्यो, जो–कृष्णदास कों ज्वर चढ्यो है, वह प्यासे हैं। सो कहत हैं, सो तू उनकों जल ले जा। तब वह भंगी उहां सों दोर्‍यो। सो श्रीगुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी की राजभोग आरती करि श्रीनाथजीद्वार पधारिवे कूँ घाट ऊपर आये हते। सो इतने ही में वा भंगी ने कपड़ा की आड़ करिके मुख तें कह्यो, जो–महाराज ! कृष्णदास श्रीवृन्दावन में हैं। तहाँ उनकों ज्वर चढ्यो है, सो प्यासे हैं। जल मोसों मांग्यो है, सो मैं वृन्दावन तें यहां दोर्‍यो आयो हूँ। तब श्रीगुसांईजी खवास सों झारी जलकी लेके, घोड़ा ऊपर असवार

होयके वेगि ही आपु वृन्दावन पधारे। सो तब कृष्णदास कों रथ ऊपर ते उठाय के जल प्याये। पाछें कृष्णदास सावधान भये। सो ज्वर हू उतरि गयो। तब कृष्णदास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके यह पद गाये। सो पद–

राग कान्हरो – श्रीविट्ठलजु के चरननि की बलि। हमसे पतित उद्धारन परम कृपाल आपु आए चलि ॥१॥ उज्वल अरुन दया रंग रंजित नखचंद्र विरहतम निर्दलि। सेवत सुखकर सोभा पावत भक्त मुदित ललित पद अंगुलि ॥२॥ अतिसै मृदुल सुगंध सु सीतल परसत त्रिविध ताप डारत मलि। कहे 'कृष्णदास' बार एक सुधि करि तेरो कहा करेगो रिपु कलि ॥३॥

सो यह पद गायके कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी, जो–महाराज! मैंने आपको कह्यो न मान्यो तासों इतनो दुःख पायो। ता पाछें श्रीगुसांईजी के संग कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन आये, तब सेन आरती को समय भयो, तब श्रीगुसांईजी न्हाये के सेन आरती किये। तब कृष्णदास ने यह पद गायो। सो पद–

राग कान्हरो – आजु कौ दिन धनि धनिरी माई नैनन देखे नंद नंदन। परम उदार मनोहर मूरति ताप हरत लखि, पूजत चंदन ॥१॥ नवलराय श्रीगोवर्द्धनधारी रूप रासि युवती मन फंदन। ध्वजा वज्रांकुस जव बिराजत 'कृष्णदास' कीनो पद वंदन ॥२॥

पाछें श्रीगुसांईजी अनोसर कराय के परवत तें नीचे पधारे। सो या प्रकार कृष्णदास ने बहोत दिन लों श्रीगोवर्द्धननाथजी को अधिकार कियो।

वार्ता – प्रसंग ९ – पाछें एक दिन एक वैष्णव ने आयके कृष्णदास सों कही, जो– मोकूं यहां एक कुँआ बनवावनो है, और मोकों अपुने देश जानो है, सो मैं तो अपने देश कों जाऊंगो, तासों तुम या द्रव्य कों राखो। सो ऐसे कहिके वह वैष्णव तीनसे रुपैया देके अपुने देश कों गयो। तब कृष्णदास वा वैष्णव के रुपैयान में ते एक सौ रुपैया एक कुल्हरा में धरिके बाग में एक आँव के वृक्ष

नीचे गाड़ि राखे। ता पाछें आछो महूरत देखिके पूछरी के पास बागमें कुँआ को आरंभ कियो। तब कितनेक दिन पाछें कुँआ बनिके तैयार भयो, और दोयसे रुपैया लगे। पाछें कुँआ को मोहड़ो बनवावनो रह्यो, सो कृष्णदासजी मन में बिचारे जो–सौ रुपैया में मोहड़ो आछो बनेगो। ता पाछें श्रीगोवर्द्धनधर के उत्थापन के दरसन करिके कृष्णदास वा कुँआ देखवे कूं गये, सो वा कुँआ कों देखन लागे। सो कृष्णदास के हाथ में आसा (लकड़ी) हतो, सो आसा टेक के कृष्णदास वा कुँआ पर ठाड़े भये। इतने में आसा सरक्यो, सो कृष्णदास आसा सहित वा कुँआ में जाय परे। तब सगरे मनुष्य पास ठाड़े हते, सो तिनने सोर कियो। जो कृष्णदास कुँआ में गिरे पाछें कितेक मनुष्य दौरे, सो रस्सा टोकरा लाये, और दोय मनुष्य कुँआ के भीतर उतरे। सो बहोत ढूँढे परि कृष्णदास को सरीर हू न पायो। तब वे मनुष्य पाछे फिरि आये। ता समय श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धनधर कों सेन भोग धरिके बाहिर बिराजे हते, सो रामदास भीतरिया श्रीगुसांईजी के पास बैठे हते। ता समय मनुष्य ने जायके कही, जो–महाराज! कृष्णदास कुँआ को देखत हते, सो आसा सरक्यो। सो कुंआ में गिरे। पाछें मनुष्य कुंआ में ढूँढिवे कों उतरे। सो कृष्णदास को सरीर हू पायो नाहीं है। ता समय रामदासजी उहाँ ठाड़े हते, सो कहे 'तामसानामधोगतिः' तब यह सुनिके श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–रामदास जी ऐसे न कहिये। जो कृष्णदास तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के कृपापात्र वैष्णव हते, जो यह लीला है। कूप में गिरे तो कहा भयो? कहा जानिये कहा है?

भावप्रकाश – सो याको कारन श्रीगुसांईजी आपु तो जानत हते, जो प्रेतयोनि को शाप है। तासों आपु प्रगट न किये। सो कृष्णदास या देह समेत प्रेत भये। सो पूछरी के पास एक पीपर को वृक्ष है। ताके ऊपर जायके बैठे।

वार्ता – प्रसंग १० – और श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख सों कहे, जो–कृष्णदास श्रीगोवर्द्धनधर को अधिकार भलो ही किये और अब ऐसे सेवक कहाँ मिले ? और अधिकारी बिना काम चलेगो नाहीं सो विचार करनो । सो या भांति कहे । तब रामदासजीने बिनती कीनी, जो–महाराज ! जाकों तुम आज्ञा करोगे, सोई करेगो । जो श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा भाग्य सों मिलत है । तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–हम कौन से जीव कों कहें, जो–कौनसे जीव को बिगार करें । सुधारनो तो बहोत कठिन हैं । और बिगारनो तो तत्काल है ।

भावप्रकाश – सो याही सों श्रीआचार्यजी श्रीसुबोधिनीजी में कहे हैं । जो–श्रीभागवत नारायण ने ब्रह्मा सों कह्यो है, परि ब्रह्मा सृष्टि करन को अधिकारी है । तासों श्रीभागवत फलित न भयो । पाछें ब्रह्मा नारदजी सों कही, सो नारद कों सगरे देसन में फिरवे को अधिकार है तासों फलित न भयो । तब नारद ने वेदव्यासजी सों कह्यो, सो वेदव्यासजी सास्त्र करन के अधिकारी हैं, तासों व्यासजी कों हू फलित न भयो । पाछे व्यासजी ने श्रीशुकदेवजी सों कह्यो । सो शुकदेवजी सर्वत्याग कियो है । सो यही त्याग में लगे । पाछे परीक्षित को सर्वत्याग भयो । तब अधिकारी भागवत के भये । (जब) श्रीशुकदेवजी रात दिन तांई कथा कहे । तब सातमें दिन भगवत् प्राप्ति भई । सो तैसे ही यह श्रीभागवत रूप पुष्टिमारग है । सो याके अधिकारी निरपेक्ष होय, ताही के माथे यह मारग होय । और जाको अधिकार पाये अहंकार बढ़े, सो ताकों कछू फल सिद्ध न होय ।

तासों श्रीगोवर्द्धनधर को अधिकार हम कौन कों देंय ? कौन को बिगार करें । तब रामदासजी सुनिके चुप होय रहे । इतने में सेनभोग को समय भयो, सो सेनभोग श्रीगुसांईजी सरायें । सो सेन आरती करे पाछें श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोवर्द्धनधर सों पूछे, जो–महाराज ! कृष्णदास की तो देह छूटी और अधिकारी बिना चलेगी नाहीं, सो हम कौनकों अधिकार देके बिगार करें ? तासों आपु कहो ताकों अधिकारी करें । तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो–हमहू कौन जीवको बिगार करै ? जो–कोई अधिकार लेयगो ताको बिगार होयगो । तासों तुम एक काम करो, जो–अधिकार

को दुसाला ले सबके आगे कहो जाकों अधिकार करनो होय सो दुसाला ओढ़ो। तब जो आयके कहे ताकों देऊ। सो जाकों गिरनो होयगो सो आपु ही आवेगो। ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु प्रसन्न होयके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सेन कराये। पाछें दूसरे दिन राजभोग आरती के समय सगरे ब्रजवासी वैष्णव भेले करिके श्रीगुसांईजी आपु दुसाला हाथ में लियो। पाछें सबनकों सुनायके कह्यो, जो–जाकों श्रीनाथजी के घर को अधिकार करनो होय सो या दुसाला कों ओढ़ो। यह सुनिके कितनेक ने कही, जो–हम करेंगे। सो पहले एक क्षत्री बोल्यो हतो, सो ताकों दुसाला उढ़ायो। ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी की आरती करि अनोसर कराय श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल पधारे।

पाछें कछुक दिन बीते तब एक समय श्रीगोवर्द्धननाथजी की भैंस खोय गई, सो बरहे में निकसि गई। तब भैंस ढूँढिवे के लिये गोपीनाथदास ग्वाल और पांच सात ग्वाल पूछरी की ओर गये। वे सब परम कृपापात्र भगवदीय हते। सो तब देखे तो श्रीगोवर्द्धननाथजी सखान सहित पूछरी पास एक पीपरके नीचे खेलत हैं। और पीपर के ऊपर कृष्णदास अधिकारी प्रेत होयके बैठे हैं। तब कृष्णदास अधिकारी ने गोपीनाथदास ग्वाल सों जेश्रीकृष्ण किये और कह्यो, जो–अरे भैया ! गोपीनाथदास ग्वाल ! तू मेरी बिनती श्रीगुसांईजी सों करियो, और कहियो, जो–आपके अपराधतें मेरी यह अवस्था भई है। और श्रीगोवर्द्धनधर दरसन देत हैं सो आपकी कृपा ते देत हैं।

भावप्रकाश – सो जब श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे अधिकार को दुसाला श्रीगुसांईजी ने कृष्णदास कों (दुबारा) उढ़ायो। तब कृष्णदास ने यह पद गायो – 'परम कृपाल श्रीवल्लभनंदन करत कृपा निज हाथ दे माथे।' सो यह पद गाय के कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी सों कही, जो–महाराज ! मैं छै महिना लों आपकों विप्रयोग करायो, सो आपु मेरो अपराध क्षमा करिये। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे, जो–तिहारो

अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे। सो यह श्रीगुसांईजी आपु कहे, तासों श्रीगोवर्द्धनधर दरसन देत हैं, और बोलत हैं बातें करत हैं। परंतु श्रीगुसांईजी आपु अपराध क्षमा नाहीं किये हैं, तासों प्रेतयोनि छूटत नाहीं है। और कृष्णदास श्रीगोवर्द्धनधर सों हू कहते, जो–महाराज ! मोकों दरसन देत हो, सो प्रेतयोनि क्यों नाहीं छुड़ावत हो ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो–यह हमारे हाथ है नाहीं, उद्धार तो तेरो श्रीगुसांईजी के हाथ है। सो काहेतें ? जो–लीला में श्रीचन्द्रावलीजी को शाप है, जो–प्रेतयोनि होय। सो कौन छुड़ावे ? तासों यद्यपि श्रीस्वामिनीजी की सखी ललिता रूप (कृष्णदास) हैं। परंतु आगे को बचन बिचारि नाहीं छुड़ावत हैं। तासों कृष्णदास ने गोपीनाथदास ग्वाल सों कह्यो, जो–तू मेरी बिनती श्रीगुसांईजी सों करियो, जो–श्रीगुसांईजी की कृपा बिना मेरी गति नाहीं है।

और बिलछू की ओर बाग में आमके वृक्ष के नीचे रुपया सौ एक कुलरा में भरिके गाड़े है, सो निकासि के कूप के ऊपर को मोहड़ो बनवाय दीजियो। यह श्रीगुंसाईजी सों कहियो। और श्रीनाथजी की भैंस तुम ढूँढिवे कों आये हो सो उह घना में चरत है। पाछे गोपीनाथदास ग्वाल घना में ते भैंस लेके गोपालपुर आये। सो भैंस बांधि गोदोहन गाय भैंस को किये। ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी की सेन आरती करिके अनोसर कराय परवत तें उतरे और अपनी बैठक में आयके बिराजे। तब गोपीनाथदास ग्वाल ने श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके कह्यो, जो–महाराज ! आज श्रीनाथजी की भैंस खोय गई हती सो ढूँढन कों पूछरी की ओर गये हते। तहां कृष्णदास अधिकारी प्रेत भये देखे हैं सो कृष्णदास पीपर के वृक्ष के ऊपर बैठे हैं। कृष्णदास ने मोकों भगवत् स्मरण कियो हतो। और कृष्णदास ने आपसों यह बिनती करी हैं, जो–मैं प्रेत हूँ, मैंने आपको अपराध कियो है, तासों मोकों प्रेत योनि भई है। आपु कें हाथ मेरो उद्धार है। और बाग में आम के वृक्ष के नीचे कुलरा में रुपया सौ गड़े हैं। सो निकासि के कुँआ को मोहड़ो बनवायवे को कह्यो है। और भैंस

हू कृष्णदास ने बताय दीनी है, सो हम ले आये हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु अपने मन में बिचारे जो–कृष्णदास कों बड़ो दुःख है। सो अब याकों प्रेतयोनि में सो छुड़ावनो यहि कहिके तत्काल उठिके बाग में पधारे। तब रुपया १००) निकासि के नयो अधिकारी कियो हतो, सो वाकों देके कह्यो, जो–ये रुपयान को कृष्णदास वारे कूँआ को मोहड़ो बनवाइयो। ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु वाहि रात्रि कों असवार होयके मथुराजी पधारे। पाछें प्रातःकाल भये श्रीगुसांईजी आपु अपने श्रीहस्त सों कृष्णदास को क्रिया–कर्म करि, ध्रुवघाट ऊपर श्राद्ध कियो, और कृष्णदास कों प्रेतयोनि छुटाय के दिव्य सरीर करिके लीला में प्राप्त किये। सो बिलछू साम्हे गिरिराज में बारी, ता द्वार के मुखिया कृष्णदास हैं, सो तहां जायके बिराजे। सो या प्रकार कृष्णदास की लीला – प्राप्ति श्रीगुसांईजी आपु कीये।

भावप्रकाश– तहां यह संदेह होय, जो–श्रीगुसांईजी की कृपा तें उद्धार न भयो ? सो आपु मथुराजी पधारे और ध्रुवघाट ऊपर श्राद्ध किये ? सो कृपातें (कहा) श्राद्ध अधिक है ? तहाँ कहत हैं, जो–गोपीनाथदास ग्वाल कृष्णदास कों प्रेत भये देखिके आये। सगरे सेवक ब्रजवासीन के आगे गोपीनाथदास ग्वाल नें श्रीगुसांईजी तें कह्यो, जो–कृष्णदास प्रेत भये हैं। सो आपु सों बिनती करी है, जो–आपु मोकों प्रेतयोनि सों छुड़ावो। जो–श्रीगुसांईजी चाहें तो रंचक मन में बिचारे तें छुटकारो होय। परंतु पाछे जो सेवक ब्रजवासी कोई प्रेत होय सो श्रीगुसांईजी सों कहे, जो–आपु छुड़ावो। सो तब न छुड़ावे तो दोषबुद्धि होय, तब जीव को बिगार होय। तासों श्रीगुसांईजी आपु श्रीमथुराजी में पधारि के ध्रुवघाट ऊपर श्राद्ध कियो, सो या मिष तें छुड़ाये। सो सबन ने जानी, जो–ध्रुवघाट को श्राद्ध एसो ही है, सो यह महिमा बढ़ाये। सो अपुनो महात्म्य काल–कठिनता जानि छिपाये। जो इनके कोटानकोटि पुरुखान को उद्धार होय, सो काहेतें ? जो–श्रीभागवत में नृसिंहजी तें प्रह्लाद ने कह्यो है, जो–महाराज ! मेरे पिता को उद्धार होय, तब श्रीनृसिंहजी कहे, जो–जा कुल में भगवद्भक्त होइ सो वाके इक्कीस पुरुषा तरें। तासों तुम संदेह क्यों करत हो ? सो प्रह्लादजी तो मर्यादाभक्त भये, और कृष्णदासजी पुष्टिमार्गीय भगवदीय भये। सो इनके तों

कोटानिकोटि पुरुषान को उद्धार है। परंतु श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के संबंध बिना लीला में प्रवेस न होय। तासों कृष्णदास के मिष करि सृष्टि में मुक्त किये। सो काहे तें? जो–कृष्णदासजी, श्रीगुसांईजी, सगरो श्रीगोवर्द्धनधर को परिकर अलौकिक है। सो यहां ईर्षा नाहीं है। सो भूमि पर हू भगवद्लीला जानि कहनों, सुननों।

सो या प्रकार कृष्णदास की वार्ता महा अलौकिक है। तासों श्रीगुसांईजी कहे, जो–कृष्णदास ने रासादिक कीर्तन ऐसे अद्‌भुत किये सो कोई दूसरे सों न होय। और श्रीआचार्यजी के सेवक होयके सेवा हू ऐसी करी, जो–दूसरे सों न बनेगी, और श्रीनाथजी को अधिकार हू ऐसो कियो जो दूसरे सों न होयगो। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुखसों कृष्णदास की सराहना किये। सो वे कृष्णदास अधिकारी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते। तिनके ऊपर श्रीगोवर्द्धनधर सदा प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ता को भाव नाहीं। तातें इनकी वार्ता अनिर्वचनीय है सो कहां तांई कहिए। ॥वार्ता ८४ ॥

★ ★ ★

इति श्री चौरासी वैष्णवन की वार्ता श्रीगोकुलनाथजी प्रगट किये सो ताको भाव श्रीहरिरायजी कह्यो, सो संपूरणम्।

★ ★ ★

राग–बिहाग

दृढ़ इन चरनन केरो भरोसो, दृढ़. ॥ टेक ॥
श्रीवल्लभ नखचंद्र छटा बिन सब जगमांझ अंधेरो ॥१॥

साधन और नहीं या कलि में जासों होत निवेरो।
'सूर' कहा कहे द्विविध आंधरो बिना मोलको चेरो ॥२॥

★ ★ ★